CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

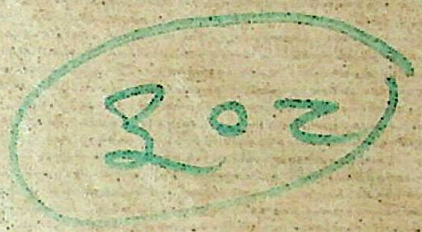

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ
933

ॐ

माण्डूक्योपनिषद् ॥

भाषा टीका सहित ॥

जिसमें

ओंकार स्वरूपका प्रतिपादन व ब्रह्म और अत्मा की अभेदताका निरूपण, आगम, यवैतथ्याख्य, अद्वैताख्य व अलातशान्ताख्य इन चार प्रकरणों में अच्छेप्रकार निरूपण कियागयाहै ॥

जिसको

श्रीमान् सर्वैश्वर्य्य सम्पन्न श्री मुंशीनवलकिशोरजीने भारत वर्षीय जनोंके उपकारार्थ बहुतसा धन व्ययकरके कोलाख्य नगर निवासी पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मण से सरल देश भाषामें उल्थाकराय स्वयंत्रालय में मुद्रित कराय प्रकाशित किया ॥

द्वितीय बार

लखनऊ

मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छपी

जनवरी सन १९०७ ई० ॥

इस किताब का हक़महफ़ूज़ है बहक़ इस छापेखाने के ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ
७

ॐ

भूमिका ॥

सर्वसुज्ञ आत्मजिज्ञासु पाठक जनोंको विदितहो कि यहसर्व उपनिषदोंका सारभूत महाउपनिषद् मंडूक्यनाम ऋषीश्वरद्वारा इस मनुष्यलोकमें प्रकटहुआहै अतएव इसको, मांडूक्यउपनिषद्, इस नामसे कहतेहैं। अथवा जैसे दादुर (मेडक) प्रायःतीन छलांग (कुदान) मारके जलमें प्राप्तहोताहै, तैसेही आत्मारूपी मेडक जाग्रदादि अवस्थारूप पादरूपी स्थानोंसे उछलके अपने वास्तविक निरुपाधि ब्रह्मत्वरूप जलको प्राप्तहोताहै। अर्थात् अन्तःकरण विशिष्ट आत्मरूप मेडक इस उपनिषद्के विचाररूप बलसे, प्रथम जाग्रदवस्थादि प्रथम पादरूप स्थानसे उछलके स्वप्नावस्थादिरूप द्वितीय पादरूप स्थानको प्राप्तहोता है, पश्चात् उस स्वप्नावस्थादि पादरूप स्थानसे उछल सुषुप्ति अवस्थादिरूप तृतीयपादरूप स्थानको प्राप्तहोताहै, पुनः उस तृतीय पादरूप स्थानसे उछलके चतुर्थ अमात्रिक अपने परब्रह्मत्वरूप जलको प्राप्त होताहै "शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते सआत्मा सविज्ञेय" तिसआत्मरूप मेडकका प्रतिपादक होनेसे इस उपनिषद्को, मांडूक्य, नामसे कहतेहैं॥ अरु यह उपनिषद् "ब्रह्मसंस्थोऽमृतत्वमेति" "एतदालम्बनंश्रेष्ठमेतदालम्बनंपरम्, एतदालम्बनंज्ञात्वा ब्रह्मलोकेमहीयते" इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे, संन्यासियों करके उपास्य अरु ब्रह्मप्राप्तिमें सर्वोत्तम श्रेष्ठ आलम्बन जे त्रिमात्रिक ॐकार, केवल तिसकाही प्रतिपादक अरु ब्रह्म आत्माकी अभेदता का बोधकहोनेसे सर्व उपनिषदोंमें मुख्यहै। अरुजो कदापि कोई ऐसाकहै कि सर्वही उपनिषद् ब्रह्म आत्माकी अभेदताके बोधकहैं तब इसमें क्या विशेषताहै, तो तिसका यह समाधानहै कि अन्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जे उपनिषद्हैं सो ब्रह्म आत्माकी अभेदताके बोधकहैं परन्तु उन में सृष्टिकरण अरु प्राणादिकोंकी उपासना आदिक अन्य प्रसंगभी हैं अरु इस उपनिषद्में केवल ॐकारके प्रतिपादनसे ब्रह्मआत्मा की अभेदताही प्रकाशित है तिससे इतर सृष्टिकरणादिक नहीं, अतएव यह उपनिषद् केवल ब्रह्म आत्माकी अभेदताका बोधक होनेसे सर्व उपनिषदोंमें मुख्यहै । अतएव उक्त हेतुओंकरके इस उपनिषद्को मुख्यत्व होनेसे श्रीशंकराचार्य्य महाराजके परमगुरु श्रीगौडपादाचार्य्य कृत इसके अर्थबोधक श्लोकबद्ध कारिका है, तिस कारिकाके चारप्रकरणहैं ,तहां,प्रथम आगमप्रकरण, द्वितीय वैतथ्याख्यप्रकरण, तृतीय अद्वैताख्य प्रकरण, चतुर्थ अलातशान्ताख्य प्रकरण, इसप्रकार चार प्रकरणहैं ॥ अरु इन चारोंप्रकरण से बाह्य इसभाषा भाष्यकारकृत सर्व उपनिषदोंमेंसे संग्रहकिया प्रणवोपासना, अरु सप्तसिद्धान्तियों के मतानुसार प्रणवोपासना अरु प्रणवके ॐकारादिदशनामोंके अर्थविचार, अरु अन्यऋषियोंके मतानुसार मात्राओंकेभेदसे उपासनाविचार, अरु अकारादि मात्रा का क्रमशः लय चिंतवनाविचार, इन सर्वके संग्रहका, एक संग्रह प्रकरणनाम पंचम प्रकरणभी कहाहै, सो एतदर्थहै कि प्रणवोपासनाके जिज्ञासुको इस एकही पुस्तक के अवलोकन से अनेक ऋषियोंके मतानुसार ॐकारकी उपासना जानने में आवे ॥ अरु श्रीगौडपादीय कारिका सहित इस उपनिषद्ऊपर श्रीभगवत्पाद पूज्य श्रीशंकराचार्य्यजीकृत संस्कृत भाष्य है अरु तिसभाष्यपर संस्कृतमें आनन्दगिरिकृत टीकाहैं, अरु तिस भाष्य अरु टीकाके अनुसारही द्विजवर श्रीपंडितराज पीताम्बरजी महाराज कृत भाषा दीपिकानामटीकाहै । अरु जैसे सम्यक् प्रकार संस्कृत विद्याके अभ्यास विना अरु किसी श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ आचार्य्यसे अध्ययन किये बिना सभाष्य उपनिषदोंका अर्थ जानने में आवे नहीं, अरु तैसेही जो केवल भाष्यके अक्षरानुसारही जे पंडित पीताम्बरजी कृत अक्षरार्थ टीका तिसका भी यथार्थ जानना सर्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साधारणपुरुषों को सुगम नहीं। एतदर्थ मैं श्रीपरिव्राजाचार्य्य परमहंस स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वतीजी महाराजका अतिअल्पज्ञ शिष्य यमुनाशंकर नामक नागर ब्राह्मण, उक्त भाष्यकार अरु टीकाकार के कहे अनुसारही भाषाभाष्य नामक टीका करताहौं तिसमें अपनी अल्प बुद्धिके अनुसार कुछ विशेष भी कहौंगा ॥

सर्व्वसे साधारण विनय ॥

मुझ अल्पज्ञकरके कहेहुये इस मांडूक्यउपनिषद् के भाषा भाष्य में जो कछु अनुचित कथनहोय तिसको सर्वविवेकी पाठकजन क्षमाकरके सुधारलेवें इति ॥

सूचना इस भाषाभाष्यान्तर चिह्नोंकी ॥

" " इस चिह्नान्तर में भाषान्तर मूल श्रुति, श्लोक ॥
{ } इस चिह्नान्तर में भाषान्तर श्रुति, श्लोकके अक्षरार्थ ॥
“ ” इस चिह्नान्तरमें प्रमाणविषयक अन्य श्रुति, श्लोक ॥
( ) इस चिह्नान्तरमें प्रमाणविषयक श्रुतिश्लोककेअक्षरार्थ ॥
[ ] इस चिह्नान्तरमें संक्षेपसे आनन्दगिरिका अक्षरार्थ ॥
' ' इस चिह्नान्तर में भाषाभाष्यकारकृत अर्थानुवाद ॥
, इत्यादि चिह्न साधारण विराम ॥

इति चिह्नसूचना ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ शान्तिपाठः ॥

ॐ सहनाववतुसहनौभुनक्तुसहवीर्य्यंकरवावहै । तेजस्वीनाव धीतमस्तु माविद्विषावहै ॥

ॐशान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

शान्तिःपाठगुरुस्तुति ॥

ॐशन्नोमित्रः शंवरुणः शन्नोभवत्वर्य्यमाशन्नइन्द्रोबृहस्पतिः शन्नोविष्णुरुरुक्रमः नमोब्रह्मणेनमस्तेवायोत्वमेवप्रत्यक्षंब्रह्मासि त्वमेवप्रत्यक्षंब्रह्मवदिष्यामिऋतंवदिष्यामिसत्यंवदिष्यामितन्मामवतु तद्वक्तारमवतुअवतुमामवतुवक्तारम् ॥ ॐ शान्तिः ३ ॥

ॐब्रह्मविदाप्नोतिपरम् ॥

ॐ सत्यंज्ञानमनंतंब्रह्म " "सोयमात्मा" "नांतःप्रज्ञंन बहिः प्रज्ञंनोभयतोप्रज्ञं नप्रज्ञानघनंनप्रज्ञं नाप्रज्ञं अदृष्टमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षणम् चिन्त्यमव्यपदेश्यमेकात्मप्रत्ययसारं प्रपंचोपशमं शिवमद्वैतंचतुर्थमन्यन्ते" "सआत्मा, अपहतपाप्मा विजरोविमृत्युर्विशोकोविजिघत्सोपिपासःसत्यकामः सत्यसंकल्पःसोन्वेष्टव्य सविजिज्ञासितव्यः" "तद्ब्रह्मेति" "इहैवान्तःशरीरे सौम्यसपुरुषः" निहितंगुहार्यां" " दृश्यतेत्वग्रयाबुद्ध्यासूक्ष्मयासूक्ष्मदर्शिभिः" "आत्मावाअरेद्रष्टव्योश्रोतव्योमन्तव्यो निदिध्यासितव्योसाक्षात्कर्त्तेति" "सयोह वै तत्परमं ब्रह्मवेद ब्रह्मैवभवति"

"नातःपरमस्ति"

"ब्रह्मानन्दंपरमसुखदंकेवलंज्ञानमूर्त्ति"
"द्वंद्वातीतंगगनसदृशंतत्त्वमस्यादिलक्ष्यं"
"एकंनित्यंविमलमचलंसर्व्वधीसाक्षिभूतं"
"भावातीतंत्रिगुणरहितंसद्गुरुंतन्नमामि"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्री १०८ ईश्वर मठ
पुस्तकालय,
मुमुक्षु भवन, अस्सी, काशी.

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः ॥

अथ अथर्ववेदीय ॥

मांडूक्योपनिषद्

श्रीगौड़पादीयकारिका सहित मांडूक्योपनिषद्प्रारभ्यते ६ ॥

श्रीमद्भाष्यकारस्वामी श्रीशंकराचार्य्यकृत ॥

मंगलाचरणम्

प्रज्ञानांशुप्रतानैःस्थिरचरनिकरव्यापिभिर्व्याप्यलोकान् भुक्त्वाभोगान् स्थविष्ठान् पुनरपिधिषणोद्भासितान् कामजन्यान् ॥ पीत्वासर्वान् विशेषान् स्वपितिमधुरभुङ्माययाभोजयन्नोमायासंख्यातुरीयं परममृतमजंब्रह्ममत्तन्नतोऽस्मि १ ॥

हे सौम्य! भाष्यकार श्रीशंकराचार्य्य कहते हैं कि "परममृतमजं ब्रह्म यत्तन्नतोऽस्मि" (अमृत अज जो परब्रह्म है तिसको मैं नमता (नमस्कारकरता) हौं) [अर्थात्, श्रीगौडपादाचार्य को श्रीनारायणके (वा श्रीशुकाचार्यके) प्रसाद से प्राप्तहुये, अरु मांडूक्यउपनिषद्के अर्थको प्रकटकरनेके परायण जो श्रीगौड़पादाचार्यकृत कारिका संज्ञक श्लोक तिन सहित मांडूक्योपनिषद्के व्याख्यान करनेको इच्छा करतेहुये भगवान् भाष्यकार श्रीशङ्कराचार्य्य आपकरके करने को इच्छित जे भाष्य तिसकी निर्विघ्न समाप्ति के अर्थपर देवता के स्वरूप के स्मरणपूर्वक शिष्टाचाररूप प्रमाणकरके सिद्ध तिस पर देवताके अर्थ नमस्कार रूप मंगलाचरणकोकरतेहुये,अर्थसेइसग्रन्थकेआरंभबिषे बांछित विषयादिक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[अर्थात् ग्रन्थके प्रयोजन, विषय, सम्बन्ध, अरु अधिकारी] चार प्रकारके अनुबंधको भी सूचित करतेहैं । तिनमें विधिमुखसे वस्तु का प्रतिपादनहै, इस प्रक्रिया को देखावतेहैं । अरु यहां { ब्रह्म यत्तन्नतोऽस्मि } (जो परब्रह्म है तिसको मैं नमताहौं) इस कहने करके मैं (इसअहं) शब्दके[विषयत्वंपदके लक्ष्य] अर्थकी तिस तत् शब्दके लक्ष्यार्थसे एकता के स्मरणरूप नमनको सूचितकरनेवाले आचार्य ने तत्पदके लक्ष्यार्थरूप ब्रह्मका प्रत्यगात्मापना सूचन करके तत्पद अरु त्वंपदके अर्थकी एकतारूप ग्रन्थका विषय सूचित किया। अरु "यत्" (जो) इस शब्दको प्रसिद्ध अर्थका प्रकाशक होनेसे वेदान्तशास्त्र करके प्रसिद्ध जो ब्रह्म है तिसको मैं नमता हौं, इस संबन्ध से मङ्गलाचरणभी श्रुतिकरकेही करते हैं । अरु ब्रह्मको अद्वितीय होनेसेही जन्ममरण के अभाव से [अर्थात् एक अद्वैत परिपूर्ण अखण्डब्रह्म में जन्ममरणके हेतुरूप द्वैतका अभाव है ताते] "अमृतमजं" (अमृत अरु अजन्मा) इस प्रकार कहा है अरु जन्म मरणरूप जो बन्ध है सोई संसार है [अरु ब्रह्म में जन्मरणरूप बन्धलक्षण संसारका अत्यन्ताभाव है] ताते तिस बन्धके निषेधसे [आत्माविषे] स्वरूपसेही असंसारीभावके देखावनेवाले आचार्यने यहां सर्व अनर्थोंकी निवृत्तिरूप इस ग्रन्थका प्रयोजन प्रकाशित किया है] ॥ वो परब्रह्म कैसाहै "प्रज्ञानांशु प्रतानैः" { प्रकृष्ट ज्ञानरूपहै } अर्थात् [जब वेदान्तशास्त्र उपनिषद् प्रमाणसे सिद्ध ब्रह्म, स्वरूपसे अद्वितीय अरु असंसारी है तब तीन अवस्था करके युक्त भोक्ता जीवहै इसप्रकारका अनुभव कैसेहोताहै । अरु [जीवको दुःखसुखका] भोगावनेवाला कोई, ईश्वरहै इसप्रकार कैसे श्रवणहोताहै । अरु बिषयोंका समूहरूप भोज्य (भोगनेयोग्यसामग्री) [ब्रह्मसे] भिन्न कैसे दृष्टआवती है । सो यह सर्वएक अद्वैतबिषे बिरोधको प्राप्तकरेगा । यह आशंकाकरके एकअद्वैत ब्रह्मबिषे ,जीव, जगत्, अरु ईश्वर, यह सर्व [रज्जुमें सर्पवत्] कल्पित संभवे है , इसअभिप्रायसे यहांकहते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं] जन्मादि । जायते । अस्ति, वर्द्धते, विपरिणमते, विपक्षीयते विनश्यति, यह षट्भाव । विकार रहित प्रकृष्ट ज्ञानस्वरूप जो ब्रह्महै "प्रज्ञानंब्रह्म"(प्रज्ञान ब्रह्महै) इसश्रुति प्रमाणसे, । तिस सूर्यवत् बिम्बस्थानी ब्रह्मके किरणरूप, जो सूर्यके प्रतिबिम्ब के तुल्य निरूपण कियाहै । अरु बिम्बके तुल्य ब्रह्मसे पृथक् वा भेद करके असत्य चिदाभास (चैतन्यब्रह्मकाआभास) जीवहै, तिनके वृक्षादिक स्थिर, अरु मनुष्यादिकचर, इसप्रकारके उद्भिजादि चारखानिके स्थिर चर प्राणियों के समूह बिषे व्यापनेवाले विस्तारों से लोक जो विषय तिनके अर्थ व्याप्तहोके [इस कथनसे उक्त विषयोंसे जीवोंका सम्बन्ध कहा] देवताके अनुग्रह सहित ब्राह्येन्द्रियोंद्वारा बुद्धिके तिस तिस विषयाकार परिणामसे जन्यतारूप अतिशय स्थूलतावाले सुखदुःखके साक्षात्काररूप भोगों को भोगिके, अर्थात् [यहां "तान्भुक्त्वा" (तिनको भोगके) इस पदसे अरु "स्वपितीति" । सोवता है । इस अग्रिमकहने के पदसे सम्बन्ध है । इस कथनसे जाग्रदवस्था ब्रह्मबिषे कल्पित है, ऐसा कहाजानना] पुनः [यहांसे तिसही ब्रह्मबिषे स्वप्नकी कल्पनाको देखावते हैं] भी बुद्धिसे प्रकाशितहुये, अरु अविद्या, काम, अरु कर्म, से जन्य भोगोंको भोगके सर्व [इसप्रकार ब्रह्म बिषे । जाग्रत् स्वप्न । दोनों अवस्थाकी कल्पना को देखायके अब तहांहीं सुषुप्तिकी कल्पनाको देखावेहैं] जाग्रत् अरु स्वप्नरूप स्थूल अरु सूक्ष्म विषयों को अज्ञातरूप अपने आत्मा बिषे लय करके जो ब्रह्म सोवता है, अर्थात् कारणके अभावसे स्थित होताहै, अरु जो मधुरभुक् [सुषुप्तिबिषे आनन्दकी प्रधानता है इस अभिप्रायसे ब्रह्मका । मधुरभुक् वा आनन्दभुक् । यह विशेषण देतेहैं] (आनन्दका भोक्ता) है, अरु जो ब्रह्म प्रतिबिम्बके तुल्यहुआ हमारेबिषे मायाकृत मिथ्यारूपा तीनोंअवस्थाके संबन्धीपनेवत् सम्बन्धीपनेको सम्पादनकरके हमकोमायासे भोगावताहुआ वर्त्ततहै । अरु तिसमायाकल्पित मिथ्यासंख्याकीअपे-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

योविश्वात्मा विधिज विषयान्प्राश्यभोगान्स्थविष्ठा न् पश्चाच्चान्यान्स्वमति विभवान्ज्योतिषास्वेनसूक्ष्मा न् । सर्वानेतान्पुनरपिशनैःस्वात्मनिस्थापयित्वा , हि त्वासर्वान्विशेषान्विगतगुणगणःपात्वसौनस्तुरीयः २

क्षासे तुरीय (चतुर्थ) अर्थात् शुद्ध आत्माको चतुर्थ संख्यासे कहा है सो मायाकरके कल्पित जे जाग्रदादि तीनोंअवस्था तिसकीअपेक्षासे है नतु सर्वसंख्याऽतीत बिषे संख्या कोई नहीं। [तिसही ब्रह्मकोतीनोंअवस्थासे पृथक्होनेकरके तिसकीज्ञानमात्र स्वरूपताको देखावे हैं] मरणरहित अमृत अरु जन्मरहित अज, पर [अर्थात् ब्रह्मको मायावी होनेकरके तिस बिषे निकृष्टभावकी प्राप्तिकी आशंकाकरके तिसके निवारणार्थ " पर " यह पदकरके उत्कृष्टताही कहिये है, क्योंकि ब्रह्मकोमाया (आरोप) द्वारातिस मायासे सम्बन्धके हुयेभी स्वरूप करके मायासे ब्रह्मका सम्बन्ध नहीं। क्योंकितुल्य जातीय वाधर्मादिकवालों का सम्बन्ध सम्भवे है अरु ब्रह्म सत्यचैतन्य आनन्द निर्गुण एकरसहै अरु माया तिससे विपरीति असत्य जड़दुःख सगुणनानारूप वालीहै, ताते उक्त प्रकारके ब्रह्माका उक्तप्रकारका मायासेसम्बन्ध स्वरूप सेही संभवे नहीं । एतदर्थ ब्रह्मबिषे कैसे निकृष्टताहोवेगी किन्तु किसी प्रकार भी नहीं। यह अर्थहै] ब्रह्मकेअर्थमैं नमस्कार करताहौं १॥

हे सौम्य!जो [प्रथमश्लोक बिषे बिधिमुखसेबस्तुके प्रतिपादनको प्रतिज्ञाको आश्रयकरके 'तत्' पदके लक्ष्य!अर्थसे आरंभ करके तिसकी ' त्वं ' पदके लक्ष्यार्थ भूत प्रत्यगात्मस्वरूपता प्रतिपादन किया । अरुविषय अरु फलके कथन से, सम्बन्ध, अरु अधिकारी सूचनकिये । अब इस द्वितीय श्लोकबिषे निषेधमुखद्वारा बस्तु मात्रके प्रतिपादनकी प्रतिज्ञाको आश्रय करके ' त्वं, पदकेवाच्यार्थसे प्रारम्भकरके तिसकी ' तत् , पदके लक्ष्यार्थ भूतअसंसारी शुद्ध ब्रह्मरूपताकी प्रतीति करावते हैं । तहां प्रथम 'त्वं, पदके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लक्ष्यार्थरूप स्वतःसिद्ध चिदात्माबिषे आरोपित जाग्रदवस्थाको उदाहरण करते हैं] यह प्रत्यगात्मा अविद्या अरु कालसे उत्पन्न हुये जे धर्म अधर्मरूप विधि तिससे जन्यजे सूर्य्यादिक देवता तिनके अनुग्रह सहित बाह्यकरण (चक्षुरादि इन्द्रिय) द्वाराबुद्धि के परिणाम विषय होने करके अत्यन्त स्थूल अरु भोगने के योग्य होनेकरके भोगशब्दके वाच्य भोग्योंको साक्षात् अनुभव करके स्थितहुआ, पंचीकृत पंच महाभूत अरु तिनका कार्यरूप स्थूल जगन्मय विराट्का शरीररूप विश्व है तिस जाग्रत् स्थानरूप विश्वबिषे अहंमम (मैं अरु मेरा) यह अभिमान वान्हुआ विश्व (विश्वाभिमानी) जीवरूप होता है । अरु पश्चात् [अबतिसही चैतन्य आत्मा बिषे स्वप्नावस्थाके आरोपको कहते हैं] जे जाग्रत् के हेतु कर्महैं तिनके क्षयहोने से अनन्तर स्वप्नके हेतुजे कर्म हैं तिनके उद्भव होनेसे जाग्रत्के स्थूल विषयों से इतर, अरु तिसही हेतुसे सूक्ष्म, अरु बाह्य इन्द्रियोंको बिषयों से निवृत्त होनेकरके 'अविद्या, काम,अरु कर्म्म, इनसे प्रेरणाको प्राप्तहुई अपनी बुद्धि तिसके प्रभावसेही उत्पन्नहुये अन्तःकरणकी वासनामय, अरु स्वप्नबिषे भी सूर्यादिकों के प्रकाश के । जो केवल जाग्रत्के सूर्य्यादिकों के प्रकाशके संस्कार युक्त बुद्धिकरके कल्पित हैं । अस्तहुये केवल । स्वयंज्योतिः । आत्मरूप प्रकाश करकेही प्रकाशित हुये (विषय किये गये जे भोग्यपदार्थ तिनको अनुभव करके, अपंचीकृत । तन्मात्रारूप । पंचमहाभूत अरु तिनके कार्यरूप सूक्ष्म प्रपंचमय हिरण्यगर्भ के शरीररूप स्वप्नावस्थाके ताईं अभिमान । अहंमम (मैं मेरा) भाव । करता हुआ । चैतन्यआत्माही । तैजसनामक जीवरूप होता है । पुनः [अब तिसही चिदात्माबिषे सुषुप्ति अवस्थाकी कल्पना को देखावे हैं] भी स्थूल अरु सूक्ष्म उभय शरीररूप उपाधिद्वारा जाग्रत् अरु स्वप्नरूप उभय अवस्थारूप स्थानोंबिषे प्रवृत्ति होनेसे हुआ जो श्रम तिसकी उत्पत्तिके अनन्तर तिस श्रमके परित्याग करने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की इच्छाके होनेसे स्थूल अरु सूक्ष्मके विभागकरके जाग्रत् अरु स्वप्नरूप उभयस्थानों बिषे स्थित, इन प्रसंग बिषे प्राप्तहुये सर्व भी भोग्यरूप विशेषों को धीरेसे । क्रमशः वा बिनाही क्रमशः । अज्ञात कारणरूप अपने स्वरूप बिषे । अर्थात् सुषुप्ति से उठके कहता है कि ऐसे सोये जो कुछ भी खबर न रही इस अज्ञात लक्षणवान् कारण अविद्या तिसकी पृथक्सत्ताका अभावहै, क्योंकि उस अज्ञात अविद्याका परिणाम उसके प्रकाशक साक्षी अधिष्ठान ज्ञानस्वरूप आत्माबिषे होता है जैसे कल्पित सर्पका रज्जुबिषे अरु जिसका परिणाम जिस अधिष्ठानरूप होताहै सो उसहीका स्वरूप होताहै, ताते अपनी पृथक् सत्ताके अभावसे अध्यस्त अविज्ञातरूप अविद्या भी सर्वाधिष्ठान आत्मस्वरूपही है । स्थापन करके अव्याकृतरूप उपाधिकी प्रधानतावाला हुआ । वोही चैतन्यआत्मा । प्राज्ञनामक जीवरूप होताहै । सो [अब जाग्रदादि तीनों अवस्थारूप स्थानों करके युक्त, अरु "नान्तःप्रज्ञंनबहिःप्रज्ञं" (अन्तःप्रज्ञनहीं, बाह्यप्रज्ञनहीं) इत्यादि निषेधमुख श्रुतिवाक्य श्रवणसे उत्पन्नहुआ जो प्रमाणज्ञान तिसबिषे आरूढ़हुये तिसही प्रत्यगात्माके कार्य कारणरूप सर्व अनर्थ विशेषों को श्रुतिप्रमाण जन्यज्ञानके प्रभाव सेही त्यागकरके निरुपाधि परिपूर्ण ज्ञानरूप सेही सिद्धहुये तत्त्वको कथन करते हैं । अरु मंगलार्थ तिसकी प्रार्थना करते हैं] यह सर्वगुणोंके समूहकी कल्पनासे रहित अरु नित्य ज्ञानरूप स्वस्वभाववाला तुरीयरूप परमात्मा सर्व कार्य कारणरूप अनर्थोंके भेदोंको भी श्रुतिप्रमाण जन्य ज्ञानके प्रभाव सेही परित्याग करके, अरु व्याख्यानके कर्त्ता होनेकरके अरु श्रोताहोने करके स्थितहुये हमको पुरुषार्थ बिषे विघ्नकारी कारणके । अर्थात् पुरुषार्थ बिषे जे विघ्नों के कारण तिनके । निषेध (अभाव) पूर्वक मोक्षके प्रदानसे अरु तिसकेहेतु ज्ञानके प्रदानसे रक्षणकरो २ ॥

इति भाष्यकारकृतमंगलाचरणम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ भाष्योपरिटीकाकारस्वामीआनन्दगिरि कृतमंगलाचरणम् ॥

ॐपरिपूर्णपरिज्ञानपरितृप्तिमतेसते । विष्णवेजिष्णवेतस्मैकृष्णनामभृतेनमः १ शुद्धानन्दपदाम्भोजद्वन्द्वमद्वन्द्वतास्पदम् । नमस्कुर्वेपुरस्कर्त्तुन्तत्त्वज्ञानमहोदयम् २ गौडपादीयभाष्यंहिप्रसन्नमिवलक्ष्यते । तदथोऽतिगम्भीरम्व्याकरिष्येस्वशक्तितः ३ पूर्व्वेयद्यपिविद्वांसोव्याख्यानमिहचक्रिरे । तथापिमन्दबुद्धीनामुपकारायययत्यते ४ ॥

ॐमित्येतदक्षरमिदंसर्वंतस्योपव्याख्यानंभूतंभवद्भविष्यदितिसर्वमोंकारएव । यच्चान्यत्त्रिकालातीतंतदप्योंकारएव १ ॥

हे सौम्य, ! यह [जिसको उद्देश करके मंगलाचरण किया, तिसको कथन करने को आदिबिषे व्याख्यान करनेयोग्य मंत्रके प्रतीक [प्रथमपद] को ग्रहणकरते हैं] ॐ इसप्रकारका जो अक्षरहै, सो यह सर्वहै । तिसका उपव्याख्यान वेदान्त [यह क्या शास्त्रपने करके व्याख्यान करने को इच्छित है, वा प्रकरणपने करके व्याख्यान करने को इच्छितहै । तहां जो प्रथमपक्ष कहो कि शास्त्रपने करके व्याख्यान करनेको इच्छितहै, सो बने नहीं, क्योंकि इसबिषे शास्त्रके लक्षणके अभावसे इस ग्रन्थको अशास्त्रपनाहै ताते । अरु एक प्रयोजन से सम्बन्धवाला सर्व अर्थका प्रतिपादक शास्त्रहोताहै । सो इस ग्रन्थबिषे एक मोक्षरूप प्रयोजनपना तो है परन्तु सर्व अर्थका प्रतिपादकपनानहीं । एतदर्थ शास्त्रके लक्षणके अभावसे इसग्रन्थको अशास्त्रपना युक्तही है ॥ अरु जो द्वितीयपक्ष कहो कि इसको प्रकरणपने करके युक्त होने से व्याख्यान करने को इच्छित है, तो सो भी बने नहीं, क्योंकि प्रकरणके लक्षण का भी इसबिषे अभाव है । यह आशंका करके कहेहै यहां यह अर्थहै कि शास्त्रके एकदेशसे सम्बन्धवाला अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शास्त्रके अन्यकार्य बिषे स्थित जो होय सो प्रकरण ऐसा कहते हैं। अरु यह ग्रन्थ प्रकरणपने करके व्याख्यान करने को इच्छितहै क्योंकि यह निर्गुण वस्तुमात्र का प्रतिपादकहै ताते, अरु तिसके प्रतिपादन के संक्षेपरूप अन्यकार्योंका भी होनाहै ताते, इसग्रन्थ बिषे प्रकरणके लक्षण सर्वही हैं ताते । यहग्रन्थ व्याख्यान करने को इच्छित है ।] शास्त्रके अर्थकासार संग्रहरूप चारप्रकरणवाला " ॐ मित्येतदक्षरमित्यादि " (यह ॐ इसप्रकारका अक्षर है) इत्यादिरूप ग्रन्थ है तिसका आरम्भ करते हैं [इसग्रन्थ को प्रकरण रूपहुये भी बिषयादिक अनुबन्ध रहिततारूप दोषकी की हुई इस ग्रन्थके व्याख्यान करनेकी अयोग्यताहै, यह आशंका करके कहतेहैं] याहीते इससे पृथक् सम्बन्ध बिषयअरु प्रयोजन कथनकरनेको योग्य नहीं, किन्तु जो वेदान्तशास्त्रबिषे सम्बन्ध बिषय अरु प्रयोजनहैं सोई यहां कथनकरनेयोग्यहैं। तथापि प्रकरणके व्याख्यान करनेकी इच्छावाले पुरुषकरके संक्षेपसे कथन करनेयोग्यहै । तहां श्रीभाष्यकार स्वामीकरके प्रयोजनादि अनुबन्धके कथनकी योग्यताके सिद्धहोनेसे शास्त्रअरु प्रकरणकेमोक्षरूप प्रयोजनवान्पनेकी प्रतिज्ञा करतेहैं] प्रयोजनवत् साधनोंका प्रकाशक होनेकरके बिषयसे सम्बन्धवाला जो शास्त्र सो परम्परासे श्रेष्ठ 'बिषय, सम्बन्ध, अरु प्रयोजनवाला होताहै ॥ प्र० ॥ पुनः तिसकाप्रयोजन क्याहै, ॥उ० ॥ तहांकहतेहैं, जैसेरोगकरके आतुरपुरुषको रोगकी निवृत्ति होनेसे स्वस्थता होतीहै, तैसेही । अन्तःकरणादि उपाधिवाले। दुःखी आत्माको । दुःखकेहेतु । द्वैतप्रपंचकी निवृत्तिके होनेसे जो अद्वैतभावरूप स्वस्थताहोवे है सोईप्रयोजनहै। अरुद्वैतप्रपञ्च अविद्याका किया है अतएव विद्याकरके तिसकी निवृत्ति होतीहै एतदर्थ ब्रह्मविद्याके प्रकाशनार्थ इसग्रन्थका आरम्भ करतेहैं "यत्राहि द्वैतमिवभवति"। "यत्रवाऽन्यदिवस्यात्तत्रान्योऽन्यत्पश्येदन्योऽन्यद्विजानीयात्" "यत्रत्वस्य सर्वमात्मैवाभूत्तत्केनकंपश्येत्केनकं तद्विजानीयात्, इत्यादि " (जहांही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वैतवत् होताहै, जहांवा अन्यवत् होताहै,तहां अन्य अन्यकोदेखे, अन्य अन्यको जाने। अरु जहांतो इसको सर्व आत्माही होता हुआ तहांकिसकरके किसकोदेखे किसकरकेकिसको जाने। इत्यादि अनेक श्रुतियोंके प्रमाणकरके इसअर्थकी सिद्धिहै। तहां [विषय प्रयोजनादि अनुबन्धके आरंभद्वारा ग्रंथके आरंभके स्थितहुये आदिविषे इस कारिकारूप ग्रंथके चारप्रकरण एकसेएक अमिलित विषय, ज्ञानकी सुगमताके अर्थ सूचनकरनेको योग्यहै, इस प्रकार कहके प्रथम प्रकरणके विषयकोनिरूपण करतेहैं]गौड़पादीय कारिकाविषे प्रथम ॐकारके निर्णयार्थ आगमप्रधान आत्मतत्त्वके निश्चयका उपायरूप प्रथम प्रकरण है। अरु रज्जुआदिकों विषे सर्पादिकोंके विकल्पकी निवृत्ति होनेसे रज्जुकेयथार्थ स्वरूपकी प्राप्तिवत्, जिस [अब वैतथ्यनामक द्वितीय प्रकरण के अवान्तर विषयको देखावते हैं] द्वैतप्रपंचकी निवृत्ति होनेसे अद्वैतकी प्राप्तिहोतीहै, तिस द्वैतके हेतुसे मिथ्यापनेके प्रतिपादनार्थ द्वितीय प्रकरणहै।[अब अद्वैत नामक तृतीय प्रकरणकेअर्थ विशेषकेकहनेकाआरंभ करतेहैं] तैसे अद्वैतकोभी द्वैतकी सापेक्षतासे मिथ्यापनेकी प्राप्तिकेहुये युक्तिसे तिसके परमार्थपने के लखावनेके अर्थ तृतीयप्रकरणहै [अब अलातशान्ति नामक चतुर्थ प्रकरणके अर्थ विशेषको कहतेहैं] अद्वैतके परमार्थभावके निश्चयके विरोधीरूप जे वेदविरुद्ध अन्यवादहैं तिनको परस्पर में विरोधी होनेसे उनको अयथार्थताके कारण युक्तिकरकेही तिनके निराकरणार्थ चतुर्थ प्रकरणहै। पुनः [ॐकारके निर्णयरूप द्वार से आत्मज्ञान प्राप्तिका उपायरूप प्रथम प्रकरणहै, इसप्रकारजो कहा सो अयुक्तहै, क्योंकि ॐकारके निर्णयको आत्मज्ञान होने की हेतुताकी अयोग्यता है। अर्थात् आत्मज्ञान होनेकी हेतुताके योग्य ॐकारका विचार नहीं। अरु अन्य अर्थकाज्ञान अन्यअर्थ के ज्ञानविषे व्याप्तिविना उपयोगताको पावता नहीं, अर्थात् ॐकारके अर्थका ज्ञान आत्मज्ञानके अर्थज्ञानमें अव्याप्त होने से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐकारके अर्थकाज्ञान आत्मज्ञानहोनेमें उपयोगी होतानहीं । अरु यहां [ॐकारके विचार अरु आत्मज्ञानबिषे] धूम अरु अग्निवत् व्याप्ति देखते नहीं, अरु ॐकारको आत्माका कार्यपना युक्तनहीं । क्योंकि आकाशादिकोंका अवशेषहै ताते । अरु तिस ॐकारको आत्मावत् सर्व्वात्मा होनेकरके तिसके कार्यपने का व्याघात है ताते । इसप्रकार मानताहुआ वादी पूर्व कहे प्रमाण प्रथम प्रकरणके अर्थबिषे आक्षेप करेहै] ॐकारके निर्णयबिषे आत्मतत्त्वकी प्राप्तिका उपायपना कैसे प्रतिपादन करतेहौ, इस शंकापर कहतेहैं [हम [धूम अग्निवत्] अनुमान प्रमाणके आश्रयसे ॐकारके निर्णयको आत्मज्ञानका उपायनहीं जानते कि जिसकरके व्याप्तिका अभावरूप दोष प्राप्तहोवे, किन्तु श्रुतिवाक्यके शब्द प्रमाण से ॐकारका निर्णय आत्मज्ञानका हेतुहै, इसप्रकार समाधान करतेहैं]"ॐमित्येतत्"। "एतदालम्बनंश्रेष्ठम्"। "एतद्वै सत्यकाम परञ्चापरञ्च ब्रह्म यदोंकारः । तस्माद्विद्वानेतेनैवायतने नैकतर मन्वेति"। " ॐमित्यात्मानंयुञ्जीत" । "ॐमितिब्रह्म" । "ॐकार एवेदं सर्वम्" (ॐ इसप्रकारका यह, आलम्बन श्रेष्ठ है, हे सत्यकाम!यह जो पर अरु अपररूप ब्रह्महै सो ॐकार है, ताते विद्वान् इसही साधनमे उभयके मध्य एकको प्राप्तहोता है, ॐ इसप्रकार आत्मा (बुद्धि) को योजनाकरे, ॐयह ब्रह्महै, ॐकार ही यह सर्व है । इत्यादि अनेक श्रुतियोंके प्रमाणसे । सर्पादि [ननु आपकरके व्याप्तहुये भ्रांतिवाले सन्मात्र चिदात्माबिषे प्राणादि विकल्पको कल्पित होनेसे आत्माको सर्वका आश्रयपनाहै परन्तु ॐकारको वो सर्वका आश्रयपनाहै नहीं क्योंकि तिसके अनुस्यूतपनेका अभावहै ताते, यह आशंका होनेसे तहां कहतेहैं] विकल्प के आश्रय रज्ज्वादिकोंवत्, जैसे अद्वैतरूप आत्मा परमार्थकरके सत् रूपहुआ प्राणादि विकल्पोंका आश्रय है । तैसे प्राणादिरूप विकल्पों को बिषय करनेवाला वाणीरूप प्रपंच ॐकारही है । अरु सो [ननु अर्थों के समूह को आत्मरूप आश्रयवाला होने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके, अरुओंकाररूप आश्रयवालाहोनेकरके, वाणीरूप प्रपंचको दोनों आश्रय प्राप्तहुये, ऐसा कहना बनेनहीं, इसप्रकार कहते हैं] ॐकार आत्माका स्वरूपही है, क्योंकि ॐकार आत्माका वाचक है ताते। अरु ॐकार के विकार शब्दके उच्चारणका बिषय प्राणादि सर्वआत्माका बिकल्पनासे भिन्ननहीं, क्योंकि "वाचारम्भणंविकारोनामधेयं" (वाणी से उच्चारणकिया विकार नाममात्र है) अरु " तदस्येदंवाचातन्त्या नामभिर्दामभिः सर्व्वं सितम् "। " सर्व्वहीदंनामानीत्यादि" (सो इसका यह सर्ववाणी रूप तन्तुसे नामरूपा दामों (रज्जुओं) से बद्ध (बँधे) हैं। सर्व ही यह नामबिषे हैं। इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे ॐकारकोसर्ब का आश्रयपना बनेहै। [प्रथम प्रकरणके अर्थको प्रतिपादन करके तिस अर्थबिषे मूल श्रुतिको प्रकट करतेहैं] एतदर्थ यह श्रुति " ॐमित्येतदक्षरमिदꣳसर्व्वं " (ॐइसप्रकारका यह अक्षर यह सर्वहै) इसप्रकारकहे हैं। जो यहबिषयरूप अर्थोंका समूहहै तिसकोनामसे अभिन्नहोने करके, अरु नामको ॐकारसे अभिन्नहोने करके ॐकारही यह सर्वहै। अरु जो परब्रह्म नामके कथनरूप उपाय पूर्वकही जानने में आवता है सो ॐकारही है। [अब "तस्य" (तिसका) इत्यादिरूप मूलश्रुतिकेभागको प्रकटकरके व्याख्यान करते हैं] " तस्योपव्याख्यानंभूतं भवद्भविष्यदिति सर्व्वमोंकारएव " (तिसका उपव्याख्यानहै, ' भूत, वर्तमान, भविष्यत् ' यह सर्व ॐकारही है) अर्थात् तिस इस पर अरु अपर रूप 'ॐ' इसप्रकार के अक्षरको ब्रह्मकी प्राप्तिका उपाय होनेसे, अरु ब्रह्मके समीप (नाम) होनेकरके विप्रकृष्ट कथनरूप प्रसंगबिषे प्राप्त जो उपाख्यानहै, सो सम्यक्प्रकार जाननेके योग्यहै। अरु उक्त न्यायसे ' भूत, वर्तमान, भविष्यत् ' इन तीनोंकालोंकरकेपरिच्छेद (भेद) करने के योग्य जो बस्तुहै सोभी सर्व ॐकारही ह। " यच्चान्यत्त्रिकालातीतंतदप्योङ्कारएव " (जो अन्य तीनोंकालों से अतीत (भिन्न) है सो भी ॐकारही है) अर्थात् जो अन्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्व्वंह्येतद्ब्रह्मायमात्माब्रह्मसोयमात्माचतुष्पात्२॥

तीनोंकालों से पृथक् कार्यरूप लिंगसे जानने योग्य, अरु काल करके परिच्छेद करने को अयोग्य । कारणरूप । अव्याकृतादिक हैं । वा सर्वका कारण परमात्मा है । सो भी ॐकारही है । अर्थात् आकाशको सर्वत्र पूर्ण होनेसे उसको देशकृत परिच्छेद नहीं, परन्तु "एतस्माद्वाएतस्मादात्मन आकाशःसंभूत" इत्यादि प्रमाणसे आकाशको उत्पत्तिवाला होनेसे वो अपनी उत्पत्ति के पूर्वकाल में अभावरूप है ताते आकाश को कालकृत परिच्छेदहै, ताते आकाशादि सर्वकार्य भूत, भविष्यत्, वर्त्तमान, इनकालत्रय कृत परिच्छेदवालाहै, अरु आकाशादि सर्वकार्योंका करण जे सत् चैतन्य परमात्मा ब्रह्महै सो "अजोनित्यः" इत्यादि अनेकश्रुतियों के प्रमाणसे उत्पत्ति विनाश से रहित अजन्मा नित्य सत्यहै, एतदर्थ उसबिषे कालकृत भी व्यवधान नहीं । इस कहने का अभिप्राय यह है कि "भूतंभवद्भविष्यदितिसर्व्वमोंकारएव" इस श्रुतिसे आकाशादि सर्व्वकार्य जो उत्पत्ति विनाशवालाहै सो सर्व कालत्रय के परिच्छेदवाला ॐकारका वाच्यहै "तदेववाच्यंप्रणवोहिवाचको" इत्यादिप्रमाणसे । अरु "यच्चान्यत्त्रिकालातीतं तदप्योंकारएव" इस श्रुतिवाक्यसे, जो कालत्रयके बिच्छेदवाले कार्य्यरूप पदार्थोंसे अन्यजो सर्वका कारण अधिष्ठान सर्वात्मा परब्रह्महै सो ॐकारकालक्ष्यहै, ऐसाजानना ॥ यहां [वाच्य अरु वाचकको एकही सत् वस्तुबिषे कल्पितहोने करके तिनकी एक रूपताको कथनकियाहैताते, पुनः (सर्वयहब्रह्महै) इसप्रकार क्यों कहते हैं, ऐसा जहां बिकल्प है, तहां उक्त अर्थके अनुवादपूर्वक आग्रिमवाक्य के फलसहित तात्पर्य्यको कहतेहैं] नाम (वाचक) अरु नामी (वाच्य) इनकी एकता के होने से भी नामकी प्राधान्यता से यह निर्देश कियाहै १ ॥

२हेसौम्य,! "ॐ"[वाच्यको वाचकपनेके कथन करकेही तिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(वाच्य वाचककी) एकताकी सिद्धिसे, पुनः वाचक की वाच्य रूपताका कथनरूप व्यतिहार (उलटायके कथन) करना व्यर्थ है, यह आशंका करके कहते हैं। यहां यह अर्थहै कि वाच्य से वाचककी एकताको न कथन करके वाचकसेही वाचक की एकता के कथन करने से उपाय अरु उपेय की करीहुई जो एकता, सो मुख्यनहीं, किन्तु गौणहै, इसप्रकारकी आशंका प्राप्त होवेगी,तिसके निवारणार्थ व्यतिहारका कथन सफल है] " ॐ मित्येतदक्षरमिदंसर्व्वं" इत्यादि नामकी प्रधानता से निर्देशकरी वस्तुका पुनः नामी की प्रधानता से जो निर्देश कहिये कथन है, सो नाम अरु नामी की एकताके निश्चयार्थ है। अरु अन्यथा नामके बिषे नामीका निश्चय होवेगा, अरु नामीकी नामरूपता गौणहै, इस प्रकारकी शंका उत्पन्न होवेगी। अरु वाच्य अरु वाचकरूप नामी अरु नामकी एकता के निश्चयका इन दोनोंको एकही प्रयत्न से एक कालबिषे लय करताहुआ तिससे विलक्षण ब्रह्मको (कि जिसबिषे नाम अरु नामी इत्यादि कोई भी कल्पना नहीं) प्राप्त होता है, यह प्रयोजन है । अरु तैसेही आगे कहेंगे कि "पादामात्रामात्राश्चपादा" (पाद जो हैं सो मात्रा हैं अरु जो मात्राहैं सो पादहैं)। सोई [कहेहुये वाचकके वाच्यसे अभेदबिषे वाच्यको प्रकटकरके योजना करते हैं] कहतेहैं " सर्व्वंह्येतद्ब्रह्मायमात्माब्रह्म " (सर्वही यह ब्रह्महै, यह आत्माब्रह्म है) अर्थात् सो सर्वकार्य अरु कारणही ब्रह्महै। सर्व जो यह ॐकारमात्र है, इसप्रकार श्रुतिने कहाहै,सो यह ब्रह्महै। इसप्रकार सो परोक्षपने करके कथनकिये ब्रह्मको प्रत्यक्ष (अपरोक्ष) विशेष करके निर्देश करते हैं। यह आत्माब्रह्महै। यह "अयं" (यह) इसकरके 'विश्व, तैजस, प्राज्ञ, अरु तुरीय, इन चार पादवाला होने से विभाग को प्राप्तहुये आत्माको प्रत्यगात्मारूप होने करके कथन करने को जो इच्छित अर्थ तिसके निश्चयार्थकसाधारण शरीरके हस्ताग्र (अंगुली वा करतल) को अपने हृदय देशपर्यंत लेआवनेरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्यापारमय अभिनय से "अयमात्मा" (यह आत्मा है) । अर्थात् " अंगुष्ठमात्रःपुरुषोऽन्तरात्मा सदाजनानांहृदये सन्निविष्टः " इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे अंगुष्ठप्रमाण हृदयनामक मांसपिंडी 'जो वक्षस्थलके मध्यहै, तिसके सम्बन्धसे तिसकेमध्य 'घटमें आकाशवत्, अंगुष्ठमात्र चैतन्य पुरुष है तिसको सर्वका द्रष्टा होने से प्रत्यक्षकरके 'अहं आत्माहै, इसप्रकार अंगुलि निर्देशसे कहतेहैं। इसप्रकार कहते हैं। "सोऽयमात्मा चतुष्पात्" {सो यह आत्मा चारपादवाला है} अर्थात् सो [अब "सोऽयं" (सो यहहै) इत्यादिरूप अन्यवाक्य को प्रकटकरके व्याख्यानकरतेहैं] यह ओंकारका वाच्य अरु पर (सर्वाधिष्ठान) अरु अपर (प्रत्यगात्मा) रूप होनेकरके स्थितहुआ आत्मा चारपादवालाहै । तहां दृष्टान्त कहते हैं, कार्षापणके पादवत्, [आत्माको सर्वाधिष्ठान होने करके अपरोक्षतासे पर (श्रेष्ठ) पनाहै,अरु उसको प्रत्यगात्मरूपतासे अपर (अश्रेष्ठ) पनाहै, तिस हेतुकरके कार्यकारण रूपसे सर्वका स्वरूप (अपनाआप) होने करके स्थितहुआ जो आत्मा तिसके ज्ञानकी सुगमताके अर्थ उस बिषे चारपाद की कल्पना कियाहै, तिस बिषे दृष्टान्त कहते हैं। यहां यह अर्थहै कि कोई एक देश बिषे षोड़शपण अन्नके माप करने के पात्र विशेषका नाम 'कार्षापण, कहते हैं, अर्थात् किसी एकपात्र विशेषमें एकमनके प्रमाण अन्न विशेष पूर्णता से आवताहै अरु उस एकही पात्र में 'एकमन, पौनमन, आधमन, पावमन, इसप्रकारमापने के चार चिह्न होनेसे उस पात्रकी चार पादवाला कल्पना करते हैं तैसे । तहां उसपात्रबिषे व्यवहारकी बाहुल्यता सिद्ध्यर्थ पादोंकी विशेष कल्पना करते हैं,। तैसेही इस आत्मा बिषे भी पादोंकी कल्पना जाननी । परन्तु जैसे गौको चार पादवाली कहते हैं तैसे आत्मा चार पादवाला कहनेको शक्य नहीं,क्योंकि आत्माकोजोनिष्कल निरवयवादि भावकी प्रतिपादक श्रुतियां हैं तिनसे विरोध होवेगा ताते] गौके पादवत् नहीं [विश्वसे आदिलेके तुरीयपर्यन्त चार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जागरितस्थानोबहिःप्रज्ञःसप्ताङ्गएकोनविंशतिमुखः स्थूलभुग्वैश्वानरःप्रथमःपादः ३ ॥

पादरूप । पदार्थोंबिषे जो पाद शब्द है, सो जब करण व्युत्पत्ति वाला । अर्थात् साधनरूप अर्थवाला । होवे तब विश्वादिकोंवत् तुरीयकेभी साधन कोटिबिषे प्रवेशके होनेसें ज्ञेयवस्तुकी । अर्थात् मुमुक्षुपुरुष करके श्रवणादि साधनोंद्वारा तुरीयआत्माको आत्मस्वसे जानना है तिसकी । असिद्धि होवेगी, अरु जब पाद शब्द विश्वादिक सर्वबिषे कर्म व्युत्पत्ति (विषयरूपअर्थ) वालाहोवे है, तब सर्व को ज्ञेयरूप होनेसे उनको ज्ञानके साधनताकी असिद्धि होवेगी । यह आशंकाकरके पादशब्दकी प्रवृत्तिको विभागकर के प्रकट करते हैं] विश्वादिक तीनोंके मध्य पूर्वपूर्व । पादोंकेउत्तर उत्तर पादों बिषे । विलयकरने से तुरीयाका निश्चय होता है । अरु इसप्रकार होनेसे पादशब्द तुरीयाके कारणभावका साधन होताहै, अरु प्राप्तहोता है । इसप्रकार होनेसे पादशब्द तुरीयके कर्म कहिये 'विषय, भावका साधन होता है । परन्तु निरवयवरूप आत्माको उभयप्रकारके पादोंकी कल्पना बने नहीं २ ॥

३ हे सौम्य! [आत्माकेचारपाद तो दूरसेही निषेधकियेहैं, इस प्रकार वादीशंकाकरे है] प्र० ॥ आत्माका चारपादकरके युक्तपना कैसेहै, उ० ॥ तहां कहते हैं, "जागरितस्थानोबहिःप्रज्ञः" "जागरितस्थान वहिःप्रज्ञ है" अर्थात् जाग्रत् अवस्था है । स्थान अर्थात् अभिमानका विषय । जिसका, ऐसा जागरितस्थानहै । अरु बहिर जो आत्मा को अपने आप आत्मत्वसे भिन्न विषय, तिन बिषे है प्रज्ञा [प्रज्ञा जो बुद्धि, तिसको प्रथम अन्तर होने की प्रसिद्धि से, तिसका " बहिःप्रज्ञः " ८ बाह्य के विषय वाली) यह विशेषण अयुक्त है, ऐसी आशङ्काकरके तिसका व्याख्यान करते हैं । यहां यह भाव है कि, चैतन्यरूप जो स्वरूप भूत प्रज्ञा है सो बाह्य विषयों बिषे भासती नहीं, क्योंकि वो प्रज्ञा विषय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की अपेक्षासे रहितहै ताते, किन्तु बुद्धिरूपजो प्रज्ञाहै सो बाह्यके विषयों बिषे भासतीहै] जिसकी सो कहिये बहिःप्रज्ञ । अर्थात् अविद्याकृत [बाह्य विषयोंका वास्तवकरके अभावसे, वो प्रज्ञा [जो अन्तर है] सो बाह्यविषयोंबिषे कैसे भासतीहै, ऐसीआशङ्का करके कहते हैं । यहां यहतात्पर्य्य है कि, [आत्मविषयिणी]स्वरूप भूत जो प्रज्ञा है, सो वास्तवसे बाह्यविषयवाली नहीं अङ्गीकार कियाहै, परन्तुबुद्धिवृत्तिरूप जो [विषयादिवस्तुविषयिणी निश्चयात्मक] अज्ञानकरके कल्पित प्रज्ञाहै, सो बाह्यविषयोंवालीप्रज्ञा होतीहै । अरु सो बुद्धिवृत्तिरूप प्रज्ञाभी वास्तवसे बाह्य विषय भावको अनुभव नहींकरती क्योंकि अज्ञानकरके कल्पित होनेसे वास्तवमें उस प्रज्ञाका अभावहै । अरुउस [प्रज्ञाका विषय] बाह्य विषय सोभी अज्ञानकरके कल्पित है ताते । एतदर्थ बुद्धिवृत्तिका जो बाह्य विषयोंका प्रकाशकपना है सो प्रातिभासिक (कल्पित) है]जो बाह्यप्रज्ञाहै सोबाह्य के विषयवाली (विषयाकार) ही भासे है तैसे [अब पूर्व के विशेषणसे इतर विशेषणको योजनाकरते हैं] "तस्यहवैतस्यात्मनो वैश्वानरस्यमूर्द्धैव सुतेजाश्चक्षुर्विश्वरूपः प्राणःपृथग्वर्त्मात्मा सन्देहोबहुलोवस्तिरेवरायिः पृथिव्येवपादौ" "अग्निहोत्रकल्पनाशेषत्वेनाग्निमुखत्वेनाहवनीय उक्तः" तिस इस वैश्वानररूप आत्माका सुन्दरतेजवाला स्वर्गलोक मस्तक है, अरु श्वेतरक्तादि नानाप्रकारके गुणोंवाला सूर्य्य उसका चक्षु है, अरु नानाप्रकारकी [तिर्यक्] गतिसे विचरनेके स्वभाववाला वायु उसका प्राणहै, अरु विस्तृततारूपगुणवाला आकाश उसका देहमध्यभाग है, अरु उनका हेतुरूप जल उसका मूत्रस्थान है, अरु पृथिवी उसके दो पादहैं । अरु अग्निहोत्रकी कल्पना बिषे उपयोगी होनेकरके आहवनीय नामवाला जो अग्निहै सो उसके मुखरूपसे कहाहै।इसप्रकारश्रुतिकरके उक्त यहसातहैं अङ्गजिसके ऐसा "ससांग" [सातअङ्गवाला] है । अरु "एकोनविंशतिमुखः" [एक ऊन बीस मुखवालाहै] अर्थात् तैसेही [अब अन्य विशेष-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

णोंकी योजना करतेहैं] पांच ज्ञानेन्द्रिय अरु पांचकर्म्मेन्द्रिय, अरु प्राणादिभेदसे पांच वायु, अरु 'मन, बुद्धि, चित्त, अरु अहङ्कार, यह चार अन्तःकरणकी वृत्तियां, यह सर्व मिलके हुये जो उन्नीस १९ सोई मुखवत् उसके मुख (ज्ञानकेद्वार) [यहां ज्ञानपदकर्मकाउपलक्षण है, एतदर्थ ज्ञानके साधन अरु कर्मके साधन इस विश्व नामवाले जीवके मुख (ज्ञान अरु कर्मके साधन) हैं। यहां इस प्रकार विवेचनकरने को योग्य है, तहां पांच ज्ञानेन्द्रियां अरु एक मन अरु एक बुद्धि, इनसातको पदार्थोंको को ज्ञानबिषे साधनपना प्रसिद्ध है, अरु वागादि कर्मेन्द्रियों को वचनादि कर्म्मों बिषे साधनपना प्रसिद्ध है । पुनः प्राणोंको ज्ञान अरु कर्म इन दोनों बिषे परम्परासे साधनपना है । क्योंकि प्राणोंके होनेसेही ज्ञान अरु कर्मकी उपपत्तिहै, अरु तिनकेअभावसे ज्ञान कर्मकीअनुपपत्तिहै ताते । अरु अहङ्कारको भी प्राणवत् ज्ञान कर्म दोनोंबिषे साधनपना माननेके योग्यही है।अरु चित्तको भी चैतन्याभास के उदयबिषे साधनपना कहाहै] जिसके, इसप्रकारका उन्नीस १९ मुखवाला है । अरु " स्थूलभुग्वैश्वानरःप्रथमःपादः " ८ स्थूल भुक् वैश्वानर है सो प्रथम पादहै ; अर्थात् [पूर्वोक्त विशेषणों करके युक्त वैश्वानरका " स्थूलभुक् " ऐसा अन्य विशेषण है, तिसका विभागकरते हैं, यहां शब्दादिक विषयोंका स्थूलपना है सो दिशादिक देवता के अनुग्रह सहित श्रोत्रादिक इन्द्रियों से ग्रहणहोनेरूप है] सो ऐसे विशेषणोंवाला वैश्वानर उक्त उन्नीस द्वारोंसे शब्दादिक स्थूल विषयोंको भोगता है ताते सो ' स्थूल भुक् है, अरु [अब वैश्वानर शब्दका प्रसंग बिषे प्राप्त विश्व जीवको विषय करनेपना स्पष्ट करते हैं] " विश्वेषांनराणामनेकधानयनाद्विश्वानरः । यद्वाविश्वश्चासौ नरश्चेति विश्वानरः विश्वानर एव वैश्वानरः " ८ सर्व नरों को अनेक प्रकारसे लेजाता है.एतदर्थ विश्वानर है ; अथवा विश्व ऐसा जो नर सो कहिये विश्वानर । विश्वानरही सर्व [विश्व ऐसा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो नर, सो कहिये वैश्वानर । इसप्रकार से सर्व नरों की एकता कैसे बनेगी, क्योंकि जाग्रदवस्थावाले नरों को अने रूपता होनेसे तिनके तादात्म्यका असम्भव है ताते,यह आशङ्क करके कहते हैं । यहां सर्वपिंडोंका स्वरूप समष्टि विराट् कहते हैं ताते तिस विराट् रूपसे सर्व विश्वजीवोंको अभिन्नहोनेसेउक्त की सिद्धिहै] पिंडके स्वरूपसे अभिन्न होनेकरके वैश्वानरहै, सं प्रथम पादहै [ननु विश्वकी तैजससे उत्पत्ति के होनेसे ति तैजसकाही प्रथमपनायुक्त है, अरु कार्यको पश्चात्होना उचि है, यह आशङ्का करके कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि विश्वको प्रथमपना है सो लयकरनेकी अपेक्षासे है, उत्पत्तिकी अपेक्षा नहीं] अरु पिछले तीनपादके ज्ञानको इसके ज्ञानपूर्वक होने इस वैश्वानरको प्रथमपना है शङ्का " अयमात्माब्रह्म, सोयम त्माचतुष्पात्" यहआत्माब्रह्महै सोयहआत्मा चारपादोंवाला है [अबअध्यात्म(व्यष्टि)अरु अधिदैव(समष्टि)के भेदको लेके पूर्वो विश्वके सप्तांगपनके अर्थवादीआक्षेपकरताहै]इसद्वितीयवाक्य प्रत्यगात्माके चारपादकरके युक्तपनेरूप प्रसंग बिषे, स्वर्ग लोक दिकों का मस्तकादि अंगपना कैसेकहा, तहां कहते हैं, [अध्या (विश्व) अरु अधिदैव (विराट्) के भेदके अभाव होनेसे विश्व पूर्वोक्त सप्तांगपने का विरोध है नहीं, इसप्रकार । आक्षेपक परिहारकरते हैं यहां कथनकिये हेतुका यह भावार्थहै कि,अधि करके सहित पञ्चीकृत पञ्चमहाभूत अरु तिनके कार्यरूप सर्व स्थूलरूप अध्यात्म प्रपञ्चको इसविराट् स्वरूपसे प्रथमपाद है । अरु अपञ्चीकृत पञ्चमहाभूत अरु तिसके कार्यसूक्ष्मरूप ति अध्यात्म प्रपञ्चकोही हिरण्यगर्भरूपसे द्वितीयपादपना है । कार्यरूपताको त्यागके कारणरूपताको प्राप्तहुये तिसही अध्या प्रपञ्चको अव्याकृत रूपसे तृतीय पादपनाहै । अरु कार्य कार ताको त्यागके सर्वकल्पना के अधिष्ठानपनेकरके स्थितहुये तिस को 'सत्य, ज्ञान, अनन्त, अरु अद्वय आनन्द, रूपसे चतुर्थ पा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पनाहै । अतएव ऐसे अध्यात्म अरु अधिदैवके अभेदको लेके उक्त प्रकारसे चार पादवान्पनेको कहने को इच्छित होने से पूर्व पूर्व पादको उत्तरोत्तर पादरूप से विलय करने से जिज्ञासुकी तुरीय स्वरूप बिषे स्थिति सिद्धहोतीहै] यह दोषहै नहीं, क्योंकि अधिदैव सहित सर्वप्रपंचके इसआत्माके स्वरूपसे चारपादपना कहने को इच्छित होनेकरके । अरु ऐसे [जब इसप्रकार जिज्ञासु मुमुक्षुकी तुरीय बिषे स्थिति अंगीकार करते हैं, तब तत्त्वज्ञानके प्रतिबंधक प्रातिभासिक कहिये कल्पित द्वैतकी निवृत्ति के हुये ८ अद्वैत परिपूर्णब्रह्ममैं हौं ? इसप्रकार महावाक्यार्थका साक्षात्कार सिद्धहोवेहै, इसप्रकार फलितको कहतेहैं] सर्व प्रपंचकीनिवृत्तिके हुये, अद्वैतकी सिद्धि होतीहै, सो सर्व भूतोंबिषे स्थित एक आत्मा देखा (अनुभवकिया) होताहै, अरु सर्व भूत आत्माबिषे देखेहुये होते हैं । इसप्रकार " यस्तुसर्वाणिभूतान्यात्मन्येवानुपश्यति" ८ जो सर्वभूतोंको आत्माबिषेही देखताहै ? इसईशावास्यउपनिषद्के षष्ठ मन्त्ररूप श्रुतिका अर्थ समाप्त कियाहोताहै [अध्यात्म अरु अधिदैवके अभेदके अंगीकार रूपद्वार से पूर्वोक्तरीत्या तत्त्व ज्ञानके । होनेके । अंगीकारबिषे दोष कहते हैं] अन्यथा अपने देहकरके परिच्छिन्नही प्रत्यगात्मा सांख्यादिमतवादियोंवत् अनुभव कियाहोवेगा । अरु तैसे [ननु, आत्माकी एकता बिषे सुखादिकोंके भेदकी व्यवस्थाके असंभव से । अर्थात् जो कदापि सर्व शरीरों में एकही आत्मा मानिये तो एकके सुखसे सर्वही सुखी, अरु एकके दुःखसे सर्वही दुःखी, अरु एकके बद्धसे सर्वही बद्ध, अरु एकके मुक्तसे सर्वही मुक्त, ऐसा होना चाहिये, परन्तु सो न होके कोई सुखी है, कोई दुःखी है, कोई बद्धहै, कोई मुक्त है, सो सर्वको प्रकट अरु युक्तही है, अरु शरीर २ प्रति भिन्न भिन्न आत्मा मानने से कोई सुखी अरु कोई दुःखी इत्यादि जो लोक बिषेव्यवस्था है सो यथार्थ है अरुसोई सर्व शरीरोंबिषे भिन्न भिन्न आत्माका बोधक लिंग है । शरीर शरीरकेप्रति आत्माका भेद

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिद्ध होताहै, । यह आशंकाकरके कहते हैं । यहां यह अर्थहै कि सांख्यादि शास्त्रोंकोजो द्वैतकोविषयकरनेवाला ज्ञानहै सो वांछि तहै, तिसकरके अद्वैतको विषयकरनेवाले तेरे सिद्धान्तके विशे के अभावसे तेरे पक्षबिषे अद्वैत तत्व है । इसरीतिका श्रुतिसि विशेष सिद्ध न होवेगा । एतदर्थ भेदवादबिषे श्रुतिकाविरोध प्रा होवेगा । अरु सुख दुःखादिकों की व्यवस्था तो उपाधिके कि भेदको आश्रय करके सिद्ध होतीहै] होनेसे अद्वैतहै, इसप्रका श्रुतिका किया विशेष न होगा, क्योंकि सांख्यादिकोंके मतका अविशेषसे । अरु [ननु, भेदवाद बिषेभी अद्वैतकी श्रुति विरोध पावती नहीं, क्योंकि ध्यानार्थ "अन्नंब्रह्मेति, विजानीयात्" इ वाक्यवत् ' अद्वैत तत्वहै, इस उपदेशकी सिद्धिहै, यह आशंक करके कहते हैं, यहां यह अर्थहै कि उपक्रम अरु उपसंहार क एकरूपतादि लिंग (चिह्न) से सर्व उपनिषदोंका सर्व देहों बि आत्माकी एकताके प्रतिपादनबिषे तात्पर्य्य इच्छित है, एतद अद्वैत श्रुतिका ध्यानरूप अर्थवान्पना इच्छा करनेको शक्यनहीं क्योंकि एकतारूप वस्तुबिषे तात्पर्य्यके लिंगका अभावहै ताते सर्व उपनिषदों को सर्वात्माकी एकताका प्रतिपादकपना अंगी कार करते हैं [अध्यात्म अरु अधिदैवकी एकता को अंगीका करके अद्वैतबिषे तात्पर्य्यके सिद्धहुये अध्यात्मिकरूप व्यष्टिस्वरू विश्वकी त्रैलोक्यस्वरूप अधिदैवरूप विराट्के साथ एकता व ग्रहण करके, जो तिस विश्वका सप्तांगवान्पना पूर्व कहाहै, स अविरुद्ध है, इसप्रकार समाप्त करते हैं] याते इस अध्यात्मम पिंडरूप आत्माकी स्वर्गलोकादि अंगोंसे युक्तताकरके अधिदै रूप विराट् आत्मासें एकताके अभिप्राय से सप्तांग करके युक्त का वचन है । क्योंकि " मूर्द्धातेव्यपतिष्यदिति" ८ मस्त तेरापतनहुआ ? अर्थात् [अध्यात्म अरु अधिदैवकी एकताबि अन्य हेतुकहे हैं] इत्यादि लिंगको देखतेहैं ताते । अरुयहां [नन् मूलग्रंथबिषे विराट्की विश्वसे एकताही देखतेहैं । ताते सम्पूर्ण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके अध्यात्म अरु अधिदैवकी एकताको कहना वाञ्छितकरके भाष्यकारने अद्वैत बिषे तात्पर्यको कैसे कहाहै, इस शंकापर कहते हैं, यहां यह अर्थहै कि जो मुखसे विराट्की एकता देखाई, सो तो हिरण्यगर्भकी तैजससे, अरु अव्याकृतनाम उपाधिवाले अन्तर्यामीकी प्राज्ञसे जो एकताहै तिसके उपलक्षणार्थहै। एतदर्थ मूलग्रंथबिषे भी सम्पूर्णता करके अध्यात्म अरु अधिदैवकी एकता कहनेको इच्छित है। इसहीसे अद्वैतबिषे तात्पर्यकी सिद्धि है] विराट्की जो एकताहै सो हिरण्यगर्भ अरु अव्याकृतरूप आत्मा के उपलक्षणार्थ है। यह मधुब्राह्मण बिषे कहाहै " यश्चायमस्यां पृथिव्यां तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोयश्चायमध्यात्म मित्यादि" ८ जो इस पृथिवी बिषे तेजोमय अमृतमय पुरुषहै, अरु जो यह अध्यात्म है ? इत्यादिक वाक्योंसे। अरु [ननु, विश्व अरु विराट् को स्थूल प्रपंचके अभिमानी होनेसे, अरु तैजस, हिरण्यगर्भको सूक्ष्म प्रपंचके अभिमानी होनेसे तिनकी एकता युक्तहै, परन्तु प्राज्ञ अरु अव्याकृतकी किस तुल्यतासे एकताहै, इसप्रकार की शंकाके हुये, कहते हैं, यहां यह अर्थहै कि प्राज्ञजो है सो सुषुप्ति बिषे सर्वविशेषको लयकरके निर्विशेष होताहै, अरु अव्याकृत जो है सो प्रलयदशाबिषे सर्व विशेषको अपनेबिषे लयकरके निर्विशेष रूपसे स्थितहोताहै, ताते उक्त तुल्यताको पूर्व करके तिन प्राज्ञ अरु अव्याकृतकी एकता अविरुद्ध है] प्राज्ञ अरु अव्याकृतकी एकता तो सिद्धही है, क्योंकि दोनोंकी निर्विशेष रूपताहै ताते। इसप्रकार [पूर्वोक्तरीत्या अध्यात्म (व्यष्टि) अरु अधिदैव (समष्टि) की एकताके सिद्धहुये द्वैतके विलयकी प्रक्रियासे अद्वैत सिद्ध हुआ, इसप्रकार फलित, अर्थात् सिद्धहुये, अर्थको कहते हैं] सर्व द्वैतकी निवृत्तिके हुये " एकमेवाद्वितीयम् " एक अद्वैत है यह सिद्ध हुआ ३ ॥

४ हे सौम्य ! [उक्तप्रकार आत्माके विश्वरूप प्रथमपाद को व्याख्यान करके, अब तैजसरूप द्वितीयपादको प्रकटकरके ति-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्नस्थानोऽन्तः प्रज्ञः सप्ताङ्गएकोनविंशतिमुखः प्रविविक्तभुक्तैजसोद्वितीयःपादः ४ ॥

सका व्याख्यान करते हैं] " स्वप्नस्थानो " ८ स्वप्नरूप स्थान वाला ; अर्थात् स्वप्न, हे ममलक्षण अभिमानका विषयरूपस्थान जिस तैजसरूप द्रष्टाका ऐसा जो ८ स्वप्नस्थानवाला, ['स्वप्न' इस पदके निरूपणार्थ तिसके कारणको निरूपण करते हैं] जाग्रत् की जो प्रज्ञा (बुद्धि) है सो अनेक साधनोंवाली अरुबाह्य (स्थूल) को विषयकरनेवाली हुयेवत् भासमान, अरु मनरूप स्फुरण-मात्रहुई तिसप्रकारके संस्कारको मनबिषे धारणकरे है । तैसे संस्कारवाला सोमन, चित्रित [जाग्रत्की वासनाकरके युक्त हुआ जो मन सो स्वप्नबिषे जाग्रत्वत् भासताहै, इस अर्थ बिषे दृष्टान्त कहतेहैं । जैसे चित्रकरके युक्तहुआ जो पट सो चित्रवत् भासताहै ८ अर्थात् अनेक रंगोंके सूत्रकरके निर्मित बेल बूटादि वाला पट चित्रवत् भासताहै ८ तैसे जाग्रत्के संस्कार करके (जो मनही करके कल्पित हैं) युक्त हुआ जो मन सो जाग्रत्वत्ही भासताहै, यह युक्तहै, इत्यर्थः] पटवत्बाह्यके साधनकी अपेक्षा से रहित,अरु अविद्या,काम, कर्म, से प्रेरणा को प्राप्तहुआ जाग्रत् वत् भासताहै । अरु ऐसेही वृहदारण्यकी श्रुतिबिषे कहा भी है "अस्य लोकस्य सर्व्वावतोमात्रामपादायेति " " तथा परे देवे मनस्येकीभवतीति " " प्रस्तुत्यात्रैष देवःस्वप्नेमहिमानमनुभवती त्याथर्व्वणे " ८ इस सर्व साधनकी सम्पत्तिवाले लोककी मात्रा (लेशरूप वा सूक्ष्म वासना) को ग्रहणकरके सोवता है ; अरु ऐसेही अथर्वणवेदके ब्राह्मण प्रश्नोपनिषद्बिषेभीकहाहै, तथाच। ८ मनरूप परदेव बिषे एकवत् होताहै ; ऐसे प्रसंगबिषे प्राप्तकरके ८ इस स्वप्नबिषे यह (मनाख्य) देव महिमाको अनुभव करताहै ; अरु [ननु विश्वकी बाह्यइन्द्रियों से जन्य प्रज्ञाको, अरु तैजस की मनसे जन्य प्रज्ञाको अन्तर स्थितहोनेकी तुल्यता से, तैजस का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"अन्तःप्रज्ञः" ८ अन्तरकी प्रज्ञावाला ? यह विशेषण व्यावर्त्तक (विश्वादिकोंसे पृथक् करनेवाला) नहीं है, जहां ऐसी शंका है, तहां कहते हैं] इन्द्रियोंकी अपेक्षासे मनको अन्तर स्थित होनेकरके स्वप्नबिषे अन्तर है, तिस मनकी वासनारूप प्रज्ञा है जिसकी ऐसा जो "अन्तःप्रज्ञ" ८ अन्तरकी प्रज्ञावाला है ? अरु "ससाङ्ग एकोन विंशतिमुखः" ८ सातअंग अरु उन्नीस मुखवाला है ? । अर्थात् यह तैजस जो अन्तर की प्रज्ञावाला है सो । पूर्वके विश्ववत् सात अंग अरु उन्नीस मुखवाला है। अरु "प्रविविक्तभुक्तैजसोद्वितीयः पादः" ८ वासनामय सूक्ष्म भोगवाला है तैजस द्वितीयपाद है ? । अर्थात् प्रविविक्तभुक्, कहिये वासनामय सूक्ष्मभोग वा विरल भोगका भोक्ता है । [ननु, विश्व अरु तैजसका "प्रविविक्तभुक्" ८ वासनामय सूक्ष्मभोगोंका भोक्ता ? यह विशेषणतुल्य है, क्योंकि । विश्व अरु तैजस इन उभयकी बाह्य अरु अन्तर प्रज्ञाको भोज्यपनेकी तुल्यता है ताते, ऐसा जो वादीका कथन सो बने नहीं, क्योंकि उक्त उभयकी प्रज्ञाको भोज्यपने की तुल्यता के हुये भी तिस प्रज्ञाबिषे मध्यके भेदसे विश्वकी भोज्य (भोगने योग्य) जो प्रज्ञा है, सो विषय सहित होनेसे स्थूलकरके जानी जाती है। अरु जो तैजसकी प्रज्ञा है सो विषयके सम्बन्ध से रहित केवल वासनामात्र रूपवाली है, इसकरके तैजस बिषे सूक्ष्मभोग सिद्ध होते हैं, इसप्रकार कहा है] जाग्रत् बिषे विश्वको विषयसहित होनेसे स्थूल प्रज्ञाका भोग्यपना है। अरु यहां स्वप्नबिषे जिसकरके केवल वासनामात्र स्वरूपवाली प्रज्ञा भोग्य है, एतदर्थ प्रविविक्त (सूक्ष्म) भोग है। अरु [स्वप्नके अभिमानी को तेजके कार्य होनेके अभाव से तैजसपना काहेसे होवेगा, यह आशंका करके कहते हैं] विषय रहित केवल प्रकाशस्वरूप प्रज्ञाबिषे प्रकाशकपने करके होवे हैं। [अर्थात् स्वप्नका अभिमानी तेजकाकार्य नहीं परन्तु स्वप्न का प्रकाशक है एतदर्थ उसको तैजसपना होता है । इसकरके जो तैजस है सो द्वितीयपाद है ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्र सुप्तोनकञ्चनकामंकामयतेनकञ्चनस्वप्नंपश्य तितत्सुषुप्तम् । सुषुप्तस्थानएकीभूतःप्रज्ञानघनएवानन्द मयोह्यानन्दभुक्चेतोमुखः प्राज्ञस्तृतीयःपादः ५ ॥

५ हे सौम्य ! [उक्तप्रकार विश्व अरु तैजस दोनों पादों की व्याख्याकरके अब तृतीयपादके व्याख्यान करतसन्ते व्याख्यान करने के योग्य श्रुतिविषे "नकंचन" ८किसीकोभी नहीं> इत्यादि विशेषणों के तात्पर्य को कहते हैं । यहां यह अर्थ है कि स्थूल विषयवाले ज्ञानकी जहां प्रवृत्ति है ऐसा जो जाग्रदादिथा सो दर्शन वृत्तिकहतेहैं अरु स्थूलविषयके दर्शनसे (ज्ञान) से इतर जे दर्शन (ज्ञान) सो केवल वासनामात्र होनेसे अदर्शन है, तिस वासना मयकी वृत्ति जहां है सो स्वप्न, तिस स्वप्नको अदर्शनवृत्ति कहते हैं । अरु तिन दर्शनवृत्ति, अरु अदर्शनवृत्ति दोनों विषे सुषुप्तिवत् तत्त्वके अग्रहणरूप निद्राको तुल्यहोने से । " यत्रसुप्तो" ८ जहां सोयाहुआ > इत्यादि विशेषणोंकी तिन उक्तउभय वृत्तियों में प्राप्तिकेहुये, तिनसे भिन्नकरके सुषुप्तिके ग्रहणार्थ " यत्र सुप्तो " ८ जहां सोयाहुआ > इत्यादिरूप मूलश्रुतिके वाक्यविषे "नकंचन" ८ किसीको भी नहीं > इत्यादिरूप विशेषण हैं, सो जाग्रत् अरु स्वप्न उभयस्थानों से पृथक् करके सुषुप्तिको ही ग्रहण करावता है] " यत्रसुप्तोनकञ्चनकामं कामयतेनकञ्चनस्वप्नं पश्यतितत्सुषुप्तम् " ; जहां सोयाहुआ किसी भी कामकी कामना करता नहीं, किसी भी स्वप्नको देखता नहीं, सो सुषुप्तिवाला है>अर्थात् दर्शन (ज्ञान)अरु अदर्शन (अज्ञान) दोनोंवृत्तियांवाली जाग्रत् अरु स्वप्न अवस्थाविषे सुषुप्तिवत् तत्त्वके अबोधरूपनिद्रा को तुल्य होनेकरके, सुषुप्तिके ग्रहणार्थ इसउपनिषद्के पंचममन्त्र (श्रुतिवाक्य) विषे "यत्रसुप्तो" ८ जहां सोयाहुआ > इत्यादि रूप विशेषणहैं । [" नकञ्चनस्वप्नंपश्यति " ८ किसी भी स्वप्नको देखता नहीं> इसही विशेषण करके दोनोंस्थानों (जाग्रत्स्वप्न)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से सुषुप्तिकेभेदका सम्भवहोनेसे, अन्य विशेषण जोहैं सो" अकिञ्चित्कर" निष्प्रयोजनहैं, यह आशंकाकरके कहतेहैं । यहां यह अर्थहै कि तत्त्वका अप्रबोधरूप जो निद्राहै तिसको जाग्रदादि तीनों अवस्थारूप स्थानोंविषे तुल्यहोनेसे [तीनों स्थानों को समता है, अतएव] जाग्रत् अरु स्वप्नसे विभाग करके सुषुप्तिके लखावनेके अर्थ अन्य " यत्रसुप्तो" इत्यादि विशेषण हैं] अथवा जाग्रदादि तीनों अवस्थारूप स्थानों बिषे भी तत्त्वकी अबोधतारूप जो निद्राहै सो समानहै, एतदर्थ पूर्वके जाग्रत् स्वप्नरूप स्थानों से सुषुप्तिरूप स्थानका विभाग करते हैं, जिसस्थानका वा कालबिषे सोया हुआ पुरुष किसीभी भोगकी इच्छा करतानहीं,अरु किसी भी स्वप्नको देखता नहीं । [एकही विशेषणको व्यावर्त्तकपनेका संभव होनेसे, दो विशेषणोंका क्या प्रयोजनहै, यहआशंका करके दोनों बिशेषणों को विकल्पकरके व्यावर्त्तपनेका संभवहै, ताते व्यर्थ न होयके दोनोंही सप्रयोजनहैं, ऐसा मानके कहतेहैं,]जिस करके सुषुप्तिबिषे पूर्वके जाग्रत् अरु स्वप्नरूपस्थानोंवत् विपरीत ग्रहणरूप स्वप्नका दर्शन वा कोईभी कामना विद्यमान नहीं है, एतदर्थ सो सुषुप्तकहिये सुषुप्तिहै।सो सुषुप्तिहै स्थान जिसप्रज्ञाका ऐसा सुषुप्तिस्थानवालाहै । अरु " सुषुप्तिस्थान एकीभूतः प्रज्ञानघन एवानन्दमयो ह्यानन्दभुक् चेतोमुखःप्राज्ञस्तृतीयःपादः" ‹ सुषुप्तिस्थानवालाहै, एकीभूत है, प्रज्ञानघनही होताहै,आनन्दमयहै, आनन्दका भोक्ताहै, चेतोमुखहै, प्रज्ञा,तृतीयपादहै,अर्थात् उक्तप्रकार सुषुप्तिरूप स्थानवालाहै, अरु एकीभूतहै, [उक्तदोनों (किसी विषय वा भोगको इच्छता नहीं, अरु किसीभी स्वप्न को देखता नहीं, इन)विशेषणोंकरके विपरीत ग्रहणसे रहितपना अरु भोगके सम्बन्धसे रहितपना कहने को इच्छित है] अरु जाग्रत् [इस द्वैतसहित प्राज्ञ जीवका एकीभूतपनेरूप विशेषण कैसे संभवे, यह आशंका करके कहतेहैं] अरु स्वप्न दोनों अवस्थारूप स्थानों बिषे विभागकोपाया जो मनका स्फुरणरूप द्वैत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कासमूह, सो जैसे अपुनरूप आत्मासे भिन्न है, तैसेही तिस
के अपरित्यागसे, रात्रिके अन्धकारकरके ग्रस्त दिशा वा दिव
वत् अविवेककरके युक्तहुआ अपने विस्तारसहित कारण (अव्य
कृत) रूप होता है। तिस अवस्थाबिषे तिस (अव्याकृत, का
रूप) उपाधिवाला हुआ आत्माको एकीभूत कहते हैं। [यद्य
सुषुप्ति अवस्थाबिषे सर्व कार्योंका समूह कारणरूप होता है, त
तिसकारणरूप उपाधिवाला हुआ आत्मा 'एकीभूत, विशेष
वाला होताहै, तथापि कारणरूप उपाधिवाले आत्माका "प्रज्ञा
नघन" <प्रज्ञानघनहै> यह विशेषण अयुक्तहै क्योंकि सर्व उपा
सेरहित निरुपाधिरूप आत्माकोही "प्रज्ञानघन इत्यादि वि
षणका होना संभवेहै, यह आशंकाकरके कहते हैं] एतदर्थ स्व
अरु जाग्रत्बिषे मनकास्फुरणरूप जो प्रज्ञानहै सो सुषुप्तिबिषे घ
भूतहुयेवत् होता है। सो इस (सुषुप्ति) अवस्थाको अविवेकर
होनेसे घनप्रज्ञा "प्रज्ञानघन" इस विशेषणसे कहतेहैं। जैसेरा
बिषे रात्रिके घन अन्धकारसे अविभागको पाया सर्व पदार्थ घ
वत् होताहै (अर्थात् जाग्रत्, स्वप्न अवस्थामें मनका स्फुरणरू
जो घट पटादिकोंका नाना विभागयुक्त प्रज्ञानहै सो सुषुप्ति अ
स्थामें जबकि बुद्धि तमोगुण अविवेककरके आवृतघन अंधका
रूप होतीहै तब जाग्रत् स्वप्न अवस्थाका मनका स्फुरणरूप घ
पटादि सर्व पदार्थ (जैसे रात्रिके घन अंधकारकरके अविभाग
पायासता घट पटादि सर्व पदार्थ घनवत् होता है। तैसे आत्
प्रज्ञान घनही होताहै। [यहां "एव" शब्दकेपर्याय "ही,, शब्द
रके अज्ञानसे इतर जाति सूचित नहीं है, यह अर्थ होताहै] अ
मनको विषय अरु विषयीके आकारसे स्फुरण होनेसे हुआ
श्रम तज्जनित दुःखके अभावसे। उस अवस्थामें। आनन्द
बाहुल्यतासे आनन्दमय है, आनन्दरूपही नहीं, क्योंकि। स्थ
सुखानन्द। अविनाशी आनन्दसे रहित है ताते। अर्थात् सुषु
का जो आनन्दहै सो मनकी स्फुरणाजन्य श्रमजनित दुःख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभावसेहैं, ताते वो अविनाशी आनन्द न होके नाशवान् होनेकरके स्वरूपानन्द नहीं किन्तु आनन्दप्रायः है । जैसे लोकबिषे । गमनादि । श्रमसे रहितहोयके स्थितहुये पुरुषको सुखी आनन्द का भोक्ता कहते हैं । तैसेही सुषुप्तिबिषे यह । प्रज्ञाविशिष्ट चैतन्य। पुरुष जिसकरके अत्यन्तश्रमरहित स्थितको। अपनेबिषे । अनुभव करताहै, तिसकरके इसको आनन्दभुक् (आनन्दका भोक्ता)कहतेहैं "एषोऽस्य परमआनन्द इतिश्रुतेः" ‘यह इस पुरुषका परम आनन्दहै' इस श्रुतिके प्रमाणसे, अरु [प्राज्ञकाही"चेतोमुखः" यहजो अन्य विशेषण है अब तिसका ब्याख्यान करते हैं] स्वप्न अरु जाग्रत्मय प्रतिबोधरूप चित्तके प्रतिद्वारभूत होने से चेतोमुख है, वा बोधरूप चित्तहै 'स्वप्नादिकोंके आगमनप्रति मुख कहिये द्वार जिसको, ऐसाहै एतदर्थ सो चेतोमुख है। अरु [इस सुषुप्ति के अभिमानीकों भूत अरु भविष्यत् विषयों बिषे ज्ञातापना है, तैसे सर्व वर्त्तमान विषयोंबिषे भी ज्ञातापना है। एतदर्थ प्रकर्ष करके जो जानताहै सो प्रज्ञहै, अरु जो प्रज्ञहै सोई प्राज्ञनामसे कहाजाताहै] भूत अरु भविष्यत्का ज्ञातापना अरु सर्व विषयों का ज्ञातापना इसकोहीहै, एतदर्थ यह प्राज्ञ है। [सुषुप्तिबिषे सर्व विशेषोंके ज्ञानके विलयहुये प्राज्ञको ज्ञातापना कैसे होवेगा, यह आशंकाकरके कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि यद्यपि सुषुप्तिवाला पुरुष तिस अवस्थाबिषे सर्व विशेषके ज्ञानसे रहित होवेहै,तथापि जाग्रत् अरु स्वप्न बिषे उत्पन्नहुई जे सर्व विषयोंके ज्ञातापने रूपगति, ताते प्रकर्षकरके (सम्यक्प्रकार) सर्वको सर्वओरसे जानताहै, एतदर्थ सो प्राज्ञशब्दका वाच्य (प्राज्ञनामवाला नामी) होताहै,] सुषुप्तिको प्राप्तहुआ पुरुषभी स्वप्न अरु जाग्रत्बिषे व्यतीतहुई सर्वविषयोंके ज्ञातापनेरूप पूर्वकीगति इसकरके । सुषुप्तिस्थ पुरुषको। प्राज्ञ कहते हैं। अथवा । तिस अवस्थाबिषे। जिसकरके प्रज्ञप्तिमात्र । अर्थात् ज्ञेयके अभावसे ज्ञाता विशेषणरूप विशेषतासे रहित निर्विशेषको प्रज्ञप्तिमात्र, कहतेहैं । इसहीका रूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एषसर्व्वेश्वरएषसर्व्वज्ञएषोऽन्तर्य्याम्येषयोनिः । स
र्व्वस्यप्रभवाप्ययौहिभूतानाम् ६ ॥

है, तिसकरके यह प्राज्ञहै । ऐसा कहतेहैं । अरु अन्य दोनों अ
वस्थाबिषे विशिष्टज्ञानभीहै,अरु सुषुप्तिबिषे अन्यज्ञानरूप उपाधि
से रहितज्ञानहै,सो ज्ञानइसप्रज्ञाका स्वरूपभूतहोनेसे'प्रज्ञप्ति'ना
से कहतेहैं, सो यह । प्रज्ञप्तिनामवाला । प्राज्ञ तृतीयपाद है ५।
६ हे सौम्य !"एषसर्व्वेश्वर,,।"यहसर्वेश्वरहै,अर्थात् यह प्राज्ञ
स्वरूप अवस्थावाला हुआ सर्वका ईश्वरहै, अर्थात् अधिदैव स
हित सर्व भेदोंके समूहका नियन्ताहै, इस हेतुसे अन्य नैयायि
कादिकोंवत् अन्य जातिरूप नहीं "प्राणबन्धनंहि सौम्य मन
।हे सौम्य ! प्राणरूप बन्धनवालाही मनहै ? इस श्रुतिवाक्यसे
[अब प्राज्ञकेही अन्य विशेषणोंको साधतेहैं] यहहीसर्व अवस्थ
के भेदवालाहुआ सर्वका ज्ञाताहै ।अर्थात् जाग्रदवस्थाबिषे स्थू
जगत्को अरु स्वप्नावस्थाबिषे सूक्ष्म जगत्को अरु सुषुप्ति अवस्थ
बिषे उभयके कारणमूला विद्याको, इसप्रकार सर्वको सम्यक्प्रका
जानताहै। एतदर्थ यह सर्वज्ञहै । [अरु अन्तर्यामीपने रूप अन
विशेषणको स्पष्ट करतेहैं] तैसेही सर्वके अन्तर प्रवेशकरके स
भूतोंका नियामक होनेसे, यहही सर्वका अन्तर्यामीभी है
अरु जिसकरके यह उक्तप्रकारका भेदसहित सर्व जगत् इससे
उपजता है तिसहीकरके यह सर्वकी योनि (कारण वा उत्पत्ति
स्थान)है। [जिसकरके जगत्बिषे निमित्त अरु उपादान कार
का भेदनहीं । अर्थात् यहजगत् अभिन्ननिमित्त उपादान कार
है । अरु भूतोंकी उत्पत्ति अरु विलय, उपादानसे इतर एक ठेका
संभवे नहीं । जैसे घट सरावादिकोंकी उत्पत्ति अरु विल
उनके उपादान मृत्तिका से इतर एक ठेकाने संभवे नहीं तैसे
ताते सर्वभूतोंकी उत्पत्ति अरु विलय यही है] अरु जिसकर
इसप्रकारहै तिसहीसे सर्वभूतोंकी उत्पत्ति अरुप्रलयभी यहहीहै ६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ गौडपादाचार्य्यकृततदुपनिषदर्थाविष्करणरूपश्लोकावतरणम् ॥

अत्रैतेश्लोकाः ॥

बहिःप्रज्ञोविभुर्विश्वोह्यन्तःप्रज्ञस्तुतैजसः । घनप्रज्ञस्तथाप्राज्ञएकएवत्रिधास्मृतः १ ॥

अथ गौडपादाचार्य्यकृतकारिकायां प्रथम आगमाख्यप्रकरणभाषाभाष्यप्रारम्भः ॥

१ ॥ हे सौम्य! [श्रीगौडपादाचार्य्यने मांडूक्योपनिषद्को अध्ययन करके "अत्रैते श्लोकाः" व्यहां ये श्लोकहैं? इसप्रकार तिस उपनिषद्के व्याख्यानरूप नव ९ श्लोकोंका अवतरण किया, तिसका अनुवादकरके भाष्यकार श्रीशङ्कराचार्य्य व्याख्यान करते हैं] यहां इस कथनकिये उपनिषद्के 'षट् ६, मन्त्रोंके अर्थबिषे यह गौडपादाचार्यकृत 'नव ९, श्लोकहैं "बहिःप्रज्ञो विभुर्विश्वो ह्यन्त प्रज्ञस्तुतैजसः" ८बहिः प्रज्ञविभुविश्वहै, अन्तःप्रज्ञतो तैजसहै? अर्थात् बाहिरकी । स्थूल । प्रज्ञावाला विभुरूप विश्वहै । अरु अन्तरकी । सूक्ष्म । प्रज्ञावाला तौ तैजसही है "घनप्रज्ञस्तथाप्राज्ञएकएव त्रिधा स्मृतः" ८तैसे घनप्रज्ञ प्राज्ञहै, एकही तीनप्रकार से कहा है ? अर्थात् । बाह्यकी प्रज्ञावाले अरु अन्तरकी प्रज्ञावाले वत् । घनीभूतहुई प्रज्ञावाला प्राज्ञहै, इसप्रकार एकही पुरुष को तीन प्रकारसे कहाहै । इसका यह अभिप्राय है कि [जब आत्मा के चेतनपनेवत् जाग्रदादि तीनोंस्थान स्वाभाविक होवें, तब चेतनपनेवत् सो तीनोंस्थान आत्मासे व्यभिचार पावनेयोग्य न होवेंगे, अरु तीनों स्थान क्रमकरके अरु अक्रमकरके आत्मासे व्यभिचारको पावते हैं । क्योंकि आत्माको तीनस्थानवालापना है ताते, एतदर्थ उनतीनों स्थानों से आत्माका अभिन्नपना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिद्धहुआ "यः सुप्तः सोऽहं जागर्मीति" ८ जोमैं सोयाथा, सो मैं जागताहौं ? इस अनुसंधानसे आत्माकाएकपनाभी निश्चि हुआ, अरु 'धर्म, अधर्म, राग, द्वेष, आदिक मलको अवस्थ का । वा अन्तःकरणादिकोंका । धर्म होनेसे उन अवस्थाओं भिन्न आत्माका शुद्धपना भी सिद्धहुआ । अरु संगको भी व होनेसे अवस्थाके धर्मपने के अंगीकारसे अवस्था से भिन्न तिन द्रष्टाका । अर्थात् 'घटद्रष्टा घटाद्भिन्नः, इसन्याय प्रमाण अवस्थ अरु तिनके धर्म से भिन्न तिनका द्रष्टाका उनसे पृथक्हो करके । असंगपना भी । "असंमोह्ययं पुरुषः" इत्यादि श्रु प्रमाणसे । सिद्धहुआ, इत्यर्थः] क्रमकरके तीनस्थानवाला हो से, अरु "सोहमस्मि" ८ सो मैंहौं ? इस स्मृतिकरके, अरु अनु संधान करके पुरुषका तीनों स्थानों से 'भिन्नपना, एकपना, द्रष्ट पना, शुद्धपना अरु असंगपना, सिद्धहुआ "तद्यथा महामत्स उभे कूलेऽनुसञ्चरति पूर्वञ्चापरञ्चैवायं पुरुषः" ८ इसश्रु उक्त, महामत्सादिकों के दृष्टान्त के श्रवण से १ ॥

२ ॥ हे सौम्य! "दक्षिणाक्षिमुखे विश्वो" ८ दक्षिण नेत्ररूपी द्वा बिषे विश्वको अनुभवकरतेहैं? अर्थात् जाग्रदवस्था बिषेही विश्व दिका तीनों के अनुभव के लखावने के अर्थ यह द्वितीय श्लोकहै दक्षिणनेत्ररूपहीद्वार बिषेमुख्यताकरकेस्थूल विषयोंकाद्रष्टाविश्व ध्याननिष्ठ पुरुषकरके अनुभव होता है "इन्धे हवैनामैषयोऽ दक्षिणेक्षन् पुरुष इति श्रुतेः" ८ जो यह दक्षिण नेत्रबिषे पुरुषहै, या प्रसिद्ध इंध (प्रकाशवान्) इस नामवाला है, इस वृहदारण्यक उपनिषद् की श्रुतिप्रमाण से । इंध नाम प्रकाश गुणवाले सूर्य्यान्त र्गत विराट्के आत्मा वैश्वानरका है । सो अरु चक्षुबिषे जो द्रष्ट है सो एक है । यह इस श्रुतिका तात्पर्य है ॥ ननु, सूर्य्यमंडला न्तर्गत समष्टि सूक्ष्मदेहवाला हिरण्यगर्भ, अरु चक्षुगोलकबि स्थित इन्द्रियोंके अर्थ अनुग्रहका कर्त्ता हिरण्यगर्भ, संसारीजी से अन्य है, अरु सूर्यमंडलान्तर्गतसमष्टि स्थूलदेहका अभिमानी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दक्षिणाक्षिमुखेविश्वोमनस्यन्तश्चतैजसः । आकाशो
चहृदिप्राज्ञस्त्रिधादेहेव्यवस्थितः २ ॥

अरु चक्षुके उभय गोलकके अनुग्रहका कर्त्ता विराट् आत्मा भी तिससे अन्य नहीं, अरु व्यष्टिदेहका अभिमानी दक्षिण नेत्र बिषे स्थित द्रष्टा, दोनोंचक्षु अरु करणोंका नियामक, अरु कार्य, कारण का स्वामी क्षेत्रज्ञहै, सो तो उन दोनों समष्टि देहके अभिमानी हिरण्यगर्भ अरु विराट् से इतर अंगीकार करते हैं। इस प्रकार होने से समष्टि अरु व्यष्टिपनेकरके स्थित जीवके भेदसे कथन करि जो एकता सो अयुक्त है, इसप्रकारका जो वादीका कथन सो बनेनहीं, क्योंकि कल्पितभेदके होतेभी वास्तवकरके अभेदके अनंगीकार होने से। अरु "एको देवः सर्वभूतेषुगूढ इतिश्रुतेः" ८ एकदेव सर्व भूतों बिषे गूढ़ है ? इस श्रुति के प्रमाण से। अरु "क्षेत्रज्ञञ्चापिमां विद्धि सर्वक्षेत्रेषुभारत" "अविभक्तञ्च भूतेषु विभक्तमिवचस्थितमिति" ८ हे भारत! सर्वक्षेत्रों (शरीरों) बिषे क्षेत्रज्ञ (क्षेत्र का जाननेवाला) भी मुझही को जान। अरु सर्व भूतोंबिषे विभाग से रहित हुआ भी विभाग को प्राप्तहुयेवत् स्थितहै, इस गीतास्मृति के प्रमाण से। अरु सर्व करणोंबिषे समानहुये भी दक्षिणनेत्र बिषे ज्ञानकी स्पष्टता के देखने से तहां विश्वजीवका विशेषकरके कथनहै। अरु दक्षिण नेत्र बिषे, [यद्यपि देहके देशके भेदबिषे विश्ववत्को अनुभव करते हैं, तथापि जाग्रत्बिषे तैजसको कैसे अनुभव करते हैं, यह आशंकाकरके द्वितीयपादका व्याख्यानकरते हैं। यहां यह अर्थ है कि 'जैसे स्वप्नबिषे जाग्रत्की वासनारूपसे प्रकटहुये पदार्थोंके समूह को द्रष्टा अनुभव करताहै, तैसेही जाग्रत्बिषे दक्षिण नेत्रमें द्रष्टा होकर स्थितहुआ अश्रेष्ठ रूपको देखके पुनः नेत्रमूंदके, पूर्वदेखा जो रूप सो रूपके ज्ञानसे जन्य (उद्भूत) वासनारूपसे मनबिषे प्रकटहोताहै, तिसको स्मरणकरताहुआ विश्वही तैजस होताहै।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरु उक्तप्रकार होनेसे उन विश्व अरु तैजसके भेदकी शंका बने नहीं,] स्थित जो विश्वहै, सो कुरूपको देखके मूँदेहुये नेत्रवाला हुआ तिसही देखेहुये कुरूपको मनके भीतर स्मरणकरताहुआ स्वप्नवत् वासनारूपसे प्रकटहुये तिसही रूपको देखताहै । जैसे यहां जाग्रत्बिषे देखताहै । तैसेही वहां स्वप्नबिषेभी देखताहै । एतदर्थ "मनस्यन्तश्च तैजसः" ८मनके अन्तर तो तैजसहै ? अर्थात् मनके अन्तर तैजसभी विश्वहीहै । अरु "आकाशेचहृदिप्राज्ञः" ८हृदयाकाशबिषे प्राज्ञहै ? अर्थात् [अब तृतीयपादका व्याख्यान करतेहुये जाग्रत्बिषेही सुषुप्तिको देखावतेहैं । यहां यह अर्थहै कि, जो विश्व तैजस भावको प्राप्तहुआहै सो पुनः स्मरणरूप व्यापारकी निवृत्तिके होनेसे हृदयान्तर आकाशबिषे स्थितहुआ प्राज्ञ होयके तिस प्राज्ञके लक्षणकरके युक्तहोता है । अरु रूप बिषयके दर्शन अरु स्मरणको छोड़के श्रेष्ठ आकाश (अव्याकृत) बिषे स्थितहुये तिस जीवको प्राज्ञसे अन्य अर्थपना नहीं, एतदर्थ सो 'एकीभूत, (विषयअरु विषयीकेआकारसे रहित)है । अरु जिसकरके एकीभूत है इसहीकरके घनप्रज्ञ 'अर्थात् विशेषज्ञान अरु अन्यरूपसे रहित, हुआ स्थित होताहै । इत्यर्थः] जो विश्व तैजसभावको प्राप्तहुआहै सो पुनः स्मरणरूप व्यापार की निवृत्तिकेहुये हृदयगत आकाश बिषे स्थित हुआ प्राज्ञ एकीभूत अरु घनप्रज्ञही होता है, क्योंकि मनके व्यापार का अभाव है ताते । अरु दर्शन अरु स्मरणरूपही मनके स्फुरण (व्यापार) है, तिनका अभावहोने से हृदयान्तरही अव्याकृतमय प्राणरूपसे अवस्थानही जाग्रत्बिषे सुषुप्तिहै "प्राणो ह्येवैतान् सर्व्वान् संवृङ्क्त इति श्रुतेः ,, ८प्राणही इनसर्वको अपने बिषे संहार करता है, इस श्रुतिके प्रमाणसे । याते अव्याकृतमय प्राणरूपसे जाग्रत्गत सुषुप्तिबिषे प्राज्ञकाअवस्थान जोकहासो युक्तहीहै । अरु [पूर्वही विश्व अरु विराट्की एकताको अनन्तर प्राज्ञ अरु अव्याकृत की एकताको लखाई हुई होनेसे, अरु तैजस औ हिरण्यगर्भके न कथन किये, अरु कहने योग्य अभेदको अबकहतेहैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तैजस जोहै सो हिरण्यगर्भरूपहै, क्योंकि लिंगशरीररूप मनाबिषे स्थितहै ताते, अर्थ यहहै जो, हिरण्यगर्भको समष्टि मनबिषे स्थित होनेसे, अरु तैजसको व्यष्टि मनबिषे स्थितहोनेसे, अरु उससमष्टि अरु व्यष्टिरूप मनको एकरूपहोने से, तिन व्यष्टि समष्टि बिषे स्थित तैजस अरु हिरण्यगर्भकीभी एकता क्वचित्है] तैजस जोहै सो हिरण्यगर्भहै, क्योंकि "मनोमयोऽयं पुरुष, इत्यादि श्रुतिभ्यः" यहपुरुष मनोमयहै, इत्यादि श्रुतिके प्रमाणकरके। मनजोहै सो लिंगरूपहै, अरु इस मनबिषे स्थितहोनेसे तैजस अरु हिरण्यगर्भ की एकतायुक्तहै। ननु, [अब प्राणके पूर्वोक्त अव्याकृतपनेके अर्थ वादी आक्षेपकरताहै। यहां यहअर्थ है कि सुषुप्तिबिषे प्राण जोहै सो नाम अरु रूपकरके व्याकृत (स्पष्ट) युक्तहै, क्योंकि तिसप्राण के व्यापारको सोयेहुये पुरुषकेपास बैठेहुये मनुष्योंकरके अतिशय स्पष्ट देखतेहैं ताते] सोयेहुये पुरुषकेपास बैठे हुये जनोंकरके प्राण के व्यापारको स्पष्टदेखनेसे सुषुप्तिबिषे जो प्राणहै सो नामअरुरूप करकेव्याकृत कहिये स्पष्टहै। अरु श्रुतिबिषे,करणजोहैं सो उसके प्राणरूपहोतेहैं, इसप्रकारकहाहै,एतदर्थभी तिसप्राणकी व्याकृत-ताही सिद्ध होतीहै। ताते। प्राणकेअर्थ तुमने कहीजो। अव्या-कृतता सोकैसे संभवेगी, । इसप्रकार वादीकी शंकाहै। तहां क-हतेहैं, यह। जो तूनेकहा सो। दोषनहीं, क्योंकि अव्याकृतको देश अरु कालकृत परिच्छेदका अभावहै ताते। अरु जैसे देशकालकृत परिच्छेदसे रहित अव्याकृत कहिये मायाहै, तैसेही सुषुप्तिवान् पुरुषकी दृष्टिसेप्राणभी देशकालकेकिये परिच्छेदसे रहितहै। एत-दर्थ सुषुप्तिवान्के प्राणकी अरु अव्याकृतकी एकतायुक्त है। अरु जो कदापि परिछिन्न अभिमानवाले पुरुषोंके मध्य'यह मेराप्राण है, इसप्रकार प्राणके अभिमानकेहुये प्राणकी व्याकृततताही सिद्ध होतीहै। तथापि सुषुप्ति अवस्थाबिषे पिंड (देह) करके परिच्छिन्न जो विशेषहै तिसको विषयकरनेवाला जो 'यह मेरा प्राणहै,इस प्रकारका अभिमानहै तिसका निरोध प्राणबिषे होताहै, एतदर्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राण अव्याकृतही है । 'जैसे मरणकेहुये अभिमानके निरोधसे परिच्छिन्न अभिमानियोंका प्राणअव्याकृतहोताहै, तैसेही प्राणके अभिमानी पुरुषकोभी सुषुप्तिबिषे प्राणके अभिमानके निरोधसे प्राणकी अव्याकृतता समानही है । एतदर्थ विशेष अभिमान के निरोधहुये (प्राणको) अव्याकृतपना प्रसिद्धही है । किम्बा 'जैसे अधिदैवरूप अव्याकृत जगत्की उत्पत्तिका बीजहै, तैसेही प्राण नामक सुषुप्ति जाग्रत् अरु स्वप्नकी (उत्पत्तिका) बीज होवेहै। अरु इसप्रकार होनेसे कार्योत्पत्तिकी बीजरूपता दोनोंको समान है । अरु अव्याकृत अवस्थावाला जो उन दोनोंका अधिष्ठान चैतन्यहै सो एकहै, इसकरके भी उनदोनोंकी एकता सिद्धहोतीहै। एतदर्थ परिच्छिन्न अभिमानवाले उपाधि सहित जीवोंकी तिस अव्याकृतके साथ एकता है । इसप्रकार पूर्वोक्त 'एकीभूत प्रज्ञान घन, अरु 'सर्वेश्वर, इत्यादिरूपप्राज्ञका विशेषण घटितहीहै॥ प्रश्न, तिस प्राणशब्दको इस (प्राणादिपंचवृत्तिरूप वायुकेविकार प्राण बिषेरूढ़िहोनेरूपहेतुके होनेसे अव्याकृतको प्राणशब्दकी वाच्यता (नामीपना) कैसे होती है, तहां (उत्तर) कहते हैं, " प्राणबन्धनꣳहिसौम्यमन" (हे प्रियदर्शन! मन जोहै सो प्राणरूपबन्धन (अर्थात् सुषुप्ति बिषे अपने लयके आधार) वाला होता है, इस श्रुतिके प्रमाणसे) अव्याकृतको प्राणशब्दकी वाच्यता (नामीपना) होती है ॥ ननु, इस श्रुतिबिषे " सदेव सोम्येदमग्र आसीत् " (हे सौम्य ! आगे सत्ही था) इसप्रकार प्रसंग बिषे प्राप्तकिया सत्रूप ब्रह्मही प्राणशब्दका वाच्यहै, अव्याकृत नहीं, (जहां ऐसी शंका है) तहां कहते हैं, यह (जो तूने कहा सो) दोषनहीं, क्योंकि सत्रूप ब्रह्मकी बीजरूपताका अंगीकार है ताते । अरु यद्यपि तिस उक्त श्रुति बिषे प्राणशब्दका वाच्य सत् ब्रह्महै, तथापि तहां जीव अरु सर्व कार्यके समूहकी उत्पत्ति की बीजताको अपरित्याग करकेही सत्ब्रह्मको प्राणशब्दकी वाच्यता अरु सत् शब्दकी वाच्यताहै । अरु जब निर्बीजरूप ब्रह्म प्रा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

णादि शब्दका वाच्य कहने को इच्छित होय तब "नेतिनेति" ८ कार्यरूप नहीं, अरु कारणरूप भी नहीं ? अरु "यतोवाचो निवर्त्तन्ते" ८जिससे वाणियां निवृत्त होती हैं? अरु "अन्यदेवविदितादथोऽविदितादधि" ८ सो विदित (कार्य) से अन्यही है, अरु अविदित (कारण) से भी अन्यही है, इस श्रुतिके प्रमाण से ? अरु तैसेही " नसत्तन्नासदुच्यत, इतिस्मृतेः " ८ सो सत् नहीं अरु असत्भी नहीं ऐसा कहतेहैं, इस स्मृतिकेभी प्रमाणसे, ब्रह्मको शब्दकी विषयताका निषेध कियाहै, एतदर्थ भी विरोध होवेगा । किम्बा जब निर्बीजरूप होनेसेही ब्रह्म इस प्रकरणबिषे कहने को इच्छितहोय तो सुषुप्ति अरु प्रलयमें सद्ब्रह्मबिषे लीन अरु एकरूपहुये जीवोंके पुनः उत्थान का असंभव होवेगा । अथवा मोक्षदशा बिषे सत्ब्रह्मको प्राप्तहुये मुक्त पुरुषों की पुनरावृत्तिका प्रसंग होवेगा । अरु सर्वको अज्ञानरूप बीजके अभावकी तुल्यता, अरु ज्ञानाग्निसे दाह करने के योग्य बीजके अभावहुये ज्ञानकी व्यर्थताका प्रसंग होवेगा । एतदर्थ सर्व श्रुतियोंबिषे बीज सहित ताके अंगीकार सेही सत्ब्रह्मको प्राणभावका कथन अरु कारणभावका कथन है । अरु इसही करके "अक्षरात्परतः परः" "सवाह्याभ्यन्तरोह्यजः" "यतोवाचोनिवर्त्तन्ते" "नेतिनेतीत्यादिना" ८ पररूप अक्षरसे परहै, बाह्य अन्तर सहित है, जिससे वाणियां निवृत्तहोती हैं, अरु नेतिनेति, इत्यादि अनेक श्रुतियों करके बीज सहित ताके निषेधसे ब्रह्मका कथनहै । अरु तिसही प्राज्ञशब्द के वाच्य (नामी) की तुरीयरूपतासे देहादिक संघात के सम्बन्धसे रहित तिस परमार्थ रूपा अबीज अवस्थाको यह श्रुति आगे भिन्न करेगी । अरु "नाकिञ्चिदवेदिषमिति" ८मैं कुछ भी नहीं जानताहुआ? इसप्रकार सुषुप्तिसे उत्थानपाये पुरुष के स्मरणको देखते हैं ताते, जीवकी अवस्था भी अनुभव करतेही हैं "त्रिधादेहेऽवस्थितः" ८तीनिप्रकारसे देहबिषे स्थितहुआ है? अर्थात् उक्तरीतिसे यहजीव उक्त तीनप्रकारकरके देह बिषे स्थित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विश्वोहिस्थूलभुङ्नित्यंतैजसः प्राविविक्तभुक् । आनन्दभुक्तथा प्राज्ञस्त्रिधाभोगंनिबोधत ३ ॥

स्थूलंतर्पयतेविश्वंप्राविविक्तन्तुतैजसम् । आनन्दश्चतथाप्राज्ञंत्रिधातृप्तिंनिबोधत ४ ॥

हुआ । अर्थात् अभिमानको पाया वा अभिमानी हुआ । है ऐसा कहते हैं २ ॥

३ ॥ हे सौम्य! [इसप्रकार विश्वादि तीनोंकी देहविषे तीनप्रकारसे स्थितिको प्रतिपादन करके, अब तिनकेही तीनप्रकारके भोगोंको सूचित करते हैं,] "विश्वोहिस्थूलभुङ्नित्यंतैजसःप्राविविक्तभुक्" ६ विश्व नित्यही स्थूलभुक् है, तैजस प्राविविक्तभुक् है ; अर्थात् । जाग्रदवस्थाका अभिमानी । विश्व नित्यही स्थूल भोगोंका भोक्ताहै । अरु स्वप्नावस्थाका अभिमानी तैजस । नित्यही वासनामय सूक्ष्म भोगों का भोक्ताहै । अरु "आनन्दभुक्तथा प्राज्ञस्त्रिधाभोगं निबोधत" ६ तैसे प्राज्ञ आनन्दभुक् है तीनप्रकारके भोगों को जानो ; अर्थात् । जैसे जाग्रदवस्थाका अभिमानी विश्व स्थूल विषयोंका, अरु स्वप्नाभिमानी तैजस वासनामयसूक्ष्म भोगोंका, भोक्ताहै । तैसेही सुषुप्ति अवस्थाका अभिमानी प्राज्ञ आनन्दका भोक्ता है, इसरीति से तीनप्रकारके भोगोंकोजानो ३ ॥

४ ॥ हे सौम्य! [अब भोगोंसेहुई जो तृप्ति तिसको तीनप्रकारसे विभाग करके देखावेहैं] "स्थूलं तर्पयते विश्वं प्राविविक्तन्तु तैजसम् ६ स्थूलभोग विश्वको तृप्त करैहै, सूक्ष्मतो तैजस को तृप्तकरै है ; अर्थात् शब्दादि स्थूल विषयभोग जाग्रदभिमानी विश्वको तृप्तकरता है । अरु जाग्रत्की वासनामय सूक्ष्म भोग स्वप्नाभिमानी तैजसको तृप्तकरता है । तैसेही "आनन्दश्चतथाप्राज्ञंत्रिधातृप्तिंनिबोधत" ६ तैसेआनन्द प्राज्ञको तृप्तकरै है तीनप्रकारकी तृप्तिको जानो; अर्थात् । जैसे विश्वको स्थूलभो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्रिषुधामसुयद्भोज्यंभोक्तायश्चप्रकीर्त्तितः । तदैतदुभयंयस्तुसभुञ्जानोनलिप्यते ५ ॥

प्रभवः सर्व्वभावानांसतामितिविनिश्चयः । सर्व्वं जनयतिप्राणश्चेतोंऽशून्पुरुषःपृथक् ६ ॥

अरु तैजसको सूक्ष्म भोग तृप्तकरेहैं। तैसेही। सुषुप्तिके अभिमानी प्राज्ञको आनन्दरूप भोग तृप्तकरे है, ऐसे तीनप्रकारकी तृप्तिको जानो ४ ॥

५ हे सौम्य! अब [प्रसंग बिषे प्राप्त भोक्ता अरु भोग्य, इन उभय पदार्थोंके ज्ञानके मध्यके फलको कहते हैं] "त्रिषुधामसु यद्भोज्यं भोक्तायश्चप्रकीर्त्तितः" (तीन धामबिषे जो भोज्यहैं, अरु जो भोक्ताकहे हैं) अर्थात् जाग्रदादि तीनों स्थानों बिषे जो 'स्थूल, सूक्ष्म, अरु आनन्द, नामवाला एकही तीनप्रकारकाहुआ भोज्यहै, अरु विश्व तैजस अरु प्राज्ञ, इन नामवाला "सोहमिति" (सोमैंहौं) इस एकताके अनुसंधानसे, अरु द्रष्टापन के अविशेषसे एकही भोक्ताकहा है। अरु "तदैतदुभयंयस्तुसभुञ्जानोनलिप्यते" (जो इन दोनोंको जानता है सो भोक्ताहुआ भी लिप्त होतानहीं) अर्थात् जो भोज्य अरु भोक्तापनेकरके अनेक प्रकारके भेदवालेहुये इन। भोज्य अरु भोक्ता। दोनोंको जानता है सो भोक्ताहुआ भी लिप्त होता नहीं, क्योंकि सर्व भोग्य एकही भोक्ताका भोग्य (भोगने योग्य) है ताते। अरु जिसका जो विषय है सो तिस विषयकरके घटता नहीं, अरु बढ़ता भी नहीं 'जैसे अग्नि काष्ठादिरूप अपने विषयको दग्ध वा भस्म करके घटता नहीं, वा बढ़ता नहीं, तैसे ५ ॥

६ हे सौम्य! [पूर्व "एष योनिः" ८ यहयोनि (कारण) है, इस षष्ठमन्त्रबिषे प्राज्ञको प्रपंचकाकारणपना प्रतिज्ञाकियाहै। तहांसत् कार्यके प्रतिप्राज्ञको कारणपना है, वा असत्कार्यके प्रति कारणपनाहै, । इस संशयकेहुये तिसका निर्द्धार करनेको अब आरम्भ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करते हैं,] " प्रभवःसर्वभावनांसतामितिविनिश्चयः । सर्वज्ञ यतिप्राणश्चेतोंऽशून पुरुषःपृथक् " ६ विद्यमान सर्वपदार्थों की उत्पत्ति होती है, यह निश्चय है । प्राणरूप पुरुष सर्व चैतन्य के अंशोंको पृथक् २ उपजावताहै ; अर्थात् विद्यमान पदार्थों की उत्पत्तिका निश्चय है, याते प्राणरूप पुरुष सर्व जगत् को आ चिदाभासरूप चैतन्यकेअंश (जीवों) को पृथक् २ उपजावताहै। [ननु सत्रूप पदार्थों को सत्रूप होनेसेही तिनकी उत्पत्ति असम्भव है, क्योंकि सत्रूप ब्रह्मबिषे अति प्रसङ्ग होताहै ताते, यह आशङ्काकरके श्लोकके पूर्वार्द्धका व्याख्यान करते हैं । यह यह अर्थहै कि अपने अधिष्ठानरूपसेही विद्यमान (सत्रूप) पदार्थोंकाही अविद्याकृत मिथ्या आरोपित स्वरूप है, तिसकरके उत्पत्तिरूप संसार होवे है] अपने अधिष्ठान रूपसे विद्यमान 'विश्व' तैजस, अरु प्राज्ञरूप भेद वाले सर्व पदार्थोंकी अविद्या रचित नामरूपमय मिथ्यास्वरूप से उत्पत्ति रूप संसारहोताहै अरु जिसको बंध्यापुत्रकहतेहैं सो यथार्थ (सत्य) रूपसे वा मिथ्या रूपसेभी जन्मतानहीं, इसप्रकार आगेकथनकरैंगे । अरु जो असत्पदार्थकाही जन्महोय, तो व्यवहारकरने (जानने) जो ब्रह्म तिसके ग्रहणबिषे द्वाररूप लिंगके अभावसे असत्पनेका प्रसंग होवेगा । अरु अविद्यारचित मिथ्या बीजसे उत्पन्नहुये रज्जुसर्पादिकोंका रज्जुआदिक [अधिष्ठान] रूप से सद्भाव देखाहै । अरु किसीभी पुरुषने अधिष्ठान(आश्रय)रहित रज्जुसर्प अरु मरुस्थल जलआदिक कहींभी देखेनहीं । [अर्थात्'रज्जु' मरुस्थल, शुक्त्यादिरूप, आश्रयविना 'सर्प' जल, रजतादिरूप भ्रान्ति होवे नहीं 'अरुजैसे रज्जुविषे सर्पोत्पत्तिसे पूर्व रज्जुरूपसे सर्प सत्यही होता है । [अर्थात् जिस अधिष्ठानबिषे जो अध्यस्त होता है सो अपने अधिष्ठानकी सत्यतासे सत्यरूप होताहै,क्योंकि अधिष्ठान कल्पित होतानहीं । तैसेही सर्व पदार्थोंका अपनी उत्पत्तिसे पूर्व प्राणमय बीजरूपसेही सद्भाव है । एतदर्थ "ब्रह्मैवेदं" " आत्मैवेदम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विभूतिंप्रसवन्त्वन्येमन्यन्तेसृष्टिचिन्तकाः । स्वप्न मायास्वरूपेतिसृष्टिरन्यैर्विकल्पिता ७॥

आसीदित्यादि" ८ ब्रह्मही यहहै, आत्माही यह आगेथा> इसप्रकार श्रुतियांभी कहतीहैं। इसप्रकार प्राण बीजरूप व्यवहारकी योग्यतासे सर्व अचेतन (जड़) रूप जगत्को उपजावताहै। अरु सूर्यके किरणोंवत् चैतन्यरूप पुरुषके चैतन्यरूप, अरु जलगत सूर्यके प्रतिबिम्बके समान 'प्राज्ञ, तैजस,अरु विश्व, भेदसे'देव,मनुष्य, तिर्य्यकादिक, देहके भेदोंबिषे भासमान जो चैतन्यके किरणोंवत् चेतनके अंशरूपजीवहैं, तिन विषयभावसे विलक्षण, अरु अग्निके विस्फुलिंगवत्, अरु जलगत सूर्यवत् चैतन्यके लक्षणसहित जीव रूप अन्यसर्व पदार्थोंको प्राण बीजरूप पुरुष उपजावताहै "यथोर्णनाभिःसृज्यते""यथाग्नेर्विस्फुलिंगाः सहस्त्रशः" ८जैसे ऊर्णनाभी (मकड़ीआदिक जन्तुविशेष) से तन्तु (जाला), अरु अग्निसे चिनगारे, होतेहैं, तैसे। इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे ६॥

हे सौम्य! [अब जड़ चेतनरूप जगत्की उत्पत्तिको प्रसंगबिषे प्राप्तहुये अपने मतके विवेचनार्थ अन्यमतके कहनेका प्रारंभकरते हैं] "विभूतिं प्रसवन्त्वन्ये मन्यन्तेसृष्टिचिन्तकाः" ८अन्य सृष्टिके चिन्तनकरनेवाले विभूतिकी उत्पत्तिको मानतेहैं८ अर्थात् वेदमतावलम्बियोंसे। अन्य जे सृष्टिकेचिन्तक (कहनेवाले) हैं, सो ईश्वरकी अपने ऐश्वर्यमय विस्ताररूप विभूतिकी उत्पत्तिको"सृष्टिरिति" ८सृष्टि है, ऐसा ८ मानते हैं॥ परमार्थके चिन्तनकरनेवाले तत्त्ववेत्तोंका तो सृष्टिबिषे आदर है नहीं, क्योंकि "इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयत इत्यादि" ८इन्द्र (परमात्मा) मायाकरके बहुरूप प्रतीतहोताहै> इत्यादि श्रुतिके प्रमाणसे। अरु जैसे माया का रचनेवाला मायावी पुरुषहै सो सूत्रके आकाश बिषे फेंकके पुनःवो मायावी पुरुष तिस सूत्रके आश्रय खड्गादि आयुधसहित युद्धार्थ चढ़के अदृश्यहुआ युद्धमें खंड खंडहोय पतनहुआ पुनः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इच्छामात्रंप्रभोःसृष्टिरितिसृष्टौविनिश्चिताः । क्र
लात्प्रसूतिंभूतानांमन्यन्तेकालचिन्तकाः ८ ॥

[सर्वांगसहित] उठखड़ाहुआ, तिसको [सम्यक्प्रकार जानके देखनेवाले पुरुषोंको तिस मायावीकरके रचितमाया अरु माय के कार्य तिनके स्वरूपके चिन्तनबिषे आदर नहीं होवेगा। तैसेह यह मायावी करके प्रसारित सूत्रकेसमान सुषुप्ति अरु स्वप्नादि विलासहै, अरु तिस सूत्रोपरि आरूढ़ मायावी के समान उन सु षुप्तिआदिकों बिषे स्थित 'प्राज्ञ,तैजसादिक, जीवहैं,।अरु जैसे सू अरु तिसबिषे आरूढ़ पुरुष तिनसे अन्य परमार्थरूप मायावी सोई पृथिवीविषे स्थित अरु मायाकरके आच्छादित अदृश्यमान ही होताहै । तैसेही तुरीयनामवाला परमार्थतत्त्वहै । एतदर्थ उ परमार्थ तत्त्वके चिन्तन (विचार) बिषेही विवेकी मुमुक्षु पुरुषक आदर है, [खरके केशकी संख्याकरनेवत्] निष्प्रयोजन सृष्टि चिन्तनबिषे आदर नहीं । [परमार्थके चिन्तन (विचार)करनेवा पुरुषके सृष्टिबिषे अनादरसे, अपरमार्थबिषे निष्ठावाले पुरुषोंकोही सृष्टिविषयक विशेष चिन्तनहै । इस उक्तार्थबिषे श्लोकके उत्तरार्ध को प्रकटकरतेहैं । अरु इस मतबिषे जाग्रत्के पदार्थोंकीही स्व बिषे प्रसिद्धिहै ताते स्वप्नका सत्यपनाहै । अरु मणिआदिकरू मायाकी सत्यताके अंगीकारसे, इन दोनों विकल्पोंकी सिद्धान से विलक्षणता समझनी । इतिभावः] एतदर्थ सृष्टिके चिन्त वादियोंकेही यह विकल्पहैं, ऐसाकहतेहैं "स्वप्नमायास्वरूपेतिसृष्टि रन्यैर्विकल्पिता " [अन्यवादियोंने स्वप्न अरु मायारूप सृष्टि है ऐसी कल्पना कियाहै, ७ ॥

८हेसौम्य! "इच्छामात्रंप्रभोःसृष्टिरितिसृष्टौविनिश्चिताः" [कोई एक प्रभुकी इच्छामात्र सृष्टिहै इसप्रकार सृष्टिके निश्चयको प्राप्त हुयेहैं, अर्थात् कोई एक ईश्वरवादी सृष्टिचिन्तक इसप्रकार नि श्चयको प्राप्तहुये हैं कि प्रभु (ईश्वर)की इच्छामात्रही सृष्टि है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भोगार्थंसृष्टिरित्यन्येक्रीडार्थमितिचापरे । देवस्यैष स्वभावोऽयमाप्तकामस्यकास्पृहा ९ ॥

क्योंकि ईश्वर सत्यसंकल्पहै ताते, । जैसे घटादिरूप जो सृष्टिहै सो । कुलालका । संकल्पमात्रही है, संकल्पसे इतर घटादि कुछ भी नहीं ॥ अरु "। कालात्प्रसूतिंभूतानांमन्यन्तेकालचिन्तकाः" ८कालके चिन्तन करनेवाले कालकरकेही भूतोंकी उत्पत्ति मानते हैं ; अर्थात् कोई एकजे कालके चिन्तन करनेवाले ज्योतिषशास्त्रके वेत्ता हैं सो कालसेही जगदुत्पत्तिको मानते हैं । । अरु कहते हैं कि जब सृष्टिकी उत्पत्तिका काल आवताहै तब उत्पत्ति, अरु प्रलयका काल आवता है तब प्रलय होताहै । ८ ॥

९ हे सौम्य! "भोगार्थंसृष्टिरित्यन्येक्रीडार्थमितिचापरे" ८अन्य भोगार्थ सृष्टिहै ऐसे, अरु अन्य क्रीड़ार्थ है ऐसे, मानते हैं; अर्थात् उक्त वादियोंसे अन्यवादी कहते हैं कि यह सृष्टि भोगके अर्थहै । अरु उनसे अन्यवादी कहते हैं कि यह सृष्टि क्रीड़ाके अर्थ है । अन्यार्थनहीं । अब सिद्धान्तको कहतेहैं । "देवस्यैषस्वभावोऽयमाप्तकामस्यकास्पृहा" ८यहदेवका स्वभावहै, पूर्णकामको कौनइच्छा है? अर्थात् यहसृष्टि (स्वयंप्रकाश) परमेश्वरका स्वभावहै, उस पूर्ण कामदेवको कौन इच्छाहै किन्तु कोईभी नहीं । अर्थात् यावत् कार्यकारणात्मक स्थूल सूक्ष्मनामरूप सृष्टिहै सो सर्व उसपरिपूर्ण देवके आश्रय उसहीविषे उससे अनन्यहै तब इच्छा किसकी होय, किन्तु किसीकीभी नहीं । अरु इच्छा जो होतीहै सो अपनेसे अन्यअप्राप्तवस्तुविषे होतीहै, सो उस एक परमात्मदेवसे अन्य अरु अप्राप्त वस्तु कुछभी नहीं ।] यहां स्वभाव जो कहा, सो क्याहै । इसप्रकार पूछेहुये स्वाभाविक अपरोक्ष जो मायाशब्दका अर्थ, तिसकानाम स्वभावहै, इसप्रकार कहतेहैं] 'यहां स्वभाव पक्षका आश्रयकरके उक्त दोनों पक्षोंविषे अथवा सर्व पक्षोंविषे दूषणकहा, जैसे [पूर्व आठवें श्लोकविषे जो "कालात्प्रसूतिंभूतानिमन्यन्ते" ८काल से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूतोंकी उत्पत्ति मानते हैं? इसप्रकार कहाहै, तहां कहतेहैं । यहां यह अर्थहै कि जैसे अधिष्ठानभूत रज्जुआदिकोंके स्वभावरूप अपने अज्ञानसेही सर्पादिकोंका आभासपनाहै, तैसेही परमात्माको अपनीमायाशक्तिके वशते आकाशादिकोंका आभासपनाहै "एतस्मात् आत्मनःआकाशःसंभूतः" (आत्मासे आकाश होताहुआ) इसश्रुतिकेप्रमाणसे । परन्तु कालको भूतोंका कारणपना नहीं, क्योंकि तिसबिषे श्रुतिके प्रमाणकाअभावहै] रज्जुआदिकोंको अविद्यारूप स्वभावविना सर्पादिक आकारके भासने बिषे कारणपना कहनेको अशक्यहै । तैसेहीपरमात्माको मायारूप स्वभावविना आकाशादिरूपाकारसे भासनेबिषे कारणपना कहनेको शक्य नहीं ६ ॥

उपनिषदर्थ ।

हे सौम्य! [ओंकारके तीनपादोंकी व्याख्याकरनेसे, व्याख्या करनेके योग्यहोनेसे क्रमके वशते प्राप्तहुये चतुर्थपादकी व्याख्या करनेको आग्रिम ग्रन्थकी प्रवृत्तिहै] अब क्रमसे प्राप्तहुआ जो चतुर्थपाद सो कहने (व्याख्याकरने) को योग्यहै । एतदर्थ यह उपनिषद् कहतेहैं "नान्तःप्रज्ञं, नबहिःप्रज्ञं, नोभयतःप्रज्ञं, न प्रज्ञानघनं, नप्रज्ञं, नाप्रज्ञम्" (अन्तःप्रज्ञ नहीं, बहिःप्रज्ञ नहीं, उभयतःप्रज्ञ नहीं, प्रज्ञानघन नहीं, प्रज्ञ नहीं, अप्रज्ञ नहीं ? अर्थात् । जो निर्विशेष निरुपाधि सर्वकासाक्षी प्रत्यगात्मा है सो । अन्तःप्रज्ञ कहिये भीतरकी प्रज्ञावाला । तैजस । सोभी नहीं । अरु बहिःप्रज्ञ कहियेबाहरकीप्रज्ञावाला । विश्व । सोभीनहीं । अरु उभयतःप्रज्ञकहिये उभयओरके प्रज्ञावाला, सोभीनहीं । अरुप्रज्ञानघन । कहिये, अन्तर बाह्यके भेद रहित घनप्रज्ञावाला प्राज्ञ । सोभी नहीं । अरु प्रज्ञभी नहीं ॥ अरु "अदृष्टमव्यवहार्य्यमग्राह्यमलक्षणमचिन्त्यमव्यपदेश्यमेकात्म्यप्रत्ययसारं प्रपंचोपशमंशान्तंशिवमद्वैतंचतुर्थमन्यन्ते सआत्मा सविज्ञेयः" (अदृष्टहै, अव्यवहार है, अग्राह्य है, अलक्षणहै, अचिन्त्य है, अव्यपदेश्यहै, एकताके ज्ञानकासार ह प्रपंचके उपशमवालाहै, शान्तहै, शिवहै, अद्वैतहै, चतुर्थ है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपनिषद् ॥

नान्तः प्रज्ञंनबहिःप्रज्ञं नोभयतः प्रज्ञंनप्रज्ञानघनं न प्रज्ञंनाप्रज्ञम् । अदृष्टमव्यवहार्य्यमग्राह्यमलक्षणमचिन्त्यमव्यपदेश्यमेकात्म्यप्रत्ययसारं प्रपञ्चोपशमंशान्तं शिवमद्वैतंचतुर्थंमन्यन्तेसआत्मासविज्ञेयः ७ ॥

'ऐसा, मानतेहै, सो आत्माहै, सो जाननेके योग्यहै?अर्थात् निरुपाधि निर्विशेष सर्वाधिष्ठान सर्वका साक्षीशुद्ध आत्मा 'नेत्रका वा ज्ञानका विषय न होनेसे 'अदृष्टहै । अरु ज्ञानेन्द्रियोंका विषय न होनेसे 'अव्यवहार्य है, । अरु कर्मेन्द्रियोंका अविषय होनेसे वा उसको कर्मोंका फलरूप न होनेसे वो 'अग्राह्यहै,। अरु प्रतियोगिता वा सापेक्षताके अभावसे वो 'अलक्षणहै,। अरु अन्तःकरणका अविषयहोनेसे वो 'अचिन्त्यहै, । अरु वाणीवा शब्दादि प्रमाणोंका अविषयहोनेसे वो उपदेशकरनेके योग्य नहीं,ताते सो 'अव्यपदेश्यहै, । तथाच " नविद्योनविजानीमोयथैतदनुशिष्यात् ,, इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे ॥ इसप्रकार निषेधमुखकहके अब विधिमुख कहते हैं । वो आत्मा एकताके प्रत्यय ज्ञानका सारहै " प्रतिबोध विदितं" अरु उसके सम्यक् ज्ञानसे समूल द्वैतरूप प्रपंच (जगत्) का अत्यन्ताभाव होताहै ताते वो प्रपंचके उपशम वालाहै । अरु अन्तःकरणके मनआदिकोंकेसंकल्पादिकोंकृत क्षोभसे रहित परमशान्त है । अरु परमानन्दमय होनेसे शिव है । अरु सर्वत्रपूर्ण अखंड अनन्त निराश्रय होनेसे अद्वैत है । अर्थात् 'अदृष्ट, अव्यवहार, अग्राह्य, अलक्षण, अचिन्त्य, उपदेश के अयोग्य, । एकताके ज्ञानकासार,प्रपंचके उपशमवाला, शान्त, शिव, अद्वैत, । इसप्रकारका जो पदार्थ है तिसको चतुर्थपाद करके मानते हैं । अर्थात् जिसको उक्तप्रकार निषेधमुखसे कहा सो किसीभी संख्यासे बद्धनहीं, परन्तु उसको जो चतुर्थपाद करके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहाहै सो पूर्वोक्त तीनपादोंकी अपेक्षासे है, नतु वास्तव करके उस निर्विशेष तत्त्व बिषे संख्या अरु पादपना कोई भी नहीं। अरु सोई एक निर्विशेष चिन्मात्रतत्त्व जाग्रदादि स्थानरूप उपाधि रहित निरुपाधि परमशुद्ध सर्वका प्रत्यगात्मा है, अरु सोई मुमुक्षु जिज्ञासुजनों करके जानने योग्यहै ॥ हे प्रियदर्शन! यहां "नान्तः प्रज्ञं" (अन्तःप्रज्ञनहीं) इत्यादि पदोंसे यह श्रुति 'सर्व शब्दोंकी प्रवृत्तिके निमित्तसे शून्य (रहित) होनेसे उस आत्माको शब्दकी विषयताहोगी। अर्थात् तत्त्वमें शब्दकीप्रवृत्ति का निमित्त विशेषताहै, निर्विशेष तत्त्वमें निमित्तके अभाव से शब्दकी प्रवृत्तिबने नहीं, अरु उस निर्विशेषको विधिमुख कहनेसे शब्दकी विषयता होतीहै ताते। ,इस। अन्तः प्रज्ञतादि रूप। विशेषके निषेधसेही। निर्विशेष। तुरीयपादको कहनेकी इच्छा करती है ॥ ननु, तब सो तुरीय शून्यही होवेगा, । इसप्रकारके जो वादीका। कथन सो बने नहीं, क्योंकि मिथ्या विकल्पको शब्दप्रवृत्तिके निमित्तसे रहितपनेका असंभवहै ताते, अरु जिस करके जो 'रजत, सर्प, पुरुष, अरु मृगतृष्णाकाजल, इत्यादि विकल्प हैं, सो 'सीपि, रज्जु, स्थाणु अरु ऊषरभूमि, इत्यादि कोंसे इतर होनेसे अवस्तुपनेके आश्रयहुये कल्पना करने को शक्य नहीं। अर्थात् रज्जु शुक्तिकादिकों बिषे जो सर्प रजतादि विकल्पकल्पनाहै सो रज्जुशुक्ति आदिकोंकेही आश्रय है क्योंकि निराश्रय कल्पना होती नहीं, अरु जो रज्जु शुक्ति आदिकों से भिन्न सर्प रजतादिकोंका विकल्प करना इच्छिये तो उन कल्पित होनहार सर्प रजतादिकों को अवस्तुपनेके आश्रयहोनेसे सो कल्पनाकरनेको शक्य होतेनहीं। अरु निराश्रय विकल्पकल्पना होवे नहीं, यह अनिवार्य सिद्धान्तहै। एतदर्थ तिन विश्वतैजसा दिक,का विधिमुख निषेधमुख, वा अस्तिनास्ति, वा शून्यअशून्य, आदिक विकल्पों। का अधिष्ठानरूप तुरीय शून्यसे विलक्षण सत्रूपकरके माननाचाहिये क्योंकि 'शून्यहै, इसविकल्पकल्पना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का आश्रय अधिष्ठान शून्य से विलक्षण किसी भी तत्त्व को सत् है, ऐसा न मानने से अवस्तुपने के आश्रयतेरा 'शून्य है, यह विकल्प होनेको अशक्य है । ननु, जब इसप्रकार है, तब प्राणादिक सर्ब विकल्पों का आश्रय होने से तुरीया को 'जलादिकों का आश्रय घटादिकोंवत्, शब्दकी वाच्यता । नामका नामीपना वा शब्दकी विषयता । होगी, निषेधों से प्रतीत करावने की योग्यता न होगी । अर्थात् निर्विशेष तुरीया को प्राणादि विकल्पों का आश्रय अधिष्ठान होने से शब्द की वाच्यता प्राप्त होगी, अरु तैसे हुये " नान्तःप्रज्ञं " इत्यादि निषेध मुख वाक्यों से जो उसकी निर्विशेषता से प्रतीति है तिस की योग्या न होगी । इस प्रकारका जो वादीका कथन । सो कथन बने नहीं, क्योंकि ' शुक्ति आदिकों बिषे रजतादिवत्, प्राणादि विकल्पको । कल्पित होनेसे । असत्यपना है ताते । अरु असत्यको शब्द की प्रवृत्ति के निमित्तवाला अवस्तुरूप होने से । वो केवल वाचारंभण (कहने) मात्रही हैं, एतदर्थ उन का किया निर्विशेष तुरीयाबिषे वाचकपना भी वाचारंभण मात्रही है । सत् अरु असत्बस्तुका सम्बन्ध है नहीं । अरु आत्माको स्वरूपसे गौ आदिकोंवत् अन्य प्रत्यक्षादि प्रमाणों की विषयताभी नहीं । अरु पाचकादिकोंवत् क्रियावान्पना भी नहीं । अरु नील पीत घटादिकोंवत् गुणवान्पना भी नहीं । क्योंकि निराकार है ताते । [। विकल्प । क्या कल्पित अधिष्ठानपना हेतु किया है, वा वास्तविक अधिष्ठानपना हेतुकिया है, तहां जो प्रथमपक्ष । कहो कि ' कल्पित अधिष्ठानपना हेतु किया है, तो सो कहना । बने नहीं । क्योंकि तिस कल्पित अधिष्ठानपने को वास्तविक वाच्यताका असाधकपना है ताते, अरु वास्तविक वाच्यतापने बिषे क्रमका विरोध है नहीं । अरु जो, द्वितीयपक्ष । कहो कि ' वास्तविक अधिष्ठानपना हेतु किया है, तो सो भी । बने नहीं । क्योंकि, शुक्ति आदिकोंबिषे कल्पित रजतादिकों को अवस्तु होने पनेवत्, तुरी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

याविषे भी कल्पित प्राणादिकोंको अवस्तुरूप होने से, तिसप्रति योगीवाले अधिष्ठानपने को वास्तविकता की अयोग्यता है ताते । अर्थात् वास्तविक अधिष्ठान तुरीया विषे अध्यस्त (कल्पित) प्राणादिकों को अवस्तुपना होने से उस तुरीयाका अधिष्ठानपना अवस्तुपने का प्रतियोगी होनेसे वास्तविकपने के योग्यनहीं । इसप्रकार सिद्धांति दूषण कहता है,] एतदर्थ आत्मा । शास्त्रि आदिक प्रमाणों का अविषय होने से । शब्द से कहने के योग्य नहीं शंका । ननु, तब आत्मा को शशशृंगादिकों के तुल्यहोनेसे असत्पना प्राप्तहोवेगा, । समाधान । यह कहना बनेनहीं, क्योंकि शुक्तिके ज्ञानहुये रजतकी तृष्णाकी निवृत्ति होनेवत् तुरीया के सर्वात्मभाव से ज्ञानहुये, तिसज्ञान को अनात्मवस्तुकी तृष्णा की निवृत्ति का हेतुहोने से, अरु तुरीयाके स्वात्मभावसे ज्ञानहुये । कारण । अविद्या अरु । तिसकाकार्य । तृष्णादिकदोष तिनका संभव होना हैनहीं । अरु तुरीया के आत्मभावके ज्ञानविषे हेतुका अभाव भी नहीं, क्योंकि " तत्त्वमसि " ८ सो तूहै > " तत्सत्यम् " " अयमात्माब्रह्म " " सआत्मायत्साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म ।। "साबाह्याभ्यन्तरोह्यजः " "आत्मैवेदंसर्वं" ८ सो सत्यहै । यह आत्मा ब्रह्महै सो आत्मा है जो साक्षात् परोक्षब्रह्म है । बाहर अन्तर साहित अजन्माहै । आत्माही यह सर्व है > इत्यादि श्रुतिवाक्यों से सब उपनिषदों को तिसही प्रयोजनार्थ होनेकरके परिसमाप्त होनेसे सो [इसप्रकार निषेध मुखसेही तुरीयाका प्रतिपादन है, विधि मुखसे नहीं, इसप्रकार प्रतिपादन करके, अब कहे हुये अर्थ का अनुवाद पूर्वक अग्रिम कहने के अर्थ को प्रकटकरते हैं] यह आत्मा परमार्थ रूपसे चारपदों वाला है इसप्रकार पूर्व द्वितीयमंत्र करके कहाथा, तिसके अपरमार्थरूप अविद्यारचित रज्जुसर्पादिकों के तुल्य बीज अरु अंकुरस्थानी तीनपादोंका लक्षण पूर्वकहा अब इस मन्त्र विषे अविज्ञातमक परमार्थ स्वरूप रज्जुस्थानीय चतुर्थपादको "नान्तःप्रज्ञं" ८ अन्तःप्रज्ञनहीं > इत्यादिरूप वाक्यसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्पस्थानीय । जाग्रदादि । तीनोंस्थानोंके निराकरणसे कहतेहैं। शंका। ननु, आत्मा के चारपाद करके युक्तपनेकी प्रतिज्ञा करके पादत्रयके कथनसेही चतुर्थपादकी अन्तःप्रज्ञ आदिक तीनपादोंसे पृथक् सिद्धिसे "नान्तःप्रज्ञं" ८अन्त प्रज्ञनहीं ? इत्यादि निषेध अनर्थक (व्यर्थ) होवेगा, इसप्रकार जो वादीका कथन। सो कथन बनेनहीं, क्योंकि सर्पादिरूप विकल्पके निषेधसेही रज्जुके स्वरूप के निश्चयवत्, तीन अवस्थावाले आत्माकोही तुरीयरूप होनेसे "तत्त्वमसि" ८सो तूहै ? इसवाक्यवत्। अरु [ननु, जाग्रदादि तीन अवस्था करके विशिष्ट आत्माको तुरीयत्व नहीं, क्योंकि तुरीयको विशिष्ट से विलक्षण होने करके । उस विशिष्टसे अत्यन्त पृथक्ताहै एतदर्थ उस विशिष्ट आत्माका तुरीयपना अग्रिम कहनेके ग्रंथकरके कैसे प्रतिपादन करतेहो, इसप्रकारकी जहां वादीकी शंकाहै तहां कहते हैं। यहां यह अर्थहै कि, तुरीयाकी प्रातिभासिकसे विलक्षणताके हुये भी विशिष्ट अरु उपलक्षित । अर्थात् विशेषण अरु उपलक्षणवाले । आत्माकी अत्यन्त विलक्षणता न होनेसे, तुरीया का विशिष्टसे वास्तवकरके भिन्नपनाहै नही, अरु अन्यथा अत्यन्त भिन्न अरु परस्परके सम्बन्ध रहित, होनेसे, इन । विशिष्ट अरु अविशिष्ट । दोनोंके उपाय (साधन) अरु उपेय (साध्य) भावकी अयोग्यतासे, तुरीयके ज्ञानविषे विशिष्ट आत्मा को द्वार (कारण) होनेके अभावहोने से, अरु तिस (तुरीया) के ज्ञानके द्वाररूप अन्यवस्तु के अदर्शनहोने से, तुरीयाका अनिश्चयही होवेगा,] जब तीन अवस्थावाले आत्मासे विलक्षण अन्य तुरीया होय, तब तिसके । अस्तित्वके । निश्चय होने के द्वारके अभावसे शास्त्रका उपदेश अनर्थक (व्यर्थ) होवेगा, अथवा शून्यता प्राप्तहोवेगी। जैसे [यहां यह अर्थहै कि विशिष्टकेही निश्चय से तुरीयाका अनिश्चय होनेसे, निश्चित हुये जे विश्वादिक विशिष्ट आत्मा तिनका उलटा उदय होवेगा, अरु वास्तवसे अन्य (तुरीया) को अनिश्चितहोनेसे निरात्मकताकीही बुद्धि प्राप्तहोवेगी,]अधिष्ठान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रज्जु । अध्यस्त । सर्प्पादिकों से भेदको पावती है, तैसेही जब तीनोंस्थानों विषेभी एकही आत्मा अन्तःप्रज्ञत्वादिकोंसे भेदको प्राप्तहोताहै, तब अन्तःप्रज्ञत्वादिपने के निषेधके ज्ञानरूप प्रमाण के सम कालही आत्माविषे अनर्थरूप प्रपंचकी निवृत्तिरूप फल परिसमाप्तहोवे है । जैसे [सम्बन्धीके परोक्षज्ञानके हेतु शब्दको असम्बन्धीके अपरोक्षज्ञानकी हेतुताका असंभव होनेसे, तुरीयाके ज्ञानविषे अन्य प्रमाण मानना चाहिये, इस पक्षके । कहने वाले के । प्रति कहते हैं। यहां यह अर्थहै कि तुरीयाके साक्षात्कारविषे शब्दसे इतर प्रमाण खोजने के योग्य नहीं, क्योंकि शब्दको विषय के अनुसार होनेसे प्रमाणका हेतुपना है ताते, अरु तुरीय रूप विषय को सम्बन्धरहित अपरोक्ष रूपताहै ताते,] रज्जु अरु सर्प के विवेकहोनेके समकालमें (साथही) रज्जु विषे सर्पकी निवृत्ति रूप फलके हुये, रज्जुके ज्ञानका अन्य फल वा अन्य प्रमाण वा अन्य साधन, अन्वेषण करनेको योग्य नहीं । तैसेही तुरीया के ज्ञानहुये । तिसज्ञानसे । अन्य प्रमाण वा साधन अन्वेषणकरना योग्य नहीं । पुनः [विषयगत प्रकटपना प्रमाणका फलहै, अध्यस्त (कल्पित) की निवृत्ति प्रमाणका फलनहीं, यह आशंका करके कहते हैं, यहां यह भावहै कि अपने विषयके अज्ञान निवारणार्थ प्रवृत्ति हुई जो प्रमाणकी क्रिया सो अपने विषयविषे स्व भावरूप अतिशयताको जब धारण करे है, तब निवारणरूप आ की तुल्यतासे । छेदनरूप क्रिया भी छेदनकरने योग्य काष्ठ के संयोगके निवारणसे पृथक् अतिशयको धारण करेगी । अरु संयोग के विनाशसे इतर विभागविषे अनुभव है नहीं । अरु प्रकटता के प्रकाशपने के हुये ज्ञानवत् । जैसे शब्दके अर्थविषे ज्ञानस्थित होय है तैसे । अर्थ विषे स्थितपना न होगा । अरु अप्रकाशपनेके हुये अर्थविषे स्थितपनाहोवेगा, तिस हेतुसे अर्थकेविना अर्थ नहीं है, जिनके मतविषे अन्धकारके अभावकरने विना घटादिकों के ज्ञान विषे प्रमाण प्रवर्त्त होताहै, तिनके मतमें छेदनकरने योग्य वृक्ष

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अवयवके सम्बन्धके बियोग किया बिनाही दोनों अवयवों में से एक अवयव बिषेभी छेदनरूपक्रिया प्रवर्त्तहोतीहै,इसप्रकारकहना होवेगा । [अज्ञानका निवर्त्तक ही प्रमाणहै, इसपक्ष में विषय के स्फुरणबिषे कारणके अभावसे बिषयका स्फुरण न होगा, यह आशङ्काकरके कहतेहैं। यहांयह अर्थहै कि अन्धकारसे आवृतहुआ घट व्यवहारके योग्य स्थित होताहै, तिसको अन्धकार से बाह्य करके तिसकी व्यवहारकी योग्यताके सम्पादनबिषे प्रत्यक्षादिक प्रमाण प्रवृत्त होतेहैं, सो प्रमाण जबग्रहण करनेको अनिच्छित, अरु प्रमाणज्ञान(प्रमाणजन्यज्ञान) के अविषय अन्धकारकीनिवृत्ति रूप फलबिषे स्थितहोवे, तब घटका स्फुरणरूप प्रयोजनवाला प्रमाणका फल होताहै । जैसे छेदनरूप जो क्रिया है सो छेदन करनेयोग्य वृक्षके दोनों अवयवोंके परस्परके संयोगके निवारण बिषे प्रवृत्तहुई उस छेदनकरने योग्य वृक्षके दोनों (शाखारूप) अवयवोंके द्विधाभाव (होने) रूप फलबिषे स्थित होतीहै, परन्तु वृक्षके दोनों अवयवोंमें से एक भी अवयवबिषे भी छेदनरूप क्रिया प्रवृत्ति होती नहीं। तैसेहीयहांभी अन्धकारकी निवृत्तिबिषे प्रमाण निवृत्ति होवेहै, परन्तु घटका स्फुरणतो तिसका फलहै। अरु तिस प्रमाणको स्थिरपना नहीं, क्योंकि प्रकाशक प्रमाताके व्यापार को अस्थिरताहै ताते,] अरु जब पुनःछेदनकरने योग्य वृक्षके अवयवके दोभाग करने (वा होने) रूप फलबिषे 'अन्तबिषे छेदनरूप क्रिया (कि जिससे दोभाग होताहै) तिस अन्तवाली क्रियावत् घट अरु अन्धकारके विवेक के करने बिषे प्रवृत्तहुआ जो प्रमाणसो तो ग्रहण करने को अनिच्छित, अरु अविषयरूप अन्धकारकी निवृत्तिरूप फलबिषे अन्तवाला होताहै, तब अन्तरायवाले (तमच्छिन्न) घटका ज्ञानहै नहीं, इससे सो प्रमाणका फलनहीं। तैसे [किंवा घटादिक जड़ोंको संवित् (चैतन्य) की अपेक्षावाला होनेसे, तिसबिषे संवित् को प्रमाणकी फलरूपता होनेसे भी एक संवित्रूप अजड़ आत्मा बिषे मनमें आरोपित धर्मकीनिवर्त्तकताके बिना संवित्की जनकता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपव्यापार संभवे नहीं, इसप्रकार कहतेहैं, यहांयह अर्थहैकि तुरीय रूप आत्माविषे प्रमाणको संवेदनका जननरूप व्यापार कल्पते नहीं, क्योंकि, यह तुरीय संवित् (चैतन्य) रूपहै ताते, अरु आरोपितकी निवृत्तिके बिना प्रमाणजन्य फलरूप संवित्की अपेक्षा का अभावहै ताते,] आत्माविषे आरोपित अन्तःप्रज्ञपने आदिकों के विवेकके करनेविषे प्रवृत्तहुये निषेधके ज्ञानरूप प्रमाणका ग्रहण करनेको अनिच्छित जे अन्तःप्रज्ञपनादिक तिसकी निवृत्ति के बिना तुरीयविषे व्यापारका सम्भव नहीं, क्योंकि अन्तःप्रज्ञपने आदिकोंकी निवृत्तिके समकालही प्रमातापने आदिक भेदकी निवृत्तिहै ताते, इसप्रकार अग्रिम कहेंगे । तथाच " ज्ञाते द्वैतं न विद्यतइति " ८ जानेहुये द्वैतविद्यमान है नहीं ? इसवाक्यप्रमाण से ॥ [किंवा ज्ञानके आधीन द्वैतकी निवृत्ति करके युक्त क्षणबिना अन्यक्षणविषे ज्ञान स्थितहोनेको समर्थ नहीं । अरु अस्थिरहुआ ज्ञान व्यापारार्थ परिपूर्ण नहीं, अरु तैसे हुये ज्ञानका द्वैतकी निवृत्तिसे भिन्न आत्माविषे व्यापारनहीं, इसप्रकार कहतेहैं,] ॥ ज्ञानको भेदकी निवृत्तिरूप फलविना अन्यक्षणविषे अस्थिरताके हुये, अरु [ननु, ज्ञान जोहै सो द्वैतका निवर्त्तकहुआ हुआभी अपने स्वरूपको निवर्त्तकरता नहीं, क्योंकि निवर्त्त होनेकी योग्यताका अरु निवर्त्तकतारूप धर्मका एकही धर्मीविषे होनेकाविरोध है ताते । याते यावत् पर्यन्त ज्ञानका निवर्त्तक अन्यन आवेगा तावत् ज्ञान स्थिर होवेगा, यह आशङ्का के हुये समाधान कहते हैं । यहां यहभावहै कि, द्वैतके निवर्त्तक ज्ञानको द्वैतकी निवृत्तिके अनन्तर भी अपने अन्य निवर्त्तक की अपेक्षा करके स्थितहुये उन उन ज्ञानको अन्य अन्य निवर्त्तक की अपेक्षावाला होनेसे प्रथमज्ञानको भी निवर्त्तकपनेकी असिद्धी होवेगी] ज्ञानके स्थिर हुये अनवस्था प्रसंग होनेसे द्वैतकी अनिवृत्ति होवेगी । [यहां यह अर्थ है कि ज्ञानको अपने निवर्त्तकपनेका असम्भव नहीं, क्योंकि ज्ञानको अपन अरु दूसरके विरोधी बहुत पदार्थों की प्रतीति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है ताते] एतदर्थ निषेधके ज्ञानरूप प्रमाणके व्यापारके समकाल में ही आत्माविषे आरोपितजे अन्तःप्रज्ञतापनादिक अनर्थ तिनकी निवृत्ति होती है, इसप्रकार सिद्धहुआ ॥ अब तात्पर्य सहित मूल श्रुतिका अर्थ कहते हैं ॥ यहां " नान्तःप्रज्ञमिति " ८अन्तःप्रज्ञ नहीं) इसपद से तैजसका निषेध किया, "नबहिःप्रज्ञमिति"८बहिः प्रज्ञनहीं) इसपदसे विश्वका निषेध किया, अरु "नोभयतः प्रज्ञमिति " उभयतः ८ प्रज्ञनहीं) इसपद करके जाग्रत् अरु स्वप्नकी सन्धीरूप मध्य अवस्था का निषेध किया, अरु "नप्रज्ञान घनमिति" ८ प्रज्ञानघन नहीं) इस पदसे सुषुप्ति अवस्था का निषेध किया, क्योंकि सुषुप्तिको बीजभावकी अविवेक रूपताहै ताते, अरु " नप्रज्ञमिति " ८प्रज्ञनहीं) इस पद करके एककाल बिषे सर्व विषयों के ज्ञातापने का निषेध किया, अरु " नाप्रज्ञमिति " ८अप्रज्ञनहीं) इसपद से अचेतनपने का निषेध किया ॥ शङ्का ॥ ननु, पुनःआत्माबिषे प्रतीयमान जे अन्तःप्रज्ञ आदिक तिनकारज्जुआदिकों बिषे सर्पादिकोंवत् निषेध होनेसे असत्पना कैसे जानिये, समाधान ॥ तहां कहते हैं । अन्तःप्रज्ञआदिकोंके ज्ञानस्वरूप होने बिषे अबिशेषताके हुये ८ भीरज्जुआदिकों बिषे सर्प जलधारादिकों के कल्पित भेदवत् परस्पर असत्पना है । अर्थात् जैसे एकही रज्जुरूप अधिष्ठान बिषे अध्यस्त जे 'सर्प ' दण्ड, जलधारा, सो कल्पित अरु परस्पर में व्यभिचारी 'अर्थात् जिसकालमें रज्जुबिषे सर्पकी प्रतीति है तिसही कालमें दंड अरु जलधारा की नहीं ' अरु जिसकाल बिषे दण्डकी प्रतीतिहै तिसकाल बिषे सर्प अरु जलधाराकी प्रतीति नहीं, अरु जिसकाल में जलधारा की प्रतीति है तिसकाल में सर्प अरु दंडकी प्रतीति नहीं, ताते अधिष्ठान रज्जु से वास्तव करके अपृथक् भी जे कल्पित 'सर्प, दण्ड, जलधारा, सो उक्तप्रकार परस्पर में व्यभिचारी अरु कल्पित होनेसे असत् है । तैसेही विश्वादिक भी अपने अधिष्ठान से पृथक् सत्तावाले नहीं परन्तु परस्पर व्यभिचारी अरु कल्पित होनेसे असत् हैं ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरु रज्जुआदिकोंवत् अव्यभिचारतासे तिनके ज्ञान स्वरूप का सत्यपनाहै ॥ अरु जो ऐसाकहे कि तिनका ज्ञानस्वरूप भी सुषुप्ति बिषे व्यभिचारको पावताहै, सो बने नहीं क्योंकि सुप्तिवान् पुरुष अनुभव का विषय है ताते। अरु "नहिविज्ञातुर्विज्ञातेर्विपरिलोपो विद्यतइतिश्रुतेः" ८विज्ञाताकी विज्ञप्तिका लोप विद्यमान नहीं, इस श्रुतिके प्रमाण से ? अरु जब ऐसा है एतदर्थही "अदृष्टम्" ८अदृष्ट है ? अरु जिसकरके अदृष्ट है, तिसही करके "अव्यवहार्य्यम्" अव्यवहार (व्यवहार करने के अयोग्य) है, अरु अव्यवहार होनेसे "अग्राह्य" अग्राह्य (कर्मेन्द्रियोंसे ग्रहण करने के अयोग्य) है, ताहीते "अलक्षणम्" अलक्षण कहिये लिंग रहित । अर्थात् अनुमान प्रमाणका अविषय । है। अरु जब ऐसाहै तबहीं "अचिन्त्यम्" अचिन्त्य (अन्तःकरण की वृत्तिका अविषय) है। अरु जिसकरके ऐसाहै तिसही करके "अव्यपदेश्यम्" अव्यपदेश्य (शब्दप्रमाणका अविषय होने से उपदेश करने वा कहनेके अयोग्य) है। अरु जब ऐसाहै तब "एकात्म्यप्रत्ययसारम्" एकात्म्य प्रत्ययसारहै, अर्थात् जाग्रदादि । अवस्था रूप । स्थानोंबिषे यह आत्मा एकहै, इसप्रकार अव्यभिचारी । प्रत्यय (ज्ञान) तिसकरके अनुसरने (बिचार वा अनुभव करने योग्यहै। अथवा जिस तुरीया की प्राप्ति बिषे एक आत्मज्ञानरूप ही सार (मुख्यप्रमाण) है, इसप्रकार का सो तुरीया है "आत्मेत्येवोपासीतइतिश्रुतेः" ८आत्माहै इसप्रकारहीउपासना करना । अर्थात् आत्माको अस्तिभावसेही निश्चय करना, "अस्तीत्येवोपलब्धव्य" इत्यादि अन्यश्रुतिके प्रमाणसे । इस प्रकार । अन्तःप्रज्ञत्वादि । भावप्रापक जाग्रदादि । स्थानोंके अभिमानी । धर्म का निषेध किया। अरु "प्रपञ्चोपशममिति" ८ प्रपंच रहित है ? इसप्रकार । आत्माबिषे । जाग्रदादि स्थानों के धर्म । अभाव कहा। अरु उक्तप्रकारका होने सेही "शान्तम्" शा (रागद्वेषादि सर्वविकार अरु विक्रिया रहित) है । इसही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"शिवम्" शिव (शुद्धबुद्ध मुक्तस्वभाव परमानन्द बोधस्वरूप) है। अरु "अद्वैतम्" अद्वैत। अर्थात् जिसकरके सर्वभेद विकल्पसे रहित। है, तिसही से "चतुर्थम्" चतुर्थ है ८। अर्थात् तीन पादों की अपेक्षासे चतुर्थ। तुरीयपाद, "मन्यन्ते" मानते हैं, क्योंकि प्रतीयमान जे विश्वादिक तीन पाद तिनसे विलक्षण है ताते "सआत्मा सविज्ञेय" ८-सो आत्माहै सो जानने योग्यहै, अरु जैसे प्रतीयमानजे 'सर्प, भूमिकी दरार, दंड, जलधारादिक, तिस सर्वसे पृथक्। अरु तिनसबका आश्रय अधिष्ठान। रज्जु है। तैसे "तत्त्वमसि" ८ सो तूहै, इत्यादि महावाक्योंका लक्ष्य-रूप जो आत्मा। अर्थात् जाग्रदादि अवस्थारूप स्थानोंका, अरु तदभिमानी विश्वादिकों का आश्रय अधिष्ठान अरु सर्वके धर्म कर्मादिकों से पृथक् सर्वकाप्रकाशक साक्षी निरुपाधिशुद्ध बिज्ञान-घन निर्बिशेष निरुपाधि जो अत्मा सो। अदृष्ट (चक्षुरादिकों का अविषय) हुआ, । चक्षुरादि सर्वका। द्रष्टाहै, अरु "नाहिद्रष्टुर्दृष्टे र्विपरिलोपोविद्यत, इत्यादि" ८ द्रष्टाकी दृष्टिका विपरिलोप विद्यमान नहीं, इत्यादि श्रुतियों ने कहा है, । ताते सोई सर्वका अनुभवी अपना आप सत्य प्रत्यगात्मा है। सो जानने योग्यहै॥ यहां। "सविज्ञेय" ८ सो जानने योग्यहै, इसप्रकार कहाहै सो। पूर्व। अपने आप आत्माकी। अज्ञात अवस्थाविषे। अर्थात् अपने आप वास्तविक स्वरूपको यथार्थ न जानने रूप अवस्थाबिषे। आत्मा विषयक ज्ञेयपनेकेहुये, आत्मा को 'जाननेयोग्य है, इसप्र-कारकहा। अरु। महावाक्योंके लक्ष्यार्थको सम्यक्प्रकार अपने आप। आत्माकरके जानेहुये 'ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, इस त्रिपुटि के बिभाग रूप द्वैतका अभाव होताहै ७॥

८॥ हे सौम्य! "अत्रैतेश्लोकाभवन्ति" ८यहांयह श्लोक होतेहैं, अर्थात् 'यहां[अत्र "नान्तःप्रज्ञत्वादि" ८अन्तःप्रज्ञत्वनहीं, इससत संख्यावाले श्रुति मन्त्रकरके उक्तार्थ बिषे तिसके बर्णनरूप गौड-पादाचार्य कृत नव ९ श्लोकोंको प्रवटकरतेहैं] "निवृत्तेः सर्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गौडपादीयोपनिषदर्थाविष्करणम् ॥

निवृत्तेःसर्व्वदुःखानामीशानःप्रभुरव्ययः ॥ अद्वैतः सर्वभावानांदेवस्तुर्य्योविभुःस्मृतः १० ॥

अथ गौडपादाचार्यकृत कारिका ॥

दुःखानामीशानः प्रभुरव्ययः" ‘सर्वदुखोंकी निवृत्तिका ईशान प्रभु है, अव्यय है’ अर्थात् ‘प्राज्ञ, तैजस, विश्वरूप लक्षणवाले जीवोंके सर्वदुःखोंकी निवृत्तिका ईशान कहिये नियामक तुरीयरूप आत्मा है । सो प्रभुहै । अर्थात् यहां ‘ईशान, पदका व्याख्यान रूप ‘प्रभु’ पदहै, एतदर्थ ईशान कहिये सर्व दुःखोंकी निवृत्ति के अर्थ प्रभु (समर्थ) होताहै (अर्थात् जो सर्वदुःखोंकी निवृत्तिकरने में समर्थ होवे तिसको ‘प्रभु, इसनामसे कहते हैं, सो एक आत्माहीअपने सम्यक् ज्ञानद्वारा अध्यात्मिकादि त्रिविधतापोंको समूल अशेष निवृत्तकरताहै ताते तुरीय आत्माके ‘ईशान,इस विशेषणकाअर्थ प्रभुहै (क्योंकि सर्व दुःखोंकी जो निवृत्तिहै सो तिस (आत्मा) केज्ञानरूप निमित्तसे होतीहै ताते । अरु यह प्रत्यगात्मा जिसको (वास्तवकरके) स्वरूपसे व्यभिचारको पावता नहीं तिस हीसे अव्यय है । अरु “ अद्वैतः सर्वभावानां देवतुर्य्यो विभुः स्मृतः ‘ सर्वभावोंके (मिथ्याहोनेसे) अद्वैतहै, देव तुरीय विभु (व्यापक) कहाहै ’ अर्थात् ‘ जाग्रदादि अवस्थारूप तीनोंस्थान अरु तिनका विश्वादिक तीनों अभिमानी सो सर्व (रज्जुमें सर्पवत् असत् होनेसे) उन सर्वका आश्रय अधिष्ठानरूप तुरीय आत्मा (अद्वैत है । अरु एतदर्थही (अर्थात् सर्वभावोंको मिथ्याहोनेसेही) व्यय (व्यभिचार) के हेतु जे द्वैतवस्तु तिसके अभावसे आत्मा अव्यय है । अरु सो यह सर्वका प्रकाशक होनेसे देव (अर्थात् जाग्रदादि स्थानों सहित विश्वादिकोंके ‘ रज्जु में सर्पवत् अध्यस्तरूप भाव को, अरु स्वरूपसे उनके अभावको, उनका अधिष्ठान साक्षीहो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कार्य्यकारणबद्धौताविष्येतेविश्वतैजसौ ॥ प्राज्ञःकारणबद्धस्तुद्वौतौतुर्य्येनसिध्यतः ११ ॥

प्रकाशताहै ताते आत्मा सर्व प्रकाशकों का प्रकाशक देव है। अरु विश्वादिकों की अपेक्षा चतुर्थ होने से तुरीय, अरु सर्व में व्यापक होने से विभुहै, ऐसा कहते हैं १० ॥

११ ॥ हे सौम्य! अब तुर्य्यकेयथार्थ आत्मपनेके निश्चयार्थ [इस श्लोकके तात्पर्यको कहतेहैं] "कार्य्य कारणबद्धौताविष्येतेविश्व तैजसौ" ६ सो विश्व तैजसदोनों कार्यकारण से बद्ध अंगीकार करते हैं; अर्थात् विश्वादिकों का सामान्य अरु विशेषभाव निरूपण करते हैं [विश्वादिकों बिषे मध्यकी विशेषता वा 'विलक्षणताके निरूपण करनेद्वारा तुरीयाकोही निरधार करते हैं] यहां 'करते हैं, ऐसा जो फलभाव, सो कार्यहै। अरु 'करता है, ऐसा जो बीजभाव, सो कारण है। तिन तत्त्वके अग्रहण अरु अन्यथा ग्रहणरूप बीजभाव अरु फलभाव। अर्थात् तत्त्वका अग्रहण (अज्ञान) सोई बीजभाव अरु तिसीबीज हेतुसे हुआ जो तत्त्व विषयक कर्तृत्वभोक्तृत्वादि अन्यथाग्रहणभाव सोई उक्त बीजका फलभाव है। तिनसे वे पूर्वोक्त बिश्व अरु तैजस ये बद्ध अंगीकार करते हैं अरु "प्राज्ञः कारणबद्धस्तु द्वौतौ तुर्य्येन सिध्यतः" ६ प्राज्ञ तो कारण भावसेही बद्धहै, बिश्व अरु तैजस येदोनों तुरीयाबिषे सिद्ध होते नहीं; अर्थात् प्राज्ञतो बीजभावरूप कारण सेही बद्धहै अर्थात् तत्त्वका अबोधमात्रही जो बीजभाव सोई प्राज्ञपने बिषे निमित्तहै। एतदर्थवे बीजभाव अरु फल भावमय तत्त्व के अग्रहण अरु अन्यथाग्रहणरूप विश्व अरु तैजस यह दोनों तुरीयाबिषे सिद्ध होते नहीं ११ ॥

१२ ॥ हे सौम्य! प्रश्न। पुनःप्राज्ञको कारणसे बद्धपना कैसेहै। वा तुरीयाबिषे तत्त्व के अग्रहण अरु अन्यथाग्रहणरूप बद्ध जो बिश्व औ तैजस सो तिसप्रकारके सिद्ध होते नहीं,। उत्तर। तहां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नात्मानंनापरांश्चैवनसत्यंनापिचाऽनृतम् ॥ प्राज्ञः
किञ्चनसंवेत्तितुर्य्यंतत्सर्वदृक्सदा १२ ॥

कहते हैं, "नात्मानं नापरांश्चैव न सत्यं नापि चाऽनृतम्, प्राज्ञ
किञ्चन संवेत्ति " ८ प्राज्ञहै सो न आपको न परको न सत्यको न
अनृत (झूठ) को, कुछभी जानता नहीं ; अर्थात् जिसकरके
प्राज्ञ जोहै सो विश्व अरु तैजसवत् कुछ भी आप को जानता
नहीं, अरु अविद्यारूप बीजसे उत्पन्न बाह्यके द्वैतरूप, अन्यों को
भी जानता नहीं, अरु सत्यको ।' दृष्टयादिकोंके विषय कार्यको
जानता नहीं । अरु तैसेही अविद्यात्मक बीजरूप अनृत (अवि
षयकारण) को भी जानता नहीं । एतदर्थ यह प्राज्ञ अन्यथाग्रहण
कहिये ' विपरीत ज्ञान, के बीजमय अग्रहणरूप अज्ञान से बद्ध
होताहै । अरु " तुर्य्यंतत्सर्वदृक् सदा " ८ तुरीया सर्वदा सर्वदृक्
है ; अर्थात् जिसकरके तुरीया अपनेसे इतर (अविद्या)केअभाव
से सर्वदा सर्वदृक् (सर्वरूपअरुसर्वकाद्रष्टा) है । एतदर्थ तिसबिषे
तत्त्वका अग्रहणरूप (अविद्यात्मक) बीजनहीं, ' क्योंकि वो तिस
का भी प्रकाशक द्रष्टा है ताते, अरु जब उसबिषे उक्त बीजनहीं
तिसहीकरके तिसबीजसे उत्पन्नहुआ जो अन्यथाग्रहरूप (अर्थात्
बिपरीतज्ञान, जीवभावरूप) फलकाभी तिसबिषे अभावहै । जैसे
सर्वदा प्रकाशरूप सूर्य्यबिषे अप्रकाशता वा अन्यथाप्रकाशना सं
भवे नहीं । अथवा जैसे सर्वदा स्वयंप्रकाशरूप सूर्य्य बिषे अंधकार
नहीं अरु तिसके अभावहुये तिसकाकार्य जो पदार्थका अन्यथा
भासना सोभीनहीं । तैसे सर्वदा स्वयंज्योतिःद्रष्टारूप तुरीयाबिषे
बीजरूप मूलाज्ञान अरु तिसकाकार्य अन्यथाग्रहण (विपरीतज्ञा
न, जीवभाव) रूपफल दोनों नहीं । क्योंकि "नहिद्रष्टेर्दृष्टेर्विपरि
लोपो विद्यत इतिश्रुतेः" द्रष्टाकी दृष्टिका विपरिलोप (अभाव)
विद्यमान नहीं ; इसश्रुतिके प्रमाणसे । अरु वो सर्वका द्रष्टा
तुरीया पदार्थका अग्रहणरूपबीजसुषुप्तिका अरु तिसकेकार्यविप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वैतस्याग्रहणंतुल्यमुभयोःप्राज्ञतुर्य्ययोः । बीजनिद्रा युतः प्राज्ञः सा च तुर्य्येनविद्यते १३ ॥

रीतज्ञानरूप फलका प्रकाशक द्रष्टाहै, अरु । घटद्रष्टाघटाद्भिन्नः । इस न्यायप्रमाण दृश्यसे द्रष्टापृथक् होनेसे उसविषे उक्त बीज अरु फलका अभावसिद्धहै । अथवा जाग्रत् अरु स्वप्नादि । सर्व अवस्थामें । सर्व भूतों विषे स्थितिवाला सर्ववस्तुओं का द्रष्टा आभास (प्रतिबिम्बरूप प्रकाश) है सो तुरीयाही है । क्योंकि बिम्बसे प्रतिबिम्बकी पृथक्सत्ताका अभावहै ताते । एतदर्थ सो तुरीया सर्वदा सर्वदृक् (सर्वकाद्रष्टा) है । क्योंकि अविद्यासे रहित सर्वदा जाग्रत् स्वभाव है । तथाच " नान्यदतोऽस्तिद्रष्ट, इत्यादि श्रुतेः " ८ इससे अन्य द्रष्टा है नहीं ? १२ ॥

१३ ॥ हे सौम्य! ,अब निमित्तान्तरसेप्राप्तहुई शङ्काकी निवृत्ति केअर्थयह श्लोकहै । अर्थात् तुरीयाविषे अन्यनिमित्ततासे प्राप्तहुई कारणता । तिससेहुई जो बद्धपनेकीशङ्का तिस । बद्धपनेकीशङ्का की निवृत्तिके अर्थ यह श्लोकहै । कैसे कि [विवादका विषय जो तुरीय सो कारणसे बद्ध कहिये सम्बन्धवाला है, द्वैतका अग्रहणहै ताते, प्राज्ञवत् । यहां अनुमानकोही देखावते हुये, प्राज्ञ को कारणकरके बद्धपने विषे अन्यनिमित्तकोही प्रकटकरते हैं] दोनोंबिषे द्वैतके अग्रहणरूप निमित्तकी तुल्यताहै ताते । इस प्रकारकी जो शङ्काप्राप्तहुई 'सो शङ्का, प्राज्ञकोही कारण से बद्धपनाहै तुरीयाकोनहीं, इसप्रकारनिवारण करतेहैं " द्वैतस्याग्रहणं तुल्यमुभयोः प्राज्ञतुर्य्ययोः " ८ प्राज्ञ अरु तुरीया दोनोंको द्वैतका अग्रहणतुल्यहै ? अर्थात् यद्यपि प्राज्ञ अरु तुरीया इन दोनों को द्वैतका अग्रहण तुल्यही है । तथापि " बीज निद्रायुतः प्राज्ञ सा च तुर्य्येन विद्यते " ८ प्राज्ञ बीज निद्रायुक्त है, सो तुरीया बिषे विद्यमान नहीं ? अर्थात् प्राज्ञ जोहै सो विशेषके । विश्व तैजसादिरूप द्वैतके । बोधके उत्पत्तिका कारण जो तत्त्वका अबोधरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्ननिद्रायुतावाद्यौप्राज्ञस्त्वस्वप्ननिद्रया ॥ न नि
द्रांनैवचस्वप्नं तुर्य्येपश्यन्तिनिश्चिताः १४ ॥

बीजनिद्रा (मूलाविद्या) तिसकरकेयुक्तहै। अरु तुरीयाको सर्वदा सर्वका द्रष्टा स्वभाववालाहोनेसे सो 'तत्त्वका अबोधरूप निद्रा (मूलाविद्या), तुरीयाबिषे है नहीं एतदर्थतिस तुरीया बिषे कारण का सम्बन्ध नहीं, यह अभिप्राय सिद्ध है १३ ॥

१४ ॥ हे सौम्य!, [अब, "कार्य्यकारणबद्धौ ताविष्येतेविश्वं जसौ" [वे विश्वअरु तैजसकार्य्य अरुकारणकरकेबद्धहैं। इसअध्या दश १८ में श्लोकबिषे उक्त अर्थको, अनुभवके आश्रयसे वर्णन करते हैं] "स्वप्ननिद्रायुतावाद्यौ प्राज्ञस्त्वस्वप्ननिद्रया" ८ आद्य दोनों स्वप्न अरु निद्राकरके युक्त है, अरु प्राज्ञ तो स्वप्नसे रहित निद्राकरकेही युक्त है; अर्थात् आद्य (प्रथमकहे) जे विश्व अरु तैजस सो दोनों 'रज्जुबिषे सर्पवत्, [अध्यस्त] जे अन्यथाग्रहणरूप स्वप्न, अरुतत्त्वके अबोधमय अज्ञानरूप निद्रा, तिन स्वप्न अरु निद्रा दोनोंकरकेयुक्तहै। एतदर्थ वे [विश्व अरु तैजस] कार्य अरु कारण [दोनोंसे] बद्धहैं, इसप्रकारपूर्वकहा। अरु प्राज्ञते स्वप्न से रहित केवल निद्रा (अज्ञान) सेहीयुक्तहै। एतदर्थ कारणसे बद्ध है, इसप्रकार पूर्व कहा अरु "ननिद्रांनैवचस्वप्नंतुर्य्ये पश्यन्ति निश्चिताः" ८ निश्चयको प्राप्तहुये, तुरीयाबिषे स्वप्नकोनहीं देखते अरु निद्राको भी नहीं देखते; अर्थात् जो 'महावाक्यार्थ के सम्यक् ज्ञानकरके [निश्चयको प्राप्तहुये ब्रह्मवेत्ता, सो 'सूर्यबिषे अन्धकारवत् बिरुद्ध धर्माहोनेसे, तुरीयाबिषे स्वप्नको देखते नहीं अरु निद्राको भी देखते नहीं। एतदर्थही जो [सर्वका प्रकाशक द्रष्टा] तुरीया है सो कार्य्य अरु कारण दोनों से बद्ध नहीं इसप्रकार पूर्व कहा है १४ ॥

१५ ॥ हे सौम्य!, [शंका] ननु [पुरुष स्वप्नबिषेस्थित कबहोताहै अरु निद्राबिषे कब होता है; अरु तुरीयाबिषे निश्चयको प्राप्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्यथाग्रहतः स्वप्नोनिद्रातत्त्वमजानतः ॥ विपर्य्यासेतयोक्षीणेतुरीयंपदमश्नुते १५ ॥

हुआ कब होताहै, । समाधान । तहां कहते हैं " अन्यथा ग्रहतः स्वप्नो निद्रातत्त्वमजानतः " ६ तत्त्वके अन्यथा ग्रहणवाले को स्वप्नहोताहै, अरु न जाननेवाले को निद्रा है ; अर्थात् स्वप्न अरु जाग्रत्बिषे ' रज्जुमें सर्पवत्, तत्त्वको अन्यथा (औरप्रकारसे) ग्रहण करनेवाले पुरुषको स्वप्नहोताहै, अरु तत्त्वके न जाननेवाले को तीनों अवस्थाबिषे तुल्य निद्रा है । यहां स्वप्न अरु निद्राबिषे तुल्यताके होने से ' विश्व अरु तैजस, इनदोनों को एकराशी (कोटि) पनाहै । अरु तिनबिषे अन्यथाग्रहणसे अरुप्रधान (मुख्य) होनेसे गुणरूप निद्राहै अरुबिपरियास स्वप्नहै । अरु तृतीयस्थान (द्वितीयकोटि) प्राज्ञबिषेतो तत्त्वकाअज्ञानलक्षणरूप निद्राही केवल बिपरियासहै । एतदर्थ " बिपरियासे तयोक्षीणेतुरीयं पदमश्नुते " ६ बिपरियासके क्षीणहुये तुरीय पदको पावताहै ; अर्थात् उन कार्य अरु कारण रूप उभय स्थानों के अन्यथा ग्रहण अरु अग्रहण लक्षणमय कार्य कारण से बद्धरूप बिपरियास के ' परमार्थ तत्त्वके प्रतिबोधकरके, क्षीण(बिनाश)हुये तुरीयपदको पावताहै । अर्थात् (जब उक्तप्रकार का बिपरियास नाश होताहै तब तिस तुरीयाबिषे उभय प्रकार के बन्धके रूपको न देखता (अनुभवकरता) हुआ पुरुष तुरीयाबिषे निश्चयको प्राप्तहुआ होताहै १५ ॥

१६ ॥ हे सौम्य ! [बिपर्ययके नाशकाहेतु तत्त्वज्ञान कबहोता है । इसप्रकार प्रश्नकरनेकी इच्छाके होनेसे कहते हैं] " अनादि माययासुप्तो यदा जीवः प्रबुद्धयते " ६ यह जीव अनादि माया करके सोयाहै, सो जब प्रबोधवान् होताहै ; अर्थात् जो यह संसारी जीवहै सो तत्त्वके अबोधमय बीजरूप अरु अन्यथा ग्रहण फल रूप, जो अनादि काल से प्रवर्त्तहुये उभय लक्षणवाले मायारूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनादिमाययासुप्तोयदाजीवःप्रबुद्ध्यते । अजम
निद्रमस्वप्नमद्वैतं बुद्ध्यतेतदा १६ ॥

स्वप्न, तिनकरके "यह मेरा पिता है, यह मेरा पुत्रहै, यह मेरा पौत्रहै, यह मेरा क्षेत्रहै, यह मेरा पशुहै, मैं इनका पोषक स्वामी हौं, दुःखीहौं, इनसे क्षयको पायाहौं, अरु इनसे वृद्धि को भी पायाहौं,,। इत्यादि प्रकारके स्वप्नोंको जाग्रत् अरु स्वप्न उभय स्थानोंबिषे देखताहुआ । अनादि कालसे । सोवताहै । अरु । अजमनिद्रमस्वप्नमद्वैतं बुद्ध्यते तदा "। ६ जब बोधको प्राप्त होता है तब 'अजहै, अनिद्रहै, अस्वप्नहै, अद्वैतहै, ऐसे जानता है,, अर्थात् सो । अनादि कालका सोयाहुआ जीव । जब वेदान्त के अर्थरूप तत्त्वके जाननेवाले परमदयालु आचार्य से "तू इन पुत्रादिकों का हेतु अरु फलरूप नहीं" किन्तु "। तत्त्वमसीति"। सो (ब्रह्म) तूहै । इसप्रकार श्रवण करके प्रबोधको प्राप्त होताहै । अर्थात् सहस्रावधि माता पिताओं से अधिक जीवोंपर परम कृपाकरके, इस उक्त स्वप्न के जन्म मरणादि महादुःखों से ग्रसित देख आप आचार्य द्वाराहोके "। उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य व रान्निबोधत "। इत्यादि अपने परम उदारवाक्योंसे अज्ञान निद्रा से जगाय पुनः कहतीहै कि हे सौम्य ! 'जैसे सर्व जातिके वृक्षों कारस मक्षिकाके उदरमें भेदसेरहित, समान मधुभावको प्राप्तहो ताहै, तैसेही यह सर्व चिदाभास जीव सुषुप्ति अवस्था में समान एक बिम्बरूप चैतन्य भावको प्राप्तहोतेहैं अरु जहां पुत्र पितादि वा ब्राह्मण क्षत्रियादि वा मनुष्य पशुवादि वा जड़ चैतन्यादि कोई भी भेदभाव विशेष रहता नहीं, अरु जहां को प्राप्तहुये विद्वान् पुनः जीव भावबिषे आवते नहीं "। स आत्मातत्त्वमसि "। सोई सर्वका अपना आप प्रत्यगात्माहै, सोई आत्मा तूहै । इसप्रकार जब परमहितकारणी श्रुति महावाक्योंके लक्ष्यार्थको जाननेवाले ब्रह्मनिष्ठ आचार्यद्वारा अपने वाक्योंसे इनजीवोंको 'जो अनादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कालसे मायाकरके सोयेहुये नानाप्रकार के जगत्रूप स्वप्नों को देखते जन्म मरणादिकों के महान् क्लेशोंको पावते हैं, जगायके सावधान करती है। तब ऐसे जानता है। प्रश्न। कैसेजानता है, उत्तर। इस आत्माविषे बाह्य (कार्य) अरु अन्तर (कारण) वा जन्मादि षट् भावविकार हैं नहीं। अतएव अजन्मा है, अर्थात् । आत्मा । बाह्य अन्तर सहित अरु । बाह्य अन्तरके धर्मादि । सर्व भावविकार करके वर्जित (रहित) है। अरु जिस करके इस आत्माविषे जन्मादिकों की कारणरूपा अविद्या अरु अज्ञान स्वरूप बीजमय निद्रा नहीं, एतदर्थ यह अनिद्र है । अर्थात् सर्वदा बोधस्वरूप है । अरु जिसकरके सो तुरीया अनिद्र । अबोध रहित । है, तिसही करके अस्वप्न है, क्योंकि अन्यथा ग्रहणरूप जो स्वप्नहै सो अबोधरूप निद्राके निमित्तवाला है । अरु सो निद्रा तुरीय आत्मा बिषे है नहीं, अतएव तन्निमित्तक उक्त स्वप्न भी तिस बिषेनहीं। अरु जिसकरके अनिद्र अरु अस्वप्न है, तिसही करके अजन्मा अरु अद्वैत है, इसप्रकार तुरीयरूप आत्माको तब जानता है । जब स्वस्वरूप बिषे जागता है १६ ॥

१७॥ हे सौम्य!। शंका। जबप्रपंचकी निवृत्तिसे'अद्वैतको,जानताहै,तब प्रपंचके अनिवृत्तहुये अद्वैत कैसे सिद्ध होताहै, जहां ऐसी शंकाहै तहां कहतेहैं, जो कि परमार्थ सेही प्रपंच विद्यमान होय तब उक्तप्रकार अद्वैतकी असिद्धि होती है, यह तेराकथन सत्यहै, परन्तु 'रज्जुबिषे सर्पवत्, कल्पित होनेसे सो । प्रपंच । विद्यमान नहीं, एतदर्थ अद्वैतही सिद्ध होताहै अरु "। प्रपंचोयदिविद्येत निवर्त्तेतनसंशयः "। ८जो कदापि प्रपंच विद्यमान होय तो निवृत्त होय इसमें संशय नहीं ; अर्थात् जो यह प्रपंच । स्वरूपसेही। विद्यमान होवे तो निवृत्तहोवे ।अर्थात् जो कदापि यह प्रपंच स्वरूपसेही विद्यमान होय तो इसकी निवृत्ति हुये अद्वैत सिद्धहोवे परन्तु। जैसे रज्जुविषे भ्रान्तिबुद्धि करके कल्पित जो सर्प सो विद्यमान हुआ हुआ भी विवेकसे निवृत्त होताहै, एतदर्थ वस्तुसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रपञ्चोयदिविद्येतनिवर्त्तेतनसंशयः । मायामात्र मिदंद्वैतमद्वैतंपरमार्थतः १७ ॥

हैं नहीं । अर्थात् जैसे रज्जुविषे सर्प तैसे आत्माविषे प्रपंच कल्पित होनेसे रज्जुके यथार्थ विवेकहुये उस प्रपंचके हुये हुये भी सत्यरूप रज्जुवत् एक आत्मतत्त्वही सत्य अद्वैत होवेहै, क्योंकि प्रपंच भ्रान्ति करके कल्पित है ताते, वा जिनको रज्जुका यथार्थ विवेक नहीं तिनको द्वैतरूप सर्प सत्यवत् हैं, परन्तु उस भ्रान्ति कालविषे भी सर्प कल्पित होनेसे रज्जु अद्वैतही है, इसप्रकार अविवेक करकें प्रपंचकी सत्य प्रतीतिकाल में भी 'प्रपंचको भ्रांतिमात्र होनेसे, आत्मा अद्वैतही है। इसप्रकार द्वैतरूप प्रपंच के होतेसंते भी अद्वैतही सिद्धहै । अरु जैसे मायावी पुरुष ने देखाई जो माया सो विद्यमान हुई हुई भी तिसके देखनेवाले पुरुष के नेत्रबन्धके दूरहुये निवृत्त होतीहै, क्योंकि वास्तवसे है नहीं । तैसेही " मायामात्रमिदंद्वैतमद्वैतंपरमार्थतः " (यहद्वैत मायामात्र है अरु परमार्थ से अद्वैत है ; अर्थात् । जैसे रज्जुविषे सर्प अरु मायावी बिषे माया । तैसे यह प्रपंच नामवाला द्वैत मायामात्र । भ्रान्ति करके कल्पित । है । अरुरज्जु अरु मायावीवत् परमार्थ करके अद्वैतही है । एतदर्थ कोईभी । अविवेकीको । प्रवृत्त हुआ वा । विवेकीको । निवृत्त हुआ । उभयप्रकार । प्रपंच हैही नहीं । इति सिद्धम् १७ ॥

१८ ॥ हे सौम्य!। शंका । शास्ता (उपदेष्टा) शास्त्र, अरु शिष्य इसप्रकारका विकल्प । अद्वैतबिषे। कैसे प्रवृत्त होताहै, जहां ऐसी शंकाहै, तहां कहते हैं । समाधान । " विकल्पोविनिवर्तेतकल्पितो यदिकेनचित् " (यदिविकल्प किसी करके कल्पित होय तो निवर्त्त होताहै ; अर्थात् विकल्प निवर्त्त होताहै जो किसीकरके कल्पित होय तो । जैसे यह प्रपंच मायावी की माया अरु रज्जुविषे सर्पवत् प्रबोध । यथार्थ ज्ञान । से पूर्वहै । तैसे यह शिष्यादि भेदना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विकल्पोविनिवर्त्तेतकल्पितोयदिकेनचित्। उपदेशादयंवादोज्ञातेद्वैतंनविद्यते १८॥ उपनिषद् ॥

सोऽयमात्माऽध्यक्षरमोङ्कारोधिमात्रम् । पादामात्रा मात्राश्चपादाअकारउकारोमकारइति ८॥

रूप विकल्पभी [तत्त्वके] प्रबोध (यथार्थज्ञान) के पूर्वही उपदेश के निमित्तहै। याते "[उपदेशादयंवादो ज्ञातेद्वैतं न विद्यते" [यह वाद उपदेशके जानेहुये द्वैत है नहीं; अर्थात् यह शिष्य शास्ता अरु शास्त्ररूप जो [व्यावहारिक] कथनहै सो तत्त्वोपदेशसे पूर्वहै, अरु उपदेशके कार्यरूप ज्ञानके पूर्णहुये परमार्थ तत्त्वके जाननेसे [पुनः उपदेष्टादिरूप] द्वैतहै नहीं १८॥

अथ उपनिषदर्थ ॥

८॥हे सौम्य! [उक्तप्रकार तत्त्वज्ञानविषे समर्थ उत्तम अरु मध्यम अधिकारियोंको अध्यारोप अरु अपवादसे पारमार्थिक तत्त्व उपदेश किया। अब तत्त्वके ग्रहणमें असमर्थ कनिष्ठ अधिकारि कों आत्माके ध्यानाविषे विधानार्थ आरोपदृष्टिकोही आश्रयकरके मूल श्रुतिके चारमन्त्रोंका व्याख्यान करते हैं] जो वाच्यकी प्रधानतावाला ॐकार चारपादवाला आत्मा है इसप्रकार व्याख्यान किया "सोऽयमात्माऽध्यक्षरमोङ्कारोऽधिमात्रम्" ८ सो यह आत्माअध्यक्षर है, ॐकार है, अधिमात्रहै; अर्थात् जो पूर्व ॐकार चारपादवाला आत्माकहा, सो यह आत्मा अध्यक्षर है, अर्थात् वाचककी प्रधानता से अक्षरको आश्रय करके वर्णन कियाहै एतदर्थ अध्यक्षर कहते हैं। प्र०। पुनः सो अक्षर क्याहै। उ०। तहां कहते हैं। सो अक्षर ॐकारहै। अरु सो यह ॐकार पादों से विभाग पायाहुआ अधिमात्र है। अरु मात्राको आश्रय करके वर्त्तता है ताते अधिमात्र है। शंका। ननु, आत्माही पादोंसे विभागको पावताहै, अरु मात्राको आश्रय करके ॐकार स्थित होताहै, ताते पादोंसे विभागको प्राप्तहुये ॐकारका अधिमात्रपना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जागरितस्थानोवैश्वानरोऽकारः प्रथमामात्राऽऽप्तेरा दिमत्वाद्वाऽऽप्नोति हवैसर्व्वान् कामानादिश्च भवतिय एवंवेद ९ ॥

कैसेहै, जहां ऐसा शंकाहै, तहां कहते हैं, "पादा मात्रा मात्राश्च पादा अकार उकारो मकार इति,, ८ पादहैं सो मात्राहैं, मात्राहैं सो पादहैं, अकार उकार मकार यह (तीन ॐकारकी मात्राहैं अर्थात् आत्माके जे पादहैं सो ॐकारकी मात्रा हैं, अरु जे ॐकारकी मात्रा हैं सो आत्माके पादहैं । अतएव पाद अरु मात्रा एकतासे यह कथन विरुद्ध है, ताते कौनसी वो ॐकारकी मात्रा है, जहां ऐसा प्रश्न है, तहां कहते हैं, अकार उकार अरु मकार यह तीन ॐकार की मात्रा हैं ८ ॥

९॥ हे सौम्य! तहां [पादों के मध्य अरु मात्राओंके मध्य विशेष नामक भेदकी अकार रूपताको सूचन करते हैं] विशेषका नियम करतेहैं "(जागरितस्थानोवैश्वानरोऽकारःप्रथमामात्राऽऽप्तेरादिमत्वाद्वाऽऽप्नोति " ८ जाग्रत् स्थानवाला वैश्वानरहै सो अकाररूप प्रथमा मात्राहै, व्याप्तिसेवा आदिवाले होनेसे ,आप्नोति,, अर्थात् जो जाग्रत् स्थानवाला वैश्वानर है सो ॐकारकी अकाररूप प्रथम मात्राहै । प्र० । किस तुल्यता करके दोनोंकी एकता है, । उत्तर । व्याप्तिसे वा आदिवाले होने से । जैसे अकारसे सर्व वाणी व्याप्तहै "अकारोवैसर्वावाग्गितिश्रुतेः" ८ अकारही सर्व वाणीहै इस श्रुतिके प्रमाणसे । अरु तैसेही वैश्वानरसे जाग्रत् व्याप्त है तथाच " तस्यहवैतस्यात्मनोवैश्वानरस्यमूर्द्धैवसुतेज, इत्यादिश्रुतिः" ८ तिस प्रसिद्ध इस वैश्वानररूप आत्माका मस्तकही स्वर्ग है, इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे, वाच्य (नामी) वाचक (नाम) की एकताको हम कहते हैं "(आदिश्चभवति" ८ आदिवाला होताहै, अर्थात् जिसकी आदिहै, तिसकी आदिवाला कहते हैं । अ जैसे आदि (प्रथमता) वाला अकार नामवाला अक्षर है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सेही आदिवाला वैश्यानर है। एतदर्थ तुल्य होनेसे वैश्वानरको अकारपना है॥ अब तिन। अकार अरु वैश्वानर। की एकताके ज्ञाताके अर्थ फल कहते हैं "। हवैसर्वान्कामान्आप्नोति,यएवंवेद "। ६ जो ऐसे जानता है सो निश्चय करके सर्व कामोंको पावताहै; अर्थात् जो वैश्वानर अरु अकारकी उक्तप्रकार एकताको जानता है सो निश्चय करके सर्व भोगोंको पावताहै, अरु सो "। आदिश्च भवति "६ प्रथम होता है; अर्थात्, ज्येष्ठ श्रेष्ठों के मध्य प्रथम (मुख्य) होताहै ६॥

१०॥ हे सौम्य! [अब द्वितीयपाद अरु द्वितीयमात्राकी एकता को कहते हैं] "स्वप्नस्थानस्तैजस उकारो द्वितीया मात्रोत्कर्षा दुभयत्वात् "६ स्वप्नस्थानवाला तैजस उकाररूप द्वितीया मात्रा है, उत्कर्षसे वा उभयरूप होनेसे; अर्थात् जो। द्वितीय। स्वप्न स्थानवाला तैजसहै सो ॐकारकी उकार रूप द्वितीया मात्रा है। प्रश्न। किस तुल्यतासे दोनोंकी एकताहै। उत्तर उत्कर्षता से वा द्वितीयरूपहै ताते। जैसे पाठके क्रमसे अकार से उकार उत्कृष्टहै। अर्थात् प्रणवके उच्चार करने में अकार ह्रस्वहै उकार दीर्घहै, ताते अकारसे उकार उत्कृष्टहै। तैसेही स्थूल उपाधि वाले विश्वसे सूक्ष्म उपाधिवाला तैजस उत्कृष्ट (श्रेष्ठ) है। अर्थात् स्थूल भूतरूप उपाधिवाले स्थूल देहकी अपेक्षा सूक्ष्म अपंचिकृत भूतोंरूप उपाधिवाला सूक्ष्मदेह अविनाशिहै, एतदर्थ विश्वसे तैजस उत्कृष्टहै। तिस उत्कर्षसे उन। उकार अरु तैजस। की एकताहै। अथवा जैसे अकार अरु मकारके मध्यबिषे स्थित उकारहै, तैसेही विश्व अरु प्राज्ञके मध्यबिषे स्थित तैजसहै, एतदर्थ उनकी उभयरूपताकी तुल्यतासे एकताहै। अब उनकी एकताके जाननेवाले विद्वान्को जो फल प्राप्तहोता है सो कहते हैं। "उत्कर्षति हवै ज्ञानसन्ततिंसमानश्चभवति नास्याब्रह्मवित्कुले भवति य एवं वेद "६ जो ऐसे जानताहै सो ज्ञान सन्ततिको बढ़ावताहैअरु समान होता है अरु इसके कुलबिषे अब्रह्मवित्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्नस्थानस्तैजसउकारो द्वितीयामात्रोत्कर्षादु
यत्वाद्वोत्कर्षति हवैज्ञानसन्ततिं समानश्चभवतिनास्य
ब्रह्मवित्कुलेभवतियएवंवेद १० ॥

होता नहीं ; अर्थात्, जो उक्तप्रकार उकार अरु तैजसकी एकता को जानताहै । सो विद्वान् अपने पुत्र वा शिष्यवर्गोंमें। ज्ञानसंतातिको वर्द्धमान करताहै, अतएव उसके कुल (पुत्रों वा शिष्यों में अब्रह्मवेत्ता (ब्रह्मका न जाननेवाला) कोई होता नहीं। अरु पुनः वो समान होताहै, अर्थात् मित्रके पक्षवत् शत्रुके पक्ष में भी द्वेषकरता नहीं । उभयमें समभावही रखताहै १० ॥

११ ॥ हे सौम्य ! [अब तृतीय पाद अरु तृतीय मात्राकी एकताको कहते हैं] "सुषुप्तस्थानः प्राज्ञोमकारस्तृतीया मात्रा, मितेरपीतेर्वा" । सुषुप्तिस्थानवाला प्राज्ञ मकाररूप तृतीयामात्राहै, परिमाणसे वा एकतासे ; अर्थात् जो सुषुप्तिस्थानवाला प्राज्ञहै सो ॐकारकी मकाररूपा तृतीयामात्राहै । प्रश्न । किस तुल्यताकरके दोनोंकी एकताहै । उत्तर । परिमाणसे वा एकता से । यहां इस प्रकार इन । प्राज्ञ अरु मकारमात्रा । दोनोंकी एकताहै, प्रस्थ (धान्यके परिमाण ,मापने, के पात्र) से यव धान्यादिक अन्न के परिमाण (माप) वत्, जैसे लय अरु उत्पत्तिबिषे प्रवेश अरु निकसनेसे । अर्थात् लयबिषे प्रवेश अरु उत्पत्तिबिषे निकसनेसे । प्राज्ञकरके विश्व अरु तैजस परिमाणकिये (मापे) वत् होतेहैं । तैसेही अकार अरु उकार, यह दोनों अक्षर, ॐकारके उच्चारकी समाप्तिबिषे अरु पुनः उच्चारके प्रारंभबिषे मकार में प्रवेश करके निकसेहुयेवत् होतेहैं । अर्थात् ॐकारके उच्चारण करते प्रथम अकार निकलताहै सो उकारके उच्चारणहुये उकारमें लयहुयेवत् होताहै अरु अन्त के मकारके उच्चारणहुये वो उकार मकारमें लयहुयेवत् होताहै, इसप्रकार अकार उकार दोनों अक्षर ॐकारके उच्चारकी समाप्तिबिषे मकारमें प्रवेशहुयेवत् हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुषुप्तस्थानःप्राज्ञोमकारस्तृतीयामात्रा । मितेर पीतेर्वा मिनोतिहवाइदꣳसर्व्वमपीतिश्चभवतियएवं वेद ११ ॥

तेहैं । अरु पुनः ॐकारके उच्चारके प्रारंभमें वे दोनों अक्षर 'अ, उ, मकारसे निकसेहुयेवत् होते हैं। ताते सो । अकार अरु उकार । मकारकरके परिमाणकिये (मापे) वत् होतेहैं । एतदर्थ तिन । प्राज्ञ अरुमकार दोनोंकी तुल्यतासे एकताहै। अथवा जैसे ॐकारके उच्चारकिये मकार रूप अन्तिम अक्षरबिषे अकार अरु उकार यहदोनों एकरूप हुयेवत् होतेहैं, तैसे सुषुप्तिकालबिषे विश्व अरु तैजस प्राज्ञबिषे एकहुयेवत् होतेहैं। एतदर्थ तुल्यहोनेसे प्राज्ञ अरु मकारकी एकताहै। अब तिन । प्राज्ञ अरु मकार । की एकताके जाननेवाले विद्वान्को जोफल प्राप्तहोताहै सोकहतेहैं। "मिनोतिहवाइदꣳ सर्वमपीतिश्चभवति यएवं वेद" । जो ऐसे जानताहै सोसर्वको जानता जगत्का कारण होताहै; अर्थात् जो उक्तप्रकार प्राज्ञअरु मकारमात्राको एककरकेजानताहै सोकारण का ज्ञाताहोनेसे, सर्वको जानताहै । अर्थात् प्राज्ञ अरु मकारकी एकताका जाननेवाला निश्चयकरके इसकार्य्यकारणात्मक समस्त जगत्को यथार्थ जानताहै, अरुआप 'प्राज्ञरूप मकारमात्राका ज्ञाता (अभेदोपासक) होनेसे । जगत्के कारण भावको प्राप्त होताहै ॥ यहां[एकताके ज्ञानबिषे फलके भेदके कथनसे उपासनाका भेद होगा , यह आशंकाकरके साधनोंबिषे फल के भेदकी श्रुतिके अर्थ वादपनेको अंगीकारकरके कहे हैं] अवान्तर फलका जो कथनहै सो मुख्य साधनकी स्तुत्यर्थ है ११ ॥

सौम्य! यहांजो' विश्व , तैजस, प्राज्ञ, इनपादोंकी क्रमशः अकार, उकार, मकार, इनमात्राओं के साथ एकता कही है यहां तिनके साथ में जाग्रदादि स्थानोंकी भी एकता चिन्तनीय , इसका विचार इसग्रंथके अन्तमें प्रकाशित करेंगे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गौडपादीय श्लोकाः ॥

विश्वस्यात्वविवक्षायामादिसामान्यमुत्कटम् । मात्रासम्प्रतिपत्तौस्यादाप्तिसामान्यमेवच १९ ॥

तैजसस्योत्वविज्ञाने उत्कर्षोदृश्यतेस्फुटम् । मात्रासम्प्रतिपत्तौ स्यादुभयत्वंतथाविधम् २० ॥

गौडपादीय कारिका ॥

१९ ॥ हेसौम्य! [पादोंका अरु मात्राओंका जो सनिमित्तके एक चार मन्त्रों करके श्रुतिने कहा, तिसविषयक पूर्ववत् श्रुत्यर्थ वर्णनरूप गौडपादाचार्यकृतषट् श्लोकनको प्रकट करते हैं "। गौडपादीय श्लोकाः "। ८अत्रैते श्लोका भवन्ति ? ६ यहां 'गौडपादाचार्यकृत श्लोक, (मन्त्र) होतेहैं ? "। विश्वस्यात्वविवक्षायामादिसामान्यमुत्कटम् "। ६विश्वके कहनेकी इच्छाकेहुयेअपनेकी तुल्यता श्रेष्ठ देखतेहैं ? अर्थात् विश्वके अकारमात्रापनेके कहनेकी इच्छाकेहुये, अर्थात् विश्वका अकारमात्रापना जब कथनकरनेको इच्छितहोय, तब उक्त न्यायसे अपनेकी तुल्यता श्रेष्ठ देखते हैं। अरु "। मात्रासम्पतिपत्तौ स्याप्तिसामान्यमेवच "। ६ मात्राके निश्चयबिषे व्याप्तिकी तुल्यता श्रेष्ठहै ? अर्थात् मात्राकी एकताबिषे कहिये विश्वका अकारमापना, वा मात्राकी विश्वरूपता, जब निश्ययकरतेहैं तब । एकताके निश्चयबिषे । व्याप्तिकी तुल्यताही श्रेष्ठहै १९ ॥

२० ॥हे सौम्य! "तैजसस्योत्वविज्ञाने उत्कर्षो दृश्यते स्फुटम् ६ तैजसके ज्ञानबिषे उत्कर्षरूपता स्पष्ट दीखतीहै ? अर्थात् तैजसके उकारमात्रापनेके ज्ञानबिषे, अर्थात् तैजसके उकाररूपमापनेके कहनेकी इच्छाके होनेसे । तिसकथनार्थ । उत्कर्षतुल्यता स्पष्ट देखतेहैं। अरु "। मात्रासम्प्रतिपत्तौ स्यादुभयत्वंतथाविधम् "। ६मात्राके निश्चयबिषे तिसही प्रकारका उभय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मकारभावे प्राज्ञस्य मानसामान्यमुत्कटम्। मात्रास म्प्रतिपत्तौतु लयसामान्यममेवच २१॥

त्रिषुधामसुयत्तुल्यं सामान्यंवेत्तिनिश्चितः। सम्पू ज्यःसर्व्वभूतानां वन्द्यश्चैषमहामुनिः २२॥

कहिये 'द्वितीयपना, स्पष्टही है। और सर्व पूर्व श्रुतिके दशवेंमंत्र के भाष्य में कहे प्रमाण जानलेना २०॥

२१॥ हे सौम्य! "मकारभावेप्राज्ञस्यमानसामान्यमुत्कटम्" ६प्राज्ञके मकार भावबिषे मानकी समता श्रेष्ठहै? अर्थात् प्राज्ञके मकार मात्रारूप भाव (होने) बिषे मान (परिमाण वा माप) की तुल्यताही श्रेष्ठहै। अरु "मात्रासम्प्रतिपत्तौतुलयसामान्यमेवच" ६मात्राके निश्चयबिषे तो लयकी तुल्यताही श्रेष्ठहै २१॥ इसका बिशेषार्थ मूल श्रुतिके एकादशवें मन्त्रके भाष्यमें कहे प्रमाण जानना॥

२२॥ हे सौम्य! "त्रिषुधामसुयत्तुल्यंसामान्यंवेत्तिनिश्चितः" ६तीनधामोंबिषे जो तुल्यसमताकोनिश्चयको पायासता जो जानताहै? अर्थात्, उक्तप्रकारके 'जाग्रत्, स्वप्न, अरु सुषुप्तिरूप तीनों स्थानोंबिषे जो तुल्य समता कही है, तिसको 'यह समता इसप्रकारही है, इसमें संशय नहीं' इसप्रकार निश्चयको प्राप्तहुआ जो जानताहै सो "सम्पूज्यःसर्वभूतानांवन्द्यश्चैषमहामुनिः" ६सर्व भूतोंकरके सम्यक्प्रकार पूजनेयोग्य, बन्दनाकरनेयोग्य महामुनि होताहै? अर्थात् जो उक्तप्रकार अकारादि तीनमात्रा अरु विश्वादि तीनपाद, इनकी अभेदताको निश्चय पूर्वक यथार्थ जानता है, सो विद्वान् इस लोकमें सर्व प्राणियों करके पूजने (मान्यदेने) अरु बन्दना (नमस्कारादि) करनेयोग्य महामुनि (आत्मवेत्ता) होवैहै २२॥

२३॥ हे सौम्य! अब [पूर्वोक्तपाद अरु मात्राओंकी समताके ज्ञानवालेध्याननिष्ठके फलकोकहते हैं] "अकारोनयतेविश्वमुका-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अकारोनयतेविश्वमुकारश्चापितैजसम्। मकारश्चपुनःप्राज्ञंनामात्रेविद्यतेगतिः २३ ॥

रश्चापितैजसम् " ६ अकार विश्वको प्राप्त करताहै, अरु उकार तैजसको प्राप्त करताहै, अर्थात्, उक्तप्रकारकी तुल्यतासे आत्मा के (विश्वादि) पादोंकी, (अकारादि) पादोंके साथ एकताको करके (अर्थात् ॐकार के वाचकपने अरु लक्ष्य वाच्यकी एकता को निश्चय करके) पुनः उक्तप्रकारके ॐकार को सम्यक्प्रकार जानके जो ध्यावता (ध्यानकरता) है तिसको, अकार जो है सो विश्वके अर्थ प्राप्तकरताहै । अर्थात् अकाररूप आलम्बन (प्रधानता) वाले ॐकार को जाननेवाला पुरुष वैश्वानरके भावको प्राप्त होताहै । अरु तैसेही उकार भी तैजसके अर्थ प्राप्त करता है । अर्थात् उकाररूप आलम्बन (प्रधानता) वाले ॐकारका जाननेवाला विद्वान् हिरण्यगर्भके पदको प्राप्त होताहै । अरु "मकारश्चपुनःप्राज्ञंनामात्रेविद्यतेगतिः " ६ पुनः मकार प्राज्ञके अर्थ प्राप्त करता है, अमात्रबिषे गति विद्यमान नहीं ; अर्थात् उकार की गतिके पश्चात् मकाररूप मात्राके आलम्बन (प्रधानता) वाले ॐकार का जाननेवाला विद्वान् अव्याकृत भावको प्राप्त होताहै । अरु [अब यहां तो पादोंका अरु मात्राओं का विभाग है नहीं । अरु तिस ॐकाररूप तुरीय आत्मा बिषे स्थितहुये पुरुषको, प्राप्त होनेवाला, अरु प्राप्त होनें योग्य, अरु प्राप्ति इस तीनोंरूप त्रिपुटीका विभाग है नहीं । इसप्रकार कहते हैं । यहां यह अर्थ है कि 'स्थूलप्रपंचजाग्रदवस्था, अरु विश्व अभिमानी यह तीन अकारमात्रा रूप हैं । अरु सूक्ष्मप्रपंच, स्वप्नावस्था, तैजस अभिमानी, यह तीन उकार मात्रारूपहैं । अरु स्थूल सूक्ष्म उभय प्रपंचों का कारण, सुषुप्ति अवस्था, प्राज्ञ अभिमानी, यह तीन मकार मात्रारूप हैं । अरु तिनमात्राओं में पूर्व पूर्व मात्रा उत्तर उत्तर मात्राके भावको प्राप्त होती हैं । अर्थात् स्थूल अकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपनिषद् ॥

अमात्रश्चतुर्थोऽव्यवहार्य्यःप्रपंचोपशमः शिवोऽद्वै त एवमोंकार आत्मैव संविशत्यात्मनाऽऽत्मानं य एवं वेदयएवंवेद १२ ॥

इतिमांडूक्योपनिषन्मूलमन्त्राःसमाप्तिङ्गताः ॥

ॐ तत्सत् ॥

मात्रा सूक्ष्म मकार मात्राके भावको, क्योंकि स्थूलका कारण सूक्ष्म है। अरु सूक्ष्म उकारमात्रा सर्वके कारण मकार मात्राके भावको, क्योंकि स्थूल सूक्ष्म सर्वकार्योंको अपने कारण भावकी प्राप्ति होती है, इसप्रकार पूर्व पूर्वमात्रा उत्तरोत्तर मात्राके भावको प्राप्त होतीहैं। सो इसप्रकार सर्व ॐकार मात्रहै, इस रीतिसे ॐकारका ध्यान करके स्थितहुये, अरु जो एतावन्त काल पर्यन्त ॐकार रूपसे ज्ञातकरी बस्तु, शुद्ध ब्रह्मही है। इसप्रकार आचार्य्यके उपदेश से उत्पन्न हुये ज्ञान करके मकारपनेसे ग्रहण किये, जोपूर्वोक्त सर्व विभागोंका निमित्त अज्ञान तिसके क्षय होनेसे शुद्धब्रह्म बिषे स्थितहुये पुरुषकी कहीं भी गति कहिये गमन सम्भवे नहीं, क्योंकि देशकालादिकों के परिच्छेद के अभाव से व्यापकता प्राप्त होनेसे] मकारके क्षयहुये बीजभावके अभाव से अमात्ररूप ॐकार बिषे। प्राप्तहुये को। कहीं भी गति। लोकान्तर को गमन। नहीं ॥ क्योंकि "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति" ब्रह्मका जाननेवाला 'व्यापक' ब्रह्मही होताहै २३ ॥

अथ उपनिषदर्थ ॥

१२ ॥ हेसौम्य ![ॐ कारका स्फुरणरूप जो प्रत्यक् चैतन्य है। अर्थात् ॐकारके स्फुरणसेलक्षित लक्ष्यरूप प्रत्यक् चैतन्य है। सो तिनमात्रावाले अध्यस्त (कल्पित) ॐकारके साथ तादात्म्यतासे ॐकार। नामसे कहाजाताहै। तिसकी "अमात्रः" ८ अमात्रहै ? इत्यादिरूप यह बारहवीं संख्यावाली श्रुतिके मन्त्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके परब्रह्मके साथ एकता, कहनेको इच्छितहै, तिसको प्रकट करके व्याख्यान करते हैं] "अमात्रश्चतुर्थोऽव्यवहार्य्यःप्रपंचोपशमः शिवोऽद्वैत एवमोंकार आत्मैव" । अमात्र है, चतुर्थ है अव्यवहारहै, प्रपंचके उपशमवाला है, शिवहै, अद्वैतहै, ऐसे, ॐकार आत्माही है, । अर्थात् नहीं है मात्रा जिसकी ऐसा जो । लक्षण रूप । ॐकार सो अमात्र है, अरु चतुर्थ कहिये तुरीय रूपहुआ केवल आत्माही है, अरु वाचक अरु वाच्यरूप जो वाणी अरु मन तिनको 'मूलाज्ञानके क्षयहुये, क्षीणहोनेसे व्यवहार करने को अयोग्यहुआ । आत्मा अव्यवहार्य है । अरु प्रपंचके उपशम वाला होनेसे । अर्थात् सकारण प्रपंचके उपशमहुये आत्मा पूर्ण भानहोता है तातें प्रपंचके उपशमवाला है, वा अद्वैत आत्माके सम्यक् ज्ञानहोने से प्रपंच उपशम भावको प्राप्त होताहै तातें प्रपंचके उपशमवालाहै । उसको प्रपंचोपशम, इस बिशेषणसे कहते हैं । अरु शिव (कल्याणस्वरूपहै) अरु अद्वैतहै । अर्थात् जिस एक संख्याकी प्रतियोगी दो संख्याहैं अरु जो दो संख्याकी प्रतियोगी एक संख्याहै तिनसे रहित, अर्थात् एक अरु दो, यह जो संख्याहै सो सापेक्षिक अरु सम बिषम भाववालीहै, अरु आत्मा है सो सापेक्षता अरु समविषम भावसे रहित होनेसे सर्व संख्यातीत अद्वैत है, वा संख्याबद्ध परिच्छिन्नतासे रहित होने करके सर्व संख्यातीत अद्वैत है। ऐसे उक्तप्रकारके । ॐकारके लक्ष्य आत्माके । ज्ञातापुरुषकरके उच्चारण कियाहुआ ॐकार वाचक वाच्यकी अभेदता सें। तीनमात्रावाला अरु तीनपादवाला । एक आत्माही है । हे सौम्य! यहां एक यहभी विचार है कि जैसेरज्जु बिषे अध्यस्त जे सर्पवत् सर्परूप अरु तिसका नामसर्प, यह दोनों नाम नामीकी रज्जुकेअज्ञानमें एकताहै, अर्थात् उसअध्यस्त सर्पका नामरूप दोनों रज्जुके अज्ञानसे कल्पित होने करके उस अज्ञानमें दोनोंकी एकताहै । अरु रज्जुके ज्ञानहुये उनदोनों को कल्पित होनेसे उनकी असत्यतामें एकता है । अरु रज्जुके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानहुये उस कल्पितसर्पके नामरूपका परिणाम सत्य रज्जुरूप है, क्योंकि उसकी रज्जुसे पृथक् सत्ता का अभावहै ताते। अरु जो जिसकी अन्तः स्थितिहै सोई उसकी आद्यस्थिति है, अरु जो आद्यन्तः स्थितिहै सोई उसकीवर्त्तमान स्थिति है। तथाच "आदावन्तेचअन्नास्ति वर्त्तमानेपि तंतथा" "अव्यक्तादीनि भूतानि" इत्यादि प्रमाणसे। अर्थात् रज्जु बिषे भासमान जो सर्प सो भ्रान्तिकालसे पूर्व द्वैतके अभावसे रज्जुरूप है अरु भ्रान्ति के निवृत्तकाल में भी वो अपनी पृथक् सत्ताके अभावसे रज्जु रूपहै अरु भ्रान्तिकाल में जो अपने नामरूपसहित जो इतरवत् भासताहै सोई भ्रान्तिहै नतु'सर्प, दंड,जलधारा, भूदरार,इत्यादि नामरूप से एक रज्जुही सुशोभितहै, अरु तिस बिषेजो सर्पादिकों का कथन व्यापार है सो "वाचारम्भणं विकारो नामधेयं" इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे वाचारंभणमात्रहीहै। हेसौम्य!इस दृष्टांत के विचारप्रमाणही दृष्टान्त भूत अमात्रिक निर्विशेष तुरीय रूप आत्माबिषेभी विश्वादि तीनोंपाद अरु अकारादि तीनोंमात्राका विचारजानना। अरु "संविशत्यात्मनाऽऽत्मानंयएवंवेद यएवंवेद"। ८ जोऐसे जानताहैसो अपने आत्मरूपसे अपनेपरमार्थरूप आत्मा बिषेसम्यक्प्रकार प्रवेशकरताहै, यहां जो।'यएवंवेद, दोबार कहाहै सो उपनिषद्की परिसमाप्तिके अर्थहै;अर्थात् जोउक्तप्रकार।अमात्रिक चतुर्थ तुरीय आत्माको। जानता है सो अपनेही आत्मा।चिदाभासरूप। से अपनेपरमार्थरूप। प्रत्यक् चैतन्यसाक्षी। आत्माबिषे सम्यक्प्रकार प्रवेशको पावताहै। अर्थात् सुषुप्ति नामवाले तृतीयस्थानरूप बीजभावको। जोक्रमशःवाविनाही क्रमशःजाग्रत् स्वप्नस्थानद्वयरूप अंकुरोत्पत्तिकाकारण स्थानरूपबीजको, चतुर्थ अमात्रिक तुरीय आत्माके। सम्यक् ज्ञानरूप अग्निसे दग्ध करके परमार्थदर्शी आत्मवेत्ताओं के आत्माबिषे प्रवेशको पाय पुनः जन्मको पावता नहीं। अर्थात् जैसे अंकुरद्वयके उत्पत्तिके स्थान रूप कारण बीजके दग्धहुये बीजान्तर जो एक महासूक्ष्म सत्ताहै

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो अंकुर भावपूर्वक वृक्षभावको प्राप्त होती नहीं, तैसेही स्थू
सूक्ष्म शरीर द्वयरूप अंकुर के उत्पत्तिका कारण स्थान अविद्या
त्मक सुषुप्तिरूप बीजके, सम्यक् ज्ञानाग्नि करके दग्धहुये 'बी
जान्तर सूक्ष्म सत्तावत्, सुषुप्तिरूप बीजान्तरतद्विशिष्ट जो चिदा
भास जीवसत्ता है सो उक्त अग्निद्वारा उक्तबीजके सम्यक्प्रका
दग्धहुये पुनः स्थूल सूक्ष्म शरीरद्वयात्मक अंकुरभाव पूर्वक स
साररूप वृक्षभावको प्राप्त होता नहीं। क्योंकि तुरीयाको। मूला
ज्ञानके दग्धहुये। अबीजरूपता होती है ताते। जैसे रज्जु अ
सर्पके विवेकके हुये रज्जुबिषे प्रवेशको पाया जो सर्प, सो पुन
तिन। रज्जुसर्प। के विवेकी पुरुषको भ्रान्ति ज्ञानके संस्कार
पूर्ववत्। उदय। होता नहीं। क्योंकि उसविवेकी पुरुषको 'भ्रा
न्तिज्ञानका कारण अज्ञानरूपबीज। जोकि सर्परूप अंकुर आ
तज्जनित भयादिरूप वृक्षोत्पत्तिका निमित्त है, सम्यक् विवे
रूप अग्निसे दग्धहोता है ताते। तैसे यहां भी जानना। आ
साधक भावको प्राप्तहुये, सत्मार्ग में वर्तनेवाले, अरु मात्रा आ
पादोंकी सम्यक्प्रकार निश्चित एकताके जाननेवाले, ऐसे जे
मन्दमध्यम बुद्धिवाले संन्यासी हैं, तिनको तो। उक्तप्रकार मा
त्रा अरु पादों की अभेदतासे। यथार्थ उपासना किया ॐका
"एतदालम्बनंश्रेष्ठमेतदालम्बनम्परम् , एतदालम्बनंज्ञात्वा
ब्रह्मलोको महीयते" इत्यादि श्रुतियों के प्रमाणसे। ब्रह्मकी
प्राप्ति (क्रममुक्ति) के अर्थ। अर्थात् केवल प्रणवोपासना का
मध्यमाधिकारी संन्यासीको उक्तप्रकार यथार्थ त्रिमात्रिक प्रणव
की उपासना से ब्रह्मलोककी प्राप्तिरूप आवान्तर फलहोय वहां
ब्रह्माद्वारा अमात्रिक तुरीय आत्माका सम्यग्ज्ञान होनेसे कैवल्य
मोक्षकी प्राप्ति है। परम आलम्बन है। तैसे अग्रिम कहेंगे "आ
श्रमास्त्रिविधा हीना इत्यादि" १२ ॥

इतिश्रीमांडूक्योपनिषन्मूलमन्त्रभाषाभाष्यंसमाप्तम् ॥

ॐतत्सद्धरिःॐ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गौडपादीयश्लोकाः ॥

ॐकारंपादशोविद्यात्पादामात्रानसंशयः । ॐकारंपादशोज्ञात्वानकिंञ्चिदपिचिन्तयेत् २४॥

युञ्जीतप्रणवेचेतःप्रणवोब्रह्मनिर्भयम् । प्रणवेनित्ययुक्तस्यनभयंविद्यतेक्वचित् २५॥

२४॥हेसौम्य! "पूर्ववदत्रैतेश्लोकाभवन्ति" पूर्ववत्यहांये गौडपादाचार्यकृत श्लोक होतेहैं? [जैसे पूर्व गौडपादाचार्यने श्रुत्यर्थके प्रकाशक श्लोक रचेहैं, तैसे पश्चात् भी उक्त आचार्यकृत श्लोक श्रुत्यर्थ बिषे संभवे हैं, यह कहते हैं] "ओंकारंपादशोविद्यात्पादामात्रानसंशयः" पादही मात्रा हैं, अरु मात्राही पाद हैं, यामें संशय नहीं, ॐकारको पादोंसे जानना; अर्थात् उक्त प्रकारकी तुल्यतासे विश्वादि पादही मात्राहैं, अरु अकारादि मात्राही पादहैं, इस विषय में कुछ भी संशय नहीं, अरु ॐकार (आत्मा) पादों करकेही जानना। अरु "ॐकारं पादशो ज्ञात्वानकिञ्चिदापिचिन्तयेत्" ॐकारको जानके कुछ भी चिन्तन करना नहीं; अर्थात् ॐकार (तुरीय) को पादोंसे (विश्वादि पादोंकी विशेषतासे) जानके (निर्विशेष आत्माको अनुभव करके) दृष्ट अर्थरूप (इसलोकके विषय) अरु अदृष्ट अर्थरूप (परलोकके विषय) प्रयोजन को चिन्तन करना नहीं क्योंकि सर्वरूपसे एक ॐकार आत्माही है इसप्रकार का जाननेवाला कृतार्थ, (ज्ञातज्ञेय) होताहै ताते २४॥

गौडपादीय कारिका ॥

२५॥ हे सौम्य! [ॐकारकेध्यानबिषेकुशलपुरुषको सर्वद्वैतके अपवाद करनेवाले ॐकारके सम्यक् ज्ञानसेही कृतार्थता होती है, इसप्रकार कहा। अब तिस ॐकारके ज्ञानसे रहित अरु परके उपदेशमात्रको आश्रय करनेवाले पुरुषके अर्थ ध्यानकी कर्तव्यता कहते हैं] "युञ्जीतप्रणवेचेतःप्रणवोब्रह्मनिर्भयम्" ॐ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रणवोह्यपरंब्रह्मप्रणवश्चपरःस्मृतः । अपूर्व्वोऽनन्तरोबाह्योनपरःप्रणवोऽव्ययः २६ ॥

सर्वस्यप्रणवोह्यादिर्मध्यमान्तस्तथैवच । एवंहिप्रणवंज्ञात्वाव्यश्नुतेतदनन्तरम् २७ ॥

कार निर्भयरूप ब्रह्म है, ॐकारबिषे चित्तको लगावना ६ अर्थात् जिसकरके ॐकार निर्भयरूप ब्रह्महै, तिसकरके व्याख्यान किं परमार्थरूप ॐकारबिषे चित्तको लगावना । अरु " प्रणवेनित्ययुक्तस्यनभयंविद्यतेकचित् " ६ प्रणवबिषे नित्य युक्तको भय कहीं भी नहीं ; अर्थात् जो ॐकार बिषे नित्ययुक्त पुरुषको । अर्थात् ॐकारका सर्वदा विधिसे उच्चारणरूप जपके, वा पद अरुमाकी एकताके विचारके, वा अन्तर अनहद ध्वनिके साधन, का वाले पुरुषको भय कहीं भी नहीं । क्योंकि " विद्वान्नबिभेतितश्चनेतिश्रुतेः " विद्वान् (प्रणवके लक्ष्यतुरीय आत्माका। थार्थ अनुभवी) किसीसे भी भयको पावता नहीं, यह श्रुति प्रमाण है २५ ॥

२६ ॥ हे सौम्य ![ॐकारजोहै सो परब्रह्म अरु अपर ब्रह्मरूप क्रमकरिके मध्यम अरु मन्द अधिकारियों के ध्यानकी योग्यता को प्राप्त होताहै; ऐसे श्लोकके पूर्वार्द्ध का व्याख्यान करते हैं]" प्रणवोह्यपरंब्रह्मप्रणवश्चपरः स्मृतः " ६ ॐकारही अपरब्रह्म । ॐकार परब्रह्म कहाहै; [उत्तमाधिकारी को तो सर्व भेदसे रहि एकरस प्रत्यगात्मरूप जो ब्रह्महै, तिसरूप करके ॐकार सम्यग्ज्ञानद्वारा पावने के योग्य होता है, इसप्रकार श्लोकके उत्तरार्द्ध का विभाग करते हैं] अरु " अपूर्व्वोऽनन्तरोबाह्योनपरःप्रणवोऽव्ययः " ॐकार अपूर्व है, अनन्तर है, अबाह्यहै, अनपर । अव्यय है ; अर्थात् ॐकारही परमात्मा ब्रह्म है, अतएव इस कारण कोई भी न होनेसे यह अपूर्व है । अरु इसको भिन्न तिवाला कुछ भी अन्तर नहीं । सर्वाधिष्ठान होनेसे । ताते अ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न्तर है । अरु इससे बाह्य अन्य वस्तुनहीं अतएव अबाह्यहै । अरु इसको कार्यता नहीं ताते अन पर है । अरु इसका नाश नहीं ताते अव्यय है "सबाह्याभ्यन्तरोह्यजः" "सैन्धवघनवदितिश्रुतेः" इत्यर्थः २६ ॥

२७॥ हे सौम्य! "सर्व्वस्यप्रणवोह्यादिर्मध्यमान्तस्तथैवच" "सर्वका आदिमध्य पुनः तैसेही अन्तओंकारहै; अर्थात् जैसे माया का । किसी शिल्पी आदि मायावी रचित । हस्ति, रज्जुकासर्प, मृग तृष्णाका जल, अरु स्वप्नके पदार्थादिकों का । जो केवल भ्रांतिमात्र अध्यस्तहैं । आदि मध्य अरु अन्त, मायावी रज्जु ऊषर आदिक अधिष्ठान है । अर्थात् जो वस्तु अध्यस्त (कल्पित) भ्रांतिमात्र होतीहै, तिसका 'आदि, अन्त, मध्य, अधिष्ठानरूपही होताहै । तैसेहीमिथ्या (भ्रांतिमात्र) उत्पन्न हुये आकाशादिक सर्व प्रपंचका 'आदि, मध्य, अरु तैसेही अंत, एक ओंकार । तुरीय आत्मा । ही है, । अर्थात् जैसे आकाश में जो नीलिमा की भ्रांति । कि आकाश से इतर नीलिमा कुछ वस्तु है, तिस भ्रांति काल के पूर्व वो नीलिमा आकाशरूप है, ताते उस कल्पित नीलिमा की आदि आकाश है, अरु आकाश अरु तिस विषे अध्यस्त नीलिमा तिनका जब यथार्थ विवेक होता है तब उस अध्यस्त नीलिमा का परिणाम आकाशरूप होनेसे उसनीलिमाका अन्त भी आकाशरूपहै, अरु जब वो नीलिमा अपने आदि अन्तमें आकाशरूप है तब अपनी पृथक् सत्ता के अभावसे अपने भ्रांतिरूप से वर्त्तमान कालमें भी आकाशरूप है ताते उसका मध्य भी आकाशरूप है, इसप्रकार आकाश में अध्यस्त नीलिमा तीनोंकाल अध्यस्तरूप है, तैसेही आकाशादि सर्व प्रपंच एक चैतन्य आत्मा विषे अध्यस्त होनेसे तीनोंकाल सोईरूप है । अरु "एवंहिप्रणवंज्ञात्वाव्यश्नुतेतदनन्तरम्" "ऐसेही ओंकारको जानके तिसके अनन्तर प्राप्तहोताहै; अर्थात् ऐसेही मायावी रज्जु आदिक स्थानी ओंकार (तुरीयआत्मा) को जानके तिसके अनन्तर (तिसही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रणवोहीश्वरंविद्यात्सर्वस्यहृदिसंस्थितम् । सर्व व्यापिनमोंकारंमत्वाधीरोनशोचति २८ ॥

क्षणसे) तिस परमार्थ वस्तु के आत्मभावको प्राप्त होताहै "ब्रह्म विद्ब्रह्मैवभवति" २७ ॥

२८ हे सौम्य ! "प्रणवंहीश्वरंविद्यात्सर्वस्यहृदिसंस्थितम्, सर्वव्यापिनं" ८सर्वकेहृदयविषे स्थितईश्वररूप ॐकारको सर्वव्यापी जानना; अर्थात् सर्व प्राणियों के समूह के स्मरणरूप वृत्ति के आश्रय हृदय बिषे स्थित ईश्वररूप ॐकारको 'आकाशवत् सर्वव्यापी जानना । अरु "ॐकारंमत्वाधीरोनशोचति" ८धीर पुरुष ॐकारको मानके शोचता नहीं; अर्थात् । सर्व प्राणियोंके हृदय बिषे आकाशवत् महासूक्ष्म चैतन्य सर्वव्यापी जो आत्मा तिसको । बुद्धिमान् पुरुष असंसारी । जाग्रदादि स्थान अरु तिनके धर्म्मादिकोंसे असंग अलिप्त, सदाशुद्ध बुद्धि मुक्त स्वभाव मानके शोच करता नहीं । क्योंकि उक्तप्रकारके आत्मा विषयक जो अज्ञान सोई अपने बिषे जन्ममरणादि क्लेशसे जन्यशोक का निमित्त तिसका आत्माके सम्यक् ज्ञान से अभाव होताहै तातें "तरतिशोकमात्मविदिति" ८आत्मवेत्ता शोककोतरता है> २८॥

२९ हे सौम्य ! [अबतुरीयभाव को प्राप्तहुये ॐकार को जो सम्यक्प्रकार जानताहै तिसकी प्रशंसाकरते हैं] "अमात्रोऽनन्तमात्रश्चद्वैतस्योपशमःशिवः" ८अमात्रहै, अनन्तमात्रहै, उपशमरूप है, शिवरूपहै,> अर्थात् । ॐकारकालक्ष्य । अमात्र(तुरीयपद, है, अरु जिसकरके ॐकारका परिमाण कियाजाय ऐसा जो परिच्छेद सो कहिये मात्रा । सो उक्त लक्षणवाली मात्रा हैं अनन्त जिस की ऐसा जो ॐकार सो अनन्तमात्र है । अर्थात् इस आत्माका एतनापना । यह आत्मा एतना है, इसप्रकारका एतनापना । परिच्छेद करनेको शक्य नहीं, अरु द्वैतका उपशमरूप है । अर्थात् सर्व द्वैतका उपशमआत्मरूप है । अरु ऐसा होनेसेही शिवरूपहै

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अमात्रोऽनन्तमात्रश्चद्वैतस्योपशमःशिवः । ओं का रोविदितोयेनसमुनिर्नेतरोजनः २९ ॥

इति मांडूक्योपनिषदर्थाविष्करणपरायांगौडपादीयकारिकायां प्रथममागमप्रकरणंपूर्णम्ॐतत्सद्धरिः ॐ ॥

इसप्रकार व्याख्यान किया "ओंकारोविदितोयेनसमुनिर्नेतरोजनः" (ओंकार जिसकरके विदित हुआहै सो मुनिहै इतर नहीं; अर्थात् ओंकार जिसको सम्यक्प्रकार ज्ञातहुआ है सोई परमार्थ तत्त्वका मनन करता मुनि है, इससे इतरजन मुनि नहीं २९ ॥

इति श्रीमांडूक्योपनिषद्मूलसहितगौडपादीयकारिकाप्रथमाऽऽगमप्रकरणभाषाभाष्यपूर्णम् ॐ तत्सद्धरिः ॐ ॥

अथ गौडपादाचार्य्यकृतकारिकायांवैतथ्याख्यद्वितीय प्रकरणंभाषाभाष्यं प्रारभ्यते ॥ २ ॥

१ हे सौम्य ! [प्रथम प्रकरणबिषे आगमकहिये श्रुति तिसकी मुख्यता करके अद्वैतको प्रतिपादन करनेवाले आचार्य ने तिस (अद्वैत) के विरोधी द्वैतका मिथ्यापना (श्रुतिके) अर्थ से कहा अब तिस (अद्वैतके विरोधी) द्वैतका मिथ्यापना 'यद्यपि सर्व में प्रधानजे श्रुति तिसके प्रमाणसे कहाहै, तथापि युक्तिकी मुख्यता से भी (द्वैतका मिथ्यापना) जानने को शक्य है । इसप्रकार देखावने के अर्थ (अर्थात् विचारवानों के मध्य प्रकट करणार्थ) द्वितीय प्रकरणको प्रकट करतेहुये, आदि बिषे प्रपंचके मिथ्यापने में स्वप्नके दृष्टान्तकी सिद्ध्यर्थ तिस स्वप्नके मिथ्यापनेबिषे (अर्थात् जिसवस्तुको दृष्टान्तप्रमाणसे, सत्यवा असत्य, सिद्ध करनी है, तहां प्रथम उस वस्तुके दृष्टान्तकी, सत्यता वा असत्यताका सिद्ध करना अवश्य है एतदर्थ सर्व प्रपंचके मिथ्यापने के सिद्ध करने में दृष्टान्तप्रमाण जो स्वप्न तिसकी असत्यता की सिद्ध-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐअथवैतथ्याख्यंद्वितीयंप्रकरणम् ॥

ॐवैतथ्यंसर्व्वभावानांस्वप्नआहुर्म्मनीषिणः । अन्तःस्थानात्तुभावानांसंवृतत्वेनहेतुना १ ॥

र्थ । युक्ति सहित वृद्धपुरुषोंकी संमतिको कहते हैं] " ज्ञाते द्वैतं न विद्यत " इस । वाक्यवाले । पच्चीसवें श्लोक बिषे " एकमेवाद्वितीयम् " । इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे, जो पूर्वद्वैतका मिथ्यापनाकहा, सो आगममात्र । अर्थात् श्रुतिकी प्रधान प्रामाण्यपसे व्याप्त । है, युक्तिसे सिद्ध नहीं, परन्तु तिस शास्त्रकरके ज्ञात हुये अर्थ । द्वैतके मिथ्यापने । बिषे युक्तिकी प्राधान्यतासेभी द्वैतका मिथ्यापना जानने को योग्य है । क्योंकि प्रमाणों की आधिक्यतासेनिश्चयहुई वस्तुबिषे संशयरहेनहीं ताते । द्वितीयप्रकरणका आरंभकरते हैं " । वैतथ्यंसंर्व्वभावानांस्वप्नआहुर्म्मनीषिणः " । ८ बुद्धिमान् स्वप्नवत् सर्व भावपदार्थों के असत्यपने को कहते हैं ? अर्थात् । प्रत्यक्षादि । प्रमाणोंके ज्ञातकरके कुशल जे । श्रोत्रित्व अरुब्रह्मनिष्ठत्व उन उभयलक्षणों करके युक्त । बुद्धिमान् पुरुषहैं सो । स्वप्न बिषे उपलभ्यमान (अनुभव किये जे बाह्य के घटादि सर्व पदार्थ, अरु अन्तर । अन्तःकरण के सुखादिक सर्व पदार्थोंके असत्यपने को कहते हैं । अरु तिनके असत्यपने बिषे हेतुको कहते हैं " । अन्तःस्थानात्तु भावानां संवृतत्वेन हेतुना " । ८ सर्व पदार्थोंको ' शरीरके, मध्यरूपस्थान वाले होने से ? अर्थात् जिसकरके स्वप्न बिषे हस्ति पर्वतादि सर्व पदार्थ । कि जिनका शरीरके भीतर समाना किसीप्रकार भी संभवे नहीं सो । शरीरके भीतरही प्रतीत होते हैं, । ' उस अवस्थामें, शरीरसेबाहर नहीं, एतदर्थ सो सर्व (स्वप्नकेपदार्थ) मिथ्या होनेकोही योग्य हैं । शंका । ननु, अन्तर्गृहादिकों के भीतर प्रतीयमान घटादिकों के हुये, यह उक्त हेतु व्यभिचारी होवेगा, । यह आशंकाकरके । समाधान । कहते हैं । शरीरान्तर संकुचित स्थानवाले होनेरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अदीर्घत्वाच्चकालस्यगत्वादेशान्नपश्यति । प्रतिबुद्धश्चयैसर्व्वस्तस्मिन्देशेनविद्यते २ ॥

हेतुसे । अरु जो देहान्तर आवृत नाड़ियांहैं तिनबिषे पर्वत हस्ति आदिकों का सद्भाव नहीं अरु जब देह बिषेही पर्वतादिक नहीं तब देहान्तर्गत जो "ता वाअस्यैताहितानाम नाड्यो यथाकेशः सहस्रधा भिन्नस्तावताऽणिम्नातिष्ठन्ति, इत्यादि" इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे 'खड़ेकेशके सहस्रवें भागप्रमाण अतिसूक्ष्म नाड़ियां । जोकि स्वप्नरूप भ्रान्ति दर्शनका स्थानहै । हैं तिनबिषे पर्वत हस्ति आदि कहांसे होवेंगे 'किन्तुकहींसेभी कदापिनहीं। अतएव स्वप्नके पदार्थ । अपने होनेयोग्य । देश (स्थान) से रहित होनेसे । अर्थात् जिनमहा सूक्ष्मनाड़ियों में स्वप्न होताहै तिनमें बाह्यके परमाणुका भी प्रवेशबनेनहीं तब बाह्यके पर्वत सागर वहां कैसे समायँगे किन्तु कदापि नहीं, ताते वहां स्वप्नके पदार्थोंके होनेयोग्य स्थानके अभावसे । रज्जु सर्पादिकोंवत् असयही होनेको योग्यहैं १ ॥

२ हे सौम्य!। शंका। ननु, स्वप्नबिषे देखनेयोग्यपदार्थोंका शरीर भीतर आवृत कहिये संकुचित 'तंग, स्थानहै यह कथन असिद्धहै, क्योंकि पूर्वके देशोंमें सोयाहुआ पुरुष उत्तरके देशोंबिषे स्वप्नोंको देखेहुयेवत् देखता है । यह आशंका करके समाधान; कहतेहैं, । पूर्वादिकके देशमें सोयाहुआपुरुष । शरीरसेबाह्य । उत्तरादिकोंके । अन्यदेशोंमेंजायके स्वप्नोंको देखता नहीं, किन्तु शरीरके भीतरही । अर्थात् पूर्वदिशाके किसी एक देशबिषे सोया पुरुष जो उत्तरदिशाके किसी एकदेश विशेष सहित वहांके पदार्थों के स्वप्नबिषे देखताहै सो शरीरसे बाह्यके उपदेशमेंजायके स्वप्न नहीं देखता, किन्तु 'जैसे स्वप्नमें शरीरान्तर जिनवस्तुओं के ज्ञानके अभावसे भी 'समुद्र, पर्वत, हस्ति, आदिक पदार्थों को स्मृतिकरके वा जाग्रत्के अध्यास संस्कार करके देखताहै तैसेही स्वदेशको अरु पदार्थोंको देहान्तरही देखताहै । अरु जिसकरके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोयाहुआ पुरुष, तत्कालही देहके (जहां सोयाहै) देशसे
योजनके अन्तरायवाले अरु मासमात्रके कालकरके प्राप्तहो
योग्य देशोंबिषे स्वप्नोंको देखेहुयेवत् देखताहै । अरु उस देश
प्राप्ति अरु वहांसे पुनः आगमनके योग्य दीर्घकालहै नहीं । अर्थ
जिसकरके सोयाहुआ पुरुष जाग्रत्की निवृत्तिके तत्कालही स्व
को देखता है तहां जिसदेशमें सोयाहै तहांसे शतावधि योजनों
अन्तराय (दूर) वाले, अरु एकमासदिवसकी अवधिसेभी अधि
दिवसोंके कालसे प्राप्तहोनेवाले, देशोंको अरु वहां के पदार्थों
जाग्रत्मेंदेखेहुयेवत् देखता है । परन्तु उस स्वप्नमें जिस दूर
देशको देखताहै सो जहां सोयाहै तहांसे अतिदूरहै, अरु तिसदेश
प्राप्त अरु वहांसे आगमन । अर्थात् स्वप्नमें जिसदूरदेशको देख
है तहां जाने के अरु वहांसे स्वदेशमें आवने । योग्य जो आपेक्ष
दीर्घकाल सोहै नहीं, क्योंकि जाग्रत्की निवृत्तिके क्षणही स्वप्न
देखताहै अरु स्वप्नकी निवृत्तिकेक्षणही जिसदेशमें सोयाहै तिस
स्थानमें जाग्रत् होताहै, । एतदर्थ, " अदीर्घत्वाच्चकालस्य ग
देशान्न पश्यति " (कालकी अदीर्घतासे देशोंबिषे जायके देख
नहीं ; अर्थात् । बाह्यकेदूर देशको जाय अरु वहांसे पुनः स्व
में आवे एतना । दीर्घकाल न होनेसे स्वप्नको देखनेवाला पु
अपने सोवने से अन्य देशमें जायके स्वप्नको देखता नह
किम्बा " प्रतिबुद्धश्चवैसर्वस्तास्मिन्देशेनविद्यते " (जा
को प्राप्तहुये को निश्चय करके तिस देश में कुछ भी विद्यमा
नहीं ; अर्थात् स्वप्नका द्रष्टापुरुष । जिस देशको स्वप्नमें देख
है । तिस स्वप्न दर्शनके देश बिषे निश्चय करके प्रबोध (जाग्र
को पायाहुआ है नहीं । अर्थात् जो कदापि स्वप्नका द्रष्टापु
अन्यदेश बिषे जायके स्वप्नको देखता होय तो जिस देश
जायके स्वप्न देखे तिसही देश बिषे प्रबोध (जागरण)
प्राप्त हुआ चाहिये, परन्तु सो होता नहीं, । किन्तु जिस
बिषे सोवता है तहां ही जागता है । किम्बा रात्रि बिषे [श

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के अन्तरही स्वप्नका देखना होता है, इस प्रकार सिद्धहुये । दूरदेश के गमनागमन । योग्य काल के अभाव से स्वप्न का मिथ्यापना है, इस प्रकार कथन किये अर्थका वर्णन करते हैं, यहां यह अर्थहै कि, यद्यपि । वो स्वप्नका द्रष्टापुरुष । रात्रिबिषे सोवता है, तथापि दिवस में । सूर्यादि पदार्थ कि जिनका रात्रि में सर्वथा असंभव है । देखे हुयेवत् देखता है। अरु सोयाहुआ चक्षुरादि इन्द्रियों के संकोच हुये भी रूपादि विषयों को देखता है, अरु सोयाहुआ भी विचरता है । अर्थात् जाग्रत्की ज्ञानेन्द्रिय अरु कर्मेंद्रियों के उपराम हुये भी स्वप्न में उभय इन्द्रियों के व्यापारको करता है । अरु यद्यपि वो पुरुष सहकारियोंसे रहित 'अकेला, सोवता है, तथापि बहुत से । सहचारियों के साथ मिलाहुआ स्वप्न में स्वप्नके पदार्थों को देखता है। एतदर्थ । देशान्तरके गमनागमन । योग्य । दीर्घ । कालके, अरु । उभय । इंद्रियोंके, अरु सहकारियोंके । जो दर्शनादिकोंकी मुख्य सामग्रीहै। अभाव हुये भी । जो दूर देशादिरूप पदार्थों को देखता सुनता लेता देता आवताजाता आदिक व्यापार होता भासता है, ताते इस अनुमान लक्षणसे भी । स्वप्नका मिथ्यापना सिद्ध है] सोयाहुआ पुरुष दिवसवत् । सूर्य्यादि । पदार्थों को देखता है, अरु बहुतों के साथ मिलता है। अरु । जो कदापि शरीर से बाह्य निकलके स्वप्न में किसी से मिलताहोय तो । जिनसे मिलता है तिन्होंकरके जाग्रत् कालबिषे पहिचाना चाहिये, परन्तु उसकरके पहिचाना जातानहीं । क्योंकि जो सोयाहुआ पुरुष शरीरके बाह्यदेशमें स्वप्नबिषे मिलाहोय तो । 'आज मैंने तुझको अमुक स्थानबिषे देखाथा, इस प्रकार तिसपुरुष ने । कि जिसके साथ स्वप्नका द्रष्टा स्वप्नमें मिला है । कहना चाहिये, परन्तु इस प्रकार कोई किसीसे कहता नहीं। अतएव स्वप्नबिषे अन्यदेशको जातानहीं॥ हे सौम्य! यहपुरुष स्वप्नबिषे जिनपदार्थोंको देखता है सो चिरकाल तैसाही न रहके अति शीघ्र अन्यभावको प्राप्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभावश्चरथादीनांश्रूयतेन्यायपूर्वकम् । वैतथ्यं
नवैप्राप्तंस्वप्नआहुःप्रकाशितम् ३ ॥

हुआ देखताहै । अर्थात् प्रथम मनुष्यको देखताहै, देखतेही देख
तिसही क्षणमें उसही को वृक्षादिरूपसे देखने लगता है, अ
मथुरादि देशोंको देखता २ उसही क्षणमें उसको काशी आदि
देशोंको देखताहै वा मिश्रित वा विपरीत देशकाल ग्रामादि
को देखताहै, तैसा बाह्यका देशादिक अति अल्पकालमें अन्य
भावको पावते नहीं, मनुष्य वृक्षाकार होते नहीं । इत्यादि
स्वप्नके अरु बाह्यके देशकाल वस्तु आदिकों में व्यभिचार त
रतम्यताके देखने से भी, अरु चिरकालके मृतकहुओं को
स्वप्नमें देखनेसे 'कि जिनका उस स्वप्नकालमें बाह्यहोना सर्व
असंभव है, यह स्पष्ट सिद्धहै कि स्वप्नकाद्रष्टा शरीर के बाह्य
देशोंमें जायके स्वप्न देखता नहीं २ ॥

३ ॥ हे सौम्य ! इस अग्रिम कहनेके हेतुसेभी स्वप्नबिषे देख
योग्य पदार्थ सर्व मिथ्या है । क्योंकि " अभावश्चरथादीनांश्रूय
न्यायपूर्वकम् " ' रथादिकोंका अभावन्यायपूर्वक सुनते हैं ' अर्थात्
जिसकरके स्वप्नबिषे देखने योग्य (देखेहुये) जे रथादिक तिनक
अभाव " नतत्ररथानरथयोगानपंथानोभवति, इत्यादि श्रुतिः
' तहां रथनहीं, रथमें योजना करने योग्य अश्वचक्रादि नहीं, अ
रथके मार्गभी नहीं होते ' इत्यादिक श्रुति करके न्याय (युक्ति
पूर्वक श्रवण करते हैं । अतएव " वैतथ्यंतेनवैप्राप्तंस्वप्नआहु
प्रकाशितम् " ' तिससे स्वप्न बिषे प्राप्तहुआही मिथ्यापन
प्रकाशित किया कहते हैं ' अर्थात् तिस ' स्वप्नद्रष्टा के
शरीर के मध्य ' महासूक्ष्म ' नाड़ीरूप स्थान बिषे संकोचक
प्राप्तहोने (स्थानके अभाव) आदिक हेतु से स्वप्न बिषे प्राप्त
हुआही जो मिथ्यापना, तिसको अनुवाद करने वाली अ
स्वप्नबिषे आत्माके स्वयंज्योतिपनेके प्रतिपादनबिषे तत्पर जो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तस्थानात्तुभेदानांतस्माज्जागरितेस्मृतम्। यथा तत्रतथास्वप्नेसंवृतत्वेनभिद्यते ४॥

यह बृहदारण्यक उपनिषद् सम्बन्धी श्रुतिहै, तिसने प्रकाशित कियाहै, इसप्रकार ब्रह्मवेत्ता कहते हैं ३॥

४ हे सौम्य! [उक्त रीतिसे स्वप्नरूप दृष्टान्तके। असत्पनेके। सिद्धहुये, फलित अर्थरूप अनुवादको कहतेहैं] "। अन्तस्थानात्तु भेदानां तस्माज्जागरितेस्मृतम्। यथातत्रतथास्वप्ने संवृतत्वेन भिद्यते"। ९ जैसे तहां स्वप्नमें है, तैसे। जाग्रत् बिषे भीहै। ताते जाग्रत्बिषे जान्या है, भेदको प्राप्तहुये को संकोच को प्राप्तहोने करके भेदको पावताहै; अर्थात् जैसे तिस स्वप्नबिषेहै, तैसेही तिस जाग्रत्बिषे भीहै, तस्मात् जाग्रत्बिषे भी तैसेही जान्याहै। परन्तु स्वप्न बिषे जाग्रत्के पदार्थोंसे भेदको प्राप्तहुये पदार्थोंको शरीरके मध्य। सूक्ष्मनाड़ी। रूप स्थानवाले होनेसे जाग्रत्से स्वप्न भेदको पावताहै॥ इसका यह अभिप्राय है कि जाग्रत्बिषे दृश्य पदार्थोंको। यावत् इन्द्रियादिकोंका विषयहै तिनसर्वको। मिथ्यापनाहै, यह तो प्रतिज्ञाहै, क्योंकि दृश्य। इन्द्रियादिकों का विषय। है ताते। यहहेतुहै। अरु, स्वप्नबिषे सर्व दृश्य पदार्थोंवत्, यह दृष्टान्तहै अरु जैसे तिस। स्वयोग्य स्थानके अभाव वाले। स्वप्नबिषे। देखेहुये वा देखने योग्य। दृश्य पदार्थोंका मिथ्यापनाहै, तैसे जाग्रत्बिषे दृश्यपना। दृश्यपदार्थोंको मिथ्यापना। समानहीहै, यह हेतुका उपनयहै। एतदर्थ जाग्रत्बिषे भी मिथ्यापना जान्याहै यह निगमन है। अरु शरीरके मध्य (सूक्ष्मनाड़ी) रूप स्थानवाले होनेसेअरु संकोचको प्राप्तहोनेकरके स्वप्नबिषे दृश्य पदार्थोंका जाग्रत्के दृश्य पदार्थोंसे भेद भासता है। अरु। वास्तवकरके। दृश्यपना अरु मिथ्यापना जाग्रत् अरु स्वप्नबिषे तुल्यही॥। अर्थात् जैसे स्वप्नका दृश्य अपने योग्य स्थान के अभावसे सत्य न होयके केवल भ्रान्तिमात्रही है, तैसेही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्नजागरितेस्थानेह्येकमाहुर्मनीषिणः । भेदानां
समत्वेनप्रसिद्धेनैवहेतुना ५ ॥

जाग्रत्का सर्व दृश्य अपने योग्य स्थानके अत्यन्त अभावसे के
वल भ्रान्तिमात्रहीहै । क्योंकि एक अद्वैत निराकार परिपूर्ण नि
ज्ञानघन चैतन्यके शिलवत् सर्वत्र सघन अस्तित्वमें तिससे पृथ
रीति स्थानका अभाव है, अतएव जाग्रत् अरु स्वप्न, इन उभ
स्थानकास्थूल सूक्ष्म यावत् इन्द्रियादिकोंका विषय दृश्य प्रपंच
सो स्वयोग्य स्थानके अत्यन्तअभावरूप हेतुसे केवल भ्रान्ति
मात्रही है । ऐसा ब्रह्मवेत्तोंका निश्चितार्थ है इति सिद्धम् ४ ॥

५ हे सौम्य! "स्वप्नजागरितेस्थाने ह्येकमाहुर्मनीषिणः । भेदा
नांहिसमत्वेनप्रसिद्धेनैवहेतुना " ६ भेदोंको प्राप्तहुये को प्रसिद्ध
हेतुसे समानता करकेही मननशील स्वप्न अरु जाग्रत् इन उभय
स्थानोंको एकसेही कहतेहैं ; अर्थात् । परस्पर उक्तप्रकार । भेद
को प्राप्तहुये जे जाग्रत् अरु स्वप्नके पदार्थ तिनको ग्राह्य अ
ग्राहक होनेसे दृश्यतारूप प्रसिद्ध हेतुकरके समानता होनेसे
मनीषी । मननशील विवेकी । जनहैं सो, स्वप्न अरु जाग्रत् इन
दोनों स्थानों के एक (तुल्य) ही कहतेहैं । यहां [जाग्रत् अ
स्वप्नविषे वर्त्तमान परस्पर भेदवाले पदार्थोंका ग्राह्यपना औ
ग्राहकपना समानहै । अरु तिस । दृश्यरूप । हेतुसे तिनका मि
थ्यात्वकरके समभाव प्रसिद्धहीहै । अरु तिसप्रसिद्धसमभावरूप
हेतुकरके विवेकी पुरुषोंको जाग्रत् अरु स्वप्नरूप दोनों स्थानोंकी
एकता वांछितहै । इसप्रकार जो पूर्व अनुमान नाम प्रमाण सिद्ध
किया, तिसही का 'उभयस्थानोंकी एकतारूप, फल इसश्लोक
करके कहाहै । इसप्रकार श्लोककी योजनासे देखावते हैं] यह
पूर्व सिद्ध प्रमाणका ही फल कहा ५ ॥

६ हे सौम्य! भेदको प्राप्त परस्परमें विलक्षण हुये जाग्रत्विषे जे
दृश्यपदार्थ तिनका आदि अरु अन्तविषे अभाव होनेसे अर्थात् या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आदावन्तेचयन्नास्तिवर्त्तमानेपितत्तथा । वितथैः सदृशाःसन्तोऽवितथाइवलक्षिताः ६ ॥

वत् उत्पत्तिमान् पदार्थहैं सोसर्व अपनी उत्पत्तिसे पूर्व अभावरूपहैं, अरु उत्पत्तिमान् पदार्थको अन्तवालाहोनेके निश्चयसे,सो उत्पत्तिमान् वस्तु अपने अन्तके पश्चात् भी अभावरूपहै। इस कहनेके हेतु सेभी तिनका मिथ्यापनाहै " आदावन्तेचयन्नास्ति वर्त्तमानेपितत्तथा " (जो आदिबिषे अरु अन्तबिषे नहीं है सो वर्त्तमानमें भी तैसाहीहै; अर्थात् जो मृगतृष्णादि वस्तु आदि बिषे अरु अन्त बिषे नहींहै, सो अपने वर्त्तमान कालबिषेभी है नहीं, यह लोकबिषे निश्चितहै । अरु " वितथैःसदृशाःसन्तोऽवितथा इवलक्षिताः " (मिथ्यासे सदृशहुयेसन्तेभी अमिथ्या (सत्य) वत् जानतेहैं; अर्थात् तैसेही यह भेदको प्राप्तहुये जाग्रत् के दृश्यपदार्थ अपने आदि अन्तबिषे अभाव रूपहोनेसे मृगतृष्णा आदिक मिथ्या पदार्थोंसे तुल्यहुये (तुल्य होनेसे) सन्ते मिथ्याही है । तथापि वो अनात्मज्ञानी मूढ़ पुरुषोंकरके सत्यवत् जाने जातेहैं ६ ॥

७ हे सौम्य ! (उक्तार्थपर वादी शंका करताहै) । ननु, स्वप्नके दृश्य पदार्थोंवत् जाग्रत्के दृश्य पदार्थोंकोभी असत्पना कहा सो अयुक्तहै । अरु जाग्रत्के दृश्य जे अन्न पान अरु वाहनादिकहैं, सोक्षुधा तृषा आदिकोंकी निवृत्तिको अरु गमनागमन आदिरूप कार्य (व्यवहार) को करतेहुये प्रयोजन सहित उनको देखते हैं, अरु स्वप्नके दृश्य पदार्थोंको वो प्रयोजन सहितपनाहै नहीं । ताते स्वप्नके दृश्यपदार्थोंवत् जाग्रत्के दृश्यपदार्थोंका असत्पना मनोरथ (कल्पना) मात्रहै (इसप्रकारका जो वादीका कथन सो बने नहीं, क्योंकि " सप्रयोजनतातेषां स्वप्नेविप्रतिपद्यते " (तिनकी सप्रयोजनता स्वप्नबिषे विरोधको प्राप्तहोतीहै ; अर्थात् जिसकरके जाग्रत्बिषे उन अन्नपानादिकोंकी जो प्रयोजन सहितताको देखतेहैं सो स्वप्नबिषे विरोधको प्राप्तहोतीहै । जैसे स्वप्नबिषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सप्रयोजनतातेषांस्वप्नेविप्रतिपद्यते । तस्मादाद्य
तत्त्वेनमिथ्यैवखलुतेस्मृताः ७ ॥

अन्नादिक भोजन अरु जलादिक पानकरके आतृप्त हुआ पु
भी जब उत्थान (जाग्रत्) को पावताहै तब अपने को क्षुध
तृषाकरके युक्त अतृप्तही मानताहै । तैसेही जाग्रत्बिषेभी भोज
पानादि करके तृप्त,क्षुधा तृषारहित होयके सोयाहुआपुरुष,तत्क
लही स्वप्नमें क्षुधा तृषादिकरके अति पीड़ित दिनरात्रिबिषे जल
पान अरु भोजनसे रहित अपने को मानता है । अतएव जाग्रत्
दृश्यों का स्वप्नबिषेभी विरोध देखाहै ।अर्थात् जैसे स्वप्नमें भोज
पानादिकरके तृप्तहुआ पुरुष जब जागताहै तब अपनेको क्षुधातृ
करके युक्तहीदेखताहै ताते यहनिश्चय होताहै कि स्वप्नबिषे कि
खानपानादि सर्वदृश्य जाग्रतहुये असत्ही होताहै, तैसेही जाग्र
में सम्यक् प्रकार खान पानादिकरके आतृप्तहुआ पुरुष सोवत
है तब तत्कालही स्वप्नमें अपने को क्षुधातृषा करके पीड़ित देखत
है, तिसकरके यह निश्चयहुआ कि जाग्रत्के खानपान तृप्ति स्वप्न
वान्को असत्यही है । अरु जाग्रत् में जाग्रत् सत्य अरु स्वप्
असत्यहै अरु स्वप्नमें स्वप्नसत्य अरु जाग्रत् असत्य है, ताते इ
दोनों की सत्यता असत्यता सापेक्षिक अरु व्यभिचारी है ता
दोनोंही असत्य भ्रान्तिमात्र हैं ताते तिन जाग्रत् के दृश्यों का भ
असत्यपना स्वप्नके दृश्योंवत् शंकाकरने के योग्यनहीं।अर्थात् जै
स्वप्नके दृश्यों के असत्पने में शंका नहीं,तैसेही जाग्रत्के दृश्यों
भी असत्पने में शंका नहीं, अरु जिनको है तिनको भ्रान्ति है
ऐसा हम मानते हैं " तस्मादाद्यन्ततत्त्वेन मिथ्यैवखलुतेस्
ताः " ६ ताते आदि अन्तवाले होने से वे निश्चय करके मिथ्य
ही जानने ; अर्थात् तिसकरके आदि अरु अन्त करके युक्तपन
जाग्रत् अरु स्वप्न इन दोनों बिषे समानही है, । ताते ति
आदि अन्तवाले होने करके वे मननशील जाग्रत् के दृश्यों क

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपूर्व्वंस्थानिधर्मोहियथास्वर्गनिवासिनाम् । तानयं प्रेक्षतेगत्वायदैवेहसुशिक्षितः ८ ॥

निश्चय करके मिथ्याही जानते, मानते, कहते हैं ७ ॥

८ हे सौम्य! [पुनः वादी शंकाकरेहै] ननु स्वप्न अरु जाग्रत्के पदार्थोंको तुल्यहोनेसे जाग्रत्के पदार्थोंका जो असत्पना कहा, सो असंगतहै, क्योंकि दृष्टान्तको असिद्धताहै ताते। कैसे कि जाग्रत्बिषे देखेहुये ये पदार्थही स्वप्नबिषे देखतेहोवें ऐसा नहीं किन्तु स्वप्नबिषे अपूर्व पदार्थोंको देखताहै। क्योंकि जिसकरके स्वप्नबिषे चारदांतवाले हस्तिपर आरूढ़ अष्ट भुजावाला आपको [देखता] मानताहै, अरु अन्य तीननेत्रवान्पनादिक भी अपने बिषे देखता मानताहै। इत्यादि प्रकार अपूर्व (पूर्वनदेखे) को स्वप्नबिषे देखताहै, एतदर्थ स्वप्न अन्य असत्यके तुल्य नहीं, किन्तु उक्तरीत्या सत्यही है। याते जागृत् के मिथ्यापने के साधनेबिषे जो स्वप्नका दृष्टान्तहै सो असिद्धहै, एतदर्थ स्वप्नवत् जो जाग्रत् को असत्पना कहा सो अयुक्तहै,। इसप्रकारका जो वादीका कथन सो बने नहीं। क्योंकि, हे वादिन्! स्वप्नबिषे देखेहुये पदार्थोंको जो तू अपूर्व मानताहै, सोतो जड़होनेकरके स्वतः सिद्ध नहीं है, किन्तु "[अपूर्व्वंस्थानिधर्म्मोहियथास्वर्गनिवासिनाम् "] ८ अपूर्व स्थानीका ही धर्म्म है, जैसे स्वर्गके निवासियोंकाहै; अर्थात् सो अपूर्व स्वप्नके द्रष्टारूप स्वप्नस्थानवाले [तैजसरूप] स्थानीकाहीधर्म है। जैसे स्वर्गकेनिवासी इन्द्रादिकोंका सहस्राक्षपना आदिक धर्महै, तैसे यह अपूर्व स्वप्नस्थानी स्वप्नके द्रष्टाका धर्म है, द्रष्टाके स्वरूपवत् स्वतः सिद्ध नहीं [अर्थात् स्वर्गरूप स्थानको प्राप्तहुयेको वहांका स्थानीपना अरु स्थानके सम्बन्धसे सहस्राक्षपनादि धर्म उसके होतेहैं, अरु जब वो इसलोकरूप स्थानको प्राप्त होताहै तब यहांका स्थानीपना अरु द्विभुजादिक धर्म उसके होते हैं, ताते स्थानके सम्बन्धसे प्राप्तहुये धर्म उस स्थानीके स्वरूपवत्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्नवृत्तावपित्वन्तश्चेतसाकल्पितन्त्वसत् । बहि
श्चेतोगृहीतंसदृतंवैतथ्यमेतयोः ९ ॥

स्वतः सिद्ध न होने से असत् हैं, क्योंकि जब वो स्वर्गकास्थानीय होताहै तब वहां उसके द्विभुजादि धर्म न होयके सहस्रनेत्र चतुर्भुजादि धर्महोतेहैं, अरु जब वो इसलोककास्थानी होता है तब यहां उसके सहस्रनेत्रादि धर्म न होयके द्विभुजादि धर्महोताहै, ताते स्थानमें अरु स्थान सम्बन्धी धर्मोंमें व्यभिचारके होनेसे वे असत्हैं अरु उस स्थानीके वास्तविक स्वरूपमें व्यभिचार न होने से वो सत्यहै । तैसे ही आत्माको स्वप्नकास्थानी होनेसे वहांका अपूर्वदृश्य उसका धर्महोताहै सपूर्व नहीं, अरु जब वो जाग्रत्का स्थानी होताहै तब यहांका सपूर्व उसका धर्महोताहै अपूर्व नहीं, अरु जैसे जाग्रत् स्वप्नरूप स्थानोंका परस्परमें व्यभिचारहै तैसे तिनसम्बन्धी सपूर्व अपूर्व दृश्यरूपधर्मोंमेंभी व्यभिचारहै परन्तु उभय स्थानके स्थानीरूप आत्माके अव्यभिचारी स्वरूपवत् स्वतः सिद्ध न होने से दोनों स्थान अरु तत्सम्बन्धी धर्म दोनों तुल्यही असत्हैं । अरु " तानयं प्रेक्षतेगत्वा यदैवेहसुशिक्षितः " तिनको यह जायके देखताहै जैसेही यहां सम्यक् शिक्षापाया देखताहै; अर्थात् तिन इसप्रकारके अपने चित्तके विकल्परूप अपूर्व पदार्थों को यह स्थानी स्वप्नका द्रष्टा स्वप्नरूप स्थानबिषे जायके देखता है, जैसे यहां लोकबिषे शिक्षाको पाया । पुरुष । जो देशान्तरका मार्गहै तिसमार्गसे देशान्तरको जायके तिन । देशान्तरके । पदार्थोंको देखता है, तद्वत् । एतदर्थ रज्जु सर्प अरु मृगतृष्णादिक स्थानीके धर्मका असत्पना है, तैसे स्वप्नबिषे देखेहुये अपूर्वदृश्य पदार्थोंको स्थानीका धर्मपनाही है एतदर्थ असत्पना भीहै । ताते स्वप्नके दृष्टान्तका । अर्थात् जाग्रत्के दृश्य पदार्थोंके असत् होने में जो स्वप्नरूप दृष्टान्त तिसके असत्पनेका । असिद्धपना नहीं किन्तु उसका असत्पना सिद्धही है । ८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाग्रद्वत्तावपित्वन्तश्चेतसाकल्पितन्त्वसत् ।
बहिश्चेतोगृहीतंसद्युक्तंवैतथ्यमेतयोः १० ॥

९ हे सौम्य! [जाग्रत्बिषे देखनेयोग्य पदार्थोंका जो मिथ्यापना है सो तिसबिषे सत् अरु असत्के विभागकी प्रतीति से विरुद्ध है यह शंकाकरके तिसका दृष्टान्त से समाधान करते हैं] स्वप्नरूप दृष्टान्तके अपूर्वपने की शंकाका निषेध करके, पुनःजाग्रत् के पदार्थोंकीस्वप्नके (पदार्थोंसे) तुल्यताकोवर्णन करतेहुयेकहतेहैं "स्वप्न वृत्तावपित्वन्तश्चेतसाकल्पितन्त्वसत् " ९ स्वप्नवृत्ति बिषे भी अन्तर तो चित्त से कल्पित असत् है; अर्थात् स्वप्नवृत्ति (स्वप्नावस्था) रूपस्थानाबिषेभी (शरीरको) अन्तर तो चित्तसे मनोरथ करके कल्पना किया वस्तु तो असत्है, क्योंकि अन्य कल्पना व सङ्कल्पके (उत्थानके) समकालही तिसका अदर्शनहै ताते। अरु "बहिश्चेतोगृहीतं सद्दृतंवैतथ्यमेतयोः "९ बाह्य चित्तसे ग्रहण किया असत् है इनका मिथ्यापना देखाहै ; अर्थात् तिसही स्वप्न बिषे बाह्यचित्तकरके चक्षुरादि इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया जो घटादि वस्तु सो सत्य है। असत्य है, इसप्रकार निश्चय किये हुये भी सत् अरु असत्य का विभाग देखाहै। अरु इन अन्तर अरु बाह्य चित्तसे कल्पनाकिये दोनों वस्तुओंका (कलित होनेसे) मिथ्यापनाही देखाहै ९ ॥

१० हे सौम्य! "जाग्रद्वत्तावपित्वन्तश्चेतसाकल्पितन्त्वसत्" ९ जाग्रत्की वृत्तिबिषे भी अन्तर तो चित्तसे कल्पना तो असत् है; अर्थात् जाग्रत् की वृत्तिरूपस्थानाबिषे भी अन्तर चित्तकरके कल्पना किया वस्तु तो असत् है। अरु "बहिश्चेतोगृहीतंसद्युक्तंवैतथ्यमेतयोः "९ बाहिर चित्तसे ग्रहणकिया सत्है इनका मिथ्यापना ही युक्तहै; अर्थात् तिसही जाग्रत्बिषे बाह्यचित्तसेचक्षुरादिइंद्रियों द्वारा ग्रहणकिया घटादि वस्तु सत्है। असत्है इसप्रकार निश्चय कियेहुये भी सत् असत्का विभागदेखाहै। अरु इनसत् अरु असत्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उभयोरपिवैतथ्यंभेदानांस्थानयोर्यदि । एकतानूबु-
द्ध्यतेभेदान्कोवैतेषांविकल्पकः ११ ॥

का मिथ्यापना युक्तहीहै,क्योंकि अन्तर अरुबाह्य चित्तसे कल्पित पनेकी तुल्यताहै ताते १० ॥

११ हे सौम्य![अब सर्वको मिथ्यापनाहोनेसे प्रमाता प्रमाणादिक व्यवहारका असम्भवहोनेसे, पूर्ववादीविशेष शंकाकोकरता हुआ कहे है "उभयोरपिवैतथ्यं भेदानांस्थानयोर्यदि" (यदि उभयस्थानोंबिषे भेदोंको मिथ्यापनाही है ; अर्थात् जब जागृत् अरु स्वप्नइन उभय स्थानोंबिषे पदार्थोंके भेदोंका मिथ्यापनाही है, तब "एकतानूबुद्ध्यतेभेदान् कोवैतेषांविकल्पकः" (भेदोंको कौनजानेगा अरु तिनका निश्चयकरके विकल्पक कौन होवेगा; अर्थात्, इन अन्तर अरु बाह्य चित्तसे कल्पना किये जे पदार्थोंके भेद तिनको कौनप्रमाताजानेगा अरु तिनका निश्चयकरके विकल्प (कल्पना) करनेवाला कौन होवेगा । यहां अभिप्राय यह है कि तिनकी स्मृति [यहां यह अर्थहै कि कार्यकाकर्त्ता जोहै सो पूर्व अनुभवकिये कार्यको स्मरणकरके तिनके सदृश जातिवाले अन्य कार्योंको,इसप्रकार स्मृति अरु अनुभवके आश्रयके आक्षेपसे कर्त्ता का आक्षेपकहनेको इच्छितहै । तैसा होनेसे सर्वके मिथ्यापनेके सिद्धहुये कर्त्ता आदिकोंके व्यवहारका असंभव निवारण करनेको अशक्य होवेगा] अरु अनुभवबिषे आश्रय कौन होवेगा, [जो अध्यात्मरूप प्रमाता (बुद्धिविशिष्ट चैतन्य जीव) है अरु जे अधिदैवरूप जगत्का कर्त्ता ईश्वरहै, यह दोनोंभी मिथ्याहैं, इसप्रकार अंगीकार करनेसे प्रमाता आदिकोंको असत्पना होवेगा, । यह शंकाकरके पूर्ववादी कहताहै । यहां यह अर्थहै कि 'जब प्रमाता वा कर्त्ता तुम्होंकरके अंगीकार नहीं कियाहै, तब, तुमको निरात्मभाव (शून्यपना) अभीष्टही होवेगा, परन्तु सो देखनेको शक्य नहीं । उसका देखना अशक्यहै । क्योंकि आत्माबिषे । चक्षुरादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्पयत्यात्मनात्मानमात्मदेहःस्वमायया । सएव बुद्ध्यतेभेदानितिवेदान्तनिश्चयः १२ ॥

करणों (इन्द्रियों) की प्रवृत्तिका असंभवहै, अरु निषेधकरनेवाला ही आत्माहै ताते,] जब उनका कोई भी प्रमाता (प्रमाणकर्त्ता) वा कर्त्ता न मानेगे तब तुमको निरात्म (शून्य) बाद अभीष्ट होवेगा ११ ॥

१२ हे सौम्य ! "कल्पयत्यात्मनात्मानमात्मदेहःस्वमायया" ६ आत्मारूपी देव अपनेबिषे अपनी मायासे आपकरके अपनेको कल्पताहै ; अर्थात् [अबसिद्धान्ती कर्त्ता अरु कार्यादिकोंकी व्यवस्थाके असंभवको दूर करताहै] जो आत्मारूपी देव अपनेबिषे स्वमायासे आपकरके आपको रज्जु आदिकोंबिषे सर्पादिकोंवत् अग्रिम कहनेके भेदके आकारवाला (देह) कल्पताहै । अरु "सएवबुद्ध्यतेभेदानितिवेदान्तनिश्चयः" ६ सोई ही भेदों को जानताहै ऐसा वेदान्तका निश्चयहै ; अर्थात् तैसे सोई । आत्मदेव (तिन भेदोंको जानताहै, इसप्रकारका वेदान्त (उपनिषद् वा ब्रह्मसूत्र) शास्त्रका निश्चयहै । एतदर्थ अनुभवज्ञान अरु स्मृतिज्ञानका आश्रय (आत्मदेवसें) अन्य नहीं । अरु क्षणिकवादियोंवत् अनुभवज्ञान अरुस्मृतिज्ञान निराश्रयनहीं । इत्यभिप्रायः १२॥

१३ हे सौम्य ! प्रश्न । कौनसंकल्पकरताहुआकिसप्रकारसेकल्पताहै, । तहां । उत्तर । कहते हैं, "विकरोत्यपरान्भावानन्तश्चित्ते व्यवस्थितान्, नियतांश्चबहिश्चित्त एवंकल्पयतेप्रभुः" ६ प्रभु पदार्थोंको चित्तके अन्तर स्थित नियमित पुनः अनियमितपदार्थोंको नाना करताहै ; अर्थात् प्रभु (समर्थ) जो ईश्वर आत्मा है सो बाह्य चित्तवालाहुआ बाह्य अपर ' लोकप्रसिद्ध, शब्दादि रूपपदार्थोंको, अरु अन्य (शास्त्रप्रसिद्ध) बासनारूपसे अन्तर चित्तबिषे (मायारूप चित्तके अन्तर) स्थित अस्पष्ट पृथिव्यादि नियमित (स्थिर) अरु बिद्युत्तादिक अनियमित (अस्थिर) पदार्थों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विकरोत्यपरान्भावानन्ताश्चित्तेव्यवस्थितान् । नियतांश्चबहिश्चित्तएवंकल्पयतेप्रभुः १३ ॥

को नानाप्रकारसे करताहै । तैसे अन्तर चित्तवालाहुआ मनोरथादिरूप आपबिषे स्थित पदार्थोंको [यहां यह अर्थ है, कि बाह्य चित्तवालाहुआ आत्मा बहिर्मुख (बाह्यके व्यवहारयोग्य) पदार्थोंको कल्पताहै । अरु अन्तरचित्तवाला हुआ तिन (बाह्यव्यवहारयोग्य पदार्थों) से इतर आपबिषे स्थित मनोरथादि लक्षण रूप व्यवहारके योग्य पदार्थोंको कल्पके पुनः व्यवहारकी योग्यताके अर्थ कल्पताहै । यहां यह कथनकियाहै कि जैसे लोक बिषे कुलाल वा तन्तुवाय (वस्त्ररचनेवाला) घट वा पटरूप कार्यके करनेकी इच्छावालाहुआ आदिबिषे व्यवहारके योग्य व्यक्तिको (कार्यके आकारको) जानके वा प्रकटकरके, पश्चात् तिसही व्यक्तिको बाहिरके नामरूपकरके सम्पादनकरताहै। तैसेही यह (आत्माख्य) आदिकर्त्ता भी मायालक्षणरूप अपनेचित्त बिषे नामरूपकरके अप्रकटरूपसे स्थितहुये सृजनेयोग्य पदार्थोंको प्रथमसृजनेकी इच्छा आकारसे प्रकट करके पश्चात् बाहिर सर्व ज्ञानके साधारण रूपसे सम्पादन करताहै । इसप्रकार प्रपञ्च की कल्पना बिषे क्रमका ज्ञान है] बाह्यके योग्य कल्पना करके पुनः व्यवहार की योग्यताके अर्थ कल्पता है १३ ॥

१४ हे सौम्य ! । शंका। ननु, स्वप्नवत् चित्तकरके कल्पित सर्व जाग्रत् का जगत् (है यहअद्यावधि निर्द्धारहुआ नहीं । अरु चित्तसे कल्पित चित्त करके जाननेयोग्य मनोरथादि रूप पदार्थों से, बाह्यके पदार्थोंकी परस्पर जाननेकी योग्यता रूप बिलक्षणताहै, एतदर्थ जाग्रत् का स्वप्नवत् मिथ्यापना अयुक्त है, [जैसे स्वप्न बिषे देखने योग्य सर्व कल्पित दृश्य वस्तु मिथ्याही अंगीकार करतेहैं, तैसेही जाग्रत् बिषे भी देखनेयोग्य सर्व वस्तु चित्तकरके भासमान हैं, इसहेतुसे कल्पित मिथ्या है, ऐसा अद्यावधिनि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्तकालाहियेऽन्तस्तुद्वयकालाश्चयेबहिः । कल्पि
ताएवतेसर्व्वेविशेषोनान्यहेतुकः १४ ॥

र्द्धारकिया नहीं, इस विषय में पूर्व्ववादी हेतु कहताहै, । यहां यह अर्थहै कि, आत्माकी अविद्याकरके कल्पित जो चित्त, तिस चित्तकरके प्रथम चित्तकेही अन्तररचित, अरु तत्रही वर्त्तमान मनोरथ (संकल्प) रूप पदार्थ, अरु बाह्यके रज्जुसर्पादिक पदार्थ सो चित्तकरकेही परिच्छेद (भेद) को पावनेयोग्य है। अरु जिस करके वो कल्पनाकालबिषेही होनेवाले पदार्थ प्रमाणज्ञान (प्रमाणजन्यज्ञान) के विषयहोते नहीं, जिसकरके तिनके साथ मन से बाह्य जाग्रत् बिषे देखनेयोग्य भावों (पदार्थों) का विलक्षणपना, अरु परस्पर में परिच्छेद्यताके पावने की योग्यता, अरु दोनों कालोंकरके परिच्छिन्न होने करके प्रत्यभिज्ञारूप ज्ञानकी विषयता देखते हैं, तिसकरके जाग्रत् का स्वप्नवत् मिथ्यापना अयुक्त है,] उत्तर। यह शंका युक्तनहीं, इसप्रकार मूल के श्लोक के अक्षरों से उत्तर कहते हैं, चित्तके (कल्पना) काल से इतर अन्य परिच्छेद करनेवाला काल नहीं है (जिनका) ऐसे जे चित्त से परिच्छेद करनेयोग्य (अर्थात् चित्तकी कल्पना काल बिषेही जानने के योग्य) पदार्थ सो [जो मनके अन्तर मनोरथरूप पदार्थ हैं, सो चित्तकाल वाले होते हैं, तिनके चित्त कालको स्पष्टकरते हैं] चित्तकालवाले कहते हैं, अरु जो परस्पर परिच्छेद करने (पृथक् २ जानने) योग्य पदार्थ हैं तिनको दोनों कालवाले कहते हैं [यहां यह अर्थ है कि, जो पदार्थ मन से बाह्य दीखते हैं सो भेदकालवाले हैं । क्योंकि काल का जो भेद सो कहिये भेदकाल, सो भेदकाल जिनकाहै ऐसे जे पदार्थ तिनको भेदकालवाले कहते हैं। इस व्युत्पत्ति से । ताते सो पूर्वके अन्यकाल करके अरु पीछेके अन्यकाल करके परिच्छेद को प्राप्त होने योग्य हैं। अरु भिन्नकाल से परिच्छिन्न होने करके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"सो यह है" इस आकारवाले प्रत्यक्ष ज्ञानकी सामग्री सहित संस्कारसे जन्य प्रत्यभिज्ञा ज्ञानके विषय होते हैं] जैसे [जाग्रत्के पदार्थोंकी प्रत्यभिज्ञा ज्ञानकी विषयताको उदाहरण करके स्पष्ट करते हैं] देवदत्त गौके दोहन पर्यन्त स्थित होताहै, सो यावत् स्थितहोताहै तावत् गौको दोहन करताहै, अरु यावत् गौको दोहनकरताहै तावत् स्थितहोताहै, अरु तितने कालपर्यन्त यहहै, अरु एतने कालपर्यन्त सो है । इसप्रकार बाह्य के पदार्थोंको परस्पर में परिच्छेदकपनाहै, एतदर्थ उनको उभयकालवाले कहते हैं । एतदर्थ "चित्तकालाहियेऽन्तस्तु द्वयकालाश्च येबहिः, कल्पिताएवतेसर्वे विशेषोनान्यहेतुकः" (जो अन्तर बिषे तो चित्तकालवाले पदार्थ हैं अरु बाह्य उभयकालवाले पदार्थ हैं, सो सर्व कल्पितही हैं, विशेष अन्यहेतुवाला नहीं ; अर्थात् जो अन्तर (स्वप्न) बिषे तो चित्तकालवाले पदार्थ हैं, अरु बाह्य (जाग्रत्बिषे) दोनों कालवाले पदार्थ हैं, सो सर्व । जाग्रत् स्वप्न के । कल्पितही हैं । बाह्यका दोनोंकाल करके युक्ततारूप जो विशेषहै सो कल्पितपने से अन्य हेतुवाला नहीं, क्योंकि कल्पित बिषे भी तिसप्रकारके विशेषका सम्भवहै ताते, अतएव यहां जाग्रत् बिषे भी स्वप्नका दृष्टान्त स्पष्ट होताही है [इसका यह रहस्यहै कि जो कल्पनाकालबिषे होनहार पदार्थ मनके अनन्तर वर्त्तते हैं, अरु जो प्रत्यभिज्ञा ज्ञानके विषयहोने करके पूर्वोत्तर कालबिषे होनेवाले अरु बाहरही व्यवहारके योग्य देखियेहैं, सो सर्वकल्पितहुये मिथ्याही होनेके योग्यहैं । अरु प्रत्यभिज्ञा ज्ञानकी विषयतारूप जो विशेषहै सो वस्तुके कल्पितपने का क्रियाहै, क्योंकि स्वप्नादिकोंकी कल्पित वस्तुबिषे भी "सो यहहै" इस प्रकार प्रत्यभिज्ञा ज्ञानकी विषयता देखतेहैं ताते १४ ॥

१५ हेसौम्य ! "अव्यक्ताएवयेऽन्तस्तु स्फुटाएवचयेबहिः । कल्पिताएवतेसर्व्वे" (जो अन्तर अस्पष्टहीहै, अरु जो बाह्यही है, सो सर्व कल्पितही हैं ; अर्थात् जो मनके अन्तरभावनारूप हो,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अव्यक्ताएवयेऽन्तस्तुस्फुटाएवचयेबहिः । कल्पिता एवतेसर्वेविशेषस्त्विन्द्रियान्तरे १५ ॥

ने से अस्पष्ट पदार्थही है, अरु जो मनके बाह्य जो प्रतीयमान पदार्थ स्पष्टहोतेहैं सो सर्व मनके स्फुरणमात्र रूपहोनेसे कल्पि. तहीहैं। अरु "विशेषस्त्विन्द्रियान्तरे" ? विशेष इन्द्रियोंके भेद के कियेहैं ? अर्थात् स्पष्टतारूप विशेष तो अन्तर अरु बाह्य इन्द्रिय भेदकेहुये। इन्द्रियोंके भेदरूप निमित्तवाला। है, तिसबिषे मिथ्यापना वा अमिथ्यापना उपयोगको प्राप्तहोता नहीं॥ इसका यह भावार्थहै कि, यद्यपि मनके अन्तर मनकी वासनामात्रसे प्रकटहुये पदार्थोंका अस्पष्ट (अप्रकट) पनाहै, वा मनसे बाह्य अरु चक्षुरादि इन्द्रियोंके अन्तर पदार्थोंका स्पष्टपना है, यह विशेषहै। तथापि यह विशेष पदार्थोंकी सत्यता कियानहीं, क्योंकि स्वप्नबिषेभी तैसेही देखते हैं। किन्तु यह विशेष इंद्रियों के भेदोंका कियाहै, एतदर्थ जाग्रत्के पदार्थ भी स्वप्नके पदार्थोंवत् कल्पितहीहैं। इति सिद्धम्, यह सिद्धहुआ १५॥

१६ हे सौम्य!। प्रश्न। ननु, बाह्य अरु अन्तरके पदार्थों की 'परस्परके निमित्त अरु नैमित्तिक होनेकरके' कल्पनाबिषे कारण क्याहै। उत्तर। तहां कहतेहैं, आत्मा जो है सो अपनीमायाकेवश से सर्वको कल्पताहुआ आदिबिषे 'मैंकरताहौं' मेरेकोसुखदुःखहै, इसलक्षणवाले "जीवंकल्पयतेपूर्व्वं ततोभावान्पृथग्विधान्" ८ जीवको पूर्व कल्पता है तिसके अनन्तर पृथक् २ भावों को 'कल्पताहै ? अर्थात् उक्तलक्षणवाले, जीवोंको 'रज्जुबिषेसर्पवत्। "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" इत्यादि। श्रुतिउक्त लक्षणवालेही शुद्ध आत्माबिषे विशिष्टरूपसे पूर्व कल्पता है, अतएव तिसके अर्थहोने करके 'क्रिया, कारक, फलके भेदसे प्राणादिक नानाविध बाह्यके अरुअन्तरकेपदार्थोंको कल्पताहै॥ प्रश्न॥तिस कल्पनाबिषे क्याहेतु है॥ उत्तर॥ तहां कहते हैं, "बाह्यानाध्यात्मिकांश्चैवयथाविध्यस्त-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीवंकल्पयतेपूर्वंततोभावान्पृथग्विधान् । बाह्यान्
ध्यात्मिकांश्चैवयथाविद्यस्तथास्मृतिः १६ ॥

थास्मृतिः " (जैसी विद्या वाला है तैसी स्मृतिवाला होता
तिसकरके, बाह्य अन्तरके पदार्थोंको (सृजता है) ; अर्थात्
यह आप कल्पितहुआ जीव सर्व कल्पनाके करनेविषे अधिका
है सो जैसी विद्या (विज्ञान) वालाहै तैसीही स्मृति वा
होताहै । [यहांयह अर्थ है कि, अन्नपानादि उपभोगके होते तृ
आदिक होतीहै, अरु तिन (उपभोग) के न होनेसे होतेनहीं । इ
अन्वय व्यतिरेक रूप युक्तिसे भोजनादिक हेतहै । ऐसी कल्प
का विज्ञान उपजता है, ताते पुष्ट्यादिक फलहै, ऐसीकल्पना
विज्ञान उपजताहै, तिस करके अन्य किसी दिवस में कथन कि
दोनों भी हेतु अरु फलकी स्मृति होती है, तिस करके फल
साधनसे असमान (भिन्न) जातिवाले अन्य साधनविषे क
व्यता का विज्ञान होताहै, तिससे वांछित तृप्ति आदिक फल
प्रयोजनता विषे पाकादिक क्रिया अरु तिसके कारक (सामग्री
तंडुलादिक अरु तिनके फल अन्नकी सिद्धि आदिक के सम्बन्ध
विशेष विज्ञानादिक होते हैं, तिसकरके हेतु आदिकों की स्मृ
होती है, ताते तिस साधनका अनुष्ठान होताहै. ताते पुनः फ
होताहै । इस क्रम करके परस्पर हेतुमद्भावसे कल्पना होतीहै,
इस करके हेतुकी कल्पना के ज्ञानसे फलका ज्ञानहोता है, ताते
तुके फलकी स्मृति होतीहै, तिसकरके तिसकाज्ञान अरु तिस
अर्थ क्रिया कारक, अरु तिसकेफलके भेदकेज्ञान होतेहैं, तिनकर
तिनकी स्मृति होतीहै, अरु तिस स्मृति से पुनः तिसके ज्ञानहो
तेहैं तिन ज्ञानसे तिनकी स्मृति होती है अरु तिस स्मृति से पुन
तिनके ज्ञान होतेहैं । इसप्रकार बाह्य अरु अन्तरके पदार्थोंकोपर
स्पर निमित्त अरु नैमित्तिकभावसे अनेक प्रकारकल्पता है १६
१७ हे सौम्य ! तिसपूर्वोक्त श्लोकविषे जीवकी कल्पना सर्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनिश्चितायथारज्जुरन्धकारेविकल्पिता । सर्पधारादिभिर्भावैस्तद्वदात्माविकल्पितः ॥ १७ ॥

ल्पनाका मूलहै, इसप्रकारकहा। सोई जीवकी कल्पना किसनिमित्तवाली है इसको अब दृष्टान्तकरके प्रतिपादन करतेहैं "अनिश्चितायथारज्जुरन्धकारेविकल्पिता, सर्पधारादिभिर्भावैः" जैसे अन्धकार बिषे अनिश्चित हुई रज्जु सर्प अरु जलधारा आदिक भावकरके विकल्प को प्राप्तहोता है ? अर्थात् जैसे लोक बिषे मन्द अन्धकार बिषे रही वस्तु अहं अमुक वस्तुही है, इस प्रकार अपने स्वरूपसे अनिश्चय को प्राप्तहुई सो , क्या सर्प है वा जलधाराहै, वा वक्र दंड है, वा भूमिकी दरार है, इत्यादि प्रकारसे सर्पधारा आदिक भावकरके अनेक प्रकार से विकल्पको प्राप्तहोवेहैं। अर्थात् रज्जु बिषे सर्प अरु थाणू (ठूंठ) बिषे जो पुरुषकी भ्रांति होती है सो मन्द अन्धकारके समय होती है. घन अन्धकारमें अरु स्पष्ट प्रकाश में नहीं क्योंकि जिसकालमें रज्जुके सामान्यअंश , सर्पवत् वक्राकार, की प्रतीति, अरु बिशेष अंश त्रिवली (ऐंठन) की अप्रतीति होती है तिसकालमें सर्पादि भ्रान्ति होती है, अरु बादीने भ्रांती होनेकी सादृश्यतादि अनेक सामग्री कहीहैं परन्तु, मुख्यसामग्री उक्त प्रकारका अन्धकारहीहै, क्योंकि अन्धकारके अभावकी सामग्री दीपकादिकों के प्रकाश करकेही भ्रान्ति में उपयोगी अन्धकार सहित सर्व सामग्री अभाव होती है अन्धकारमें स्थित रज्जुको सम्यक् प्रकारसे रज्जु ही है ऐसे जानने के अर्थ एक प्रकाशही सामग्री का उपयोग है, भ्रान्ति कालवत् अनेक सामग्री का नहीं। अरु रज्जुबिषे भ्रान्ति कालमें जो प्रायः सर्पकी स्मृति अरु भ्रान्ति अधिक, अरु दंडधारादिकों की क्वचित् होती है, तहां सर्पकी भ्रान्ति अधिक होने बिशेष करके मरणका भय हेतुहै, क्योंकि सर्पके डंशसे मरण का भय है दंड धारादिकों से नहीं ताते ॥ अरु ऊषर भूमि में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निश्चितायांयथारज्ज्वां विकल्पोविनिवर्त्तते । रज्जुरे
तिचाद्वैतंतद्वदात्मविनिश्चयः १८ ॥

जलकी अरु शुक्तिका में रजतकी भ्रान्ति है सो अन्धकार में
होयके प्रकाश में होतीहै, परन्तु द्रष्टाके देशसे दूरदेशमें अरु दृ
गोचरतासे होतीहै । अरु शुक्तिकी सादृश रजतलोह कागज आ
होतेहैं, परन्तु विशेषकरके तहां रजतकी भ्रान्तिहोती है तहां
यः लोभहेतु है, क्योंकि अन अशनादि निमित्तक क्लेशादिकों
निवृत्ति रजतरूप द्रव्यसे होती है ताते । जैसे स्वरूप से यथा
निश्चय कियेहुये अपने हस्तकी अंगुली आदिकों बिषे सर्प
जलइत्यादि विकल्प देखतेनहीं, तैसेही रज्जुको स्वरूप से सम्
क्प्रकार निश्चय कियेहुये सम्मुखवर्ती रज्जुरूप वस्तुविषे स
दि विकल्प होतानहीं । अरु जिसकरके । सर्पादिविकल्प ।
ताहै ' एतदर्थ । तिस विकल्पसे । पूर्व रज्जु के स्वरूपका अ
श्चयही । निश्चयका न होनाही । तिसका निमित्तहै ॥ जैसे
दृष्टांतहै " । तद्वदात्माविकल्पितः " । तैसे आत्मा विकल्पकोप्रा
हुआहै ; अर्थात् जैसे उक्त दृष्टांतहै तैसेहेतु अरु फलादिक सं
रके धर्म्मरूप अनर्थों से विलक्षण होनेकरके अपने शुद्ध ज्ञा
मात्र सत्तासमान अद्वैतरूप करके अनिश्चय होनेसे । अ
अपनेआप आत्माके शुद्धबुद्ध मुक्त ज्ञानमात्र सत्तासमान एक
द्वैत स्वरूपका सम्यक्प्रकार यथार्थ निश्चय न होनेसे । ज
अरु प्राणादिक अनेक भावोंके भेदों से आत्मा विकल्पको
हुआहै । इसप्रकार यह सर्व उपनिषदोंका सिद्धान्त है १७ ॥

१८ हेसौम्य! [अविद्यासे रचितजीवकी कल्पनाहै, इसप्र
अन्वयरूप द्वारसे कहा, अब तिसहीको व्यतिरेक रूपद्वारस
खावे हैं] " निश्चितायांयथारज्ज्वां विकल्पोविनिवर्त्तते " "
रेवेति, " ; जैसे यह रज्जुहीहै, ऐसे रज्जुके निश्चयहुये वि
सर्वथा निवृत्त होताहै ; अर्थात् जैसे 'यह रज्जुहीहै ' इसप्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणादिभिरनन्तैश्च भावैरेतैर्विकल्पितः।
मायैषातस्यदेवस्य यथासम्मोहितःस्वयम् १९॥

रज्जुके निश्चय होने से तिसके अज्ञानकी निवृत्ति से तिससे उत्पन्नहुआ जो सर्पादिरूप विकल्प सो सर्वथा निवृत्त होता है, अरु रज्जुमात्र अवशेषरहे है "तद्वदात्मविनिश्चयः" (तैसे आत्माबिषे निश्चय प्राप्त होताहै; अर्थात् जैसेही जब आत्माबिषे श्रुतिवाक्यानुसार निश्चय प्राप्त होताहै, तब आत्माकी अविद्या करके कल्पित जे जीवादिक विकल्प तिनकी अशेष निवृत्तिसे एक अद्वैत आत्मतत्त्वही परिअवशेष रहताहै। यह तो श्लोक का अक्षरार्थ है॥ अब इसका भावार्थ कहते हैं। जैसे "रज्जुरेवेति" (रज्जुही है) इसप्रकार निश्चयके होनेसे सर्व विकल्पोंकी निवृत्ति के होनेसे रज्जुही अद्वैतहै, इसप्रकार "नेति नेति" (नइति नइति) (सूक्ष्मभी नहीं, स्थूलभी नहीं, कार्यभी नहीं, कारणभी नहीं, मूर्त्तभी नहीं अमूर्त्तभी नहीं) इत्यादि इस सर्व संसार के धर्म से रहित वस्तुके प्रतिपादक शास्त्र से जनित ज्ञानरूप प्रकाश का किया जो यह आत्माका निश्चय है सोई "आत्मैवेदं सर्व्वं" "अपूर्व्वमनन्तरमबाह्य" "सबाह्याभ्यन्तरोह्यजः" "अजरोऽमरोऽमृतोऽभय एवाद्वयइति" (आत्माही यह सर्व है) अपूर्व है, अनपरहै, अनन्तरहै, अबाह्यहै, बाह्यान्तरके साहितहै, अरु जन्मरहित अजहै, अजरहै, अमरहै, अमृत (रोगरहित) है (अर्थात् जन्मादि षड्भावविकार रहितहै) अभयही है। इसप्रकारकाजो (अपने आप) आत्माका दृढ़ निश्चय है, सोई अद्वितीय परिशेष रहता है, पुनः द्वैत सर्वही निवृत्त होताहै १८॥

१९॥ हे सौम्य! "यद्यात्मैक एवेति" (जब आत्मा एकही है) अर्थात् जब उक्तप्रकार से आत्मा एकही है, इसप्रकार का निश्चय है तब "(प्राणादिभिरनन्तैश्च भावैरेतैर्विकल्पितः, मायैषा तस्य देवस्य" (प्राणादि अनन्तभावों करके विकल्पको प्राप्तहुआ है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह उस देवकी मायाही है ? अर्थात् जब निश्चय करके सर्व संसार धर्मरहित आत्माएकही है, तब इन संसाररूप प्राणादि अनन्तभावसे कैसे विकल्प को प्राप्त होताहै, (जहां इसप्रकार का संशय है (तहां कहते हैं, श्रवणकरो, यह उस आत्मरूप देवकी माया है । जैसे मायावी पुरुष करके प्रेरणा को प्राप्तहुई जो उसकी माया, सो 'अतिशय निर्मल जो आकाश, तिसको पुष्पपत्र सहित वृक्षोंकरके पूर्णहुयेवत् पूर्णकरेहैं, तैसे यह आत्मदेव की माया भी है । अरु जैसे इन्द्रजाली की माया से लौकिक द्रष्टा जन उस मायाकृत मोहसे उस मायाकेही वशहुये देखते हैं । तैसे अपनी मायासेही यह आत्मा (अपने चिदाभासरूपसे) आप भी मोह को प्राप्तहोताहै । एतदर्थ मोहरूपकार्य द्वारा आत्माविषेही मायाका ज्ञानहोताहै (अर्थात् मूलाज्ञानकी शक्ति जो शुद्ध माया तद्विशिष्ट आत्माको माया के कार्य मोह करके अपने विषे माया का ज्ञान होताहै, अरु सर्व शब्दके अर्थ की साम्यता जो माया तिसका ज्ञाता होनेसे उसको सर्वज्ञकहते हैं अरु वो मायासे रहित अरु माया का आश्रय शुद्ध अविशिष्ट अपना सत्य स्वरूप तिसको स्वरूपसेही जानता है तातें ईश्वर है । अरु अज्ञानकी द्वितीय शक्ति मलिन अविद्या तद्विशिष्टजीव अविद्याके कार्य मोहरूप निमित्तसे उसको अविद्याका ज्ञान होता है कि मुझविषे अविद्या वा मायाहै, अरु तिससे पृथक् अपनेआप शुद्ध स्वरूप को ,विना आचार्य के उपदेशके, जानता नहीं तातें जीवहै, अरु एतदर्थही श्रुति कहतीहै कि "आचार्यवान् पुरुषोवेद" अरुमाया अरु अविद्यारूप उपाधिके अभावसे उभयविशिष्ट चैतन्य आत्माकी अविशिष्ट ज्ञप्तिमात्र तत्त्वविषे एकताहै । परन्तु आचार्य के उपदेशद्वारा सम्यक् प्रकारके आत्मज्ञान विना माया अरु अविद्याकी निवृत्ति होवे नहीं (तथाच "ममायादुरत्यया" ८मेरी माया दुःखसे तरने योग्यहै ? इस गीतोक्ति से भगवान्ने भी माया को मोहकी हेतुता कही है १९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणइतिप्राणविदोभूतानीति च तद्विदः। गुणाइति गुणविदस्तत्त्वानीति च तद्विदः २० ॥

२० ॥ हे सौम्य! [कौनसे वे प्राणादिक अनन्तभाव हैं कि जिन करके माया से आत्मा भेदको पावता है, इसप्रकार के प्रश्नकी इच्छा के हुये प्राणादिकों की कल्पना को उदाहरण करके कहते हैं] "प्राणइतिप्राणविदोभूतानीति च तद्विदः" "प्राण ऐसे प्राणके वेत्ता, अरु भूत ऐसे भूतकेवेत्ता" कहते हैं"; अर्थात् प्राण" कहिये सूत्रात्मा हिरण्यगर्भ जगत्का ईश्वर वा जगत्का हेतु है" इस प्रकार प्राणकेवेत्ता हिरण्यगर्भ के उपासक अरु वैशेषिकमतावलम्बी कल्पनाकरते हैं, सो केवल कल्पनामात्रही है, क्योंकि उस हिरण्यगर्भको जगत्का हेतुहोने के विषय में प्रमाणका अभाव है" अरु हिरण्यगर्भ उत्पत्तिवाला है ताते" अरु पृथिवी जल अग्नि वायु, यह चार भूतही जगत्का कारण हैं" इनसे इतर ईश्वरादि कोई नहीं, इसप्रकार चार्वाक कल्पना करते हैं, सो भी कल्पनामात्रही है, क्योंकि इनभूतों को जड़ होनेसे स्वतः सिद्धता" जगत् की रचना में स्वतन्त्रता" नहीं ताते। अरु "गुणा इतिगुणविद स्तत्त्वानीतिच तद्विदः" "गुण ऐसे गुणके वेत्ता, अरु तत्त्व ऐसे तत्त्वके वेत्ता" कहते हैं"; अर्थात् सत्त्वरज तम इन तीनोंगुणोंकी साम्यावस्था जगत्का कारण है, इसप्रकार सांख्यमतवादी मानते हैं, सो भी कल्पनामात्रही है, क्योंकि साम्यावस्थाको प्राप्तहुये गुणोंको जड़त्व होने से उनाविषे ईक्षण बनैनहीं अरु श्रुतिप्रमाण से ईक्षणपूर्वक सृष्टिहै, ताते श्रुतिबाह्य होनेसे गुणोंको जगत्का कारणत्व कल्पनामात्रही है। अरु 'आत्मा, विद्या, अरु शिव, यह तीनतत्त्व जगत्के प्रवर्त्तक हैं, इसप्रकार शैवमतवादी मानते हैं, परन्तु श्रुतिबाह्यहोने से सोभी केवल कल्पनामात्रही है २० ॥

२१ ॥ हे सौम्य! "पादाइतिपादविदोविषयाइति च तद्विदः" "पाद हैं ऐसेपादवेत्ता अरु विषय ऐसे विषयके वेत्ता' कहते हैं,"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पादाइतिपादविदोविषयाइति च तद्विदः । लोकाइति लोकविदोदेवाइति च तद्विदः २१ ॥

अर्थात् एक आत्मा के जे विश्वादिक पाद हैं सोई सर्व व्यवहा के हेतु हैं, इसप्रकार पादों के वेत्ता कहते हैं, तथापि सोभी कल्पना मात्रही है, क्योंकि एक निरंशआत्मा के बिषे विश्वादि अंशों क भेद अनुपन्न है । अर्थात् एक निरंश आत्मा बिषे पादरूप अंशभे वास्तव से नहोयके केवल अविद्याकरके कल्पित है । ॥ अरु शब्द दिविषय वारंवार भोगेहुये परमार्थ तत्त्व है, इसप्रकार उन विषयों के वेत्ता वात्स्यायनादिक काव्यके कर्त्ता कहते हैं, सो कहन विभ्रममात्रहै, क्योंकि विषयोंका विष से भी अति निकृष्टपना है विषभक्षण करने से ,अर्थात् भक्षणकिया विष एकबार हनन क रता है, अरु विषय स्मरणमात्रसेही जन्मजन्मान्तर में भी मार ताही रहता है । अरु विषयोंका अनुसंधान सर्वथा निंदितहै ताहे निन्दितों को पारमार्थिक तत्त्वंभाव मानना सर्वथा अयोग्य । "लोकाइति लोकविदो देवाइति च तद्विदः" । लोक ऐसे लोक के वेत्ता अरु देवता ऐसे देवता के वेत्ता । मानते हैं । ; अर्थात् ,भूर्,भुवर्,स्वर्, इन तीन व्याहृतिरूप पृथिवी (मनुष्यलोक) अन्तरिक्ष (पितृलोक) स्वर्ग (देवलोक) यह तीनों लोकहैं परमार्थ वस्तुरूप हैं, इसप्रकार लोकों के वेत्ता पौराणिक कल्पना करते हैं, सो उनका विभ्रममात्रही है, क्योंकि इनकी तीन संख्यावाले अरु स्थानभेद वाले व्यभिचारी अरु कर्म्मोंका फल अरु "कर्मजितोलोकःक्षीयत" इत्यादि प्रमाण से विनाशीहोनेसे अरु अग्नि वायु अरु इन्द्र, इत्यादि देवता । अपने अनुग्रह से तिन तिन । यज्ञादि कर्म्मों के । फलकेदाता हैं, इनसे इतर ईश्वर कोई नहीं, इसप्रकार देवताओंकेवेत्ता कल्पना करते हैं, सोभी कल्पनामात्रही है, क्योंकि देवताओं को उत्पत्ति विनाशवान् आ आत्माके जानने में संशययुक्त विषयासक्त अहंकारीहोनेसे उनको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वेदाइति च वेदविदो यज्ञाइति च तद्विदः।
भोक्तेति च भोक्तृविदो भोज्यमिति च तद्विदः २२॥

परमार्थरूपता अयोग्यहै ताते २१॥

२२॥ हे सौम्य! "वेदाइति च वेदविदो यज्ञाइति च तद्विदः" ६वेद ऐसे वेदकेवेत्ता अरु यज्ञ ऐसे यज्ञकेवेत्ता। कल्पना करतेहैं; अर्थात्, ऋग्वेदादि चारवेदही परमार्थरूपहैं। क्योंकि ब्रह्माद्वारा वेदही सर्वजगत् के प्रवर्त्तक हैं ताते। इसप्रकार वेदकेवेत्ता पाठक कल्पना करतेहैं, सोभी कल्पनामात्रही है, क्योंकि वेद जोहै सो लौकिक अकारादि स्वर अरु ककारादि व्यंजन, इनवर्णोंसे इतर दीखते नहीं, अरु। वेदवाणीका विवर्त्तहोनेसे वाणी के अभावहुये अभावरूपहै, अरु आदिपुरुष जो ब्रह्मा तिसद्वारा स्फुरणहुये हैं, अरु निर्विशेष आत्माविषे अवेदरूप है, ताते वेदको लोकान्तर लौकिकहोनेसे। वेदको परमार्थरूपता सम्भवे नहीं। अरु ज्योतिष्टोमादिक यज्ञ परमार्थ वस्तुरूपहैं इसप्रकार यज्ञोंकेवेत्ता बौधायनादिक यज्ञकेकर्त्ता कल्पना करतेहैं, सोभी भ्रान्तिमात्रहीहै, क्योंकि "यज्ञं व्याख्यास्यामो द्रव्यं देवता त्याग इति" यज्ञको कहताहौं तहां तिसकी समिध हवि कुण्डादिक सामग्री, अरु यज्ञाभिमानी देवता अरु यज्ञमें त्याज्य वस्तुको। अरु यज्ञकी सर्व कारक सामग्री प्रत्येकजड़हैं ताते काष्ठभारवत् यज्ञकी समुच्चयता को जड़त्वहोनेसे उसको यज्ञका विज्ञाननहीं, अरु यज्ञकर्त्ताके आधीन जड़हैं, अरु यज्ञकर्म के कर्त्ता कर्मकेफलमें अति रागवान् (आसक्त) होनेसे परमार्थतत्त्वको न जानके यज्ञकोही परमार्थ तत्त्व मानतेहैं ताते। अरु "भोक्तेति च भोक्तृविदो भोज्यमिति च तद्विदः" ६भोक्ता ऐसे भोक्ताकेवेत्ता, अरु भोज्य ऐसे भोज्यके वेत्ता। कल्पना करतेहैं।; अर्थात् भोक्ताही आत्माहै, कर्त्ता नहीं, इसप्रकार आत्माको केवल भोक्ताही माननेवाले जे सांख्यशास्त्र के वेत्ता कल्पना करतेहैं, सोभी भ्रांतिमात्रही, है क्योंकि जो क-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूक्ष्मइतिसूक्ष्मविदःस्थूलइति च तद्विदः । मूर्त्तइ
मूर्त्तविदो अमूर्त्तइतितद्विदः २३ ॥

दापि सांख्यमतवादी तिस आत्माविषे जो भोक्तृत्वरूप विक्रि
स्वरूपसेही स्वीकारकरते हैं तब अनित्यत्वादि क्योंनहीं अंगीक
करते, किन्तु करना चाहिये, अरु आत्माविषे जो भोक्तापने
प्रतीति है सो विषयकी सांनिध्यतासे स्फटिक में रक्तादिवत्
तिसको वास्तवसे मानना भ्रान्तिहै । अरु जे भोज्यवस्तु के के
सूपकार (रसोई करनेवाले स्वादके वशहुये भोज्यकोही प
मार्थपनेकी प्रतिज्ञा करते हैं २२ ॥

२३॥ हे सौम्य! "सूक्ष्मइति सूक्ष्मविदः स्थूल इति च तद्वि
"सूक्ष्म ऐसे सूक्ष्मकेवेत्ता, अरु स्थूल ऐसे तिसकेवेत्ता । कल
हैं ।" अर्थात् आत्मा परमाणुके परिमाण सूक्ष्म है । अरु सोई
मार्थ वस्तुहै । इसप्रकार कोई एक सूक्ष्मतत्त्वकेवेत्ता कल्प
करतेहैं, सोभी यथार्थ नहीं, क्योंकि जो आत्मा अणुपरिम
होवे तो शरीरान्तर अणुपरिमाण देशमेंही होवेगा अरु
अणुपरिमाणदेश व्यापि आत्माहुआ तो तिसको चैतन्यहो
तिसही देशके सुख दुःखका अनुभवहोना चाहिये अन्यदेश
नहीं, परन्तु आत्मा पादाग्रसे लेकरके मस्तकाग्रपर्यन्त आ
शवत् नखशिखमें व्याप्तहै क्योंकि पादाग्रमें मेरे को व्यथाहै
मस्तक में सुखहै इसप्रकार शरीरमें हुये सुख दुःखका समग्र
मेंही अनुभव होताहै ताते, अरु श्रुतिने भी आत्माको सर्वव्य
विभुकहाहै, ताते आत्माको जो अणुपरिमाण कहते हैं सो अ
से श्रुतिबाह्य कहते हैं । अरु स्थूलदेह आत्माहै । अरु सोई
मार्थनत्वहै । इसप्रकार तिस स्थूलकेवेत्ता कोई एक चार्
कहतेहैं । सोभी कल्पनामात्रहीहै, क्योंकि । मृतक अरु सुप्
विषे भी भूतोंके संघातरूप शरीरसे चैतन्य पृथक्ही है शरीर
त्मानहीं ' क्योंकि जिनभूतों का संघात शरीर है सो प्रत्येक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कालइतिकालविदोदिशइति च तद्विदः । वादाइति वादविदोभुवनानीतितद्विदः २४ ॥

को चैतन्यत्वके अभाव से जड़त्व है ताते जड़भूतोंका संघातरूप शरीर काष्ठभारवत् जड़होने से इसको आत्मत्व सम्भवेनहीं। अरु "मूर्त्तइतिमूर्त्तविदो अमूर्त्तइतितद्विदः" "मूर्त्तऐसे मूर्त्त के वेत्ता अरु अमूर्त्त ऐसे तिनकेवेत्ता। कल्पना करते हैं"; अर्थात् त्रिशूलादिकोंके धारणकरता महेश्वर अरु चक्रादिकोंके धारणकरता विष्णु। यह मूर्त्तपदार्थ परमार्थरूप है, ऐसे मूर्त्तकेवेत्ता आगमाभिमानी कल्पना करते हैं, परन्तु सोभी भ्रान्तिमात्रही है क्योंकि मूर्त्तपदार्थ एकदेशी परिच्छिन्न कल्पहोने से नाशवान् होवेहै ताते। अरु सर्वआकार से रहित निःस्वभाव जो अमूर्त्त सो परमार्थरूप है, इसप्रकार तिस अमूर्त्त के वेत्ता शून्यवादी कल्पना करतेहैं, सो भी केवल भ्रान्तिमात्रही है २३ ॥

२४ ॥ हे सौम्य! "कालइतिकालविदोदिशइति च तद्विदः" "काल ऐसे कालकेवेत्ता, अरु दिशा ऐसे दिशाके वेत्ता। कल्पना करते हैं; अर्थात् कालकेवेत्ता जे ज्योतिषी सो कालकोही परमार्थरूपसे कल्पना करतेहैं, परन्तु सो कालभी परमार्थतत्त्वनहीं, क्योंकि कालका एकरूपहोवै तो मुहूर्त्तादि व्यवहार, कि यह मुहूर्त्त श्रेष्ठ है, अरु यह मुहूर्त्त नेष्ट है, तिसकी अयोग्यता है ताते, अरु तिन मुहूर्त्तादि व्यापारकरके कालको श्रेष्ठता अश्रेष्ठता आदिकनानात्व है ताते, अरु कालअन्य विषयोंकरके प्रतीयमान होताहै। अर्थात् वृक्षके पत्र पातहोने से वसंतऋतु ज्ञातहोताहै ताते कालको स्वतन्त्रता अरु। स्वप्रकाशता नहीं। अरु जो परमार्थतत्त्व है सोनानात्वसे रहित एक एकरस सदा स्वतन्त्र स्वयंसिद्ध चैतन्यहै ताते कालके वेत्ताओंका कथन जो 'कालही परमार्थतत्त्वहै, सो भ्रान्तिमात्रही है। अरु स्वरोदयशास्त्र के वेत्ता पूर्वादि दिशाही परमार्थस्तुहै इसप्रकार कहते हैं सोभी भ्रान्तिमात्रही है, अरु "। वादा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनइतिमनोविदोबुद्धिरिति च तद्विदः । चित्तमितिचि
त्तविदोधर्माधर्मौ च तद्विदः २५ ॥

इतिवादविदो भुवनानीतितद्विदः " (वाद ऐसे वादकेवेत्ता, व
भुवन ऐसे तिनकेवेत्ता (कल्पना करते हैं); अर्थात् धातुवादरस
यनशास्त्र) अरु मन्त्रवाद (मन्त्रशास्त्र) इत्यादिवाद परमार्थक
रूप होते हैं, इसप्रकार वादके वेत्ता कल्पनाकरते हैं, सो के
कल्पनामात्रहीहै, क्योंकि ताम्रादिधातु सुवर्णादि अरु सुवर्ण
धातु ताम्रादि भावको प्राप्तहोते एकरसताको त्यागके व्यभिच
हैं अरु ओषधीके योगसे अपने स्वरूप स्वभावको त्यागते हैं,
आकारवान् परिच्छिन्न जड़ अनेकरूप परतन्त्र है, ताते इत्या
दूषणयुक्त लोभका विषय धातु परमार्थतत्त्व होने के योग्य नहीं
अरु मन्त्रवादभी साधककाल आदिक अपनी कारक सामग्री
आधीनहोने से परतन्त्रतादि दोषयुक्तहुये परमार्थतत्त्वरूप होने
योग्य नहीं ("वेदवादरतापार्थ नान्यदस्तीतिवादिनः" "अन
वाचोविमुच्यथ, वाचोविग्लायनथंहि तत्" अरु चतुर्दश भु
वस्तुरूप है, इसप्रकार उन भुवनकोशके वेत्ता कल्पना करते
भी कल्पनामात्रही है क्योंकि सो अदृष्ट अरु विवादका विष
ताते २४ ॥

२५॥हे सौम्य! "मनइतिमनोविदोबुद्धिरिति च तद्विदः" (मन
प्रकार मनकेवेत्ता, अरु बुद्धि ऐसे तिस बुद्धिकेवेत्ता (कल्पना
रते हैं); अर्थात् कोई एकमनकेवेत्ता चार्वाकमतकेभेद विशेषको
वादीपुरुष, मनही आत्मा (परमार्थतत्त्व) है इसप्रकार कल्
करतेहैं, सो उनकाकहना भी भ्रांतिमात्रही है, क्योंकि मनस्व
नहीं, चंचलहै अरु विषयासक्तहुआ विवेकशून्य है, अरु अना
होनेसे घटवत् करणविशेषहैं अरु (जैसे दीपक पदार्थोंको प्रका
है परन्तु दीपकका प्रकाशक तिससे अन्य चक्षुहै, तैसे मन
योंको प्रकाशता है परन्तु उसको जड़होने से उसका सिद्ध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पञ्चविंशकइत्येके षड्विंशइतिचापरे। एकत्रिंशकइत्याहुरनन्तइतिचापरे २६ ॥

प्रकाशक साक्षीआत्मा उससे भिन्नही है। ताते उक्त दोष स्वभाव वाला मन आत्मा। परमार्थतत्त्व होनेके योग्यनहीं। अरु कोई एकजे बुद्धि के वेत्ता बौद्धमत वादी हैं सो, बुद्धिही आत्मा। परमार्थ तत्त्व। है, इसप्रकार कल्पना करते हैं, सोभी भ्रान्ति सेही करते हैं क्योंकि सुषुप्तिविषे ज्ञातसे रहित हुई बुद्धि अपने कारण अविद्या में लय होती है तब बुद्धिकीअभावरूप जड़ अवस्था का प्रकाशक आत्मा पृथक्ही सिद्ध है ताते बुद्धिस्वरूपसेही ज्ञान शून्य जड़ परतन्त्र होने से आत्मा परमार्थतत्त्व होने के योग्य नहीं। अरु "चित्तमितिचित्तविदो धर्माधर्मौ च तद्विदः" चित्त ऐसे चित्तके वेत्ता अरु धर्माधर्म ऐसे तिनके वेत्ता कल्पना करतेहैं; अर्थात् चित्तही आत्मा। परमार्थतत्त्व। है इसप्रकार चित्तके वेत्ता कल्पना करते हैं, सोभी भ्रान्तिमात्रही है, क्योंकि चित्तको अन्तःकरणकी वृत्ति विशेष होने से सोभी उक्तदोष करके अरु क्वचित् स्वस्थ अरु क्वचित् भ्रमी होनेसे परमार्थरूप होनेके योग्य नहीं। अरु जो धर्माधर्मके वेत्तामीमांसक धर्माधर्मकोही परमार्थरूप कहते हैं, सोभी श्रुतिबाह्य होनेसे भ्रान्तिमात्रही है। तथाच "अन्यत्र धर्म्मादन्यत्राधर्म्मात्" इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे परमार्थरूप आत्मा धर्माधर्म से पृथक्ही है २५ ॥

२६ ॥ हे सौम्य! "पञ्चविंशक इत्येके षड्विंशइतिचापरे" पञ्चविंशत्यात्मक ऐसे कोई एक अरु षड्विंशत्यात्मक ऐसे कोई एक कल्पना करते हैं; अर्थात् [प्रधान जो है सो मूलप्रकृति (मूलकारण है) है, अरु महत्तत्त्व अहंकार अरु पंचतन्मात्रा (सूक्ष्मभूत) यह सात प्रकृति विकृति हैं। अर्थात् उक्त जो महदादि सप्त हैं सो अग्रिम कहने के षोडश पदार्थ जो केवल विकृति (कार्य) ही हैं तिनकी अपेक्षा से प्रकृति (कारण) है, अरु पूर्वकहा जो प्रधान मूल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोकाँल्लोकविदःप्राहुराश्रमाइतितद्विदः । स्त्रीपुन्नपुंस
कैलँङ्गाःपरापरमथापरे २७ ॥

प्रकृति तिसकी अपेक्षा से विकृति (कार्य) ही है । अरु पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांचकर्मेन्द्रियां, पांच विषय, अरु एकमन, यह षोडश पदार्थ केवल विकृति (कार्य) मात्रहीहैं । इन षोडश विकृति पदार्थ कहे हैं तिन में जो पंच विषय हैं तिनके स्थान में कोई पंच महाभूतों को भी स्वीकार करते हैं, क्योंकि विषयकोही तन्मात्र कहते हैं सो पूर्व प्रकृति विकृति में कहा है ताते । अरु पुरुष तो सर्व का द्रष्टा रूपही है, वो किसीका भी कार्य्य कारण नहीं। इसप्रकार पंचविंशति संख्यावाला प्रपंच वास्तव है, इसप्रकार सांख्यवादी कहतेहैं, सोभी कल्पनामात्रही है । अरु उक्त पंचबीस तत्त्वसे एक ईश्वर अधिकहोनेसे छब्बीस संख्यावाला प्रपंच परमतत्त्व है इसप्रकार छब्बीसतत्त्वकेवेत्ता पातंजलि कल्पना करते हैं, सो कल्पनाभी अयुक्तहीहै, क्योंकि ईश्वरका पुरुषबिषे अंतर्भावहै ताते, अरु जो ईश्वरका पुरुषबिषे अन्तरभाव नहीं पृथक् है तो ईश्वरको घटवत् अनीश्वरभावकी प्राप्तिका प्रसंगहोता है ताते । अरु "एकत्रिंशक इत्याहुरनन्त इति चापरे" ९ एकतीस ऐसे कहतेहैं, अनन्त ऐसे अन्यकहतेहैं, अर्थात् उक्त पंचबीसतत्त्वसे 'राग, अविद्या, नियति, काल, कला, माया, यह छःअधिकहोनेसे' हुये जो इकतीस संख्यावाला प्रपंच सो वस्तुरूपहै, इसप्रकार पाशुपत मतवादी कहतेहैं, सोभी कल्पनामात्रही है । अरु पदार्थके भेद अनन्तहैं नियमित । कि यह इतनाही है ऐसा । नहीं ताते अनन्तपदार्थ वस्तुरूप हैं, इसप्रकार अन्य मतावलम्बीवादी कहते हैं, सोभी कल्पनामात्रही है २६ ॥

२७॥हे सौम्य! "लोकान् लोकविदः प्राहुराश्रमाइतितद्विदः" लोकोंको लोकके वेत्ताकहतेहैं, अरु आश्रम ऐसे तिनकेवेत्ता । कल्पनाकरते हैं, अर्थात् लोकोंको रंजन (प्रसन्न) करनाही परमतत्त्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सृष्टिरितिसृष्टिविदोलयइति च तद्विदः। स्थितिरिति स्थितिविदःसर्वंचेहतुसर्व्वदा २८॥

ऐसे लोकके वेत्ता कहते हैं, अर्थात् लोकोंको प्रसन्न करनाही परमार्थ तत्त्वहै इसप्रकार लोकके वेत्ता लौकिकजन कल्पना करतेहैं, सो भी विभ्रममात्रही है, क्योंकि लोकोंकी भिन्न भिन्न रुची होनेसे उनके चित्तको अनुरंजन करना ईश्वर करके भी अशक्यहै ताते। अरु दक्षादि आश्रमही परमार्थरूपहैं, इसप्रकार तिन आश्रमोंके वेत्ता कल्पनाकरते हैं, सोभी असत्ही हैं, क्योंकि आश्रम शब्दका अर्थ वेशहै तिस वेशकी शूद्रादिपर्यन्त भी व्याप्तिका प्रसंगादिदोषों की प्रवृत्तिहै ताते। अरु"स्त्रीपुन्नपुंसकंलैंगाः परापरमथापरे" (स्त्री, पुरुष, नपुंसक, लिंगवाले, अरु इतरपर अपरको कल्पना करतेहैं) अर्थात् 'स्त्री, पुरुष, अरु नपुंसक, इनतीन लिंगात्मक शब्दों का समूहही परमार्थरूप है, इसप्रकार वैयाकरणी कल्पना करते हैं, सो भी अयुक्तही है। अरु कोई एक जे अपर अरु पर उभय ब्रह्मके माननेवाले हैं सो कहते हैं कि पर अरु अपर दोनों ब्रह्म परमवस्तु रूपहैं। सो उनका कथन भी यथार्थ नहीं, क्योंकि दो ब्रह्म होनेसे परस्पर में परिच्छिन्नतादि दोषकी प्राप्ति होती है ताते २७॥

२८॥हे सौम्य! "सृष्टिरिति सृष्टिविदो लय इतिच तद्विदः" (सृष्टि ऐसे सृष्टिके वेत्ता, अरुलय ऐसे तिसके वेत्ता कहतेहैं, अर्थात् सृष्टि (जगदुत्पत्ति) ही तत्त्व है इसप्रकार सृष्टिके वेत्ता कहते हैं, वा कोई एकलयके माननेवाले कहते हैं कि लयही तत्त्व है, अरु "स्थिति रिति स्थितिविदःसर्वंचेहतुसर्व्वदा" (स्थिति ऐसे स्थितिके वेत्ता अरु यह सर्वतो सर्वदाहै) ऐसे कहते हैं, अर्थात् स्थितिही परमार्थतत्त्व है ऐसी कल्पना करते हैं, अरु उत्पत्ति स्थिति लय यहही तत्त्वहै, इसप्रकार पौराणिक कल्पना करते हैं, सोभी अयुक्तही है, क्योंकि सत्से असत् की उत्पत्त्यादिकों का अभाव वक्ष्यमाण है ताते, ॥ हे सौम्य! अब [उक्त कल्पनाके अधिष्ठानको सूचित करते हैं]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यं भावं दर्शयेद्यस्य तं भावं सतु पश्यति । तच्च वतिस भूत्वासौ तद्ग्रहः समुपैति तम् २९ ॥

उक्त अनुक्त । अर्थात् जो कहे सो, अरु नहीं कहे सो । यावत् क
ल्पना के भेद हैं, सो सर्व यहां इस आत्माविषे तो सर्वदा कल्प
नावस्थाविषे कल्पना करते हैं, परन्तु । जिस कल्पक से यह क
ल्पितहैं तिस । आत्मा को कल्पितपना नहीं, क्योंकि जो आत्म
भी कल्पित होय तो सर्व कोही कल्पित होनेसे सर्व कोही अधि
ष्ठानपनेकी अयोग्या प्राप्तहोती है ताते अरु । जो सर्वका कल्प
आत्मा है सो कल्पित नहीं क्योंकि जिसको आत्मा का कल्प
मानेंगे सो आत्मा करके कल्पितही होगा, अरु जो कल्पित होग
तिसको असत होनेसे उसविषे कल्पकपने का असंभव है । अ
अनवस्था दोष भी आवता है ताते । प्राणरूप प्राज्ञ सर्वका बीज
रूप है, तिसके कार्य के भेदही अन्यस्थिति पर्यन्त । अपने का
रण के लक्षण से भिन्न कार्यपने के लक्षण की स्थिति पर्यन्त । प
दार्थ हैं, अरु अन्य सर्व लौकिक प्राणियों की सर्व कल्पना के क
ल्पित भेद हैं, सो जैसे रज्जुविषे सर्प, तैसे तिनसे रहित आत्म
विषे, आत्मस्वरूप के अनिश्चय की हेतु जो अविद्या तिस अविद्य
करके कल्पित है । यह २१, वें श्लोक से २८, वें श्लोक पर्यन्त
नव श्लोकोंका समुदायरूप अर्थ है । प्राणादि श्लोकनके एक एक
पदार्थोंके व्याख्यान का अल्पप्रयोजनके हुये प्रयत्न किया नहीं
यह भास्कराचार्य स्वामी की उक्ति है २८ ॥

२९ ॥ हे सौम्य ! "यं भावं दर्शयेद्यस्य तं भावं सतु पश्यति"
जिस पदार्थ के ताईं जिसको देखावे है सो तो तिसको देखताहै
अर्थात् बहुत कहने से क्या है, किन्तु प्राणादिकों के मध्य उक्त व
अनुक्त जिस एक पदार्थ के ताईं जिसको आचार्य वा अन्य अ
सुत । जाग्रत्हुआ । पुरुष "इदमेव तत्त्वमिति" यहही तत्
है ? इसप्रकार देखावता (लखावता) है सो पुरुष तो तिसपदा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतैरेषोऽपृथग्भावैः पृथगेवेति लक्षितः।
एवंयोवेदतत्त्वेन कल्पयेत्सोऽविशङ्कितः३० ॥

को "अयमहमिति वा ममेति" ८यह मैं हूं वा मेरा है> इस प्रकार आत्मरूप देखताहै। अरु तिस देखनेवाले को यह पदार्थ जैसा गुरु आदिकों ने देखायाहै सो तैसा होके उसकी रक्षा करता है, अर्थात् अपने स्वरूपकरके उसको सर्व ओर से रोकताहै। अर्थात् मनुष्योंको आचार्य जिसपदार्थविषे निश्चय करावताहै सो पदार्थ पुनः अपने से अन्य पदार्थोंमें उस पुरुषका निश्चय होने देता नहीं किन्तु अपनी ओरही खींचता है। "तञ्चावाति स भूत्वाऽसौतद् ग्रहः समुपैतितम्" ८तिसविषे आग्रह है सो तिसको प्राप्तहोता है> अर्थात् तिस पदार्थविषे यहही तत्त्वहै ऐसा जो आग्रहरूप अभिनिवेश है सो तिस ग्रहण करनेवाले को प्राप्त होताहै, अर्थात् सो तिसके आत्मभाव को प्राप्त होताहै २९ ॥

३० ॥ हे सौम्य! ८उक्तज्ञानकी स्तुत्यर्थ यह श्लोक कहते हैं> "एतैरेषोऽपृथग्भावैः पृथगेवेति लक्षितः"। ८इन अपृथक्भावों से यह पृथक्ही है ऐसे लक्ष्यकरायाहै> अर्थात् इन प्राणादि आत्मा से अपृथक् भूतकरके अपृथक्भावों से यह आत्मा सर्पादिक कल्पनारूप भावोंसे रज्जुवत् पृथक्ही है, इसप्रकार लक्ष्यकराया है अर्थात् रज्जुके आश्रय कल्पितसर्प रज्जुसे अपृथक्हुआ भावरूप है, परन्तु उस कल्पित सर्पादिकों से अकल्पित सत्यरूप रज्जु पृथक्ही है 'अर्थात् कल्पितसर्पका आश्रय होने से उस अधिष्ठानरूप रज्जुका उस सर्पविषे अन्वयहै,अरु उस अकल्पित अधिष्ठानरूप रज्जुविषे अध्यस्त सर्प का व्यतिरेकहै, तैसे आत्मरूप अधिष्ठानके आश्रय कल्पित अरु अधिष्ठान से अभिन्न भावरूप प्राणादिक तिसविषे आत्मा का आश्रयरूप से अन्वय है, अरु उन कल्पित प्राणादिकों का अकल्पित आत्मरूप अधिष्ठानविषे व्यतिरेकहै, ताते वो सत्यरूप आत्मा कल्पितभावरूप प्राणादिकों से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पृथक्ही है, इसप्रकार आचार्य ने लक्ष्यकराया है । तथापि मू
पुरुषों करके अलक्षितही है " विमूढानानुपश्यन्ति " । अर्थ
कल्पित प्राणादिकों की स्वाधिष्ठान आत्मा से पृथक् सत्ताके
भावसे सो आत्मरूपही है, परन्तु सो अविवेकी को तैसा भा
ता नहीं । अरु विवेकी पुरुषों को, रज्जुविषे कल्पित सर्पादि
वत् प्राणादिक आत्मा से पृथक् नहीं । अर्थात् जो जिसके आ
श्रयभासताहै तिसकी स्वसत्ताके अभावसे वो अपने आश्रयसे
पृथक्हुआ सोई रूपहै, इसप्रकार "पश्यन्तिज्ञानचक्षुषः" विवे
पुरुष देखते हैं । यह अभिप्राय है ॥ "इदंसर्वं यदयमात्मेति" य
सर्वपदआत्मा है? इस श्रुतिप्रमाण से । "एवं यो वेदतत्त्वेन कल्
येत्सोऽविशंकितः" । इसप्रकार तत्त्वसे जानताहै सो शंकारहि
हुआ कल्पताहै? अर्थात् जो उक्तप्रकार [उक्त प्रकारके ज्ञा
वाला जो पुरुषहै सो वेदका किंकर होतानहीं, किन्तु सो वेद
जिस अर्थको कहताहै सोई वेदार्थहोता है यह अर्थहै] रज्जु
र्पवत् आत्माविषे कल्पित अनात्म पदार्थोंके स्वाधिष्ठानसे पृथ
हुये असत्भावको, अरुकल्पना कल्पितसेरहितनिर्विकल्पसा
धिष्ठान आत्माके । सद्भाव । को जोपुरुष । आत्मज्ञान (महा
वाक्यार्थज्ञान) रूप तत्त्वकरके श्रुतिके वाक्य प्रमाणसे अ
अनुभव युक्तिप्रमाणसे जानताहै, सो शंकारहित हुआ यह वाद
इसके अर्थ के परहै, अरु यह अन्य अर्थ के परहै, इसप्रकार नि
भागसे वेदार्थ को कल्पताहै । अरु यहां । इसअर्थविषे मनुमह
राजका वचन प्रमाणहै " नह्यनध्यात्मविद्वेदान् ज्ञातुं शक्नो
तत्त्वतः । नह्यनात्मवित्कश्चित्क्रियाफलमुपाश्नुत, इति मनु
चनम् ,, ' अध्यात्मतत्त्व का न जाननेवाला वेदों को तत्त्वका
जानने को समर्थहोता नहीं, अरु कोई भी अनात्मवेत्ता क्रि
(प्रमाण) के फल (तत्त्वज्ञानको पावतानहीं) यह मनुमहारा
का वचनहै ३० ॥

३१ ॥ हे सौम्य! [जिनयुक्तियोंकरके इस वैतथ्याख्यप्रकरणवि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्नमायेयथादृष्टे गन्धर्वनगरंयथा । तथाविश्वमिदंदृष्टं वेदान्तेषुविचक्षणैः ३१ ॥

द्वैतका मिथ्यापना कहाहै तिनयुक्तियोंको प्रमाणके अनुग्रहकरके युक्त होनेसे तिनकीयथार्थता निश्चयकरनेकेयोग्यहै, ऐसे कहतेहैं] जो यह द्वैतका असद्भाव युक्तिसे कहा सो वेदान्त (उपनिषद्)के प्रमाणसे निश्चितहै, इसप्रकारकहते हैं।"स्वप्नमायेयथादृष्टेगन्धर्व नगरंयथा" ६ जैसे स्वप्न माया देखे हैं,जैसे गन्धर्वनगर (देखेहैं?, अर्थात् स्वप्न अरु माया (इन्द्रजालीकृतकौतुक) असत् वस्तु रूप असत्य हैं, तथापि सो अविवेकी जनोंकरके सत्वस्तुरूप हुये-वत् लखने में आवताहै, अरु सो (स्वप्न, माया) विवेकी जनोंकरके असत्रूप लखनेमें आवता है (अर्थात् जो पुरुष स्वप्न अरु मायाके वर्त्तमानकालमेंही यह स्वप्न अरु माया ही है, इसप्रकार यथार्थ अनुभवसे सम्यक् प्रकार जानता है सो उनको असत्यही मान-ता है (अरु जैसे जहां तहां स्वपाणि प्रसारितवत् प्रकटताको प्राप्तहुये क्रयविक्रय करने योग्यादि रूप पदार्थों करके सम्पन्न हट्टों (बजारों) करकेयुक्त गृहगोपुर अट्टालियां प्रासादादि अरु स्त्री पुरुष पशु आदिरूप व्यवहारों करके पूर्णहुयेवत् सत्रूप करके देखाहुआ ही गंधर्वनगर अकस्मात् ही अभावको प्राप्तहोता देखाहै (तथा विश्वमिदंदृष्टंवेदान्तेषु विचक्षणैः" ६तैसेयह विश्व देखा है वेदान्त बिषे विचक्षण (पुरुषों (करके ?, अर्थात् जैसे स्वप्न जगत्, मायावी की माया, अरु गन्धर्व नगर, यह प्रत्यक्ष भासते संते भी असत्यही हैं, तैसे ही यह विश्वभी देखा है 'प्रश्न' कहां किन्होंने देखा है 'उत्तर' कहते हैं; " नेहनानास्ति किञ्चन" "इन्द्रोमायाभिः" " आत्मै वेदमग्र आसीत्" "ब्रह्मै वेदमग्र आसीत् " " सत्त्वेव सौम्येदमग्र आसीत्" " द्विती-याद्वैभयंभवति " " नतुतद्द्वितीयमास्ति " " यत्रत्वस्य सर्व्व मात्मैवाभूदित्यादिषु " ८ यहां नाना कुछभी नहीं । परमात्मा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न निरोधो नचोत्पत्तिर्नबद्धोनचसाधकः । नमुमुक्षु
वैमुक्तइत्येषापरमार्थता ३२ ॥

माया करके नानारूप को प्राप्तहोता है । यह आगे आत्मा
था । यहआगेब्रह्महीथा । हे सौम्य! यहआगे एकसत्हीथा । दूसरे
निश्चयकरके भयहोताहै । सो द्वितीय तोहै नहीं । जहां तो इस
सर्वआत्माही होताहुआ। इत्यादि उपनिषद्रूप वैदान्तबिषे लक्षि
जे एक परमार्थ वस्तुके देखनेवाले अत्यन्त निपुणतर साक्षा
आत्मानुभवी आत्मवेत्ता पंडितरूप विलक्षण पुरुषकरके देखाहै
तथाच "तमः श्वभ्राभिभंदृष्टं वर्षबुद्बुदसन्निभं, नाशप्रायं सु
क्षीनंनाशोत्तरमभावगमितिहि "> मन्द अन्धकारबिषे स्थितरू
बिषे भूच्छिदादिकों के तुल्य अरु वर्षा बुद्बुदके तुल्य नाशका
ग्रस्त सुखसेहीन नाशोत्तर अभावरूपताको प्राप्त होनेवा
विश्व विवेकियों करके दृश्य है, इस व्यास स्मृति के प्रमाणसे
द्वैत वस्तु का असद्भावही निश्चित है ३१ ॥

३२ ॥ हे सौम्य! <प्रमाणअरु युक्तिसे द्वैतके मिथ्यापनेके सा
करके, अद्वैत ही पारमार्थिक है, इसप्रकार सिद्धहुये, तिसनिश्च
किये अर्थको इस श्लोक बिषे संक्षेप से कहते हैं ? अब । इसी
तीय प्रकरणकी समाप्तिके अर्थ यह श्लोक कहतेहैं । जबद्वैतमिथ्
है अरु एक अद्वैत आत्माही परमार्थसे सत्रूपहै तब यह सि
हुआ कि " न निरोधो नचोत्पत्तिर्न बद्धोनच साधकः, न मुमु
नवैमुक्त इत्येषा परमार्थता " < निरोध नहींपुनः उत्पत्तिभी न
बद्धनहीं, साधकनहीं मुमुक्षु नहीं, मुक्त नहीं, यह परमार्थ
नहीं अर्थात् यह सर्वलौकिक अरु वैदिक व्यवहार अविद्या
विषय । अज्ञान पर्यन्त । है तब निरोध कहिये प्रलय सो नहीं,
त्पत्ति कहिये जगत् का जन्म सो भी नहीं, अरु जब जगदुत्प
नहीं तब बद्ध कहिये संसारीजीव सो भी नहीं, अरु जब बद्ध
तब साधक कहिये मोक्षार्थ साधन करनेवाला सो भी नहीं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुमुक्षु कहिये साधन सम्पन्न मोक्षकी इच्छावाला सो भी नहीं, अरु जब बद्धसे मुमुक्षु पर्यन्त नहीं तब मुक्त कहिये सर्व बन्धनों से छूटा पुरुष सो भी नहीं। इस प्रकार उत्पत्ति प्रलयके अभाव से बद्धादिक कुछभी हैं नहीं, यह परमार्थता है॥ [उक्तार्थको ही प्रश्नोत्तर से विस्तार करते हैं] प्रश्न। उत्पत्ति अरु प्रलय का अभाव कैसे है, उत्तर। इस द्वैतके असद्भावसे उत्पत्ति अरु प्रलय का अभाव है, क्योंकि "यत्राहि द्वैतमिव भवति, तदितर इतरं पश्यति" "य इहनानेव पश्यति" "आत्मैवेदं सर्वम्" "ब्रह्मैवेदंसर्वम्" "एकमेवाद्वितीयमिदं सर्व्वम्" "सर्व्वं खल्विदंब्रह्म" "यदयमात्मा" "नेहनानास्ति किञ्चन" ८ जहांही द्वैतवत् होता है तहां और का और देखता है, जो यहां। एक अद्वैत आत्म तत्त्वबिषे। नानात्ववत् देखता है, आत्माही यह सर्व है, ब्रह्मही यह सर्व है, एकही अद्वितीय यह सर्व है, निश्चय करके सर्व ब्रह्मही है, जो यह आत्मा है, इत्यादि अनेक श्रुतियों करके द्वैत का असद्भाव ही सिद्ध है। अरु सत्वस्तुकीही उत्पत्ति वा प्रलय होती है, शशशृंग। खरहाके सींग। आदिक असत्पदार्थों की उत्पत्ति प्रलयहोवे नहीं अरु अद्वैतवस्तु भी उत्पत्ति वा लय होती नहीं। अर्थात् जो वस्तु उत्पत्ति अरु लय होती है सो दूसरेकी हेतुवाली है, क्योंकि जो उपजती है सो अपने से इतर कारण से उपजती है अरु दूसरे में ही लीन होती है ताते। अरु अद्वैत है सो उत्पत्तिवालाभी है यह कहना विरुद्ध है। एतदर्थ ही जो पुनः प्राणादिरूप अद्वैतका व्यवहारहै सो रज्जु बिषे सर्पवत् आत्मा बिषे कल्पितहै, इस प्रकार कहाहै अरु रज्जु सर्पादिरूप जो मनकी कल्पना है तिसके रज्जु बिषे उत्पत्ति वा प्रलयनहीं है, अरु तैसेही मनबिषे रज्जु सर्पकी उत्पत्ति वा प्रलय नहीं है। अरु रज्जु अरु मन दोनों से भी नहीं है तैसेही द्वैत को मनकी कार्यताके अविशेषसे। अर्थात् द्वैत प्रपंचको मनकी कार्यतारूप विशेषके अभाव से। तिस द्वैतकी उत्पत्ति वा प्रलयबने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं । अरु जिस करके निरोध किये । अफुरहुये । मनबिषे
सुषुप्तिबिषे द्वैत देखतेनहीं । एतदर्थ मनकी कल्पनामात्रही द्वैत
यह सिद्धहुआ । तातेही कहाहै कि द्वैतके सुसद्भावसे निरोधादि
कों का अभाव परमार्थता है, ॥ हे सौम्य! जब उक्तप्रकार द्वैत
अभाव बिषे शास्त्रका व्यापार है, द्वैतबिषे नहीं, क्योंकि अभाव
बोधन बिषे व्याप्तजो शास्त्र तिसका भाव के बोधनबिषे व्याप
होनेका विरोधहै तातें। अरु तैसेहुये । अर्थात् अभाव बोधकशास्त्र
को भावबोधनसे विरोधहुये । अद्वैतकी वस्तुरूपताबिषे प्रमाण
अभावहुये अरु द्वैतके अभावहुये शून्यवादका प्रसंगप्राप्त होवेगा
। जहां वादी की ऐसी शंका है । तहां सिद्धांती समाधान कहैं
यह वादी का कथन बने नहीं, क्योंकि जैसे रज्जु सर्पादिकों की
कल्पना को निराश्रयता का असंभव है । अर्थात् रज्जु सर्पादि
यावत्कल्पनाहै सो निराश्रयहोतीनहीं । तैसेही द्वैतकीकल्पनाको
अधिष्ठान (आश्रय) से रहितपने का असंभव है तातें, एत
दर्थ तिस द्वैत का अधिष्ठान होनेकरके अद्वैत आस्था करने
योग्यहै । इस प्रकार ॐकारके प्रकरणबिषे इसशंकाकासमाधान
हमने कियाहै तिसको तू पुनः कैसे उठावताहै ॥ । यह सिद्धान्तीके
कहनेपर शून्यवादी । कहता है कि सर्पादि सर्व विकल्पोंकी आश्र
य रूप जो रज्जु सोभी तुम्हारे मतबिषे कल्पितहीहै, इस प्रका
दृष्टान्त का सम्भव है, । सो वादी का कथन बने नहीं, क्योंकि
कल्पनाके क्षयहुये अवशेष रही अवधिरूप सत्ताको रज्जु आदि
कों बिषे देखतेहैं तातें । अरु द्वैतभ्रमके बोधका साक्षी होने करके
जो स्फूर्त्तिमात्र चैतन्य है तिसको अकल्पित होने करकेही सद्भाव
का सम्भव है तातें शून्यभावकी प्राप्ति है नहीं ॥ अरु जो कदाचि
ऐसा कहे कि रज्जु सर्पवत् अद्वैत का असद्भाव है, सो भी बने
नहीं, क्योंकि आत्मा । भ्रमरूप न होके । भ्रमका साक्षी है तातें
सर्प के अभावके (भ्रान्ति) ज्ञानसे पूर्व अकल्पित रज्जुके अंश
वत् नियमसे अकल्पितहै तातें । अरु कल्पनाके कर्त्ताको कल्पना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की उत्पत्ति से पूर्व सिद्ध होनेके अंगीकारसे ही तिसके असद्भाव का असम्भव है। अर्थात् कल्पना के कर्त्ता की कल्पनासे पूर्व अरु पश्चात् सिद्धि होने से अरु कल्पना के भावाभाव का साक्षीहोने से तिसका असद्भाव कदापि सिद्ध होवे नहीं। अरु जो ऐसाकहे कि अद्वैत स्वरूप बिषे व्यापारके अभावहुये पुनः शास्त्रको द्वैतके ज्ञानकी निवर्त्तकता कैसे होवेगी, सो दोषभी नहीं, क्योंकि रज्जु बिषे सर्पादिकों वत् आत्माबिषे द्वैतको अविद्या करके अध्यस्तपना है ताते अरु अध्यस्त द्वैतके निवर्त्तक शास्त्रको भी अध्यस्त पना है ताते। । प्रश्न। आत्माबिषे द्वैतका अध्यस्तपना कैसेहै। उत्तर। जन्माहौं, सुखीहौं, दुःखीहौं जीर्णहुआहौं, मरताहौं, मूढ़हौं देहवान् हौं, देखताहौं, स्थूलहौं, सूक्ष्महौं, कर्त्ताहौं, भोक्ताहौं, संयोग वियोगवान्हौं, वृद्धहौं, जर्जरहौं, यह मेराहै मैं इसकाहौं, इत्यादि सर्व विकल्प आत्माबिषे अध्यस्तहोवे है। जैसेसर्प जलधारादिक भेदों बिषे अव्यभिचारसे रज्जु अनुगत है। तैसे सर्वत्र अव्यभिचारसे इनबिषे आत्मा अनुगतहै। जब इसप्रकार विशेष्य के स्वरूपकी प्रतीतिको सिद्ध होनेसे, शास्त्रसे कर्त्तव्यताहै नहीं, अरु अकृतवस्तुका कर्त्ता जो शास्त्र है सो कृतवस्तुके अनुसारीपने के हुये अप्रमाणहोवेगा। अरु जिसकरके आत्माका अविद्या से आरोपित सुखीपनादिक जे विशेष प्रतिबन्ध तिसके स्वरूपसे अनवस्थान, अरु स्वरूपसे अवस्थान श्रेय है, ताते सुखीदुःखीपने आदिकोंका निवर्त्तक जो शास्त्र है सो "नेति नेति" "अस्थूलमनएवं" इत्यादिक श्रुतिवाक्यों से आत्माबिषे असुखीपने आदिकोंकी प्रतीतिके करने से आत्मस्वरूपवत् असुखीपनादिक भी सुखीपने आदिक भेदोंबिषे अनुगतधर्म नहीं है, अरु जब अनुगतहोय तब सो सुखीपनेआदिकरूप विशेष आरोपित न होगा। जैसे उष्णतारूप गुणविशेषवाले अग्निबिषे शीतता है तैसे। एतदर्थतिस निर्विशेषही आत्माबिषे सुखीपने आदिक विशेष कल्पितहै। अरु जो आत्माके असुखीपने आदिकों का जो प्रतिपादक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भावैरसद्भिरेवायमद्वयेनचकल्पितः । भावाअप्यद्वै
नैव तस्मादद्वयताशिवा ३३ ॥

शास्त्रहै, सो तिसके सुखीपने आदिक विशेषकी निवृत्ति
अर्थही है, यह सिद्धहुआ, । यहां "सिद्धन्तु निवर्तकत्वात्" ऐसा
है निवर्त्तक होनेसे" इसप्रकार वेदकेवेत्ता द्रविडाचार्य्य का सू
प्रमाणहै ॥ [यहां इस सूत्रका यह अर्थ है कि ब्रह्म बिषे पदों
प्रवृत्ति के अभाव हुयेभी शास्त्रका प्रमाणिकपना सिद्धही
क्योंकि अभावके बोधनबिषे प्रवृत्त "नञ् (नकार)" पदका
युक्त स्थूलादिक अर्थवालेपदों से स्वाभाविक द्वैत के अभाव
बोधन करके अध्यस्त का निवर्त्तकहै ताते,] ३२ ॥

३३ ॥ हेसौम्य ! [निरोधादिक सर्व विशेषके अभावकरके उ
लक्षित जो वस्तुहै सो वास्तव रूप है, ऐसा उक्त श्लोक का अ
है । तिसको सामान्य विशेष वस्तुबिषे विशेषता से आश्रय कर
निरोधादिकों का सम्यक् साधनरूप होनेसे, तिसके असत्पनेक
शंकाकरतेहैं, तिसहेतुकरके तिसके साधनेकीअपेक्षा होनेसेतिस
लखावनेके परायण यहश्लोकहै]अबपूर्वकहे श्लोकका हेतुकहतें
"भावैरसद्भिरेवायमद्वयेनचकल्पिता" "असत्रूपहीभावोंसे अ
अद्वैत से यह कल्पितहै" अर्थात् जैसे रज्जुबिषे असत्रूप सर्प अ
जलधारादिकों से, अरु सद्रूप अद्वैत रज्जु द्रव्यसे, यह सर्प है
यह जलधारा है वा यह भूदरार है वा यह दण्ड है, इत्यादि प्रका
से रज्जु द्रव्यही कल्पना करते हैं । इसप्रकार ही अविद्यमा
प्राणादिक अनन्त असत् वस्तुओंसेही यह आत्मा कल्पना कर
हैं, परमार्थ से तिनकी सत्तानहीं । अर्थात् आत्मासे इतर प्राण
दिकों की पृथक् सत्ताके अभाव से यह प्राणहै यह मन है यह इ
द्रियहै, इसप्रकार आत्माकोही कल्पते हैं । अरु जिसकरके अचल
संकल्पादि सर्ववृत्तिसे रहित अफुर । हुये मनबिषे कोईभी पदा
किसीकरके भी जाननेको शक्य होतानहीं अरु आत्माका चल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नात्मभावेननानेदं नस्वेनापि कथञ्चन । नपृथङ्ना पृथक्किञ्चिदितितत्त्वविदोविदुः ३४ ॥

कल्पना करने को अशक्यहै, अरु चंचलतासे रहित आत्माकेही प्रतीयमान जो भावहैं सो परमार्थ से सत्रूप कल्पना करने को शक्य हैं नहीं, एतदर्थ असद्रूपही प्राणादि भावोंसे, अरु रज्जुवत् सर्व विकल्पके आश्रयभूत परमार्थ सत्रूप आप अद्वैतसे एकसत् स्वभाव वालाहुआ भी यहआत्मा आपही कल्पितहै। अरु "भावा अप्यद्वयेनैव तस्मादद्वयता शिवा" (भावभी अद्वयसेही कल्पित हैं तस्मात् अद्वयता शिवहै; अर्थात् पुनः वे प्राणादि भाव भी सद्रूप अद्वैत आत्मासेही कल्पित हैं। अरु जिस करके अधिष्ठान (आश्रय) रहित कोई भी कल्पना देखते नहीं, एतदर्थ सर्व कल्पना का अधिष्ठान होनेसे अपने स्वरूपसे अद्वैतताके अव्यभिचारसे कल्पनावस्थामें भी अद्वैतता शिव कहिये कल्याणरूपही है। अरु सो कल्पनाही तो रज्जु सर्पआदिकों वत् (जन्म मरणादि लक्षणरूप) भयकी कारणहै एतदर्थही अशिवरूपहै, अरु (भय का कारण जे कल्पना तिससे पृथक् कल्पनारहित अरु तिनका आश्रय) जो अद्वयता सो जिसकरके अभयरूपहै (क्योंकि "अभयं वै जनकप्राप्तोऽसीति" इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे एक अद्वयरूप आत्माको जाननेवाला अभयरूप अपने आपको प्राप्तहोता है) ताते सोई सर्वका परमकल्याण शिवरूपहै। "विद्वान्न बिभेति कदाचन" ३३ ॥

३४ ॥ हे सौम्य! [किंवा यह नानारूप द्वैत क्या आत्माके तादात्म्य से सिद्धहोताहै, वा स्वतन्त्र सिद्धहोताहै। यह विवेचन करने के योग्यहै। तिनमें प्रथमपक्ष (आत्माकी तादात्म्यता) बने नहीं। यहां यहअर्थहै कि यह नानारूपद्वैत आत्माके तादात्म्यसे सिद्ध होनेकेयोग्य नहीं, क्योंकि परस्परमें विरुद्धस्वभाववाले जे जड़ अरु अजड़ तिनके तादात्म्यका असम्भव है ताते। अरु सर्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वीतरागभयक्रोधैर्मुनिभिर्वेदपारगैः । निर्विकल्पो
ह्ययंदृष्टःप्रपञ्चोपशमोऽद्वयः ३५ ॥

भेदसेरहित जो आत्मा तिससे तादात्म्य के हुये द्वैतके नानाप
की असिद्धिहोवेगी ताते] अद्वैतता शिवरूपकहांसे होवेगी, क्योंकि
जहां अन्य से अन्यका नानारूप भिन्नपना देखाहै तहां अशि
होता है, । ऐसा जो कदापि वादी कहे सो नहीं । क्योंकि
"नात्मभावेन नानेदं न स्वेनापि कथञ्चन" (यह आत्मभाव
नाना नहीं, अपने से भी कदाचिन्नहीं ; अर्थात् जिसकरके इ
परमार्थ से सत्रूप आत्मा बिषे प्राणादिक संसार का समूहरू
यह जगत् आत्मभाव (परमार्थरूप) से नाना कहिये आत्मा
अन्य वस्तुरूप होतानहीं । जैसे रज्जु स्वरूपसे प्रकाशकर निरूप
किया जो कल्पित सर्प सो नानारूप नहीं, तद्वत् । अरु अपने प्राण
दिक स्वरूपसेभी यह जगत् कदाचित्भी विद्यमानहै नहीं, क्योंकि
रज्जु में सर्पवत् कल्पित है ताते, अरु जैसे अश्व से महि
पृथक् ही विद्यमान है, तैसे प्राणादि वस्तु परस्परमें भिन्न नहीं
एतदर्थ "नपृथङ्नापृथक्किञ्चिदितितत्त्वविदोविदुः" (पृथक् अपृथ
कुछ भी नहीं ऐसे तत्त्वके वेत्ता कहते हैं ; अर्थात् । नानात्वको
असत् होने से परस्पर में वा अन्य से कुछ भी पृथक् नहीं, इस
प्रकार परमार्थ तत्त्वके वेत्ता ब्राह्मण जानते हैं । एतदर्थ अशि
की हेतुता के अभाव से अद्वैतता ही शिवरूप है । यह अभि
प्राय है ३४ ॥

३५ ॥ हेसौम्य ! यह जो सम्यक् दर्शन कहा अब तिसकी स्तुति
करते हैं । "। वीतरागभयक्रोधैर्मुनिभिर्वेदपारगैः " (रागभयक्रोध
से रहित मुनि अरु वेदके पारको प्राप्तहुये पुरुषों करके ; अर्थात्
विगतकहिये अभाव हुये हैं राग भय क्रोधादिक सर्व दोष जिनके
। अर्थात् राग भय क्रोधादिक दोष जे सम्यक् आत्मज्ञानकी प्राप्ति
में प्रतिबंधकहैं तिनकाहेतु अविद्या जन्य द्वैतभाव है सो जिसका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मादेवं विदित्वैनमद्वैते योजयेत् स्मृतिम्।
अद्वैतंसमनुप्राप्य जडवल्लोकमाचरेत् ३६॥

एक अद्वैत आत्मज्ञान करके निर्मूल होता है तब रागादि सर्व दोषों का अभाव होता है, इसप्रकार जे रागादि दोष रहित अरु सर्वदा मनन करने के स्वभाववाले मननशील परम विवेकी मुनि, अरु वेदके पारको प्राप्तहुये जे वेदार्थ तत्त्वके ज्ञाता अरु वेदान्तके अर्थबिषे परम बोधवान्, ऐसे पुरुषोंकरकेही "निर्विकल्पो ह्ययं दृष्टः प्रपञ्चोपशमोऽद्वयः" (निर्विकल्प प्रपंचके उपशमवाला अद्वैतरूप यहदेखा (जान्या) है; अर्थात् उक्तप्रकारके मुनि ज्ञानी पुरुषोंकरके सर्व विकल्प से रहित अरु द्वैतभेद के विस्ताररूप प्रपंच के अभाववाला, इसहीसे अद्वैतरूप यह आत्मा देखा जान्या, यथार्थ अनुभवकिया है। इस कहनेका अभिप्राय यहहै कि द्वेषादि दोषरहित वेदांतके अर्थबिषे तत्पर पंडित संन्यासी करकेही परमात्मा देखने। अनुभव करने। को शक्य है। अरु तिनसे इतर रागादि दोषकरके मलिनहुये चित्तवाले, अरु अपने पक्षपातके देखनेवाले तार्किकादिकों करके नहीं "न कर्म्मिणो प्रवेदयन्ते रागात्" "नैषा तर्केण मतिरापनेया" इत्यादि श्रुतियों के प्रमाण से। ३५॥

३६॥ हेसौम्य! "तस्मादेवं विदित्वैनमद्वैते योजयेत् स्मृतिम्" (ताते ऐसे जानके अद्वैतबिषे स्मृतिको जोड़ना; अर्थात्। जिस करके परमार्थरूप अद्वय आत्मा उक्त प्रकारका शिवरूपहै। ताते इसप्रकार (उपनिषदादि वेदान्त। शास्त्रसे सम्यक् प्रकार जानके अद्वैतबिषे स्मृति को जोड़ना (लगावना। अर्थात् अद्वैतके ज्ञानार्थ स्मृतिकरना वा रखना। अर्थात् जबशास्त्र अरु आचार्यकरकेसम्यक् अद्वैततत्त्वका यथार्थ साक्षात् अनुभवपूर्वक उसका दृढ़निश्चयात्मक भाव होताहै तब असत् नामरूप क्रियात्मक जगत् तिसकी सकारणाविस्मृतिरूप निर्विकल्प अवस्थान समाधिसे जब उत्थान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निस्स्तुतिर्निर्नमस्कारो निःस्वधाकार एवच । क
चलनिकेतश्चयतिर्यादृच्छिकोभवेत् ३७ ॥

होवे तब प्रत्यक्ष भासमान जे मृगतृष्णाके जलवत्पञ्चविषयात्म
समस्त जगत् तिसबिषे तिसके अधिष्ठानकी स्मृतिकरना कि
सर्व नानात्मक द्वैत अपने अद्वैताधिष्ठान से इतर नहीं यह जो
रूपहै सो अद्वय अधिष्ठानही सर्वात्मा है, ताते " मत्तःपरतर
न्यत् किञ्चिदस्ति " मुझ सर्वाधिष्ठानसे इतर कुछभी नहीं,
प्रकार अपनी दृढ़ भावनारूप स्मृतिको अद्वैत तत्त्व में जोड़
अरु " अद्वैतंसमनुप्राप्य जडवल्लोकमाचरेत् " (अद्वैत को सम
प्रकार प्राप्तहोके जड़वत् लोकबिषे विचरे ; अर्थात् उक्तप्रक
अद्वैतमें स्मृतिको योजनाकरके । इस अद्वैतको " अहं ब्रह्मास्मि
(मैं ब्रह्महौं) ऐसे सम्यक् प्रकार जानके सर्वलौकिक व्यवह
को त्यागके । केवल शरीर यात्रामात्रके लिये । जड़ (मूर्ख)
हुआ लोकबिषे विचरे । अभिप्राय यह है कि ' मैं इसप्रकार
यहहौं,ऐसे आपको विद्या अरु कुलादिक से अप्रख्यात अरु अ
लक्ष्यको अप्रकट करताहुआ विद्वान् ज्ञानी लोक बिषे विचो
" भैक्षचर्य्यंचरन्ति " ३६ ॥

३७ ॥ हे सौम्य! प्रश्न । पूर्वकहा जो विद्वान् जड़वत्हुआ लो
बिषे विचरे सो । किस आचरण से विचरे, । उत्तर " निस्स्तु
र्निर्नमस्कारो निःस्वधाकारएवच " (स्तुति से रहित, नमस्कार
रहित, स्वधाकारसे रहितही होवे ; अर्थात् । अपने आत्मा से
अन्य देवताओं की स्तुति (आराधनादिक) से रहित होवे, अ
मनुष्यों (ब्राह्मणादिकों) के अर्थ नमस्कारादिकों से रहितहो
अरु पितरों के अर्थ स्वधाकार से रहित होवे । अर्थात् उक्तप्रक
का एकात्मदर्शी विद्वान् , स्तुति यज्ञादि देवकार्य से, अरु नम
स्कार आतिथ्यादि मनुष्यकार्यसे, अरु स्वधाश्राद्धादिक पितृका
से, रहित यती (संन्यासी) ही होवे । अभिप्राय यहहै कि स्तु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नमस्कारादि सर्व कर्म्मों से रहित, अरु तिनकर्मों में प्रवृत्ति के हेतु जे, वित्तैषणा, पुत्रैषणा, लोकैषणा, अर्थात् वित्त पुत्र अरु स्वर्ग लोक, इनकी कामना तिसका अशेषत्यागी हुआ परम हंस परिव्राट् आश्रमको प्राप्तहोवे "एतंवैतमात्मानंविदित्वेत्यादिश्रुतेः" "तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायण इत्यादिस्मृतेश्च" इस प्रसिद्ध तिसआत्माको जानके। अरु तिसविषे बुद्धिवालेतिसरूप तिस विषे निष्ठावाले तिसपरायणहुये इत्यादि श्रुति स्मृतियों के प्रमाणसे। अरु "चलाचलनिकेतश्चयतिर्यादृच्छिकोभवेत्" "चलाचल निकेतवाला यति यादृच्छिकहोवे" अर्थात् चलकहिये क्षण क्षणविषे अन्यथाभावहोनेरूप स्वभाववाला चलशरीर है, अरु निराकार सर्वत्र पूर्णहोने से अचलआत्माहै। ताते जब कदाचित् भोजनादिक व्यापारके निमित्त आकाशवत् अचलरूप आत्मतत्त्व रूप। अपने निकेत, आश्रय, (आत्मस्थिति) को विस्मरण करके। (अर्थात् लोकदृष्टिमात्र विस्मरण करके क्योंकि स्मरण अरु विस्मरण अन्यविषे होताहै ज्ञानोत्तर अपने आप आत्माविषे नहीं। मैंहौं ऐसे मानता है, (वासाधारणलोक उसको यह भोजनआदि करताहै ऐसा मानतेहैं। तिससमय विद्वान् शरीररूप चल निकेत (आश्रय) वाला होताहै, अरु तिस भोजनादि व्यापारसे अन्य कालविषे आत्मतत्त्वरूप अचल निकेतवाला होवेहै। इसप्रकार यह विद्वान् चलाचल निकेतवाला है। परन्तु बाह्य विषयों के आश्रयवाला नहीं। अरु सो विद्वान् यादृच्छिक होवे है, अर्थात् यदृच्छा जो दैवगति तिससे प्राप्तहुये (अर्थात् विनायत्नकेअनाश्रित प्राप्तहुये। कोपीन आच्छादन अरु ग्रासमात्र से देहकी स्थितिवाला होवे ३७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्त्वमाध्यात्मिकं दृष्ट्वा तत्त्वं दृष्ट्वातु बाह्यतः । तत्त्व
भूतस्तदारामस्तत्त्वादप्रच्युतो भवेत् ३८ ॥

इति गौडपादीयकारिकायां वैतथ्याख्यंद्वितीयं
प्रकरणं समाप्तम् ॥

३८ ॥ हे सौम्य!["अहमेवपरंब्रह्म नमत्तोऽन्यदस्ति किञ्चिदि
ति " । मैंही परब्रह्महौं मुझसे अन्य रंचकमात्रभी कुछनहीं। इ
प्रकार की स्मृतिका सन्तान कहिये प्रवाह करना । अर्थात् आ
वास्तविक आत्मरूपका अनुसंधानरूप स्मरण प्रवाहरूपसेकरना
सोकोई एककालविषे करना ऐसा नियमित नहीं, किन्तु निरन्त
करनेको योग्यहै । " निमेषार्द्धं न तिष्ठन्ति वृत्ति ब्रह्मण
विना " । ऐसेकहाहै । इसश्लोकका यह अर्थहै कि शरीरादि
कल्पित आध्यात्मिक वस्तुको अधिष्ठानमात्र देखके, अरु शरी
से बाह्यवत् स्थितहुये पृथिव्यादिकों को कल्पितपने करके आ
स्तुरूप होनेसे सो अधिष्ठानही है इतरनहीं, इसप्रकार अ
भव करके आप द्रष्टा पुरुषभी परमार्थ वस्तुके स्वभावको प्रा
हुआ, तहांही आसक्त चित्तवाला, अरु बाह्य विषयोंसे निवृत्तिबु
वाला हुआ तिसही परमार्थ तत्त्वबिषे स्थितहुआ तिसके ज्ञा
बिषे स्थितहोवेहै] " वाचारंभणं विकारोनामधेयमित्यादि श्रुते
वाणीसे उच्चारण किया विकार नाममात्रहीहै> इत्यादि श्रु
प्रमाणसे, " तत्त्वमाध्यात्मिकंदृष्ट्वा तत्त्वं दृष्ट्वातु बाह्यतः
आध्यात्मिकको तत्त्वदेखके, अरु बाह्यको तो तत्त्वदेखके, अर्थ
रज्जुसर्पवत् अरु स्वप्न मायादिवत् असत् शरीर प्राण इन्द्रियादि
रूप अध्यात्म , अन्तरवस्तु, को तत्त्व (अधिष्ठान) स्वरूप देख
के । अरु शरीरादिकोंकी अपेक्षासेबाह्य पृथिव्यादिरूप वस्तु
को भी तत्त्व (अधिष्ठान) स्वरूप देखके, "सबाह्याभ्यन्तरोह्यज
" अपूर्वोऽनपरोऽनन्तरोऽबाह्यः " " कृत्स्नघन " " आकाशव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वगतः" "सूक्ष्मोऽचलो, निर्गुणो, निष्कलो, निष्क्रियः" "तत् सत्यं स आत्मा तत्त्वमसीतिश्रुतेः" ८ बाह्यान्तर सहित अजन्माहै, अपूर्व है अनपरहै अनन्तरहै अबाह्यहै, सम्पूर्णहै, आकाशवत् सर्वगतहै, सूक्ष्महै, अचलहै, निगुणहै, निष्कलहै, निष्क्रिय है, सो सत्है सो आत्माहै सो तू है ? इत्यादि श्रुतियोंकी एक वाक्यतासे, "तत्त्वीभूतस्तदारामस्तत्त्वादप्रच्युतोभवेत्" ९ तत्त्व रूप अरु तिसविषे रमणवाला तत्त्वसे अप्रच्युत होवे ? अर्थात् उक्तप्रकार तत्त्वकी दृष्टिसे तत्त्वस्वरूप अरु तिसविषे रमणवाला, अरु बाह्यविषयों विषे अरमणवाला हुआ तत्त्वसे अचलित होवे। 'जैसे कोई एक अतत्त्वदर्शी चित्तको आत्मतत्त्वकरके जानता हुआ चित्तके चलने पीछे आत्माको चलितहुआ मानता सता 'अभी मैं आत्मतत्त्वसे चलितहुआहौं, इसप्रकार देहादिरूप आत्माको चलितहुआ मानताहै। अरु चित्तके एकाग्रहुये कदाचित् 'अभी मैं तत्त्वरूप हुआहौं, इसप्रकार प्रसन्नहुये चित्तरूप आत्माको तत्त्वरूप मानताहै। तैसे आत्मवेत्ता होवे नहीं, क्योंकि आत्मा एकरूप एकरसहै ताते उसका स्वरूपसे चलना असंभव है। किन्तु "अहंब्रह्मास्मीति" मैं ब्रह्महौं इसप्रकार। ब्रह्मानुसंधान करताहुआ। सदैव तत्त्वसे अप्रच्युत (अचलित) होवे। अभिप्राय यहहै कि सदा अचलित आत्माके दर्शन (अनुभव) वालाहोय। "समोनागे समोमशके" "शुनिचैव श्वपाकेच। समं सर्वेषु भूतेषु" ८ हाथी अरु मच्छर बिषे समानहै। श्वान विषे अरु चांडालबिषे पंडित समदर्शी है। अरु सर्व भूतों बिषे समस्थितहोनेवाले आत्मरूप परमेश्वरको। विद्वान् आत्मनिष्ठ अनुभवकरताहै। इत्यादि श्रुति अरु गीतास्मृति के प्रमाणसे ३८ ॐ तत्सत्॥

इति श्रीगौडपादाचार्यकृतमांडूक्योपनिषद्कारिकायां वैतथ्याख्य द्वितीयप्रकरण भाषाभाष्य समाप्तम् २॥

ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु॥ हरिः ॐ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

अथ अद्वैताख्यं तृतीयप्रकरणं प्रारभ्यते ॥

उपासनाश्रितोधर्म्मो जातेब्रह्मणि वर्त्तते । प्रागुत्
त्तेरजं सर्व्वं तेनासौ कृपणः स्मृतः १ । ८० ॥

अथगौडपादाचार्य्यकृतकारिकायामद्वैताख्यतृती-
यप्रकरणभाषाभाष्यंप्रारभ्यते ३ ॥

हे सौम्य! [पूर्व तर्क (युक्ति) से द्वैतके मिथ्यापने के निरू
को समाप्त करके, अब परमार्थ तत्त्वरूप अद्वैतको युक्ति का
निश्चय करावने को अद्वैतनामवाले तृतीय प्रकरणके आरंभका
को इच्छते हुये आचार्य प्रथम उपास्य अरु उपासक इस भे
दृष्टिकी निंदा करते हैं] प्रथम प्रकरण बिषे ॐकार के निर्ण
में । " प्रपञ्चोपशमः शिवोऽद्वैत आत्मेति " ८ प्रपञ्चके उपश
वाला शिव अद्वैत आत्मरूप है ? इन विशेषणों करके आत्
प्रतिज्ञामात्रसे अद्वैतरूप कहा । अरु तहां प्रथम प्रकरण
षेही " ज्ञाते द्वैतं न विद्यत इति च" ८ जानेहुये द्वैत है नहीं
इस स्थलमें प्रतिज्ञामात्रसे द्वैतकाअभाव कहा, सो द्वैतका अभ
तो द्वितीय वैतथ्याख्य प्रकरणसे ,स्वप्न, माया, गंधर्वनगर, इत्या
दृष्टान्तरूप अरु दृश्यपने आदिक अन्तवान्पने आदिक हेतु
युक्तिसे प्रतिपादन किया । अरु इसबिषे प्रतिपादन करने यो
अवशेष है नहीं ॥ प्रश्न ॥ क्या अद्वैतवस्तु शास्त्रमात्रसेही जान
योग्य है किंवा तर्कसे भी जानने योग्य है ॥ उत्तर ॥ तहां कहते
अद्वैतवस्तु तर्क से भी जानने को शक्य है ॥ प्र० ॥ सो अ
वस्तु तर्क (युक्ति) से कैसे जानने को शक्यहै, ॥ उत्तर ॥ त
कहते हैं, इस अर्थके जानने के अर्थ । अर्थात् युक्तिसे भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अद्वैत तत्त्वके जानने के अर्थ। अद्वैत संज्ञक तृतीय प्रकरण का आरंभकरतेहैं। पूर्वके द्वितीय प्रकरणविषे उपास्य अरु उपासना आदिक भेदोंका समूह सर्वमिथ्याहै अरु केवल अद्वैत आत्मा परमार्थ सत्यरूप है, इसप्रकार सिद्धहुआ है, एतदर्थ यहां आरंभ विषे उपासककी निन्दा करतेहैं "। उपसनाश्रितोधर्मो जातेब्रह्मणिवर्तते, प्रागुत्पत्तेरजं सर्व्वं तेनासौ कृपणः स्मृतः "। ६ धर्म्म उत्पन्नहुये ब्रह्मविषे वर्त्ताहै उत्पत्तिसे पूर्वसर्व अजन्माथा उपासनाको आश्रितहुआ तिससे यह कृपण चिन्तन कियाहै? अर्थात् देहके धारणसे धर्म जो जीव सो। आकाशादि। भूतोंके समुदाय के आकारसे उत्पन्न हुये ब्रह्मविषे तिसका अभिमानी होके वर्त्तता है। सो उत्पत्तिसे पूर्वसर्व अजन्माथा, इसप्रकार कालकरके परिच्छिन्न वस्तुको मानता है। सो [जीव] पुनः उपासना को पुरुषार्थका साधन जानके तदाश्रितहुआ देहपात हुये पश्चात् तिसही ब्रह्मको प्राप्तहोवोंगा, इसप्रकार जिसकारण से मिथ्या ज्ञानवान् होयके स्थित होवेहै, तिसकारणसे यह ब्रह्मवेत्ता पुरुषों ने कृपण (अल्प) चिन्तन कियाहै। हे सौम्य! इसका यह अभिप्रायहै कि उपासनाके आश्रितहुआ। अर्थात् उपासनाको अपने मोक्षकासाधन मानके प्राप्तहुआ "उपासकोऽहं ममोपास्य ब्रह्म, तदुपासनं कृत्वाजाते ब्रह्मणि इदानीं वर्त्तमानोऽजं ब्रह्मशरीर पातादूर्ध्वंप्रतिपत्स्ये प्रागुत्पत्तेश्चाजामदं सर्वमहंच " ७मैं उपासकहूं मेरा उपास्य ब्रह्म है तिसकी उपासनाकरके अवभूतों के संघातके आकार से उत्पन्नहुये ब्रह्म विषे वर्त्तमानहौं, अरु शरीर के पतनहुये पश्चात् अजन्मा ब्रह्मको प्राप्तहोवोंगा, अरु उत्पत्ति से पूर्व अवस्था विषे यह सर्व अजन्माथा अरु मैं भी तैसाही अजन्माथा। इसप्रकार जिसकरके उपासक मानता है एतदर्थ पूर्वावस्थावाले ब्रह्मको विषयकरनेवाली अजन्मापनेकी श्रुति बने है। अब " इदानींजातोजातेब्रह्मणिचवर्त्तमानउपासनयापुनस्तदेव प्रतिपत्स्यइत्येवउपासनाश्रितोधर्म्मः " ८ उत्पत्ति अनन्तर विषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतोवक्ष्याम्यकार्पण्यमजातिसमताङ्गतम् । यथा न जायते किञ्चिज्जायमानं समं ततः २ । ८१ ॥

मैं जन्मको पाया हौं, अरु इस स्थित अवस्थाविषे उत्पन्नहुये ब्रह्मविषे । अर्थात् भूतोंके संघातरूप शरीराकारसे उत्पन्न हुये ब्रह्मविषे । वर्त्तमानहौं, अरु उत्पत्ति से पूर्व जिसरूपवाला हुआ स्थित था तिसही को पुनः प्रलय अवस्थाविषे उपासनासे प्राप्त होवोंगा । इसरीति से उपासना के आश्रित हुआ साधक जीव सो जिस हेतुसे इसप्रकार करके अल्प ब्रह्मका वेत्ता है तिसही हेतुसे यह नित्य अजन्मा ब्रह्म के दर्शी (अनुभवी) महात्मा पुरुषों ने । उक्तप्रकार के उपासक को । कृपण, दीन, अल्पक करके चिन्तन कियाहै " यद्वाचानाभ्युदितं येनवागभ्युद्यतेतदेव ब्रह्म, त्वं, विद्धि, नेदंयदिदमुपासत, इत्यादि" जो वाणीसे अप्रकाशितहै । अर्थात् जिसकोवाणी कहनहींसक्ती । अरु जिसकरकेवाणी प्रकाशित होती । अर्थात् जिसकी सत्तासे वाणी अन्योंको कहने में समर्थ होती है । तिसही को तू ब्रह्मकरके जान, जिसको यह । भेदवादी । लोक उपासते हैं सो ब्रह्मनहीं, वा जिसकोलोक उपासते हैं सो साकार परिच्छिन्नहुये ब्रह्म होनेको योग्य नहीं । इत्यादि सामवेदीय तलवकार शाखाकी श्रुतिके प्रमाणसे १ । ८० ।

हे सौम्य ! [अद्वैत के विरोधी द्वैतवादी भेदी उपासकों की निन्दा करके अब सम्पत्ति अद्वैत प्रतिपादन की प्रतिज्ञा करते हैं] " सबाह्याभ्यन्तरोह्यजः " । इत्यादि श्रुति प्रमाण से जो बाह्य अन्तर सहित अजन्मा आत्मा है । कि जिसके जानने से और का जानना अवशेष रहता नहीं । तिसके जानने में असमर्थ हुआ, अरु अविद्या करके अपने आपको दीन जानता हुआ " जातोऽहंजातेब्रह्मणिवर्त्तेतदुपासनाश्रितः सन् ब्रह्म प्रतिपत्स्ये " मैं जन्माहौं अरु उत्पन्न हुये ब्रह्मविषे वर्त्ताहौं, अरु तिसकी उपासना के आश्रित हुआ ब्रह्मको प्राप्त होवोंगा ? इस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकार जाननेवाला पुरुष कृपण होताहै। अर्थात् "न जायते म्रियते वा कदाचित्" इत्यादि श्रुति आदिकों के प्रमाण अनुभव से जो जन्म मरण रहित सदा एक रस आत्मा तिसको, अरु "स बाह्याभ्यन्तरोह्यजः" इत्यादि प्रमाणसे सहित बाह्य अन्तर सर्वाधिष्ठान सर्वरूपसे सुशोभित ब्रह्म तिसको। जो कि वास्तवमें दोनों एक अरु जन्मादि विकार रहित हैं। जन्मे मानके, तिनमें परस्पर स्वामी सेवकादि वा उपास्य उपासकादि भेद मानके अरु अपने आपको अति दीन अपराधी ईश्वरके आश्रित हुआ तिसकी उपासना से ब्रह्मभावकी प्राप्ति मानके जो उपासना करने वाले पुरुषहैं सो आपभी मुये अरु ब्रह्मको भी मारा क्योंकि "जातस्यहि ध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजन्म मृतस्यच" इत्यादि प्रमाणसे जो जन्मता है सो मरता है, अरु उस भेदीने जीवरूपसे आत्माको अरु भूतों के संघात रूपसे ब्रह्मको जन्मा माना है, ताते उक्त प्रकारके भेदी उपासकों को श्रुति अरु ब्रह्मवेत्तादि महात्मा कृपण कहते हैं। एतदर्थ अब अजन्मा ब्रह्मरूप अकृपण भाव की कहताहौं "यत्रान्योऽन्यत् पश्यत्यन्यच्छृणोत्यन्यद्विजानाति तदल्पं मर्त्यसद्वाचारंभणं विकारो नामधेयमित्यादि श्रुतिभ्यः" ८ जिसविषे अन्य अन्यको देखता है, अन्यको सुनताहै अन्य को जानता है सो अल्प मरनेके योग्यहै, वाणीसे कहा विकार नाम मात्रहै ? इत्यादिक श्रुतियों के प्रमाणसे। अरु सो उक्त प्रकारका अर्थात् भेदी उपासक करके माना। ब्रह्म कृपणभावका आश्रय है। अरु तिससे विपरीत। अर्थात् श्रुतियों के वाक्य प्रमाण अभेदवादी ब्रह्मवेत्ताओं करके जाना। बाह्य अन्तर सहित अज भूमाख्यब्रह्म अकृपणभावरूपहै। अरु जिसकोजानकेअविद्याकृत सर्वकृपणभावकी अशेष निवृत्तिहोवेहै तिसकोअकृपणभाव कहते हैं, तिस अकृपणभावको अब कहता हौं, इत्यर्थः "अतोवक्ष्याम्यकार्पण्यमजातिसमतांगतम्" ८ अजाति है समताको प्राप्त है अकृपणभावहै तिसको कहता हौं ? अर्थात् सो ब्रह्म कैसा है कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मा ह्याकाशवज्जीवैर्घटाकाशैरिवोदितः । घटा
दिवच्च संघातैर्जातावेतन्निदर्शनम् ३ । ८२ ॥

अजाति है 'अर्थात् जाति जो जन्म तिससे रहित अजहै । वा जो
जन्मवान् होताहै सो मनुष्यादि वा ब्राह्मणादि जातिवाला होत
है अरु ब्रह्म अजन्मा होनेसे ब्राह्मणादि वा मनुष्यादि जातिवा
नहीं ताते सो अजाति अजन्मा है । अरु सर्व समताको प्राप्तहु
है, क्योंकि उसबिषे अवयवोंकी विषमताका अभाव है । अरु
सावयव वस्तु है सो अवयवों की विषमतावाली होती है, इ
प्रकार कहते हैं । अरु यह ' आत्माख्यब्रह्म ' तो निरवयवहै इ
हेतु से समता को प्राप्तहुआ है । अरु सो ब्रह्म किसी भी अवय
से जन्मको पावता नहीं एतदर्थ सो सर्व ओरसे पूर्ण जन्मरहि
अकृपणभाव है तिसको कहताहौं । अरु " यथानजायते किंचि
ज्जायमानं समंततः " ' जैसे कुछ भी जन्मतानहीं जायमा
सर्व ओर से वर्त्तता है ' अर्थात् जैसे रज्जु बिषे सर्प भ्रान्ति
जन्मता (उत्पन्नहोता) है, तैसेही सर्व अविद्या कृत भ्रान्ति
दृष्टिसे जन्मको प्राप्तहोनेकरके भासमान है, तथापि, जिसप्रका
से वस्तुकरके कुछ भी जन्मको पावता नहीं, किन्तु सर्व देशका
अरु वस्तुसे पूर्ण कूटस्थ ही वस्तु होता है । ' अर्थात् सर्व दे
काल अरु वस्तु रूपसे एक अद्वैत ब्रह्मही सुशोभित है ' तै
तिस प्रकार को श्रवणकर । यह इसका अर्थ है ३ । ८१ ॥

३ । ८२ हे सौम्य ! जन्मरहित ब्रह्मरूप अकृपण भावको कहत
हौं, इसप्रकार प्रतिज्ञा किया जो वस्तुतिसकी सिद्धिके अर्थ हे
अरु दृष्टान्त को कहते हैं, इसप्रकार कहता हौं " आत्मा ह्
काशवज्जीवैर्घटाकाशैरिवोदितः " ' आत्मा आकाशवत् है,
घटाकाशों से तुल्य जीवों से कहा है ' अर्थात् [प्रतिज्ञा वि
वाक्य बिषे ब्रह्मशब्द करके प्रसंग में प्राप्तकिया जो परमात्म
सो कैसा है, इसप्रकार प्रश्न करने की इच्छा के हुये कहते हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस श्लोकके पूर्वार्द्ध का यह अर्थहै कि जैसे आकाश विभु (व्यापक) पने आदिक धर्मवालाहुआ अपने विषे स्थित वास्तविक भेदवाला होता नहीं, तैसे विलक्षणताके अभावसे परमात्मा भी है। अरु जैसे एक महदाकाश अनेक घटाकाशोंके आकारसे प्रतीत होताहै [अर्थात् जैसे एकही महदाकाश मेघ मठ घटादिकों की उपाधि से अनेक आकारवान् नाना प्रतीतहोता है [तैसेही एकही परमात्मा [हिरण्यगर्भ से लेके पिपीलिकादि पर्यन्त उत्तम मध्यम छोटे बड़े [नानाप्रकारके जीवों के आकारसे प्रतीतहोता है [परन्तु उपाधिकृत भेद से रहित वास्तव करके एक अद्वैतही है [ ] आत्मा जो परब्रह्म सो जिसकरके आकाशवत् सूक्ष्म निरवयव सर्वगत है तिसही से उसको आकाशवत् कहा है। अरु घटाकाशों के दृष्टान्त से आकाश के तुल्य क्षेत्रज्ञरूप जीवों के स्वरूप करके कहाहै। सोई आकाश के तुल्य परब्रह्मरूप आत्मा है। अथवा जैसे घटाकाश से उत्पन्न हुआ महदाकाश है, तैसेही परमात्मा जीवों से उत्पन्न हुआ है। अर्थात् जीवों की परमात्मा से जो उत्पत्ति वेदान्त शास्त्र करके श्रवण करते हैं सो वास्तव करके महदाकाश से घटाकाशों की उत्पत्ति के समान है, यह इसका अभिप्रायहै। अरु जैसे तिसही महदाकाशसे [वायुआदि क्रम करके] घटादिक संघात उत्पन्न होते हैं, तैसे ही महदाकाश स्थानीय परमात्मा से पृथिव्यादिक भूतोंके भौतिक संघात, अरु कार्य कारणरूप आध्यात्मिक देहादि संघात, यह सर्व रज्जु में सर्पवत् कल्पितहुये उत्पन्नहोते हैं, एतदर्थ " घटादिवच्चसंघातैर्जातावेतन्निदर्शनम् " [घटादिवत् संघातसे उत्पन्नहुआ ऐसा कहते हैं] अर्थात् जब मन्दबुद्धिवाले जिज्ञासुको निश्चय करावने की इच्छावाली श्रुतिने आत्मा से जीवादिकों की उत्पत्ति कही है, तब जानने योग्य तिस उत्पत्ति विषे उत्पन्न हुये आकाशवत्, इत्यादिरूप यह दृष्टान्त है ३। ८२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घटादिषु प्रलीनेषु घटाकाशादयोयथा । आकाशे
म्प्रलीयन्ते तद्वज्जीव इहात्मनि ४ । ८३ ॥

४।८३॥हे सौम्य, "घटादिषु प्रलीनेषु घटाकाशादयो यथा आकाशेसंप्रलीयन्ते तद्वज्जीवइहात्मनि" जैसे घटादिकों के लीन हुये घटाकाशादिक आकाशबिषे लीनहोते हैं,तैसे इस आत्माबिषे जीव होते हैं; अर्थात् जैसे घटमठादिकों के अपने कारण पृथिवी बिषे लय होने से तद्गत जे घटाकाशादि संज्ञक आकाश सो अपने से अभिन्न महदाकाश बिषे लीन होते हैं, तैसेही इस आकाशवत् पूर्ण आकाश का भी आश्रय महासूक्ष्म अधिष्ठान चैतन्य आत्माबिषे, यह शरीरादि संघात विशिष्ट चिदाभास जीव लीन होता है। [जीवों के उत्पत्ति अरु प्रलय उपाधि के किये हैं, स्वाभाविक नहीं। अरु तिसप्रकार होने से उत्पत्तिकी प्रतिपादक श्रुतिसे होता जो अद्वैत का विरोध तिसके अभावक प्रलयकी श्रुतिसे भी अद्वैतका विरोधहै नहीं,इसप्रकार श्लोकके अक्षरों के व्याख्यानसे प्रकट करते हैं] अर्थ यहहै जो,जैसे घटादिकों की उत्पत्ति से घटाकाशादिकों की उत्पत्ति होवे है, अरु जैसे घट मठादिकों के लय हुये घटाकाशादिकों का भी लय होवे है। तैसेही देहादिक संघातकी उत्पत्तिसे (घटाकाशवत्) जीवोंकी उत्पत्तिहोती है, अरु तिन देहादि संघात का स्वकारण में लय होने से इन जीवोंका (संघातविशिष्ट चैतन्यका) इस (संघातोपहित एक अद्वैत) आत्मा बिषे लय होता है, परन्तु स्वरूप करके इस चैतन्य जीव का उत्पत्ति लय नहीं " न जायते म्रियते वा कदाचित् " इत्यादि श्रुतियों के प्रमाण से ४ । ८३ ॥

५।८४॥हे सौम्य, सर्व देहोंबिषे आत्माकी एकताके होते, जन्म मरण अरु सुखादिक धर्मवाले एक आत्मा के हुये, सर्व आत्मा उन जन्मादिक धर्मोंसे सम्बन्ध होवेगा, और क्रिया अरु फलका मिश्रभाव होवेगा, इसप्रकार जो द्वैतवादी कहता है, तिसके प्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथैकस्मिन् घटाकाशे रजोधूमादिभिर्युते। नसर्व्वे सम्प्रयुज्यन्ते तद्वज्जीवाःसुखादिभिः ५। ८४॥

अब यह उत्तर कहते हैं। "यथैकस्मिन् घटाकाशे रजोधूमादिभिर्युते। न सर्व्वे सम्प्रयुज्यन्ते तद्वज्जीवाःसुखादिभिः" जैसे रज अरु धूमादिक करके युक्त एक घटाकाशके हुये, सर्व घटाकाशादिक तिन रज धूमादि करके संयोगको पावते नहीं तैसे जीव सुखादिकों से संयोग को पावते नहीं; अर्थात् अनेक घटों में आकाश एकही है सो घटरूप उपाधि के सम्बन्ध से अनेक आकाश कहेजाते हैं, अरु उन अनेक घटाकाशों मेंसे एक घटाकाश को धूलि धूमादि करके युक्त होने से सर्व घटाकाश तिन धूलि धूमादिकों से संयोग को पावते नहीं, तैसे एक आत्मवाद बिषे एक जीव को सुखादि करके युक्त हुये सर्वजीव सुखादिकन से संयोग को पावते नहीं॥ ननु, तब क्या सर्वत्र एकही आत्मा है, जहां ऐसी शंका है। तहां कहते हैं, यह तेरा कथन सत्य है। जो सर्वत्र एकही आत्मा है। शंका। ननु, तिस आत्मा की एकता युक्तिरहित है तिसको कैसे अंगीकार करते हौ। उत्तर। तहां कहते हैं। सर्व संघातों बिषे एकही आत्मा है, इसप्रकार जो हम ने पूर्व युक्ति सहित आत्मा की एकता कही सो क्या तैंने श्रवण किया नहीं॥ शंका॥ ननु, जब एकही आत्मा है तब सो सर्वत्र सुखी अरु दुःखी होवेगा। समाधान, तहां कहते हैं, यह प्रश्न सांख्यवादी का है, किंवा वैशेषिकादिकों का है। तिनमें जब यह सांख्यवादी का प्रश्न होवे, तब असंभव है, क्योंकि जिस करके सांख्यवादी जो है सो सुख दुःखादिकों के बुद्धि के समवाय सम्बन्धके अंगीकार से आत्मा को सुख दुःखादिक धर्मवान्पना इच्छता नहीं, अरु ज्ञानस्वरूप आत्मा के भेद की कल्पना बिषे प्रमाण नहीं, एतदर्थ यह सांख्यका प्रश्न संभवे नहीं॥ अरु जो ऐसा कहे कि आत्मा के भेदके अभाव हुये प्रधानको पर के अर्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होनेका संभव होवेगा ऐसाकहे तो सो बनेनहीं,क्योंकि प्रधानके भोग मोक्षरूप अर्थके आत्माबिषे असमवाय है ताते । अरु जो प्रधानका किया बंध वा मोक्षरूप अर्थ पुरुषोंबिषे भेदकरके समवायको प्राप्तहोवे, तब आत्माकी एकता करके प्रधानको परार्थ (जीवोंका शेष) होनेका असंभव होवे । एतदर्थ पुरुषके भेदकी कल्पना युक्तहै,परन्तु सांख्यवादियोंने बन्ध वा मोक्षरूप अर्थ पुरुषसे समवाय संबंधवाला अंगीकार कियानहीं,किन्तु निर्विशेष तनमात्र आत्मा अंगीकार कियाहै, एतदर्थ पुरुषकी सत्तामात्र कियाही प्रधानका परार्थपना सिद्धहै, नतु पुरुषके भेदकाकिया किंवा प्रधानका जो परार्थपनाहै सो अन्य शेषी की अपेक्षा करता है, तिसबिषे भेदकी अपेक्षानहीं एतदर्थ पुरुषके भेदकी कल्पना बिषे प्रधानका परार्थपना हेतु नहीं । अरु सांख्यवादियोंको पुरुषके भेदकी कल्पनाबिषे अन्य प्रमाणहै नहीं। अरु प्रधान जो है सो इस पर (पुरुष) की सत्तामात्रकोही निमित्तकरके आप बद्धहोवेहै अरु मुक्त होवेहै । अरु सेश्वर सांख्यवादियों के मतबिषे परब्रह्म ईश्वरहै सो ज्ञानमात्र सत्ता स्वरूप से प्रधानकी प्रवृत्तिबिषे हेतु नहीं, किन्तु किसीभी विशेषसे हेतुहोगा । एतदर्थसांख्यवादीकार केवल मूढतासेही पुरुषके भेदकी कल्पना अरु वेदार्थका परित्याग कियाहै, युक्ति अरु प्रमाणसे नहीं ॥ अरु जो वैशेषिकादि मतवादी कहतेहैं कि इच्छा आदिक आत्मासे समवाय सम्बन्ध वालेहैं, सो उनका कहनाभी असत्है । क्योंकि स्मृतिकेहेतु संस्कारोंके अवयवरूप प्रदेशरहित । अर्थात् स्मृतिकेहेतु जे संस्कार तिन संस्कारोंके अवयव रूप प्रदेश तिनसे रहित । आत्माबिषे समवाय का अभाव है ताते तिनके सिद्धान्तकी असिद्धि होगी । अरु आत्मा अरु मनके संयोगसे स्मृतिकी उत्पत्तिका अंगीकार करनेसे स्मृतिके नियमका असंभव होवेगा (आत्मा, मनके संयोगरूप स्मृतिके कारणके होते अनुभव कालबिषे भी स्मृतिहोवेगी) वा एककालबिषे सर्व्व स्मृतियोंकी उत्पत्तिका प्रसंग होवेगा । भिन्न [किंतु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समान जातिवाले अरु स्पर्शादिक गुणवाले पदार्थों का परस्पर सम्बन्ध देखाहै। जैसे मल्लोंका मेषों का अरु रज्जुघटादिकनका सम्बन्धहै। तिस समानजाति अरु स्पर्शादि गुणके अभावसे आत्माकी मनआदिकोंसे सम्बन्धकी असिद्धिते,अरु उक्त असमवायि कारणसे ज्ञानादि गुणोंकी उत्पत्ति सिद्ध होवेनहीं,इसप्रकार कहते हैं] जातिवाले स्पर्शादि गुणरहित जीवों का मन आदिकों से सम्बन्ध युक्तहै नहीं। अरु नैयायिकनके [गुणादिकों की समान जातिके अरु स्पर्शादिक गुणके अभावहुये भी द्रव्यसे सम्बन्धवाले आत्माका मन आदिकों से सम्बन्ध सिद्धहोता है, इसप्रकार जो कदापि वादी कहै,सो बनेनहीं ऐसा कहतेहैं। यहां यह अर्थहै कि स्वतन्त्र जो सन्मात्रवस्तु सो यहां द्रव्य शब्दकरके कहते हैं। अरु वेदान्तियोंके मतबिषे तिस द्रव्यसे भेदकरके गुणादिक विद्यमान हैं नहीं। क्योंकि "शुक्लः पटः षण्ढो गौरित्यादि" ८ शुक्लपट है, नपुंसक बैलहै ? इत्यादि स्थानमें गुण गुणी आदिकोंके समानाधिकरणके देखनेसे। अरु द्रव्यही कल्पनासे तिसतिस आकार करके भासताहै, इसप्रकार अंगीकार करनेसे। एतदर्थ दृष्टान्तका असंभवहै नहीं] मतबिषे द्रव्यसे रूपादिक गुणकर्म जातिविशेष अरु समवाय भिन्नहैं नहीं। अरु जब गुणादिक द्रव्यसे अत्यन्त भिन्न ही होवें, अरु जब इच्छा आदिक आत्मासे अत्यन्त भिन्नहोवें, तब भी तैसेही द्रव्यसे गुणादिकों के सम्बन्धका अरु आत्मासे इच्छा आदिकों के सम्बन्धका असंभव होवेगा। अरु जो कहे कि अयुत (अभिन्न) सिद्ध वस्तुओंका समवायरूप सम्बन्ध विरोधको पावतानहीं,सो कथन बनेनहीं [हे वादी ! तैंने जो यह गुणादिकों का अयुतसिद्धपना कहा, सो क्या अभिन्न कालवान्पने रूपहै, किंवा अभिन्न देशवान्पने रूप है, किंवा अभिन्न स्वभाववान्पने रूप है, किंवा संयोग अरु विभाग की अयोग्यतारूप है, इस प्रकार यह चार पक्ष हैं। तिनमें प्रथमपक्ष बनेनहीं क्योंकि विकल्पको असहन करता है ताते। इसप्रकार कहते हैं] क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसे होने से अनित्य इच्छा आदिकों से पूर्व नित्य आत्मा सि
है ताते । अरु आत्माके अयुत सिद्धपने का असंभव है [व
क्या इच्छा आदिकों की अपेक्षासे आत्माका अभिन्न कालवा
पना है, किंवा आत्माकी अपेक्षासे इच्छादिकों को अभिन्न
लवान्पना है । इसप्रकार विकल्प करके प्रथम पक्षके अर्थ दू
दिया है] आत्मा से इच्छा आदिकन के अयुत सिद्धपने के
से इच्छादिकों को आत्मगत महत्पनेवत् नित्यता का प्रसंग
वेगा, सो अनिष्ट है, क्योंकि इच्छादिकोंकी नित्यताके हुये आ
के मोक्षके प्रसंगका अभाव होवेगा ताते । अरु [जब आत्मा
साथ इच्छा आदिकों को अभिन्न कालवान्पना है, तब आ
को अनादि होने से तिस बिषे स्थित जो महत्पना तद्वत्
इच्छा आदिकों को भी नित्यताकी प्राप्ति होवेगी, इस प्रकार
हते हैं] समवाय सम्बन्धको द्रव्यसे इतरपने के हुये, जैसे द्र
अरु गुणका समवाय सम्बन्ध है, तैसे तिस समवायका द्रव्य
अन्य सम्बन्ध कहना योग्यहै । अरु जो ऐसा कहे कि समवाय
सम्बन्धही है, एतदर्थ तिनका अन्य सम्बन्धकहना योग्यनहीं
तो तैसे [समवायको नित्य सम्बन्ध रूप होने से समवाय सम्ब
वाले द्रव्य गुण आदिकों को भी इस नित्य सम्बन्धवाले होने
कदाचित्भी भेदकी अप्रतीति से तिनके भिन्नपने की प्रसिद्धि
असम्भव होवेगा, इस प्रकार दूषण कहते हैं] हुये समवाय
बन्ध वाले द्रव्य गुण आदिकों को भी नित्य सम्बन्ध के प्रसं
भिन्नता का असंभव होवेगा । अरु द्रव्यादिकों की अत्यन्त
न्नताकेहुये, स्पर्शवान् अरु स्पर्शवान् द्रव्यके असम्बन्धवत् ति
सम्बन्धका असंभव होवेगा । अरु आत्माको गुणवान्पने के
इच्छा आदिकोंकी उत्पत्ति अरु नाशवत् आत्मा को अनित्यता
प्रसंग होवेगा । अरु देह अरु फलादिकोंवत् सावयवपना, अरु दे
दिकोंवत्ही विकारवान्पना यह उभय दोष निवारण करने
अयोग्य होवेंगे । जैसे [जब आत्माको इच्छादिक गुणवान्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपकार्य्यसमाख्याश्च भिद्यन्ते तत्र तत्र वै। आकाशस्य न भेदोस्ति तद्वज्जीवेषु निर्णयः ६। ८५॥

नहीं, तब तिसको बन्धके अभाव से मोक्ष न होवेगा, एतदर्थ बन्ध मोक्षकी व्यवस्थाके असंभवसे देह देहके प्रति सुख दुःखादि करके विशिष्ट आत्माके भेदकी सिद्धि है, इस प्रकारकी शंका करके कहते हैं] आकाश को अविद्यासे आरोपित 'रज, धूम, अरु मलपने आदिक दोषवान्पना है, तैसेही आत्माको अविद्याकरके आरोपित बुद्धि आदिक उपाधि के किये सुख दुःखादि दोषवान्पना है ऐसे अंगीकार किये व्यावहारिक बन्ध अरु मोक्षादिक विरोध को पावते नहीं, क्योंकि सर्ववादियों करके अविद्याकृत व्यवहार का अंगीकारहै ताते। अरु परमार्थ (मोक्ष) बिषे व्यवहार का अनंगीकार है ताते। एतदर्थ तार्किकों करके आत्मा के भेदकी कल्पना वृथाही किया है ५। ८४॥

६।८५॥ हे सौम्य,। शंका। ननु, एकहीआत्माबिषेअविद्याकृत आत्माके भेद निमित्तक व्यवहार यद्यपि श्रुतिआदिकों से बनेहैं, तथापि अनुमानसे कैसे बनेहैं। समाधान। तहां कहतेहैं, "रूप कार्य्यसमाख्याश्च भिद्यन्ते तत्र तत्र वै" ६ रूप कार्य अरु नाम तिन तिन बिषे भिन्न देखते हैं; अर्थात् जैसे इस एकही आकाश बिषे घट मठ कमंडलु अन्तर्गृह आदिकों के सम्बन्धी आकाशके अल्पपने अरु महत्पने आदिक रूप। अर्थात् घटाकाशकी अपेक्षा मठाकाशको महत्पना अरु कमंडलुगत आकाश को अल्पपना' इत्यादि प्रकार एकही अरूप आकाशको घटादिकोंके सम्बन्धसे अल्पपना अरु महत्पना आदिरूप। अरु जलका लाना धारण करना अरु शयन करना, इत्यादि कार्य, अरु घटाकाश मठाकाश कमण्डल्वाकाश अरु अन्तर्गृहाकाश, इत्यादिक तिन घटादि रूप उपाधियोंके किये नाम। अर्थात् एक आकाशबिषे जो घटाकाश मठाकाशादि नाम भेद हैं सो उन घटादि उपाधिके सम्बन्धसे हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाकाशस्य घटाकाशो विकारावयवौ यथा । नै
त्मनःसदा जीवो विकारावयवौ तथा ७ । ८६ ॥

स्वरूपसे ही नहीं । यह सर्व तिस तिस व्यवहारविषे तहां
भिन्नभिन्न देखते हैं। अरु यह सर्व आकाश के रूपादिकोंके भेदों
किया व्यवहार अपरमार्थसेही है, अरु परमार्थसेतो "। आकाश
न भेदोऽस्ति तद्वज्जीवेषु निर्णयः "। आकाशका भेद है नहीं,
जीवोंबिषे निर्णय किया है ; अर्थात् जैसे आकाशबिषे जो
रूप क्रियादि सहित भेद है सो घटादि उपाधि अरु तिनके
का किया है । अरु वास्तव करके तो आकाश का भेद है नहीं
अरु जैसे आकाश के भेदरूप निमित्त का किया व्यवहार सो
टादिक उपाधियों के किये द्वारविना है नहीं । तैसेही देहादि
उपाधि के किये घटाकाशादि स्थानीय जीवोंबिषे भेदके नि
णसे बुद्धियों करके किया भेद है,वास्तव करके आत्मा के स्व
से भेद है नहीं, यह सम्यक् आत्मवेत्ताओं ने सम्यक्प्रकार
र्णय किया है ६ । ८५ ॥

७।८६॥हे सौम्य,।शंका । ननु तहां घटाकाशादिकोंबिषे रूप
कार्य्य आदिकोंके भेदका व्यवहार परमार्थरूप आकाशका किया
है । इसप्रकार का जो वादीका कथन सो बने नहीं । उ० । क्यों
जैसे सुवर्ण का कुण्डल कंकणादि विकार है, वा जैसे जलका
बुद्बुद बरफआदि विकारहै, तैसे परमार्थ रूप आकाश का घ
काश विकार है नहीं । अरु जैसे वृक्षकी शाखा आदिक अव
हैं, तैसे भी आकाशका घटाकाशादि अवयव भी नहीं ।
घटाकाशादिकों बिषे जो भेद व्यवहार है सो परमार्थ रूप
काशका किया नहीं । ताते " नाकाशस्य घटाकाशो विका
यवौ यथा" ; जैसे आकाश का घटाकाश विकार अरु अव
नहीं ; अर्थात् जैसे कुण्डलादिक सुवर्ण के अरु बुद्बुदादि
विकार अरु शाखादि वृक्षके अवयवहैं, तैसे घटाकाशादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथा भवति बालानां गगनं मलिनं मलैः।
तथाभवत्यबुद्धीनामात्माऽपिमलिनोमलैः८।८७॥

काशके विकार अवयव नहीं। अरु "नैवात्मनःसदाजीवो विकारावयवौ तथा" ६ तैसे आत्मा का जीव सर्वदा विकार अरु अवयव है नहीं; अर्थात् जैसे आकाश के घटाकाशादि विकार अरु अवयव नहीं, तैसेही परमार्थ से सत्यरूप महाकाशस्थानीय एक अखण्ड अद्वैत निराकार परब्रह्म से अभिन्न आत्मा का यह घटाकाशस्थानीय जीव सर्वदा (सर्वथा) उक्त दृष्टान्तवत् विकार नहीं, अरु अवयव भी नहीं, एतदर्थ आत्माके भेदका किया व्यवहार मिथ्याही है। यह अर्थ है ७। ८६॥

८। ८७॥ हे सौम्य! [जीव जो है सो ब्रह्मका अंश नहीं अरु विकारभी नहीं किन्तु उपाधि बिषे प्रवेशको पाया ब्रह्मही जीव शब्दका वाच्यहै। इसप्रकार जो तुमने कहा सो अयुक्तहै। क्योंकि ब्रह्म तो। उपाधि से रहित। शुद्ध है ताते। अरु जीव जो है सो रागादिक मलवाला है ताते। अरु जीव अनेक हैं ताते, इत्यादि प्रकार से तिन। ब्रह्मजीव। की एकताका असंभव है यह आशंका करके परमार्थ से जीव को भी मलवान्पना आदिक है नहीं, ऐसा कहते हैं] जैसे घटाकाशादिक जो नाम रूप कार्य्यादिक भेदका व्यवहार है सो भेदबुद्धिका किया है, तैसेही उपाधि वाले जीवोंका भेद अरु जन्म मरणादि व्यवहार हैं सो। अविद्या के किये हैं। ताते तिस अविद्या रचित भेदका कियाही क्लेश कर्म्म मल अरु रागादिक मल करके युक्तपना है, परमार्थ से नहीं। इस अर्थको दृष्टान्त से प्रतिपादन करने को इच्छते हुये कहते हैं यथा भवति बालानां गगनं मलिनं मलैः" ६ जैसे बालकों को आकाश मल करके मलिन होता है; अर्थात् जैसे लोक बिषे विचारशून्य। अविवेकी बालकों को, परम शुद्ध जो आकाश है सो मेघ रज धूमादि मल करके मलिन (मैलवाला) भासता है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परन्तु जो आकाश के स्वरूप स्वभाव के जाननेवाले जे विवे
पुरुषहैं तिनको आकाश मलवाला प्रतीत होतानहीं । अर्थात्
पुरुषोंको आकाश के यथार्थ स्वरूप स्वभाव का ज्ञान है तिन
आकाश में धूमधूलि आदिकमलके होतेसंते भी, आकाश मल
प्रतीत होके जैसा है तैसाही प्रतीत होता है । "तथा म
बुद्धीनामात्माऽपि मलिनोमलैः" (तैसे आत्मा भी अबुद्धि
को मलकरके मलिन होता है ; । अर्थात् जैसे अविवेकी बाल
को आकाश धूम धूलि करके युक्त मलिन भासता है । तैसे
विज्ञाता प्रत्यक् चैतन्य परब्रह्म रूप आत्मा है, सो भी
प्रत्यगात्मा के यथार्थ विवेक से रहित अबुद्धिमान् (अज्ञा
पुरुषों को क्लेश कर्म अरु कर्मफल इत्यादि मलों करके म
(विकारी) प्रतीत होता है । अर्थात् सर्व शरीरों में शुद्ध
मुक्तरूप एकही आत्मा है, परन्तु सो तैसा होता सत्ता भी
विवेकी पुरुषों को देह इन्द्रिय मन प्राणादिकों के जन्म
क्लेश क्रिया फलादि धर्मवान्पने करके युक्त भासता है ।
जैसे ऊषरदेश को देखके तिस बिषे, जलकी कामना
तृषित पुरुष जल फेन तरंगादिकों का आरोप करता है, त
तिस असत् आरोप से वो ऊषरदेश जल फेन तरंगादि वाला
तानहीं, तैसेही सदा शुद्ध निर्विकार प्रत्यगात्मा सो अबुद्ध
वेकी अज्ञानी पुरुषों करके आरोप किये क्लेशादिक मल तिन
के मलिन होता नहीं । अर्थात् जिन पुरुषों को अपने आप
शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव प्रत्यगात्मा का यथार्थ ज्ञान नहीं सो
अपने आप आत्माबिषे देहेन्द्रिय मन प्राणादिकों के जन्म
णादि धर्मोंका आरोप करते हैं, परन्तु तिनके आरोप से वो
शुद्ध आत्मा कदापि किसी प्रकार से विकारवान् मलिन
होता नहीं । इत्यर्थः ८ । ८७ ॥

९।८८॥ हे सौम्य ! शंका [ननु, जीव जो है सो मरणके अ
अपने धर्म (शुभाचरण) के अनुसार स्वर्गको जाता है, अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मरणे संभवे चैव गत्यागमनयोरपि।
स्थितौ सर्व्वशरीरेषु आकाशेनाविलक्षणः ९। ८८॥

(दुराचरण) के वशहुआ नरक को पावताहै। अरु धर्म अधर्म दोनों के सुख दुःखादि फल भोग के अनन्तर उनके क्षीणहुये पुनःयहां आयके कोई एक योनि में जन्मताहै, अरु तहांभी यावत् प्रारब्ध भोग है तावत् स्थिरहोय प्रारब्ध भोग आगे को धर्माधर्म कर्मकर पुनःभी परलोक के अर्थ गमनकरताहै। इसका आवागमन मिटा नहीं। इसप्रकार इसलोक अरु परलोक में अपने कर्मानुसार विचरने रूप व्यापारवाला जीव सो। आवागमन से रहित सदाशुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव एकरस कैसे होवेगा। जहां इस प्रकारकी शङ्काहै तहां कहते हैं] पुनः भी उक्त अर्थकोही वर्णन करते हैं "मरणेसंभवे चैव गत्यागमनयोरपि। स्थितौ सर्वशरीरेषु आकाशेनाविलक्षणः"। ९ सर्व शरीरों बिषे, जन्म, मरण, गमन, आगमन और स्थिति के हुये भी आकाश से अविलक्षण है; अर्थात् घटाकाशके जन्म मरण गमन आगमन अरु स्थितिवत् सर्व शरीरों बिषे आत्माको जन्म मरण गमन आगमन औ स्थिति के हुये भी आत्मा आकाशसे अविलक्षण (आकाश के तुल्य) प्रतीति करनेको योग्य है। अर्थात् घटाकाश जोहै सो घटकी उत्पत्ति होने से उत्पन्नहुये वत् अरु घटके ध्वंसहुये ध्वंसहुयेवत् अरु घटकेगये गयेवत् अरु घटके आये आयेवत् अरु घटके स्थितहुये स्थितहुये वत्, इत्यादि प्रकार घटाकाश बिषे जो उत्पत्ति आदि प्रतीत होवै है सो घटरूप उपाधि के सम्बन्ध से होवे है, परन्तु घटसे पृथक् दृष्टिकर केवल आकाशकोही अनुभव दृष्टि से देखिये तो घटके बर्त्तमान कालमें भी आकाश उत्पत्ति विनाशादिकों से रहित अपने स्वरूप करके ज्योंका त्यों एक रसही है, तैसेही आकाश से भी महा सूक्ष्म परिपूर्ण एकरस आत्माबिषे जो जन्म मरण सुख दुःख अरु परलोक में गमन पुनः आगमनइत्यादि प्रतीतहोताहै सो शरीरादि संघातरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संघाताःस्वप्नवत्सर्वे आत्ममायाविसर्जिताः ।
आधिक्येसर्वसाम्ये वा नोपपत्तिर्हि विद्यते १०।८९

उपाधिके सम्बन्धसे होताहै,नतु वास्तव अपने स्वरूप करके हि
पाधि आत्मा आकाशवत् गमनागमनादि संघात के धर्मों से रो
सदा एकरस परिपूर्ण विज्ञानघनही है । इसप्रकार अपने
आत्म विषयक प्रतीतकरनेकोयोग्यहै, यहइसकाभावार्थ है ९।८

१०।८९ ॥ हे सौम्य ! " संघाताः स्वप्नवत्सर्वे आत्ममाया वि
र्जिताः " (सर्व संघात स्वप्नवत् आत्माकी मायासे रचितहै, अ
देह इन्द्रिय मन प्राणादिकों का सर्व संघात तो स्वप्नबिषे
(देखे) देहादिकोंवत्, अरु मायावी (इन्द्रजाली) पुरुषक
किये देहादिकोंवत् आत्माकी अविद्यारूपा मायासे रचितहै,
मार्थ से नहीं । अरु जिस करके तिर्यक् (तिरछे चलनेवाले प
आदिक) के देहादिकों की अपेक्षा से देवादिकों के कार्य का
रूप संघातोंकी " आधिक्ये सर्व्वसाम्ये वा नोपपत्तिर्हि विद्यते
(आधिक्यता के हुये वा सर्व की साम्यता के हुये उपपत्ति वि
मान है नहीं ; अर्थात् । तिर्यक् देहादिकों की अपेक्षा से देवादि
के कार्य कारणात्मक संघातोंकी आधिक्यताके हुये [देवतादि
के शरीरों को अति पूजनीय होनेकरके सर्व से अधिकता के अं
कार से तिनके असत्यपने की सिद्धि न होवेगी, यह शङ्काकर
देहके भेदों बिषे मूढ़पुरुषों की दृष्टि से चैतन्यकी अधिकता
कल्पितहुये भी विवेकी पुरुषों की दृष्टि से सर्व देह समान पञ्च
तात्मकहोने से सर्वकी समताके अंगीकार किये संघातोंकी स
ता बिषे कोई भी संभव नहीं इसप्रकार कहते हैं] वा सर्व
समताके हुये इन शरीरादि संघातों के सद्भावका प्रतिपादक है
नहीं । इत्यर्थः १०।८९ ॥

११।९०॥ हे सौम्य! अब उत्पत्ति आदिकोंसे रहित इस अद्वैत
आत्माको श्रुतिरूप प्रमाणकरके सिद्धताके लखावने के अर्थ श्रु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रसादयोहिये कोशा व्याख्यातास्तैत्तिरीयके।
तेषामात्मापरोजीवः खंयथासंप्रकाशितः ११। ९०॥

वाक्यों के कहनेका आरंभकरतेहैं "रसादयोहिये कोशा व्याख्याता-स्तैत्तिरीयके" ८रसादिक कोश तैत्तिरीयबिषे व्याख्यान किये हैं? अर्थात् अन्नरसमय, प्राणमय मनोमयादिक, खड्गादिकों के कोश (म्यान) वत् जो पंचकोश हैं सो यजुर्वेदीय तैत्तिरीयोपनिषद् बिषे उत्तरोत्तरकी अपेक्षा से [जैसे खड्गादिकों के कोश जो हैं सो खड्गादिकों की अपेक्षा बाह्य होते हैं, तैसेही इन पञ्चकोशोंको भी कहते हैं। तिस बिषे हेतु कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि पूर्व के अ-न्नमयादिक कोशों को पिछले पिछले प्राणमयादिकोंकी अपेक्षासे बाह्यपना होने करके, अरु सर्वान्तर आधाररूप ब्रह्मकी अपेक्षा से आनन्दमय को भी तिनके तुल्य बाह्य होने से, इन अन्नमयसे आनन्दमय पर्यन्त पांचोंका कोशपना तुल्यही है] पूर्वके बाह्य भावसे व्याख्यान किये हैं "तेषामात्मापरोजीवः खंयथासंप्रका-शितः" ८तिनका पररूप आत्मा जीव है, जैसे आकाश सम्यक् प्रकाश किया है? अर्थात् तिन अन्नमयादि कोशोंका परब्रह्मरूप आत्मा जीव है॥ शंका॥ सो आत्मा तिन कोशोंका जीव कैसे है। समाधान। जिस अत्यन्त आन्तर आत्मा से यह पांच कोश भी आत्मावाले होते हैं, सो आत्मा सर्व कोशोंको जीवन का निमि-त्तहै, एतदर्थ तिन अन्नमयादि कोशोंका जीव है॥ सो कौन है। उ०। जो परब्रह्मरूप आत्मा पूर्व "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" ८सत्य ज्ञान अनन्त ब्रह्म है?। इसप्रकार प्रसंगबिषे प्राप्त किया है। औ जिस आत्मा से स्वप्न अरु माया आदिकोंवत् आकाशादिकों के क्रम से अन्नमयादि कोशरूप संघात आत्मा की मायासे रचित है, इसप्रकार कहा है। अरु सो आत्मा हमों करके जैसे आकाशहै, तैसे "आत्माह्याकाशवत्" इत्यादि ८आत्मा आकाशवत् है? यह इस प्रकरणके तीसरे श्लोक से सम्यक् प्रकार प्रकाश किया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वयोर्द्वयोर्मधुज्ञाने परंब्रह्मप्रकाशितम् ।
पृथिव्यामुदरेचैव यथाऽऽकाशःप्रकाशितः १२ । ९१ ।

परन्तु नैयायिकों करके कल्पित आत्मावत् पुरुषकी बुद्धि का
कल्पित प्रमाणों का विषयरूप आत्मा प्रकाश किया नहीं ।
अभिप्राय है ११ । ९० ॥

१२।९१ ॥ हे सौम्य! [मैं मनुष्यहौं, प्राणीहौं, प्रमाताहौं, कर्त्ता
भोक्ताहौं, इन उपाधि विशिष्ट पांचों का जो एकस्वरूप अनु
प्रत्यक् चैतन्यहै सो ब्रह्मही है, इसप्रकार जीव ब्रह्मकी एकता
तैत्तिरीय श्रुतिके तात्पर्य को कहके, अब तिसही अर्थबिषे बृह
रण्यक उपनिषद्की श्रुतिकेभी तात्पर्यको कहते हैं । बृहदारण्य
उपनिषद्गत मधु ब्राह्मण बिषे बहुत से पर्यायन में अधिदैव
अध्यात्मरूप भिन्नस्थानों बिषे "अयमेवसइति" यहही सो
इसप्रकार परब्रह्मरूप प्रत्यगात्मा प्रकाश किया (लखाया)
एतदर्थ बृहदारण्यकश्रुतिका भी इसब्रह्म और आत्माकी अ
एकताबिषे तात्पर्यहै । यह इसश्लोक के पूर्वार्द्ध का अर्थ है] कि
"अधिदैवमध्यात्मञ्च तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषः पृथिव्याद्य
तो योविज्ञाता पर एवात्मा ब्रह्म सर्वमिति" अधिदैव अ
ध्यात्मतेजोमय अमृतमय पृथिव्यादिकों के अन्तर्गत जो विज्ञ
पुरुष है? सो परमात्माही है, सर्वब्रह्महै इसप्रकार "द्वयोर्द्वयो
धुज्ञाने परंब्रह्मप्रकाशितम्" द्वय द्वयबिषे परब्रह्म प्रकाश कि
मधुज्ञानबिषे; अर्थात् उक्तप्रकार दोनों दोनों स्थानोंबिषे द्वै
क्य होने पर्यन्त परब्रह्म प्रकाशित कियाहै ॥ प्र० ॥ कहां प्रका
कियाहै ॥ उ० । जिसबिषे ब्रह्म विद्या नामक मधु (अमृत) अ
त्वका मोद न होने से । अर्थात् ब्रह्मविद्याका अमृतत्व (मो
परमानन्दकी प्राप्तिकाहेतु होने से मधु वा अमृत कहते हैं,
यही मुख्य अमृत है क्योंकि इसही करके जन्म मरणादि ल
वान् जीव सकारण मरण से रहित अमर अभय भावको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीवात्मनोरनन्यत्वमभेदेनप्रशस्यते। नानात्वंनिन्द्यतेयच्चतदेवंहिसमञ्जसम् १३। ९२॥

होता है। जानते हैं, ऐसा जो मधुज्ञान। अर्थात् बृहदारण्य उपनिषद् के द्वितीय अध्याय के अन्तक मधु ब्राह्मण। तिस बिषे प्रकाशित किया है। प्र०। किसवत् प्रकाशित किया है उत्तर। "पृथिव्यामुदरे चैव यथाऽऽकाशः प्रकाशितः"। ऐसे पृथिवी अरु उदर बिषे आकाश प्रकाशित किया है जैसे लोक बिषे पृथिवी बिषे अरु उदर बिषे एकही आकाश अनुमान प्रमाण से प्रकाशित किया है, तैसे मधु ब्राह्मण में पृथिवी आदिकों बिषे अधिदैवरूप अरु शरीरादिकों बिषे अध्यात्म रूप से परब्रह्मही प्रकाशित किया है। इत्यर्थः १२। ९१॥

१३। ९२ हेसौम्य! "जीवात्मनोरनन्यत्वमभेदेनप्रशस्यते"। जीव अरु परमात्माका अनन्यपना अभेदकरके प्रशंसाका बिषय करते हैं; अर्थात् जो कि युक्तियों से अरु श्रुतियों के प्रमाण से निर्द्धार किया जीव अरु परमात्मा का अनन्यपना। अर्थात् "तत्त्वमस्यादि" महावाक्यों करके त्वंपद के लक्ष्य अरु तत्पद के लक्ष्यका अनन्य अभेदपना। व्यासादिक महर्षियों करके शास्त्र (ब्रह्मसूत्रादि वेदान्त) से अभेद करके प्रशंसा का विषय किया है। अर्थात् श्रुतियों के महावाक्यों करके निर्द्धार निश्चित किया जो जीव अरु परमात्माका अनन्यपना अरु तिस अनन्यपने का यथार्थ ज्ञान, अरु तिस ज्ञानसम्पन्न ज्ञानी, इनको व्यासादि महर्षियों ने अपने ब्रह्मसूत्रादि शास्त्र करके प्रशंसा के विषय किये हैं "सत्यं वै अभेदो" "ज्ञानादेवतु कैवल्यं" "ज्ञानंविमोक्षाय" "ज्ञानंलब्ध्वा परांशान्तिमचिरेणाधिगच्छति" "तस्यादित्यव ज्ज्ञानं" "ज्ञानित्वात्मैव मेमतम्" इत्यादि प्रमाण से। अरु "नानात्वं निन्द्यते यच्च तदेवंहिसमञ्जसम्"। नानात्व निन्दा का विषय किया है, जो सो ऐसेही समीचीन है; अर्थात्, जो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीवात्मनोः पृथक्त्वंयत्प्रागुत्पत्तेः प्रकीर्तितम् ॥ ५
विष्यद्वृत्त्यागौणंतन्मुख्यत्वंहिनयुज्यते १४ । ९३ ॥

सर्व प्राणियों को साधारण स्वाभाविक (अविद्यारचित) शास्त्र से बाह्यकिये कुतर्कों के कर्त्ता वादियों करके रचित नानात्व दर्शन तिनको । वेदशास्त्राचार्य्यमहर्षियोंने निन्दाका विषय किया है । तथाच "नतुतद्वितीयमस्ति" "द्वितीयाद्वैभयंभवति उदरमन्तरंकुरुतेअथतस्य भयंभवति" "इदं सर्वम् यदयमात्मा" "मृत्योःस मृत्युमाप्नोति, इत्यादि" ८सोद्वितीयनहीं है, द्वितीय से निश्चय करके भय होता है, जो यह सर्व है, सो यह आत्मा है, अल्पभी अन्तर को करताहै पश्चात् तिसको भयहोता है, सो मृत्यु से मृत्यु को प्राप्तहोता है जो यहां (आत्मा अरु ब्रह्म बिषे) नानावत् देखताहै, इत्यादि श्रुति वाक्यों करके अरु अन्य ब्रह्मवेत्ता पुरुषों करके निन्दाका विषय किया है । अरु जो यह है सो ऐसेही समीचीन है । अरु जो तर्क करनेवाले पुरुषों करके कल्पना करीहुई कुदृष्टियां हैं, सो तो समीचीन नहीं । अरु निरूपण करीहुई घटना को प्रकाशे भी नहीं ॥ यह अभिप्राय है १३ । ९२ ॥

१४ । ९३ ॥ हेसौम्य ! । शंका । ननु, सम्यक् ज्ञानसे पूर्व । अर्थात तिस सम्यक् ज्ञानरूप अर्थवाली उपनिषदोंके वाक्यों से पूर्व कर्मकाण्ड बिषे । "इदंकामोऽदःकामइति" ८यह काम है यह कामहै इसप्रकार अनेक कामकरके कामनाके भेदसे जीवोंकाभेद कहा है अरु "परश्च सदाधारपृथिवीद्यामित्यादि मन्त्रवर्णैः" ८सो परमात्मा इस पृथिवी अरुस्वर्गको धारणकरताहुआ, इत्यादि मन्त्रोंके कथन से तिन । पृथिव्यादिकों से पृथक् परमात्मा कहाहै, इसप्रकार जो जीव अरु परमात्माका पृथक्पना कहा है । तहां कर्मकाण्ड अरु ज्ञानकाण्डके वाक्योंसे विरोधहुये ज्ञानकाण्ड के वाक्योंके एकतारूप अर्थकाही समीचीनपना कैसे निश्चय करतेहो, जहां ऐसी शंकाहै, तहां कहते हैं । समाधान "जीवात्मनोः पृथक्त्वं यत्प्रागु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्पत्तेः प्रकीर्त्तितम्" (सम्यक् ज्ञानरूप (उत्तरकांडके पूर्व जो जीव अरु परमात्माका पृथक्पना कहा है; अर्थात् "यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते" "यथाऽग्नेः क्षुद्राविस्फुलिङ्गाः" "तस्मद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः" "तदैक्षत" "तत्तेजोऽसृजत, इत्यादि" (जिससे प्रसिद्ध यह भूत उपजतेहैं, जैसे अग्निसे क्षुद्रविस्फुलिंग होतेहैं> तिस वा इस आत्मासे आकाश उपजताहुआ, सो ईक्षणकरताहुआ, सो तेजको सृजताहुआ, इत्यादिक सम्यक् ज्ञान रूप अर्थवाले उपनिषदोंके वाक्योंसे पूर्वकर्मकाण्डबिषे जो जीव अरु परमात्माका भिन्नपनाकहाहै "भविष्यद्वृत्त्या गौणंतन्मुख्यत्वंहिनयुज्यते" (सो भविष्यद्वृत्तिसे गौणहै निश्चयकरके मुख्यपना घटतानहीं; अर्थात् कर्मकांडबिषे जो जीव अरु परमात्माका पृथक्पना कहा है, सो परमार्थरूप नहीं, किन्तु महदाकाश अरु घटाकाशके भेदवत् "यथौदनं पचतीति" (चावलकी (रसोई) पकावताहै> इस वाक्यबिषे जैसे भविष्यत् प्रवृत्तिसे चावलोंबिषे भोजनपना है, तद्वत् गौण है, परन्तु भेदवाक्योंका कदाचित्भी मुख्य भेदरूप अर्थवान्पना घटतानहीं, क्योंकि आत्माके भेदके वाक्योंको स्वाभाविक (अनादि) अविद्यावाले प्राणियोंकी भेददृष्टिअनुवादी (अनुवादकरनेवाली) है ताते। अरु यहां उपनिषद् बिषे उत्पत्ति अरु प्रलयादिकोंके वाक्यों से, अरु "तत्त्वमसि" "अन्योऽसावन्योऽहमस्मीति नसवेद" (सो तूहै, यह अन्य है मैं अन्यहौं, ऐसेजो जानताहै सोनहीं जानता> इत्यादि श्रुतिवाक्यों से जीवात्मा अरु परमात्माका ऐक्यपनाही प्रतिपादनकरनेको इच्छितहै। एतदर्थ उपनिषदोंबिषे एकपना श्रुतिकरके प्रतिपादन करनेको इच्छितहोवेगा, इसप्रकार भविष्यवृत्तिवाले उत्पत्त्यादिकोंके वाक्योंकी मुख्यावृत्तिको आश्रय करके, जो लोकबिषे भेददृष्टिका अनुवादहै, सो गौणहीहै। यहअभिप्रायहै॥ अथवा "तदैक्षत, तत्तेजोऽसृजत" (सो ईक्षणकरता (इच्छा वा देखता) हुआ, सो तेजको सृजताहुआ> इत्यादिक वाक्यों से "उत्पत्तेः प्रागेकमे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मृल्लोहविस्फुलिङ्गाद्यैःसृष्टिर्यांचोदिताऽन्यथा । उ
पायःसोऽवतारायनास्तिभेदःकथञ्चन १५ । ९४ ॥

वाद्वितीयम् " ८उत्पत्तिसे पूर्व एकही अद्वितीयथा> इसप्रकार एक
पना कहाहै । अरु " तत्सत्यं सआत्मा तत्त्वमसि " ८सो सत् है
सोआत्माहै, सोतूहै> इसप्रकार सोई एकपना होवेगा । इसप्रका
की जिस भविष्यद्वृत्तिकी अपेक्षाकर के जो जीव अरु आत्मा
भिन्नपना जहां किसी भी वाक्यबिषे जाननेमें आवताहै, सो " प
थौदनं पचतीति " ८चावलकी रसोई पकावताहै> इसवाक्य वि
जैसे भविष्यद्वृत्तिसे तंडुलोंबिषे भोजनपनाहै, तद्वत् गौणहै ॥
सौम्य ! यहां जो जीवअरु परमात्मा में भेदके बोधक कर्मकांडके
मन्त्रको गौणपना कहाहै तिसका यह भी अभिप्राय जानना कि
कर्मकांड वेद है सो यज्ञादि कर्मोंद्वारा संसारकाही प्रवर्तक आ
प्रापकहै, एतदर्थ उसको उपनिषद् ज्ञानकाण्ड ' जो समूल जन्म
का निवर्तक अरु परमानन्द मोक्षका प्रापक है, बिषे " तत्रापि
ऋग्वेदो " इत्यादि वाक्यों करके अविद्यात्मक कहा है, एतद
कर्मकांडके वा अन्यके जे जीवात्मा अरु परमात्माके भेदकेबोध
वाक्यहैं तिनकी गौणीवृत्ति जाननी १४ । ९३ ॥

१५ । ९४ हेसौम्य ! ।शंका।ननु, यद्यपि उत्पत्ति से पूर्वजन्मरहि
सर्व एकही अद्वितीयथा, तथापि उत्पत्तिके अनन्तर यहसर्व उ
न्नहुआहै अरु जीव भिन्न है, इसप्रकार मतिकहो क्योंकि उत्प
कीश्रुतिका अन्यअर्थ है ताते । अरु "स्वप्नवदात्ममाया त्रिसर्जित
संघाताः घटाकाशोत्पत्तिभेदादिवज्जीवानामुत्पत्तिर्भेदादिरिति
८संघात स्वप्नवत् आत्मा की माया से रचित है, अरु घटाकाश
उत्पत्ति अरु भेदादिकोंवत् जीवों की उत्पत्ति अरु भेदादिक
इसप्रकार पूर्व भी हमने यह दोष निवारण किया है, एतदर्थ
यह प्रश्न अवकाश रहित है । अरु इसही से उत्पत्ति अरु भे
दिक की श्रुतियों से खींचके यहां पुनः उत्पत्तिकी श्रुतियों के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मा की एकताबिषे तात्पर्यके प्रतिपादन करने की इच्छा से यह कहने का आरंभ है। तथाच "मृल्लोहविस्फुलिङ्गाद्यैः सृष्टिर्या चोदितान्यथा" (मृत्तिका लोह अरु विस्फुलिङ्गादि से अरु अन्य प्रकार से जो सृष्टि कही है; अर्थात्, "यथा सौम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्यात्" "यथा सौम्यैकेन नखनिकृन्तनेन सर्वं कार्ष्णायसंविज्ञातंस्यात्" "यथा सुदीप्तात् पावकाद्विस्फुलिङ्गाः सहस्रशः प्रभवन्ते स्वरूपाः" इत्यादि श्रुतियों करके कहे। मृत्तिका लोह अरु विस्फुलिङ्गादिकन के दृष्टान्त के कथन से जो सृष्टि कही है, अरु अन्यप्रकारसे जो सृष्टि कही है, सो सर्व सृष्टिका प्रकार हमारे (ब्रह्मवेत्ताओं के) मतबिषे जीवात्मा अरु परमात्माके एकताकी बुद्धि की उत्पत्तिके अर्थ उपायहै। अरु जैसे प्राण अरु इन्द्रियों के संवाद बिषे वाक् आदिकों की आख्यायिका श्रवणकरते हैं। अरु देवता अरु असुरों के संग्राम बिषे देवताओंने उद्गातापने करके स्वीकारकिये वाकादिकनके पापसे असुरों करके वधादि होनेकी आख्यायिका श्रवण करते हैं, सो सर्व प्राण की श्रेष्ठता के बोधकी उत्पत्ति के अर्थ कल्पित है। तैसेही श्रुति उक्त सृष्टिआदिक की प्रक्रिया भी अद्वैत बोधकी उत्पत्ति के अर्थ कल्पित है॥ अरु जो ऐसा कहे कि, संवाद श्रुति के मुख्यार्थ होनेसे सो श्रुति उक्त उदाहरणभी असिद्ध होवेगा। सो कथनबने नहीं, क्योंकि अन्य शाखाबिषे अन्य प्रकारसे प्राणादिकों के संवादके श्रवणसे जब संवाद परमार्थरूपहीहोता, तब सो संवादएक रूपही सर्व शाखाओं बिषे श्रवणकरनेमें आवता। अरु अनेक विरुद्ध प्रकारसे जो श्रवणकरने में आवता है सो तैसे सुनाजाता नहीं। [श्रुतियां कहीं कहीं प्राणादिक परस्परमें विवाद करतेहुये आपही अपने निर्णय करने में असमर्थ होय प्रजापति(ब्रह्मा) के पासगये। अरु अपने परस्परके विवादकेहेतुको श्रवणकराय अपने विवाद का निर्णय इच्छते हुये। तब प्रजापतिने कहा कि तुम्हारे सर्व के मध्यसे। जिसके निकस जाने से यह शरीर अमंगलरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होय तिसको तुम सर्वबिषे श्रेष्ठ जानो । इसप्रकार तिन । प्राणादिकों । का । अपने निर्णयार्थ । देहसे बाह्य गमन करना श्रवण होता है । अरु किसी एक श्रुतिबिषेतो । उन प्राणादिकों को स्वतन्त्र होने करके । परस्पर में अपनी २ ज्येष्ठता श्रेष्ठता के निर्णयार्थ परस्पर में कहते हुये कि । जिसके उत्क्रमण होने (निकसजाने) से यहशरीर मृतहुआ पतनहोय, सोई अपने सर्व मध्य श्रेष्ठ है । इसप्रकार विचार के । अपने ज्येष्ठत्व श्रेष्ठत्व के निर्णयार्थ । तिनका देहसे बाह्यगमन कहा है । अरु किसी श्रुतिमें करके पुनः वाक्, चक्षु, श्रोत्र, अरु मन, इन चतुष्टयों को, मुख्य प्राण से ये भिन्नहैं, ऐसा श्रवणकरनेमें आवताहै । अरु कहीं त्वक् आदिक को प्राण करके श्रवण करते हैं ॥ इसप्रकार परस्पर विरुद्ध अनेकप्रकार से प्राण अरु इन्द्रियों के संवादका श्रवण इस अभिप्राय से कहते हैं ।] अरु जिस करके । परस्परमें । विरुद्ध अनेक प्रकारसे । प्राण अरु इन्द्रियों का । संवाद श्रवण करने में आवता है, तिसही करके । प्राणादिकों के । संवाद की श्रुतियों का अपने मुख्यार्थबिषे तात्पर्य नहीं, किन्तु अन्य अर्थ बिषे ही है । अर्थात् सर्व के मध्य प्राण के ज्येष्ठत्व श्रेष्ठत्व के लखावने के अर्थ बिषे ही सर्व संवादकी श्रुतियों का तात्पर्य है, क्योंकि सर्व विरुद्ध संवादों में भी प्राण की ज्येष्ठ श्रेष्ठता अविरुद्धही प्रकाशित है । तिनका तात्पर्य है । [उक्त दृष्टान्त के अनुसारसे जगदुत्पत्ति के वाक्य भी । मुख्यतासे । स्वार्थबिषे तात्पर्यवाले नहीं । क्योंकि कहींक । तैत्तिरीय उपनिषद् की " तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः " इस । श्रुति बिषे आकाशादिकों के क्रम से सृष्टि कहीहै । अरु कहींक । छांदोग्य उपनिषद्बिषे " तत्तेजोऽसृजत " इत्यादि प्रकार तेजके क्रमसे सृष्टि कही है । अरु कहींक । प्रश्नोपनिषद् बिषे " आत्मनः एष प्राणो जायते " इत्यादि प्रकारप्राणादिकों के क्रमसे सृष्टि कहीहै । अरु कहींक क्रमबिना ही सृष्टि कहीहै । इसप्रकार । सृष्टिप्रतिपादक श्रुतियों का । पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्परमें विरोध देखने से यहां कहते हैं] तैसेही उत्पत्ति के वाक्य भी शाखाओं के भेदसे विरुद्ध अनेक प्रकार के होने के कारण [वो अपने [मुख्यार्थ बिषे तात्पर्य वाले नहीं, किन्तु अन्य अर्थ बिषे तात्पर्य वाले हैं [अर्थात् सृष्टिकी प्रतिपादक श्रुतियों का परस्पर में भिन्न भिन्न विरुद्ध कथनसे प्रतीत होताहै कि वास्तव करकेसृष्टिकुछ हुईनहीं, क्योंकि जो वास्तवकरके सृष्टि हुई होती तो सर्व श्रुतियोंकी एक वाक्यता अरु एकही क्रमहोता, अरु तिसही करके उन श्रुतियों के [सृष्टि प्रतिपादक वाक्य] अपने [मुख्यार्थबिषे तात्पर्यवाले नहीं, किन्तु अन्य मुख्यार्थ बिषे तात्पर्य वाले हैं [अर्थात् सृष्टिप्रतिपादक श्रुतियों बिषे परस्पर में विरुद्ध क्रमहोने से प्रतीत होता है कि उन श्रुतियों का तात्पर्यार्थ सृष्टि के प्रतिपादन बिषे न होयके एक अद्वैत आत्मतत्त्वके लखावने बिषे तात्पर्य है, क्योंकि उन श्रुतियों बिषे क्रमका विरुद्ध भेदहै परन्तु सर्व श्रुतियों ने सृष्टिका कारण अधिष्ठान एक सत् चैतन्य आत्मा ब्रह्मही कहाहै, ताते उन सर्व श्रुतियोंका मुख्य तात्पर्य एक अद्वैत आत्मतत्त्वके प्रकाशने बिषे है अन्यबिषे नहीं [अरु जो ऐसा कहे कि कल्पकल्पकी सृष्टिके भेदसे संवादकी श्रुतियोंकाभी सृष्टि सृष्टि के प्रति अन्यथापनाहोवेगा, सो कथनबने नहीं, क्योंकि उक्तबुद्धिकी उत्पत्तिरूप प्रयोजनके विना संवादकी श्रुतियोंकी निष्फलताहोतीहै ताते। अरु संवाद अरु उत्पत्तिकी श्रुतियोंका, उक्त बुद्धिकी उत्पत्ति के विना अन्य प्रयोजनवान्-तनाकल्पना करनेको शक्य नहीं [अर्थात् प्राणादिकों के संवाद की श्रुतियों का अरु सृष्टिप्रतिपादक श्रुतियोंका, शरीरादिसंघातमें तर्वका ज्येष्ठ श्रेष्ठत्वपना, अरु आत्माका एक अद्वैतपना जानने की बुद्धि की उत्पत्तिकेविना अन्यप्रयोजन कल्पना करने को श-य नहीं [अरु जो ऐसा कहै कि प्राणादि भावकी प्राप्तिके लिये यानार्थ प्राणादिकों का कीर्त्तन है, सो कहना बनेनहीं, क्योंकि लहकी उत्पत्ति अरु प्रलयकी प्राप्ति यह सर्वकोही अनिष्टहोवे है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आश्रमास्त्रिविधाहीनमध्यमोत्कृष्टदृष्टयः । उपास
पदिष्टेयंतदर्थमनुकम्पया १६ । ६५ ॥

ताते उक्त आख्यायिका प्राणका कीर्त्तननहीं । एतदर्थ उत्पत्
दिकोंकी जो श्रुतियां हैं सो आत्माके एकताकी बुद्धिकी उत्पत्
हैं, अन्य अर्थवाली कल्पना करनेको योग्यनहीं । एतदर्थ उत्
आदिकों का किया भेद किसीप्रकार से भी है नहीं १५ । ६

१६ । ६५ हेसौम्य ! । शंका । ननु, "एकमेवाद्वितीयम्" ए
अद्वितीयहै, इत्यादि श्रुतियोंके वाक्य प्रमाणसे यदि परब्रह्म
आत्मा, नित्यशुद्ध, नित्यबुद्ध, नित्यमुक्त, स्वभाववाला एकप
रूपसत्है अरु अन्यअसत्यहै, तब "आत्मा वा अरेद्रष्टव्यः" "
त्माऽपहतपाप्मा, सक्रतुंकुर्व्वीत" " आत्मेत्येवोपासीतेत्या
अरेमैत्रेयी आत्मा निश्चय करके देखनेयोग्यहै, जो आत्मा
रहितहै सो ध्यानकरने के योग्यहै, सो अधिकारी क्रतु (उप
के संकल्प) को करे, आत्मा है इसप्रकारही उपासना कर
इत्यादि श्रुतिवाक्योंसे यह उपासना किस अर्थ उपदेशकिय
अरु अग्निहोत्रादि कर्म्म किसवास्ते उपदेशकिये हैं ॥ जहां
शंकाहै तहां सिद्धान्ती कहे हैं, कि हे वादी ! तहां कारण श्रव
"आश्रमास्त्रिविधाहीनमध्यमोत्कृष्टदृष्टयः" । (आश्रम तीन प्र
के हैं ,मन्द,मध्यम, अरु उत्कृष्ट, दृष्टिकरके युक्तहैं) अर्थात् आ
(अर्थात् आश्रमवाले अधिकारी) अरु आश्रमशब्दके देखा
अर्थ शूद्रसे पृथक् सन्मार्गगामी वर्ण (वर्णवाले अधिकारी)
प्रकारकेहैं । प्रश्न । कैसे वे तीन प्रकारकेहैं । उत्तर । वे, मन्द
ब्रह्मको विषय करनेवाली, अरु ,मध्यम, कारण ब्रह्मको
करनेवाली, अरु (उत्कृष्ट, शुद्ध अद्वैतको विषय करनेवाली,
(बुद्धिकीसामर्थ्य)करके युक्तहै (वा'मन्द वैश्यवर्ण, मध्यम क्ष
वर्ण, उत्कृष्ट ब्राह्मणवर्ण, यहतीन क्रमशः उक्तप्रकारकी दृष्टि
युक्तहैं "(उपासनोपदिष्टेयंतदर्थमनुकम्पया" (तिनकेअर्थ दया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वसिद्धान्तव्यवस्थासुद्वैतिनोनिश्चिताद्दृढम् । परस्परंविरुध्यन्तेतैरियंनविरुध्यते १७। ९६ ॥

यहउपासना उपदेश कियाहै? अर्थात् तिनमन्द अरु मध्यम कार्यब्रह्मकी अरु कारण ब्रह्मकी दृष्टिवाले वर्णाश्रमियोंकेअर्थ, कि मन्द अरु मध्यम दृष्टिवाले सन्मार्गगामीहुये इससर्वोत्तम ब्रह्म आत्माकी एकताकी सम्यक् दृष्टिको कैसे प्राप्तहोवेंगे, इनकोभी अभेद दृष्टि 'जोपरम कल्याणकारीहै, प्राप्तहोनीचाहिये' इसप्रकार विचार के परमदयालु वेद ने उनपर दयाकर के यह उपासना उपदेश कहीहै, अरु कर्म उपदेश कियेहैं। अर्थात् जो मन्द मध्यम अधिकारीहै, जिनकोअभेद सर्वात्मदृष्टि प्राप्तहोनेकी इच्छाहै तिन पुरुषों के हितार्थ दयाकरके वेद भगवान्ने उनके अन्तःकरणकी शुद्धिकेअर्थ विहित नित्य निष्कामकर्म अरु अन्तःकरणकी स्थिरताके अर्थ प्रणवकी वा श्रवण मननरूपसे आत्माकी ज्ञानांग उपासना कही है, क्योंकि अन्तःकरणके मलविक्षेपरूप दोष अभाव हुये विना आवरण भंगपूर्वक सर्वात्म अभेददृष्टि प्राप्तहोवे नहीं। "आत्मैकएवाद्वितीय" "आत्मा एकही अद्वितीय है" इसप्रकारकी निश्चयात्मक उत्तमदृष्टि जिनको प्राप्तहुईहै तिन उत्तमाधिकारी के अर्थ कर्मउपासना कहीनहीं। क्योंकि "यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनोमतं तदेवब्रह्मत्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते" "तत्त्वमसि" "आत्मैवेदं सर्व्वमिति" [उपास्य जोहैसो ब्रह्महीनहीं, इसप्रकार के निषेधसे उपासनाको मन्दमध्यम दृष्टिवाले पुरुषोंकी विषयता भासतीहै, ऐसा कहते हैं] जिसको मनसे मननकरता नहीं, अरु जिसने मनको जान्यो है तिसहीको तू ब्रह्मजान, जिस इसकोलोक उपासतेहैं यहब्रह्मनहीं। सो तूहै, आत्माही यहसर्व है ॥ इत्यादि श्रुतियोंसे १६। ९५ ॥

१७।९६ हेसौम्य! शास्त्रअरु युक्तिकरके निश्चितहोनेसे अद्वैत आत्माका दर्शन (यथार्थ अनुभव) सम्यक् दर्शनहै, ताते अन्यदर्शन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शास्त्र अरु युक्तिसे बाह्य होनेकरके मिथ्यादर्शन हैं, यह निर्णय किया। अब इसकथनके हेतुसे भी द्वैतवादियोंका मिथ्यादर्शनत्व क्योंकि उनद्वैतवादियोंको रागद्वेषादि दोषोंकरके युक्तपनाहै तां अरु उनकेयहां अद्वैतबोधक श्रुतियोंका अग्रहणहै अरुजो कदा ग्रहणभीहै तो विपरीत अर्थसे है तातें। प्रश्न। उन द्वैतवादियों उक्त दोषकरके युक्तपना कैसेहै,। उत्तर। तहां कहतेहैं "स्वसिद्धा व्यवस्थासु द्वैतनो निश्चितादृढम्"। "द्वैतवादी अपने सिद्धान्त रचनाके नियमोंविषे दृढ़ निश्चितहुये" अर्थात् कपिल कणाद बुद्ध इनआदिकोंकी दृष्टिके अनुसारी जो द्वैतवादी हैं सो अ सिद्धान्तकी रचनाके नियमोंमें "एवमेवैषपरमार्थोनान्यथेति" यह ऐसेही परमार्थ रूप है अन्यथा नहीं? इसप्रकार तहां त अपने अपने सिद्धान्तोंविषे। दृढ़ आसक्तहुये। अरु अपने प्र पक्षीको देख तिसकेअर्थ द्वेषकरतेहुये। अर्थात् द्वैतवादी अपने कल्पितसिद्धान्तोंमें आसक्तहुये। अरु "परस्परं विरुध्यन्ते तैरि विरुध्यते"। "परस्पर विरोधकरतेहैं तिसकरके यह विरोधकोप तानहीं" अर्थात् कपिलादि द्वैतवादी स्वकल्पित सिद्धान्तमें पूर्वक आसक्तहुये अपने प्रतिपक्षियों से द्वेषमान उनकी नि पूर्वक उनके सिद्धान्तोंका खंडनकरते हैं। इसप्रकार राग द्वेष के युक्तहुये अपने सिद्धान्तके दर्शन के निमित्तही परस्पर विरो कोपावते हैं। तिन परस्पर विरोधवादियोंकरके यह हमारा वेदो आत्माकी एकताके दर्शनका पक्ष सर्वसे अपृथक् (अनन्य) होवे "जैसे पुरुष अपने हस्त पादादिकोंसे विरोधको प्राप्तहोता न तैसेही, विरोधको पावता नहीं। अरु सर्वत्र एक आत्माकी दृ वाला सम्यक् आत्मवेत्ता "नातिवादी" अतिवादी किसीकी निन्दा स्तुतिकरनेवाला होतानहीं। इसप्रकार रागद्वेषकी अ श्रयता (त्यागी) होनेसे आत्माकी एकताकी बुद्धिही सम्यग् र्शनहै, इतर नहीं। इत्यभिप्रायः १७। ९६॥

१८।९७ हेसौम्य!। प्रश्न। किसहेतु करके यह अद्वैत सर्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection: Digitized by eGangotri

अद्वैतंपरमार्थोहिद्वैतंतद्भेदउच्यते । तेषामुभयथाद्वैतंतेनायंनविरुद्ध्यते १८ । ९७ ॥

पक्षतिन द्वैतवादियोंसे विरोधको पावतानहीं,। उत्तर। "अद्वैतंपरमार्थोहिद्वैतंतद्भेदउच्यते" ६ अद्वैतही परमार्थरूपहै, द्वैततिसका भेद कहतेहैं; अर्थात् जिसकरके अद्वैतही परमार्थरूपहै, अरु द्वैत जो नानात्व सो तिस अद्वैतका भेद कहिये कार्य्य कहतेहैं। अर्थात् जितनाकुछ द्वैत नानात्वहै सो सर्व अद्वैतकाही भेदरूपकार्य है, क्योंकि "। एकमेवाद्वितीयम्, तत्तेजोऽसृजत"८ एकही अद्वितीयहै, सो तेजको सृजताहुआ ? इसप्रकार श्रुतिका प्रमाणहै ताते। अरु निर्विकल्प समाधि बिषे, अरुघन सुषुप्ति बिषे, अरु गाढ़मूर्च्छाबिषे, द्वैतके अभावहुये अपने चित्तके स्फुरणके अभावसे द्वैत के अदर्शनरूप युक्तिकरके अद्वैतही सिद्धहै। अर्थात् उक्तप्रकार समाधिसुषुप्ति अरु मूर्च्छा इनतीनोंअवस्थाबिषे चित्तवृत्तिके अफुर हुये द्वैत के अभावसे केवल उनका साक्षी अद्वैत आत्माही अवशेष रहता है, इस युक्तिके सारानानात्व चित्तकी स्फुरणाकरके कल्पित है, अरु विना आश्रय कल्पना होवे नहीं, अतएव एक अद्वैत आत्मसत्ताके आश्रय चित्तकी स्फुरण नानात्वकी कल्पना करेहै। । ताते नानात्वको अद्वैतका कार्य कहते हैं, कारण नहीं। अरु "तेषामुभयथाद्वैतं तेनायंनविरुद्ध्यते" ६ तिनको उभयप्रकार सेभी द्वैतही है, तिनसे यह विरोधको पावता नहीं; अर्थात् तिन द्वैतवादियोंकोतो व्यवहार अरु परमार्थ इन उभयप्रकारसेभीद्वैत हीहै। अरु जब उन भ्रान्तभेदी पुरुषोंको द्वैतकी दृष्टिहै, अरुअस्मदादि अभ्रान्त अभेदी पुरुषोंको अद्वैतकी दृष्टिहै, तब तिसहेतुकरके यह हमारा अद्वैतपक्ष तिन्होंसे बिरोधको पावता नहीं "। इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते "। "नतुतद्द्वितीयमस्ति "। 'इन्द्र माया करके बहुतरूप पावता है' सोतो द्वितीय हैनहीं, इन श्रुतियों के प्रमाणसे। [भ्रान्तिरूप मूलहै जिसका ऐसे द्वैतके सिद्धान्तसे,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मायया भिद्यतेह्येतन्नान्यथाऽजंकथञ्चन । तस्मा
भिद्यमानेहि मर्त्यतामृतंव्रजेत् १९ । ९८ ॥

प्रमाणरूप मूलहै जिसका ऐसा अद्वैत सिद्धान्त अविरुद्धहै,
अर्थको यहां दृष्टान्तसे प्रतिपादन करतेहैं] जैसे उन्मत्त गजा
हुआ जो पुरुष सो पृथ्वी पर आरूढ़ हुए पुरुष के प्रति "गा
रूढ़ोऽहं वाहयमां प्रतीति" ८ मैं गजारूढ़ हौं मेरे प्रति बहना
(लेजा) इसप्रकारके कहनेवाले भी उन्मत्त पुरुषों को देखि
तिसके ताईं बिरोध बुद्धिसे बहन करता नहीं, तद्वत् । ताते
मार्थ से ब्रह्म चैतन्य द्वैतबादियों का भी आत्माही है । इस
से यह हमारा पक्ष तिन द्वैतबादियों से बिरोध को पावता नहं
क्योंकि अपने आप आत्मा से किसी का भी बिरोध सम
नहीं १८ । ९७ ॥

१९ । ९८ हेसौम्य ! द्वैत जो है अद्वैतका भेदकहिये कार्यहै,
प्रकारका जो कथन किया ताते द्वैत भी अद्वैतवत् परमार्थसे
होवेगा, जहां इसप्रकार की किसीको भी शंकाहोय तहां कहते
परमार्थ से सत्रूप जो अद्वैत है, यह तिमिर दोष करके युक्त दृ
वाले पुरुषों करके कल्पित अनेक चन्द्रमावत्, अरु सर्प अरु ज
धारा आदिक भेदोंसे रज्जुवत् "मायया भिद्यते ह्येतन्नान्यथा
कथञ्चन" ८ मायासे भेदको पावताहै, यह अजन्मा किसी
प्रकारसे अन्यथा होता नहीं ? अर्थात् मायाकरके भेदको पावता
परमार्थ से नहीं [बिवाद का विषय जो भेद, सो मिथ्या है, भे
होनेसे चन्द्रादिकोंके भेदवत् ॥ बिवादका विषय जो आत्मतत्
सो स्वरूप से भेद रहित है, क्योंकि निरवयवहै ताते, अरु नि
है ताते, अरु अजन्मा है ताते, व्यतिरेक से मृत्तिकादिकों वत
इसप्रकार कहते हैं] क्योंकि आत्मा निराकार निरवयव है ताते
अरु जिसकरके सावयव वस्तु अवयवन के अन्यथा भाव
भेदको प्राप्त होता है। जैसे घटसरावादिकन के भेदों से मृ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजातस्यैवभावस्यजातिमिच्छन्तिवादिनः । अजातोह्यमृतोभावोमर्त्यतांकथमेष्यति २०।९९॥

का भेद को पावती है, (यह व्यतिरेकी दृष्टान्त है, ताते निरवयव अरु अजन्मा जो अद्वैत सो किसी भी प्रकार से अन्यथा (भेदको प्राप्त) होता नहीं, यह अभिप्राय है॥ अरु " तत्त्व तो भिद्यमानेहि मर्त्यतामेमृतं व्रजेत् " (जाते तत्त्वसे भेदको प्राप्त हुये अमृत मरनेकी योग्यताको प्राप्तहोवेगा ; अर्थात् जिसकरके परमार्थ से भेदको प्राप्त होनेके स्वभावसे अमृत (अमरणधर्मा) अरु अजन्माहुआ अद्वैत मरणकी योग्यताको प्राप्तहोवेगा । जैसे अग्नि शीतलताको प्राप्तहोवे तैसे सो स्वभाव के विपरीतपने की प्राप्ति, सर्व प्रमाणोंके विरोधसे अनिष्टहै । (अर्थात् अग्निका अपनी स्वभावभूत उष्णता को त्याग शीतलस्वभाव होना सर्व प्रमाणों से विरुद्ध है, तैसे निरवयव निराकार अजन्मा एक अद्वैत स्वभाववाले आत्मतत्त्वका, सावयव साकार सजन्मा नानाद्वैत स्वभाववाला विनाशीधर्माहोना सर्व प्रमाणों से अरु युक्तिअनुभव से विरुद्धहै, तातेसो किसीकोभी इष्टनहीं ।। एतदर्थ अजन्मा अविनाशी जो आत्मतत्त्व सो अपनी मायाकरकेही भेदको पावता है परमार्थ से नहीं। एतदर्थ द्वैत किसीप्रकार भी परमार्थ से सत्य है नहीं १९।९८॥

२०।९९ हे सौम्य ! जो [इस प्रकार अपने पक्षको कहकै, अब अपने वेदान्ती के यूथबिषे परिगणित वादियोंके पक्षको अनुवादकरके दूषण देतेहैं] पुनः कोई एक उपनिषदों की व्याख्या करनेवाले वाचाल ब्रह्मवादी (उपासक) " अजातस्यैव भावस्य जाति मिच्छन्तिवादिनः " (वादीलोक अजन्मा भावकी उत्पत्तिको इच्छते हैं ; अर्थात् जे अन्तरसे उपासना के आग्रहवाले अरु बाह्य अद्वैत ज्ञानके वक्ता ऐसे जे वाचाल ब्रह्मवादी सो स्वभावसे अजन्मा अरु अमररूपही आत्मतत्त्वरूप भावकी पर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नभवत्यमृतंमर्त्यंनमर्त्यममृतन्तथा । प्रकृतेरन्य
भावोनकथञ्चिद्भविष्यति २१ । १०० ॥

मार्थसेही उत्पत्तिको इच्छतेहैं "जातंचेत्तदेवमर्त्यतामेष्यत्यवश्य
८जन्म को पाया है सो अवश्यही मरणकी योग्यताको प्राप्तहो
गा, इस न्यायसे तिनका सो आत्मा, स्वभाव से अजन्मा
अमृतभावरूपहुआ मरणकी योग्यताको कैसे प्राप्तहोवेगा, कि
किसी प्रकारसेभी मरणकी योग्यतारूप स्वभाव की विपरीत
को पावनेकानहीं। अर्थात् जो तत्त्ववास्तवकरके अपने स्वरूपसे
अजन्मा अविनाशी शुद्धबुद्ध मुक्तस्वभावहै सो कभी किसीप्र
सेभी अपने स्वरूप स्वभावसे अन्यथाभावको प्राप्तहोता नहीं
इत्यर्थः २० । ९९ ॥

२१ । १०० हे सौम्य ! [पदार्थोंको स्वभावके विपरीतपनेकी
प्राप्तिअघटितहै, ऐसा जो कहा तिसहीको वर्णन करतेहैं] "नभव
त्यमृतंमर्त्यंनमर्त्यममृतन्तथा " ८ अमृत मरनेकेयोग्य होता नहीं
तैसे मरनेके योग्य अमृत होता नहीं ; अर्थात् जिस करके लो
बिषे अमृत (अविनाशी) वस्तु मरने (बिनाशके) योग्य हो
नहीं । ताते अग्नि के [यहां यह अर्थहै कि अग्नि के स्वभावक
उष्णपनेको शीतलपनेकी प्राप्तिरूप विपरीतपना अयुक्तहै, तैं
अन्य ठिकाने भी स्वभाव का विपरीतपना अयुक्त है, क्योंकि तै
हुयेस्वरूप के नाशका प्रसंग प्राप्तहोताहै ताते] उष्णस्वभाववत
ताते " प्रकृतेरन्यथाभावो नकथञ्चिद्भविष्यति " ८ स्वभाव
अन्यथा भाव किसीभी प्रकारसे होता नहीं; अर्थात् जैसे स्वरूप
ही जोअग्निका उष्णस्वभाव सो अन्यथा होतानहीं ८तैसेहीस्वभा
का अन्यथाभाव (स्वरूपसे इतरपना) कदापि किसी प्रकारसे
होगानहीं॥ हे सौम्य! वस्तुको अन्यथाकरना 'जैसेआम्रकाफलप्र
म खट्टाहोताहै सोई पश्चात् परिपक्व अवस्था बिषे मधुर होता
सो कालकरके होताहै, क्योंकि वस्तुको अन्यथा करना कालक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वभावेनामृतोयस्यभावोगच्छतिमर्त्यताम् । कृतके नामृतस्तस्यकथंस्थास्यतिनिश्चलः २२ । १०१ ॥

लक्षणहै, परन्तु जो वस्तु उत्पन्न होती है सो कालके व्यवधानसे युक्तहोने करके, कदाचित् कालके प्रभावसे अन्यथा भावको प्राप्त होवे तो होवे परन्तु जो अजन्मा कालके व्यवधानसे रहितसर्वदा एकरस स्वभाव है तिसका किसीकरके किसी प्रकार से भी अन्यथाभाव होवे नहीं। यह परम सिद्धान्त है २१ । १००॥

२२। १०१ हे सौम्य! "स्वभावेनामृतो यस्य भावो गच्छति मर्त्यताम्" {जिसका स्वभावसे अमृतरूप भाव मरनेकी योग्यता को प्राप्त होताहै; अर्थात्। शङ्का। ननु, ब्रह्म कारणरूपसे कार्य्योत्पत्तिके पूर्व मरणरहित हुआभी कार्यके आकार से उत्पत्तिके अनन्तर कालबिषे मरणकी योग्यताको पावेगा, ताते स्वरूपके भेदसे दोनों अविरुद्धहैं। जहां ऐसी शङ्काहै तहां कहते हैं। जिस वादीका स्वभावसे अमृतरूप भाव मरणकी योग्यता को पावताहै। अर्थात् परमार्थ से जन्मको पावता है तिस वादीकी "प्रागुत्पत्तेः सभावः स्वभावतोऽमृत इति" सो भाव, उत्पत्ति से पूर्व स्वभाव से अमृत है। ऐसी जो प्रतिज्ञा सो मिथ्याही होवेगी। पृश्न। तब कैसे है। उत्तर "कृतकेनामृतस्तस्य कथं स्थास्यति निश्चलः" { तिसका अमृत निश्चलहुआ कैसे स्थितहोवेगा; अर्थात् तिस वादीका जन्य होनेकरके अमृत, सो भाव निश्चलहुआ। अर्थात् अमृतपने के स्वभावकरके। कैसे स्थित होवेगा, किन्तु किसी प्रकारसे भी स्थित होवे नहीं। इसका यह अभिप्रायहै कि आत्मा की उत्पत्ति वादीके मतबिषे सर्वदा अजन्मा वस्तु कोई है नहीं, किन्तु यह सर्ववस्तु मरणके योग्य है, इसकरके मोक्षके अभाव का प्रसंग प्राप्त होवेगा २२ । १०१ ॥

२३। १०२ हे सौम्य! [परिणामवादकी सृष्टिप्रतिपादक श्रुतिके अनुसारसे अंगीकार करनेकीयोग्यताकी शङ्काकरकेनिषेधकरतेहैं]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूततोऽभूततोवाऽपिसृज्यमानेसमाश्रुतिः । निश्चि
युक्तियुक्तश्चयत्तद्भवतिनेतरत् २३ । १०२ ॥

शङ्का।ननु,आत्माकीअनुत्पत्तिके वादीको सृष्टिकीप्रतिपादक श्रु
प्रमाणिक नहोवेगी, जहांऐसी शङ्काहै तहां कहतेहैं, सृष्टिकी प्र
पादकश्रुतिहैं यह जो तेराकहनाहै सो सत्यहै परन्तु सो अन्यअ
परायणहै, सृष्टिपरायण नहीं। अरु यह हमने "उपायःसोवतार
त्सो अद्वैत बोधकी उत्पत्त्यर्थ उपायहै? इस प्रकरणके पंचदश
वें श्लोकबिषे कहाहै। अब समाधानके पूर्व कहेहुये भी तेरा
अरु उत्तर जो कहतेहैं सो कहनेको वांछित अर्थकेप्रति सृष्टि
पादकश्रुतिकेअक्षरोंके अनुलोमपनेके विरोधकीशङ्कामात्रकेनि
रणार्थ है "भूततोऽभूततोवाऽपि सृज्यमाने समाश्रुतिः" भूत
वा अभूतसेभी उत्पन्न होनेवाले बिषे श्रुतिसमहै? अर्थात् भूत
कहिये परमार्थसे,उत्पन्न होनहार वस्तुबिषे,वा अभूत,कहियेमा
से, बा माया विनाही सृज्यमान वस्तुबिषे, सृष्टिकीश्रुति तुल्य
[यहां यह भावहै कि, परिणामवादबिषे अरु विवर्तवादबिषे
प्रतिपादक श्रुतियोंके अविशेषसे अद्वैतके अनुसारी श्रुति अरु
के वशते विवर्त्तवादकीही अंगीकारकरनेकी योग्यताहै]।शङ्का
मुख्य अरु गौण दोनों कार्योंके मध्य मुख्य बिषे शब्दके अर्थ
निश्चय युक्तहै,। इसप्रकार जो वादीने कहा सो बने नहीं, क्यों
मिथ्यापने विना अन्यप्रकारसे सृष्टिअप्रसिद्धहै ताते, अरु नि
योजन है ताते। [अर्थात् वास्तव सिद्धान्तके विचारसे देखिये
आप्तकाम एकअद्वैत परिपूर्णपरमात्माको सृष्टिरचनेके प्रयोजन
अभाव होनेसे सृष्टि अप्रयोजन है। अरु " सबाह्याभ्यन्तरोह्य
< बाह्य अन्तरसहित है अरु अजन्मा है >। इस श्रुतिकेप्रमाण
अरु अविद्या अवस्था बिषेही विद्यमान सर्वगौणी (स्वप्नगत
थादि) अरु मुख्या जाग्रतगत घटादि रूपसृष्टि परमार्थ
नहीं, इसप्रकार हम कहते हैं। ताते [सृष्टिकी श्रुति को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नेहनानेतिचाम्नायादिन्द्रोमायाभिरित्यपि । अजायमानोबहुधामाययाजायतेतुसः २४ । १०३ ॥

के अनुसारी पनेकेहुये प्रमाण अरु युक्तिके अनुग्रह सहित अद्वैत ही अंगीकार करनेके योग्यहै, इस प्रकार फलित अर्थ कहतेहैं] ताते " निश्चितं युक्तियुक्तञ्च यत्तद्भवति नेतरत् " (निश्चित युक्ति करके युक्त सोई होता है अन्यनहीं ; अर्थात् श्रुति करके निश्चित जो एकही अद्वितीय अजन्मा अमृत रूप वस्तु है, अरु युक्तियों करके युक्त है, सोई श्रुतिका अर्थ होनेको योग्य है अन्य कदाचित् भी नहीं। इसप्रकार इस पूर्वके ग्रंथसे कहते हैं २३ । १०२ ॥

२४।१०३॥ हेसौम्य! [सृष्टिकेमिथ्यापनेके स्पष्टकरनेरूपद्वारसे अद्वैतकोही श्रुतिके अर्थपनेसे निर्द्धारकरनेको श्रुतिकेनिश्चयकोही वर्णन करते हैं]। प्र०। श्रुतिका निश्चय कैसा है ? उ०। जब भाव रूपही सृष्टिहोय तो तिसकरके नाना सत्यही होवेगा। अरु जब नानात्व सत्यहोय, एतदर्थ तिसके अभावके दिखावनेके अर्थ वेदका वाक्य न होवेगा। अरु " नेहनानेतिचाम्नायादिन्द्रोमायाभिरित्यपि " (इसबिषे नाना कुछ भी नहीं, यह वेदका आम्नाय (वाक्य है, अरु इन्द्र मायाकरके ऐसे भी है ; अर्थात्। " नेह नानास्तिकिञ्चन " । (यह नाना कुछ भी नहीं , इत्यादि, यह द्वैतभाव के निषेधरूप अर्थवाला वेदका वाक्य है। (अर्थात् जो यह सृष्टिभाव (सत्य, कुछवस्तु) रूप होती तो, सृष्टि प्रतिपादक श्रुतियां सर्व्व उपनिषदोंमें एकरूपही होतीं, अरु " नेहनानास्ति किञ्चन " यह नानात्वके अभावके प्रतिपादक अर्थवाली श्रुति न होती, अतएव सृष्टिके वाक्यों में विरुद्ध नानात्व अरु नानात्वके निषेध की श्रुतियों के देखने से नानात्वका अभावही प्रतीत होताहै। ताते प्राणके संवादवत् । अर्थात् प्राण अरु इन्द्रियों के संवाद की जो आख्यायिका है सो सर्व संघात में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणकी ज्येष्ठता श्रेष्ठताके लखावनेके अर्थ कल्पित है, तैसेही अद्वैत आत्मतत्त्वके निश्चयकरावनेके अर्थ कल्पित जो सृष्टि मिथ्याही है अरु "इन्द्रोमायाभिः" ८इन्द्रमायाकरके> इसप्र मिथ्या अर्थके प्रतिपादक मायाशब्दकरके कथनहै ताते शङ्का मायाशब्द प्रज्ञाका वाचीहै, ताते मिथ्याअर्थवाला नहीं है, । यह जो तेरा कथन है कि मायाशब्द प्रज्ञाका वाची है सो है । [यहां यह अर्थ है कि मायाशब्द की वाच्य जो प्रज्ञा चैतन्य ब्रह्म है नहीं, क्योंकि "भूयश्चान्तेविश्वमायानिवृत्ति ८ पुनः अन्तबिषे विश्व (कार्य) अरु माया (कारण) इसकी वृत्ति होती है> इत्यादिक श्रुतिवाक्यों से मायाकी निवृत्ति ण करने में आवतीहै ताते । किन्तु यह प्रज्ञा इन्द्रियजन्य है तिसको अविद्या के अन्वय अरु व्यतिरेक की अनुसारी होने अविद्यारूप होने करके मिथ्या होनेसे मायाशब्द के मिथ्या वान्पने बिषे असंभव नहीं] तथापि इन्द्रियजन्य प्रज्ञाको विद्यात्मक होने करके माया (मिथ्या) पनेके अंगीकारसे नहीं । अर्थात् अविद्या से आकाशादि भूत तिनसे इन्द्रियां ति प्रज्ञा इसप्रकार होनेसे अविद्या का अन्वय जो अविद्यात्मक तिसको मायारूप से अंगीकार करने में दोष नहीं, एतदर्थ शब्द करके जो परमात्मा सो अविद्यारूप इन्द्रियजन्य बुद्धि मय माया करके बहुत रूपहुआ प्रतीत होता है । तथाच "जायमानो बहुधा विजायत इति" ८ जन्मरहित हुआ बहु कारसे जन्मता है> इस श्रुतिके प्रमाणसे । ताते "अजायमा बहुधा मायया जायते तु सः" ८ सो तो जन्म रहित हुआ मा करके ही बहुत प्रकार जन्मता है; अर्थात् सो इन्द्र नामवा परमात्मा मायाकरके ही बहुत रूपसे जन्मता है । अतएव एकही अग्निबिषे शीतलता अरु उष्णता ' जो परस्परमें वि है, इन दोनों का होना असंभव है, तैसे एकही आत्मा जन्मरहित अजपना, अरु बहुत प्रकार से जन्मपना, यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संभूतेरपवादाच्चसम्भवः प्रतिसिद्ध्यते। कोन्वेनंजनयेदितिकारणंप्रतिसिद्ध्यते २५। १०४॥

[जो परस्परमें विरोधी हैं] संभवे नहीं। एतदर्थ सो परमात्मा माया करकेही बहुत प्रकारसे जन्मताहै, यह कथन युक्तही है। अरु फलवान् होने से आत्मा की एकता का ज्ञानही सृष्टिकी श्रुतियोंका निश्चितार्थ है " तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यत " ८ तहां एकताके देखनेवालेको क्या मोह अरु क्या शोक है? इत्यादि वेदमंत्र का कथन है ताते। अरु " मृत्योः समृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति " ८ जो यह एक आत्मा बिषे नानात्व को देखता है सो मृत्यु से मृत्यु को पावता है? इस प्रकार सृष्टि आदिक भेद दृष्टि निन्दित है २४॥ १०३॥

२५। १०४॥ हे सौम्य! [भेद दृष्टि के मिथ्यापनेबिषे अन्यहेतु कहते हैं] "सम्भूतेरपवादाच्च सम्भवः प्रतिसिद्ध्यते" ८ संभूतिके अपवाद (निन्दा) से संभव का निषेध करते हैं? अर्थात् "अंधतमः प्रविशन्तिये संभूतिमुपासते" ८ जो संभूति की उपासना करतेहैं सो अन्धतम में प्रवेश करते हैं? इस श्रुतिके प्रमाण करके संभूति के उपासकों की निन्दा से संभव कहिये कार्य का निषेध कियाहै। अरु जिस करके परमार्थसे संभूतिके विद्यमान होने से तिसकी निन्दा संभवे नहीं, अरु श्रुतिबिषे निन्दा कियाहै, एतदर्थ तिसका अवस्तुपना ही सिद्ध हुआ। शंका। ननु, विनाश(कर्म)से संभूति कहिये देवता की उपासना के समुच्चयार्थ संभूति की निन्दा है, जैसे " अन्धंतमः प्रविशन्ति ये अविद्यामुपासते" ८ जो अविद्या (कर्म)को उपासते हैं सो अन्धतममें प्रवेश को पावते हैं? इस वाक्यबिषे कर्म्म से उपासना के समुच्चय की विधिअर्थ कर्मकी निन्दा है तैसे, समाधान। संभूति (हिरण्यगर्भ) रूप विषयवाली देवताकी उपासना के, अरु विनाश शब्द के वाच्य कर्म से समुच्चय के विधानार्थ, संभूति की निन्दाहै, यह तेरा कथन सत्य है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथापि जैसे [यहां यह अर्थ है कि कामचार (यथेष्टाचरण)
वाद (यथेष्टकथन)अरु कामभक्षण (यथेष्टभोजन)इत्यादि
भाविक प्रमाद मय प्रवृत्तिरूप अशुद्धिका वियोग रूप संस
जैसे नित्य अग्निहोत्रादिकों का फलहै, तैसे निष्काम पुरुष क
अनुष्ठानकिये कर्म उपासनाके समुच्चय का फलरूप काम ना
अशुद्धि की निवृत्तिहै, सोभी संस्कार है] पुरुषके संस्काररूप
वाले विनाश नामक कर्म को स्वाभाविक अज्ञानसे जन्य प्र
रूप मृत्युका तरणरूप अर्थवान् पना है, तैसे पुरुषके संस्का
अर्थवाले देवताके ज्ञान अरु कर्म के समुच्चय को, कर्मफल
यक रागसे जन्य जो प्रवृत्ति तिस प्रवृत्तिरूप साध्य अरु सा
इन दोनोंकी इच्छारूप मृत्युका तरनारूप अर्थवान् पनाहै।
प्रकार कर्मरूप अविद्यासे दोनों एषणारूप मृत्यु से तरे हुये
उपनिषद्रूप शास्त्रके विचारबिषे तत्परहुये, विरक्तको परमा
के एकताके विद्याकी उत्पत्ति अन्तरायवाली नहीं, इसप्रकार
होनेवाली कर्मरूप अविद्याकी अपेक्षासे पश्चात् होनेवाली अ
भावकी साधनरूप ब्रह्मविद्या, एक पुरुषसे सम्बन्ध को प्राप्त
कर्मरूप अविद्यासे समुच्चय को प्राप्त होती है, इसप्रकार कहा
एतदर्थ अन्यअर्थ के होनेसे अमृत भावकी साधनरूप ब्रह्मवि
की अपेक्षाकरके संभूतिका जो अपवादहै सो निन्दा के अर्थ
होताहै, समुच्चयकी विधिके अर्थनहीं। अरु यद्यपि कर्मअरु उ
सनाका समुच्चय अशुद्धिके वियोग (अभाव) का हेतुहै, एत
सोई तिसका अन्यार्थ होवेगा, अपवादरूप अन्यअर्थनहीं। तथ
परमार्थ से पवित्रतारूप फलके अभाव से अपवादकी सि
एतदर्थ संभूतिके अपवादसे संभूतिका आपेक्षकही सत्पना
इसप्रकार परमार्थ सत्रूपआत्माके एकताकी अपेक्षाकरके अ
नामवाले संभव (कार्य) का निषेध कियाहै। इसप्रकार माय
रचित अरुअविद्यासे स्थितहुये जीवको अविद्याके नाशहुये स्वय
रूप होनेसे परमार्थसे "कोन्वेनं जनयेदिति कारणंप्रतिसिद्धयो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स एष नेति नेतीति व्याख्यातं निन्हुते यतः। सर्व्व मग्राह्यभावेन हेतुनाऽजं प्रकाशते २६। १०५॥

८ उसको कौन उत्पन्नकरेगा इसप्रकार कारणका निषेधकियाहै? अर्थात् इसको कौन उत्पन्नकरेगा 'किन्तु कोई भी नहीं। जैसे अविद्या से रज्जुविषे आरोपित, अरु पुनः रज्जुके विवेक से नष्ट हुये सर्पको कोई भी उत्पन्न करता नहीं, तैसे इसको कोई भी उत्पन्न करता नहीं, इसप्रकार कारणका निषेध करिहै। अभिप्राय यह है जो, अविद्यासे उत्पन्नहुये अरु नष्टहुये जीवका उपजावने वाला कारण कुछ भी नहीं, क्योंकि यह किसीसे भी हुआनहीं अरु कोईभी नहीं होताहुआ "नाऽयंकुतश्चिन्न बभूव कश्चिदिति श्रुतेः" २५। १०४॥

२६। १०५। हेसौम्य! [इस कथन करनेसे वास्तवकरके द्वैत होतानहीं इसप्रकार कहते हैं] "अथातो नेति नेतीति आदेशः" ८अब इसके अनन्तर नेति नेति यह आदेशहोताहै> इसप्रकार सर्व-निषेधके प्रतिपादन किये आत्माके दुःखसे बोधन करनेकी योग्यताको मानतीहुई श्रुति, बारम्बार अन्य उपायपने करके तिसही आत्माके प्रतिपादन करनेकी इच्छासे जो जो व्याख्यान किया है तिनसर्वको निषेध करेहै, अर्थात् [८ सर्वको निषेध करेहै> इत्यादि रूप अर्थको स्पष्ट करतेहुये "सएषनेति नेतीति" ८सो यह ऐसे नहीं, ऐसे नहीं> इस श्रुतिवाक्यका व्याख्यान करते हैं। यहां यहअर्थ है कि ८ सो यह ऐसे नहीं, ऐसे नहीं, इत्यादि रूप श्रुति विशेषके निषेधमुख द्वारसे आत्माकी अदृश्यरूपताको देखावती हुई जो दृश्यरूप कार्य, मन अरु वाणीका विषय है तिन सर्व को अर्थ से निषेध करेहै। सोई श्रुति परमार्थ से तो अदृश्य ऐसे कहतीहुई दृश्यका वस्तुपना बनेनहीं, इसप्रकार कहती है। अरु तैसेहुये वस्तुपनेके असंभवसे दृश्यवर्गका अवस्तुपनाही सिद्ध हुआ] "सएषनेति नेतीति व्याख्यातंनिन्हुते यतः" ८सो यहनेति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नेति व्याख्यानकरतेहैं जातेनिषेधकरतेहैं; अर्थात् सोयहऐसा
ऐसानहीं इसप्रकार आत्माकी अदृश्यताको देखावतीहुई श्रु
अर्थसे उत्पत्तिवाले बुद्धिके विषय ग्राह्यवस्तुको निषेधकरती
अरु अर्थसे[शङ्का ननु यह श्रुति प्रपंचके समूहको क्योंनिषेधक
है, अरु इसप्रकार होनेसे 'पंकप्रच्छालन, (कीचड़ के धोने
न्यायकी प्राप्तिसे व्याख्यानकिये अर्थकीव्यर्थता होवेगी,यह
करके "अग्राह्यभावेन"<अग्राह्यभावसे> इत्यादिपदोंका व्याख
करते हैं । यहां अर्थ यह है कि "द्वेवावेत्यादि" < दोनों प्रा
इत्यादि वाक्यकरके व्याख्यान किये, अरु ब्रह्म आत्मामात्रस्व
से स्थितिपर्यन्त अप्रतिपादन किये अरु ब्रह्मरूप उपेयवत् उ
पनेसे मानेहुये प्रपञ्च के वास्तवपने करके जानने के योग्यता
जो शङ्का, सो नहोय, इसप्रकार सर्व प्रपञ्च से रहित होनेक
अद्वितीय ब्रह्मस्वरूप के निर्धार करने के अर्थ श्रुति 'प्रपञ्च
आरोपित होनेसे' तिसका निषेध करे है] उपायको उपेय
स्थितिको न जाननेवाले पुरुषको उपायपनेकरके व्याख्यान
वस्तुकी उपेयवत् ग्राह्यता मतिहो, इस अभिप्राय से जिस क
अग्राह्य भावरूप हेतुसे व्याख्यान किये सर्वको निषेध करते
[उपायको कल्पित होने करके उसको वास्तवपने का अभाव
ताते, अरु उपेय (उपायकरके प्राप्तहोने योग्य ब्रह्म) को
तिसप्रकारसे । उपायके अवस्तुपनेके प्रकारसे । वा । तिससत्य
प्रकारके। वस्तुकी प्राप्ति कैसे होवेगी । यह शङ्का करके "अ
अजन्मा इत्यादि पदका व्याख्यान करतेहैं । यहां यह अर्थहै
आरोपित सर्व प्रपञ्च के निषेधसेही, आरोपित सर्पादिकों
अधिष्ठानपने से भिन्न असत्पनेवत्, स्वतन्त्रपने करके । अ
अधिष्ठानकी सत्ताविना। मूर्त्तादि प्रपञ्चरूप उपायके वास्तव
के अभावके निश्चयसे, उपेयरूप अद्वितीय ब्रह्ममात्र स्वरूपता
ही प्राप्तहुये, अरु ब्रह्मकी सदा एकरूपता कूटस्थता नित्यत
स्वभावता, आदिकोंके जाननेवाले जो पुरुष तिन उत्तमाधिका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सतो हिमायया जन्म युज्यते न तु तत्त्वतः। तत्त्वतो जायते यस्य जातं तस्य हि जायते २७। १०६॥

योंको, अन्यकी अपेक्षासे विनाउक्त विशेषणवाला आत्मतत्त्वस्वयं आपही प्रकाशितहोताहै। अरु कल्पित प्रपञ्चका जो उपायपनाहै प्रतिबिम्ब आदिकोंवत् अविरुद्धहै] ताते ऐसे उपायकी उपेय बिषे स्थितिकोही जाननेवाले को अरु उपेयकी नित्य एकरूपता है, इसप्रकारके जाननेवाले तिस { उत्तमाधिकारी } पुरुषको, बाह्य अन्तर सहित जन्म रहित अजन्मा आत्मतत्त्व आप से आपही प्रकाशताहै २६। १०५॥

२७।१०६॥हे सौम्य ! [जो आत्मतत्त्वहै सो अजन्मा अद्वितीय परमार्थ रूपहै, अरु जो द्वैतहै सो मायासे कल्पित असत्यहै, इस प्रकार प्रतिपादन किया, तहांही अन्यहेतुको भी कहतेहैं] इसप्रकारही शतावधि श्रुतियों के प्रमाणसे बाह्यान्तर सहित अजन्मा आत्मतत्त्व अद्वैतहै, ताते अन्यहै नहीं, इसप्रकार { विद्वानों को } निश्चितही है, अरुसो तैसे युक्तिसे भी निश्चितही है,। अब यह ही आत्मतत्त्व { जो श्रुतिके प्रमाणों से अरु युक्तियों से निश्चित किया है } पुनः अन्ययुक्ति से भी निर्द्धार करते हैं, ऐसे कहाहै। अरु जो ऐसा कहे कि तहां यह आत्मतत्त्व सदाही अग्राह्यहै ताते असत् होवेगा, सो कथन बनेनहीं, क्योंकि कार्यरूप लिंगवाले अनुमानके वशसे [यहां यह अनुमानरूप अर्थहै कि विवादका विषय जो जगत्का जन्म सो सत्रूप अधिष्ठानवालाहै, कार्य होने से, प्रसिद्धकार्यवत्] आत्मतत्त्वके अकारणपनेकरके सद्भावके निर्णय से। जैसे विद्यमान मायाविका मायाकरके जन्मरूप कार्य है, तैसे जगत्का जन्मरूप जो कार्य है सो ग्रहण कियाहुआ मायावीवत् विद्यमान जगत् के जन्म अरु मायाका आश्रयरूपही आत्मा को लखावे है { जो कारण सहित इस जगत् का कोई आश्रय अधिष्ठान सत्य चैतन्य रूप है } अरु जिस करके विद्यमान कारण से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असतो मायया जन्म तत्त्वतो नैव युज्यते । बन्ध्य
पुत्रो न तत्त्वेन मायया वाऽपि जायते २८ । १०७॥

मायारहित हस्ति आदिक कार्योंवत् माया से जगत्का जन्म
है, असत्कारण से नहीं, ताते कारणका सद्भाव विवाद से रा
है । अरु परमार्थसे तो आत्माका जन्म घटता नहीं । अथवा
विद्यमान रज्जुआदिक वस्तुकासर्प आदिकरूपसे जन्मवत्मा
करके जन्म घटित है, स्वरूप करके तो नहीं । तैसे "असत
मायया जन्म युज्यते नतु तत्त्वतः" (सत्का माया से जन्म
है तत्त्वसे तो नहीं; अर्थात् जैसे रज्ज्वादिकों का सर्पादिरू
जन्म घटे है, तैसे अग्राह्य सत्रूप आत्माका भी माया से ज
घटितहै, परन्तु तत्त्व (परमार्थ) सेही अजन्मा आत्माका जन्म
नहीं । अरु "तत्त्वतो जायते यस्य जातं तस्यहि जायते" (जि
के (मतबिषे) जाते जन्मताहै तिसके (मतबिषे) जन्मको प
सत्ता जन्मताहै; अर्थात् पुनः जिस वादीके मतबिषे जिसका
तत्त्वसे (अर्थात् परमार्थसत्रूपसे) अजन्मा आत्मतत्त्व जगत्
से जन्मताहै, तिसवादीके मतबिषे अजन्मा जन्मताहै, इसप्रक
कहनेको शक्य नहीं । क्योंकि अजन्माका जन्मसे विरोधहै ता
एतदर्थ तिस वादीके मतबिषे, अर्थात् जन्मको पावताहुआ जन्म
ताहै, इसप्रकार प्राप्तहुआ । तिसकरके जन्मको प्राप्तहुये आत्म
को पुनः जन्मको प्राप्त होने करके अनवस्थाकी प्राप्तिहै अर्थ
अजन्मा एकही आत्मतत्त्वहै, यह सिद्धहुआ २७ । १०६ ॥

२८ । १०७॥ हे सौम्य ! [कार्यजोहै सो सत्रूप कारण पूर्व
है, ऐसीव्याप्तिहै नहीं, क्योंकि असद्वादियों करके असद्रूपकार
से सत्रूप कार्यके जन्मका अंगीकारहै, " असदेवेदमग्र आसी
देकमेवा द्वितीयं तस्मादसतः सज्जायेत् " यहशंका करके कहे
हैं] । " असतो मायया जन्म तत्त्व तो नैव युज्यते " (असत् व
माया से वा तत्त्व से जन्म घटता नहीं; अर्थात् असत् वादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथास्वप्ने द्वयाभासं स्पन्दते मायया मनः। यथाजाग्रद्द्वयाभासं स्पन्दते मायया मनः २९। १०८॥

योंके मतविषे असत् पदार्थका मायाकरके वा तत्त्वसे किसी भी प्रकारसे जन्म घटित नहीं, तिसको अदृष्टरूपताहै ताते अरु "बन्ध्या पुत्रो न तत्त्वेन मायया वापि जायते" (बंध्याकापुत्रतत्त्व करके वा मायाकरके भी जन्मकोपावतानहीं; अर्थात् बंध्याकापुत्र जो अत्यन्त असत् है ताते उसका वास्तव करके तो क्या किन्तु माया करके भी जन्मको पावता नहीं, अतएव असद्वाद दूरसे-ही अघटित (त्याजनीय) है, इत्यर्थः २८। १०७॥

२९।१०८॥हे सौम्य![सत्वस्तुकाही मायासे जन्महोताहै,इस प्रकार कथनकियेअर्थको ही प्रतिपादन करतेहैं]।प्रश्न।पुनःसत्वस्तु काही मायासे जन्म कैसे है। उत्तर। तहां कहतेहैं, जैसे रज्जुविषे कल्पित सर्प अपने अधिष्ठान रज्जुरूप से देखेहुये सत्यहै, इस प्रकार मन जो है सो परमार्थ ज्ञानस्वरूप आत्मरूपसे देखाहुआ सत् है" यथास्वप्ने द्वयाभासंस्पन्दतेमाययामनः "(जैसे मन स्वप्नविषे मायासे द्वैताभास रूपहुआ स्फुरता है; अर्थात् जो मन अपने अधिष्ठान रूपसे देखाहुआ सत् है, सो मन जैसे रज्जुमें सर्प तैसे मायाकरके ग्राह्य अरु ग्राहकरूप से द्वैताभासरूप हुआ स्फुरता है। तैसेही "तथाजाग्रद्द्वयाभासंस्पन्दतेमाययामनः"(तैसे जाग्रत्विषे मन मायाकरके द्वैताभास रूपहुआ स्फुरता है; अर्थात् जैसे मन स्वप्नविषे माया वा अविद्या करके द्वैताभास (जगदाभास) रूपहुआ स्फुरता है, तैसेही जाग्रत्विषे भी मन मायाकरके जगदाभास रूपहुआ स्फुरता है (अर्थात् अविद्या के आश्रय हुआ मन स्वप्नविषे अध्यास संस्कार के वश आपही जगदाकार से स्फुरण होताहै, तहां जैसे पूर्वके संस्कार अध्याससे स्वप्नमेंआपको सोयाहुआ स्वप्नान्तर में देखताहै तैसेही स्वप्नके जाग्रतमेंसे स्फुरण के तीव्र संवेगसे उस जाग्रतन्तर इस दीर्घ जाग्रतरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अद्वयञ्चद्वयाभासं मनः स्वप्ने न संशयः । अद्वयञ्चद्वयाभासं तथाजाग्रन्नसंशयः ३० । १०९ ॥

मनोदृश्यमिदंद्वैतं यत्किञ्चित्सचराचरम् । मनसो ह्य मनीभावे द्वैतं नैवोपलभ्यते ३१ । ११० ॥

स्फुरण जगदाकार होताहै । ताते यह सर्व स्वप्नरूपही है, परन्तु तैसा भासता तबहै जब बोधरूप जाग्रत में स्वस्वरूप बिषे जागताहै अरु जाग्रत स्वप्नका जो भेदहै सो मनके ' मन्द 'मन्दतर तीव्र तीव्रतर स्फुरणका भेद है, परन्तु असत्यता अरु स्मृतिमात्रता में दोनों की तुल्यता है। २९ । १०८ ॥

३० । १०९ ॥ हे सौम्य! [तब द्वैतका स्वीकार किया यह आशंका करके कहते हैं] "अद्वयंचद्वयाभासंमनःस्वप्नेनसंशयः" स्वप्नबिषे अद्वैतहुआ मन द्वैताभास स्फुरताहै यहां संशय नहीं; अर्थात् रज्जु सर्पवत् ' परमार्थ से आत्मारूप करके अद्वैत हुआ मन स्वप्नबिषे द्वैताभास ' नानारूप ' होयके स्फुरता है । अरु स्वप्नबिषे हस्तिहयादिक ग्राह्य, अरु चक्षुरादिक ग्राहक यह दोनों ज्ञानसे भिन्ननहीं, एतदर्थ इसमें ' मनके स्वप्नरूप से स्फुरणेबिषे ' संशय नहीं । तैसेही "अद्वयञ्चद्वयाभासंतथाजाग्रन्नसंशयः" तैसेही जाग्रत्बिषे भी मन अद्वैतरूप हुआ सताभी द्वैताभास ' नानाप्रपंचाकार ' होयके स्फुरता है इसमें भी संशय कुछनहीं । क्योंकि परमार्थसत्रूप विज्ञानमात्ररूपका अविशेषहै ताते [अर्थात् यावत् जाग्रत् स्वप्नका नानारूप जगत् है सो केवल एक मनके स्फुरणेमात्रहै क्योंकि सुषुप्ति समाधिआदिकों बिषे मनके लयहुये जगत् का अभावही है ताते मनके स्फुरणसे इतर जगत्नहीं ३०।१०९ ॥

३१ । ११० हेसौम्य! मनोमात्र द्वैत है इस ' कथन' बिषे अब प्रमाण कहते हैं]रज्जु सर्पवत् कल्पनारूप मनही द्वैतरूपसे युक्तहै, तहां कौन प्रमाणहै, जब यह शंका हुई तब अन्वय अरु व्यतिरेकरूप अनुमानको कहते हैं । प्रश्न । सो कैसा अनुमान है । उत्तर ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मसत्यानुबोधेन न संकल्पयते यदा। अमनस्तां तदायाति ग्राह्याभावेतदग्रहम् ३२। १११ ॥

"मनोदृश्यमिदंद्वैतंयत्किञ्चित्सचराचरम्" (देखने योग्य जो कुछ यह चराचर द्वैतहै मनही है; अर्थात् तिसही कल्पना रूप मन से देखने योग्य जो कुछ यह सचराचर नानाद्वैतहै सो सर्व्व (मनकी कल्पनारूप होने से) मनही है, यह प्रतिज्ञाहै, क्योंकि तिस मनके भावहुये द्वैतका भाव अरु मनके अभावहुये द्वैतका अभाव होताहै ताते। अरु "मनसोह्यमनीभावे द्वैतं नैवोपलभ्यते" (जाते मनके असनीभावहुये द्वैतको देखते नहीं; अर्थात् जिस करके रज्जुबिषे लयकोप्राप्तहुये सर्पवत्, विवेक ज्ञानके आभास अरु सम्यक् वैराग्यकरके 'समाधिबिषे वा सुषुप्तिबिषे मनके अमन भाव (अफुर, निरोध) के हुये द्वैत प्रपंच देखते नहीं। अर्थात् रज्जुबिषे जब सर्पकी प्रतीति भ्रांतिसे होती है तब तिस अध्यस्त सर्पसे भय कम्प स्वेदादिकहो आवते हैं। अरु तिस भ्रांतीरूप अवस्थाबिषे जो भय कम्पत्वादि होतेहैं तिसका कारण अध्यस्त सर्प है रज्जु नहीं। अरु जब सत्यरूप रज्जुका सम्यक् विवेक ज्ञानहोता है तब उस अध्यस्त सर्प के स्वाधिष्ठानमें लयहुये भय कम्पत्वादि सर्वका अशेष अभाव होताहै, अरु एकसत्य रूप रज्जुही अवशेष रहती है। तैसेही रज्जुस्थानीय एकअद्वैत सत्रूप आत्माबिषे तिसके अज्ञानसे सर्पस्थानीय मन स्फुरण होताहै तिस मन करके भय कम्पत्वादि स्थानीय सचराचर प्रपंच 'द्वैतरूप जगत्उपजताहै, ताते द्वैतरूप प्रपंचका कारण मनका स्फुरणहै। अरु जब आचार्य करके अपने आप सत्यरूप आत्माका सम्यक् विवेकज्ञान होताहै तब निर्विकल्प वा विचार समाधि में मनके अमन 'अफुर' भावके प्राप्तहुये समस्त द्वैतभासका अशेष अभाव होताहै। एतदर्थ यहां द्वैतके अभावसे अद्वैत भाव सिद्धहै ३१। ११० ॥

३२।१११॥ हे सौम्य! [समाधि अरु सुषुप्तिबिषे द्वैतकी अप्रतीति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के हुये भी तिसका असत्पना नहीं, यह शंकाकरके प्रमाण के आधीन प्रमेयकी सिद्धिहै इस अभिप्रायसे कहते हैं ॥ अरु मनका जो अमन भावकहा, अब तिसको प्रतिपादन करते हैं] । प्रश्न । पुनः इस मनका । जो द्वैतका कल्पकहै । अमनीभाव कैसे होताहै, उत्तर "वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्" (वाणीसे उच्चारकिया विकार नाममात्र । कहनेमात्र । ही है अरु मृत्तिकाही सत्यहै, इस श्रुतिके प्रमाणसे मृत्तिकावत् आत्मरूप ही जो सत्यहै, तिस सत्का "ऐतदात्म्यमिद ꣳ सर्वं तत्सत्य ꣳ सआत्मा तत्त्वमसि" इत्यादि शास्त्रका आचार्य द्वारा उपदेशहोने के अनन्तर जो बोधहोताहै सो सत्यरूप आत्माका अनुबोध है, ऐसे कहते हैं "। आत्मसत्यानुबोधेन न संकल्पयते यदा । (सत्यरूप आत्माके अनुबोधसे जब 'मन' संकल्पको करता नहीं ; अर्थात् तिस सत्यरूप आत्माके अनुबोधसे संकल्प के अभावसे युक्त होने करके जब (तिसकालबिषे) मन संकल्पको करता नहीं । अर्थात् जैसे बरफकी पूतली सूर्यके तेजके प्रभाव से अपने कारण रूप जलमें लयहोती है, तैसे यह स्वाधिष्ठान से अभिन्न मन रूप पूतली आचार्यरूप सूर्य के उपदेशके प्रभावसे अन्तरमुख हुई बरफकी पूतलीवत् अपने कारण अधिष्ठान आत्मरूप जलमें लीन होता है, तब तिसकाल में वा तिस निर्विकल्प समाधिमें अपने अमनभावको प्राप्तहुआ संकल्प करता नहीं, अर्थात् स्फुरणहोता नहीं । "अमनस्तां तदायाति ग्राह्याभावे तदग्रहम्" । (तब ग्राह्यके अभावहुये ग्रहणरहित हुआ सो 'मन' अमनभावको पावताहै ; अर्थात् आत्मा के अनुबोधसे यह मन संकल्पको करता नहीं, तब, तिसकाल बिषे, जलावने योग्य काष्ठादिकों के अभावहुये अग्निके जलने के अभाववत्, ग्राह्य वस्तुके अभावहुये ग्रहणकी कल्पना से रहित हुआ सो मन अमन भावको प्राप्तहोताहै ॥ अर्थात् "अमनाःशुभ्रो" इत्यादि प्रमाणसे जैसा मनका अधिष्ठान आत्मा अमन है तैसाही मन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अकल्पकमजं ज्ञानं ज्ञेयाभिन्नंप्रचक्षते। ब्रह्मज्ञेयमजं नित्यमजेनाजंविबुध्यते ३३। ११२॥

अमन होता है "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति" ३२। १११॥

३३। ११२॥ हे सौम्य! जो यह मनप्रधान द्वैत असत् है, तो यह समीचीन आत्मतत्त्व किस करके जानाजाताहै, जहां इस प्रकारकी शङ्का है तहां समाधान कहते हैं "अकल्पकमजं ज्ञानं ज्ञेयाभिन्नं प्रचक्षते" {कल्पनारहित अज ज्ञानस्वरूप को ज्ञेयसे अभिन्न कहते हैं} अर्थात् सम्यक् आत्मानुभावी जे ब्रह्मवेत्ताहैं सो सर्वकल्पनासे रहित अजन्मा {अर्थात् "येनेदꣳ सर्व्वं विजानाति तं केन विजानीयात्" "यन्मनसा न मनुते येनाहुमनोमतं" इत्यादि श्रुतियों के प्रमाणसे, जो मन बुद्ध्यादिकों की कल्पनामें आवता नहीं अरु जो मन बुद्ध्यादि 'अर्थात् तृणसे ब्रह्मपर्यन्त, सर्वका कल्पक है, अरु जो सर्वका कल्पक है सो कल्पित होता नहीं, इस परम सिद्धान्त से, सर्व कल्पना से वर्जित है, अरु जिसकरके सर्वकल्पनासे वर्जितहै तिसही करके अजन्मा है} ऐसा जो ज्ञप्तिमात्र ज्ञानस्वरूप {आत्मा} है तिसको परमार्थ से सत् ब्रह्मरूप ज्ञेय अभिन्न कहते हैं {मुमुक्षुओंकरके अज्ञात अवस्थामें जाननेयोग्य} से अभिन्न कहते हैं {अर्थात् "अयमात्माब्रह्म" यह आत्माही ब्रह्म है, ताते "नातः परमस्ति" इस आत्मा से भिन्न 'ब्रह्म नहीं' क्योंकि "तत्त्वमेवत्वमेवतत्" "तत्त्वमसि" इत्यादि श्रुतियों के महावाक्यों ने इस ज्ञानस्वरूप चैतन्य आत्मा कोही ब्रह्मकरके कहाहै, ताते सम्यक् आत्मानुभावी ब्रह्मवेत्ता इस ज्ञानरूप आत्माको उक्तप्रकार ज्ञेयरूप ब्रह्मसे अभिन्न कहते हैं। क्योंकि, "न हि विज्ञातुर्विज्ञातेर्विपरिलोपोविद्यते" "विज्ञानमानन्दं ब्रह्म" "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" अग्निकी उष्णतावत् विज्ञाती (बुद्धि) के विज्ञाताका लोपनहीं, विज्ञान आनन्द रूप ब्रह्म है, सत्य ज्ञान अनन्तब्रह्महै। इत्यादि श्रुतियों के प्रमाण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निगृहीतस्य मनसो निर्विकल्पस्य धीमतः । प्रचारः
स तु विज्ञेयःसुषुप्तेऽन्यो न तत्समः ३४ । ११३ ॥

से सो ज्ञान ब्रह्मरूप ज्ञेयसे अभिन्न है ॥ अब तिस ज्ञानके विशेषण कहते हैं । सो ज्ञान कैसाहै कि, "ब्रह्म ज्ञेयमजं नित्यमजेनाजं विबुद्ध्यते" (ब्रह्मरूप ज्ञेयवाला अजन्मा नित्य है, अजन्मा से जन्मरहित को जानताहै ; अर्थात् अग्नि से अभिन्न उष्णता अरु उष्णतासे अभिन्न अग्निवत् जिस ज्ञानके स्वरूपबिषे स्थित ब्रह्मरूप ज्ञेयहै, इसप्रकारका ब्रह्मरूप ज्ञेयवालाहै । पुनः कैसाहै कि, अजन्माहै अरु नित्य है (अर्थात् जिस करके ज्ञानस्वरूप ब्रह्म है तिसही करके अजन्माहै अरु जिस करके अजन्माहै तिसहीकरके नित्य है) तिस आत्मस्वरूप अजन्मा ज्ञान से जन्मरहित ज्ञेयको आत्मतत्त्व आपही सम्यक्प्रकार जानता है । अर्थात् जैसे सूर्य नित्य प्रकाशरूपहै, तैसे नित्य एकरस विज्ञानघन है ताते । अन्य ज्ञानान्तरकी अपेक्षा करता नहीं ॥ इत्यर्थ ॥ ३३ । ११२ ॥

३४ । ११३ ॥ हे सौम्य ! [मुक्त पुरुषको जो ज्ञानका फलहै सो स्वर्गादिवत् परोक्ष है नहीं, किन्तु प्रत्यक्ष है । एतदर्थ प्रसंग बिषे प्राप्तहुये मनके निरोधरूप ज्ञानके फलकी प्रत्यक्षता के अर्थ प्रसंगको कहते हैं] सत्यरूप आत्माके अनुबोधकरके सङ्कल्पको न करताहुआ बाह्य विषयों के अभावसे इंधनादि रहित अग्निवत्, मन जोहै सो शान्तता अरु निरोधता को प्राप्त होताहै, इसप्रकार कहा अरु इसप्रकार मनके अमनीभाव के होनेसे द्वैतका अभावकहा (अब कहते हैं) "निगृहीतस्य मनसो निर्विकल्पस्य धीमतः प्रचारः स तु विज्ञेयः सुषुप्तेऽन्यो न तत्समः" (निग्रह किये सर्व कल्पना से रहित विवेकवाले मनका प्रचार सो तो जाननेयोग्य है सुषुप्ति बिषे अन्य है, तिसके तुल्य नहीं ; अर्थात् इसप्रकार तिस निग्रहकिये सर्वकल्पनासे रहित (निर्विकल्प) अरु धीमान् (विवेकवाले) ऐसे मनका जो प्रचार (प्रत्यगात्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपसेस्थिति। सोतो कोई एकप्रकारकरके योगीपुरुषोंकरके जानने योग्य है ॥ शंका। ननु, सर्ववृत्तियों के अभावहुये सुषुप्ति बिषे। स्थित मनका जैसा प्रचार है, तैसाही प्रचार निरोध। अरु निर्विकल्पता। को प्राप्तहुये मनका भी होवेगा, क्योंकि उभय प्रकारसे वृत्तिकी निरोधता तुल्यहै ताते। अतएव तिस निरोधको प्राप्तहुये मनबिषे क्या जानने योग्यहै। समाधान। सोबने नहीं, क्योंकि सुषुप्ति बिषे अविद्या अरु तिसके कार्य मोहरूप अज्ञानसे ग्रस्त अरु अन्तर लीन (गुप्त) हुई अनेक अनर्थरूप फलवाली प्रवृत्तियोंकी बीजरूपा वासनावाले। उक्त प्रकारकी वासना करके युक्त। मनका प्रचार अन्यहै। अरु सत्रूप आत्माके। महावाक्यजन्य। अनुबोधरूप अग्निसे अशेष नाशहुई है अविद्याऽऽदिक अनर्थरूप फलवाली प्रवृत्तियों की बीजरूपा वासना जिसकी, अरु शान्त हुये हैं सर्वक्लेशरूप मल जिसके, इसप्रकारके निरोधको प्राप्तहुये मनका जो ब्रह्मस्वरूप बिषे स्थितिरूप स्वतन्त्र प्रचारहै सो अन्यहै। अर्थात् काम कर्म वासना अविद्या इत्यादि अनर्थ करके युक्त मनका जो सुषुप्ति बिषे प्रचार(लय) है सो अविद्यामें लयहै, जैसे सधूम अग्नि आवरणको पाया लयहुयेवत् भासताहै तैसे। अरु महावाक्यार्थ के सम्यक् ज्ञानाग्निकरके जिसकी कामकर्म वासना अरु अविद्या, अशेष भस्महुई हैं, ऐसे मनकी जो निर्विकल्प समाधि बिषे आत्मतत्त्व में लयताहै सो। इंधनादि उपाधि से रहितहुये अग्नि की अपने सामान्यनिर्विशेष रूपमें लयतावत्है। ताते सुषुप्तिमें मनकी लयतासे यह ब्रह्मस्थितिरूप लयता अन्यही है, इस लयताको सोई जानताहै कि जिस योगीको निर्विकल्प समाधि प्राप्तहै। एतदर्थ यह सुषुप्तिको प्राप्तहुये मनकाप्रकार तिस। आत्म स्थितिको प्राप्तहुये मनके प्रचार। के तुल्य नहीं। जिस करके इस प्रकारहै, तिसही करके तिस निरोधको प्राप्तहुये मन को जाननेको। वा करनेको। योग्यहै। इत्यभिप्रायः३४। ११३ ॥ ३५।११४ ॥ हे सौम्य! पूर्व जो कहा कि सुषुप्तिको प्राप्तहुये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लीयतेहिसुषुप्ते तन्निगृहीतंनलीयते । तदेवनिर्भयंब्र
ह्म ज्ञानालोकं समन्ततः ३५ । ११४ ॥

मनके प्रचारका अरु (निर्विकल्प) समाधिको प्राप्तहुये मनके
प्रचारका भेदहै, तिसविषे अब हेतु कहते हैं "(लीयते हि सुषुप्ते
तन्निगृहीतं न लीयते" (सुषुप्ति विषे सो लीन होताहै, गृहीत
हुआ लीनहोतानहीं ; अर्थात् जिसकरके सुषुप्तिविषे सो मनलीन
होताहै, अर्थात् सर्व अविद्यादिक वृत्तियोंकी बीजरूप वासनाकरके
सहित अज्ञानमय अविशेष रूप बीज भावको पावताहै, अरु सो
समाधिको पाया हुआ मन विवेक ज्ञानपूर्वक निरोधको पायासत्ता
लीनहोता नहीं अर्थात् अज्ञानरूप बीजभावको पावतानहीं। तातें
सुषुप्तिवाले अरु समाधिवाले मनकेप्रचारका लीनताका भेदयुक्त
ही है । अरु जब समाधिको प्राप्तहुआ मन, ग्राह्य अरु ग्राहकरूप
अविद्या के किये उभय मलसे रहित होताहै, तब सो मन परम
अद्वैतरूप ब्रह्मभावकोही प्राप्तहुआ होताहै। एतदर्थ "तदेवनिर्भयं
ब्रह्म ज्ञानालोकं समन्ततः" (सोई निर्भयहै ब्रह्महै ज्ञानालोक
सर्वओरसे है ; अर्थात् जब (सम्यक् आत्मज्ञानको पायके यह
मन अज्ञान रूप बीज भावसे रहित शुद्ध होताहै (तब सो मन
परम अद्वैत रूप परब्रह्मही को प्राप्तहुआहै, एतदर्थ सोई भय
हित निर्भय ब्रह्म है । "विद्वान्न विभेति कदाचन" क्योंकि
भयका निमित्तरूप जो द्वैत तिस द्वैत भावके ग्रहणका अभा
है ताते । ब्रह्म शान्त अरु अभयहै ॥ अब तिसही ब्रह्मको विशेष
देते हैं । सोई ब्रह्म ज्ञानालोकहै, अर्थात् आत्माकी स्वभावभू
चैतन्यस्वरूप ज्ञप्तिरूप ज्ञानहै (आलोक) कहिये प्रकाश जिसका
(अर्थात् ज्ञान रूपहै प्रकाश जिसका) ऐसा जो ब्रह्म तिसका
ज्ञानालोक (एकरस ज्ञानघन) कहते हैं, अरु सर्वओरसे है, (ति
उसको 'समन्ततः' कहते हैं) अर्थात् आकाशवत् सर्वओर
निरन्तर व्याप्तहै "आकाशवत्सर्वगतः सनित्यः" ३५ । ११४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजमनिद्रमस्वप्नमनामकमरूपकम् । सकृद्विभातंसर्वेज्ञं नोपचारःकथञ्चन ३६ । ११५ ॥

३६ । ११५ ॥ हे सौन्य ! [प्रसंगबिषे प्राप्तहुये अर्थ को अन्य प्रकारसे भी निरूपण करते हैं] "अजमनिद्रमस्वप्न मनामकमरूपकम्" । अज है अनिद्रा है अस्वप्न है अनाम है अरूप है ; अर्थात् सोई ब्रह्म । अर्थात् ब्रह्मनामक आत्मा कि जिस बिषे ज्ञानद्वारा लीनहुआ मन ब्रह्मभाव को प्राप्त होताहै । जन्म के निमित्त के अभावसे "सबाह्याभ्यन्तरोह्यजः" बाह्य अन्तर सहित अजन्मा है । अरु जिसकरके रज्जुसर्पवत् अविद्यारूप निमित्त वाला जन्म है, इस प्रकार हम कहते हैं । अर्थात् जन्म के निमित्त जे अविद्याकाम कर्मादिक तिनके अत्यन्ताभाव से ब्रह्मबिषे जन्मका हेतु न होनेसे वो वास्तव करके सदा अजन्माही है, तिस बिषे अद्वैत के बोधार्थ आरोपमात्र जन्म (जगदुत्पत्ति) कही है, सो 'जैसे भ्रान्तिरूप निमित्त से रज्जुका सर्परूपसे जन्महै तैसे उस अज ब्रह्मका अविद्यारूप निमित्तवाला जन्महै ऐसा हम कहते हैं । अरु सो अविद्या आत्मारूप सत्यके अनुबोध से निरोध को प्राप्तहुई है, एतदर्थ सो अजन्माहै । अर्थात् 'जैसे रज्जुको स्वस्वरूप विषयक भ्रान्तिका अत्यन्ताभाव है ताते सो भ्रान्ति करके भी सर्परूप से 'जो केवल भ्रान्तिमात्रही है, जन्मवान् न होके सदा अजन्माही है, क्योंकि रज्जु जो सर्परूप से भासती है सो भ्रान्तिकाल बिषे बुद्धिको भासती है स्वयंरज्जुको नहीं, तैसेही सदा ज्ञानप्रकाश स्वरूप अद्वितीय आत्मामें जन्म के निमित्त अविद्या आदिकों के अत्यन्ताभाव से उसके शुद्ध सत्यज्ञान स्वरूप में द्वैतके अभाव से जन्म (जगदुत्पत्ति) अध्यारोपमात्र भी नहीं, ताते उसबिषे जे जन्म (जगदुत्पत्ति) अध्यारोपमात्र कही है सो भी अविद्याश्रित बुद्धिने अद्वैत आत्मतत्त्व के निश्चयार्थ कही है, परन्तु तिस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अविद्यात्मक बुद्धिका उस आत्मदेव विषे सूर्यमें अन्धकारवत् अ
त्यन्त अभाव है, क्योंकि सो अविद्या अपने अधिष्ठान चैतन्यसत्त
के आश्रय चैतन्यवत् हुई स्वाधिष्ठान में जन्मादि (जगदुत्पत्त्या
दि) कों की कल्पना करती है, सो अविद्या आचार्य से महावा
क्यार्थ का ज्ञानोपदेश पाय अपने अधिष्ठान आत्मारूप सत्यं
अनुबोधवती हुई आप अपने सत्य चैतन्य अद्वैत आत्मारूप अ
धिष्ठान में निरोध (लय) को प्राप्त होती है, ताते वास्तव करके
आत्माविषे उस कल्पक अविद्या के लयहुये, उस ब्रह्मनामक शुद्ध
निरुपाधि निर्विशेष चैतन्य आत्माविषे कल्पना के भी निमित्त
का अत्यन्ताभाव होने से अध्यारोपमात्र भी जन्म (जगत् की
उत्पत्त्यादि) नहीं । ताते वो नित्य अजन्मा है अरु जिस कारण
सो अजन्मा है तिस करकेही अनिद्र (निद्रासे रहित) है । अ
र्थात् निद्रादिक अविद्यात्मक बुद्धिके धर्म हैं तिससे पृथक् जो
अज आत्मा तिसके नहीं ताते सो अनिद्र है । । अरु जिस कार
अविद्यारूप अनादि मायामय निद्रासे अद्वैतरूप आत्मतत्त्व वि
प्रबोध को पाया है, तिसकरके स्वप्नसे भी रहितहै । अर्थात् जा
ग्रत् स्वप्न सुषुप्ति आदिक जे अविद्यात्मक बुद्धिकी अवस्था ति
से रहित है । अरु जिसकरके अप्रबोधके किये जो अपने नामरू
है, सो रज्जुके ज्ञानसे सर्पवत् अपने प्रबोध से नाश को प्राप्त हु
पश्चात् यह ब्रह्मनाम करके कहते नहीं । अर्थात् एक अद्वैत नि
र्विशेष आत्मतत्त्व विषे नामरूपादिकों की कल्पना करनेवा
के अभाव से उसविषे नामरूपादि दोनों नहीं । वा वो किसी
प्रकारसे निरूपण किया जातानहीं । क्योंकि वाणी आदिकों
अविषयहै ताते । ताते सो निर्विशेष आत्मतत्त्व आकार विकार
रहित निराकार होने से नाम अरु रूप से रहित है " यतोवा
निवर्त्तन्ते" ८जहां से वाणियां निवृत्ति होती हैं> इत्यादि श्रुति
के प्रमाणसे किंवा " सकृद्विभातंसर्वज्ञंनोपचारः कथञ्चन" ८
द्राही प्रकाशरूप है सर्वज्ञहै किसीप्रकारसे भी उपचार हैं नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्व्वाभिलापविगतःसर्व्वचिन्तासमुत्थितः । सुप्रशान्तःसकृज्ज्योतिःसमाधिरचलोभयः ३७।११६ ॥

अर्थात् सो । आत्मतत्त्व सर्वदाही प्रकाशरूप है, क्योंकि अग्रहण अन्यथा ग्रहण आविर्भाव अरु तिरोभाव इन सर्वका अभावहै ताते अरु । ग्रहण अरु अग्रहणरूप दिवस अरु रात्रि, अरु अविद्यारूप अन्धकार, यह तीन सदा अप्रकाशपने बिषे कारण हैं, तिनका । उस अद्वैत आत्मतत्त्व बिषे । अभावहै ताते । सो सर्वदा प्रकाशरूपही है । अरु नित्य चैतन्य प्रकाशरूप होने से ब्रह्मका सर्वदाही प्रकाशरूप होना युक्तही है । इसही करके सर्वरूप जो ज्ञानस्वरूप सो कहिये ज्ञानस्वरूप सो कहिये सर्वज्ञ, ऐसा है । अर्थात् उस ज्ञानस्वरूपको सर्वरूप से सुशोभित होने करके उसको उक्तप्रकारका सर्वज्ञ कहते हैं । इसप्रकारके इस ब्रह्म (ब्रह्मवेत्ता) बिषे किसीप्रकार से भी उपचार (कर्त्तव्य) है नहीं । जैसे अन्य । अनात्मवेत्ता । को आत्म स्वरूप से इतर चित्तकी एकाग्रता आदिक कर्त्तव्य है, तैसे ब्रह्मवेत्ता को नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव करके अविद्या के सम्यक् विनाशहुये किसी प्रकार से भी कर्त्तव्यताका संभव है नहीं [यहां यह अर्थ है कि अविद्यादशाबिषेही सर्व व्यवहारहै, अरु विद्यादशाबिषे अविद्या को असत् होने करके कोईभी व्यवहारहै नहीं । परन्तु 'बाधितानुवृत्तिसे' अर्थात् बाधितहुये व्यवहारकी अनुवृत्ति से । विद्वान् बिषे । व्यवहार के प्रतीति की सिद्धि है । प्रातिभासिकवत् । । तिस करके उस विद्वान् के स्वरूप बिषे किञ्चित् भी क्षति नहीं ३६ । ११५ ॥

३७ । ११६ ॥ हे सौम्य ! ["ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति" इत्यादि श्रुति प्रमाणसे । विद्वान्ही ब्रह्महै, इसप्रकार अङ्गीकार करके अब प्रसंग बिषे प्राप्तहुये ब्रह्मको पुरुषके वाची लिंग से कहतेहैं] अब । ब्रह्मबिषे । नामसे रहितता आदिक उक्तार्थ की सिद्धि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के अर्थ कारण कहते हैं "सर्व्वाभिलाप विगतः सर्वचिन्ता समु
स्थितः" ८सर्व अभिलाषसे रहितहै, सर्वचिन्ता से सम्यक् उत्था
को पायाहै ८ अर्थात् भाषण करते हैं जिसकरण विशेषसे ऐसा
सर्वप्रकारके कथनका करण वाणी, तिसको अभिलाप कहतेहैं
तिस सर्वअभिलाप (कथन) से रहितहै "नातिवादी" अर्थात्क
जो एक वागेन्द्रियको कहाहै सो उपलक्षमात्रके अर्थ है, एतद्
ब्रह्मरूपविद्वान् वागेन्द्रिय उपलक्षणकरके सर्व बाह्यकरणोंसेरहि
है, यह इसकाअर्थ है । तैसही जिसकरके चिन्तन करते हैं ऐसे
जो बुद्धि तिसको चिन्ताकहते हैं, तिससर्व चिन्तासे सम्यक्प्रका
उत्थानको पायाहै, अर्थात् बुद्धिउपलक्षण करके बुद्धि आदि स
अन्तःकरणों से रहितहै, क्योंकि "अप्राणोह्यमनाशुभ्रो ह्यक्षरात्
रतःपरः" ८अप्रमाणहै अमनहै, अरु शुभ्रकहिये शुद्धहै, अरुका
से पररूपअक्षर (कारण) तिससे परहै ८इस श्रुतिके प्रमाणकर
सर्वकरण अरु तिनके विषयादि इनसे रहितहै । अरु "सुप्रशान्
सकृज्ज्योतिः समाधिरचलोऽभयः" ८निरन्तरशान्तहै, सर्वदाह
प्रकाशरूपहै समाधिरूपहै अचलहै अभयहै ८ अर्थात् जिसका
बाह्यान्तरके करणादिकों से रहितहै, इसहीकरके निरन्तरशान्त
अरु आत्म चैतन्य स्वरूपसे सर्वदाही प्रकाशरूपहै, अरु समा
रूप निमित्तवाली बुद्धिसे जाननेयोग्यहोनेसेसमाधिरूपहै अर्थ
"दृश्यतेत्वग्र्यया बुद्ध्यासूक्ष्मयासूक्ष्मदर्शिभिः" "प्रज्ञानेनैनमा
यात्" इत्यादि श्रुतियों के प्रमाण से समाधिरूप निमित्तवाली
द्धिका विषयहोने योग्यहै, तातें समाधिरूपहै, वा "समाधानंक्रि
चित्तंयस्मिन् स समाधिः" 'जिस बिषे समाधानकरते हैं चित्त
सो कहिये समाधि, तातेभी आत्म चैतन्य प्रकाशको समाधिक
हैं, तातें वो समाधि है, वा इस परमात्मा बिषे जीव वा तिस
उपाधि स्थापित करते हैं, यातें यह परमात्मा समाधि है
अचल (सर्वक्रियासे रहित) है अरु जिस करके क्रिया का
बिषे अभावहै तिसही करके अभयहै ३७ । ११६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अहो न तत्र नोत्सर्गश्चिन्ता यत्र न विद्यते। आत्मसंस्थन्तदाज्ञानमजाति समतांगतम् ३८। ११७॥

३८। ११७॥ हे सौम्य! [प्रसंगविषे प्राप्तहुये अविकारी ब्रह्म विषे विधि निषेधके आधीन लौकिकरूप अरु वैदिकरूप ग्रहण अरु त्याग व्यवहार है नहीं, इस प्रकार कहते हैं] जिस करके ब्रह्म की समाधि अचल अरु अभय है इस प्रकार कहा है, एतदर्थ "अहो न तत्र नोत्सर्गश्चिन्ता यत्र न विद्यते" ८ तिसविषे ग्रहण नहीं त्याग नहीं, अरु जिसविषे चिन्ता विद्यमान नहीं ८ अर्थात् तिस ब्रह्मविषे ग्रहण नहीं वा त्याग नहीं। अर्थात् जहां विकार वा विकारका विषयपना होताहै, तहां ग्रहण अरु त्याग होताहै। ताते अन्य विकार हेतुके अभावसे अरु निरवयवहोने से इस ब्रह्मविषे वे 'ग्रहण अरु त्याग दोनों संभवेंनहीं याते तिस विषे ग्रहण अरु त्याग यह हैं भी नहीं अरु तिस ब्रह्मविषे चिन्ता नहीं। अर्थात् जहां सर्वप्रकार (मोक्षपर्यन्त) की भी चिन्तानहीं संभवेहै, अरु अमनीभाव है, तहां ग्रहण अरु त्याग कहांसेहोंगे' किन्तु कदापि न होंगे, इत्यर्थः। अरु जबही आत्मरूप सत्यका अनुबोध हुआ तबही विषयके अभावसे अग्निकी उष्णतावत् "आत्मसंस्थन्त दा ज्ञानमजाति समतां गतम्" ८ आत्माविषेही स्थितहुआ जन्म से रहित समताको प्राप्तहुआ ज्ञान होता है ८ अर्थात् आत्माके सम्यक् बोधहुये विषयोंके अभावसे अग्निविषे उष्णतावत्, आत्माविषेही स्थितहुआ, अरु जन्म से रहित परमसमताको प्राप्त हुआ ज्ञानहोताहै "अतोवक्ष्याम्यकार्पण्यमजातिसमतां गतमिति" ८ याते जन्मरहित अरु समताको प्राप्तहुये अकृपणभावको कहताहौं ८ इसप्रकार जो इस तृतीयप्रकरणकी आदि के दूसरे श्लोक में पूर्व प्रतिज्ञाकियाहै सो यह युक्ति से अरु शास्त्र से कहा, सो यहां "अजाति समतां गतम्" ८ जन्मरहित समताको प्राप्तहुआ होताहै ८ इसप्रकार कहके समाप्तकिया। अरु इस आत्म-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस्पर्शयोगो वै नाम दुर्दर्शःसर्व्वयोगिभिः । योगि
नोविभ्यतिह्यस्मादभयेभयदर्शिनः ३९ । ११८ ॥

रूप सत्यके अनुबोधसे जन्य ज्ञान कृपणताको विषयकरनेवाल
है, क्योंकि " यो वा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वा ऽस्माल्लोकात् प्रैति
स कृपण, इति " ८ हे गार्गी ! जो इस अक्षरको न जानके इस म
नुष्य शरीररूप लोकसे मरणको प्राप्तहोताहै सो कृपणहै, इ
प्रकार बृहदारण्यक उपनिषद्के पञ्चमाध्याय के अष्टम ब्राह्म
बिषे याज्ञवल्क्यमहाराजने गार्गीप्रति कहाहै । इस श्रुतिके प्रमा
स इस तत्त्वज्ञानको पायके सर्वजन कृतकृत्य ब्राह्मण होते हैं
इत्याभेप्रायः ॥ " यो वा एतदक्षरं गार्गि विदित्वा अस्माल्लोक
प्रैति स ब्राह्मणः " इत्यादि श्रुतिः ३८ । ११७ ॥

३९ । ११८ ॥ हे सौम्य ! यद्यपि [परमार्थरूप ब्रह्मस्वरूप
स्थितिरूप फलवाला जब अद्वैतका ज्ञानहै, तब तिसका सर्व
रुष आदर क्योंनहीं करते, जहां ऐसी शंकाहै, तहां कहते हैं]
परमार्थरूपतत्त्व प्रत्यगात्मारूप कूटस्थ सच्चिदानन्दस्वरूप ब्र
इसप्रकार पूर्वोक्तरीत्या तत्त्वज्ञानसे प्राप्तहोताहै तथापि [तिस
अप्राप्तिसे] संतोष को प्राप्तहुये जे मूढ़पुरुष सो तिसबिषे नि
वान् होतेनहीं इसप्रकार कहते हैं " अस्पर्श योगो वै नाम दुर्द
सर्वयोगिभिः " ८ अस्पर्शयोग नामवाला प्रसिद्ध स्मरण करते
अरु योगियों से दुःखसे दर्शनकरने योग्यहै ? [सर्ववर्णाश्रम
धर्म अरु पापादिमल] से सम्बन्धरूप स्पर्श से रहितहै तातें
जीवको ब्रह्मभावबिषे योजनाकरताहै, यह अद्वैतका अनुभव
अस्पर्श योग उपनिषदोंबिषे स्मरण करते हैं [अर्थात् उक्त
उपनिषदोंके वाक्य प्रमाण से निश्चित करते हैं] सो वेदान्तश
[उपनिषद् ब्रह्मसूत्रादि] के विज्ञानसे रहित बहिर्मुख जे क
निष्ठरूप सर्वकर्मयोगी [कर्म्मासक्त] तिनोंकरके श्रवण मनन
रूप दुःख से देखने के योग्यहै [अर्थात् कर्मासक्त कर्मी पुरुषोंक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनसोनिग्रहायत्तमभयंसर्वयोगिनाम्। दुःखक्षयःप्र
बोधश्चाऽप्यक्षयाशान्तिरेवच ४०। ११९ ॥

वदान्तशास्त्र ब्रह्मविद्या के श्रवण मननादि साधनों के दर्शन भी अति दुःसाध्य हैं। क्योंकि "न कर्म्मिणो प्रवेदयन्ति रागात्" इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे उस कर्म्मनिष्ठको कर्मोंके फलके निमित्त कर्ममें रागअधिकहै ताते। अर्थात् आत्मरूप सत्यके अनुबोधरूप वस्तुकीप्राप्ति सो श्रमसे होनेको योग्यहै। अरु "योगिनो विभ्यति ह्यस्मादभये भयदर्शिनः" ६ भयरहित बिषे भयको देखने के स्वभाववाले। कर्मयोगी। भयको करतेहैं; अर्थात् जिस करके भयरहित इस। आत्मरूप सत्यके अनुबोधरूप। योगबिषे, भयका निमित्त जो अपना नाश तिसको देखनेके स्वभाववाले। अर्थात् अविनाशी अभयरूप अपनेआप आत्माबिषे नाशरूप भयके देखने के स्वभाववाले। जे अविवेकी। कर्मयोगी। हैं सो अपने नाशरूप योगको मानतेहुये, सर्व भयसे रहितभी इस। आत्मानुबोधरूप। योगसे, भयको करते हैं। ताते सो। आत्मानुबोधरूप योग। सर्व योगियों करके दुःख सेही देखने (प्राप्तहोने) को योग्यहै, इसप्रकार इस श्लोक के पूर्वार्द्धसे सम्बन्ध है ३९। ११८ ॥

४०। ११९। हे सौम्य! [उक्तप्रकार उत्तमबुद्धिवाले अधिकारी पुरुषोंके अर्थ, अद्वैतज्ञान अरु अद्वैत ज्ञानकाफलरूप मनके निरोधको कहके, अब मन्दबुद्धिवाले अधिकारी पुरुषोंके अर्थ मनके निरोध के आधीन आत्मज्ञान के कहने का आरंभ करते हैं] पुनः जिनको ब्रह्मस्वरूप से भिन्न मन अरु इन्द्रियादिक। आत्मा बिषे रज्जुबिषे सर्पादिवत् कल्पितहीहै, परमार्थ से नहीं। इसप्रकारका अनुबोध हुआ है। तिन ब्रह्मस्वरूप पुरुषों को अभय (तत्वज्ञान) अरु मोक्षनामक अक्षय शान्ति स्वभावसेही सिद्धहै, अन्यसाधनोंके आधीन नहीं, क्योंकि "सकृद्विभातंसर्वज्ञं नोपचारःकथञ्चन" किसी प्रकारसेभी उपचार कहिये कर्तव्य सोहैनहीं यह पूर्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्सेकउदधेर्यद्वत्कुशाग्रेणैकबिन्दुना । मनसोनिग्र
हस्तद्वद्भवेदपरिखेदतः ४१ । १२० ॥

इसही प्रकरणके ३६ वें श्लोक बिषे कहाहै ताते, इसप्रकार हम कहतेहैं । अरु जो इन उत्तमाधिकारियों से अन्य सन्मार्गगामी मन्द अरु मध्यम दृष्टिवाले योगी (कर्मयोगी अरु उपसनयोगी) आत्मा से भिन्न मन अरु अन्य इन्द्रियादिक तिनको आत्माका सम्बन्धी देखतेहैं तिनको "मनसो निग्रहायत्तमभयं सर्वयोगिनां" "सर्व योगियोंको मनके निग्रह के आधीन अभयहै" अर्थात् जोमन अरु इन्द्रियोंको आत्माके सम्बन्धी देखते हैं तिन आत्मरूप सत्य के अनुबोधसे रहित, सर्व योगियों को मनके निग्रह के आधीन अभय (तत्त्वज्ञान) है । अर्थात् मनका संकल्पादिकों से अरु इन्द्रियोंका विषयोंसे यावत्निग्रह होतानहींतावत् यथार्थतत्त्व (आत्म) ज्ञान होता नहीं इसप्रकार योगीजन मानतेहैं । अथवा जिसकरके अविवेकी पुरुषों को आत्मा के सम्बन्धी मनको चंचल होनेसे दुःखका क्षय होतानहीं, एतदर्थ उनको दुःखकाक्षय मनके निग्रह के आधीनहै । अर्थात् जो अविवेकी मनको आत्माका सम्बन्धी मानतेहैं तिनके मतमें आत्माको जो दुःखहै सो तिसके सम्बन्धी मनके चञ्चल होनेसेहै ताते आत्माके दुःखका क्षय मनके निग्रह होनेके आधीनहै जब मनका निग्रहहोय तबहीं दुःखका क्षयहोवे तिस विना नहीं । ताते "दुःखक्षयःप्रबोधश्चाऽप्यक्षया शान्तिरेव च" "दुःख का क्षय आत्माका प्रबोध अरु अक्षय शान्ति भी मनके निग्रहसेहीहै" अर्थात् जो योगी पुरुष मनको आत्माका सम्बन्धी मानतेहैं तिनके मतमें दुःखकाक्षय अरु आत्मज्ञान अरु पराशान्ति मोक्ष यह मनके निग्रह के आधीनही है ४० । ११६ ॥ ४१ । १२० ॥ हे सौम्य ! [मोक्षकी इच्छावाले मुमुक्षुपुरुषों को मनका निरोध कैसे सिद्ध होवेगा, यह शङ्का करके कहतेहैं] "उत्सेक उदधेर्यद्वत् कुशाग्रेणैकबिन्दुना" "जैसे कुश के अग्र से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपायेन निगृह्णीयाद्विक्षिप्तं कामभोगयोः। सुप्रसन्नं लये चैव यथाकामो लयस्तथा ४२। १२१॥

एक बिन्दुकरके समुद्रका उत्सेक हुआ है, अर्थात् जैसे अतिसूक्ष्म कुशाके अग्र करके वाह्यफेंके हुये एक बिन्दु करके समुद्र का उत्सेक। बाह्यफेंकनेका निश्चय। टिट्टिभ नामक पक्षी को हुआ है "मनसो निग्रहस्तद्वद्भवेदपरिखेदतः"। तैसे अखेद से मनका निग्रह भी होताहै, तैसे निश्चयवाले अरु उद्वेग रहित अन्तःकरणवाले जो हैं तिन पुरुषों को अनिर्वेदरूप अखेदसे। खेद रहित। मनका निग्रह भी होताहै "अभ्यासेनतुकौन्तेय वैराग्येणचगृह्यते" ४१। १२०॥

४२। १२०॥ हे सौम्य! [समाधि करनेवाले पुरुषोंको तत्त्वके साक्षात्कार होनेके प्रतिबन्धक (विघ्न) 'लय, विक्षेप, रसास्वाद (सुरुचि) अरु कषाय (राग) है, तिन से आगे कहने के उपाय करके मनका निग्रह करना, क्योंकि अन्यथा समाधिकी सफलता का असंभव है ताते, इस प्रकार कहतेहैं [प्रश्न॥ क्या खेदरहित निश्चयमात्रही मनका निग्रह होने बिषे उपाय है। उ०। तहां 'नहीं, इस प्रकार कहतेहैं।' उपायेन निगृह्णीयाद्विक्षिप्तंकामभोगयोः"। उपायसे कामभोग बिषे विक्षेपको प्राप्तहुये को निरोध करे, अर्थात् खेदसे रहित निश्चयवान् हुआ अग्रिम कहनेके उपायसे कामभोग अरु विषयोंबिषे विक्षेपवान् हुये मनको आत्मा बिषेही निरोधकरे। अर्थात् मन सहित सर्व उत्तम स्वर्गादिकों के अरु मध्यम इसलोकके यावत् दृश्य अरु अदृश्य विषयादि भोगे हैं सो एक सर्वाधिष्ठान आत्माबिषे अध्यस्तहैं ताते स्वाधिष्ठान से उनकी इतरसत्ता के अभावसे वो असत् है अरु उन सर्वका अधिष्ठान आत्मा सत्य है, ताते जहां जहां जिस जिस बिषे मनजाय तहां तहां तिसको असत्य कल्पितजान तिनका आश्रय सत्यरूप आनन्दघन आत्माका निश्चयकर तहांहीं मनको स्थिरकरे। अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दुःखंसर्व्वमनुस्मृत्य कामभोगान्निवर्त्तयेत् । अजंसर्व्वमनुस्मृत्यजातंनैवतु पश्यति ४३ । १२२ ॥

"सुप्रसन्नंलये चैव यथा कामोलयस्तथा" । लय बिषे प्रसन्नहुये को जैसा काम तैसा लय भी है; अर्थात्, किंवा जिस बिषे मन लीनहोताहै, ऐसी जो सुषुप्ति तिसको लय कहतेहैं, तिस लय बिषे प्रसन्नहुये । अर्थात् खेद रहित हुये । भी मनको निरोध करे । अर्थात् प्राणादिकोंका निग्रहकरके समाधिमें स्थितहुआपुरुषअपने मनको सुषुप्ति, निद्रा, बिषे न जानेदे क्योंकि निर्विकल्प चिन्मात्र स्थितिमें अविद्यारूप जड़ सुप्ति विघ्नकारी है ताते । शङ्का ॥ नन्नु जब मन प्रसन्नहुआ तब किसवास्ते तिसका निरोधकरिये । जहां इसप्रकारकी शङ्काहै, तहां समाधान कहतेहैं । "सुप्रसन्नंलयेचैव यथाकामो लयस्तथा" । लयबिषे प्रसन्नहुये को भी । निरोधकरे । जैसाकाम है तैसाही लयभीहै । अर्थात् सुषुप्ति में लयहुआ मन प्रसन्नहोताहै परन्तु सुषुप्ति अविद्यरूप होनेसे तिस बिषे लयहुआ मन पुनः जाग्रत् स्वप्नरूप विक्षेप दुःखकोही पावता है, ताते जैसा काम मनको अनर्थका हेतुहै, तैसाही सुषुप्तिबिषे लयका होना भी अनर्थकारी है, अतएव कामको विषय करनेवाले मन के निग्रहवत् । अर्थात् जैसे काम अरु विषयादिकों से मनका निग्रह करते हैं । निद्रारूप लयसे भी मनका निरोध करनायोग्य है । अर्थात् लय । सुषुप्तिमें मनकालय (निद्रा) का होना, अरु विक्षेप, अफुरहुये मनमें संकल्पोंका फुरना, अरु रसास्वाद, समाधिसुखमें रागका होना, अरु कषाय कर्मणी बुद्धिआदिक अन्तःकरणके दोष । यह चारो समाधिवाले पुरुषको समाधि में विक्षेप करनेवाले विघ्नहैं, ताते मुमुक्षुपुरुष करके जैसे कामसे मनको निग्रहकरना है तैसेही लयादि चारोंसेभी मनका निग्रह करना योग्यहै ४२ । १२१ ॥

४३।१२२ ॥ हे सौम्य ! [ज्ञानके अभ्यास अरु वैराग्य (अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्माके श्रवण मननरूप ज्ञानका अभ्यास अरु समस्त नाम रूप क्रियात्मक जगत् से वैराग्य । इनदोनों उपायों करके 'लय' अरु विक्षेप से निवर्त्त (निरोध) किया जो मन सो जब रागसे प्रतिबन्धको प्राप्तहोवे, तब श्रवण मनन अरु निदिध्यासन के अभ्यास से जन्य संप्रज्ञात (सबिकल्प) समाधिपर्यन्त अभ्यास से तिस रागरूप प्रतिबन्ध से निवर्त्त करने को योग्य है । अर्थात् आत्मा के श्रवणादिकों के अभ्यासरूप उपाय करके इस मन को रागरूप प्रतिबन्ध से निवर्त्त करना योग्य है ।] ॥ प्रश्न ॥ तिस मनके । । कि जिसका स्थित अचलहोना योगीजन इच्छतेहैं । । निग्रह करने का उपाय कौन है, । तहां ज्ञानाभ्यास अरु वैराग्य । उपाय । है, इस प्रकार उक्त प्रश्न का उत्तर कहतेहैं "दुखं सर्व्वमनुस्मृत्य कामभोगान्निवर्त्तयेत् " । दुःखरूपही है इस प्रकार स्मरण करके कामके भोगको निवारणकरे, अर्थात् अविचारित समस्त द्वैतसर्व दुःखरूपहीहै, इसप्रकार । ज्येष्ठ श्रेष्ठों से वा शास्त्रसे स्मरणकर । सर्वदा स्मृतिमें रखके कामके भोग(रूपादिबिषय) से प्रसरित हुये मनको । अर्थात् जो कामनाके वशहुआ मृगजलवत् इसलोक परलोकादिकों के उत्तम मध्यम बिषयभोग तिनबिषे आसक्त प्रसरितहुआ क्षणमात्रको भी विश्राम पावता नहीं, ऐसा जो विक्षेपवान् चञ्चलमन तिसको । वैराग्यकी भावना से निवारणकरे । । अर्थात् यावत् उत्तम मध्यम विषयभोग हैं, तिन बिषे यद्यपि सुखभी प्रतीतहोताहै, तथापि बिषयुक्त अति सुन्दर स्वादिष्ठपाकवत् साधन परतन्त्रत्व अरु क्षीणत्व यहदो अनिवार्यदोष तिनकरके युक्त बिषय दुःखरूपहीहैं इसप्रकार सम्यक् जान के अनुभवकरके, अरु "श्वोभावामर्त्यस्य यदन्तकैतत् सर्व्वेन्द्रियाणाञ्जरयन्ति तेजः " । इत्यादि श्रुतिवाक्यों से स्मरणकर उक्त प्रकार सर्वत्र सम्यक् दोषदृष्टिरूप वैराग्यकीभावनासे निवारणकरे। अरु "अजं सर्व्वमनुस्मृत्य जातं नैव तु पश्यति " । अजन्मासर्व है ऐसा मरण करके उत्पन्नहुआ कुछभी तो जानता नहीं ; अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लयेसम्बोधयेच्चित्तंविक्षिप्तंशमयेत्पुनः । सकषायंविजानीयात्समप्राप्तंनचालयेत् ४४।१२३ ॥

अजन्मा ब्रह्मरूप सर्वहै, इसप्रकार श्रुति अरु आचार्यके उपदेशसे स्मरणकरके पश्चात् तिस ज्ञानाभ्यासके दृढ़होनेसे तिससर्वात्म भावसे विपरीत द्वैतके समूह को तिसके अभाव से देखताही नहीं ४३ । १२२ ॥

४४।१२३॥ हे सौम्य! "लये सम्बोधयेचित्तं विक्षिप्तंशमयेत्पुनः" "लयविषे चित्तको प्रबुद्धकरे विक्षेपके प्राप्तहुयेको शान्तकरे" अर्थात् उक्तप्रकारके इन ज्ञानके अभ्यास अरु वैराग्य रूप उभय उपायोंकरके लय (सुषुप्ति) विषे लीनहुये चित्तको जगावे । अर्थात् आत्माके अनुभव ज्ञान विषे लगावे । अर्थात् समाधिकाल में जब चित्त सुषुप्तिमें प्राप्तहोनेलगे तब लयहोने से पूर्व उस निर्विकल्प अवस्था विषे कि जहां मन अरु प्राण के अवरोध से विशेष वृत्ति आदिकों का अभाव अरु सामान्य आत्मानुभवाकार वृत्ति का भाव है तिनभावाभाव का प्रकाशक साक्षीआत्मा अज्ञात सुषुप्तिसे पृथक् सिद्धहै कि जिसकरके अज्ञान सुषुप्ति सिद्धहोतीहै सो अनुभवतत्त्व लयादिकोंका साक्षी नित्य जाग्रत् (बोध) स्वभाव है तिस अधिष्ठानविषे चित्तको जोड़े । पुनः कामों के भोगों (विषयों) विषे विक्षेपको प्राप्तहुये चित्तको शान्तकरे । इसप्रकार वारम्बार बिचार अभ्यासकरनेवाले योगीका चित्त लयसेजगाया गया, अरु विषयोंसे निवृत्त कियागया, अरु समभावको प्राप्तहुआ नहीं, किन्तु मध्य अवस्थावालाहै, तब सो उस अवस्थामें कषाय दोषवालाहै " सकषायंविजानीयात् समप्राप्तंनचालयेत् " कषाय सहितको जानना समप्राप्तको चलावेनहीं, अर्थात् लयतासेजागा अरु समता को प्राप्तहुआ नहीं ऐसेजो समाधिकी मध्यमावस्था को प्राप्तहुआ चित्त सो कषायदोष सहित होताहै तब तिस कषाय रागके (बीज) सहितको जानना । अरु तिस कषायसेभी सविकल्प

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नास्वादयेत् सुखं तत्र निःसंगप्रज्ञया भवेत्। निश्चलं निश्चरत् चित्तं एकीकुर्य्यात् प्रयत्नतः ४५।१२४॥

समाधिरूप प्रयत्नसे निर्विकल्प समाधिरूप समभाव को प्राप्तकरे है, परन्तु जब चित्त सर्व विशेष वृत्तियों को त्यागके केवल सम-भाव की प्राप्ति के सम्मुख होय तब तिस सम प्राप्तिवाले चित्त को चलावे 'स्फुरणा के सम्मुख करे नहीं ४४। १२३॥

४५।१२४॥ हे सौम्य! [समाधि करनेकी इच्छाविषे जो सुख उपजताहै तिससुखको विषय करनेवाली इच्छासे भी मनको रो-कना योग्यहै इसप्रकार कहते हैं] समाधि करनेकी इच्छावाले योगीको "नास्वादयेत् सुखं तत्र निःसंगप्रज्ञया भवेत्" ।सुख को स्वादन करे नहीं तहां प्रज्ञाकरके निःसंगहोय, अर्थात् । निर्विक-ल्प । समाधि को प्राप्त होनेकी इच्छावाले योगीको । निर्विकल्प समाधि से पूर्व सविकल्प समाधि विषे चित्तको विषयोंसे उपराम अरु प्रत्यक् आत्मा के सम्मुख होनेसे । जो सुख होताहै तिसको सोयोगी आस्वादन करे नहीं । अर्थात् सविकल्प समाधिके अन्त अरु निर्विकल्प समाधिके पूर्वमें जो सुखहै तिसके आस्वादनको रसास्वाद कहते हैं तिस विषे आसक्त होवेनहीं । क्योंकि तिस स-माधि विषे जो सुख प्रतीत होताहै सो अविद्याकरके कल्पित । वि-शेषके अभाव अरु अन्तर मुखता करके जन्य । मिथ्याहै । क्योंकि वो सत्य आत्मानन्द सुखनहीं ताते । ऐसी विवेकवती बुद्धिकरके निःसंग । अर्थात् उक्त अविद्यात्मक सुखसे निस्पृह । होवे । अर्था-त् उस सुखकी स्पृहासे रहित असंगहुआ परमानन्दमय आत्मा की भावनाकरे, अर्थात् तिस समाधि सुखके रागसे भी चित्तको निरोधकर अराग आत्माकार होवे। अरु "निश्चलं निश्चरत् चित्तं एकीकुर्य्यात् प्रयत्नतः" ।निश्चल बाहर जानेवाले चित्तको प्रयत्नसे एकाकारकरना, अर्थात् जब सुखके रागसे निवृत्तहोके निश्चल स्वभाववाला हुआ चित्त पुनः बाह्य जानेवाला होवे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदा न लीयते चित्तं नचविक्षिप्यते पुनः । अनिंगन मनाभासं निष्पन्नं ब्रह्म तत्तदा ४६ । १२५ ॥

(अर्थात् रसास्वादसे निवृत्त निश्चल हुआ चित्तभी जो कदापि पूर्वाभ्यासके संस्कारवश बाह्य बिषयों के सम्मुख वा तिस अवस्थाविषे दर्शितहुई जो सिद्धि तिसमें रागवान् हुआ तिनके सम्मुख होवे (तब तिस निश्चल हुये परभी पूर्व संस्कारों के वश बाह्य जानेवाले चित्त को भी, तिन तिन बिषयों से उक्त ज्ञानाभ्यासादिक उपायों से रोंकके पुनः सविकल्प समाधिरूप प्रयत्न करके आत्माबिषेही एकरूप करना । अर्थात् निर्विकल्प समाधि करके युक्त चैतन्यस्वरूप सत्ता समान मात्रही सम्पादन करना ॥ (अर्थात् समाधि से उत्थान (विषय सम्मुख) हुये चित्तको पुनः सविकल्प समाधिरूप प्रयत्नसे अन्तर आत्माके सम्मुखकर अचेत्य चिन्मात्र सत्ता समान स्वरूपबिषे अभेदतासे एकाकार स्थित करना ४५ । १२४ ॥

४६ । १२५ हे सौम्य ! [पुनःयह चित्त ब्रह्ममात्रको कब पावताहै, जहां इसप्रकारकी शंकाहै तहां कहते हैं] " यदानलीयते चित्तं नचविक्षिप्यते पुनः " (चित्त लीनहोवे नहीं अरु पुनः विक्षेपको पावता नहीं (अर्थात् उक्त ज्ञानाभ्यास अरु वैराग्यरूप उपायोंसे निरोधकिया चित्त जब सुषुप्तिबिषे लीन होवे नहीं, अरु पुनः विषयों बिषे विक्षेप (उत्थान) को पावता नहीं (अर्थात् समाधिकी प्राप्तिमें जे 'लय, विक्षेप, रसास्वाद, अरु कषाय, यह चार विघ्न तिनसे रहित होताहै (अरु पवनसे रहित दीपशिखावत् अचल अरु अनाभास (अर्थात् किसी भी कल्पित विषय के अभासमान, अर्थात् जैसे सुषुप्ति में अपने कारण अविद्यामें लय हुआ चित्त भासता नहीं, तैसेही समाधिमें अपने अधिष्ठान आत्मतत्त्वबिषे लीनहुआ भासेनहीं ऐसा) । होवे "अनिंगनमनाभासंनिष्पन्नंब्रह्मतत्तदा " (अचल अरु अनाभास होवे तब सो चित्तब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वस्थं शान्तं सनिर्वाणं अकथ्यं सुखमुत्तमम्। अज-
मजेन ज्ञेयेन सर्व्वज्ञं परिचक्षते ४७। १२६॥

सम्पन्न होताहै? अर्थात् जब उक्तप्रकार अचल अरु अनाभास होताहै तबसो चित्त ब्रह्म स्वरूपकरके सम्पन्न होताहै ४६।१२५॥

४७।१२६ हे सौम्य! [असंप्रज्ञात (निर्विकल्प) समाधि बिषे जिसरूपकरके चित्त सम्पन्न होताहै तिस ब्रह्मस्वरूप को विशेषण देतेहैं "स्वस्थं शान्तं सनिर्वाणं अकथ्यं सुखमुत्तमम्" ? उत्तम सुखको स्वस्वरूप बिषे स्थित शान्त निर्वाण अरु अकथ कहते हैं? अर्थात् उक्तप्रकारके योगीके प्रत्यक्ष परमार्थरूप सर्वोत्तमब्रह्म सुख को ब्रह्मवेत्ता 'आत्मरूप सत्यका अनुबोधरूप स्वस्वरूपबिषे स्थित अरु सर्व अनर्थोंकी (कामनाकी) निवृत्तिरूप शान्त, अरु निर्वाण मोक्षकरके सहित बर्त्तमान, अरु असाधारण विषयवाला होने से कहने को अशक्य' अर्थात् नेत्रमें लगाया अंजननेत्र के अति समीप नेत्रान्तर होनेसे वो नेत्रका विषय नहीं, तैसेही बागादिक सर्व इन्द्रियों का अन्तरात्मा अत्यन्त निकट होनेसे बागादिकों का अविषय है। अरु "अजमजेन ज्ञेयेन सर्वज्ञं परिचक्षते" जन्मसेरहित अनुत्पन्नहुये ज्ञेयसे सर्वज्ञ ब्रह्मही कहते हैं? अर्थात् जैसे स्त्रीसंगादि सुख बिषयजन्य है तैसे सर्व्वोत्तम ब्रह्मानन्द सुख बिषयजन्य न होने से अरु केवल परमशान्त निर्वाण रूप होनेसे बाणी आदिकों का बिषय नहीं किन्तु जन्म से रहित अनुत्पन्न हुये ज्ञेय से। अर्थात् 'अज्ञान पर्यन्त जानने योग्य अरु वास्तवसे ज्ञानस्वरूप' निर्विकल्प समाधि करके प्राप्त जो निर्विशेष ज्ञप्तिमात्र सत्तासमान आत्मतत्त्व सो अव्यक्तादिवत् जन्मवान् न होनेसे जन्मरहित अजहै अरु। आकाशादिक जो ज्ञेय हैं सो उत्पन्नहुये ज्ञेयहैं, अरु आत्मतत्त्व जो ज्ञेयहै सो अज्ञान पर्यन्त ज्ञेय है वास्तवकरके अनुत्पन्न ज्ञेयहै। तिस जन्मरहित अनुत्पन्न हुये ज्ञेयसे अभिन्नहुआ अपने सर्वज्ञरूप से सर्व ब्रह्मही कहते हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न कश्चिज्जायते जीवः सम्भवोऽस्य न विद्यते।
एतत्तदुत्तमं सत्यं यत्र किञ्चिन्न जायते ४८।१२७।
इति अद्वैताख्यं तृतीयं प्रकरणं समाप्तम् ॥

[अर्थात् निर्विकल्प समाधिकरके ब्रह्मको प्राप्तहुआ योगी "ब्रह्म विद्ब्रह्मैवभवति" इत्यादिप्रमाणसे ब्रह्मही होताहै ४७।१२६। ४८।१२७॥ हे सौम्य ! [उक्त उपायोंको परमार्थसे सत्य ताके हुये अद्वैत की हानिहोवेगी, अरु अन्यथा उन उपायों प्रमाज्ञान न होवेगा, यह शङ्का करके तब कहतेहैं] मनके निग्रह दिक उपाय, अरु मृत्तिका सुवर्णआदिकोंवत् सृष्टि अरु उपासना यह सर्वही परमार्थ स्वरूप की प्राप्तिके उपाय होने करके परमार्थरूप कहे हैं, परन्तु वास्तवसे सत्य हैं नहीं, क्योंकि "न कश्चिज्जायते जीवः संभवोऽस्य न विद्यते " ? कोई भी जी उत्पन्न होता नहीं, इसका कारण है नहीं ? अर्थात्, मनके निग्र आदिक जे उपाय (साधन कहे हैं सो परमार्थ से सत्य नहं क्योंकि परमार्थसे सत्यतो कोई भी करता भोक्तारूप जीव किं भी प्रकारसे उत्पन्न होतानहीं। एतदर्थ स्वभावसे अजन्मारूप एकही आत्मा का कारणहै नहीं। अरु जिस करके कारण न तिसही करके कोई भी जीव उपजता नहीं। यह इसका अर्थ अरु "एतत्तदुत्तमं सत्यं यत्रकिञ्चिन्न जायते" ? तिनके मध्य उत्तम सत्य है जहां (जिसबिषे) कुछ भी उपजतानहीं ? अर्थ पूर्वके ग्रन्थबिषे उपायपने करके कथन किये जो तिन व्यावहारिक सत्यरूप साधनों के मध्य यह उत्तम सत्यहै जिस सत्य ब्रह्मबिषे कुछ (अणुमात्र) भी उत्पन्न होता नहीं ४८। १२

इतिश्रीगौडपादाचार्यकृतमांडूक्योपनिषद्कारिकायां अद्वैताख्यतृतीयप्रकरणभाषाभाष्यं समाप्तम् ॥

हरिः

ॐ तत्सद्ब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ गौडपादीयकारिकायां अलातशान्ताख्य चतुर्थप्रकरणं प्रारभ्यते॥

ज्ञानेनाकाशकल्पेन धर्म्मान् योगगनोपमान्। ज्ञेयाभिन्नेन सम्बुद्धस्तंवन्दे द्विपदांवरम् १।१२८

अथ गौडपादीयकारिकायां अलातशान्ताख्य चतुर्थप्रकरणभाषाभाष्यं प्रारभ्यते॥

१।१२८ हे सौम्य! [पूर्वके अरु पिछलेप्रकरणके सम्बन्धकी सिद्धि के अर्थ पूर्वोक्त तीनप्रकरणों बिषे उक्तार्थ को क्रमसे कथन करतेहैं] ॐकारके निर्णयरूप द्वारकरके आगम नामक प्रथम प्रकरण से प्रतिज्ञा किये। अरु द्वितीय वैतथ्याख्य प्रकरण बिषे बाह्य विषयों के भेद को मिथ्यापने से सिद्धहुये अरु पुनः अद्वैताख्य तृतीय प्रकरणबिषे शास्त्र अरु युक्तियों करके साक्षात् निर्द्धारकिये अद्वैत का "तदुत्तमं सत्यमिति"। यह उत्तम सत्य है। यह इस तृतीय प्रकरणके अन्तके श्लोक बिषे। पूर्व प्रकरण की प्रतिज्ञा। समाप्त किया। अरु तिस इस श्रुतिके अर्थरूप जो अद्वैत सिद्धांत तिसके विरोधी (प्रतिपक्षी) हुये जे भेद (द्वैत) वादी अरु वैनाशिक (निरात्मवादी) हैं तिनका परस्पर में विरोध होनेसे उनका सिद्धान्त रागद्वेषादि क्लेशोंका आश्रय है। अर्थात् सर्व भेद वादियोंके सिद्धांतरूप वृक्ष रागद्वेषादि क्लेशरूप पक्षियोंके बिश्रामका आश्रय हैं। अरु अद्वैतवादियों का जो सिद्धान्त है सो रागद्वेषादि क्लेशों का अनाश्रय है। अर्थात् रागद्वेषादि क्लेशोंका आश्रय नहीं, क्योंकि रागद्वेषादि क्लेशपरस्परके भेदको आश्रयकरके रहते हैं, अरु परस्पर का भेद द्वैतके आश्रयहै, अरु सो सर्वअनर्थोंका आश्रय जो द्वैतभाव सो अद्वैत सिद्धांतमें नाममात्रभी नहीं तातें तिनके आश्रित जे राग द्वेषादि अनर्थ क्लेश सो कैसे होगा, किन्तु कदापि नहीं। वा अद्वैत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिद्धान्तसे "सर्वमात्मैवाभूत" जिनको सर्वात्म दृष्टिहोनेसे उक्त
को भेदके अभावसे रागद्वेषादि क्लेश आश्रय करतेनहीं, अरु "नाति
वादी" वो अतिवादी होते नहीं अर्थात् निंदास्तुति करतेनहीं ॥ अ
भेदवादियों को परस्परमें रागद्वेषादि क्लेशोंका आश्रयपना, वैष्णव
मतवादी अरु शैवमतवादियोंमें इस सांप्रतकालमें सर्वको प्रत्यक्ष
है, ताते भेदवादियोंका सिद्धांत रागद्वेषादि क्लेशका आश्रयहै। अ
अद्वैत सिद्धांतहै सो उक्तक्लेशोंका अनाश्रयहोनेसे सम्यक्ज्ञानहै।
इसप्रकार अद्वैत ज्ञानकी स्तुतिके अर्थ, तिन भेदवादियोंके सिद्धां
का मिथ्या ज्ञानपना सूचित किया। अरु सो तिनके पक्षोंका मिथ्या
ज्ञानपना यहां परस्पर विरुद्ध होने करके विस्तार से देखाये
तिसके निषेध से अद्वैत ज्ञानकी सिद्धि, आवीत न्याय करे
(आवीत न्याय नाम, व्यतिरेक न्यायका है जैसे जो क्रियाकर
साध्य है सो अनित्य है इस अन्वय से अनित्यताके जानेहुये भी
जो अनित्य नहीं, सो क्रियाकरके साध्य भी नहीं, इस प्रकार
व्यतिरेक भी व्यभिचारकी शंकासे रहित होने करके व्याप्ति
निश्चयार्थ अंगीकार करतेहैं। अरु तैसे तर्कसे घटितहुये अर्थकेज्ञा
से जानेहुये भी विरोधी अन्यवादके निषेधके वर्णन बिना अन्यप
के सम्यक् पनेकी शंकाहोवेगी। एतदर्थ अन्यवादोंके निषेधसे अ
द्वैत सिद्धांतकी सिद्धि समाप्त करने को योग्य है। इस अभिप्रा
से अलात शान्ति के (अर्द्धदग्ध काष्ठ के घुमावने के) दृष्टान्त
उपलक्षित अलात शान्ति नामक चतुर्थ प्रकरण प्रारम्भ करतेहैं
इत्यर्थः] समाप्त करनेके योग्यहै। एतदर्थ यह अलात शान्तिनाम
चतुर्थ प्रकरण प्रारंभ करतेहैं। अरु तिस चतुर्थ प्रकरणबिषे अद्वै
ज्ञानके सम्प्रदायके कर्त्ता नारायण भगवानरूप आचार्यके अद्वै
स्वरूप सेही नमस्कारार्थ यह प्रथम श्लोकहै। [आदिअन्त
मध्य बिषे मंगलाचरण करके युक्त जो ग्रंथहैं सो प्रवृत्तिवाले हो
हैं, इस अभिप्रायसे श्रीगौडपादाचार्य आदि बिषे ॐकारके उच्च
रणवत् अरु अन्तबिषे परदेवताके प्रणामवत् मध्यबिषे भी परदेव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस्पर्शयोगो वै नाम सर्व्वसत्त्वसुखोहितः। अविवादोऽविरुद्धश्च देशितस्तं नमाम्यहम् २। १२९॥

रूप उपदेष्टा (आचार्य) को प्रणाम करते हैं] जिस करके शास्त्रके आरंभ विषे वांछित अर्थकी सिद्धिके लिये आचार्यकी पूजा अंगीकार करते हैं। एतदर्थ यहां आचार्यको नमस्कार रूप मंगल करते हैं "। ज्ञानेनाकाशकल्पेन धर्म्मान् योगगनोपमान्, ज्ञेयाभिन्नेन सम्बुद्धस्तं वन्दे द्विपदांवरम्"। जो ज्ञेयोंसे अभिन्न आकाश के तुल्य ज्ञानसे आकाशकी उपमावाले धर्मोंको सम्यक् जानता हुआ, तिन द्विपदनके मध्य श्रेष्ठको बन्दनाकरताहौं; अर्थात् जो नारायण नामक परमेश्वर अग्निकी उष्णताअरु सूर्य के प्रकाशवत् उपाधि करके कल्पित भेदसे बहुरूप आत्मस्वरूपधर्म्मरूप ज्ञेयपने से अभिन्न आकाशके तुल्य यद्यपि [आकाशको जड़ताकी अधिकतासे स्वप्रकाशरूप ज्ञानको आकाशकी उपमाअपूर्ण है, तथापि ज्ञानके व्यापकपने आदिक बिषे आकाशकी उपमा पूर्णतासे जाननेयोग्यहै]ज्ञानरूपतासे आकाशके तुल्यताकी उपमावालेआत्मा के धर्म्मों को सम्यक्प्रकार जानता हुआ, तिस द्विपदों (मनुष्य से उपलक्षित पुरुष) के मध्यश्रेष्ठ (प्रधान) पुरुषोत्तम [गौड़पादाचार्य्य जो हैं सो पूर्व नरनारायणकरकेआश्रित बदरिकाश्रमबिषे नारायण भगवान् को चित्त में ल्यायके बड़े तपको तपते हुये, ताते नारायण भगवान् प्रसन्न होयके तिनके अर्थ विद्या वरदान देतेहुये। तातेतिस नारायण भगवान् रूप परमेश्वरबिषे वेदान्त सम्प्रदायका परमगुरुपना प्रसिद्ध है। यह भावहै] कोमैं बन्दना करता हौं, यह अभिप्राय है॥ उपदेष्टा आचार्य के नमस्काररूप से विरोधी पक्षों के निषेध द्वारा इसचतुर्थ प्रकरणबिषे प्रतिपादन करने को इच्छित, ज्ञान, ज्ञेय, अरु ज्ञाताकेभेद रहित (अर्थात् ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, इसत्रिपुटी से रहित) परमार्थ तत्त्वका ज्ञान (परमार्थ बोधरूप) प्रतिज्ञा कियाहोताहै १। १२८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२ । १२६ ॥ हे सौम्य! अब अद्वैत दर्शनरूप योगकी (अर्थात् अद्वैत ज्ञानकी स्तुति के अर्थ तिसको नमस्कारसे स्तुति करते) "अस्पर्शयोगोवैनाम सर्व्वसत्त्वसुखोहितः" (अस्पर्शयोग प्रसिद्ध नामहै सर्वसत्त्व सुखहोताहै हितरूपहै, अर्थात् जिसयोगका किसी सेभी कदाचित्भी स्पर्श (सम्बन्ध) होवेनहीं, ऐसा जो ब्रह्मस्वरूप योग सो कहिये अस्पर्श योग नामहै, सो ब्रह्मवेत्ताओं को ही अस्पर्श योगहै (अन्योंको नहीं) यह प्रसिद्धहै । (अर्थात् अस्पर्श योगनाम वाला अद्वैत ब्रह्मरूप ज्ञान है सो अद्वैत ब्रह्मके जानने वाले सम्यक् ब्रह्मवेत्ताओं को है । तिनसे इतरजे कर्मवादि तर्कवादि आदिक भेदी हैं तिनको "न कर्मिणो वेदयन्ते" "नैषा तर्केण मतिरापनेया" । इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे सो ज्ञान नहीं) ॥ अ कोई एक अत्यन्त सुखके साधन (दिव्य सर्व्वोत्तम भोग्य सामग्री) करके युक्तहुआ भी योग दुःखरूप हैं ।) 'जैसे तप, अरु य (ब्रह्मरूप अस्पर्श योग (तैसा नहीं । किन्तु "सर्वेषां सत्त्वानां देहभृतां सुखयतीति" इस व्युत्पत्त्यर्थ से जो सर्व देहधारी जीवोंको सुखी करे, सो सर्व सत्त्वसुखहै । ताते सो अस्पर्श नामयोग सर्व जीवोंको सुखरूपहै । अरु तैसेही इस योग करके हितहो है (अर्थात् जो कदापि किसी विषयका उपभोगरूप सुख है सुख तो है परन्तु सो हितरूप नहीं (क्योंकि विषयों का उपभो जन्य सुख है सो क्षणिक अरु परिणामी है ताते) अरु (अस्पर्श योग) सुखरूप है, अरु हितरूप है, क्योंकि (सोक्षणि अरु परिणामी न होयके) सर्वदा एकरस अचल स्वभाव वाल ताते । किंवा "अविवादोऽविरुद्धश्च देशितस्तं नमाम्यहम्" (अ वादहै अविरुद्धहै उपदेशकियाहै तिसको मैं नमस्कार करताहू अर्थात् जिसविषेपक्ष अरु प्रतिपक्ष के ग्रहणसे विरुद्धकथनरूप वादनहीं, एतदर्थ अविवादहै (अर्थात् जहां द्वैतहै तहां स्वपक्ष प्रतिपक्षका ग्रहणहै तहांही परस्परमें राग द्वेष पूर्वक विरुद्धक रूप विवादहै अरु इसभेदरहित अद्वैत अस्पर्श नामयोगविषे भे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूतस्य जातिमिच्छन्ति वादिनः केचिदेवहि। अभूतस्यापरे धीरा विवदन्तः परस्परम् ३।१३०॥

भूतं न जायते किञ्चिदभूतं नैव जायते। विवदन्तोऽद्वयाह्येवमजातिं ख्यापयन्तिते ४।१३१॥

अभाव से स्वपक्ष अरु परपक्ष अरु तदाश्रित रागद्वेष अरु परस्परका विरुद्ध कथनरूप विवाद समूलनहीं, ताते सो अविवाद है। अर्थात् जिस पुरुषको एकअद्वितीय ब्रह्मका सो रूपही अस्पर्श योग प्राप्तहुआ है सो विद्वान् "विद्वान् भवते नातिवादी" सम्यक् अद्वैतज्ञानी हुआ किसीका भी खंडन मंडनरूप विवाद करतानहीं, ताते सो अविवाद है। क्योंकि अविरुद्ध है। अतएव ऐसा जो सर्वोत्तम सुख रूप हितरूप अविवाद अरु अविरुद्ध 'योग जिसशास्त्रने सम्यक् उपदेशकिया है, तिस शास्त्रको मैं नमस्कार करता हौं २।१२६॥

३।१३० हे सौम्य! [अद्वैत वादको अविरुद्ध होने करके तिस बिषे विवादके अभावको स्पष्ट करनेको प्रथम द्वैतवादियोंके विवादको उदाहरण करके कहते हैं]। प्रश्न। द्वैतवादी परस्पर विरोधको कैसे प्राप्त होते हैं,। उत्तर। कहते हैं "भूतस्य जातिमिच्छन्ति वादिनः केचिदेवहि" 'कोई एकवादी विद्यमान भूतों (वस्तुओं) की उत्पत्ति इच्छते हैं' अर्थात् जिस करके कोई एक सांख्यशास्त्र मतके अनुसारी द्वैतवादी विद्यमान वस्तुकी उत्पत्ति को इच्छते हैं, सर्व नहीं अरु "अभूतस्यापरेधीरा विवदन्तः परस्परम्" 'पंडितपने के अभिमानी अन्य अविद्यमान वस्तुकी उत्पत्तिको इच्छते परस्पर विवाद करते हैं' अर्थात् जाते सांख्यवादियों से अन्य अपनेबिषे पंडितपने के अभिमानी वैशेषिक अरु नैयायिक मतके, अविद्यमान वस्तुकी उत्पत्तिको इच्छते हैं, एतदर्थही परस्पर विवाद करते हैं (अन्यको जय करने को इच्छते हैं इत्यभिप्रायः) ३।१३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ख्याप्यमानामजातिन्तैरनुमोदामहे वयम् ।
विवदामो न तैः सार्द्धमविवादं निबोधत ५ । १३२ ॥

४ । १३१ हे सौम्य ! । प्रश्न । इसकहे प्रकार विरुद्ध कथन से परस्परके पक्षके खंडनकेकर्त्ता वादियों करके सिद्धकिया क्याहोता है । उत्तर । तहां कहतेहैं "भूतं न जायते किञ्चिदभूतं नैव जायते" (कुछभी भूत (विद्यमान) उपजता नहीं, अविद्यमान उपजता नहीं ; अर्थात् कुछ भी विद्यमान वस्तु उपजता नहीं, क्योंकि सो आत्मावत् विद्यमान है ताते, इसप्रकार कहताहुआ असत् वादी सत् के जन्मरूप सांख्यके पक्षका निषेध करताहै । अरु तैसे अविद्यमान वस्तुभी उपजतानहीं, क्योंकि सो शशशृंगवत्अविद्यमान है ताते । इस प्रकार कहताहुआ सांख्यवादी भी असत् के जन्मरूप असत्वादीके पक्षका निषेध करताहै "। विवदन्तोऽद्वयाख्येवमजातिं ख्यापयन्ति ते " (ऐसे अद्वैतवादी विवाद करते हुये अनुत्पत्तिको ख्यापन करते हैं ; अर्थात् जो अद्वैतवादी हैं सो विवाद करते (निर्णयकरते) हुये । अरु सत् अरु असत् के जन्म रूप, इस परस्पर के पक्षरूप विवादको निषेध करतेहुये । कोई कहताहै इसविद्यमान वस्तुकी उत्पत्ति है कोई कहताहै अविद्यमान की उत्पत्ति है इस प्रकार परस्परमें वादी विवाद करते हैं, तिनदोनोंके पक्षको निषेध करतेहुये । सत् असत् से भिन्न (विलक्षण) वस्तुके अर्थ से अनुत्पत्ति को प्रकाश करते हैं ४ । १३१ ॥

५ । १३२ हेसौम्य ! [तब वादियोंकरके उक्तहोनेसे अनुत्पत्तिभी तुमकरके निषेध करनेको योग्यहै यह शंका करके कहते हैं [इस प्रकार तिनप्रतिवादियों करके । अर्थात् "ख्याप्यमानामजातिन्तैरनुमोदामहे वयम् " (तिनकरके प्रकाशित किया अनुत्पत्ति को हम अनुमोदन करते हैं ; अर्थात् ऐसे तिन प्रतिवादियों करके प्रकाशित किया जो अनुत्पत्ति तिसकोही इसप्रकार होवो, ऐसे हम केवल अनुमोदन करते हैं । परन्तु "विवदामो न तैः सार्द्धम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजातस्यैव धर्म्मस्य जातिमिच्छन्ति वादिनः।
अजातो ह्यमृतो धर्म्मो मर्त्यतां कथमेष्यति ६।१३३॥
न भवत्यमृतं मर्त्यं न मर्त्यममृतन्तथा।
प्रकृतेरन्यथाभावो न कथञ्चिद्भविष्यति ७।१३४॥

विवादं निबोधत" (तिनके साथ विवाद करते नहीं अविवाद को श्रवणकरो; अर्थात् जैसे वे (भेदवादी) परस्पर विवाद करते हैं, तैसे हम तिनके साथ पक्ष अरु प्रतिपक्ष के ग्रहण से विवाद करते नहीं। एतदर्थ हे हमारे शिष्यो! हमकरके अनुमोदनकिये अविवादको (अर्थात् विवाद से रहित परमार्थ रूप ज्ञान को श्रवण करो ५।१३२॥

६।१३३ हे सौम्य! [उत्पन्नहुये वस्तुकेही जन्मकरके अनर्थकी प्राप्तिसे अरु अनवस्था दोषकी प्राप्तिसे अनुत्पन्नहुये पदार्थकेही जन्मको सत्वादी अरु असत्वादी सर्वही स्वीकार करतेहैं।इसप्रकार अन्यवादियों के पक्षका अनुवाद करते हैं] "अजातस्यैवधर्मस्य जातिमिच्छन्ति वादिनः" (सर्ववादी जन्मरहित धर्मकी उत्पत्ति को इच्छते हैं (अर्थात् सर्व जो सत् असत्वादी है सो, जो जन्म रहित ही धर्म्मनामवाला परमात्माहै,तिसकी उत्पत्ति को इच्छते हैं परन्तु "अजातो ह्यमृतो धर्म्मो मर्त्यतां कथमेष्यति" (अजन्मा मरणराहित धर्म्म मरनेकी योग्यताको कैसे पावेगा; अर्थात् अजन्मा अरु अमृत (मरणरहित) जो धर्म नामक परमात्मा सो मरणकीयोग्यताको कैसे प्राप्तहोवेगा,किन्तु किसीप्रकारसेभी प्राप्त होवे नहीं॥ अर्थात् जो जन्मताहै तिसका मरण भी निश्चित है, ताते जो परमात्मा उत्पन्नहोय तो विनाशभी अवश्य होगा, परन्तु सो परमात्मा श्रुतिके प्रमाण अरु अनुभवसे निराकार महासूक्ष्म एकअद्वैत परिपूर्ण अजन्माहै, अरु जिसकरके अजन्मा है तिसही करके कदापि मरणके योग्य नहीं। ६।१३३॥

७।१३४ हे सौम्य! [परिणामी ब्रह्मके वादविषे जो अब्रह्मवा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वभावेनामृतो यस्य धर्म्मोगच्छति मर्त्यताम् ।
कृतकेनाऽमृतस्तस्य कथंस्थास्यतिनिश्चलः ८ । १३५ ।

दियों करके दूषण कहे हैं, सो भी हमने अनुमोदन किया है, इ
प्रकार मानके कहते हैं,] "न भवत्यमृतं मर्त्यं न मर्त्यमम्
तथा" (मरणरहित मरनेके योग्य होता नहीं, तैसे मरनेके यो
मरण रहित नहीं; अर्थात् मरणरहित जो ब्रह्म सो मरने के यो
होता नहीं, क्योंकि स्थितरूपका विरोधहै ताते । तैसेही मरने
योग्य कार्य सो स्वरूपकी स्थितिविषे वा प्रलय अवस्थाविषे म
णरहित ब्रह्मको पावता नहीं । एतदर्थ "प्रकृतेरन्यथाभावो न क
श्चिद्भविष्यति" (प्रकृतिका अन्यथा भाव किसीप्रकार से
होगा नहीं (अर्थात् प्रकृति , कहिये स्वभाव, का अन्यथा भ
किसी प्रकार से भी होनेका नहीं ॥ इति सिद्धम् ७ । १३४ ॥

८ । १३५ हे सौम्य ! "स्वभावेनामृतो यस्य धर्म्मोगच्छ
मर्त्यताम्" (जिसका स्वभावसे मरणरहित धर्म मरने की योग्य
को पावताहै; अर्थात् जिस परिणामवादी के मतमें स्वभावसे
मरणरहित धर्म्म (परमात्मा नामक पदार्थ) कार्य भावकी प्रा
से मरने की योग्यता को प्राप्तहोताहै "कृतकेनाऽमृतस्तस्य
स्थास्यति निश्चलः" (तिसका समुच्चयके अनुष्ठानसे मरणरा
निश्चलहुआ कैसे स्थित होवेगा; अर्थात् तिस वादी के मत
समुच्चय के अनुष्ठान से मरणरहित अरु मुक्तहुआ कहने
योग्यहै । सो धर्म निश्चलहुआ कैसे स्थितहोवेगा, किन्तु कि
प्रकार से भी स्थितहोवे नहीं ॥ [पूर्व अद्वैत नामक प्रकरण
कथन कियाहै अर्थजिन्होंका ऐसे इन ६ से लेके ८ पर्यन्त
श्लोकों का जो पुनः यहां निवेश कियाहै, सो अन्य वादि
पक्षों के परस्पर विरोध करके प्रसिद्धहुये अपने अनुमोदनको
खावने के अर्थ किया है ८ । १३५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सांसिद्धिकी स्वाभाविकीसहजा अकृताचया। प्रकृतिःसेति विज्ञेयास्वभावं न जहातिया ९। १३६॥

९।१३६ हे सौम्य! जिसकरके जब यह लौकिक प्रकृति भी अन्यथा भावकोपावती नहीं, तबयह अजन्मा अरु अमृत स्वभाव वाली प्रकृति अन्यथा भावको न प्राप्तहोवे, इसमें क्या कहना है किन्तु कुछभीनहीं। प्रश्नाकौन यह प्रकृतिहै तहांउत्तराकहतेहैं। "सांसिद्धिकी स्वाभाविकी सहजा अकृता च या" ८सांसिद्धिकीहै स्वाभाविकी है सहजाहै अरु जो अकृतहै; अर्थात् [प्रकृतिका अन्यथाभाव किसी भी प्रकारसे होनेका नहीं, इस प्रकार ७ वें श्लोकबिषे कहा। तहां प्रकृति शब्दके अर्थको कहते हैं] सम्यक् सिद्धि बिषे होनहार है एतदर्थ सांसिद्धिकी है। जैसे सिद्ध योगियोंकी अणिमादि ऐश्वर्यकी प्राप्तिरूप जो प्रकृतिहै, सो भूत अरु भविष्यत्काल बिषे अन्यथा भावको पावती नहीं, तैसेही सो प्रकृति अन्यथा भावको पावती नहीं, एतदर्थ तिसको सांसिद्धिकी कहतेहैं तैसेही स्वभावहीसे सिद्धहै याते सोई स्वाभाविकीहै, जैसे अग्निआदिकोंकी उष्ण अरु प्रकाशादिरूप प्रकृतिहै सोभीकालान्तरबिषे अरुदेशान्तर बिषेभीव्यभिचारको प्राप्तहोती नहीं, तैसेही यहभीव्यभिचारको पावतीनहीं एतदर्थ इसको स्वाभाविकीकहते हैं। अरु तैसेही सहजा आत्माके साथही होनहारहै। जैसे पक्षी आदिकों की आकाश बिषे गमनादिरूप प्रकृति (स्वभाव) सहजहै। तैसेही यह आत्माके साथही होनेवाली है, एतदर्थ इसको सहज कहतेहैं। अरु अन्यभी जो कोई एक किसी निमित्त से भी अकृत (अरचित) होवे, जैसे जलकी अधोदेश बिषे गमनादि रूप प्रकृतिहै, अरु जैसे घटका घटत्वहै अरु पटका पटत्वहै, तैसे अन्यभी जो कोई एक कदाचित् भी स्वभावको त्यागेनहीं सोसर्व प्रकृति है। इस प्रकार जाननेको योग्यहै। अरु "प्रकृतिःसेति विज्ञेया स्वभावं न जहाति या" ८जो स्वभावको त्यागेनहीं सो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जरामरणनिर्म्मुक्ताः सर्व्वेधर्म्माःस्वभावतः । ज
रामरणमिच्छन्तश्च्यवन्ते तन्मनीषया १० । १३७

सर्व प्रकृतिहै इस प्रकार । प्रकृति शब्दका अर्थ जानने योग्यहै
अरुजब लोकबिषे मिथ्या कल्पित लौकिक वस्तुबिषे जो प्रकृ
(स्वभाव) है सोभी अन्यथा होतानहीं, तब अजन्मा स्वभा
वाले परमार्थ रूप सत्य वस्तुबिषे जो अमृत भावरूप स्वभाव
सो अन्यथा न होवे, तिसमें क्या आश्चर्यहै किन्तु कुछभीनहीं
यह इसका अभिप्रायहै ६ । १३६ ॥

१० । १३७ ॥ हेसौम्य ! । प्र० । पुनः जिसका अन्यथाभा
वादियों करके कल्पित है, ऐसी जो प्रकृति सो किस विषयवाली
है, अरु तिसके अन्यथाभावकी कल्पना करनेबिषे उन वादियों
की क्या हानि है । तहां । उ० । कहते हैं " जरामरणनिर्म्मुक्ताःसर्व
धर्म्माःस्वभावतः " । ८ सर्व धर्म स्वभावसेही जन्ममरण रहित
हैं ; अर्थात् सर्व धर्म्म [प्रसंग बिषे प्राप्तहुईही जीवोंकी प्रकृति
(स्वभाव तिसके देखावने को, कहनेका आरम्भ करते हैं] कहिये
आत्मा अर्थात् "अणुरेषधर्म्मः" इस कठकी श्रुतिने आत्माको धर्म
नाम करके कहाहै । अत्मा सो स्वभावही से जन्म मरणादिसर्व
षट् भाव । विकारों से रहित है, ऐसे स्वभाववाले हुये जे धर्म
(आत्मा) हैं । । यहां जो आत्माको बहुवचन से कहाहै सो घ
टाकाशोंवत् शरीरादिक उपाधिके सम्बन्धसे कहाहै । । तिनबि
षे । " जरामरणमिच्छन्तश्च्यवन्तेतन्मनीषया " । ८ जरामरण
को इच्छते हैं सो तिसकी चिन्ताकरके भ्रष्ट होते हैं ; अर्थात् जो
अपने स्वभ वसेही जन्म मरणादिक सर्व विकारोंसे रहित अजा
अमर अभय आत्मा है, तिस बिषे जो रज्जुबिषे सर्पवत् । अनहु
आही । जन्म जरा मरणको इच्छतेहुयेवत् इच्छा करते हैं (क
ल्पते हैं) सो तिस जरामरण की चिन्ता करके स्वभाव से । अ
पने जन्ममरणादि भावसे । भ्रष्ट होते हैं । अर्थात् जन्मादि स

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारणं यस्य वै कार्य्यं कारणं तस्य जायते। जायमानं कथमजं भिन्नं नित्यं कथञ्च तत् ११। १३८॥

विकार रहित जो आत्मा तिस विषे विकार की कल्पना के हुये तिसकी वासना से उन वादियों को स्वभाव की हानिही होती है यह दोष है १०। १३७॥

११।१३८॥ हे सौम्य! [प्रसंगविषे प्राप्त हुये अर्थ को त्यागके सांख्य वादियोंके पक्षविषे वैशेषिक आदिकरके कथन किया अरु आप अद्वैत वादियों करके अनुमोदन किया जो दूषण है, तिसका अनुवाद करते हैं] सत् कहिये विद्यमान वस्तुकी उत्पत्ति के कहनेवाले सांख्यवादियों करके अघटित कैसे कहा है, । जहां ऐसा प्रश्न है तहां वैशेषिककहते हैं "कारणं यस्य वै कार्य्यं कारणं तस्य जायते" (जिसके, मतविषे, कारणही कार्य होता है तिसके, मतविषे, कारण जन्मता है; अर्थात् जिस सांख्यवादियों के मतविषे मृत्तिकावत् उपादानरूप कारणही कार्य्य होता है। जैसे मृत्पिंड घटरूप परिणाम को तैसे कारण कार्य के आकार से परिणाम को प्राप्त होताहै। तिनके मतविषे जन्मरहित ही कारण महत्तत्त्वादि कार्य रूपसेही जन्मता है। अरु जब महत्तत्त्वादिकों के आकारसे उत्पन्न होनेवाला प्रधानहै तब सो अजन्मा अरु नित्य कैसे कहा है, एतदर्थ जन्मता है अरु अजन्मा नित्य है, इसप्रकार तिन करके यह विरुद्ध कथन किया है। अरु "जायमानं कथमजं भिन्नं नित्यं कथञ्च तत्" (सो जायमान है तब अज कैसे होगा, अरु विदारण को प्राप्तहुआ नित्य कैसे होवेगा; अर्थात् सो प्रधान एक देशसे भिन्नता, भेद वा विदारण, को प्राप्त हुआ नित्य कैसे होवेगा [विवाद का विषय जो प्रधान सो अनित्य है, क्योंकि सावयव है ताते। घटादिकोंवत्, इस अनुमान के अभिप्राय से दृष्टान्त को साधते हैं] जिसकरके लोक विषे सावयव एक देशसे फूटने रूप धर्मवाला घट नित्य देखा नहीं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारणाद्यद्यनन्यत्वमतः कार्य्यमजं यदि । जायमा
नाद्धि वै कार्य्यात् कारणं ते कथं ध्रुवम् १२ । १३९ ॥
अजाद्यै जायते यस्य दृष्टान्तस्तस्य नास्ति वै । ज
ताच्च जायमानस्य न व्यवस्था प्रसज्यते १३ । १४० ।

एतदर्थ एक देशसे विदारण को पाया जो प्रधान सो अजन्मा है
अरु नित्य है, इसप्रकार जो उन सांख्यवादियों करके कथन किया
है सो विरुद्ध किया है । यह इसका अभिप्रायहै ११ । १३८ ॥

१२ । १३९ ॥ हे सौम्य ! अब पूर्व देखाया जो कार्य्य कारणका
भेदवाद तिसके निषेधरूप उक्तार्थकोही स्पष्ट करने के अर्थ कहते हैं
"कारणाद्यद्यनन्यत्वमतः कार्य्यमजं" (जब कारण से अनन्यपना
मानता है तब कार्य्य अजन्मा है ; अर्थात् जब जन्मरहित कारण
से कार्यका अनन्यपना तेरेको वांछित (मन्तव्य) है, तब तिस
प्रकारके (जन्मरहित ; कारण से अपृथक् होने करके कार्य भी
अजन्मा है, ऐसे प्राप्तहुआ । एतदर्थ तेरे मतको प्रधानका अज
न्यपना अरु जन्यपना यह विरोध हुआ । अरु कार्य है औ अ
जन्मा है यह दूसरा विरुद्ध हुआ । किंवा कार्य कारण के अनन्य
भावविषे अन्यदोष यह है कि "यदि, जायमानाद्धि वै कार्य्यात् का
रणं ते कथं ध्रुवम्" (जब प्रसिद्ध जायमानकार्य से अनन्य कारण
है तब सो तेरे मतविषे नित्य अरु अचल कैसे होवेगा, किसु
किसी प्रकारसे भी होवे नहीं । अरु जैसे कोई कहै कि कुक्कुट
(मुरगे) का एक अङ्ग (मस्तकादि कोई) भोजनार्थ पचावते (पा
कावते) हैं अरु दूसरा अंग , गर्भाशय, अंडोंके जन्मार्थ कल्पना
करते हैं (रहने देते हैं) सो कहना बने नहीं । तैसे कार्य से अ
भिन्न कारण नित्य अरु ध्रुव है, ऐसी व्यवस्था तेरे मतविषे बने
नहीं, अरु अद्वैतवादियों के माया विवाद विषे कार्य कारण के
अभेद होनेसे भी कार्य केही कारणमात्रपने के अंगीकार से यह
दोष है नहीं यह सिद्धहुआ १२ । १३९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हेतोरादिः फलं येषामादिर्हेतुः फलस्य च। हेतोः फलस्य चानादिः कथं तैरुपवर्ण्यते १४।१४१॥

१३।१४०॥हे सौम्य! "अजाद्वै जायते यस्य दृष्टान्तस्तस्य नास्ति वै" ८अजन्मा से जन्मता है तिसबिषे दृष्टान्त है नहीं; अर्थात् जिस प्रधानवादीके मतबिषे अनुत्पन्न वस्तुसे कार्य उत्पन्न होताहै, तिस के मतबिषे दृष्टान्त है नहीं। अरु दृष्टान्त के अभाव से केवल अर्थ करकेही अनुपन्न वस्तुसे कुछ भी उत्पन्न होता नहीं, इसप्रकार सिद्ध होताहै। अरु "जाताच्च जायमानस्य न व्यवस्था प्रसज्यते" ८उत्पन्न हुये से उत्पन्नहुयेका ८अंगीकार है तब ८सो व्यवस्थाको प्राप्त होता नहीं; अर्थात् जब पुनःउत्पन्नहुये कारण से उत्पन्नहुई वस्तुका अंगीकारहै, तब सो अन्य उत्पन्नहुये से उत्पन्न होताहै, अरु सोभी अन्य उत्पन्न हुयेसेही उत्पन्न होताहै, इसप्रकार होनेसे व्यवस्था प्राप्तन होगी, किन्तु अनवस्था दोषही प्राप्त होवेगा। इत्यर्थ १३।१४०॥

१४।१४१॥ हे सौम्य! [द्वैतवादियोंकरके परस्परके पक्षके निषेधद्वारा सिद्धकिया जो वस्तुका जन्यपना, सो अद्वैतवादीने अनुमोदन किया। अब श्रुतिप्रतिपादित अरु विद्वान्के अनुभव का अनुसारी द्वैतका निषेध भी इस अद्वैतवादीने अनुमोदन कियाहीहै। इसप्रकार कहते हैं] "यत्र त्वस्य सर्व्वमात्मैवाऽभूत्तदिति" ८जहां तो जिस पुरुषको सर्व्व आत्माही होताहुआ> इसप्रकार श्रुतिने परमार्थ से द्वैतका अभावकहाहै। तिसको आश्रयकरके कारणरूप द्वैतका दुर्निरूपणपना कहतेहैं "हेतोरादिः फलं येषामादिर्हेतुः फलस्य च" ८जिसहेतुका आदि फलहै अरु फलकाहेतु आदि है; अर्थात् जिन वादियों के मतबिषे धर्म्मादि रूप हेतुका आदि ८कारण ८देहादि संघातरूप फल है, अरु देहादि संघातरूप फलका धर्म्मादिरूप हेतु आदि (कारण) है। इसप्रकार हेतु अरु फलके परस्परके कार्य्य अरु कारणभावकरके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हेतोरादिः फलं येषामादिर्हेतुः फलस्य च । तथा जन्म भवेत्तेषां पुत्राज्जन्म पितुर्यथा १५ । १४२ ॥

आदिवान् पनेके कहनेवाले करके " हेतोः फलस्य चानादिः कथं तैरुपवर्ण्यते " ? तिनकरके हेतु अरु फलका अनादिपना कैसे वर्णनकिया है ? अर्थात् उक्तप्रकारके हेतु अरु फलके परस्परके कार्य कारणभाव करके । अर्थात् फलका कारण हेतु, अरु हेतुका कारण फल इसप्रकारके कार्य कारण भावकरके । आदिवान् पने के कहनेवाले जे वादी तिन वादियोंकरके हेतु अरु फलका निषेध (विरुद्ध) अनादिपना कैसे वर्णन कियाहै । जिसकरके नित्य कूटस्थ निर्विकार आत्माकी हेतु अरु फलरूपता संभवे नहीं, एतदर्थ हेतु अरु फलका आत्माके परिणाम होनेसे आदिमान्पना अरु उपादानरूपसेअनादिपनाभी बनेनहीं १४ । १४१ । १५ । १४२ ॥ हे सौम्य ! [हेतु (अदृष्ट) अरु फल (शरीरादिक) इनके परस्पर के आदिमान्ताको कहनेवाले वादीने तिन हेतु अरु फलरूप संसारका अनादिपना निषेधकिया । इसप्रकार प्रतिपादन किया । अब तिनका कार्य कारणभाव भी संभवे नहीं ऐसे कहतेहैं] । प्र० । तिनकरके विरुद्ध अंगीकार कैसे कियाहै तहां । उ० । कहते हैं " हेतोरादिः फलं येषामादिर्हेतुः फलस्य च " जिनके हेतु का आदि फल है अरु फलका आदि हेतु है ? अर्थात् जिनके मतविषे धर्म्मादिरूप हेतुका आदि (कारण) फल (देहादिसंघात) है अरु फलका आदि, हेतु है, तिन हेतुसे जन्यहै फलसे हेतुके जन्मको अंगीकार करनेवाले वादियों के मतमें इस प्रकार का विरोध कथन किया होता है कि " तथा जन्म भवेत्तेषां पुत्राज्जन्म पितुर्यथा " ? जैसे पुत्रसे पिताका जन्म तैसे जन्म होवेगा ? अर्थात् पुत्रसे पिताका जन्म होना असम्भव अरु कहना विरुद्ध है तैसे फलसे हेतुका जन्म कहना विरुद्ध होवेगा । यह तात्पर्य है १५ । १४२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्भवे हेतुफलयोरेषितव्यः क्रमस्त्वया । युगपत्स म्भवे यस्मादसम्बन्धो विषाणवत् १६ । १४३ ॥
फलादुत्पद्यमानः सन्न ते हेतुः प्रसिद्ध्यति । अप्रसि द्धः कथं हेतुः फलमुत्पादयिष्यति १७ । १४४ ॥

१६ । १४३ ॥ हे सौम्य ! [प्रतीतिसे हेतु अरु फलकी उत्पत्ति को स्वीकार करने योग्य होनेसे तिसका निषेध करना युक्त नहीं, यह शंकाकरके कहतेहैं] "संभवेहेतुफलयोरेषितव्यः क्रमस्त्वया" । ८ हेतु अरु फलकी उत्पत्तिबिषे क्रम तुझकरके अन्वेषण करने को योग्य है ? अर्थात्, हे वादी, जब उक्त प्रकारका विरोध अंगीकार करनेकेयोग्य नहीं, ऐसे तू मानताहै । तब हेतु अरु फलकी उत्पत्ति बिषे हेतु पूर्वहै फल पश्चात् है इसप्रकारका जोक्रमहै सो तुझकरके अन्वेषण करने योग्य है । अरु । "युगपत्सम्भवे यस्मादसम्बन्धो विषाणवत्" । ८ जाते एककालबिषे सम्भव के हुये शृंगोंवत् असम्बन्धहोवेगा ? अर्थात् जिसकरके एककाल बिषे उत्पत्तिके होने से शृंगोंवत् असम्बन्ध होवेगा । जैसे एक काल बिषे उत्पन्न होनेवाले वाम दक्षिणरूप जो गौके दोनों शृंग तिनका परस्पर कार्य कारण भावकरके असम्बन्ध है, तैसेही एककालबिषे उत्पन्न हुये हेतु अरु फलका कार्य कारण भावसे असम्बन्ध होवेगा; एतदर्थ तिनका क्रम तुझकरके अन्वेषण करनें के योग्य है १६ । १४३ ॥

१७ । १४४ ॥ हे सौम्य ! [अब । "पुण्यो वै पुण्येन कर्म्मणा भवति" । ८ पुण्य कर्म्म करके निश्चय पुण्यरूप होता है ? इत्यादिक श्रुति प्रमाणसे धर्मादिकों बिषे हेतु अरु फल भावकी शंका करके श्रुतिको अघटित अर्थ बिषे प्रमाणहोने के असम्भव से श्रुतिका पूर्वापर भाव (प्रथम पश्चात् पना) अवश्य कहने के योग्य है, इसप्रकार कहते हैं] । प्र० । तब तिनका । हेतु अरु फलका । सम्बन्ध कैसे है, । उ० । कहते हैं, "फलादुत्पद्यमानः सन्न ते हेतुः प्रसिद्ध्यति" । ८ फलसे उत्पन्न होनेवाला हुआ हेतु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदि हेतोः फलात्सिद्धिः फलसिद्धिश्च हेतुतः । क
रत्पूर्व्वनिष्पन्नं यस्य सिद्धिरपेक्षया १८ । १४५ ॥
अशक्तिरपरिज्ञानं क्रमकोपोऽथवा पुनः । एवं हि
सर्व्वथा बुद्धैरजातिः परिदीपिता १९ । १४६ ॥

सिद्ध होगा नहीं ? अर्थात् जन्य अरु स्वरूप से अप्रतीत रूपवाले फलसे उत्पन्न होनेवालाहुआ हेतु शशशृंग आदिक असत् वस्तुवत् सिद्ध न होवेगा । अर्थात् जन्मको न पावेगा । अरु "अप्रसिद्धः कथंहेतुः फलमुत्पादयिष्यति" ? अप्रसिद्धहुआ हेतु कैसे फलको उत्पन्न करेगा ? अर्थात् शशशृंगादिकोंवत् अप्रतीतिरूपवाला अप्रसिद्धहुआ हेतु तेरेमतबिषे कैसे फलको उत्पन्न करेगा क्योंकि परस्परकी अपेक्षाकरके सिद्धिवाले शशशृंगके तुल्य वस्तुओंका कार्य कारणभाव से कहीं भी सम्बन्ध देखा नहीं ॥ यह अभिप्राय है १७ । १४४ ॥

१८ । १४५ ॥ हे सौम्य ! "यदिहेतोः फलात्सिद्धिः फलसिद्धिश्च हेतुतः" ? जब फलसे हेतुकीसिद्धि अरु हेतुसे फलकीसिद्धि है ? अर्थात् असम्बन्धपने रूप दोषसे हेतु अरु फलके परस्पर कार्य कारण भावके निषेधकियेहुये भी जब तुझकरके फलसे हेतुकी सिद्धि अरु हेतुसे फलकीसिद्धि अंगीकार कियाही है, तब "कतरत्पूर्व्वनिष्पन्नं यस्य सिद्धिरपेक्षया" ? पूर्वकी सिद्धिकी अपेक्षासे जिसकी सिद्धिहोती है ऐसा पूर्व उत्पन्नहुआ कौन है ? अर्थात् उक्त प्रकार जब हेतु अरु फलकी परस्परसे सिद्धि अंगीकार कियाहै तब हेतु अरु फलके मध्य पूर्वकी सिद्धिकी अपेक्षासे जिसकी पश्चात् होनहारकी सिद्धि होती है, ऐसा पूर्व उत्पन्नहुआ कौन है ? सो आप कहिये १८ । १४५ ॥

१९ । १४६ ॥ हे सौम्य ! "अशक्तिरपरिज्ञानं क्रमकोपोऽथवापुनः" ? अशक्ति अपरिज्ञान है, अथवा क्रम कोप होवेगा ? अर्थात् जो यह क्रम जाननेको अशक्य है, इसप्रकार मानता है, तब सो यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीजांकुराख्यो दृष्टान्तः सदा साध्यसमो हि सः । नहि साध्यसमो हेतुः सिद्धौ साध्यस्य युज्यते २० । १४७ ॥

अशक्ति (अर्थात् कहनेका असामर्थ्य) अज्ञानहै, अर्थात् तत्त्वका अविवेकरूप मूढताहै । अथवा पुनः जो यह तूने , हेतुसे फलकी सिद्धि होती है अरु फलसे हेतुकी सिद्धि होती है, इसप्रकार अन्योन्यके पश्चात् होने रूप क्रमकहा (अर्थात् हेतुसे पश्चात् फल होताहै अरु फल से पश्चात् हेतुहोता है ऐसाक्रम तूनेकहा) तिसका कोप (अर्थात् अन्यथा भावरूप विपर्यय) होवेगा । यह अभिप्राय है । अरु " एवं हि सर्व्वथाबुद्धैरजातिः परिदीपिता " (ऐसे बुद्धिमानों ने सर्वप्रकारसेही अनुत्पत्तिही प्रकाशित किया है) अर्थात्, इसप्रकार [परस्पर के पक्षके निषेधरूप द्वारसे सत् अरु असत् वस्तुके जन्मके निषेध कियेहुये क्रम अरु अक्रम करके उत्पत्तिके असम्भवसे वादियों करके देखाईहुई अनुत्पत्तिही हम को इष्ट होती है, इसप्रकार अजातवादको समाप्त करते हैं] हेतु फलके कार्य्यकारण भावके असम्भवसे परस्परकी अपेक्षासे दोष के कहनेवाले वादीरूप पण्डितोंने सर्वप्रकारसेही सर्व वस्तु की अनुत्पत्तिही प्रकाशित कियाहै १९ । १४६ ॥

२० । १४७ ॥ हे सौम्य ! अब पूर्वपक्षी शङ्काकरताहै । शङ्का । हे सिद्धान्ती ! हेतु अरु फलका कार्य्य कारण भावहै, इसप्रकार हम ने कहाहै । अरु तैंने 'जैसे पुत्रसे पिताका जन्म होता है, अरु गौके शृङ्गोंवत् असम्बन्ध होवेगा, इत्यादिरूप कहने को इच्छित अर्थसे रहित शब्दमात्र को आश्रयकरके, यहछल कहा है । अरु जिसकरके हमों ने असिद्ध हेतुसे फलकी सिद्धि, वा असिद्धफल से हेतुकी सिद्धि, अंगीकार किया नहीं, किन्तु बीजांकुर न्यायवत् हेतु अरु फलका कार्यकारण भाव अंगीकार कियाहै, तहां हमारे मतबिषे कोई भी दोषनहीं । अब समाधान । कहते हैं " बीजांकुराख्यो दृष्टान्तः सदा साध्यसमो हि सः " (बीज अंकुर नामवाला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो दृष्टान्तहै सो सदा साध्यकरके तुल्यहै, अर्थात् जो बीजांकु
न्यायवाला दृष्टान्तहै सोमुझ मायावादी के मतबिषे साध्यकर
सदा तुल्यही है, क्योंकि वास्तव करके कार्य कारण भावकी प्रतीति
कहीं भी नहीं ताते। यह तात्पर्य है। शङ्का । ननु, बीज अरु अंकु
का जो कार्यकारण भावहै सो प्रत्यक्ष अनादि है, इसप्रकार क
वादी ने कहा तब सिद्धान्ती समाधान कहता है, हे वादी! बी
अरु अंकुर व्यक्तिका कार्य कारणभाव तुझकरके अंगीकार कियाह
किंवा बीज अरु अंकुरके सन्तानका , कार्याकारणभाव अङ्गीका
कियाहै, तहां प्रथमपक्ष । जो बीज अरु अंकुरकी व्यक्तिका काक
कारणभाव सो । बनेनहीं, क्योंकि पूर्व पूर्व के पिछलेवत् आदि
मानपनेका अङ्गीकार है ताते। जैसे, अभी उत्पन्न हुआ बीजआ
दिकवाला पिछला अंकुर औ पिछला बीज, अन्य अंकुर अरु बी
से पूर्वहै, एतदर्थ क्रमकरके उत्पन्न होनेसे आदिवाला है। इ
रीति से एकएक सर्व बीज अरु अंकुर के समूह को आदिवाल
होने से किसी के भी अनादिपनेका । अर्थात् परस्पर कारणपनेक
सम्भव नहीं,। इसप्रकार हेतु अरु फलों के भी अनादिपनेका अ
परस्पर कारणपनेका सम्भव नहीं। अरु जो दूसरा पक्ष कहे
बीज अरु अंकुरकी सन्तति (सन्तान) का अनादिपनाहै, तो
भी बनेनहीं, क्योंकि तिनकी सन्ततिकी एकरूपताका असम्भव
ताते। अरु जिसकरके उन बीज अरु अंकुरके अनादिपनेके वादि
करके, बीज अरु अंकुर से भिन्न बीज अरु अंकुरका सन्त
नामक एक व्यक्ति अङ्गीकार किया नहीं। अतएव हेतु अरु फ
का अनादिपना उन वादियोंकरके कैसे वर्णनकिया है, सो कहो
तैसे हेतु अरु फलके कार्यकारण भावकी कहीं भी प्रतीतिका
सम्भव न होनेसे, अन्यभी जो हमोंने कहाहै सो छलरूपहै नहीं।
अभिप्राय है। अरु लोक में प्रमाणबिषे कुशल पुरुषोंकरके "न
साध्यसमो हेतुःसिद्धौ साध्यस्य युज्यते" "साध्यसे तुल्यहेतुसा
की सिद्धी बिषे जोड़ते नहीं, अर्थात् साध्यवस्तु से तुल्यहेतु का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पूर्व्वापरापरिज्ञानमजातेः परिदीपकम्। जायमानाद्धि वै धर्म्मात्कथं पूर्व्वं न गृह्यते २१। १४८॥
स्वतो वा परतो वाऽपि न किञ्चिद्वस्तु जायते। सदसत्सदसद्वाऽपि न किञ्चिद्वस्तु जायते २२। १४९॥

दृष्टान्त साध्यकी सिद्धिविषे सिद्धिके निमित्त योजना करतेनहीं यहां हेतुशब्दके मुख्यार्थको त्यागके दृष्टान्तरूप गौणअर्थ कहनेको इच्छितहै, क्योंकि सूचकहै ताते। अरु जिसकरके प्रसंगविषे प्राप्तहुआ हेतुहैनहीं दृष्टान्तहै, यातेसोई ग्रहणकियाहै २०।१४७॥

२१। १४८॥ हे सौम्य!। प्रश्न। पण्डितोंने सर्व वस्तुकी अनुत्पत्ति कैसे प्रकाशित कियाहै,। उत्तर। "पूर्वापरापरिज्ञानमजातेः परिदीपकम्" ६ पूर्वापर (कार्य्य कारण) का अपरिज्ञान अनुपत्तिका प्रकाशक है ? अर्थात् जो यह हेतु अरु फलके कार्य अरु कारणभावका अपरिज्ञानहै सोई यह अनुत्पत्तिका प्रकाशक कहिये अवबोधकहै। अरु "जायमानाद्धि वै धर्म्मात्कथं पूर्व्वं न गृह्यते" ६ उत्पन्न होनेवाले प्रसिद्ध धर्मसे पूर्व कैसे ग्रहणकरते नहीं ? अर्थात् जब उत्पन्नहोनेवाला धर्म्म कहिये कार्य्य ग्रहण करतेहैं, तब उत्पन्नहोनेवाले प्रसिद्ध कार्य्यरूप धर्मसे पूर्व (कारण) कैसे ग्रहणकरते नहीं। अरु जिसकरके उत्पन्न होनेवाले कार्यके ग्रहणकरनेवाले पुरुषोंकरके तिसकाजनक अवश्यग्रहण करनेयोग्यहै, क्योंकि जन्यजनकका संबन्ध अभिन्नहै ताते, अतएव सो कार्य कारण का अज्ञान अनुत्पत्ति का प्रकाशक है इत्यर्थः २१। १४८॥

२२। १४९॥ हे सौम्य! इस कथनकरनेके हेतुसे कुछभी वस्तु जन्मता नहीं, इसप्रकार सिद्धहोताहै। अरु "स्वतो वा परतो वाऽपि न किञ्चिद्वस्तु जायते। सदसत्सदसद्वाऽपि न किञ्चिद्वस्तु जायते" ६ स्वतः वा परतःवाउभयसे कुछभी वस्तु उत्पन्नहोता नहीं यातें सत्, असत्, वा सदसत्, कुछभी वस्तु उत्पन्नहोता नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् जिसकरके आपसे वा परसे वा दोनोंसेभी कुछभी व
उपजता नहीं, एतदर्थ सत्, असत्, वा सदसत् दोनों रूप
कुछभीवस्तु उत्पन्नहोता नहीं । (अर्थात् जब स्वतः वा पर
कुछ किसीप्रकारभी उत्पन्नहोतानहीं, तब सत्रूपसे वा अ
त्रूपसे वा सदसत् उभयरूपसे कुछभी उपजता नहीं ॥ इस
यहभावार्थहै किजो उत्पन्नहोनेवाला वस्तुआपसे वा पर (दूसरे
से वा स्व, पर दोनोंसे सत् वा असत् वा सदसत् उभयरूप उप
ताहै, तिसका किसीभी प्रकारसे जन्म संभवे नहीं । जैसे
आपही तिसहीघटसे उपजता नहीं, तैसेप्रथम आपही अनुत्प
होनेसे अपने स्वरूपसे उपजता नहीं जैसे घटसेपट अरु पट
अन्यपट उपजता नहीं, तैसे अन्यसे अन्यभी उपजता नहीं
अरु जैसे घट अरुपट इन दोनों से घट वा पट उपजता नहीं
तैसे दोनोंसेभी कोईवस्तु उपजतानहीं । शंका । ननु, मृत्तिक
घट उपजताहै अरु पितासे पुत्र उत्पन्नहोताहै । तिब कैसेका
हो जो उक्तप्रकार कुछभी उपजता नहीं । समाधान । तहां
तेहैं 'मूढ़ पुरुषोंको' उपजताहै, ऐसाज्ञान अरु शब्दहै, यह
कथन सत्यहै, तथापि सोईशब्द अरु ज्ञान विवेकी पुरुषों क
वे शब्द अरु ज्ञान क्या सत्यहै वा असत्य है, इसप्रकार या
परीक्षाकरते हैं तावत् वो मिथ्या है क्योंकि ताद्विषयक निश्च
नहीं । । इसप्रकार परीक्षाकियेहुये शब्द अरु ज्ञानका बिषय
पुत्रादिकरूप जोवस्तुहै सो शब्दमात्रहीहै " वाचारंभणंविक
नामधेयम्" ८ वाणी से उच्चारणकिया विकार कहनेमात्रही
इसश्रुतिके प्रमाणसे । अतएव शब्द अरु ज्ञानको (अर्थात्
अरु तदाश्रितज्ञानको । असत्यविषयवान्पना माननेके यो
अरु जबसत्है तब उपजता नहीं, क्योंकि सत्वस्तु उत्पत्ति
होतीनहीं ताते, । मृत्पिंडादिवत् । अरु जबअसत्है तोभीज
तानहीं (विद्यमान नहीं) क्योंकि शशशृंगवत् असत्है ताते ।
जबसदसद्रूपहै तोभीजन्मतानहीं, क्योंकि तमप्रकाशवत् पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हेतुर्नजायतेऽनादेः फलञ्चापिस्वभावतः। आदिर्न विद्यते यस्य तस्य ह्यादिर्न विद्यते २३। १५०॥

विरुद्धरूपके एकवस्तुपनेका असंभव है ताते। एतदर्थ कुछभी वस्तु जन्मता नहीं, इति सिद्धम्॥ पुनः जिन बौद्धों के मत बिषे उत्पत्तिरूप क्रियाही उपजतीहै, इसप्रकार क्रियाकारक अरुफल की एकता अरु वस्तुका क्षणिकपना अङ्गीकार किया है, एतदर्थ वेवादी दूरसेही युक्तिकरके रहित हैं, क्योंकि 'यह ऐसे है, इस निश्चयकी स्थितिका अन्यक्षण बिषे अभाव है ताते,अरु अनुभव किये वस्तुकी स्मृतिका अभाव है ताते २२। १४९॥

२३।१५०॥ हे सौम्य! किञ्च, हेतु अरु फलके अनादिपने को अंगीकार करनेवाले तुझ बादी करके बलात्कारसे हेतु अरु फल की अनुत्पत्तिही अंगीकार की होगी। प्रश्न। कैसे अंगीकार की होगी। उत्तर। तहां कहते हैं "हेतुर्नजायतेऽनादेः फलं चापि स्वभावतः। आदिर्नविद्यते यस्य तस्य ह्यादिर्न विद्यते" ¿आदिरहित से हेतु जन्मता नहीं अरु आदि रहित हेतु से फल भी स्वभावसे 'उपजता नहीं'। अरु जिसकी आदि नहीं तिसकी आदि विद्यमाननहीं ?अर्थात् आदि रहित फल से। ¡अर्थात् जो फल 'देहादिक' आदि से है नहीं तिन से ¡। तिनसे हेतु (अदृष्ट) जन्मता नहीं, अरु आदि रहित हेतु से फल भी स्वभावसे ¡अपने आपसे ¡ जन्मता नहीं। अरु जिस करके अनुत्पन्न हुये अनादि फल से ¡अर्थात् जो उत्पन्नही नहीं हुआ ऐसे फल से ¡ हेतुका जन्म, अरु आदि रहित अजन्मा हेतुसे फलभी स्वभावसेही ¡अर्थात् निमित्त बिनाही ¡ उपजता है इस प्रकार तुझ करके अङ्गीकार न किया होगा। ताते हेतु अरु फल के अनादिपने के अङ्गीकार करनेवाले तुझ करके हेतु अरु फलकी अनुत्पत्तिही अङ्गीकार किया है। एतदर्थ लोकबिषे जिसका आदि (कारण) है नहीं तिसकी आदि (उत्पत्ति) है नहीं। अर्थात् कारण वाले वस्तु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रज्ञप्तेःसनिमित्तत्वमन्यथाद्वयनाशतः । सद्भे
स्योपलब्धेश्चपरतन्त्राऽसितामता २४ । १५१ ॥

की ही उत्पत्ति अंगीकार करते हैं, कारणरहित की नहीं । ए
द्वर्थ अनादिरूप इन हेतु अरु फलकी अनुत्पत्तिही सिद्ध हु
इति सिद्धम् २३ । १५० ॥

२४ । १५१ ॥ हे सौम्य! [वस्तुके वास्तव करके जन्मके अ
भवसे एक अजन्मा विज्ञान घनमात्र तत्त्व है इसप्रकार क
अब बाह्य अर्थके बाद को उठावते हैं] उक्तार्थ को ही दृढ़ क
की इच्छा से पुनः आक्षेप करते हैं " प्रज्ञप्तेः सनिमित्तत्वमन्य
द्वयनाशतः " (प्रज्ञप्तिका निमित्त करके सहितपना है अन्य
द्वैतके नाशसे तिसका नाश प्राप्तहोवेगा ; अर्थात् शब्दादिकों
प्रतीति रूप जो ज्ञान सो प्रज्ञप्ति है' तिस प्रज्ञप्तिका विषय
निमित्त (कारण) करके सहितपना (आपसे पृथक् विषयव
पना) है, इसप्रकार हम प्रतिज्ञा करते हैं । ताते शब्दादिकों
प्रतीति रूप प्रज्ञप्ति विषय रहित होवे नहीं, तिसको विषय
निमित्त करके सहितपनाहै ताते । अतएव इस प्रज्ञप्तिको आप
भिन्न वस्तुरूप विषयवान्पना युक्तहै । अन्यथा (अर्थात् तिस
विषय रहितपने के हुये) शब्द स्पर्श नील पीत रक्तादिकों
ज्ञानों की विषयता रूप द्वैतका अभावहै नहीं, क्योंकि सो प्रत्य
है ताते । एतदर्थ ज्ञानों की बिचित्रतारूप द्वैतके दर्शन से अ
वादियों का शास्त्र परतन्त्र है, इस प्रकार अन्यों का जो शा
तिसके परतन्त्र आश्रयरूप ज्ञानसे । भिन्न बाह्यार्थ की अस्ति
(विद्यमानता) माननी (हमको बांछित) है अरु प्रकाशव
स्वरूप प्रज्ञप्तिका नील पीतादि बाह्य विषयोंकी विचित्रता वि
स्वाभाविक भेदसेही बिचित्रपना संभवे नहीं, जैसे स्फटिक
नीलादिक उपाधिरूप आश्रयों के विना विचित्रपना घटे
तैसे, यह अभिप्रायहै । इस [बाह्यार्थबिना अग्निकरके दाहआदि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रज्ञप्तेःसनिमित्तत्वमिष्यतेयुक्तिदर्शनात् । निमित्त स्यानिमित्तत्वमिष्यतेभूतदर्शनात् २५ । १५२ ॥

केकिये दुःखकी प्रतीतिका असंभवहै ताते, बाह्यार्थहै, इस प्रकार करतेहैं।] अन्य हेतुसेभी परतन्त्र आश्रयरूप ज्ञानसे पृथक् बाह्यार्थकी अस्तिता (सद्भाव) है। अरु "सङ्क्लेशस्योपलब्धेश्चपरतन्त्रास्तितामता" क्लेशकी उपलब्धि से परतन्त्रकी अस्तिता मानी है? अर्थात् क्लेश कहिये दुःख तिसकी प्रतीतिसे परतन्त्र की अस्तिता मानी है। जिसकरके अग्नि आदिक निमित्तका किया दुःख प्रतीति होताहै। अरु जब दाहाऽऽदिकों का निमित्त अग्नि आदिक बाह्यवस्तु, ज्ञानसे भिन्न न होय तो दाहादिकरूप दुःख प्रतीत न होना चाहिये, परन्तु सो प्रतीत होताहै, एतदर्थ तिस प्रतीति करके बाह्यार्थ है, इस प्रकार हम मानते हैं। अरु जिस करके विज्ञानमात्र बिषे क्लेशयुक्त नहीं, अरु अन्य स्रक् चन्दनादिकोंके ठिकाने दुःखका अदर्शनहै ताते। अर्थात् अग्निदाहादिकों से क्लेशकी प्रतीतिहै ताते, अरु स्रक् चन्दनादिकों के ठिकाने दुःख का अदर्शनहै तातें। एतदर्थ ज्ञानसे भिन्न बाह्यार्थ के अभावहुये दुःख की प्रतीतिका अभाव है, ताते। ज्ञान से भिन्न बाह्यार्थ संभव है ताते। इत्यभिप्रायः २४। १५१ ॥

२५।१५२॥ हे सौम्य! इसप्रकार [दोनों अर्थापत्ति प्रमाणोंकर के बाह्यार्थके वादके प्राप्तहुये विज्ञानवाद को प्रकटकरतेहैं।] वादी ने पूर्वश्लोक बिषे आक्षेप किया। तिसकी निवृत्त्यर्थ कहते हैं। "प्रज्ञप्तेःसनिमित्तत्वमिष्यतेयुक्तिदर्शनात्" प्रज्ञप्तिका निमित्त करके सहितपना युक्तिके देखने से तुझकरके अङ्गीकार है सो सत्यहै? अर्थात्, हे वादी! उक्तप्रकार द्वैतअरुदुःखकीप्रतीतिरूपयुक्तिके देखने से प्रज्ञप्तिका बिषयरूप निमित्तकरके सहितपना तुझकरके अङ्गीकार किया है यह सत्यहै, परन्तु प्रथम बाह्यार्थरूप वस्तु की प्रज्ञप्तिकी बिषयताके अंगीकारबिषे पूर्वोक्त युक्तिका देखना कारण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है, इस अर्थ विषे तैंने स्थितरहना ॥ प्र० ॥ मैं विचारदृष्टि को आश्रय करके वर्त्ताहौं तिसकरके मेरेको क्या दूषण है सो कहो तहां सिद्धान्ती (उत्तर) कहताहै कि, दूषण कहतेहैं "निमित्तस्य निमित्तत्वमिष्यतेभूतदर्शनात्" (निमित्तका अनिमित्तपना अङ्गीकार करतेहैं परमार्थके देखनेसे) अर्थात् तेरेकरके प्रज्ञप्तिके आश्रय मानेहुये जे घटादिरूप निमित्त तिनका अनिमित्तपना । (अर्थात् विचित्रताका अकारण होनेरूप अनाश्रयपना) हमोंकरके अंगीकार कियाहै, क्योंकि परमार्थको देखाहै ताते । अरु घट जो है सो परमार्थरूप मृत्तिकाके स्वरूपसे देखाहुआ 'जैसे अश्व से भिन्न महिषहै तैसे, (मृत्तिकासे घट) भिन्न नहीं । वा जैसे तन्तुसे भिन्न पट अरु अंशु (अतिसूक्ष्म तन्तु वा तूल) से पृथक् तन्तु नहीं, इस प्रकार उत्तरोत्तर परमार्थरूप वस्तु के देखेहुये शब्द अरु ज्ञान से आरंभकरके (अर्थात् पद पदार्थ अरु पद पदार्थ का ज्ञान इनसे आरंभकरके) सर्वके निरोधहुये प्रज्ञप्तिका निमित्त हमदेखते नहीं यह अर्थहै । अथवा रज्जुविषे सर्पादिकोंवत् परमार्थ के देखने से बाह्यार्थका अनिमित्तपना अंगीकार करते हैं, यह अर्थ है । अरु भ्रान्ति ज्ञानका विषयहोनेसे निमित्तका अनिमित्तपना होता है। अरु जिसकरके सुषुप्तिमान्, समाधिमान्, अरु मुक्त, इन पुरुषों को भ्रान्तिदर्शनके अभावहुये, आपसे भिन्न पदार्थ प्रतीत होते नहीं । अरु जिसकरके अनुत्पत्तिसे (अर्थात् उत्पत्तिके अभावहुये) भी उत्तम पुरुष करके ज्ञातवस्तु विद्वानों करके तिस प्रकार का जानते नहीं [देहाभिमानी को जो बाह्य अर्थकी प्रतीतिका निश्चय यहै (कि यह जो बाह्य प्रतीतिमान् पदार्थ है सो सत्यहै) तिसकरके अद्वैतदर्शीको भी तिसकी प्रतीति प्रतिबन्धरहित होवेगी, । यह शङ्का करके कहते हैं] एतदर्थ भ्रान्तिके अभावहुये बाह्यार्थ का अभाव बनताहै । [बाह्यार्थ के प्रतिपादनार्थ कथन किये जे उभय अर्थापत्ति प्रमाण सो कैसे निषेधकरनेके योग्यहै, इस शङ्का के हुये कहते हैं, इस कथनकरके द्वैतकादर्शन अरु दुःखकी प्रतीतिरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्त न संस्पृशत्यर्थं नार्थाभासंतथैवच । अभूतो हि यतश्चार्थो नार्थाभासस्ततः पृथक् २६ । १५३ ॥

प्रज्ञप्तिके निमित्त सहितपनेविषे कथनकिये कारणका निषेधकिया जानना २५। १५२ ॥

२६।१५३हे सौम्य! जिसकरके [ज्ञानको आश्रय कहिये विषय वा ज्ञेय तिसकरके सहितपनेकी प्रसिद्धिकेहुये (अर्थात् ज्ञान जोहै सो ज्ञेयकरके सहितही है, इस प्रसिद्धिकेहुये?) । वास्तवदृष्टि करके देखेहुये ज्ञेयके अभावसे ज्ञानकाभी अभाव होवेगा,। यह शङ्काकरके कहते हैं] बाह्यनिमित्त नहीं है एतदर्थ है "चित्तंनसंस्पृशत्यर्थनार्थाभासंतथैवच" (चित्त अर्थ को स्पर्श करता नहीं, पुनः तैसेही अर्थ के आभास को; अर्थात् जब बाह्य निमित्त है नहीं, ताते चित्त जो है चैतन्य सो बाह्यके आश्रय अरु विषय रूप अर्थको स्पर्श करता नहीं [चैतन्य को पदार्थ के अर्थ स्पर्श करने के स्वभाव के अभाव हुये भी तिस पदार्थ के अभासार्थ स्पर्श करने का स्वभाव होवेगा,। यह शङ्का करके तब कहतेहैं] अरु "अभूतोहियतश्चार्थोनार्थाभासस्ततःपृथक्" (जाते अर्थ मिथ्या है ताते अर्थाभास भी तिससे भिन्न नहीं; अर्थात् चित्त कहिये जो चैतन्य है सो बाह्यके अर्थ अरु तिसके आभास को स्पर्श करता नहीं, क्योंकि (निराकार) चैतन्य है ताते 'जैसे स्वप्न के पदार्थों को चैतन्य स्पर्श करता नहीं तैसे,। अरु जिस (उक्त हेतु) करके [अब श्लोकके तृतीय पादका व्याख्यान करते हैं। विवाद का विषय जो अर्थ सो सत्‌रूप होता नहीं, क्योंकि अर्थ है ताते, प्रसिद्ध अर्थोवत्। इस अनुमान से ज्ञानका आश्रय है नहीं। इत्यर्थः] जाग्रत् विषे भी बाह्य शब्दादिरूप अर्थ स्वप्न के अर्थवत् मिथ्याही हैं। एतदर्थ [यहां यह अर्थहै कि, जब घटादिक बाह्यार्थ को ग्रहण नहीं करते, तब असत्‌रूप तिस घटादिक विषेही तिन घटादिकों की प्रतीति के होने से ज्ञानका विपर्यास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निमित्तं न सदा चित्तं संस्पृशत्यध्वसुत्रिषु । अनि
मित्तो विपर्यासः कथं तस्य भविष्यति २७ । १५४ ।

कहिये भ्रम होवेगा, क्योंकि तिसकरके रहित बिषे तिसकी बुद्धि
रूप विपर्य्यास तिस प्रकार का है ताते, अरु विपर्य्यास के अंगी-
कार किये कहीं भी अविपर्यास कहिये अभ्रांति कहने के योग्यहै
क्योंकि अन्यथा ख्यातिवादियों करके भ्रान्तिकी अभ्रान्ति पूर्वक
तिसका अंगीकार है ताते] अर्थाभास भी उक्त चित्तसे भिन्न
नहीं, किन्तु चित्त कहिये 'ब्रह्म' चैतन्य, ही घटादिरूप अर्थका
भासता है । जैसे स्वप्नबिषे भासता है तैसे २६ । १५३ ॥

२७।१५४ हेसौम्य ! [ज्ञानकोविषयरूपआश्रयकरकेसहितता-
के अभाव हुये तिसके तिसप्रकार होनेकी प्रतीति भ्रान्ति होवेगी,
अरु भ्रान्ति जो है सो अभ्रान्तिरूप प्रतियोगी वालीहै, इसप्रकार
अन्यथा ख्यातिके मतकी शंका लेके कहते हैं] शंका । ननु, तब
चैतन्यको असत् घटादिकों बिषे घटादिक की आभासतारूप विप-
र्यय (भ्रम) होवेगा, । अरु तैसे हुये कहिंक (किसी भी ठिकाने)
अविपर्यक कहने को योग्यहै । अर्थात् जब चैतन्य को असत् घ
टादिकों बिषे घटादिकों की आभासतारूप भ्रम होवेगा तब तिस
भ्रमका प्रतियोगी जो अभ्रम सो भी किसी न किसी बिषे कहने
को योग्यही है। तहां उत्तर कहते हैं, [भ्रान्ति तो अन्यप्रकारसे
भी होवेगी, इसप्रकार कहते हैं]" निमित्तंनसदाचित्तंसंस्पृशत्य-
ध्वसुत्रिषु " । ' निमित्त तीनमार्गों बिषे भी सदा चित्त (चैतन्य)
को स्पर्श करता नहीं ' अर्थात् निमित्त जो है बिषय सो भूत भ
विष्यत् अरु वर्त्तमानरूप इन तीन मार्गों (कालों) बिषे भी चि
त्ताख्य चैतन्य को स्पर्श करता नहीं, जब कहीं भी स्पर्श करे तब
सो परमार्थ से अविपर्यय है । एतदर्थ तिस चित्तके स्पर्शकी आ
पेक्षा से असत् घटबिषे घटका आभासरूप विपर्य्यास होवेहै
परन्तु सो चित्त (चैतन्य) का अर्थ (बिषय) से कदाचित्भी स्पर्श

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मान्नजायतेचित्तंचित्तदृश्यंनजायते । तस्यपश्यन्तियेजातिंखेवैपश्यन्तितेपदम् २८ । १५५ ॥

नहीं "अनिमित्तो विपर्य्यासःकथंतस्यभविष्यति" ? निमित्तरहित विपर्य्यास तिसको कैसे होवेगा ? अर्थात् जब चैतन्यका अर्थसे स्पर्श किसीप्रकार भी नहीं, ताते निमित्तरहित तिस चित्तको विपर्य्यास कहिये भ्रान्ति कैसे होवेगी, किन्तु किसी प्रकारसे भी विपर्य्यास है नहीं । इत्यभिप्रायः । अरु यहही चित्त (ब्रह्मचैतन्य) का स्वभाव कहिये अविद्याहै कि जो घटादिरूप निमित्तके अविद्यमानहुये तद्वत् (विद्यमानहुयेवत्) भासना एतदर्थ अभ्रान्तिके अभावसे भ्रान्तिकेभी असम्भवहुये । [अर्थात् जो जिसका सापेक्षकहै सो तिसके अभावसे अभाव होताहै । ज्ञानकी असत् घटादिकों बिषे घटादिकोंकी आभासरूपता निर्वाह करते हैं २७।१५४॥

२८ । १५५ ॥ हे सौम्य ! [इसप्रकार बाह्यार्थ वादी के पक्षको विज्ञानवादी के मतद्वारा निषेधकरके अब विज्ञानवादका भी निषेध करते हैं] "प्रज्ञसेः सानिमित्तत्वं" ? प्रज्ञप्तिका निमित्त सहितपनाहै ? इससे आदिलेके यहां पर्यन्त विज्ञानवादी जो बौद्ध तिसका बाह्यार्थके वादीके पक्षके निषेध परायण वचनहैं, सो आचार्यने अनुमोदन किया । अब तिसही वचनको हेतुकरके तिस विज्ञानवादीके पक्षके निषेधार्थ यह कहते "तस्मान्न जायतेचित्तं चित्तदृश्यं न जायते" ? ताते चित्त जन्मता नहीं । जैसे । चित्तका दृश्य जन्मता नहीं ? अर्थात्, जिसकरके विज्ञानवादीने असत्ही जो घटादिक तिसबिषे चित्त (चैतन्य) को घटादिकों की आभासरूपता अङ्गीकार कियाहै सो हमोंने भी परमार्थ दृष्टिसे अनुमोदन किया । अतएव तिस चित्तकी भी जन्मके अविद्यमान हुये ही जानने में आवनहार वस्तुकी आभासरूपता होनेको योग्यहै एतदर्थ चित्त कहिये चैतन्य जन्मता नहीं, जैसे चित्तका दृश्य जन्मता नहीं तैसे । एतदर्थ तिसही चित्तकरके देखने को अशक्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजातंजायतेयस्मादजातिः प्रकृतिस्ततः । प्रकृतेर
न्यथाभावोनकथञ्चिद्भविष्यति २९ । १५६ ॥

चित्तस्वरूपके धर्म्म, तिसकारणसे , क्षणिकता दुःखरूपता अ
अनात्मरूपता, इत्यादिकों को देखतेहुये " तस्य पश्यन्ति ये जा
खेवैपश्यन्ति ते पदम् " (जो तिसकी उत्पत्तिको देखते हैं सो
आकाशविषे पादोंको प्रसिद्ध देखते हैं ; अर्थात् जो विज्ञानवादी
तिस चित्त (चैतन्य) की उत्पत्ति को देखते हैं सो आकाश वि
(अनहुये) पक्षि आदिकों के पादचिह्नों को प्रसिद्ध देखते हैं
एतदर्थ यह विज्ञानवादी अन्य द्वैतवादियों से भी अत्यन्त विचा
शून्यहै । इत्यर्थः । अरु जे शून्यवादी हैं सो भी सर्वकी शून्यत
को देखते हुयेही अपने सिद्धान्तको भी शून्यताकी प्रतिज्ञा करते
हैं, सो आकाशको मूठी बिषे ग्रहण करने की इच्छा करते हैं
अतएव सो शून्यवादी विज्ञानवादी की अपेक्षा तिससे भी अधि
कतर विचार शून्यही है २८ । १५५ ॥

२९ । १५६ ॥ हे सौम्य ! " अजमेकंब्रह्मेति " ८ अजन्मा एक
ब्रह्महै ? इसप्रकार जो पूर्व प्रतिज्ञा कियाहै, तिसके कहेहुये हे
तुओं से जो जन्मका अनिरूपण तिसकरके सो अजन्मा ब्रह्म
सिद्ध हुआ । तिस सिद्धहुये अर्थके फलकी समाप्ति के अर्थ यह
श्लोक है । [यहां यह अर्थ है कि, जब चैतन्यरूप स्फूर्ति अ
जन्मा इष्टहै, तब सो ब्रह्मही है, क्योंकि सो एक कूटस्थ स्व
भाव वाला है ताते (अर्थात् कूट नामे है लोहकार वा सुवर्णका
की ऐरन का कि जिसके आश्रय वो सर्व कार्यों को करते हैं अ
वो जहां जैसा है तहां तैसाही निर्विकार है, तद्वत् निरुपा
निर्विकार एकरस चैतन्यको भी " कूटवत्तिष्ठतीति कूटस्थः
इस व्युत्पत्त्यर्थ से उसको कूटस्थ कहते हैं (सो पुनः वास्तव
अजन्माही है, तथापि मायासे जन्मवान् होता भासे है, इसप्रका
जब कल्पना करते हैं, तब तिस कूटस्थ को अजन्मा होनेकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनादेरन्तवत्त्वंचसंसारस्यनसेत्सति । अनन्तताचा दिमतोमोक्षस्यनभविष्यति ३०।१५७॥

तिसकी अनुत्पत्तिही (अजन्मापनाही (प्रकृति कहिये स्वभाव होताहै] "(अजातंजायते यस्मादजातिः प्रकृतिस्ततः" (जिसकरके अजन्मा जन्मता है, तिसकरके अनुत्पत्तिही प्रकृति है; अर्थात् अजन्माही जो चैतन्य ब्रह्म है सो जन्मता है, इसप्रकार वादियों करके कल्पनाकिया है। अरु जिसकरके सो चैतन्य ब्रह्म कूटस्थ, अजन्मा जन्मता है, एतदर्थ तिसकी अनुत्पत्ति प्रकृति कहिये स्वभावहै। ताते "(प्रकृतेरन्यथाभावो नकथञ्चिद्भविष्यति" प्रकृतिका अन्यथाभाव किसी प्रकारसेभी होतानहीं; अर्थात् जाते चैतन्य ब्रह्मकी अनुत्पत्तिही स्वभाव , प्रकृति , है ताते सो अनुत्पन्नतारूप प्रकृतिका अन्यथाभाव कहिये उत्पत्ति , जन्म , किसी प्रकारसे भी होता नहीं॥ इति सिद्धम्॥ २९।१५६॥

३०।१५७॥ हेसौम्य! आत्माके विषे संसार अरु मोक्ष, इनके परमार्थसे सद्भावके माननेवाले वादियोंको यह दूसरादूषण कहतेहैं। पूर्वथानहीं, इस अवच्छेदसे रहित अनादि संसारकी अन्तवानता कहिये समाप्ति युक्तिसे सिद्ध न होगी। अरु जिस करके लोकविषे अनादिहुआ कोईभी पदार्थ अन्तवान् देखानहीं, एतदर्थ [यहां यह अनुमानहै कि विवादका विषय जोसंसार सोअन्तवान् हैनहीं क्योंकि आत्मावत् अनादि भावरूपहै ताते] यह अर्थ घटितहै॥ अरु जो ऐसाकहै कि बीज अरु अंकुरका हेतु अरु फल भावसे जो सम्बन्धहै, तिसके सन्तानके अनादि भावरूप हुयेभी तिसका अन्त देखते हैं ताते, संसारकी अनन्तताके साधने विषे "अनैकान्तिकतेति" (अनादिहोनेसे)। यह जो हेतु कहा तिसको व्यभिचारवानता,है। सो कथन बने नहीं, क्योंकि बीज अरु अंकुर के सम्बन्ध के संतानरूप वस्तुको एकरूपताके अभावकर के पूर्व इसप्रकरणके २० वें श्लोकसे निषेधकियाहै। अरु "(अनन्तताचा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आदावन्तेचयन्नास्तिवर्त्तमानेऽपितत्तथा । वितथैः
सदृशाःसन्तोऽवितथाइवलक्षिताः ३१ । १५८ ॥

दिमतो मोक्षस्यनभविष्यति" (आदिवाले मोक्षकी भी अन्तता
न होगी; अर्थात् तैसे ज्ञानकी प्राप्तिकालबिषे उत्पत्तिरूपआदिवा
मोक्षकी अनन्तताभी न होगी, क्योंकि आदिवाले घटादिकों वि
अनन्तताको देखते नहीं । अरु जोकहे कि घटादिक नाशवान्
क्योंकि अवस्तुरूप हैं ताते, इसप्रकार मानेहुये दोष नहीं, ।
तैसाहोनेसे परमार्थसे मोक्षके सद्भावके प्रतिज्ञाकी हानिहोवेगी
अरु मोक्षको शशशृंगवत् असत् होतेही तिसके आदिवान्पनेक
(ज्ञानसे उत्पत्तिका) अभाव होवेगा ३० । १५७ ॥

३१।१५८॥हेसौम्य! (वादी कहताहै) तब मोक्षको आदिअन्
वान्पना होहु, । तहां (सिद्धान्ती) कहताहै, "आदावन्तेचयन्नास्ति
वर्त्तमानेऽपितत्तथा, वितथैःसदृशाःसन्तो ऽवितथाइवलक्षिताः
(जो आदि अरु अन्तबिषे नहीं है सो वर्त्तमानबिषे भी नहीं, जैसे
मिथ्यावस्तुके सदृशहुयेभी सत्यवत् जानते हैं; अर्थात् मृगजल
दिक वस्तुआदि अरु अन्तबिषे हैनहीं सोअपने वर्त्तमानसमयमें
तैसेही (आदि अन्तवत्ही) हैनहीं । (अथवा जोवस्तु अपने अभा
हुये है नहीं, सोअपनी उत्पत्तिसे पूर्वभी हैनहीं अरु जो अपनेआदि
अन्तमें नहीं सो अपने वर्त्तमान कालमेंभी हैनहीं "अव्यक्तादीनि
भूतानि" इत्यादि गीतोक्तिप्रमाणसे) जैसे यह दृष्टान्तहै तैसेमोक्ष
दिक पदार्थभी (सम्यक् ज्ञानकरके जन्य होनेसे) मिथ्यावस्तु
तुल्य है, तथापि उसको मूढ़ पुरुष सत्यवत् जानते हैं । (अथ
सत् शुद्ध स्वरूप आत्माबिषे जो भ्रान्तिमात्र बंधहै सो अविवेकी
को सत्यवत् भासताहै, तैसेही भ्रान्तिरूप बन्धका प्रतिपक्षी(अपे
पेक्षिक) जो मोक्ष सोभी भ्रान्तिरूप असत् है तथापि सो
अविवेकी पुरुषोंको सत्यवत् भासताहै । ३१ । १५८ ॥

३२।१५९॥हेसौम्य! (शंका) ननु, मृगजलादिकोंसे स्नानपान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सप्रयोजनतातेषांस्वप्नेविप्रतिपद्यते । तस्मादाद्यन्त वत्त्वेनमिथैवखलुतेस्मृताः ३२ । १५९ ॥

दिरूप प्रयोजनकी अप्रतीति (असिद्धि) से सो मिथ्याहै, परन्तु मोक्ष अरु स्वर्गादिकों के सुखादिकों की प्राप्तिरूप प्रयोजन की प्रतीतिहै, ताते मोक्षादिकोंका मिथ्यापना नहीं, । यह शंकाकरके समाधान, कहते हैं"सप्रयोजनतातेषां स्वप्नेविप्रतिपद्यते" तिनकी सप्रयोजन सहितता स्वप्नबिषे विपर्य्ययको पावती है, अर्थात् तिन मोक्षादिकोंकी सप्रयोजनता स्वप्नबिषे विपर्य्ययको प्राप्तहोती है। अरु जैसे स्वप्नबिषे देखेहुये पदार्थोंकी विपरीतता(असत्यता) जाग्रत् बिषे होती है । (अर्थात् स्वप्नमें यह स्वप्नहै अरु मिथ्याहै ऐसी प्रतीत होतीनहीं अरु जब जाग्रत्को प्राप्तहोताहै तब जाग्रत्से स्वप्नकी विपरीतता प्रतीतहोती है ।) तैसे जाग्रत्बिषे देखेहुवे पदार्थोंकी विपरीतता स्वप्नबिषे होतीहै । (अर्थात् जाग्रत्से विपरीत स्वप्न है अरु स्वप्नसे विपरीत जाग्रत् है इस कहने से स्वप्न बिषे जाग्रत् नहीं अरु जाग्रत् बिषे स्वप्न नहीं, अतएव ये दोनों परस्पर विपरीत व्यभिचारी होनेसे मिथ्याहैं) । यह अर्थहै । अरु"तस्मादाद्यन्तवत्त्वेन मिथैवखलुतेस्मृताः" (तस्मात् आदि अन्तवान् होनेकरके तिनको निश्चयकरके मिथ्याही जानाहै, अर्थात् तिस (जाग्रत् अरु स्वप्नके परस्पर विपरीत व्यभिचारीपने के दृष्टान्त) करके आदि अरु अन्तवान् होनेसे,विवेकी पुरुषों ने निश्चय करके मोक्षादि सर्व मिथ्याही जानेहैं। (अर्थात् जाग्रत् अरु स्वप्नवत्, बंध अरु मोक्ष यहभी परस्पर विपरीत व्यभिचारी, अरुसापेक्षिक होनेसे मिथ्याहैं, अरु जैसे जाग्रत् स्वप्नका परस्पर व्यभिचारहै,तैसे उनका एकसाक्षी आत्मासे भी व्यभिचारहै,तैसेहीइन बन्ध अरु मोक्षका परस्पर, अरु अव्यभिचारी निर्पेक्ष सत्य एक रूप आत्मासे, व्यभिचारहै, ताते ज्ञानवानोंने इन बन्ध अरु मोक्ष दोनोंको निश्चयसे मिथ्याकरकेही जाना है ।) । अरु यद्यपि यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्व्वेधर्मामृषास्वप्नेकायस्यान्तर्निदर्शनात् । संघ
ऽस्मिन्प्रदेशेवैभूतानांदर्शनंकुतः ३३ । १६० ॥

दोनोंश्लोक द्वितीय प्रकरणमें व्याख्या किये हैं, तथापि यहांक
अरु मोक्षके अभावके प्रसंगसे पुनः पठनकिये हैं, ताते यहां पु
रुक्तिदोष विचारणीय नहीं ३२ । १५६ ॥

३३।१६० हे सौम्य ! "निमित्तस्यानिमित्तत्वमिष्यतेभूतत
नात्" परमार्थके देखनेसे निमित्तका अनिमित्तपना हमों का
अंगीकार कियाहै, यह २५ वें श्लोकबिषे कथनकिया जो अर्थ
अब इन श्लोकोंसे विस्तारित करते हैं। [जिस हेतुकरके स्वप्न
मिथ्यापना इष्टहै तिस हेतुको जाग्रत् बिषेभी तुल्यहोनेसे जाग्र
काभी मिथ्यापना इष्टकरके अजन्मा (जन्मादि विकार रहित
ज्ञानमात्र तत्त्वही अंगीकार करनेयोग्यहै, इस कहनेके अभिप्र
से कहतेहैं] "सर्वेधर्म्मामृषास्वप्ने कायस्यान्तर्निदर्शनात्" स्व
बिषे सर्वधर्म्म मिथ्याहै शरीरान्तर होनेसे; अर्थात् जब शरीरान्
रहोनेसे स्वप्नके सर्व पदार्थ असत्य हैं, तब विराट् के शरीरान्
सर्व जगत्के देखनेसे तिसका मिथ्यापना निवारणकरनेको क
नहीं। (अर्थात् बृहदारण्यक उपनिषद् बिषे, शरीरके अन्तर
खड़े केशके सहस्रवें भाग प्रमाण हितानाम्नि नाड़ियांहैं तिन
एकनाड़ी के अन्तर स्वप्नजगत् भासता है, परन्तु स्वप्नके प
सागरादि सहित जगत् के होने प्रमाण देशकाल वस्तुका
संकोच अभाव होनेसे, अरु तिस नाड़ी के अन्तर भी महा
आत्माकी पूर्णता से, एकठिकाने दोवस्तु रहे नहीं इस न्या
उस नाड़ीके अन्तरस्थानादिकों के अभावसे वहां भासमान
स्वप्नजगत् सो भ्रान्तिमात्र होनेसे असत्है। तैसेही इस
जगत्को विराट्के शरीरान्तर होनेसे अरु तहांभी इस व्यष्टि
रवत् देशकालादिकोंके संकोचसे अरु चैतन्य आत्माकी पूर्ण
तिसे यहदृश्यमान जो जाग्रत् जगत् तिसकोभी भ्रान्तिरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नयुक्तंदर्शनंगत्वाकालस्यानियमाद्गतौ । प्रतिबुद्ध-
श्चवैसर्वस्तस्मिन्देशेनविद्यते ३४। १६१॥

से तिसका मिथ्यापना निवारण करनेको शक्य नहीं। अरु जो ऐसाकहो कि यह समस्त जाग्रत् जगत् विराट्का वपुहै विराट् के शरीरान्तर स्वप्नवत् नहीं, ताते असत्भी नहीं,। तो श्रवणकरो हे सौम्य! आकाशसे भी महासूक्ष्म आत्मतत्त्व घनशिलावत् पूर्णतासे व्याप्त है, उससे खालीस्थान जगत्के रहनेको कोई नहीं, अरु एकठिकाने दोवस्तु रहेनहीं इसन्याय प्रमाण देखने से उस परिपूर्ण अखंड चैतन्यविषे उससे रीते स्थानके अभावसे आकाशादि सर्व जगत् उस अधिष्ठान तत्त्वविषे रज्जुमें सर्पवत् अध्यस्त होने से भ्रान्तिरूप असत्यही निश्चयकरने के योग्यहै। यह अर्थ है, किंवा, जब योग्य देशके अभावसे स्वप्नका मिथ्यापना दृष्ट है, तब प्रत्यगात्मा से अभिन्न अखंड एक रस अवकाश रहित इस ब्रह्मरूप देशविषे प्रसिद्ध विद्यमान वस्तु का दर्शन कहांसे होगा, किन्तु ब्रह्मको आपसे इतर अवकाश रहित होनेसे किसी प्रकारसे भी उसविषे अन्यका दर्शन बनेनहीं,। अरु जिस करके स्थान बिना जगत्का दर्शन होता है, तातेस्थान बिनाके स्वप्नवत् जाग्रत् जगत् भी मिथ्या है। यह इसका अर्थ है ३३। १६०॥ ३४। १६१॥ हे सौम्य! अब उक्तार्थको ही वर्णन करते हैं "नयुक्तंदर्शनंगत्वा कालस्यानियमाद्गतौ" ६ गति बिषे काल के अनियमसे जायके दर्शनयुक्तनहीं? अर्थात् जैसे स्वप्नविषे देशान्तर को जाने में कालके अनियमसे देशान्तरको जायके देखना युक्त नहीं। अर्थात् स्वप्नमें जो अनेक योजनोंके अन्तरवाले देशान्तर वा द्वीपान्तरको अरु तहांके पदार्थोंको पुरु देखताहै सो शरीरसे बाह्य उन देशान्तर वा द्वीपान्तरमें जायके देखता नहीं क्योंकि जाग्रत्को त्यागके स्वप्नको प्राप्त होने के मध्य इतना दीर्घ काल नहीं जो उन देशान्तरके प्राप्त होने में चाहिये, किन्तु शनैःशनैः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाग्रत्की निवृत्ति अरु स्वप्नकी प्रवृत्ति प्रायः समकालही होती है, अरु तैसेही स्वप्नकी निवृत्तिके समकालही जाग्रत्की प्राप्ति होती है ताते जाग्रत्से स्वप्नमें जाने अरु स्वप्नसे जाग्रत्में आवने के मध्य इतना दीर्घ काल नहीं जो स्वप्नमें देहसे बाह्य देशान्तर को जाय अरु आवे । तैसे जाग्रत् बिषे भी मरणोत्तर अर्चिरादि मार्गसे जायके ब्रह्मका दर्शन युक्त नहीं, क्योंकि ब्रह्म जो है सो काल, अरु देश, के अवच्छेदसे रहितहै । अर्थात् यहां जो स्वप्न दृष्टान्तसे, जाग्रत्बिषे मरणोत्तर अर्चिरादि मार्ग से जायके ब्रह्म के दर्शन युक्त नहीं ऐसा कहाहै सो अस्तु परन्तु अर्चिरादि उत्तरायण मार्ग के साधनेवालेको, ब्रह्मात्माके अभेद ज्ञानीवत् शरीर से उत्क्रमण (निकसे) बिना यहांहीं "। ब्रह्मैवसन्ब्रह्माप्येति" निर्विशेष ब्रह्म भावकी प्राप्तिवत्, ब्रह्म प्राप्ति नहीं, किन्तु उसको अर्चिरादि क्रमसे ब्रह्मलोक प्राप्तिहै, ताते उसका मरणोत्तर वा गमन युक्तहै "यचेमेऽरण्ये श्रद्धातपइत्युपासते तेऽर्चिषमभिसम्भवत्यर्च्चिषोऽहरह्न आपूर्यमाण यक्ष्मापूर्य्यमाणपक्षाद्यान् षडुङ्ङेतिमासाꣳस्तान् । मासेभ्यःसंवत्सरꣳ संवत्सरादादित्यमादित्याच्चन्द्रमसं चन्द्रमसोविद्युतं तत्पुरुषोमानवःसएनां ब्रह्म गमयत्येषदेवयानःपन्था इति" "तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेतीति" इत्यादि प्रमाण से अर्चिरादिकों के उपासकको साक्षात् ब्रह्म प्राप्ति न होयके उसको सुषुम्णानाड़ीके मार्ग देहसे उत्क्रमण देवयान मार्गकी रीतिसे ब्रह्मलोक प्राप्ति अरु ब्रह्माके साथ सापेक्षिक मोक्ष है, ॥ किंवा ॥ "। प्रतिबुद्धश्चवैसर्व्वस्तस्मिन्नेव नविद्यते" । (सर्वजन प्रबोधको पाया हुआ तिस देशबिषे विद्यमान होता नहीं) अर्थात् जैसे सर्वजन जिस देशबिषे स्थित सोयेहुये स्वप्नोंको देखते हैं सो पुनः प्रबोध (जाग्रत्) को के तिस देशबिषे कि जिन देशान्तर वा द्वीपान्तरोंको स्वप्न देखताहै, स्थित होतानहीं । इसप्रकार होने से स्वप्नका मिथ्या नाही बांछितहै । तैसे जाग्रत्बिषे भी जिस देहरूप देशबिषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मित्राद्यैःसह सम्मन्त्र्य सम्बुद्धो न प्रपद्यते। गृहीत ग्रापि यत्किञ्चित् प्रतिबुद्धो न पश्यति ३५। १६२॥

हुआ पुरुष संसारको अनुभव करताहै, पुनः ब्रह्मभावको पाया हुआ तिस देहरूप देशाबिषे स्थित नहीं है, क्योंकि परिपूर्ण ब्रह्मरूप होयके स्थित हुआहै। एतदर्थ जाग्रत्का भी मिथ्यापना अंगीकार करने योग्यहै॥ इस श्लोक का तात्पर्य्यरूप अर्थ यहहै कि जाग्रत्बिषे गमनागमनके काल जो नियमितहैं अरु जो देश प्रमाणसे हैं, तिनके नियमसे स्वप्नबिषे देशान्तरको गमन होवे नहीं, किन्तु देहके भीतर देशान्तरादि प्रपंच देखते हैं, तैसे जाग्रत्बिषे भी घटित हैं, याते तिन (जाग्रत् अरु स्वप्न) दोनों को तुल्यहोने से, उन दोनोंका मिथ्यापनाभी तुल्यहीहै ३४। १६१॥

३५। १६२॥ हे सौम्य! [जैसे स्वप्नबिषे विसंवादसे, अर्थात् निष्फल प्रवृत्तिके जनक भ्रमरूपतासे, अप्रमाणपनों इच्छितहै, तैसे ही जाग्रत्बिषेभी ब्रह्मवादियोंके साथ मिल विचारकरके अविद्या निद्रासे सम्यक्प्रकार प्रबोधको पाया जो पुरुष, सोपुरुष, परम श्रेय, हमोंकरके साधनेयोग्यहै, (वा नहीं) इसप्रकार विचार किये मोक्षके साध्यभावको जानता नहीं (अर्थात् ब्रह्मवेत्ताओंका सत्संगी सम्यक् विचारवान् आत्मानुभावि पुरुष, मोक्ष हमों करके साधनेयोग्यहै इस भावको जानता नहीं) क्योंकि, उसको सत्संगके प्रभाव से आत्माकी एकता के अनुभवहुये सर्वकी नित्य मुक्तताका निश्चयहै ताते। एतदर्थ मुमुक्षुपना अरु श्रवणादिसाधनोंकी कर्त्तव्यता भ्रान्तिसेही है, इसप्रकार कहते हैं]"(मित्राद्यैःसह सम्मन्त्र्य सम्बुद्धो न प्रपद्यते, गृहीतश्चापि यत्किञ्चित् प्रतिबुद्धो न पश्यति" (मित्रादिकोंकेसाथ गुप्तभाषणकरके प्रबोधको पाया हुआ पावतानहीं, अरु ग्रहणकिये जिस किसीकोभी देखता नहीं; अर्थात् स्वप्नबिषे मित्रादिकोंके साथ गुप्त भाषण करके प्रबोधको पायाहुआ पावता नहीं। अरु [किंवा स्वप्नवत् अनुभवकिये उप-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्ने चावस्तुकः कायः पृथगन्यस्य दर्शनात् । यथा कायस्तथा सर्वं चित्तदृश्यमवस्तुकम् ३६ । १६३ ॥

देशादिकों को विद्वान् देखता नहीं, क्योंकि तिस विद्वान् कर साध्य फलका अभावहै, उससे श्रेष्ठ अरु अन्य कुछभी न होनेसे इसप्रकार कहते हैं] ग्रहणकिये जिसकिसको । अर्थात् स्वप्नादि ग्रहणकिया जो कुछ। सुवर्णादिपदार्थ तिनकोभी देखता (पावता नहीं, अरु गयाहुआ देशान्तरके ताईं जातानहीं । अर्थात् स्व बिषे जिन देशान्तरको जाता है, तिन देशान्तरको जाग्रत् हु जातानहीं ३५ । १६२ ॥

३६ । १६३ ॥ हे सौम्य ! [किंवा स्वप्नावस्था बिषे जिस शरी करके नदी अरण्यादिकोंबिषे विचरता है, सो मिथ्या है, क्यों तिस स्वप्नगत देहसे भिन्न निश्चल जाग्रत्गत शरीर को देखत तैसे जाग्रत् बिषे भी जिस संन्यासी आदिक शरीरसे लोकोंक पूजने योग्य वा द्वेषकरने योग्य देखते हैं, तिसको मिथ्या कह हैं, क्योंकि तिस शरीरसे पृथक् ब्रह्मनामवाला कूटस्थरूप शरी का यथार्थ अनुभवहै ताते, इसप्रकार कहते हैं] "स्वप्ने चाव कः कायः पृथगन्यस्य दर्शनात् " (स्वप्नबिषे जो शरीर है अवस्तु रूप है, अन्य से पृथक् देखने से ; अर्थात् स्वप्नबिषे अ ण्यादिकों में भ्रमताहुआ जो शरीर देखते हैं सो अवस्तुरूप क्योंकि तिस स्वप्न के शरीर से पृथक् जाग्रत् का शरीर देखत ताते "यथा कायस्तथा सर्व्वं चित्तदृश्यमवस्तुकम्" (जैसे श तैसे चित्त का दृश्य सर्व अवस्तुरूप है ; अर्थात् जैसे स्वप्न दृश्य शरीर असत् है तैसे जाग्रत् बिषे भी सर्व चित्तका दृश्य स्तुरूपही है, क्योंकि चित्तका दृश्य (कल्पित है ताते । अरु के तुल्य होने से जाग्रत् भी असत्यही है, ऐसा इस प्रकरण अर्थ है ३६ । १६३ ॥

३७ । १६४ ॥ हे सौम्य ! [जैसे जाग्रत् को अनुभव करते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्रहणाज्जागरितवत्तद्धेतुः स्वप्न इष्यते। तद्धेतुत्वात्तु तस्यैव सज्जागरितमिष्यते ३७। १६४॥

तैसे स्वप्न को भी अनुभव करते हैं। अरु स्वप्न को जाग्रत्का कार्य्य होनेसे जो स्वप्नका द्रष्टा है तिसहीका जाग्रत् (स्वप्नरूप कार्य हुआ विद्यमान है। अरु स्वप्न असत् है। एतदर्थ स्वप्नवत् जाग्रत् का मिथ्यापनाही है। इस प्रकार कहते हैं] इस कहने के हेतु से भी जाग्रत् की वस्तुका असत्पना है। "ग्रहणाज्जागरित वत्त द्धेतुः स्वप्न इष्यते" ६ जाग्रत्वत् ग्रहणसे तिस हेतुवाला स्वप्न अंगीकार करते हैं; अर्थात् जाग्रत्वत् ग्राह्य ग्राहक रूपसे स्वप्नके ग्रहणसे तिस जाग्रत्रूप हेतुवाला (जाग्रत् का कार्य) स्वप्न अंगीकार करते हैं, [किंवा, जाग्रत्का अनेक पुरुषों को साधारण होने रूप जो विद्यमानपनाहै सो वास्तवसे है नहीं, क्योंकि स्वप्न का कारण है ताते, किन्तु तैसे अनेक को साधारण होनेवत् भासमानपना है, इसप्रकार कहते हैं] तिस हेतुवाला होने से (जाग्रत्का कार्य होनेसे) तिसही स्वप्नके द्रष्टाको जाग्रत् सत्य अंगीकार करते हैं, अन्योंका नहीं 'जैसे स्वप्न है,। [प्रमाता के होते बाध्य होनेरूप स्वप्नका मिथ्यापना है, अरु जाग्रत् को पुनः तिस बाध्यहोने की अप्रतीति से परमार्थ से सत्पना है, अरु कार्य को मिथ्यापने के हुये कारणको भी मिथ्यापना है, इस बिषे प्रमाणके अभावसे सर्वको साधारण अरु विद्यमान जो जाग्रत् सो मिथ्याहोने के योग्य नहीं। यह शंकाकरके कहते हैं] यह अभिप्रायहै। जैसे स्वप्नजो है सो स्वप्नके द्रष्टाकोही सत्य है (अर्थात् साधारण विद्यमान वस्तुवत् भासता है, तैसे तिस जाग्रत् रूप कारणवाला होनेसे तिस स्वप्नका स्वप्नके द्रष्टाकोही साधारण विद्यमान वस्तुवत् भासताहै, परन्तु साधारण विद्यमान जो वस्तु है सो स्वप्नवत् है नहीं। यह इसका अभिप्रायहै ३७। १६४॥

३८। १६५॥ हे सौम्य! [स्वप्न अरु जाग्रत् के कार्य्य कारण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्पादस्याप्रसिद्धत्वादजंसर्व्वमुदाहृतम् । नचभू
दभूतस्य संभवोस्ति कथञ्चन ३८ । १६५ ॥

भावके हुये भी दोनोंका मिथ्यापना तुल्य नहीं 'क्योंकि सो प
स्पर अत्यन्त विलक्षणहै । यह शंकाकरके कहते हैं] शंका। न
जाग्रत्के पदार्थको स्वप्नकी कारणताके हुये तिस । जाग्रत्के
दार्थ । का स्वप्नवत् अवस्तुपना न होवेगा, क्योंकि जिसका
स्वप्न अत्यन्त अस्थिर है अरु जाग्रत्को स्थिर देखते हैं, अतए
तिनकी परस्पर विलक्षणता है ताते । तहां । समाधान । क
हैं । हे वादी ! तिसप्रकारका अनुभव अविवेकी पुरुषोंको होता
यह तेरा कथन सत्य है, परन्तु विवेकी पुरुषोंको तो किसी
वस्तुकी उत्पत्ति प्रसिद्ध है नहीं " उत्पादस्याप्रसिद्धत्वादजं स
मुदाहृतम् " [उत्पत्तिको अप्रसिद्धहोने से सर्व अजन्मा कहा
अर्थात् विवेकी पुरुषोंको किसी भी पदार्थकी उत्पत्ति प्रसिद्ध न
एतदर्थ उत्पत्तिको अप्रसिद्धहोनेसे अज आत्माही सर्व है "स
ह्याभ्यन्तरोह्यजः" ' बाहर भीतर सहित है अरु अजन्मा है' इ
श्रुतिके प्रमाणसे । इसप्रकार वेदान्तों बिषे सर्व अजन्माही क
है । अरु सत्रूप जाग्रत्से असत्रूप स्वप्न उपजाता है, इस प्रक
तू मानताहै, तथापि सो । जाग्रत् । असत्ही है । क्योंकि " न
भूतादभूतस्य संभवोस्ति कथञ्चन " विद्यमान से अविद्यमान
किसीप्रकार से भी संभव नहीं] अर्थात् विद्यमान पदार्थ से
विद्यमान वस्तुका किसीप्रकार से भी संभवहोना संभवे नहीं
अरु लोक बिषे असत्यरूप शशशृंगादिकों का किसीप्रकार से
संभव होतानहीं अरु देखा भी नहीं ३८ । १६५ ॥

३९ । १६६ ॥ हे सौम्य ! । शंका । ननु, हे सिद्धान्ति ! तूनेही
३७ वें श्लोकबिषे स्वप्न जाग्रत्का कार्य्य है इसप्रकार कहाहै
उत्पत्ति अप्रसिद्ध है ऐसा कैसे कहता है, । तहां समाधान क
हैं, हे वादी ! जिसप्रकार कार्य कारणभाव हमोंकरके कहने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असज्जागरिते दृष्ट्वा स्वप्ने पश्यति तन्मयः। असत् स्वप्नेऽपि दृष्ट्वा च प्रतिबुद्धो न पश्यति ३९। १६६॥

नास्त्यसद्धेतुकमसत्सदसद्धेतुकन्तथा। सच्चसद्धेतुकं नास्तिसद्धेतुकमसत्कुतः ४०। १६७॥

इच्छितहै, तैसे कहतेहैं, सो तू सावधानहोय श्रवणकर "असज्जागरितेदृष्ट्वा स्वप्ने पश्यति तन्मयः" [जाग्रत् बिषे असत्को देखके तन्मयहुआस्वप्नबिषेदेखताहै]अर्थात् असत् (रज्जुसर्पवत्कल्पित) वस्तुको देखके तिसके भावकी भावना करके युक्त 'वा तिस असत् वस्तुके ज्ञानके दृढ़ संस्कार करके युक्त' तन्मय हुआ पुरुष जाग्रत्वत् स्वप्नबिषे ग्राह्य अरु ग्राहक (विषय अरु इन्द्रिय) रूप से कल्पना करता हुआ देखताहै, [जैसे जाग्रत्बिषे देखेहुये प्रपञ्चको स्वप्नबिषे देखने से जाग्रत्की वासनाके आधीन जो स्वप्न सो जाग्रत् का कार्य होने करके व्यवहार करते हैं, तैसे स्वप्नबिषे देखेहुये प्रपंचको जाग्रत्बिषेभी देखनेसे जाग्रत्को तिस स्वप्नका कार्यपना सिद्ध होता है, यह शंका करके श्लोकके उत्तरार्द्ध को कहते हैं (व्याख्यान करते हैं)] तैसे "असत्स्वप्नेऽपि दृष्ट्वा च प्रतिबुद्धो न पस्यति" ? स्वप्नबिषे असत्को देखके जाग्रत्को प्राप्त हुआ देखता नहीं ? अर्थात् 'जैसे जाग्रत्के असत् पदार्थों में तन्मय हुआ स्वप्नबिषे तिनको देखताहै, तैसे स्वप्नबिषे भी असत् अविद्यमान, वस्तुको देखके जाग्रत् को प्राप्तहुआ पुरुष कल्पना न करताहुआ देखता नहीं, अरु तैसे कदाचित् जाग्रत् बिषे भी देखके स्वप्नबिषे नहीं देखताहै, यहअर्थ श्लोकके चकारसे बोधित है। ताते विशेषकरके स्वप्नको जाग्रत्की वासनाके आधीनहोने से, जाग्रत्को स्वप्नका हेतुहै इसप्रकार कहते हैं, परन्तु सो जाग्रत् परमार्थसे सत्यहै ऐसेकरके कहते नहीं ३९। १६६॥

४०।१६७॥ हे सौम्य! [व्यवहार दृष्टिसे जाग्रत् अरु स्वप्नका कार्य कारणपना कहा, अरु वास्तवदृष्टिसे तो कहीं भी कार्य्य का-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रणपनाहै नहीं । इसप्रकार कहतेहुये वस्तुके अज्ञानसे अवस्तु
कार्यहोताहै,ऐसे कहनेवालेके मतका निषेध करतेहैं,] परमा
तो किसीका भी किसीभी प्रकारसे कार्य कारणभाव संभव
नहीं । प्रश्न । कार्य कारणभाव कैसे नहीं संभवे है, । उ
तहां प्रथम , जो वस्तुके अज्ञानसेही अवस्तुरूप कार्य होता
ऐसे माननेवाले पुरुषोंप्रति कहते हैं " नास्त्यसद्धेतुकमसत्
सद्धेतुकन्तथा " [असत् हेतुवालेको असत् कहते हैं सो है न
सत् असत् हेतुवाला है नहीं] अर्थात् असत् जो शशशृंगादि
सो जिस असत्काही कारण है ऐसे जे आकाशके पुष्पादिक
नको असत् हेतुवाला असत् कहतेहैं सो है नहीं । अरु शून्य
तो । " असतः सज्जायते " इस विकल्पकी श्रुति प्रमाण
शून्यसेही सत्रूप कार्यहोता है इसप्रकार मानते हैं, अब ति
प्रति कहते हैं, जैसे सत् , विद्यमान, घटादिरूप वस्तु भी अ
हेतुवाला [अर्थात् शश शृंगादिकोंका कार्य] होतानहीं [अ
अभाव (असत्) रूप जे शशाके शृंग (सींग) तिसका
भावरूप , सत्य, धनुष किसीने भी कहीं भी किसी कालबिषे
देखानहीं, ताते अभावरूप शून्य कारणसे भावरूप सत्य का
उत्पत्ति कहनी माननी असत्ही है ॥ अब कारण अरु कार्य्य
के सद्भाव के माननेवाले जे सांख्यादि वादी तिनके प्रति क
हैं " सच्च सद्धेतुकं नास्ति सद्धेतुकमसत्कुतः " [, सत्, सत
तुवाला नहीं, तब सत्रूप हेतुवाला असत् कैसे होगा, क
होता नहीं,] अर्थात् [सांख्यवादी कारण प्रधान अरु ति
कार्य सूक्ष्म स्थूल प्रपंच, इन दोनोंबिषे सद्भाव मानतेहैं कि
कारण से सत् कार्य्य होताहै [तिनके प्रति कहतेहैं, जैसे
, विद्यमान घटादिक सत् हेतुवाला [अर्थात् अन्य सत्वस्तुका
नहीं] [अर्थात् सत् उसको कहतेहैं जो उत्पत्त्यादि रहित
त्रयअवाच्य सदा एकरसरहै सो सत्, अरु प्रधान कार्यरू
उत्पन्न होनेवाला ताते सत् नहीं, अरु कार्य अपनी उत्पत्तिसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरु लयके पश्चात् अभावरूप होनेसे उत्पत्ति अभाववालाहुआ कदापि सत् होनेके योग्य नहीं, ताते कार्य, कारण उभय विसत् भावनाके करनेवालेका मत सत् नहीं। अब कोई एकवादी इस मिथ्या प्रपंचरूप सृष्टिका सत्रूप ब्रह्मकारण है। (अर्थात् सत्रूप ब्रह्मसे यह मिथ्यासृष्टि उत्पन्न होती है, इसप्रकार वर्णन करते हैं, तिनके प्रतिनिषेधकरते हैं कि, तैसे सत्रूप हेतुवाला (सत्काकार्य) कैसे संभवेगा। किन्तु कदापि नहीं। अर्थात् जो सत् होताहै सो कार्य भावको प्राप्तहोता नहीं क्योंकि एकरस सत्रूप है ताते, अरु सत्से असत्कार्य, अर्थात् सत्का कार्य असत् होतानहीं क्योंकि कारण सद्रूप है, अरु कार्यरूप प्रपंच असत् है, ताते सो सत्का कार्य होने के योग्य नहीं, ताते सत् रूप ब्रह्म अरु असत् प्रपंच इनका कार्य कारण भाव युक्तनहीं। अरु जो कहो कि "सदेवसौम्येदमग्रआसीत" इत्यादि श्रुतियोंने इस सृष्टिका कारण सत्कहा है, तो तिन श्रुतियों का तात्पर्य कार्य्या कारण भाव कहने का नहीं किन्तुएक अद्वैत आत्मतत्त्व के प्रकाशनार्थ है, क्योंकि " वाचारम्भण विकारो नामधेयं " इत्यादि श्रुतियोंने कार्यको वाचारम्भण (कहने) मात्रही कहाहै पृथक् सत्तावाला नहीं, ताते " मृत्तिकेत्येवसत्यं "। एकमृत्तिका ही सत्यहै, इस दृष्टान्तसे एकसर्वाधिष्ठान् सत्आत्माही सत् है, ऐसे कहके " एतदात्म्यमिदꣳ सर्वं तत्सत्यꣳ सआत्मा तत्त्वमसि " इस उपदेश से कार्य्याकारण भाव भेद रहित एक अद्वैत आत्मतत्त्व प्रकाशित किया है॥ ताते सत्रूप ब्रह्मका असत्रूप सृष्टिकार्यहै यह कथन अयुक्तहै॥ अरु अन्यप्रकारका कार्यकारण भाव सम्भवे नहीं, वा कल्पनाकरनेको शक्य नहीं, एतदर्थ विवेकी पुरुषोंको किसीभी वस्तुका कार्य्याकारण भाव सिद्ध नहीं॥ इत्यभिप्रायः॥ ४०। १६७॥

४१। १६८॥ हे सौम्य! पुनःभी असत्रूप जाग्रत् अरु स्वप्नके पदार्थों से कार्य कारण भावकी शङ्काको अन्य हेतुसे दूरकरतेहुये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विपर्य्यासाद्यथा जाग्रदचिन्त्यान् भूतवत् स्पृशेत् तथा स्वप्ने विपर्य्यासाद्धर्म्मांस्तत्रैव पश्यति ४१।१६८
उपलम्भात् समाचारादस्तिवस्तुत्ववादिनाम्। जातिस्तु देशिताबुद्धैरजातेस्त्रसतां सदा ४२। १६९॥

कहते हैं "विपर्य्यासाद्यथाजाग्रदचिन्त्यान् भूतवत् स्पृशेत्" जैसे जाग्रत्बिषे विपर्य्याससे अचिन्त्य परमार्थवत् स्पर्शकरता है; अर्थात् जैसे कोईपुरुष जाग्रत्बिषे विपर्य्यास कहिये अविवेक से अचिन्त्य कहिये चिन्तन करनेको अशक्य, रज्जु सर्पादि पदार्थोंको परमार्थवत् स्पर्श करता है। अर्थात् स्पर्श करतेहुयेका विकल्प करताहै "तथा स्वप्ने विपर्य्यासाद्धर्म्मांस्तत्रैव पश्यति" तैसे स्वप्नबिषे विपर्य्याससे धर्मोंको तहांहीं देखताहै; अर्थात् जैसे जाग्रत्बिषे तैसे स्वप्नबिषे विपर्य्यास (अविवेक) से हस्तिअश्वादि पदार्थोंको तहांहीं (अपने अन्तरजहां स्वप्नके पदार्थयोग्यस्थान का अभाव है) देखता है,। अर्थात् देखेहुयेवत् कल्पना करता है परन्तु जाग्रत् से उत्पन्नहोनेवालेको देखतानहीं ४१।१६८॥

४२।१६९॥ हे सौम्य! [वास्तव दृष्टिसे कार्यकारण भावके अप्रसिद्धहुये "जन्माद्यस्य यतः" इस जाग्रत्के जन्मादिक जिस से होते हैं, इत्यादि वेदान्त शास्त्र व्याससूत्रोंकरके ब्रह्मको जगत्का कारण कैसे सूचितकिया है,। यह शङ्काकरके कहते हैं] "उपलम्भात् समाचारादस्तिवस्तुत्ववादिनाम्, जातिस्तुदेशिताबुद्धैर्जातेस्त्रसतां सदा" उत्पत्ति उपालम्भसे अरु सम्यक् आचरणसे, ऐसे कहनेके स्वभाववाले अरु अनुत्पत्ति से सदा भयके पानेवाले के अर्थ उपदेशकिया है; अर्थात् व्यासादिक अद्वैतवादी पण्डितोंने जो जगदुत्पत्ति कही है (उपदेशकियाहै) सो तो उपालम्भ, द्वैतकी प्रतीति,से। अरु वर्णाश्रमादिक धर्म्मके सम्यक् आचरणसे। इनदोनों हेतुओं से "वस्तुभावमस्ति" द्वैतका वस्तुभाव है, इसप्रकार कहने के स्वभाववाले वस्तुवादी, अरु जगत्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुत्पत्तिसे सदाभयके पावनेवाले दृढ़ आग्रही कर्मादिकोंबिषे श्रद्धावान् मन्दविवेकियोंकेअर्थ [कार्यकारण भावको अंगीकारकरके जन्मके उपदेश करनेवाले अद्वैतवादियों का उपदेश मन्द विवेकियों बिषे विवेकी दृढ़ता का उपाय होने करके कैसे होवेगा, यह शङ्का करके तब कहते हैं] वो (कर्म्मवादी मन्द विवेकी) तिस उत्पत्तिको प्रथम ग्रहणकरो, परन्तु पश्चात् वेदान्तके अभ्यासियों को अजन्मा अद्वय आत्मा को विषय करनेवाला विवेक स्वतःहीहोवेगा " वेदान्ताभ्यासिनान्तुस्वयमेवाजाद्वयात्मविषयो विवेको भविष्यतीति" इसप्रकार दृढ़विवेक का उपाय होनेकरके, उपदेश करते हैं, परन्तु परमार्थ बुद्धि से नहीं। अरु जिसकरके वे (कर्म्मवादी) अविवेकी पण्डित स्थूल, बहिर्मुख, बुद्धिवाले होने से, अनुत्पन्नहुये बस्तुसे अपने बिनाशको मानतेहुये सदा भयकोही पावते हैं, एतदर्थ तिनके लिये सूत्रकारादिक पण्डितों की प्रवृत्ति उचितहै। यह अर्थ है (अर्थात् कर्म्मवादी आदिकजे बहिर्मुखवृत्तिवाले मन्द विवेकी हैं तिनको आत्मसत्ता से पृथक् सत्तावाला जगत् भासताहै, तिसकी निवृत्तिके अर्थ उनपरउपकार करतेहुये सूत्रकार व्यासादि वेदान्ती पण्डितों ने ब्रह्म से जगदुत्पत्ति कहीहै तिसकरके वो स्वतःही समझेंगे कि कारणसे कार्य की पृथक् सत्ताहोती नहीं अरु यह सर्वजगत् ब्रह्मसे उत्पन्नहुआ है ताते इसकी पृथक् सत्ताके अभाव से यह ब्रह्मरूपही हैं, इस प्रकार एक अद्वैत ब्रह्मज्ञान होनेके अर्थ सूत्रकार ने ब्रह्म से सृष्टि का जन्म (उत्पत्ति) कही है, परमार्थ दृष्टि से नहीं। अरु यहही अर्थ " उपायःसोवताराय नास्ति भेदः कथञ्चन " इस तृतीय प्रकरणके १५ वें श्लोक बिषे कहा है (सोसृष्टिका प्रकार) अद्वैत बिषे बुद्धिकी उत्पत्ति के अर्थ है। ४२। १६६॥

४३। १७०॥ हे सौम्य! [" उदरमन्तरंकुरुते अथ तस्यभयं भवतीति" ८ जो थोड़ाभी अन्तर (भेद) करताहै पश्चात् तिसको भयहोता है) इत्यादि श्रुतियों के प्रमाण से ब्रह्म बिषे विकार के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजातेस्त्रसतान्तेषामुपलम्भाद्भियन्तिये । जातिदो
न सेत्स्यन्ति दोषोऽप्यल्पोभविष्यति४३।१७०॥

देखने वाले को भयका होना सुनतेहैं । अरु तैसे हुये श्रुति
अर्थ के जाननेवाले पण्डितों को भी भेदज्ञानसे अनुग्रहकी यो
ता न होगी । यहशङ्का करके तब कहते हैं] "। अजातेस्त्रसता
षामुपलम्भाद्भियन्तिये " (अनुत्पत्तिसे भयको पावतेहुये उपल
(आत्मा) से विरुद्ध जाते हैं ; अर्थात् जो ऐसे उपलम्भ (
तीति) से अरु सम्यक् आचरणसे अनुत्पत्तिसे । अर्थात् अनुत
हुई वस्तुसे । भयको पावते हुये द्वैत वस्तु है, इसप्रकार अद्वै
आत्मासे विरुद्ध जाते हैं । अर्थात् द्वैत को प्राप्तहोते हैं । तिन अ
त्पत्ति से भयको प्राप्तहोनेवाले श्रद्धा सम्पन्न सन्मार्ग को आ
करनेवालेको "। जातिदोषा न सेत्स्यन्ति दोषोऽप्यल्पोभविष्यति
(जाति के किये दोष होते नहीं, यद्यपि कोईदोष अल्पही होवेग
अर्थात् जाति कहिये प्रतीति के किये दोष होतेनहीं । अर्थात्सि
को पावते नहीं,क्योंकिसन्मार्ग कहिये विवेकमार्ग तिसविषे प्र
होतेहैंताते । अरु यद्यपि (जो कदापि) कोईएक दोषहोताहै,सो
सम्यक् ज्ञानकी अप्राप्तिरूप निमित्तकाकियागर्भवासादिरूप अ
ही दोष होवेगा यह अर्थहै ॥ अर्थात् यहांजो कहाहै किजो कद
कोई एक दोषहोताहै सोभी सम्यक् ज्ञानकी अप्राप्तिरूप नि
का किया गर्भवासादि अल्प दोष होवेगा , सो गर्भवासको अ
दोष कहा सो आक्षेप प्रतीति होता है, क्योंकि गर्भवासरूप
सर्व दोषोंका मूल है, ताते उक्त कथनका यह अभिप्राय प्र
होता है कि सम्यक् ज्ञानसे रहित पुरुष को गर्भवास उपल
करके सर्व दोष (अनर्थ) प्राप्तहोता है ४३ । १७० ॥

४४ । १७१ ॥ हे सौम्य! । शंका । ननु, द्वैत की प्रतीति
वर्णाश्रमके धर्म्मके आचारकोप्रमाणरूप होनेसे, द्वैतवस्तु वा
हीहै, सो कथन बने नहीं, क्योंकि प्रतीतिकहिये अनुभव अ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपलम्भात् समाचारान्माया हस्तीयथोच्यते ॥ उप
लम्भात्समाचारादस्तिवस्तुतथोच्यते ४४। १७१ ॥

चारका परस्पर में व्यभिचारहै ताते। प्रश्न! तिनका व्यभिचार कैसेहै। तहां, उत्तर, कहतेहैं "उपलम्भात् समाचारान्मायाहस्ती यथोच्यते" [जैसे मायाका हस्ति प्रतीति से अरु आचारसे हस्ती ऐसे कहते हैं] अर्थात् जैसे मायाका किसी इन्द्रजाली आदिकों करके रचित हस्ती (हाथी) हस्तिवत् प्रतीति होता है, अरु जैसे अन्य हस्तीके अर्थ आचरते हैं तैसे इस मायाके हस्ती बिषे भी आचरते हैं, अर्थात् उसकेरूप गुण स्वभावादिकों के वर्णन में प्रवर्त्तहोतेहैं। एतदर्थ जैसे असत् हुआ भी मायाका हस्तिको प्रतीति अरु आचारसे अर्थात् हस्तिके सम्बन्धी धर्म्मों से यह हस्ती है इसप्रकार कहते हैं "उपलम्भात् समाचारादस्ति वस्तु तथोच्यते" तैसे प्रतीति अरु आचारसे वस्तु है, इसप्रकार कहते हैं; अर्थात् जैसे मायाके हस्तिको प्रतीति अरु आचार से हस्ती है ऐसा कहते हैं। तैसेही प्रतीति अरु आचारकरके भेदरूप द्वैतवस्तुहै इसप्रकार कहते हैं। एतदर्थ [जैसे मायावी करके रचित मायामयहस्तिबिषे वास्तवताका अभावहोने से भी तिसकी प्रतीतिअरु आचरण होताहै, तैसे द्वैतबिषेभी उनकी प्रतीति अरु वर्णाश्रम आदिकों के आचरणको भी देखते करते हैं परन्तु तिसकरके तिस द्वैतबिषे वास्तविकपने की साधकता नहीं, इस प्रकार इस प्रसंगको समाप्त करतेहैं।] प्रतीति अरु आचार द्वैत वस्तुकेसद्भावबिषेहेतुहोतानहींयहइसकाअभिप्रायहै ४४।१७१ ॥

४५। १७२ ॥ हे सौम्य! [वास्तव दृष्टिके आश्रयसे निमित्त को अनिमित्तपना कहा, सो यह अनन्त श्लोकों करके कहा है, अब वास्तव दृष्टिको समाप्त करते हैं]। प्रश्न। तब जिस आश्रय कहिये अधिष्ठान वालियां उत्पत्त्यादिकोंकी मिथ्याबुद्धियां हैं, ऐसी जो परमार्थ वस्तु सो क्याहै, । उत्तर। कहते हैं "जात्याभास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जात्याभासं चलाभासं वस्त्वाभासं तथैव च । अ
चलमवस्तुत्वं विज्ञानंशान्तमद्वयम् ४५ । १७२ ॥

चलाभासं वस्त्वाभासं तथैव च " [जात्याभास है चलाभास
अरु वस्तुआभास है तैसेही] अर्थात् जैसे देवदत्त । अर्थात् क
एक मनुष्य । उत्पन्न होता है । अर्थात् देवदत्त इस नामसे
शरीर तिस शरीरान्तर जो शरीरी जीव सो देवदत्त नामका
द्यहै सो जीव अनादि होने से उत्पन्न होतानहीं परन्तु शरीर
उत्पत्ति से तिस शरीरी का उत्पन्न होना है सो आभासमात्रहै
रन्तु कहतेहैं, जैसे देवदत्त उत्पन्नहोता है । तैसे विज्ञान (विज्ञ
घन, विज्ञप्ति) सो उत्पत्त्यादिकों से रहित हुआ भी । स्वमा
करके । उत्पन्नहुयेवत् भासताहै, एतदर्थ वो जात्याभास है।
जैसे सोई देवदत्त चलता है, । अर्थात् वास्तव करके देवदत्त
मक देही (जीवात्मा) अचल है, परन्तु शरीरके सम्बन्ध से
टाकाशवत् चलता भासता है सो उसमें आभासमात्रहै तथा
तिसको देख के कहते हैं कि, देवदत्त चलताहै। तैसे सो । विज्ञ
आप अचलहुआ स्वमायाकरके । चलता भासताहै, अतएव
चलाभास है । अरु जैसे सोई देवदत्त गौरहै दीर्घहै पीन (मो
है, इसप्रकार भासता है तैसे सो विज्ञान (विज्ञप्ति चैतन्य) ब्र
रूप धर्मीवत् भासता है । परन्तु " अस्थूलमनएवमदीर्घ " इत्
दि प्रमाणसे द्रव्यके धर्म्मों से रहित अद्रव्यहै । अरु " रूपंरूप
तिरूपो बहिश्च " द्रव्यों के साथ मिलने से द्रव्य धर्मवान् भा
ताहै । एतदर्थ वो वस्त्वाभासहै । ताते देवदत्त जन्मताहै, चल
है, वस्तुहै, दीर्घ है, गौरहै तैसेही यह विज्ञान भासता है । पर
"अजाचलमवस्तुत्वं विज्ञानंशान्तमद्वयम्" (अजन्माहै, अचल
अवस्तुभाव है, विज्ञानघन है, शान्त हैं, अद्वय है, अर्थात्
। विज्ञप्ति शरीरादि अनहुई उपाधि साथ मिलने से ' उपजे
चलतेवत् वस्तुवत् भासता है, सो वास्तव करके अजन्मा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवं न जायतेचित्त मेवंधर्म्मा अजाःस्मृताः। एवमेव विजानन्तो न पतान्ति विपर्य्यये ४६। १७३॥

अचलहै अद्रव्यहै केवल विज्ञानघनहै अरु जन्मादि सर्व विकारसे रहितहोने से शान्त है, अरु एतदर्थही "एकमेवाद्वितीयम्" एक अद्वैत अद्वितीय है,। इत्यर्थः॥ ४५। १७२॥

४६। १७३॥ हे सौम्य! "एवं न जायते चित्तमेवंधर्म्मा अजाः स्मृताः" ऐसेचित्त (चैतन्य) जन्मता नहीं ऐसे धर्म्म (आत्मा) को अजन्मा कहतेहैं, अर्थात्। अब परमाचार्य प्रकरणोंका उपसंहार करतेहैं। । पूर्वोक्तप्रकार कहेहुये हेतुओंसे, चित्त कहिये जो चैतन्यब्रह्महै सो अजहै। एतदर्थ जन्मता नहीं इसप्रकार ब्रह्मवेत्ता। आत्मानुभवि। योंने धर्मकहिये आत्माको अजन्मा जाना है। अरु "एवमेव विजानन्तो न पतान्ति विपर्य्यये" ऐसेहीजाने हुये विपर्य्ययबिषे गिरतेनहीं, अर्थात् ऐसे उक्तप्रकारसे जानेहुये ही। अर्थात् तत्त्वमस्यादि महावाक्योंका आचार्यसे सम्यक्उपदेशपाय पुनः तिसका मनन निदिध्यासनकर साक्षात् यथार्थ आत्मानुभव कियेहुयेही। जन्मादिकोंसे रहित अर्थात् एकजन्म उपलक्षणकरके, जायते, अस्ति, वर्धते, विपरिणमते, विनश्यति, इन छः षट्भाव विकार। सेरहित अद्वैत निरुपाधि निर्विशेष शुद्ध। आत्मतत्त्वरूप विज्ञान विज्ञप्तिमात्र विज्ञानघन ब्रह्म को। "कश्चिद्धीरा प्रत्यगात्मनमैक्षतावृत्तचक्षुः" इत्यादि श्रुतियोंकेवाक्यानुसार। बाह्यशब्दादिक विषयोंकी इच्छासे रहित। समाहित चित्त। होयके, जानेहुये पुनः 'यह विद्वान्' अविद्यामय अन्धकारके सागररूप विपर्य्ययबिषे अर्थात् अजन्मादि लक्षणवान् आत्मा, तिससे विपर्य्यय जे जन्मादि षट्विकार भावादि लक्षणवान् शरीरादि संघात तिस विषयक जे आत्मभावरूप अज्ञानमय महा अंधसागर। तिसबिषे गिरते नहीं। क्योंकि "तत्रको मोहः कःशोकः एकत्वमनुपश्यत" इत्यादि मन्त्रवर्णके प्रमाणसे ४६। १७३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऋजुवक्रादिकाभास मलातस्पन्दितं यथा । ग्रहणग्राहकाभासं विज्ञानस्पन्दितन्तथा ४७ । १७४ ॥

४७ । १७४ ॥ हे सौम्य ! ८ अजन्मा अचल अरु जात्याभास है ? इसप्रकार पूर्व ४५ वें श्लोक बिषे, कथनकिये परमार्थक ज्ञानको दृष्टान्तसे वर्णन करतेहुये कहते हैं " ऋजुवक्रादिक भाससमलातस्पन्दितंयथा " ८ जैसे सरल अरु वक्रादिक आभास अलातकाचलनाहै, अर्थात् जैसेलोकबिषे सरल अरु वक्र [अर्थात् सीधा अरु टेढ़ा] आदिक प्रकार वा आकारवाला जो आभास कहिये प्रकाश है, सो अलात कहिये बनेठी वा अर्द्धदग्ध काष्ठ रूपउल्का, तिसका चलना है [अर्थात् बनेठी वा अर्धदग्धकाष्ठके मुखपर जो एक अग्निबिंदु है तिस अग्नि बिन्दुका जो वक्रादि रूपसे सीधा टेढ़ा आदिक भासनाहै सो उस बनेठी वा अर्द्धदग्ध काष्ठके चलने वा भ्रमणसे है, उस अग्नि बिन्दुके स्वरूपसे है नहीं] "ग्रहण ग्राहकाभासं विज्ञानस्पन्दितन्तथा" ८ तैसे ग्रहण अरु ग्राहकका आभास विज्ञानका चलनाहै ८ अर्थात् [जैसे अलातगत अग्निबिन्दुका जो सीधाटेढ़ा भासनाहै सो उसअलात के भ्रमणादिकों सेहै, तैसेही ग्रहण अरु ग्राहकका जो आभास कहिये भासनाहै सो विज्ञानका अविद्यासे चलनेवत् चलना है [अपने स्वरूपको न त्यागकरनेवाले अधिष्ठानका जो अन्य नाना आकारसे अवभास [प्रतीति अरु तिसकाबिषय] है तिसको विवर्त्त कहते हैं । यहां विज्ञानका जो स्फुरण 'जगदाकारसेभासना' है सो विवर्त्त रूपहै] जिसकरके अचल विज्ञानको वास्तव चलनानहीं, तिसकरकेही विज्ञानको ,अजन्मा अचल है, इस प्रकार पूर्व कहाहै ४७ । १७४ ॥

४८ । १७५ ॥ हेसौम्य! अब, विज्ञानशान्तहै, इसप्रकारपूर्व ४५ श्लोकबिषे वर्णन कियाहै तिसको अब दृष्टांत करके दृढ़करते " अस्पन्दमानमलातमनाभाससमं यथा " ८ जैसे चलनेसे रहि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस्पन्दमानमलातमनाभासमजंयथा। अस्पन्दमा
नंविज्ञान मनाभासमजं तथा ४८। १७५॥

अलातेस्पन्दमानेवै नाभासा अन्यतो भुवः। नततो
ऽन्यत्रनिस्पन्दान्नालातम्प्रविशन्तिते ४९। १७६॥

अलात अनाभास अरु अजन्माहै; अर्थात् निस्पन्दमान अलात (अर्थात् भ्रमणे से रहित बनेठी) सरलादिक आकार से जन्म रहित हुआ अनाभास अरु अजन्मा है। अर्थात् अलात के वा काष्ठके मुखपर लगा जो अग्निबिन्दु सो अलातके भ्रमणेसे भ्रमण रूपसे उत्पन्न होय भ्रमतेवत् भासताहै अरु उस अलातके स्थित हुये वो अग्निबिन्दु जैसा उत्पत्ति अरु भ्रमणसे रहितहै तैसाही अनाभास अरु अजन्मा होताहै, अर्थात् वो अलातपरका अग्नि बिन्दु जैसे अलातके भ्रमण से पूर्वहै तैसाही अलातके भ्रमण के शान्तहुये है, अरु मध्यबिषे जो भ्रमणरूप से उत्पन्नहुये अरुभ्रमतेवत् भासताहै सो अलातके भ्रमणरूप उपाधि करके भासताहै, परन्तु तिस अलात के भ्रमणकाल में भी वो अग्निबिन्दु अपने स्वरूपसे अलातके भ्रमणादिकों करके रहित सदा एकरस है। "अस्पन्दमानं विज्ञानमनाभासमजं तथा" तैसे निस्पन्दहुआ विज्ञान अनाभास अरु अजन्माहै; अर्थात् जैसे अलातका अग्निबिन्दु जैसा अज अचल है तैसा अलातके स्थिर हुये भासता है तैसेही अविद्या करके चलायमान अरु अविद्याकी निवृत्तिके हुये चलनेसे रहित (अर्थात् उत्पत्त्यादि आकारसे अभासमान) हुआ जो विज्ञान सो अनाभास कहिये अचल अरु अजन्माही है। वा विज्ञान कहिये बुद्धि तद्विशिष्ट जो विज्ञान(चैतन्य) सो बुद्धिरूप उपाधिकेसाथ मिलनेसे बुद्धिके जन्मादि वा कर्तृत्व भोक्तृत्वादि धर्मवान् भासताहै परन्तु स्वरूपसे तैसानहीं इत्यर्थः ४८। १७५॥

४९। १७६॥ हे सौम्य! [अलातके दृष्टान्तबिषे सरल वक्रादिक आकारोंका असत्पना कैसेहै, इस शङ्काके हुये निरूपण के असहन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करने से तिनकाअसत्पनाहै, इसप्रकार समाधान कहतेहैं, । यह
यह अर्थहै कि अलात वा अर्द्धदग्धकाष्ठ जब भ्रमताहै तब तिस
विषे अन्य देशान्तर से उसमें आयके प्रकाश होताहै, इसप्रका
कथन करने को शक्यनहीं क्योंकि सरल अरु वक्रादिक प्रकाशोंह
देशान्तर से आगमन की अप्रतीतिहै ताते, अरु जब सोई अला
स्थित वा स्थिर होताहै तब तिससे अन्य ठिकाने प्रकाश होताह
यहभी कहने को शक्यनहीं क्योंकि तहांभी तिसकी अप्रतीतिक
तुल्यता है ताते । (अर्थात् जैसे अलातके अग्निबिंदु के जे सरल
वक्रादि रूप प्रकाशहैं तिनका अलातके भ्रमणकाल में देशान्त
से आयके अलातमें प्रवेशकी अप्रतीतिहै, तैसेही अलातके भ्रम
रहित स्थिरहुये उन प्रकाशोंकी देशान्तर जानेकीभी अप्रतीति
ताते अलातबिन्दुके सरलवक्रादिक प्रकाशोंकी देशान्तरसे आग
गमनकी अप्रतीति तुल्यही है) अरु वे आभास, प्रकाश, इसह
अलातबिषे लीनभी होतेनहीं, क्योंकि उस अलातको उन आ
भासों के उपादानपने का अभाव है ताते । अरु जब भ्रमण क
निमित्त अलात उपादानहोवे, तब तिसको प्रतीतिमात्र निमि
होने से तिस निमित्त करके हुयेजे प्रकाश तिन के अभावके अदर्श
नसे सरल अरु वक्रादिक जे आकार हैं, सो भ्रमण के अभाव
हुयेभी अलातबिषे होवेंगे । परन्तु ऐसाहैनहीं, एतदर्थ सो अला
त सरल वक्रादि प्रकाशोंका उपादाननहीं, ताते किसी प्रकार
भी निरूपणके असहन से तिनका असत्पनाहै) " अलातेस्पन्द
मानेवै नाभासा अन्यतोभुवः " (अलातके स्पन्दमान हुये आभा
अन्य ते होनेवाले नहीं; अर्थात् , किंवा तिसही अलात के चल
हुयेसीधे अरुवक्रादिक आभास (प्रकाश) अलातसे अन्यकिसी
देश से आयके अलात बिषे होते नहीं, एतदर्थ सो प्रकाश अन्य
होनेवालेनहीं । अरु "नततोऽन्यत्रनिस्पन्दान्नालातम्प्रविशंतिते
(अचलहुये तिससे अन्य ठिकाने निकसतेनहीं, औ अलातके ता
प्रवेश करते नहीं ; अर्थात् अलातके अचल हुये सो सीधे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न निर्गता अलातात्ते द्रव्यत्वाभावयोगतः। विज्ञानेऽपि तथैव स्युराभासस्याविशेषतः ५०।१७७॥

प्रकाश अलात से निकल अन्य ठिकाने (देशान्तर) को जाते नहीं, अरु वे प्रकाश अचल हुये अलात बिषे प्रवेश करते नहीं। अर्थात् अलात बिषे लगा जो अग्निबिन्दु तिसके भ्रमण से भासते जे सीधे टेढ़े प्रकाश सो किसी देशान्तर से आयके भासते नहीं अरु उस अग्निबिन्दु के स्थिरहुये देशान्तरको जातेनहीं अलातही में लयभी होते नहीं 'क्योंकि अलात से निकसे नहीं, ताते, अभिप्राय यह है कि अलातके जे सीधे टेढ़े आदिक प्रकाश हैं सो न तो उस अग्निबिन्दु से निकसे हैं न देशान्तरसे आये हैं, अरु अग्निबिन्दुके स्थिरहुये न तो देशान्तर को जातेहैं न उसही में लयहोते हैं। किन्तु उस काष्ठके भ्रमणेसे वह अग्निबिन्दु आपही सीधा टेढ़ाहो भासताहै सोभी उपाधि के सम्बन्धसेहै स्वरूप से नहीं ४६। १७६॥

५०। १७७॥ हे सौम्य, किंवा "न निर्गता अलातात्ते द्रव्यत्वाभावयोगतः" "अलातसे निकसेहुये नहीं द्रव्यभाव के अभावके योग से; अर्थात् वे आभास कहिये सीधे टेढ़े प्रकाश अह से निकसे हुयेवत् अलात (अग्निबिन्दु) से निकसे हुये नहीं, क्योंकि उनको द्रव्यभाव के अभाव का योग है। अर्थात् उनको वस्तुपने का अभाव है। ताते। जिस करके वस्तुका प्रवेशादिक सम्भवे है अवस्तुका नहीं, ताते तिन आभासों को (वस्तुपनें के अभाव से अवस्तुरूपहुये) तिनके, निकसनेका अरु प्रवेशहोनेका असम्भवहै ताते। अरु "विज्ञानेपि तथैव स्युराभासस्याविशेषतः" "तैसेही विज्ञानबिषे भी आभाससे अविशेष (तुल्य) होनेसे; अर्थात् अलातके अग्निबिन्दुवत्, विज्ञान (विज्ञप्तिमात्र चैतन्य) बिषे भी उत्पत्त्यादिकों के आभास होतेहैं, तिनकी अलातके आभासों से अविशेषता है। अर्थात् अग्निबिन्दु के सीधे टेढ़े प्रकाशा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विज्ञाने स्पन्दमाने वै नाभासा अन्यतोभुवः । न ततो न्यत्र निस्पन्दान्न विज्ञानं विशन्तिते ५१ । १७८ ॥

कारों बिषे अरु विज्ञान (चैतन्य) के जन्मादिक आकारों कि आभासमात्रताकी तुल्यता है ५० । १७७ ॥

५१ । १७८ ॥ हे सौम्य, । प्र० । तिन । अलात के सीधे प्रकाशरूप आभास की अरु विज्ञान के जन्मादिक आभासोंकी बिषे आभासों की एकता कैसेहै, । तहां उत्तर कहते हैं "विज्ञा स्पन्दमाने वै नाभासा अन्यतो भुवः" । विज्ञानके स्पन्दहुये अ से भी आभास होने को योग्य नहीं ; अर्थात् विज्ञान । कि विज्ञप्तिमात्र चैतन्य आत्मा, जो कि अपने स्वरूपकरके अचल तिसके जिस किसप्रकार से । अर्थात् मायादिक उपाधिसे । चलतेहुये तिस विज्ञान से अन्य । प्रधानादिक । अन्य किसी हीं से भी आयके आभास । जन्मादिक । तिस 'विज्ञान' होनेको योग्य नहीं, क्योंकि तिसकी प्रतीति का अभाव है ता अरु "न ततोऽन्यत्र निस्पन्दान्न विज्ञानं विशन्तिते" । निस हुये तिसके अन्य ठिकाने होने को योग्य नहीं, अरु वे विज्ञानी प्रवेश करते नहीं ; अर्थात् । जो किसी भी प्रकार से चल प्राप्तहुये विज्ञानके । चलनेसे रहित अचल स्थिरहुये तिस वि से इतर ठिकाने वे आभास होनेके योग्य नहीं, क्योंकि प्र रूप आभास को सर्वत्र तबही विज्ञानकी अचलपने करके सि बिषे तुल्यता है ताते । अरु सो आभास तिसही विज्ञानवि वेश करते नहीं क्योंकि तिस केवल शुद्ध विज्ञानको तिन आ के उपादान पने की अप्रतीति है ताते ॥ अर्थात् ज्ञप्तिमात्र वै विज्ञान से जन्मादि आभास उपजते नहीं तिसही से तिसवि वेशको पावते नहीं एतदर्थ वे जन्मादि आभास तिस विज्ञान मायाकृत भ्रान्तिमात्रही हैं, वास्तव से नहीं ५१ । १७८ ॥

५२ । १७९ ॥ हे सौम्य, "ननिर्गताविज्ञानात्तेद्रष्टव्यत्वाभा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न निर्गताविज्ञानात्तेद्रव्यत्वाभावयोगतः । कार्य्य कारणताभावाद्यतोऽचिन्त्याःसदैवते ५२ । १७९ ॥

गतः"ं सो विज्ञानसे निकसते नहीं द्रव्यत्वके अभावकरकेयुक्तहोने से ; अर्थात् जैसे वे जन्मादि आभास विज्ञान कहिये चैतन्यविषे प्रवेश करते नहीं, तैसेही वे आभास विज्ञप्तिसे निकसतेभी नहीं, क्योंकि वह द्रव्यभाव कहिये वस्तुभाव के अभाव करके युक्त हैं ताते ॥ इसका यह तात्पर्यहै विज्ञानका अन्यसर्व अलातके तुल्य है, परन्तु विज्ञानका जो सदा अचलपना है सो अलातसे विशेष है । अर्थात् विज्ञान विषे जो जन्मादिक आभास हैं सो कुछवस्तु न होयके केवल आभास (भ्रान्ति) मात्रहीहैं ताते वास्तव करके न तो विज्ञानसे निकसते हैं न विज्ञानमें प्रवेशको प्राप्त होतेहैं । अरु अलात के आभासोंका (प्रकाशोंका) जो अलात से निकसना अरु अलातमें प्रवेशका पावना भासता है सो अलातके भ्रमणे करके भासताहै, अरु विज्ञान है सो अलातवत् चल न होयके अचलहै यह उसमें अलातसे विशेषता होनेसे उसविषे जन्मादिक आभासके होनेके हेतुका अभाव है । । प्रश्न । तब अचल विज्ञान , ज्ञप्तिमात्र , विषे जन्मादिकों के आभास किसके किये हैं । तहां उत्तर कहते हैं, " कार्य्यकारणताभावाद्यतोऽचिन्त्याः सदैवते "ं जाते वे कार्य कारण भावके अभावसे सदैव अचिन्त्य हैं ; अर्थात् जिसकरके वे जन्मादि आभास तिन आभासोंके अरु विज्ञप्तिमात्र विज्ञानके कार्यकारण भावका अभाव होनेसे । अर्थात् जन्य जनक भावके असंभवकरके सो आभास अभावरूपहैं ताते सो सदा अचिन्त्य कहिये अनिर्वचनीय है ॥ । अथवा आभासोंको अरु विज्ञानको कार्य्यकारण भावका अभाव है, अर्थात् आभासों को भ्रान्तिमात्र होनेसे नतो कोई उनका कारणहै नवह किसी का कार्यहै, अरु विज्ञान को अजन्मा होनेसे न वह किसीका कारण है न किसीका कार्यहै, अतएव आभास अरु विज्ञानके कार्य्य कारण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्रव्यंद्रव्यस्यहेतुःस्यादन्यदन्यस्य चैवहि । द्रव्यत्व
मन्यभावोवाधर्म्माणांनोपपद्यते ५३ । १८० ॥

भावका अभावहै, परन्तु वे आभास केवल भ्रांतिमात्र अध्यस्त होनेसे सत् नहीं किन्तु असत् हैं अरु विज्ञान उन आभासों का अधिष्ठान (आश्रय) होनेसे असत् न होके सत्रूप है क्योंकि आश्रयविना भ्रान्ति होती नहीं, अरु ज्ञानकाल बिषे भ्रांतिके अभावहुये सत्रूप अधिष्ठान पावताहै, अरु जैसे मरुस्थलका जल अनहुआभी अपने अधिष्ठान मरुस्थलको सत्रूप होनेसे सत्य भासताहै ताते अत्यन्त असत्भी नहीं, अरु जो पुरुष जलजानके प्रवर्त होताहै तिसको जलकी प्राप्तिहोती नहीं ताते सो सत्भी नहीं किन्तु अनिर्वचनीय है, तैसेही अनहुये जन्मादि आभास अपने अधिष्ठान नित्य सत्विज्ञान बिषे सदाही अनिर्वचनीयहै। एतदर्थ सो मिथ्याही होतेहैं ॥ जैसे अलात बिन्दुमात्र बिषे मिथ्या जो सरलादिक अलातके आभास तिन बिषे । विनाविचारित । सरलादि आभास बुद्धि होतीहै, तैसेही विज्ञान (विज्ञप्ति) मात्रबिषे मिथ्या जो जन्मादिक तिन बिषे । विनाविचारितही जन्मादिक बुद्धिहै सो मिथ्याहै । ताते सो सर्वथा त्याग करने योग्यही है । यहसमुदायका तात्पर्यार्थ है ५२ । १७९ ॥

५३ । १८० ॥ हे सौम्य ! "कार्यकारणताभावात्" ८ कार्य अरु कारण भावके अभावसे> इसप्रकार जो ५२ वें श्लोकबिषे कहा, तिसको प्रतिपादन करनेका अब आरंभ करतेहैं । यहांयह अर्थ है कि, अवयवरूप जो द्रव्यहै सो अवयवीरूप द्रव्यका उपादानहै । अरु अवयवके जो गुणहैं सो अपने समान जातिवाले अवयवीके गुणोंबिषे असमवायी कारणदेखेहै । इसप्रकार आत्मा को द्रव्यपनाहै नहीं कि जिसकरके उसको उपादानपनाहोवे अरु तिसरूपवाले गुणों का कहीं भी असमवायी कारणपना है नहीं क्योंकि तिस आत्मा बिषे भेदरूप गुण गुणी भावके कथन की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवं न चित्तजा धर्म्माश्चित्तं वाऽपि न धर्म्मजम्।
एवंहेतुफलाजातिं प्रविशन्ति मनीषिणः ५४। १८१॥

असम्भवहै ताते] इस प्रकार "अजमेकमात्मतत्त्वमिति" ८अज, कहिये अवयव अवयवी भाव रहित, अरु एक कहिये गुण गुणी भाव रहित, आत्मतत्त्वहै ? इस प्रकार सिद्धहुआ। तिस आत्म तत्त्वबिषे जिन वादियों करके जन्मादिकों के आभास अरु विज्ञान का कार्य्यकारण भाव कल्पितहै, तिनके मतबिषे "। द्रव्यं द्रव्यस्य हेतुः स्यादन्यदन्यस्यचैवहि "। ६ द्रव्य द्रव्यका अरु अन्य अन्य का हेतु (कारण) होताहै ; अर्थात् जिन वादियों के मत बिषे जन्मादि आभासोंका अरु विज्ञानका कार्य्य कारण भावकल्पित है तिनके मतबिषे द्रव्य द्रव्यका अरु अन्य अन्यका कारण होता है, परन्तु तिसही का । अर्थात् अपना कारण आप । सो होता नहीं। अरु जिसकरके लोकबिषे जो अद्रव्य कहिये रूपादि गुण है, सो स्वतन्त्र किसी का भी कारण देखा नहीं। अरु "। द्रव्यत्वमन्यभावो वा धर्म्माणां नोपपद्यते "। ६ धर्म्मका द्रव्यभाव वा अन्य भाव उपपद्यनहीं ; अर्थात् जिसकरके आत्माको अन्य का कारणपना वा कार्यपना प्राप्तहोवे ऐसा आत्मरूप धर्म्मोंकाद्रव्य भाव वा किसी से भी अन्य भाव बनता नहीं । अर्थात् द्रव्यभाव करके रहित निराकार निर्विशेष आत्माका द्रव्यभाव न होनेसे वो किसी का भी कारण नहीं अरुएक अद्वैतहोने से उसका किसीसे अन्यभाव भी नहीं । एतदर्थ अद्रव्यरूपहोनेसे अरु सर्वसे अभिन्न अनन्य होने से आत्मा न किसी का कार्य है न किसीका कारण है, यह अर्थ है ५३। १८०॥

५४। १८१॥ हे सौम्य ! [रचने को इच्छित जो घटतिस घटके ज्ञान के अनन्तर घट उत्पन्न होता है, अरु उपजाहुआ, इदं घट, इस प्रकार विषय रूप होनेसे अपने ज्ञानका उत्पादकहै, इस प्रकार का व्यवहारभी संभवतानहीं, क्योंकि किसी भी वस्तुको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यावद्धेतुफलावेशस्तावद्धेतुफलोद्भवः । क्षीणेहेतु
लावेशे नास्तिहेतुफलोद्भवः ५५ । १८२ ॥

विद्वान्की दृष्ट्यनुसार भिन्नरूपता नहीं इसप्रकार कहते हैं
" एवं न चित्तजा धर्म्माश्चित्तं वाऽपि न धर्म्मजम् " ६ इसप्रक
, धर्म्म , चित्त से जन्यनहीं, वा चित्त भी , बाह्य , धर्मसे ज
नहीं ; अर्थात् ऐसे उक्तप्रकार के हेतुओं करके आत्मरूप वि
स्वरूपही चित्त कहिये चैतन्य ब्रह्म है, एतदर्थ घटादि रूप व
धर्म चित्तजो चैतन्य तिस करके जन्यनहीं । वा चित्तभी व
धर्म्म से जन्य नहीं । अरु जीवरूप धर्म्मोंका परमात्मस्वरूप
से जन्म युक्तनहीं, क्योंकि सर्वजीवाख्य धर्म्मोंको विज्ञानस्व
के आभास कहिये प्रतिबिम्ब भाव है ताते । अर्थात् यावत् ज
हैं सो सर्व विज्ञानरूप चैतन्य के , जलगत सूर्य के प्रतिबिम्ब
प्रतिबिम्बरूपहै ताते उनका परमात्मा से जन्म युक्त नहीं, " प
हेतु फलाजातिं प्रविशन्ति मनीषिणः " ६ इसप्रकार बुद्धिम
पुरुष हेतु अरु फलकी अनुत्पत्ति को निश्चय करते हैं ; अर्थ
चैतन्य करके बाह्य घटादिक जन्य नहीं, तैसेही चैतन्य भी व
घटादिक करके जन्यनहीं, अरु अन्तरसर्वजीव भी चैतन्यसे ज
नहीं , प्रतिबिम्बरूपहोने से, ताते अन्तर बाह्यके सर्वधर्म्म चैत
करके जन्य नहीं केवल भ्रांतिमात्र हैं । इसप्रकार बुद्धिमान् पु
कहते हैं वा निश्चय करते हैं । तात्पर्य यह है कि जो ब्रह्म
हुये ब्रह्मवेत्ता हैं सो वह ब्रह्मवेत्ता कहिये यथार्थ वेदवेत्ता हैं
आत्माविषे हेतु अरु फलको । अर्थात् प्रारब्ध अरु देह जो
स्पर हेतु अरु फलरूपहैं तिन्होंको । अभावरूपही निश्चयकर
जानते हैं ५४ । १८१ ॥

५५ । १८२ ॥ हे सौम्य ! [फल जो देहादिक तिनसे हेतु
धर्म्मादिक सो होते नहीं, अरु तैसेही उक्तहेतु से उक्तफलादिक
होते नहीं । इसप्रकार वास्तविक दृष्टि से उपदेश किया । अबवि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यावद्धेतुफलावेशःसंसारस्तावदायतः । क्षीणेहेतुफलावेशे संसारं न प्रपद्यते ५६ । १८३ ॥

विषयक मुमुक्षुओंके आग्रहकी निवृत्ति के अर्थ तिस बिषे आग्रहके अभावाभावके हुये तिनकी उत्पत्ति अरु अनुत्पत्ति को देखावेहैं] प्रश्न । जो पुनः हेतु अरु फल बिषे आग्रहको प्राप्तहुये हैं तिनको क्या फलहोता है । उत्तर । " यावद्धेतुफलावेशस्तावद्धेतुफलोद्भवः " (यावत् हेतु अरु फलबिषे आग्रहहै तावत् हेतु अरु फलका उद्भव होता है ; अर्थात् धर्म अरु अधर्मनामवाले जे हेतु (शरीरोत्पत्तिके कारण) हैं तिनका कर्त्ता मैं हौं, धर्मअधर्म मेरे हैं तिन धर्म अधर्मों का फल कालान्तरबिषेकोई एक (स्वर्गनरकादि) देश बिषे प्राणधारियों के समूह बिषे (अर्थात् कोईककयोनिबिषे) उत्पन्नहुआ मैं भोगूंगा । इसप्रकारका यावत् हेतु अरु फलबिषे (कर्तृत्व भोक्तृत्वका) आग्रह है । अर्थात् तिनबिषे तत्पर चित्तवाले पुरुषकरके अपने आपबिषे हेतु अरु फलका आरोप करते हैं तावत् धर्म अधर्मरूप हेतुका अरु तिनके फलका उद्भव कहिये , उच्छेदरहित प्रवृत्ति, होतीहै । तथाच "धर्म्मेतरौतत्रपुनःशरीरकं पुनःक्रियाश्चात्रउदीर्यतेभवः " अरु " क्षीणेहेतु फलावेशे नास्ति हेतुफलोद्भवः " (हेतु अरु फलबिषे आग्रहके क्षीण हुये हेतु अरु फलका उद्भव होता नहीं ; अर्थात्, जब पुनः, जैसे मन्त्रअरु ओषधिकरके प्रेतादिक के आवेशके अभावहोनेवत्, उक्तप्रकारकेअद्वैत तत्त्वके , श्रवण मनन, दर्शनसे 'अविद्याकरके उद्भूत जोहेतु अरु फल तिनका आवेश सम्यक् प्रकार दूर होताहैं, । तब तिन उक्त हेतु अरु फलबिषेआग्रहके क्षीण (नाश) हुये हेतु अरु फलकापुनः उद्भव होता नहीं । इति सिद्धम् ५५ । १८२ ॥

५६ । १८३ हे सौम्य ! (प्रश्न) जो कदापि हेतु अरु फलकाउद्भवहोवे तो क्या दोषहै । उत्तर । कहते हैं । " यावद्धेतुफलावेशः संसारस्तावदायतः " (अर्थात् यावत् सम्यक् ज्ञानकरके हेतु अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संवृत्याजायतेसर्व्वं शाश्वतंनास्ति तेनवै । सद्भावेन
ह्यजंसर्वमुच्छेदस्तेननास्तिवै ५७ । १८४ ॥

फलका आग्रह । सम्यक्प्रकार अशेष । निवृत्त होता नहीं, कि
। अज्ञान । करके होताहै तावत् अक्षीणहुआ संसार दीर्घहोता
। अर्थात् यावत् सम्यक् आत्मज्ञान करके उक्त हेतु अरुफल
विषयक आग्रह अशेष निवृत्त होतानहीं तावत् अज्ञानकरके हे
अरु फलरूप संसार विस्तारको ही पावता है । अरु " क्षीणहे
फलावेशे संसारं न प्रपद्यते " ८ हेतु अरु फलविषयक आग्रह
क्षीणहुये संसारको पावता नहीं ? अर्थात् पुनः जब । सम्य
आत्मज्ञानकरके । उक्तहेतु अरु फल विषयक । समूल ,अज्ञान
के । आग्रह अशेष क्षीण (नाश) होताहै तबकारण के अभा
हुये संसारको पावतानहीं ॥ इति सिद्धम् ५६ । १८३ ॥

५७ । १८४ ॥ हे सौम्य ! । शङ्का । ननु, " अजादात्मनोऽन्
न्नास्ति " ८ अजन्मा आत्मा से अन्य है नहीं ? इसप्रकार कूटस्
अद्वितीय आत्मतत्त्वको इच्छनेवाले तुम करके , हेतु अरु फल
अरु संसारकी, उत्पत्ति अरु विनाश कैसे कहा है, हे वादी ! अ
पनी इस शंका का समाधान श्रवण कर " संवृत्या जायते सर्व
शाश्वतं नास्ति तेन वै " ८ ढापने से सर्व उपजता है तिसकरके
नित्य नहीं है ? अर्थात् अविद्या के आधीन लौकिक व्यवहार
ढापने से सर्व उपजता है तिसहेतु करके उत्पन्न हुये अविद्या के
आधीन वस्तुबिषे नित्य । नित्यता । है नहीं, एतदर्थ उत्पत्ति
अरु विनाशरूप संसार उपजता है, इसप्रकार कहते हैं । अ
"सद्भावेनह्यजंसर्व्वमुच्छेदस्तेन नास्तिवै " ८ सद्भावसे जन्मरहि
सर्वहै तिसकरके उच्छेद है नहीं ? अर्थात् जिस करके परमा
सद्भाव , परमार्थसत्ता , से तो जन्म रहित सर्व आत्माही
" आत्मैवेदं सर्व्वं " इत्यादि श्रुति । एतदर्थ तिस जन्म
अभावरूप कारणकरके हेतु अरु फलादिक किसी का भी उच्छे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धर्म्मा य इति जायन्ते जायन्ते तेन तत्त्वतः। जन्म मायोपमन्तेषां सा च माया न विद्यते ५८। १८५॥

कहिये विनाश है नहीं॥ [यहां यह भाव है कि, जैसे सम्मुखवर्त्ति रज्जु बिषे सर्प के अभावका अनुभवकर्त्ता विवेकी पुरुष, सर्प नहीं यह रज्जुहै वृथाही भयको क्यों प्राप्तहोता है, इसप्रकार भ्रान्त पुरुषको कहता है अरु वह भ्रान्त पुरुष तो अपने अपराध सेही शुद्ध रज्जु बिषे सर्पकी कल्पनाकर भयको पावतसन्ते भागता है। तहां विवेकीका वचन मूढ़ की दृष्टिसे विरोध को पावतानहीं, तैसे परमार्थरूप कूटस्थ आत्माका दर्शन व्यावहारिक जन्मादिकों के वचन से विरोध को न पायके अविरुद्धही है, ५७। १८४॥ ५८। १८५॥ हे सौम्य! [" संवृत्या जायते सर्व्वम् " लौकिकव्यवहार से सर्व होताहै? इसप्रकार ५७ वें श्लोक के बिषे कहा, तिसको अब पुनः वर्णन करते हैं] " धर्म्मा य इति जायन्ते जायन्ते तेन तत्त्वतः " जो भी धर्म्म जन्मते हैं ऐसे तत्त्व से सो जन्मते नहीं; अर्थात् जो भी आत्मा अरु अन्य अनात्मरूप धर्म्म कहिये पदार्थ उपजते हैं इसप्रकार कहते हैं। अर्थात् कल्पना करते हैं। सो धर्म्म इसप्रकार के हैं, इसप्रकार पूर्वोक्त लौकिक व्यवहाररूप ढक्कन (पड़दा) कहते हैं, कि ढांपने कहिये गुप्तपनेसेही वे धर्म्म जन्मतेहैं, परन्तु तत्त्व कहिये परमार्थ से जन्मते नहीं। अरु " जन्म मायोपमन्तेषां सा च माया न विद्यते " तिनका जन्म मायाकी उपमावाला है अरु सो माया अविद्यमान है नहीं; अर्थात् जो पुनः ढपने से तिन उक्तप्रकार के धर्म्मोंका जो जन्म है सो, जैसे मायाका जन्महोता है तैसे है, तदर्थ सो तिनका जन्म मायाकी उपमावाला प्रतीतकरने के योग्यहै। प्रश्न। तब मायानामक कुछ वस्तु होवेगी,। उ०। सो माया कुछ विद्यमान नहीं, अभिप्राय यह है कि अविद्यमान वस्तुका नाम मायाहै॥ ५८। १८५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथामायामयाद्बीजाज्जायते तन्मयोऽङ्कुरः । नाऽसौ नित्यो न चोच्छेदी तद्वद्धर्म्मेषुयोजना ५९।१८६॥
नाजेषु सर्व्वधर्म्मेषु शाश्वताशाश्वताभिधा। यत्र वर्णा न वर्तन्ते विवेकस्तत्र नोच्यते ६०। १८७॥

५९।१८६ ॥ हे सौम्य! प्रश्न । तिन धर्म्मकहिये पदार्थों का जन्म माया की उपमावाला कैसेहै, । तहां उत्तर, कहते हैं "यथा मायामयाद्बीजाज्जायते तन्मयोऽङ्कुरः" (जैसे मायामय बीजसे मायामय अंकुर होता है; अर्थात् जैसे आम्रादिकों के मायामय बीजसे (अर्थात् कोई ये मायावी पुरुष करके आरोपित आम्रादिक वृक्षके मायामयबीजसे मायामय अंकुर उपजताहै । अरु "नाऽसौ नित्यो न चोच्छेदी तद्वद्धर्मेषु योजना" (यह नित्य नहीं वा विनाशी नहीं तैसे धर्म्मोंबिषे योजनाहै ; अर्थात् यह मायामय अंकुर नित्य नहीं, वा विनाशी नहीं, क्योंकि मिथ्याहै तातें, तैसेहि धर्म कहिये पदार्थों बिषे जन्म अरु नाशादिकोंकी योजना है। अर्थ यहहै कि परमार्थसे धर्म्मोंका जन्मवा नाश घटतानहीं ५९।१८६

६०। १८७॥ हे सौम्य ! [सद्भाव से सर्व अजन्मा है, इस प्रकार जो ५७ वें श्लोक बिषे कहा, तिसको वर्णन करते हैं "नाजेषु सर्वधर्म्मेषु शाश्वताशाश्वताभिधा " (अजन्मा हुए धर्म्मों बिषे नित्यहै वा अनित्यहै ऐसा नाम 'कहना' नहीं (अर्थ परमार्थ से तो नित्य एकरस विज्ञप्तिमात्र सत्तारूप अजन्मा हुए धर्म्म कहिये आत्माबिषे नित्यहै वा अनित्यहै, ऐसानाम कहनेमें प्रवर्त्त होता नहीं । क्योंकि " यत्र वर्णा न वर्त्तन्ते विवेकस्तत्र नोच्यते " जिन बिषे वर्ण प्रवर्त्तहोते नहीं तिन बिषे विवेक कहा नहीं ; अर्थात् जिन्हों करके अर्थों का वर्णन करिये ऐसे शब्द तिनको वर्ण कहते हैं, सो जिस आत्मा बिषे वर्ण "ऐसा है " इस प्रकार कहने को प्रवर्त्त होते नहीं, तिस आत्मा बिषे नित्य है वा अनित्य है, ऐसा विवेक कहते नहीं बनै

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथा स्वप्ने द्वयाभासं चित्तं चलति मायया। तथा जाग्रद्द्वयाभासं चित्तं चलति मायया ६१।१८८॥

अद्वयञ्च द्वयाभासं चित्तं स्वप्ने न संशयः। अद्वयञ्च द्वयाभासं तथा जाग्रन्न संशयः ६२।१८९॥

"यतोवाचो निवर्त्तन्ते" इत्यादि श्रुति प्रमाण है ६०।१८७॥

६१।१८८॥ हे सौम्य! आत्माको शब्दकी अगोचरताके अर्थात् अविषयताके हुये, यह आत्मा व्याख्याकारोंकरके, शब्दोंसेही प्रतिपादनकरनेकी योग्यताको कैसे प्राप्तहोताहै,। यहशंका करके चित्तका स्फुरणमात्र अविचारित सुन्दर प्रतिपाद्य अरु प्रतिपादकरूप द्वैतहै, इसप्रकार दृष्टान्त सहित कहतेहैं "यथास्वप्नेद्वयाभासं चित्तं चलति मायया। तथा जाग्रद्द्वयाभासं चित्तं चलति मायया" ६ जैसे स्वप्नविषे द्वैताभासरूप चित्त (मन) मायासे चलताहै, तैसे जाग्रत्विषे द्वैताभासरूप चित्त मायाकरके चलित होताहै ? ६१।१८८॥

६२।१८९॥ हे सौम्य!। शंका। ननु, स्वप्नविषे प्रतिपाद्य अरु प्रतिपादकरूप द्वैतको मनके चलन कहिये स्फुरणमात्ररूप के हुये भी जाग्रत्विषे तिसप्रकार मनका स्फुरणमात्र कैसे होवेगा, यह शंकाकरके उत्तर कहतेहैं "अद्वयञ्च द्वयाभासं चित्तं स्वप्ने न संशयः। अद्वयञ्च द्वयाभासं तथा जाग्रन्न संशयः" ६ स्वप्नविषे अद्वैतरूपहुआ चित्त द्वैताभासरूप होता है, यामें संशय नहीं, तैसे जाग्रत्विषे अद्वैतरूपहुआ चित्त द्वैताभासरूप होताहै इसमें संशय नहीं ? अर्थात् स्वप्नविषे वास्तव करके अद्वैतरूप हुआही मन अपनी स्फुरणतासे द्वैतरूप होताहै तिसमें संशयनहीं, तैसे जाग्रत् विषे भी अद्वैतरूप हुआही मन अपनी स्फुरणतासे द्वैतरूप होता है इसमें भी संशय नहीं॥ अरु जो पुनः परमार्थसे अद्वैतरूप विज्ञानमात्र वस्तुको वाणीका विषयपनाहै सो मनका स्फुरणमात्रहै, परमार्थसे नहीं, यह पूर्व अद्वैतनामक तृतीय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वप्नदृक् प्रचरन् स्वप्ने दिक्षु वै दशसु स्थितान्
अण्डजान् स्वेदजान् वाऽपि जीवान् पश्यति यान्
सदा ६३ । १९० ॥

स्वप्नदृक् चित्तदृश्यास्ते न विद्यन्ते ततः पृथक्
तथा तद्दृश्यमेवेदं स्वप्नदृक् चित्तमिष्यते ६४।१९१।

प्रकरणविषे व्याख्यान किये इन ,६१,६२, दो श्लोकोंका तात्पर्य्यहै ६२ । १८९ ॥

६३ । १९० हे सौम्य! "स्वप्नदृक् प्रचरन् स्वप्ने दिक्षु वै दशसु स्थितान्! अण्डजान् स्वेदजान् वाऽपि जीवान् पश्यति यान् सदा" । ८ स्वप्नका द्रष्टा स्वप्नविषे विचरता हुआ दशहों दिशाविषे स्थित, अण्डज वा स्वेदजरूप भी जीवों को सदा देखताहै; अर्थात् इस कथनके हेतु से भी वाणी का विषय जो द्वैत तिसका अभाव है, जैसे स्वप्नरूप स्थानविषे स्वप्न जगत् का देखने वाला ऐसा जो स्वप्नका द्रष्टा सो स्वप्नविषे विचरताहुआ दशहों दिशाविषे स्थित कहिये वर्त्तमान अण्डज वा स्वेदजरूप भी । जरायुज अरु उद्भिज्जरूप । जिन प्राणियोंको सदा देखताहै [सो तिसतें भिन्न नहीं इसप्रकार अग्रिम श्लोक से सम्बन्धहै ६३।१९०॥

६४ । १९१ ॥ हे सौम्य! । प्र० । जब ऐसे है तब तिसकरके हुआक्या, । तहां उत्तर कहतेहैं "स्वप्नदृक् चित्तदृश्यास्ते न विद्यन्ते ततः पृथक्" । ८ स्वप्नद्रष्टा के चित्तकरके देखनेयोग्य तिसतें पृथक्नहीं,अर्थात् स्वप्नद्रष्टाके चित्तकहिये मनकरके देखनेयोग्य वे जीव सो स्वप्नद्रष्टा के चित्त से भिन्ननहीं।अरु जो ऐसाकहे कि तब चित्तही जीवादिक भेदके । द्रष्टा अरु चित्तके । आकार विकल्पको पावताहै, । सो कथन बनेनहीं । तहां कहतेहैं "तथा तद्दृश्यमेवेदं स्वप्नदृक् चित्तमिष्यते" । ८ तैसे यह स्वप्नके द्रष्टाका चित्त तिसकरके देखनेके योग्यही अङ्गीकार करतेहैं; अर्थात् यह स्वप्नके द्रष्टाका चित्ततिस स्वप्नकेद्रष्टाकरके देखनेके योग्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चरन् जागरिते जाग्रद्दिक्षुवै दश सुस्थितान्। अण्डजान् स्वेदजान् वाऽपि जीवान् पश्यति यान् सदा ६५। १९२॥

जाग्रच्चित्तेक्षणीयास्ते न विद्यन्ते ततः पृथक्। तथा तद्दृश्यमेवेदं जाग्रतश्चित्तमिष्यते ६६। १९३॥

अंगीकार करतेहैं। अर्थात् जैसे स्वप्नके द्रष्टाकरके स्वप्नके पदार्थ देखने योग्यहैं, तैसे चित्तभी है। एतदर्थ स्वप्नके द्रष्टासे भिन्न चित्तनाम कोई वस्तु नहीं, इत्यर्थः ६४। १९१॥

६५।१९२॥ हे सौम्य! अब दृष्टान्त बिषे स्थित अर्थको दार्ष्टान्त बिषे योजना करतेहैं। "चरन् जागरिते जाग्रद्दिक्षुवै दशसुस्थितान्, अण्डजान् स्वेदजान्वाऽपि जीवान् पश्यति यान्सदा" (जाग्रत्बिषे जाग्रत्के दशहोदिशा बिषे विचरता तहां स्थित अंडज वा स्वेदज भी जिन जीवोंको सदा देखता है; अर्थात् जाग्रत् बिषे जाग्रत् अवस्थावाला पुरुष दशहो दिशा बिषे स्थित जे अंडज वा स्वेदज, जरायुज अरु उद्भिज्जरूप, चारिखानिके जिन जीवोंको। (अर्थात् कार्य्य कारणात्मक संघातको। सदा देखताहै ६५।१९२॥

६६।१९३॥ हे सौम्य! "जाग्रच्चित्तेक्षणीयास्ते न विद्यन्ते ततः पृथक्" (जाग्रत्के चित्तसे देखनेके योग्य तिससे पृथक् विद्यमान नहीं; अर्थात् जाग्रदवस्थावाले पुरुष के चित्तकरके देखने के योग्य वे। उक्त चारखानि के। जीव तिस जाग्रदवस्थावाले पुरुषके चित्तसे भिन्न नहीं" तथा तद्दृश्यमेवेदं जाग्रतश्चित्तमिष्यते" (तैसे यह जाग्रत्का चित्त तिस द्रष्टाकरके देखने के योग्यही अंगीकार करतेहैं; अर्थात् जैसे जाग्रत् के द्रष्टाकरके जाग्रत् के जीवादि पदार्थ देखने के योग्यहैं, तैसे इस जाग्रदवस्थावाले पुरुषका चित्त तिस जाग्रत्के द्रष्टा पुरुषकरके देखने के योग्य है ऐसा अंगीकार करतेहैं॥ अरु इन '६५, ६६' दो श्लोकोंके भावार्थरूप यह दो अनुमानहैं। जाग्रदवस्थावाले पुरुषकेदृश्य जो जीवादि सोतिस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उभे ह्यन्योन्यदृश्येते किन्तदस्तीति चोच्यते । क्षणाशून्यमुभयं तन्मतेनैव गृह्यते ६७ । १९४ ॥

के चित्तसे अभिन्नहै, क्योंकि चित्तकरके देखनेयोग्यहै ताते, स्वप्न के द्रष्टाके चित्तकरके देखने के योग्य स्वप्नके जीवादि । चित्तसे अभिन्नहैं । तैसे ॥ अरु सो जीवोंके देखनेरूप चित्तहै द्रष्टा से अभिन्न है, क्योंकि द्रष्टाका दृश्य है ताते, स्वप्न चित्तवत् ६६ । १९३ ॥

६७ । १९४ ॥ हेसौम्य![दृश्यअरुदर्शनकेभेदकेग्राहक प्रम करके बाधितहुये यह दोनों हेतुहैं, । यह शंका करके तब कहतेहैं यहां यह अर्थहै कि दृश्य अरु दर्शन यहदोनों परस्परकी अपे से सिद्ध होनेवाले हैं । दृश्यके सिद्धहुये तिसकरके अविच्छि कहिये विशिष्ट, दर्शन (ज्ञान) सिद्ध होता है, अरु तिस दर्शन सिद्धहुये तिसकरके अविच्छिन्न दृश्य (विषय) सिद्ध होतेहैं । इ प्रकार अन्योन्याश्रय रूप दोष करके दृश्य वा दर्शन सिद्ध हों नहीं । एतदर्थ तिनके भेदकेग्राहक प्रमाणके अभावसे उन दो हेतुओंका बाध है नहीं] वेजीव अरु चित्त यह दोनों परस्पर दृश्य कहिये विषय होतेहैं । अरु जिसकरके जीवादिक विषयों अपेक्षावाला चित्त प्रसिद्ध होताहै, अरु जिसकरके चित्तकी अ क्षावाला जीवादिक दृश्यहै, एतदर्थ " । उभेह्यन्योन्यदृश्येते हि न्तदस्तीतिचोच्यते " । वे दोनों अन्योन्यकरके दृश्यहैं सो क्या ऐसे (प्रश्नकर्त्ताप्रति) कहते हैं? अर्थात् वे जीव अरु चित्त दो परस्परके दृश्य हैं । । अर्थात् परस्पर करके देखने (विषयकरने योग्य हैं, । अरु जिसकरके वे दोनों परस्पर के दृश्य हैं, एतद । अन्योन्याश्रयरूप दोषके सद्भावसे । चित्त अथवा चित्तकरके खनेके योग्य जो दृश्य पदार्थहै सो क्याहै, इसप्रकार प्रश्न कि हुये, विवेकी पुरुषकरके 'यह कुछभी हैनहीं, इसप्रकार कहाहै कहतेहैं । जैसे स्वप्नविषे ॥ "तत्ररथानरथयोगा " । इत्यादि प्रमा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथास्वप्नमयोजीवो जायतेम्रियतेऽपिच । यथाजीवाअमीसर्व्वे भवन्ति न भवन्तिच ६८ । १९५ ॥

से । हस्ती वा हस्तीका चित्त विद्यमानहैनहीं तैसे यहां जाग्रत् बिषे भी विवेकीपुरुषको कुछभी वस्तु विद्यमानकरके प्रतीतहोतानहीं ॥ यह अभिप्राय है । प्रश्न ॥ जाग्रत्बिषे चित्त वा चित्तका दृश्य यह दोनों विद्यमान कैसे नहीं, । तहां उत्तर कहतेहैं "लक्षणाशून्यमुभयं तन्मतेनैव गृह्यते" यह दोनों लक्षणाशून्य हैं तिनके मतसेही ग्रहण करते हैं ; अर्थात्, जिस करके लखा (देखा) जाय सो कहिये लक्षणा ऐसा जो प्रमाण तिसकोयहां लक्षणाकहतेहैं। अरु जिस करके चित्त अरु चित्तका दृश्य , चेत्य , यह दोनों लक्षणा कहिये प्रमाण तिससे राहित हैं, ताते तिनके भेदका प्रमाणीकपना प्रमाण करने योग्यपना है नहीं । अरु वादियों ने तो तिनके मत करके । तिस दृश्य अरु ज्ञानबिषे तत्पर चित्तवान्तारूप दोष करके । सो दृश्य अरुदर्शन ग्रहण कियेहैं, ताते घटकी बुद्धि को दूरकरके [यहां यह अर्थ है कि , घट बिषे क्या प्रमाणहै, । इस प्रकार प्रश्न किये हुये , ज्ञान प्रमाण है, ऐसा उत्तर बने नहीं- क्योंकि अन्य वस्तुओं के ज्ञानबिषे अतिप्रसङ्ग [अति व्याप्ति] हो, वेगी ताते । अरु घटका ज्ञान प्रमाणहै, ऐसा उत्तर भी बने नहीं क्योंकि अन्योन्याश्रय दोषका प्रसंग प्राप्त होता है ताते । अतएव घट अरु तिसके ज्ञानका प्रमाण अरु प्रमेयभाव सम्भवे नहीं]घट ग्रहण करते नहीं, अरु घटको दूरकरके घटकी बुद्धि (ज्ञान) भी ग्रहण करतेनहीं । एतदर्थ तिस ज्ञान अरु ज्ञेयरूप चित्त अरु चित्त के दृश्यबिषे प्रमाण अरु प्रमेय का भेद कल्पना करने को शक्य नहीं ॥ इत्यभिप्रायः ॥ ६७ । १९४ ॥

६८ । १९५ ॥ हे सौम्य! [दर्शन कहियेज्ञान से भिन्न अण्डजादि दृश्य पदार्थोंके असद्भावके अनुमानके ग्राहक प्रमाणकरके बाधको निवारण करके, अब दर्शनसे भिन्न तिन अंडजादिकनके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथामायामयोजीवो जायतेम्रियतेऽपिच । तथाजी
वाअमीसर्व्वे भवन्तिनभवन्तिच ६९ । १९६ ॥
यथानिर्मितकोजीवो जायतेम्रियतेऽपिवा । तथा
जीवाअमीसर्व्वे भवन्तिनभवन्तिच ७० । १९७ ॥

असद्भाव के हुये जन्मादिकोंकी प्रतीतिका बाधहोवेगा, इसका
को दूर करते हैं,] " यथास्वप्नमयोजीवो जायतेम्रियतेऽपिच
तथाजीवाअमीसर्वे भवन्तिनभवन्तिच " (जैसे स्वप्नमय जी
जन्मताहै अरु मरताभी है, तैसेही यह सर्वजीव होते भी हैं अ
नहीं भी होते ; ॥ अर्थात् जैसे स्वप्न बिषे अनहुयेही जीव जन्मं
अरु मरते हैं, तैसे यह जाग्रत् के जीव भी न हुये हुये जन्मं
अरु मरते हैं ६८ । १९५ ॥

६९ । १९६ ॥ हे सौम्य ! [अब मायामय जीव के अरु निर्मि
तक जीवके भेदके जानने की इच्छावाले के प्रति कहतेहैं] " य
मायामयोजीवो जायतेम्रियतेऽपिच । तथाजीवाअमीसर्व्वे भव
न्तिनभवन्तिच " (जैसे मायामय जीव उपजता है अरु मर
भी है, तैसे यह सर्व्व जीव होते भी हैं अरु नहीं भी होते ; अर्थात्
(जैसे इन्द्रजालिक मायावियों की माया से) मायामय जी
जन्मताहै अरु मरता भी है, तैसेही प्रज्ञप्तिमात्र चैतन्यकी माया
(जो कि वास्तवमें है नहीं) यह (अण्डजादि) सर्व जीव उत्प
त्यादि होते भी हैं अरु नहीं भी होते ६९ । १९६ ॥

७० । १९७ ॥ हे सौम्य ! " यथानिर्मितकोजीवो जायतेम्रिय
तेपिवा । तथाजीवाअमीसर्व्वे भवन्तिनभवन्तिच " (जैसे नि
र्माण किया जीव जन्मता भी है वा मरता भी है, तैसे यह स
जीव होते भी हैं अरु नहींभी होते ; ॥ अर्थात् जैसे मन्त्र ओषधि
आदिक सामग्री से इन्द्रजाली आदिक मायावियों करके निर्माण
किया जीव जन्मताभी है अरु मरता भी है, तैसेही यह अण्डजा
दि सर्वजीव होते हैं नहीं भी होते । अर्थात् ६८, ६९, ७०, इनतीन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न कश्चिज्जायते जीवःसम्भवोऽस्य न विद्यते । एत त्तदुत्तमं सत्यं यत्र किञ्चिन्न जायते ७१ । १९८ ॥

श्लोकोंका तात्पर्यार्थ यह है कि, जैसे [संवित् कहिये चैतन्य रूप ज्ञान तिससे भिन्न अण्डआदिकों का परमार्थकरके सद्भावके अभावके अनुमान का जन्मादिककी प्रतीति से बाधहोता नहीं, क्योंकि सद्भावके अभावहुये भी स्वप्नादिकों बिषे जन्मादि विकल्पके बाहुल्यता की प्रतीति है ताते । इसप्रकार ६८, ६९, ७०, इनतीन श्लोकों के तात्पर्यको कहते हैं] स्वप्नमय मायामय अरु औषधि आदिकरके रचित अण्डजादि जीव जन्मते हैं अरु मरते हैं, तैसेही यह मनुष्यादिरूप जीवभी अविद्यमानहुयेही चित्तकी कल्पनामात्रही हैं ७० । १९७ ॥

७१ । १९८ ॥ हे सौम्य ! "न कश्चिज्जायतेजीवः सम्भवोऽस्य न विद्यते" ? इसका कारण नहीं ताते कोई भी जीव जन्मता नहीं ? अर्थात् जिसकरके [जो वादी, जन्मादिक सत्यहै, इस प्रकार मानता है तिसके प्रति पूर्व तृतीय प्रकरणके अन्तके श्लोकबिषे " न कश्चिज्जायते जीवः " इत्यादि कहा है तिस अर्थको पुनः स्मरण करावते हैं] इस (जगत्) का कारण नहीं, तिसही करके कोई भी जीव जन्मता (उपजता) नहीं । अरु "एतत्तदुत्तमं सत्यं यत्र किञ्चिन्न जायते" ? जिसबिषे कुछ भी जन्मता नहीं यह तिनके मध्य उत्तम सत्यहै? अर्थात् जिस सत्यरूप (एक अद्वितीय) ब्रह्मबिषे कुछ किञ्चिन्मात्र भी उपजता नहीं, यह उन पूर्वके ग्रन्थोंबिषे उपायपने करके उक्त सत्योंके मध्य उत्तम सत्यहै । इसका भावार्थ यह है कि, व्यवहारबिषे सत्य विषयका अरु जीवोंका जन्म मरणादिक स्वप्नादिकों के जीवोंवत् है । अर्थात् जैसे स्वप्नबिषे जीवादिक अनेक पदार्थ उपजते विनशते हैं तैसेही यह जाग्रत् के जीवादिकों को कल्पना मात्रही जानना । इसप्रकार पूर्वके तीन श्लोकोंबिषे कहा, परन्तु " न कश्चिज्जायते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्तस्पन्दितमेवेदं ग्राह्यग्राहकवद्द्वयम् । चित्तं निर्विषयं नित्यमसंगन्तेनकीर्त्तितम् ७२ । १९९ ॥

जीवः " ८ कदापि कोई भी जीव जन्मता नहीं ? यह परमार्थ जो सत्य है ॥ इस श्लोकका अर्थ पूर्व तृतीय प्रकरणके अन्त श्लोकबिषे कहा है ७१ । १९८ ॥

७२ । १९९ ॥ हे सौम्य ! " चित्तस्पन्दितमेवेदं ग्राह्यग्राहक द्द्वयम्, चित्तं निर्विषयं नित्यमसंगन्तेन कीर्त्तितम् " । ८ चित्त स्फुरण रूपही यह ग्राह्य अरु ग्राहकवाला द्वैत, विषयरहित चि है तिसकरके नित्य असंग कहा है ; अर्थात् [ज्ञानको, कलि दृश्यकरके उपहित कहिये उपाधिवाले रूपकरके पृश्यपना हो से, तिसका देखेहुये पदार्थों से भिन्न सद्भाव है नहीं, इसप्रक स्वप्नके दृष्टान्त से कहा, अब वास्तवसे ज्ञानको विषयसे सम्ब के अभावसे आत्माही ज्ञान है, इसप्रकार कहते हैं] चित्त मन तिसका स्फुरणरूपही यह ग्राह्य कहिये विषय अरु ग्राह कहिये इन्द्रिय, इनवाला द्वैत है, अरु विषयरहित चित्त कहि चैतन्य आत्मा है । तिस हेतुकरके सो चित्त कहिये आत्म चैत को नित्य असंग कहा है । इसका तात्पर्य यह है कि सर्व्व ग्रा अरु ग्राहकवाला चित्तका स्फुरणरूपही द्वैत परमार्थ से आत्मा है " आत्मैवेदं सर्व्वं " एतदर्थ सो चित्त संज्ञक चैतन्य आत्म निर्विषय है । अरु तिस निर्विषयहोने रूप हेतुकरके तिसको नि त्य असंग कहा है " असंगोह्ययं पुरुषः " ८ असंगही यह पुरुष यह बृहदारण्य उपनिषद् के प्रमाणसे । विषय सहित वस्तु विषयबिषे संग कहिये आसक्ति होवे है अरु चित्त संज्ञक आत्म जिसकरके अविषय है एतदर्थही असंग है, इस युक्तिसे आत्म का असंगपना सर्वदा सिद्धही है । जैसे आकाश निराकार नि वयव अतिसूक्ष्महोने से जल घृत तैलादिक सर्वमें व्याप्तहुआ जलादिक किसीपदार्थ अरु तिनके धर्म्मोंसाथ कदापि स्पर्श

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

योऽस्तिकल्पितसंवृत्या परमार्थेननास्त्यसौ। परतन्त्राभिसंवृत्या स्यान्नास्तिपरमार्थतः ७३। २००॥

भी करता नहीं, तैसे आकाशसे भी महासूक्ष्म निराकार निर्विकार आत्मा आकाशादि सर्व में व्याप्तहुआ हुआ भी सदा असंगहीहै। ७२। १९९॥

७३।२००॥ हेसौम्य!। शंका। ननु, जब निर्विषय होनेकरके चित्त जो चैतन्य ब्रह्म, तिसका असंगपनाहै, तब सो असंगपना सिद्धहोता नहीं, क्योंकि शास्ता कहिये शिक्षाका करनेवालागुरु, शास्त्र अरु शिष्य। अर्थात् 'शास्ता, शास्त्र अरु शिष्य, इत्यादि। प्रमाता प्रमाणादिक विषय विद्यमानहैं ताते,। समाधान। यह दोष बने नहीं, क्योंकि "योऽस्तिकल्पितसंवृत्या परमार्थेननास्त्यऽसौ"। ८ जो कल्पित तिसकरके हैं यह परमार्थसे है नहीं? अर्थात् जो शास्त्र शास्तादि पदार्थ विद्यमान है, सो परमार्थकी प्राप्तिकासाधन। उपाय। होने करके कल्पित जो व्यवहार तिसकरके है। परन्तु यह शास्त्रादि पदार्थ परमार्थ से है नहीं। इसमें "ज्ञातेद्वैतं नविद्यते" ८ जानेहुये द्वैत है नहीं? यह प्रथम प्रकरणके २५ वें श्लोक करके, उक्त वाक्य अनुकूल है। अरु [ननु, वैशेषिक वादी जो हैं सो द्रव्यसे आदिलेके समवाय पर्यन्त षट्पदार्थोंको परमार्थ से मानते हैं, अरु जब तैसे है तब चैतन्यको असंगपना कैसेहै,। तहां, समाधान, कहते हैं,। यहां यह अर्थहै कि वैशेषिक मतवादियोंकी परिभाषासे कल्पित व्यवहारके अनुसारसे जो द्रव्य से आदिलेके समवाय पर्यन्त पदार्थ हैं सो परमार्थसे हैं नहीं, किन्तु व्यवहार सत्ताकरके भासताहै, अतएव चैतन्यआत्माकाअसंगपना सर्वदा अविरुद्धहीहै।] "परतन्त्राभिसंवृत्या स्यान्नास्तिपरमार्थतः"। ८ अन्य, शास्त्रके, व्यवहार से होय सो परमार्थ से नहीं? अर्थात् जो अन्य वैशेषिकादि मतवादियों के शास्त्रके व्यवहार से होय सो परमार्थ से निरूपण कियाहुआ नहीं। अतएव, तिसकरके,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजःकल्पितसंवृत्या परमार्थेननाप्यजः । परतन्त्रोऽभिनिष्पत्त्या संवृत्या जायतेतु सः ७४ । २०१ ॥

असंगकहाहै,इसप्रकारका जोहमाराकथनसोयुक्तहीहै७३।२०

७४।२०१ ॥ हेसौम्य!।शंका।ननु,शास्त्रादिकनको व्यवहार ताके होनेसे "अजइति" ८अजन्माहै ? यह । शास्त्रोक्त कल्पना व्यवहाररूपही होगी, । समाधान । तहां ऐसेही सत्यहै,यहअ हैं "। अजःकल्पितसंवृत्या परमार्थेननाप्यजः "। ८कल्पितव्यव सेही अजन्मा है परमार्थसे अजन्माभी नहीं; अर्थात् शास्त्रादि के कल्पित व्यवहारसेही अजन्माहै, ऐसा कहतेहैं, अरु परमा सेतो अजन्माभी नहीं । अरु "। परतन्त्रोऽभिनिष्पत्त्या संवृत्या यते तु सः "। ८अन्य शास्त्रकी प्रसिद्धिसे सोतो व्यावहारिक है जन्मताहै; अर्थात् जिसकरके [यहां यह अर्थहै कि, द्रव्यका गुणादि पांचका जो लक्षणहै, सो तिससे व्यावर्त्तक अपने के संभवविना कल्पते नहीं । अरु तैसेहुये तिन तिनके लक्षण तिनकी प्रतीतिके हुये तिससे भिन्नकी प्रतीति होवेहै, अरु ति भिन्न पदार्थ के औ लक्षणसे तिसकी प्रतीतिकेहुये तिससे व्याव । पृथक्किये । पदार्थकी प्रतीतिहोवेहै । इसप्रकार परस्परकेआ यरूप दोषसे कुछभी वस्तु वास्तवसे सिद्धहोती नहीं] अन्य परि णामवादियोंके शास्त्रकी प्रसिद्धिसे । । अर्थात् अन्योंके शास्त्रों जो परिणामरूप जन्मकी प्रसिद्धिहै तिसके निषेधसे । । जो "आ त्मा अजन्मा है" ऐसे कहाहै सोतो व्यवहारसे है । अरु जिसकर अजन्मा है तातेजन्मरूप प्रतियोगी को व्यवहारकरके सिद्धहो से तिसका निषेधरूप अजन्मापनाभी तैसाही है । यह अर्थ है एतदर्थ " अजइति " अजन्मा है, इसप्रकारकी यह कल्पना परमार्थरूप विषयसे प्रवृत्त होतीनहीं । [अजन्मापने आदिकरके हारकरके उपलक्षित जोस्वरूपहै तिसका अकल्पितपनाहै, क्योंकि तिसको कल्पनाका अधिष्ठानपना है तातें । अरु कल्पित शास्त्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभूताभिनिवेशोऽस्ति द्वयं तत्र न विद्यते। द्वयाभावं स बुद्ध्यैव निर्निमित्तो न जायते ७५। २०२॥

यदा न लभते हेतूनुत्तमाधममध्यमान्। तदा न जायते चित्तं हेत्वाभावे फलं कुतः ७६। २०३॥

दिकोंको अकल्पित वस्तुके प्रमाज्ञान (प्रमाण जन्यज्ञान) की अहेतुता नहीं, क्योंकि प्रतिबिम्बादिकों को बिम्बादिकों के प्रमा की हेतुता सिद्ध है ताते, ऐसा जानना] इत्यर्थः ७४। २०१॥

७५। २०२॥ हे सौम्य!। शङ्का। ननु, [ज्ञानको, कल्पित शास्त्रादिकोंसे अन्यता (पृथक्ता) के हुये तिसको मिथ्याहोनेसे अपुनरावृत्ति कहिये आवागमनसे रहित मोक्षरूप फलकी साधनता होगीनहीं,]। समाधान। तहां कहते हैं "अभूताभिनिवेशोस्ति द्वयं तत्र न विद्यते, द्वयाभावं स बुद्ध्यैव निर्निमित्तो न जायते" ८असत्बिषे अभिनिवेशहै तिसबिषे द्वैत विद्यमान नहीं, द्वैतके अभावको जानके ही निमित्तसे रहित होता है सो नहीं? अर्थात् जिसकरके असत् कहिये मिथ्या ज्ञानका विषय संसार है, एतदर्थ असत्यरूप द्वैतबिषे केवल अभिनिवेश, कहिये आग्रह, है। अरु जिस करके तिस आत्माबिषे मिथ्या आग्रहमात्र अरु जन्मका कारण द्वैत विद्यमानहै नहीं, एतदर्थ जो पुरुष द्वैत के अभावको जानकेही मिथ्या द्वैतके आग्रहरूप निमित्तसे रहित होता है सो जन्मता नहीं। अर्थात् मिथ्या ज्ञानरूप द्वैत प्रपञ्चके आग्रह रूप अभिनिवेशके सम्यक् अभाव हुयेही मोक्षहै। "ऋते ज्ञानान्नमुक्तिः"। ७५। २०२॥

७६। २०३॥ हे सौम्य! ["निर्निमित्तो न जायते" ८निमित्त से रहित हुआ जन्मता नहीं? इसप्रकार जो पूर्व ७५ वें श्लोक बिषे कहा तिस इस अर्थको वर्णन करते हैं] जाति कहिये वर्ण अरु आश्रमको। अर्थात् ब्राह्मणादि वर्ण अरु ब्रह्मचर्यादि आश्रम, इनकरके युक्त पुरुषके अर्थ विधान किये जे शिम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दम अग्निहोत्रादि विहित कर्म्म रूप हेतु, सो फलाभिलाषा
रहित निष्काम अधिकारी पुरुषों करके अनुष्ठान किये धर्म्म
र्थात् धर्म्म अरु कर्म्मका इसप्रकार विचारहै कि कर्म्म जो शब्द
है सो, नित्य, नैमित्तिक, प्रायश्चित्त, अरु कामुक, अरु निषि
इन पांचोप्रकारके कर्म्मों बिषे समान वर्त्ततीहै, परन्तु सर्व क
धर्म्म नहीं क्योंकि निषिद्ध आदि कर्म्मोंको धर्मपना नहीं, ता
जिन सन्ध्या गायत्री अग्निहोत्रादिक कर्म्मोंके न करने से प्रत्यवा
(पातक) होताहै सो कर्म्म मुख्य (उत्तम) धर्म्म है, अरु जि
अश्वमेधादिक यज्ञ रूप कर्म्म के न करने में प्रत्यवाय नहीं
करे तो फलकी प्राप्तिहोय, ताते सो कामनावाले के अर्थ होने
गौण (मध्यम) धर्म्म है, अरु अश्वमेधादि यज्ञ जो पूर्वराजर्षियों
किये हैं सो बहुधा स्वर्ग प्राप्तिकी कामनासे, वा महत् प्रायश्चि
की कामना से किये हैं, अतएव यज्ञादिक कामुक कर्म्म गौण
है, ताते निष्काम अधिकारी करके अनुष्ठान किये अग्निहोत्रा
कर्म्म रूप मुख्य धर्म्म। सो देव भावादिक उत्तम जन्मकी प्रा
के प्रयोजनार्थहोनेसे केवल उत्तमहै। अरु धर्म्म अधर्म मिश्रि
रूप कर्म्म। अर्थात् यहां धर्म्म अधर्म्म को मिश्रित कहा है ति
करके कुछ अश्वमेधादि धर्म्म अरु ब्रह्महत्यादि अधर्म्मका स
च्चय नहीं कहा, किन्तु कामनासे रहित जो केवल उत्तम अ
होत्रादि धर्म्म, अरु तिनकी अपेक्षा कामुक कर्म्म रूप अध
तिनका समुच्चय धर्म्माधर्म्म अरु मिश्रित;शब्दका अर्थ जान
सो मनुष्यादिक मध्यम जन्म भावकी प्राप्तिके अर्थ होनेसे
ध्यमहै। अरु जो निषिद्धाचरणहैं सो तिर्यगादि अधम यो
प्राप्तिका निमित्त होनेसे अधर्म। रूप प्रवृत्ति विशेष अधर्म
अतएव "यदा न लभते हेतूनुत्तमाधम मध्यमान्, तदा न
चित्तं हेत्वाभावे फलं कुतः"। "जब चैतन्य उत्तम मध्य
अधम हेतुओं को देखता नहीं, तब जन्मता नहीं अरुहेतुके
हुये फल कहांसे होगा?, अर्थात् । उक्त प्रकार के उत्तम म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनिमित्तस्य चित्तस्य याऽनुत्पत्तिः समाऽद्वया। अजातस्यैव सर्व्वस्य चित्तदृश्यं हि तद्यतः ७७। २०४॥

अधम हेतुओं को। जब चित्त कहिये चैतन्य उन अविद्या करके कल्पित उत्तम मध्यम अरु अधम हेतुओं को, सर्व कल्पना से रहित एक ही अद्वितीय आत्मतत्त्व को जानता हुआ, देखता नहीं। जैसे अविवेकी बालकों करके आकाश बिषे दृश्यमान जो मल (मलिनता) तिसको विवेकी पुरुष देखता नहीं, तद्वत् तब देवादिक आकारों करके उत्तम मध्यम अरु अधम, कर्मोंके फलरूप से जन्मता नहीं। अरु बीजादिक के अभाव हुये धान्य के वृक्षादिकोंवत् हेतु के अविद्यमान हुये फल उपजता नहीं, एतदर्थ हेतु के अभाव हुये फल कहां से होवेगा किन्तु कहीं से भी नहीं ७६। २०३॥

७७। २०४॥ हे सौम्य! ["तदा न जायते चित्तं" ८ तब चित्त जन्मता नहीं ? इसप्रकार अभी ७६ वें श्लोक बिषे कहा, सो कालपरिच्छेदकी प्रतीतिसे आगंतुकताकी शंका करके निवारण करते हैं] "हेत्वभावे चित्तं नोत्पद्यत इति" ८ हेतु के अभाव हुये चित्त उपजता नहीं ? इसप्रकार पूर्व श्लोकबिषे कहा। पुनः तिस चित्तकी अनुत्पत्ति किस प्रकारकीहै सो अब कहतेहैं "अनिमित्तस्य चित्तस्य याऽनुत्पत्तिः समाऽद्वया" ६ अनिमित्त चित्त की जो अनुत्पत्तिहै सो सम अद्वैतरूप है ? अर्थात् परमार्थ ज्ञान दर्शन से निवृत्त हुआहै, धर्म्म अधर्म्म नामवाला जो उत्पत्तिका निमित्त है सो, जिसका ऐसा जो चित्त सो अनिमित्तचित्त कहते हैं। तिस अनिमित्त चैतन्यकी जो मोक्षनामवाली अनुत्पत्ति है सो सर्वदा [जैसे रूपेकी कल्पना कालबिषे भी सीपीका अरूपापना स्वाभाविक है। अर्थात् अविवेकी पुरुष को लोभ के वशसे जिसकालमें सीपीबिषे रूपेकी भ्रांतिहोती है, तिस कालबिषे भी सीपीका जो अरूपापनाहै सो स्वाभाविक सिद्धही है। तैसे ही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बुद्ध्वानिमित्ततां सत्यां हेतुं पृथगनाप्नुवन् । वीतशो
कं तथा काममभयं पदमश्नुते ७८ । २०५ ॥

जन्मकी कल्पना कालबिषे भी चैतन्यरूप ज्ञानकी निष्प्रपंच अ
तीय ब्रह्मरूपता स्वाभाविकही है । अरु जन्मके भ्रमकी निवृत्ति
अपेक्षा से तो "तदा न जायते" ८तब जन्मता नहीं> इसप्रकारक
अरु यह ८ सर्वदा, इसपद करके सूचित करते हैं । केवलमा
वस्थावाले चैतन्यकाही अजन्मापना होय ऐसा नहीं, किन्तु घ
दिक उपहित चैतन्यको भी अजन्मापनाहै, इस अभिप्रायसे
८ सर्व अवस्था बिषे, इसप्रकार कहा । अरु चैतन्य के सर्व
प्रतिबिम्बको अपने बिम्बके तुल्य ब्रह्मरूपता है ताते । इसहे
अभिप्राय से यह अनुत्पत्ति अद्वैतरूप कहीहै] सर्व्वावस्था
समकहिये विशेष रहित अरु अद्वितीय है । [सर्व द्वैतको चैतन्य
दृश्य होने करके मिथ्यात्व होनेसे, अरु नित्य सिद्ध परिपूर्ण चै
नामक स्फूर्तिको जन्मका असंभवहै ताते, तिसकी जो अनुत्
है सो उक्त लक्षणवाली युक्त ही है] अरु "अजातस्यैव सर्व
चित्तदृश्यं हि तद्यतः" ८जन्मरहित चित्तका सर्व दृश्यही
अर्थात् जिसकरके सम्यक् ज्ञानसे पूर्व भी सो द्वैत अरु जन्मा
(चैतन्य) का दृश्यहीहै । एतदर्थ निमित्त रहित अद्वैतरूप चै
की जो अनुपपत्ति सो सम अरु अद्वैतही है । अरु सो अनु
पुनः कदाचित् होताहै, इसप्रकार नहीं, वा कदाचित होता
इसप्रकार नहीं, किन्तु चैतन्य आत्मा सर्वदा एकरूप एक
है "पर प्रत्यक् एकरसः" इत्यर्थः ७७ । २०४ ॥

७८ । २०५ ॥ हे सौम्य ! ["द्वयाभावं सबुद्ध्यैव निर्निमि
जायते" ८सो द्वैतके अभाव को जानके निमित्त से रहित
जन्मता नहीं> इसप्रकार पूर्व ७५ वें श्लोकबिषे कहाहै, ति
अब पुनः वर्णन करते हैं] "बुद्ध्वानिमित्ततां सत्यां हेतुं पृथ
ग्नुवन्" ८निमित्तरहित सत्ताकोजानके हेतुको पृथक् ग्रहण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभूताभिनिवेशाद्धि सदृशे तत्प्रवर्त्तते। वस्त्वभावं सबुद्ध्वैव निःसङ्गं विनिवर्त्तते ७९। २०६॥

हुआ ? अर्थात् उक्त प्रकारकी युक्ति करके जन्मका निमित्त जो द्वैत तिसके अभावहुये, निमित्तरहित परमार्थरूप सत्ताको जान के धर्म्मादिक कारणरूप हेतु को देवादिक योनिकी प्राप्तिके अर्थ भिन्न ग्रहण करता हुआ। अर्थात् बाह्य विषयोंकी इच्छासे रहित हुआ। "वीतशोकं तथाकाममभयं पदमश्नुते" (विगतशोक काम से रहित अभयपदको प्राप्तहोताहै, अर्थात् देवादि योनिके प्रापक जे उक्तधर्म्मादिक तिनको अग्रहणकरता हुआ, अरु कामसेरहित विगत शोक हुआ। अर्थात् अविद्यादि कारण कार्य से रहित हुआ। अभय पदको प्राप्तहोता है। पुनः जन्मको पावता नहीं अर्थात् यहां जो कहा कि पुनर्जन्मको पावता नहीं सो जिन अविवेकियों की दृष्टिसे आत्मा जन्मता है तिनकी दृष्टिकी अपेक्षा से कहाहै, नतु आत्मा तो सदा अजन्मा एकही है ७८। २०५॥

७९। २०६॥ हे सौम्य! [। जब ऐसे है तब। उक्तप्रकारके पदकी प्राप्ति सदाही है, यह शंका करके कहते हैं] "अभूताभिनिवेशाद्धि सदृशेतत्प्रवर्तते" (अभूत अभिनिवेश से सदृशविषे सो प्रवर्त्त होता है ; अर्थात् जिसकरके मिथ्या द्वैतविषे द्वैतके सद्भावका निश्चयरूप जो मिथ्या आग्रह है, तिस अविद्यात्मक व्यामोहरूप मिथ्या अभिनिवेश कहिये आग्रह से सदृश, कहिये तिसके अनुसारी, वस्तुविषे सो चित्त प्रवर्त्त होता है। एतदर्थ "वस्त्वभावंसबुद्ध्वैव निःसंङ्गं विनिवर्त्तते" (सो वस्तुके अभावको जानकेही निःसंगहुआ निवृत्तहोताहै, अर्थात् सो पुरुष तिस द्वैत रूप वस्तुके अभावको सम्यक्प्रकार जानके ही। अर्थात् जबजानता है तब। अपना चित्त जैसे तिस मिथ्या अभिनिवेश के विषयसे निःसंग, कहिये निरपेक्ष, हुआ निवृत्तहोता है, तैसे तिसकी निवृत्तिके अनुसारी होता है ७९। २०६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निवृत्तस्याप्रवृत्तस्य निश्चला हि तदा स्थिति
विषयः सहि बुद्धानां तत् स्वाम्यमजमद्वयम् ८० । २०७
अजमनिद्रमस्वप्नं प्रभातम्भवति स्वयम् । सह
भातो ह्येवैष धर्म्मो धातुः स्वभावतः ८१ । २०८ ।

८० । २०७ ॥ हे सौम्य ! " निवृत्तस्याप्रवृत्तस्य निश्च
हि तदा स्थितिः, विषयः स हि बुद्धानां तत्स्वाम्यमजमद्वय
निवृत्त हुये अप्रवर्त्त भये की अचल ब्रह्मरूप स्थिति होती
जाते वह बुद्धिमानों का विषय है सो समभाव अज अद्वैत
अर्थात् यदि ऐसे (उक्तप्रकार) होय तदा द्वैतरूपविषयोंसे नि
हुये, अरु अन्य विषय बिषे अभावके ज्ञानसे अप्रवर्त्त हुये नि
(आत्मा) की चलन से रहित (अचल) स्वरूपही अद्वैत एक
विज्ञान घन ब्रह्मरूप स्थिति होती है । अर्थात् भेदवादियों क
कल्पित शास्त्रोंका जो द्वैत भावरूप विषय तिस द्वैतभाव
रूप विषयों से निवृत्त हुये, अरु अन्य शब्दादि विषयों
तिनको भ्रान्ति रूप होनेसे तिनके अभावदर्शक यथार्थ ज्ञान
तिनबिषे अप्रवर्त्त हुये चित्त ,कहिये आत्मा, की यह नि
स्वरूपही । अर्थात् स्वरूपसेही जैसी है तैसी । निश्चल
एकरस विज्ञानघन ब्रह्मरूप स्थितिहोती है । अरु जिस करके
मोक्षरूप आत्मा "दृश्यते त्वग्र्यया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शि
प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात् " इत्यादि श्रुतिप्रमाण से, परमार्थ
बुद्धिमानों का विषय है, एतदर्थ सो समभाव कहिये
निर्विशेष वस्तु अजन्मा अरु अद्वैत रूप है ८० । २०७ ॥

८१ । २०८ ॥ हे सौम्य! प्रश्न । पुनःभी यहसूक्ष्मदर्शी बुद्धि
पण्डितोंकाविषय ब्रह्मस्वरूपसे स्थितिरूप मोक्षकैसाहै, तहां
कहते हैं " अजमनिद्रमस्वप्नं प्रभातम्भवति स्वयम् " ८
निद्रासे रहितहै, स्वप्न रहितहै, अरु आपही प्रकाशरूप हो
अर्थात् सो समभाव अजन्माहै, अरु निद्रा अरु स्वप्नसे रहि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुखमाव्रियतेनित्यंदुःखंविव्रियतेसदा। यस्यकस्यच धर्म्मस्यग्रहेणभगवानसौ ८२।२०९॥

अरु आपही प्रकाशरूप होता है, अन्य सूर्य्यादिक प्रकाशवानोंकी अपेक्षावाला नहीं, अर्थात् ज्ञानरूप स्वप्रकाश स्वभाववाला है "तस्यभासा सर्वमिदं विभाति" अरु "सकृद्विभातोह्येवैष धर्मो धातुःस्वभावतः" ६ सर्वदा प्रकाशरूपही यह धर्म्म स्वभावसे धातु है ; अर्थात् सर्वदा प्रकाशरूपही यह इस लक्षणवाला आत्मनामक धर्म्म स्वभावसेही धातु कहिये सर्वका धारण करनेवालाहै वा धातु कहिये वस्तुके स्वभाव से युक्त प्रकार काहै ८१।२०८॥

८२। २०९॥ हे सौम्य! प्रश्न। इसप्रकार कथनकियाभी परमार्थतत्त्व लौकिक पुरुषों करके क्यों नहीं ग्रहण होता। तहां उत्तर कहते हैं "सुखमाव्रियतेनित्यंदुःखंविव्रियतेसदा, यस्यकस्यच धर्म्मस्य ग्रहणेभगवानसौ" ६ जिस किस भी धर्म्म के ग्रहणसे सुख सदा आच्छादित करतेहैं, दुःख सदा प्रकट करिये है यह भगवान् ; अर्थात् तिसकरके जिस किसभी द्वैतवस्तुरूप धर्म्म। कहिये पदार्थ, के ग्रहणके आग्रहसे। अर्थात् द्वैतरूप वस्तु कुछहै इस प्रकारके आग्रहसे। सुख जोहै सो सदा श्रमविनाही आच्छादन करते हैं। अर्थात् उक्त प्रकारके असत् द्वैतरूप वस्तुके आग्रहरूप आवरण करके सुख स्वरूप जो आत्माहै तिसको निरन्तर विना ही श्रमके आच्छादन करते हैं। अरुतिस सुखविषे। उक्त प्रकारका। आवरण जो है, सो अपनी निवृत्तिके अर्थ अद्वैतके ज्ञानके निमित्त। साधन। कोही इच्छताहै, अन्य प्रयत्नकी अपेक्षा करतानहीं। अरु दुःख जोहै सो सदा प्रकट करते हैं, क्योंकि परमार्थका ज्ञान अतिदुर्लभहै ताते। अर्थात् यावत् यह पुरुष अपने दुःखोंको आचार्यके समीप जाय प्रकट कहता नहीं अरु आचार्य उसको दुःखी देखता नहीं तावत् उसको दुःखकी समूल निवृत्तिके अर्थ तत्त्व ज्ञान उपदेश करता नहीं, अतएव तत्त्व ज्ञानको अति दुर्लभ जान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस्तिनास्त्यस्तिनास्तीति नास्तीतिनास्तिवाप्
चलस्थिरोभयाभावैरावृणोत्येवबालिशः ८३ । २१

के दुःखको सदा प्रकट करतेहैं। तिस हेतुसे यह भगवान्
सर्व करके पूजनेयोग्य' अद्वैतरूप आत्मदेव, वेदान्त शास्त्र आ
चार्यों करके अनेक प्रकारसे कथन कियाहुवा भी जाननेको
नहीं। क्योंकि "आश्चर्योऽस्यवक्ताकुशलोऽस्यलब्धा" इसआ
का कहनेवाला आश्चर्यरूपहै, अरु प्राप्तहोनेवाला कुशल है
श्रुतिकेप्रमाणसे आत्मदेवकावक्ता श्रोताआश्चर्यवत्है ८२।२

८३ । २१० ॥ हे सौम्य ! " अस्तिवानास्ति" है वा नहीं
इत्यादिक सूक्ष्मविषयवाले बुद्धिमान् पंडितोंके भी आग्रहसे
भगवान् परमात्माके आवरणहीहै तब मूढ़जनोंकी बुद्धिको
रणहै तिसमें क्या कथनहै, इस प्रकार के अर्थको देखाते
कहते हैं " अस्ति नास्त्यस्ति नास्तीति नास्तीति नास्तिवा
चलस्थिरोभयाभावैरावृणोत्येवबालिशः" है, नहीं है, है नहीं
नहींहै पुनःनहींहै,ऐसे। अरु सत् असत्भावजोहै सोस्थिर अ
रूप है ताते इन चल, स्थिर उभयरूप अरु अभावों करके वा
आवरण करतेही हैं; अर्थात् " आत्मा देहादिकों से भिन्नहै
प्रकार कोई एक वैशेषिकादि मतवादी जानते हैं। अरुआत्मा
दिकों से तो भिन्न है परन्तु बुद्धिसे भिन्ननहीं। इसप्रकार
क्षणिकवादी जानताहै। अरु आत्मा है भी अरु नहीं भी है,
प्रकार अन्य जो अर्द्धक्षणिकवादी सत्यअरु असत्यका कहने
दिगम्बर जानता मानता कहताहै। अरु आत्मा नहीं है पुनर्
है, इसप्रकार हठपूर्वक अत्यन्तशून्यवादी मानताहै [यहां
अर्थ है कि अनित्य घटादिकों से सुखादिआकार परिणाम
होने करके, विलक्षण होने से अस्ति भाव रूप जो यह प्र
कहा सो चल अरु सोपाधिक हुआ परिणामी है] तिनमें
भावजो है जो चल कहिये अस्थिर है। क्योंकि घटादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोट्यश्चतस्रएतास्तु ग्रहैर्य्यासां सदा वृतः। भगवानाभिरस्पृष्टो येन दृष्टः स सर्व्वदृक् ८४।२११॥

वस्तुवों करके विलक्षणहै ताते। अरु नास्तिभाव जो है सो स्थिर है क्योंकि सदा निर्विशेष निरुपाधि है ताते अरु सदसद्भावजो है सो ,स्थिर अरु अस्थिर, उभयरूप है। अरु स्थिर अस्थिर विषय हैं, सो अभाव है। तिन इन चल अरु स्थिर उभय रूप अरु अभाव करके सर्व भी सत् अरु असत् वादियोंका वादीरूप बालक कहिये अविवेकी भगवान् (प्रत्यगात्मा) को आच्छादन करताही है। अरु यद्यपि वो वादी पण्डितहै, तथापि परमार्थ तत्त्वके अबोधसे उक्तप्रकार के , बालकही हैं। तब जो स्वभावही से मूढ़ पुरुष हैं सो बालक कहिये परमार्थ तत्त्वके विवेक से शून्य होय इसमें क्या आश्चर्य है। इत्यभिप्रायः॥ तथाच " नायमात्माप्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन। यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुतेतनूंस्वाम् ८३।२ १०॥ ८४।२११॥ हे सौम्य!। प्रश्न। पुनः जिसके सम्यग्ज्ञान करके पुरुष, अबालक , कहिये विवेकी बुद्धिमान् पंडित, होते हैं ऐसा जो परमार्थ तत्त्व (प्रत्यगात्मा) सो कैसाहै, तहां , उत्तर , कहते हैं " कोट्यश्चतस्र एतास्तु ग्रहैर्य्यासां सदावृतः" ८जिन के आग्रह से सदा आवृत है, चारकोटियां हैं तिनकरके ; अर्थात् जिनकोटियों के प्राप्ति के निश्चयरूप ग्रहणों से (अर्थात् आग्रह , हठ , विशेषसे) आत्मा सदाआवृत ,कहियेढकाहुआ, है। अरु वे प्रसिद्ध " अस्तिनास्ति, इति " ८ है अरु नहीं है ? इत्यादिक प्रकारसे कथनकरीहुई वादियों करके कल्पितशास्त्रों के निर्णय से निरूपण करने योग्य चार कोटियां , कहिये पक्ष, हैं। अरु "भगवानाभिरस्पृष्टो येन दृष्टः स सर्व्वदृक् " ८ भगवान् स्पर्श रहित जिसने देखा है सो सर्वदृक् (द्रष्टा) होताहै ; अर्थात् तिन वादियों की इन " अस्तिनास्ति" इत्यादि चार कोटियोंसे (अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राप्य सर्व्वज्ञतांकृत्स्नां ब्राह्मण्यंपदमद्वयम् । अनाप
न्नादिमध्यान्तं किमतःपरमीहते ८५।२१२ ॥

, अस्ति , नास्ति, निर्विशेष, विशेष,इन चार कोटियोंसे जोभग-
वान् (प्रत्यगात्मा) स्पर्शरहित । अर्थात् , अस्ति, नास्ति, भा
वादिकोंसे रहित । है जिस । मुनि कहिये वेदान्तशास्त्र के मनन
बिषे कुशल पुरुष ने देखा (साक्षात् यथार्थ अनुभव किया
है सो उपनिषदों का वेत्ता पुरुष । अर्थात् मुख्यताकरके उपनि
दही वेदान्तहै । सर्वदृक् , कहियेसर्वज्ञ, परमार्थदर्शी बुद्धिमा
पंडित होताहै ॥ क्योंकि "मैत्रेय्यात्मनि खल्वरे दृष्टे श्रुतेमते वि
ज्ञाते इद ँ सर्व्वं विदितम् " इत्यादि श्रुतियों के प्रमाण से जो
सर्वाधिष्ठान प्रत्यगात्माको सम्यक्प्रकार जानता है सो पण्डि
सर्व्वज्ञ होता है । तिससे इतर सर्व मायिक सर्वज्ञता है, इसप्र
कार जानना ८४।२११ ॥

८५ । २१२ ॥ हे सौम्य ! " प्राप्य सर्व्वज्ञतां कृत्स्नांब्राह्मण्यं
पदमद्वयम्, अनापन्नादिमध्यान्तं किमतः परमीहते " ? (सम्यग्
सर्व्वज्ञताको पायके अद्वैत अरु आदि मध्य अन्तको प्राप्तहु
अरु ब्रह्म भावरूप पदको पायके इसके पश्चात् क्या चेष्टाकरत
है , कुछभी नहीं, ? अर्थात् सो ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण,इस उक्तप्र
की समस्त सर्वज्ञताको पायके अद्वैत, अरु 'आदि मध्य अन्त
हिये उत्पत्तिस्थिति अरु लय' इनको अप्राप्तहोयके,अरु "एषनित्य
महिमा ब्राह्मणस्य " ८ यह नित्य महिमा ब्राह्मणकाहै ? इसह
दारण्यकी श्रुतिप्रतिपादित ब्रह्मभावरूपपदको पायके इस सर्व
त्कृष्ट आत्मलाभके । कि " आत्मलाभान्नपरंविद्यते " इत्या
प्रमाणसे जिसलाभ से पर (श्रेष्ठ) अन्यलाभ विद्यमान नहीं
पश्चात् क्या निष्प्रयोजन चेष्टाकरता है, । अर्थात् साक्षात् आत्म
ज्ञान होने के पश्चात् सो विद्वान् क्या निष्प्रयोजन कर्म्मादि
में प्रवर्त्त होता है । किन्तु कदापि वृथा चेष्टा करता नहीं क्यों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विप्राणां विनयो ह्येष शमःप्राकृतउच्यते ॥ दमः प्रकृतिदान्तत्वादेवं विद्वाञ्च्छमं व्रजेत् ८६। २१३ ॥

"नैवतस्य कृतेनार्थं तस्यकार्य्यं न विद्यते" इत्यादि गीतास्मृति के प्रमाण से उसको कर्म्मों से कुछ भी अर्थ नहीं, ताते उसको कुछभी कर्त्तव्यता विद्यमान है नहीं। अर्थात् उक्त प्रकार के आत्मलाभी को कुछ भी कर्तव्य नहीं ८५। २१२ ॥

८६। २१३ ॥ हे सौम्य ! ["यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहोति" ८ यावत् जीवतारहे तावत् अग्निहोत्र को करे ? इत्याति श्रुतिको अविद्वान् को विषय करनेवाली होने से, विद्वान् (आत्मज्ञानी) को अग्निहोत्रादि कर्म कर्त्तव्य नहीं, इसप्रकार कहा] अब तिस विद्वान्को भी शमदमादिककी विधिसे कर्त्तव्य है, यह शङ्काकरके कहते हैं, । यहां यह अर्थ है कि ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण को यह विनय स्वाभाविक है, ताते सो श्रुतिकी आज्ञाके अधीन कर्त्तव्यताको सम्पादन करता नहीं अरु शमभी स्वाभाविक है ताते श्रुतिकी आज्ञासे करता नहीं। अरु दम भी स्वाभाविक होने से श्रुतिकी आज्ञाको इच्छता नहीं। अर्थात् शमदमादिक जो साधन है सो सम्यक् आत्मज्ञानकी प्राप्ति से पूर्व जिज्ञासावस्था में "शान्तो दान्त उपरतितितिक्षुसमाहितो भूत्वा" इत्यादि श्रुति आज्ञा प्रमाण कर्त्तव्य है अरु जब उन साधनों करके अन्तःकरण की शुद्धिद्वारासम्यक् ज्ञान होताहै,तब वह पूर्वकिये शमादिक साधन स्वभाव भूत होने से वह विद्वान् साधनप्रवर्त्तक श्रुति आज्ञाको इच्छता नहीं। इसप्रकार कूटस्थरूप आत्मस्वरूप का जानने वाला विद्वान् पुरुष सर्व विकार से रहित ब्रह्मस्वरूपसे स्थित होता है "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति"]"विप्राणांविनयोह्येषशमःप्राकृत उच्यते, दमः प्रकृतिदान्तत्वादेवं विद्वाञ्च्छमंव्रजेत्" ब्राह्मणों का विनयहै सोई स्वाभाविकशम कहतेहैं, अरु दमभी यहीहै स्वाभाविक दम होने से ऐसे विद्वान् शमको पावता है; अर्थात् ब्राह्मणों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सवस्तु सोपलम्भञ्च द्वयं लौकिकमिष्यते । अवस्तु सोपलम्भंच शुद्धंलौकिकमिष्यते ८७।२१४॥

(ब्रह्मवेत्ता)का जो यह स्वाभाविक आत्मस्वरूपसे स्थितिरूप विनय है, यह विनयहै । अरु यहही विनय स्वाभाविक शम कहते हैं। अरु दमभी यही है, क्योंकि स्वभावसे शान्तरूप होनेसे स्वाभाविक दमकरके युक्त है ताते । ऐसे उक्तप्रकारका स्वभावसे शान्त ब्रह्मका जाननेवाला विद्वान् ब्रह्मस्वरूप स्वाभाविक शान्तिरूप शमको पावताहै । अर्थात् सम्यक् आत्मवेत्ता विद्वान्की जो स्वरूप स्थिति है सोई शमदमादि हैं, क्योंकि आत्मास्वभावसेही शमदमादि रूपहै ताते, सो विद्वान् भी तैसाही है ८६ । २१३॥

८७ । २१४ ॥ हे सौम्य ! [इसप्रकारपरमतके निराकरण द्वारा आत्मतत्त्व निर्धार किया । अब अपनी प्रक्रियासे तीन अवस्थाके कथन द्वारा भी तिस आत्मतत्त्वका निर्द्धार करनेके प्रथम दोनों अवस्थाका कथन करते हैं] ऐसे (उक्तप्रकार) परस्पर विरुद्धहोनेसे संसारके कारण अरु रागद्वेषरूप दोषोंकेआश्रय वादियोंके सिद्धान्तहैं, एतदर्थ सो मिथ्याज्ञातरूपही है, इसप्रकार तिनकी युक्तियोंसेही देखायके, अरु उक्त चारकोटियोंसे रहित रागद्वेषादिकदोषोंका अनाश्रय स्वभावसेंही शान्त अद्वैत सिद्धान्तही सम्यक्ज्ञानहै, यह निर्णय यहांपर्य्यन्त समाप्तकिया । अब [यहांयह अर्थहै कि शिष्यकरके साधनेयोग्य जे आरोपदृष्टि तिसको आश्रय करकेजाग्रदादि पदार्थके शोधनपूर्वक जोबोधकाप्रकार सो अपर प्रक्रियाहै । ताते तिसही आत्मतत्त्वके लखानेके अर्थ (परायण शेषग्रन्थहै] अपनी प्रक्रियासे आत्मतत्त्व लखानेकेअर्थ अवशेषग्रंथका आरम्भहै, [जो प्रातिभासिक अरु व्यावहारिक रूप स्थूल पदार्थोंका समूह, सूर्य्यादि देवताके अनुग्रहकरके युक्त इन्द्रियोंकरके जानाजाय व जानते हैं सो जाग्रदवस्था है] सत् अरि स्थूल, वस्तु करके सहित जो वर्त्तमान होवे ऐसा जो व्यवहा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अवस्त्वनुपलम्भश्च लोकोत्तरमिति स्मृतम्। ज्ञानंज्ञेयञ्च विज्ञेयं सदा बुद्धैः प्रकीर्तितम् ८८। २१५॥

तिसको सवस्तु कहते हैं "। सवस्तु सोपलम्भश्च द्वयं लौकिक मिष्यते "। ' सवस्तु अरु सोपलम्भ रूप , शास्त्र , द्वैत लौकिक प्रसिद्धहै ' ; अर्थात् स्थूल वस्तुकरके वर्त्तमान होय ऐसा जो व्यवहार तिसको , सवस्तु , कहते हैं। अरु तैसेही उपलम्भ , कहिये प्रतीति तिसकरके साहित जो वर्त्तमानहोवे तिसको , सोपलम्भ , कहतेहैं। ऐसा जो सवस्तु अरु सोपलम्भ रूप शास्त्रादिक सर्व व्यवहारका विषय ग्राह्य अरु ग्राहकरूप द्वैत लौकिक । अर्थात् लोक विषे प्रसिद्ध जाग्रदवस्था । ऐसे लक्षणवाला जाग्रत् वेदान्तविषे अङ्गीकार कियाहै [बाह्य इन्द्रियनका किया जो व्यवहार, सो 'संवृत्ति, शब्दका अर्थ है। सो भी स्थूल पदार्थोंवत् स्वप्नविषे होते नहीं। तैसे होने से बाह्य इन्द्रियों के विलयहुये जाग्रत्की वासना से मनका तिन तिन पदार्थोंके आभास रूप आकार से भासना सो , स्वप्न , शब्दका अर्थ है]। अरु "। अवस्तुसोपलम्भश्च शुद्धं लौकिक मिष्यते "। ' अवस्तु अरु सोपलम्भ रूप शुद्ध लौकिक अंगीकार करते हैं ' ; अर्थात् स्थूल व्यवहार के भी अभावसे अवस्तु रूप, अरु प्रतीति सहित वस्तुवत् असत् वस्तु विषे भी प्रतीति होवे है। तिस प्रतीति करके सहित वर्तमानहै, एतदर्थ , सोपलम्भ , है। ऐसा अवस्तु अरु सोपलम्भ रूप शुद्ध । अर्थात् स्थूल जाग्रत्से केवल सूक्ष्म । लौकिक । अर्थात् सर्व प्राणियों को साधारण (सम) होने से लोक विषे प्रसिद्ध स्वप्न । है इसप्रकार अंगीकार करते हैं ८७। २१४॥

८८। २१५॥ हे सौम्य! "। अवस्त्वनुपलम्भश्च लोकोत्तर मितिस्मृतम "। ' अवस्तु अरु अनुपलंभ, लोकोत्तर है ऐसे जान्या है ' ; अर्थात् अवस्तु , कहिये स्थूल अरु सूक्ष्म वस्तु रूप विषयोंसे रहित, अरु अनुलम्भ , कहिये सर्व ज्ञानों से रहित, अर्थ यह जो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानेचत्रिविधेज्ञेये क्रमेण विदिते स्वयम् । सर्व्वज्ञ
ताहि सर्व्वत्र भवतीह महाधियः ८९ । २१६ ॥

ग्राह्य अरु ग्रहणसे जो रहितहै सो लोकोत्तर है । अर्थात् उक्त जा
ग्रत् अरु स्वप्न रूप लोकसे पीछे होनेवाली जो सुषुप्ति अवस्
तिसको लोकोत्तर कहते हैं । इसप्रकार जान्या है, अतएव ति
सुषुप्तिको लोकातीत कहते हैं । अरु जिस करके ग्राह्य अरु ग्रह
का विषयही लोकहै, तिसके अभावसे सर्व प्रवृत्तिका बीज सुषु
अवस्था है, इसप्रकार शास्त्रवेत्ता पुरुषोंको प्रसिद्ध है । अरु "ज्ञा
ज्ञेयञ्च विज्ञेयं सदा बुद्धैः प्रकीर्त्तितम्" (ज्ञान अरु ज्ञेय, अरु वि
ज्ञेय सदा बुद्धिमानोंने कहा है ; अर्थात् उपाय सहित परमा
तत्व लौकिक, शुद्ध लौकिक, अरु लोकोत्तर, इस क्रमकरके जि
ज्ञानसे जानिये है, सो ज्ञान उक्त इन तीन ज्ञेय रूपहै, क्योंकि
इस ज्ञानसे भिन्न ज्ञेयका असम्भवहै ताते । अरु सर्ववादियोंकर
कल्पित वस्तुके इन्हीं तीनोंविषे अन्तरभाव होनेसे, विशेषकर
जाननेयोग्य परमार्थ रूप सत्य एक तुरीयनामवाला अद्वैत अ
जन्मा आत्मतत्त्वही सदा परमार्थदर्शी ब्रह्मवेत्ता पण्डितों ने क
है " ज्ञेयंयत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते " इत्यादि गीतो
भगवद्वाक्य प्रमाणसे सर्व ब्रह्मवेत्ता पण्डितों ने अपने शि
मुमुक्षुओंप्रति विशेषकरके जानने योग्य वस्तु एक तुरीय ना
वाला आत्मतत्त्वही कहा है । अतएव सर्व जिज्ञासुओं को आत्म
ज्ञानार्थ पुरुषार्थ कर्त्तव्य योग्य है ८८ । ११५ ॥

८९ । २१६ ॥ हे सौम्य ! ["आत्मनिविज्ञाते सर्व्वमिदंविज्ञातंभ
वतीति" (आत्माके जानतेसंते सर्वयह जानाजाता है ? । इसप्रति
की जो प्रतिज्ञा है सो उक्तवस्तु (आत्मा) के ज्ञानहुयेही सिद्धहोत
है, इसप्रकार कहतेहैं] " ज्ञानेचत्रिविधेज्ञेये क्रमेणाविदितेस्वय
सर्व्वज्ञताहिसर्व्वत्र भवतीहमहाधियः " (ज्ञानविषे अरु तीनप्रका
रके ज्ञेयविषे क्रमकरके स्वयं (आत्माको) जानेहुये, महाबुद्धिमान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हेयज्ञेयाप्यपाक्यानि विज्ञेयान्यग्रयाणतः । तेषाम-न्यत्रविज्ञेयादुपलम्भस्त्रिषुस्मृतः ९०।२१७॥

पुरुषको इसलोक बिषे सर्वत्र सर्वज्ञताही होती है?। अर्थात् लौकिकादिक विषयवाले ज्ञानबिषे, अरु लौकिकादिक तीनप्रकारके ज्ञेयबिषे, तहां प्रथम लौकिक (जाग्रत्) स्थूलहै, तिसके अभाव हुये पश्चात् शुद्ध लौकिक (स्वप्न) है, तिसके अभावहुये पश्चात् लोकोत्तर (सुषुप्ति) है। इसप्रकारही क्रमकरके तीनों स्थानके अभावसे, परमार्थ सत्य तुरीय अज अद्वैत अभय आत्मतत्त्व के जानेहुये सर्वलोकसे अतिशय (अलौकिक) वस्तुको विषय करने वाली सूक्ष्म बुद्धिकरके युक्तहोने से, इसप्रकार जाननेवाला जो आत्मवेत्ता महाबुद्धिमान् पुरुषहै तिसको इस संसारबिषे सर्वदा आत्मस्वरूपभूतही सर्व्वज्ञता, कहिये सर्वरूप ज्ञानभाव, होती है, क्योंकि एकबारके जानेहुयेही स्वरूप बिषे व्यभिचारका अभाव है ताते,।(अर्थात् जैसे एकबारही सम्यक्प्रकार रज्जुके जानेहुये पुनः उसबिषे सर्प जलधारादि भ्रान्तिरूप व्यभिचार होता नहीं तैसे)। अरु जिसकरके अन्यवादियोंवत् परमार्थके ज्ञाता पुरुषको ज्ञानकेउद्भव अरु तिरस्कार होतानहीं, एतदर्थ, आत्मवेत्ता, विद्वान्को परिपूर्ण ज्ञानरूपता होवेहै ८९। २१६॥

९०।२१७॥ हेसौम्य! [तीन अवस्थाके ज्ञेयपनेके कथनसे तिन का परमार्थसे सद्भाव होवेगा,। यह शंकाकरके तिसका निषेध करते हैं] लौकिकादिकनके क्रमकरकेज्ञेयपनेके कथनसे परमार्थसे अस्ति भावकी शंका होतीहै,। सो युक्तनहीं, इसप्रकार कहतेहैं। त्यागने योग्य लौकिकादि, जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, यह तीन आत्मा बिषे असत्पने करके रज्जुबिषे सर्पवत् त्यागकरने योग्य (हेय) है। अरु यहां उक्त चार कोटियोंसे रहित जो परमार्थतत्त्व सोज्ञेय कहते हैं अरु बाह्य तीन एषणासे संन्यासीकरके प्राप्तहोने योग्य, पांडित्य, बाल्य, अरु मौन, इन नामवाले क्रमसे जे 'श्रवण, मनन, निदि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकृत्याकाशवज्ज्ञेयाः सर्व्वे धर्म्मा अनादयः
विद्यते नहि नानात्वं तेषां क्वचन किञ्चन ९१ । २१८

ध्यासन, रूप साधन सो प्राप्त करने योग्यहै । अरु राग द्वेष काम क्रोध मोहादि जो कषायनामवाले दोष हैं सो पकावने को योग्य होनेसे पाक्य हैं । [अर्थात् जैसे पाककिया अन्नादिक उदर विषे विकारकेहेतु वा अंकुरके उत्पादक होतेनहीं, तैसेही शमदम क्षमा आर्जवता आदिरूप अग्निकरके सम्यक् प्रकार से पाककिये उक्त कषायादि दोष सो विद्वान्केविषे आभासमात्र रहेहुये अपने अर्थरूप अंकुर वा फलके उत्पादक होतेनहीं । । ताते "हेयज्ञेयाप्य पाक्यानि विज्ञेयान्यत्रयाणतः । तेषामन्यत्रविज्ञेयादुपलम्भोऽस्मि स्मृतः" [हेयज्ञेय आप्य पाक्य उपायोंकरके जाननेयोग्यहै । तिन काज्ञेयसे अन्यत्र उपलंभ तीनठिकाने जान्या है ; अर्थात् उक्तरूप हेय (त्याज्य) ज्ञेय (जाननेयोग्य) आप्य (पावनेयोग्य) पाक्य (पकावनेयोग्य) जो हैं सो संन्यासियोंकरके उपायनसे जाननेके योग्य हैं । अरु प्रथमसे तिन हेयादिकोंका ज्ञेयते । [अर्थात् परमार्थसत्य एक ब्रह्मरूप ज्ञेयको छोड़िकै । अन्य ठिकाने जो अविद्याकी कल्पना नामात्र उपलंभ कहिये ज्ञान,है, सो , हेय, आप्य, अरु पाक्य, इन तीनबिषे भी ब्रह्मवेत्ता पुरुषोंने जान्या है । तिनके परमार्थ सत्य से नहीं ॥ इत्यर्थः ॥ ९० । २१७ ॥

९१ । २१८ हे सौम्य ! [जो पूर्व कहा , अस्तिआदि चार कोटियों से रहित जो ज्ञेय (जानने योग्य) है सो परमार्थ तत्त्व तिसको अब स्पष्ट करते हैं] " प्रकृत्याकाशवज्ज्ञेयाः सर्वे धर्म्मा अनादयः । विद्यते नहि नानात्वं तेषां क्वचन किञ्चन " [धर्म्म स्वभावसे आकाशवत् हैं अरु अनादि हैं अरु जानने योग्य हैं । तिनका नानात्व कहीं भी कुछ भी विद्यमान नहीं ; अर्थात् परमार्थ से तो सर्व धर्म्म 'कहिये आत्मा' स्वभावसे सूक्ष्मादि जने अरु सर्वगतपने बिषे आकाशवत् है " आकाशवत्सर्वगत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आदिबुद्धाः प्रकृत्यैव सर्व्वे धर्म्माः सुनिश्चिताः।
यस्यैवम्भवति क्षान्तिः सोऽमृतत्वायकल्पते ९२।२१९॥

स नित्यः" अरु अनादि 'कहिये व्यवधान से रहित नित्य हैं, इसप्रकार मुमुक्षुओं करके जानने योग्यहैं। अरु तिनका नानात्व कहीं भी (अर्थात् देशकाल अवस्थादिक किसीबिषे भी) कुछ भी (अर्थात् अणुमात्र भी) विद्यमान नहीं (अर्थात् एक अद्वैत परिपूर्ण आत्माबिषे एक अणुमात्र भी नानात्व नहीं॥ यह अर्थ है ९१। २१८॥

९२। २१९॥ हे सौम्य! अब आत्माख्यधर्म्मकी ज्ञेयताकहिये जाननेकी योग्यता, भी व्यावहारिकही है, पारमार्थिक नहीं, इस प्रकार कहतेहैं। "आदिबुद्धाः प्रकृत्यैवसर्व्वे धर्म्माः सुनिश्चिताः" (सर्व धर्म स्वभावसेही आदिबिषे बुद्ध निश्चित स्वरूपवालेहैं; अर्थात् सर्व धर्म, कहिये आत्मा, स्वभावसे ही आदिबिषे बुद्धहै, (अर्थात् जैसे नित्यप्रकाश स्वरूप है तैसेही नित्य बोध स्वरूप है अर्थात् नित्य निरन्तर बोधरूपही प्रकाशवाला है) अरु तिसका निश्चय अब करनेका है ऐसा नहीं, अरु ऐसा है, ऐसे भी नहीं इस प्रकारके संशय युक्त स्वरूपवाले नहीं, किन्तु नित्य निश्चित स्वरूप वालेहैं "यस्यैवम्भवति क्षान्तिः सोऽमृतत्वायकल्पते" (जिस को ऐसे शान्ति होती है सो अमृत भावके अर्थ समर्थ होता है; अर्थात् जिस करके सर्व धर्म्माख्य आत्मा बोध रूप निश्चित स्वरूपवाले हैं, ताते जिस मुमुक्षुको ऐसे उक्त प्रकार करके अपने अर्थ वा परके अर्थ सर्वदा बोधरूप निश्चय बिषे निरपेक्षतारूप शान्ति होती है (अर्थात् जैसे सूर्य्य अपने अर्थ अरु परके अर्थ अन्य प्रकाशकी अपेक्षा से रहित होता है, तैसे जिसको आत्मा बिषे सर्वदा बोध के कर्त्तव्यता की निरपेक्षारूप शान्ति होती है सो अमृतभाव, कहिये मोक्ष, के अर्थ समर्थ होता है॥ इत्यर्थः ९२। २१९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आदिशान्ताह्यनुत्पन्नाः प्रकृत्यैव सुनिर्वृताः । सर्वे
धर्माः समाभिन्ना अजं साम्यं विशारदम् ९३ । २२०
वैशारद्यन्तु वै नास्ति भेदे विचरतां सदा । भेदानु
न्नाः पृथग्वादास्तस्मात्ते कृपणाः स्मृताः ९४ । २२१

९३।२२० ॥ हे सौम्य ! [अब विद्वान् मुमुक्षुकी रुचिवृद्धि के अर्थ अविद्वान् की निन्दाको दिखावते हैं] तैसे (उक्त प्र के) आत्मा बिषे शान्ति की कर्त्तव्यता भी है नहीं, इस प्र कहते हैं "आदिशान्ताह्यनुत्पन्नाः प्रकृत्यैव सुनिर्वृताः । स धर्म्माः समाभिन्ना अजं साम्यं विशारदम्" ९ सर्व्व धर्म आदि शान्त अनुत्पन्न हैं अरु स्वभावसे ही सम्यक् सुखरूप हैं समान हैं अभिन्न हैं अरु जन्मरहित समभाव विशारदहैं; अ जिसकरके सर्व्व धर्म्म, कहिये आत्मा, आदिबिषे, कहिये नि ही शान्त हैं, अरु अनुत्पन्न, कहिये अजन्मा, हैं अरु समा अरु अभिन्न हैं । इसप्रकार जिसकरके जन्म रहित समा , कहिये आत्मतत्त्व, विशारद, कहिये विशुद्ध है, ताते शा वा मोक्ष कर्त्तव्य नहीं । अरु जिस करके नित्य एक स्वभाव आत्मा का कुछ भी किया हुआ होता है नहीं एतदर्थ आत्मा संसार दुःख की निवृत्ति वा सुख की उत्पत्ति क्रिया जन्य न किन्तु नित्यही सिद्ध है इत्यर्थः ९३ । २२० ॥

९४।२२१ ॥ हेसौम्य ! [ऐसे उक्तप्रकार, अविद्वान् नानात्व की निन्दाको दिखायके, अबविद्वान् की प्रशंसाको प्रसारितकरते जोपुरुष उक्तप्रकारके परमार्थतत्त्वके ज्ञाता हैं सोई लोकबिषे पण (ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण) हैं "एतदक्षरं गार्गि विदित्वा अ लोकात्प्रैति स ब्राह्मणः" । अरु तिन अकृपण से अन्य तो कृपण हैं, इसप्रकार कहते हैं "वैशारद्यन्तु वैनास्ति भेदे वि सदा, भेदानुन्नाः पृथग्वादास्तस्मात्ते कृपणाः स्मृताः" वादी भेदके अनुयायी हैं ताते तिनको कृपण जानते हैं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजे साम्ये तु ये केचिद्भविष्यन्ति सुनिश्चिताः।
तेहि लोके महाज्ञातास्तच्च लोको न गाहते ९५।२२२॥

सदा वर्त्तमानकी विशुद्धि है नहीं; अर्थात् जिसकरके, नानावस्तु है, इसप्रकार के कहनेवाले द्वैतवादी भेदके अनुयायी। अर्थात् संसारके अनुगामी। संसारके पीछेही चलनेवाले। हैं एतदर्थ तिनको कृपण तुच्छ जानते हैं वा जानने। अरु जिसकरके उन अविद्याकल्पित द्वैत मार्गरूप भेदबिषे सर्वदा वर्त्तमान पुरुषोंकी विशुद्धि नहीं है, तिसकरके उनका कृपणपना युक्तही है "एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वा अस्माल्लोकात्प्रैति स कृपणः" "मृत्योः स मृत्युमाप्नोति यइहनानेव पश्यति" इत्यभिप्रायः ९४। २२१॥

९५। २२२॥ हे सौम्य! जो यह परमार्थतत्त्व है सो अमहात्मा अपण्डित वेदान्त विचारसे बाह्यहुये तुच्छ अल्पज्ञ अविवेकी पुरुषों करके जाननेको अयोग्य है। अर्थात् उन भेदवादी अपण्डितों करके परमार्थतत्त्व (प्रत्यगात्मा) जानने के योग्य नहीं। इस प्रकार कहते हैं "अजे साम्ये तु ये केचिद्भविष्यन्ति सुनिश्चिताः। तेहि लोके महाज्ञातास्तच्चलोको न गाहते" ९ जो कोई एक अज समभावबिषे सम्यक् निश्चित होवेंगे, तब सोई महाज्ञानी है, अरु तिसको लोकविषय करता नहीं; अर्थात् जो कोई एक क्रियादिक भी अजन्मा समभाव, कहिये समपरमात्मतत्त्व, बिषे यह ऐसेही है, इसप्रकार जब सम्यक् निश्चयवाला होता है वा होवेंगे, तब सोई लोकबिषे महाज्ञानी। अर्थात् सर्वसे अधिक साक्षात् तत्त्वको विषय करनेवाले ज्ञानवान्। हैं। अर्थात् सोई विज्ञान पुरुष है। "ज्ञानीत्वात्मैवमेमतं" अरु तिस तिनके जानेहुये परमार्थ तत्त्वरूप मार्गको, अन्य सामान्य बुद्धिवाला लोक विषय करता नहीं, क्योंकि "सर्व्वभूतात्मभूतस्य सर्व्वभूत हितस्यच। देवामार्गेऽपि मुह्यन्तिह्यपदस्य पदैषिणः॥ शकुनीनामिवाकाशे गतिर्नैवोपलभ्यत, इत्यादि स्मरणात्" ८ सर्वभूतों के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजेष्वजमसंक्रान्तं धर्म्मेषु ज्ञानमिष्यते । यतो क्रमते ज्ञानमसंगं तेन कीर्त्तितम् ९६ । २२३ ॥

आत्मारूप अरु सर्वभूतों के हितरूप विद्वानके मार्गबिषे पद (चिह्न) को खोजतेहुये देवता भी मोहको पावते हैं । जैसे आ बिषे पक्षियोंकी वा जलबिषे मीनादिकोंकी गति (खोज वा चिह्न) देखते (पावते) नहीं ? तैसेही पावनेयोग्य पद से रहि पुरुष, परिपूर्ण ज्ञानवान् महात्मा की गति जाननेको शक्य (क्योंकि वो ज्ञानवान् आवागमन से रहित होनेसे गति (मा से रहितहै) ताते " गतिरत्रनास्ति " इत्यादिक श्रुतियोंके प्र णसे ९५ । २२२ ॥

९६ । २२३ ॥ हे सौम्य ! [" अजे साम्ये " ८ अजन्मा भावहै ? इसप्रकार जो पूर्व ९५ वें श्लोक बिषे कहा, सो प्रमे तिसको विषय करनेवाले निश्चयवाला प्रमाता है, अरु प्रकारका निश्चयरूप ज्ञान प्रमाण है । इसप्रकार वस्तुके च्छेद, कहिये भेद, के, हुये तिन ज्ञानीपुरुषका महाज्ञानवान् कैसे है । यह शङ्काकरके कहते हैं] । शङ्का । कैसे उनका महा नीपना है, । तहां, समाधान, कहते हैं " अजेष्वजमसंक्रान्तं र्म्मेषु ज्ञानमिष्यते । यतोनक्रमतेज्ञानमसंगंतेनकीर्त्तितम् " । जन्माधर्मोंबिषे अजन्मा ज्ञानहै न जाननेवाला अङ्गीकार करते जाते ज्ञान गमन करता नहीं ताते असंग कहा है ? अर्थात् ह करके सूर्य्य बिषे उष्णता अरु प्रकाशवत्, अजन्मा 'कहिये अ धर्म ' कहिये आत्मा ' बिषे अजन्मा ' कहिये अचल ' ज्ञान कार करते हैं, क्योंकि आत्मा ज्ञानस्वरूप है ताते अजन्मा ज्ञान अन्य अर्थबिषे न जाननेवाला अंगीकार कर अरु जिस करके ज्ञान अन्य अर्थ बिषे गमन करता नहीं, कारण करके सो आकाश के तुल्य असंग है ९६ । २२३ ॥

९७ । २२४ ॥ हे सौम्य ! [कूटस्थरूप ब्रह्मही तत्व है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अणुमात्रेऽपिवैधर्म्येजायमानोऽविपश्चितः । असङ्गता सदानास्तिकिमुतावरणच्युतिः ९७ । २२४ ॥

अलब्धावरणाःसर्वेधर्माःप्रकृतिनिर्मलाः । आदौबुद्धास्तथामुक्ताबुद्ध्यन्तइतिनायकाः ९८ । २२५ ॥

कार अपने [सिद्धान्ती] के मतबिषे ज्ञान असंग सिद्ध होताहै, इसप्रकार कहा। अरु मतान्तरबिषे पुनः अपने को विषय करने वालाहोने से ज्ञानका असंगपना असंगत होताहै, इसप्रकार कहते हैं] " अणुमात्रेऽपिवैधर्म्येजायमानोऽविपश्चितः । असङ्गता सदा नास्ति किमुतावरणच्युतिः " (अणुमात्र भी विरुद्ध धर्मवाले अरु उत्पन्न होनेवाले बिषे अविवेकी को सदा असंगभाव नहीं तब आवरण का नाश क्या कहना है ; अर्थात् याते अन्य वादियों के मतबिषे अणुमात्र ' कहिये अल्प रंचकमात्र, भी विरुद्ध धर्म्मवाले, अरु बाह्य वा अन्तर उत्पन्न होनेवाले वस्तु (पदार्थ) बिषे अविवेकी पुरुषको जब सदा (निरन्तर) असंगभाव नहीं है तब उनको बन्धरूप आवरणका नाश न होवे इसमें क्या कहना है, किन्तु कुछ भी नहीं ९७। २२४ ॥

९८।२२५॥ हे सौम्य ! [जो कोई ऐसा कहे कि तिन वादियोंको आवरणकानाश नहीं ऐसेकहनेवालेजो ' तुम सिद्धान्ती अनावरण वादी तिन, तुमने अपने सिद्धान्तबिषे आत्मारूप धर्म्मोंको आवरण अंगीकार किया, सो कथन बने नहीं, इसप्रकार कहते हैं " अलब्धावरणाःसर्व्वेधर्म्माःप्रकृतिनिर्मलाः " (सर्व्व धर्म्म आवरणको अप्राप्त हैं अरु स्वभाव से निर्मल हैं ; अर्थात् सर्व्व धर्म्म ' कहिये आत्मा ' [अर्थात् यहां आत्माको सर्व शब्दकरके जो बहुवचन है सो बुद्ध्यादिरूप उपाधिको लेके हैं ' घटाकाशवत् , ऐसे जानना, अरु निरुपाधि आत्मा तो एकही है महदाकाशवत् ' ऐसे जानना] अविद्यादिक बन्धनरूप आवरणको अप्राप्त ' कहिये बन्धन रहित, हैं। अरु स्वभावसे निर्मल ' कहिये सदा शुद्ध,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्रमते नहि बुद्धस्य ज्ञानं धर्मेषु तापिनः । सर्वे धर्मास्तथा ज्ञानं नैतद्बुद्धेन भाषितम् ९९ । २२६ ॥

हैं "शुद्धमपापविद्धम्" अरु "आदौबुद्धास्तथामुक्ताबुद्धस्य इतिनायकाः" "आदिबिषे बुद्धहै तैसे मुक्त है, ऐसे नायक नते हैं ऐसे कहते हैं ; अर्थात् जैसे धर्म्माख्य आत्मा आव रहित शुद्धहै तैसे, आदिबिषे कहिये नित्य, बुद्ध, कहिये बोध रूप, है। अरु तैसेही नित्य मुक्त है। जिसकरके नित्य शुद्ध मुक्त स्वभाववाले आत्मा हैं तातेही बन्धन रहित हैं, इसप्र पूर्वके "अलब्धावरणाः" इस पदसे सम्बन्ध है। अरु प्रश्न ऐसे हैं तब कैसे जानते हैं, तहां 'उत्तर' कहते हैं, जैसे प्रकाशरूप हुआ भी सूर्य्य प्रकाशता है, इसप्रकार कहते हैं थवा जैसे नित्य अचलहुये भी पर्व्वत नित्यही स्थित होतेहैं प्रकार कहते हैं। तैसेही ये आत्मा नायक अर्थात् जाननेको मर्थ होनेकरके स्वामी हुये भी अर्थात् बोधशक्ति युक्त स्व वाले हुये भी जानते हैं, इसप्रकार कहते हैं ९८ । २२५ ॥

९९ । २२६ ॥ हे सौम्य! "क्रमतेनहिबुद्धस्यज्ञानंधर्म्मेषुतापि सर्व्वेधर्म्मास्तथाज्ञानंनैतद्बुद्धेनभाषितम्" "संतापवाले पु नका ज्ञान धर्म्मोंबिषेजाता नहीं, अरुसर्वधर्म भी अरुज्ञान भी हैं ; अर्थात्, जिसकरके सन्तापवाले 'कहिये सूर्य्य के ताप आकाशकेतुल्य भेदसेरहित, वा पूजाकरनेयोग्य बुद्धिमान् पर र्थदर्शी पण्डितकाज्ञान अन्याविषयरूप धर्म्मोंबिषे जातानहीं, जैसे सूर्य्यबिषे प्रकाश अभिन्नरूपसे स्थितहै, तैसे आत्मरू बिषेही स्थित है, इसप्रकार अंगीकार करतेहैं। ताते आत्मा मुख्यपना होनेके योग्य है। अरु सर्व धर्म्म, कहिये आत्मा तैसेही है अर्थात् ज्ञानवत्ही आकाशकेतुल्य होनेकरके अन्य बिषे कोई भी जाते नहीं। अरु जो इस चतुर्थ प्रकरण के श्लोकबिषे "ज्ञानेनाकाशकल्पेन" ८ आकाशके तुल्य ज्ञा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इत्यादिक कथन करनेका आरंभ कियाथा, सो यह आकाश के तुल्य सन्तापवाले परमार्थदर्शी पण्डितोंका (ज्ञानआत्मासे) अभिन्न होनेकरके, आकाशके तुल्य ज्ञान अन्य किसीभी अर्थ बिषे जाता नहीं (अर्थात् जैसे आकाशकी अवकाशता आकाश से अभिन्न होने करके अन्य किसी बिषेभी जाता नहीं, तैसे परमार्थदर्शी विद्वान्का ज्ञान आत्मासे अभिन्न होनेकरके अन्य किसीभी अर्थ बिषे जातानहीं (तैसे धर्म्माख्य आत्मा है ॥ इसरीति से आकाशवत्, अचल, अक्रिय, निरवयव, नित्य, अद्वितीय, असंग, अदृश्य, अग्राह्य, क्षुधादिकों से रहित ब्रह्मरूप आत्मतत्त्वहै। क्योंकि "न-द्रष्टुर्दृष्टि विपरिलोपोविद्यते" । ८द्रष्टाकी दृष्टिका लोप विद्यमान है नहीं ? इस श्रुति के प्रमाणसे । अरु, ज्ञान, ज्ञेय, अरु ज्ञाता, इनके भेद से रहित परमार्थ तत्त्व अद्वैतहै (अर्थात् अद्वैत रूप आत्मतत्त्व से इतर ज्ञेय (जाननेयोग्य) वस्तुका अभावहै ताते जाननेरूप ज्ञानकाभी अभावहै अरु जब, ज्ञेय, ज्ञानका, अभाव है ताते आत्माबिषे ज्ञाताविशेषणका भी अभाव है, इस प्रकार विशेष विशेषण, अरु विशेष्यत्वके अभावसे एक अद्वैत निर्वाच्य परमार्थ तत्त्वही है (यह बुद्धने कहा नहीं। अरु यद्यपि बाह्यार्थका निषेध अरु ज्ञानमात्रकी कल्पनारूप अद्वैतवस्तु की समीपता कही है तथापि यह तो परमार्थ तत्त्वरूप अद्वैत वेदान्त बिषेही जानने के योग्य है ॥ इत्यर्थः ॥ ९९ । २२६ ॥

१००।२२७ ॥ हे सौम्य ! [चार प्रकरणोंकरके युक्तइस कारिकारूप शास्त्रकी आदिवत् अन्तबिषे भी परदेवतारूप तत्त्व को स्मरणकरते हुये तिसके नमस्काररूप मंगलाचरणको सम्पादन करते हैं] शास्त्रकी समाप्ति बिषे परमार्थ तत्त्वकी स्तुत्यर्थ नमस्कार कहते हैं "(दुर्दर्शमतिगम्भीरमजं साम्य विशारदम् । बुद्ध्वा पदमनानात्वं नमस्कुर्मोयथाबलम् ८ दुःखसे देखने योग्य अति गंभीर अजन्मा समभावरूप विशुद्ध नानाभाव से रहित पदको जानके यथाबल तथा नमस्कार करते हैं ; अर्थात् दुःखसे दर्शन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दुर्दर्शमतिगम्भीरमजंसाम्यंविशारदम् । बुद्ध्वा
मनानात्वंनमस्कुर्मोयथाबलम् १०० । २२७ ॥

इति गौडपादीयकारिकायामद्वैतशान्ताख्यं
चतुर्थप्रकरणम् ॥

इति श्रीगौडपादाचार्य कृत कारिका सहित
मांडूक्योपनिषद् समाप्तम् ॥

के योग्य, कहिये "अस्ति नास्ति" ८ है, नहीं है ? इत्यादि
कोटियोंसे । जो वादियों करके कल्पित सापेक्षक हैं। रहित
से अतिश्रम । सूक्ष्मबुद्धिकरने । से जानने योग्यहै, अरु एतद्
अति गंभीर, कहिये अल्पबुद्धिवाले पुरुषोंकरके महाद्
वत् दुःखसे प्रवेश करने के योग्य, अरु अजन्मा समभाव
विशुद्ध नानाभावसे रहित, ऐसे पदको जानके तिसरूपहुये
तिसपदके अर्थ, परमार्थ से व्यवहार करने के अयोग्यको
मायासे व्यवहारका विषय सम्पादनकरके । अर्थात् जो वा
करके सर्व व्यवहारातीत एक अद्वैत निर्वाच्य परमार्थ तत्त
तिस विषे नमस्कार करनेयोग्य अरु नमस्कार करनेवाला
नमस्काररूप क्रिया इनकी कल्पना करके । जैसी सामर्थ
तैसे नमस्कार, विधान, करते हैं १०० । २२७ ॥

इति श्री गौडपादाचार्य कृत कारिकाचतुर्थ
प्रकरण, भाषाभाष्य, समाप्तम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भाष्यकार श्रीशंकराचार्य्यकृत मंगलाचरणम् ॥

अजमपिजनियोगंप्रापदैश्वर्य्ययोगादगतिचगतिमत्ताम्प्रापदेकंह्यनेकम् । विविधविषयधर्म्मग्राहिमुग्धेक्षणानांप्रणतभयविहन्तृब्रह्मयत्तन्नतोस्मि १ ॥

१ ॥ हे सौम्य ! अबभाष्यकार श्रीशंकराचार्य भी भाष्यकी समाप्तिबिषे शास्त्रकरके प्रतिपादन किये पर देवताके स्वरूपको स्मरण करके तिसके नमस्काररूप मंगलाचरणको आचरण करते हैं ॥ " अजमपि जनियोगं प्रापदैश्वर्ययोगादगतिच गतिमत्ताम्प्रापदेकंह्यनेकम् । विविधविषयधर्म्मग्राहिमुग्धेक्षणानां प्रणतभयविहन्तृब्रह्मयत्तन्नतोस्मि " (जो जन्मसे रहितहुआ भी ऐश्वर्य के योगसे प्राप्तहोता हुआ, गतिसे रहित हुआ गतिमान् पने को प्राप्त होताहुआ अरु एकहुआ विविध प्रकारके विषयरूप धर्म्मों के ग्रहणकरनेवाले विवेकहीन दृष्टिवाले को अनेकवत् भासता है, अरु जो ब्रह्म प्रणतके भयको नाश करता है तिसके अर्थ मैं नमस्कार करता हौं ; अर्थात् जो ब्रह्म जन्मादिक सर्व (षड्भाव) विकार रहितहुआ भी ८ अर्थात् वास्तव से कूटस्थ सिद्ध है तथापि ७ सो अनिर्वचनीय अज्ञानके शक्तिरूप ऐश्वर्यके योगसे आकाशादि कार्य्यरूप करके जन्मके बन्धन को प्राप्त होताहुआ । अर्थात् प्राप्त होयके जगत्का उपादान कारण है, ऐसे व्यवहार का भागी होता है, इसप्रकार श्रुति अरु ब्रह्मसूत्र बिषे ब्रह्मको जगत् का कारणपना प्रसिद्ध है । अरु जो ब्रह्म, यद्यपि कूटस्थपने अरु व्यापकपने करके गमन से रहित हुआ स्थित होताहै, तथापि उक्तप्रकारके अज्ञानके माहात्म्यसे कार्य्य ब्रह्मरूपताको पायके गमनमानपने को प्राप्त होताहुआ । अरु जो ब्रह्म एक हुआ , अर्थात् वास्तव से सर्व नानाभावसे रहित एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रज्ञावैशाखवेधक्षुभितजलनिधेर्वेदनाम्नोऽन्तरस्थं
तान्यालोक्यमग्नान्यविरतजननग्राहघोरेसमुद्रे । का
ण्यादुद्धारामृतमिदममरैर्दुर्लभं भूतहेतोर्यस्तंपूज्याभि
ज्यं परमगुरुमुं पादपातैर्नतोऽस्मि २ ॥

रस अद्वैत है, इसप्रकार उपनिषदों करके जानाजाता है, तथा
अनादि अनिर्व्वचनीय अविद्या के वशते विविधप्रकार के वि
षयरूप धर्म्मों के ग्रहण करनेवाले होने करके विवेकरूप ने
से रहित पुरुषों को , जीव , जगत्, अरु ईश्वर, इन भेदों का
अनेकवत् भासताहै । अरु जो ब्रह्म आचार्यके उपदेशसे जनि
बुद्धिवृत्तिविषे फलरूपसे आरूढ़हुआ प्रणत , कहिये ब्रह्मनिष्ठ
वान् पुरुषों के , अविद्या अरु तिसके कार्य्यरूप भयका नाश
ताहै, तिस सर्व उपनिषदों बिषे प्रसिद्ध सर्व परिच्छेद (भेद)
रहित प्रत्यगात्मारूप ब्रह्मके अर्थ मैं नमस्कार करताहौं, अरु
तिसको विषयकरनेवाले भावको प्रकट करताहौं १ ॥

२ ॥ हे सौम्य ! अब ग्रन्थरचनाके प्रयोजनके देखावनेपूर्वक
व्याख्यान किये आगमरूप शास्त्रके कर्त्ता होनेरूपसे स्थित
परमगुरु को प्रणाम करते हैं " ! प्रज्ञावैशाखवेधक्षुभितजल
धेर्व्वेदनाम्नोऽन्तरस्थं भूतान्यालोक्यमग्नान्यविरतजननग्राह
रेसमुद्रे । कारुण्यादुद्धारामृतमिदममरैर्दुर्लभंभूतहेतोर्य
पूज्याभिपूज्यंपरमगुरुममुंपादपातैर्नतोऽस्मि " ? जो निरन्त
जन्मरूप ग्राहोंकरके भयंकर समुद्रबिषे परवश हुये भूतों
देखके करुणाभावसे बुद्धिरूप मंथनकाष्ठके डालने से विद्वत्ता
को प्राप्तहुये वेदनामक समुद्रके अन्तरस्थित अरु देवताओं
भी दुःखसे प्राप्तहोने योग्य इस अमृत को भूतनके हेतुसे उ
करता हुआ, तिस इस पूज्योंकरके भी पूजने को योग्य
गुरुको पादनबिषे पतनसे मैं नम्रहुआहौं ? अर्थात् जो जन्म
रूप ग्राहादि जलचरोंकरके भयंकर जो संसाररूप समुद्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्प्रज्ञालोकभाषा प्रतिहतिमगमत् स्वान्तमोहान्धकारो मज्जोन्मज्जच्चघोरेह्यसकृदुपजनोदन्वतित्रासनेमे । यत्पादावाश्रितानां श्रुतिशमविनयप्राप्तिरग्राह्यमोघा । तत्पादौ पावनीयौ भवभयविनुदौ सर्व्वभावैर्नमस्ये ३ ॥ इति ॥

विषे पर (कर्म्म) वशहुये प्राणियोंको देखके प्रकटहुई जो करुणा तिसकरके बुद्धरूपी मंथनकाष्ठ (रयि) के डालन से मंथनको प्राप्तहुये वेदनामक समुद्रके अन्तर स्थित अरु । " देवारत्रापि-विचिकित्सितंपुरानहि सुविज्ञेयमणुरेषधर्म्मः " इत्यादि प्रमाण से । देवताओं करकेभी दुःप्राप्य, इस ज्ञानरूप अमृतको प्राणियोंके हितार्थ उद्धारकरता । निकासता । हुआ, तिस इस पूज्योंकरके भी पूजनेयोग्य । अर्थात् श्रीशंकराचार्य्य करके पूजनेयोग्य उनके गुरु श्रीगोविन्दाचार्य, अरु तिनकरके पूजनेयोग्य उनकेगुरु श्रीगौडपादाचार्य, अतएवयहां भाष्यकार श्रीशंकराचार्य ने परमगुरु गौडपादाचार्य्यके अर्थ । पूज्योंकरके भी पूजने योग्य यह विशेषण दियाहै। परमगुरुको उनके चरणोंबिषे अपनेमस्तक के वारंवार नमनभावरूप पतन से । अर्थात् उनके चरणों में वारंवार अपने मस्तकको स्पर्श करावनेसे । मैं नम्रहुआहौं २ ॥

३ ॥ हे सौम्य ! पुनः अब अपने गुरुकी भक्तिके, विद्याकी प्राप्ति बिषे अन्तरंगपनेको अंगीकारकरके तिन गुरुकेपादपद्म युगलको प्रणाम करतेहैं "यत्प्रज्ञालोकभाषा प्रतिहतिमगमत् स्वान्तमोहान्धकारो मज्जोन्मज्जच्चघोरे ह्यसकृदुपजनोदन्वतित्रासनेमे । यत्पादावाश्रितानां श्रुतिशमविनयप्राप्तिरग्राह्यमोघा तत्पादौपावनीयौभवभयविनुदौसर्व्वभावैर्नमस्ये " । ६ जिनकी बुद्धिरूप प्रकाशकी प्रभासे मेरा अनेक जन्ममय घोर भयंकर समुद्रबिषे अनुद्भूत अरु उद्भूत अन्तःकरणबिषे मोहरूप अन्धकार नाशको प्राप्तहोताहुआ, तिनके उभय पादपद्मके अर्थ आश्रितहुये श्रव-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

णज्ञान शान्ति अरु विनयकी प्राप्ति होती है, अरुजाते सफल तातेश्रेष्ठ है, अरु पवित्र करनेवाले, संसार के किये भय नाश करने वाले, तिनके उभय पादपद्मोंके अर्थ सर्वके वसे नमस्कार करताहौं ? अर्थात् जिनकी बुद्धिरूप प्रकाश प्रभासे मेरा अनेकदेव तिर्यक्आदिक योनियोंबिषे नानाप्रका देहभेदके ग्रहणरूप जन्ममयघोर कहिये क्रूर, अरु भयंकर स बिषे कदाचित् कार्यरूपसे अनुद्भूतअरु कदाचित् कार्यरूपसेउ कहिये अनर्थकारी अन्तःकरणबिषे व्याकुलताके हेतु अविवेक कारण अनादि अज्ञानमय मोहरूप अन्धकार नाशहोताहै अरु जिन गुरुके उभय चरणोंकेताईं आश्रितहुये अन्य शिष्यों भी मनन अरु निदिध्यासन सहित श्रवणज्ञान अरु इन्द्रियों उपरतिरूप शान्ति अरु नम्रतारूप विनय (निरहंकारता) प्राप्तिहोतीहै । अरु जिसकरके उन श्रवणादिकोंकी प्राप्ति सफ है ताते श्रेष्ठहै सो होतीहै । अरुसर्व जगत् केभी पवित्रकरनेक अरु अपने सम्बन्धी सर्वजनो के संसार के किये भयको का सहित नाशकरनेवाले, तिन हमारेगुरुके युगलपाद पद्मोंके कायिक, वाचिक, मानसिक, इनसर्व के प्रकटभावसे नमस्क करताहौं ॥ नमस्कार करताहौं, नमस्कार करताहौं ३ ॥ ॐ मंगलम् ॥

इति श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य ब्रह्मानन्दसरस्व पूज्यपाद अति अल्पज्ञ, शिष्य यमुनाशंकर नागरब्राह्मण मांडूक्योपनिषद् संहितगौडपादीयकारिका, श्रीभगवत्पाद ष्यानुसार क्वचित् स्वकल्पित भाषाभाष्य समाप्तम् ॥

हरिः ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इक्षुहार प्रश्नोपनिषद् ॥

यह उपनिषद् अथर्व वेद संबंधित है-इसमें श्री आचार्य्य प्रतिकबंधी आदि कछुऋषियों को शिष्य पृथक् पृथक् प्रश्नकरना और श्रीपिप्पलाद जीको उ उनका देना जिनका तात्पर्य यह है कि सम्पूर्ण मार्गों से पृथक् होकर ब्रह्माराधन करना यहीपर शरीरका मुख्य कर्महै जिससे अन्तमें विषय विरा मोक्षभागी होता है ॥

मुण्डक उपनिषद् ॥

यह उपनिषद् अथर्ववेद संबंधित है—और स उपनिषदों में राजावत् होनेसे जिसप्रकार से कि शरी मस्तक है उसी प्रकार से यह श्रेष्ठ है और इसी मुण्डकनाम रक्खागया है—इसउपनिषद् में वादी के प्रश्नोत्तरसे ब्रह्मका निर्णय व जगदुत्पत्ति व प्रल दिका सम्भव अग्निहोत्रादि क्रियाओंका विधान व वर्णन कियागया है और देवभाषा में उत्तम तिल है जिससे सहज में अभिप्राय विदित होजाता है

कठवल्ली उपनिषद् ॥

इस उपनिषद्में गुरुशिष्यसंवादद्वारा श्रीवाज ईश्वर के पुत्र श्रीउद्दालक ऋषि ने जिसप्रकार से नामायज्ञकी और उसीयज्ञके दक्षिणामें ऋत्विजा को अपरिमित धन व गौओंको दानदिया और अपने परम प्रियपुत्र ज्ञानशिरोमणि श्रीनाचिकेता के अर्थ दानदिया और नचिकेता यमालयमें गया ने सावधान पूजन किया और परस्पर वार्त्तालाप सब वृत्त संक्षित मंत्रों में वर्णित है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुस्तकालय,

ॐ

मुण्डकउपनिषद्

भाषाटीकासहित ॥

जिसमें

बादी प्रतिबादी के प्रश्नोत्तर से ब्रह्मका निर्णय व जगदुत्पत्ति व प्रत्येक अन्नादि का संभव व अग्निहोत्रादि क्रियाओंका विधान मन्त्रोंद्वारा वर्णित है

जिसको

श्रीमान् सर्वैश्वर्य्यसम्पन्न श्रीमुन्शीनवलकिशोर (सी, आई, ई) ने बहुतसा धन व्ययकरके कोलाख्यनगर निवासी पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मणसे सरल देशभाषामें उल्थाकराय और स्वयंत्रालयमें मुद्रितकराय प्रकाशित किया ॥

तृतीयबार

लखनऊ

मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छपी
सन् १९०७ ई० ॥

इस पुस्तक का हक़ तसनीफ़ महफ़ूज़ है बहक़ इस छापेखाने के ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ
६

ॐ

एकमेवाद्वितीयम् ॥

अथर्ववेदीयमुण्डकउपनिषद्भाषाटीका प्रारभ्यते

हेसौम्य! सर्व उपनिषद्रूप प्रमाणोंके मध्य [राजावत्]यहउपनिषद् उत्तम होनेसे मस्तकहै। एतदर्थही इसको मुंडक उपनिषद् कहतेहैं। अरु इस उपनिषद्बिषे तीन मुंडकहैं अरु प्रत्येक मुंडक के दोदो खंडहैं। एतदर्थ इसके तीन मुंडक अरु छः खंडहैं ॥

चिह्न भावार्थमें ॥

"	" इस चिह्नान्तर मूलमन्त्रके वाक्य ॥
।	। इस चिह्नान्तर वाक्योंके अक्षरार्थ ॥
९	९ इस चिह्नान्तर अन्य श्रुतियोंके प्रमाण ॥
(	) इस चिह्नान्तर पर्य्याय वा शेष विशेष ॥
[	] इस चिह्नान्तर विशेषार्थ ॥ आनन्दगिरा

इस भाषाटीकामें जो दोषहोय सो सर्व क्षमाकरना ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्री १०८ ईश्वर मठ पुस्तकालय, मुमुक्षु भवन, अस्सी, काशी

ॐ तत्सत् ब्रह्मणे नमः ॥

ॐ अथर्व्ववेदीय मुण्डकोपनिषद् प्रारम्भः ॥

ॐ ब्रह्मा देवानांप्रथमःसम्बभूव विश्वस्यकर्त्ताभुवन स्यगोप्ता । सब्रह्मविद्यांसर्वविद्याप्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठ पुत्रायप्राह ॥ १ ॥

ॐ

अथर्व्ववेदीय मुंडक उपनिषद्की भाषाटीकाप्रारभ्यते ॥

प्रथम मुंडकगत प्रथमखंडकी भाषाटीका ॥

हेसौम्य! "ब्रह्मादेवानांप्रथमःसम्बभूव" 'ब्रह्मादेवताओंके म प्रथम होताभया' [ब्रह्मोपनिषद् अरुगर्भोपनिषद् आदि अथर्व्व वेदकेबहुतसे उपनिषद्हैं।तिनको शारीरक सूत्रके भाष्यबिषेअनु योगीहोनेकरके तिनका व्याख्यानकरनेको अनिच्छितहैताते। अ 'अदृश्यमग्राह्य' इत्यादि वाक्य से, अदृश्यताआदिक गुणरू धर्मके कथनसे, इत्यादिक अधिकरणसूत्रबिषे उपयोगीहोनेसे व्या ख्यानकरनेको इच्छितइसमुंडक उपनिषद्केआरंभकेपदरूप प्रती ककोयहां भाष्यकार ग्रहणकरतेहैं]इत्यादिरूपयहअथर्व्वणवेद मुंडक उपनिषद् है, सो व्याख्यान करनेको इच्छित है । [शंका ननु, यह उपनिषद् मंत्ररूपहै, अरु मंत्रोंको कर्मसम्बन्धी होनेक के प्रयोजनवान् पनाहै । अरु इन मंत्रों की योजनाके करनेवा प्रमाणकी अप्रतीति अरु तिनके सम्बन्धके असंभवसे निष्प्रयोज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होतेहैं एतदर्थ व्याख्यान करनेको इच्छितपना संभवता नहीं ॥ उ०॥ हे वादिन्! इस आशंकाका यह उत्तरहै कि इनमंत्रोंका कर्मसे सम्बन्धहीहै, यह तेराकथन सत्यहीहै, तथापि ब्रह्मविद्याके प्रकाश करनेकी सामर्थ्य से विद्यासे सम्बन्ध होयगा ॥ शङ्का ॥ ननु, विद्या को पुरुषकृत होनेसे तिसकी प्रकाशक इस उपनिषद्को भी पुरुष रचितपनेका प्रसंग प्राप्तही होताहै ताते पक्षपाती पुरुषके दोषसे जन्यता शङ्काकरके इस उपनिषद्की अप्रमाणता होनेसे व्याख्यान करनेको जो इच्छितपना सो बने नहीं॥स०॥ हे वादिन्! यहां यह अर्थहै कि, विद्या के सम्प्रदाय के प्रवर्त्तकही पुरुषहैं, परन्तु नवीन कल्पना से रचनेवाले पुरुष नहीं । अरु तिनको विद्याके सम्प्रदाय का कर्त्तापनाजोहै सोभी आधुनिक नहीं कि जिसकरके अविश्वास होय, किन्तु अनादि परम्परासे यह विद्याप्राप्तहै । एतदर्थ अनादिकालसे प्रसिद्ध ब्रह्मविद्याके प्रकाशने बिषे समर्थ जो उपनिषद् तिनकाजो पुरुषोंसे सम्बन्धहै सो सम्प्रदायके कर्त्तापनेकी परम्परा रूपहीहै । ताते उन पुरुषोंको विद्याके सम्प्रदायके कर्त्तापने रूपही सम्बन्धकोआदि बिषेही यह उपनिषद् कहता है] तहां आदिबिषे इस उपनिषद् के विद्या के सम्प्रदाय के कर्त्तापनेकी परम्परारूप सम्बन्धको 'ऐसेमहत् (बड़ेश्रेष्ठ) पुरुषोंने परम पुरुषार्थका साधन होनेकरके इसविद्याको बड़ेश्रमसे प्राप्तकियाहै, इस रीतिकीविद्या की स्तुत्यर्थ । अर्थात् [जैसे विद्याका पुरुषों से सम्बन्ध है तिसही प्रकार जब उपनिषद्का भी पुरुषकरके रचितपनेके निवारणार्थ पुरुषोंसे सम्बन्ध कहनेको इच्छितहोय,तब तिसप्रकारके सम्बन्धका कहनेवाला कोई अन्य चाहिये । अरु यहां आपही उपनिषद् करके अपनेही सम्बन्धके कहने से आत्माश्रय दोष प्राप्तहोता है ॥ यह शङ्का चित्तबिषे ल्यायके आचार्य कहतेहैं॥यहांयह अर्थहै कि विद्या की स्तुतिबिषे तात्पर्य से अपने सम्बन्धके कथनबिषे अपनीप्रवृत्ति रूप दोष नहीं] आपही यह उपनिषद् कहता है । अरु जिसकरके स्तुतिकर रुचिकी विषयभई विद्या तिसबिषे मुमुक्षु जनआदरपूर्वक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रवृत्त होतेहैं, एतदर्थ श्रोताकी बुद्धिविषे रुचिके उपजावनेके अ
विद्याको महान् कहतेहैं । अरु [विद्याका जो प्रयोजनहै सोई इ
उपनिषद्काभी प्रयोजन होगा इस अभिप्रायसे विद्याका प्रयो
से सम्बन्ध कहतेहैं] प्रयोजनके साथ विद्याके साधन साध्य
सम्बन्धको तौ ‘विद्यतेहृदयग्रन्थिश्छिद्यन्तेसर्वसंशयाः’ । हृदय
ग्रन्थिभेद (नाश) को पावर्ताहै अरु सर्वसंशय अपने छेदनको पा
तेहैं । इत्यादि इसही उपनिषद्के दूसरे मुंडकके दूसरेखंडकी आ
वीं श्रुतिवाक्यसे आगे कहैंगे । अरु यहां अर्थात् जब संसारके का
णकी निवृत्ति ब्रह्म विद्याका फलहै तब अपर विद्यासेही तिस
निवृत्तिका संभवहै ताते तिस संसारके कारणकी निवृत्तिरूप फ
के अर्थ ब्रह्मविद्याकी प्रकाशक उपनिषद् व्याख्यान करनेको यो
नहीं । यह शङ्का विचारके कहतेहैं यहां यह भावहै कि संसार
कारण अविद्या आदिक दोषहै, तिसका निवर्त्तकपना कर्मरूप अ
राविद्याको संभवता नहीं, क्योंकि कर्म अरु अविद्या आदिकोंक
परस्पर अविरोधहै ताते । अरु जिस करके अनेकनबार प्राणाया
को करनेवाले पुरुषकोभी शुक्ति (सीपी) के साक्षात् दर्श
विना रजत (रूपा) विषयक जो भ्रांतिरूप अविद्या तिस
निवृत्ति देखते नहीं [एतदर्थ अपर विद्याको संसारका कारण
अविद्या तिसका निवर्त्तकपना है नहीं] विधि निषेधमात्र विषे त
त्पर जो अपरशब्दकी वाच्य ऋग्वेदादिरूप विद्याहै, तिस विषेसं
सारके कारण अविद्या आदि दोषका निवर्त्तकपना नहींहै । एत
दर्थ ‘पराचैवापराच’ । परा अरु अपरा । [किंवा परमपुरुषार्थ
के साधन होने से ब्रह्मविद्याको पर विद्यापना है, अरु निकृ
संसाररूप फलवाली होनेसे कर्मविद्याको अपरविद्यापना है, तातें
नामके बलसे अपर विद्याको मोक्षकी साधनताका अभावहै, ऐसें
जानतेहैं । इस अभिप्राय से यहां कहतेहैं] इस प्रकार इस मुंड
उपनिषद्के चतुर्थमन्त्रकरके विद्याके भेदके कारणपूर्वक ‘अविद्या
यामन्तरे वर्त्तमानाः’ । अविद्याके भीतर वर्त्तमान इत्यादिरू

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रथम मुंडकके सोलहवें मन्त्ररूप वाक्यसे आपही कही। अरु [कर्मजड़ जो कहतेहैं कि केवल ब्रह्मविद्याको कर्मकी अंग भूत होनेसे स्वतंत्रतासे पुरुषार्थ (मोक्ष) का साधनपना नहीं है इस प्रकारका जो कथन सो पिछली श्रुतिनेही निषेधकिया है। इसप्रकार यहां कहतेहैं। यहां यहअर्थहै कि, ब्रह्मविद्याकोकर्मकी अंगरूप होनेसे इस श्रुतिबिषे कहीजो कर्मकी निंदा सो चाहिये नहीं। अरु जिसकरके अंगके विधानार्थ अंगीकी निंदानहीं करते हैं। अरु यहां तो सर्व साध्य अरु साधनकी निंदासे तिन विषयों बिषे वैराग्यके कथन पूर्वक परब्रह्मके प्राप्तिकी साधन ब्रह्मविद्या को श्रुतिकहे है। एतदर्थ ब्रह्मविद्याको आपहीमुख्य होनेसे तिसकी प्रकाशक उपनिषद्को कर्मकर्त्ताकी स्तुतिकी कारकता नहींहै] तैसे {परीक्ष्यलोकान् कर्मचितान्} लोकोंको कर्मरचित जानको यह इसही उपनिषद्के प्रथम मुंडकके द्वितीयखंडके ११ वें मन्त्रकरके सर्वसाधन अरु साध्यरूप विषयबिषे वैराग्यपूर्वक परब्रह्मकी प्राप्तिका साधन, अरु गुरुके [जब उपनिषद्को स्वतन्त्र ब्रह्मविद्याकी प्रकाशकता होय, तबतिनके अध्ययनकर्त्ता सर्वको ही ब्रह्मविद्या होनी चाहिये सो क्यों नहींहोतीहै, यहशंकाविचारके कहतेहैं। यहां यहभावहै कि, यद्यपिसर्वको गुरुके अनुग्रह आदिक संसारके अभावसे ब्रह्मविद्या नहींहोतीहै परन्तु उत्तमाधिकारीकोहोतीहै] अनुग्रहसेप्राप्तहोनेयोग्य जो ब्रह्मविद्याहै, तिसको कहतेहैं। अरु [शंका, ब्रह्मविद्याजबस्वतन्त्रहै तबप्रयोजनकीसाधन न होगी, क्योंकि सुखकी प्राप्ति अरु दुःखकी निवृत्ति इनदोनोंको प्रवृत्तकरके साध्यहोनेका निश्चयहै ताते॥ स०॥ तहांकहतेहैं। यहां यह अर्थहै कि स्मरणमात्र से विस्मरणभये सुवर्णकेलाभके होते सुखकेप्राप्तिकी सिद्धिहै ताते, अरु रज्जुस्वरूप के ज्ञानमात्रसे सर्प जन्यभय कम्पादिकदुःखकीनिवृत्तिकी सिद्धिहै ताते, सुखकी प्राप्ति अरु दुःखकीनिवृत्तिरूप प्रयोजनको नियमकरके प्रवृत्ति अरु निवृत्तिकरके साध्यपना नहीं है। एतदर्थ श्रुति, प्रतीतकिये विद्याका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रयोजन तिस प्रयोजनसे सम्बन्धको बारंबार कहती है। एवं तिस विद्याकी प्रकाशक उपनिषद्का व्याख्यान करनेकी योग्य का संभवहै] ‘ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति’ । ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मही होता। अरु ‘परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे’ । सर्वपर अमृतहुए मुक्त हैं। इत्यादि तृतीय मुंडकके वाक्यन से इस ब्रह्मविद्याके प्रयोज को बारंबार कहतेहैं। [एकदेशीके मतविषे जो कहतेहैं कि स्वाध्य (अपनी २ शाखाके सम्बन्धी वेदभाग) के अध्ययनके विधि जो अर्थ ज्ञानरूप फल तिसका तीन (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य)को अधिकारहै । एतदर्थ सर्व आश्रमोंके कर्म से समुच्चयको प्राप्त ब्रह्मविद्याही मोक्षकी साधकहै । तहां कहतेहैं । यहां यह अर्थहै सर्व सामग्रीके त्यागरूप संन्यास बिषे स्थित परब्रह्मकी विद्या मोक्षका साधनहै, इसप्रकार स्वयं वेदही देखावताहै । तिसतें संन्यासियोंको कर्म साधनके अभावसे कर्मका संभव नहीं। तिनके आश्रमका धर्मभी शम दमादिकोंसे वृद्धिको प्राप्तभई विद्याबिषे सम्यक् निष्ठावान्पनाही है । अरु तिन (संन्यासी शौच आचमनादिक कर्मभी वस्तुतःआश्रमका धर्मनहीं। वह सोकर्म लोकसंग्रहार्थ है ताते । अरु ‘न ज्ञानेन सदृशं पवित्र विद्यते’ । यहांज्ञानके तुल्यपवित्र (अन्य) नहींहै।इस गीताव के वाक्यसे, निरन्तर ज्ञानाभ्यास (आत्मानुसन्धान) मात्र अपावनता (अज्ञान) की निवृत्तिहै ताते अरु त्रिकाल स्नानादि विधिको अज्ञानी संन्यासीका विषयत्व है ताते । एतदर्थ कर्म निवृत्तिसेही ज्ञानअरु कर्मका समुच्चय बनेनहीं]यद्यपि ज्ञान बिषे सर्व आश्रमके पुरुषोंको अधिकारहै । तथापि संन्यासआ बिषे स्थित विद्याहीमोक्षका साधन है, कर्मसहित विद्या मोक्ष साधन नहीं । अरु यह ‘भैक्ष्यचर्य्यांचरन्तः’ । भिक्षाके भक्ष आचरतेहुये। प्रथममुंडक के दूसरेखंडके ११वेंमन्त्रमें, अरु ‘संन्या सयोगात्’ ।संन्यासयोगसे।तीसरेमुंडकके ६ठेमन्त्रमें।इत्यादि को स्वयं श्रुति कहतीहुई देखावेहै । अरु[इसकहनेके हेतुसेभी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सहित विद्यामोक्षका साधननहीं इसप्रकार कहतेहैं।यहां यहअर्थहै कि मैं अकर्त्ताब्रह्महीहौं,अरु कर्मकर्त्ताहौं यह स्पष्टव्याघात दोषहै] विद्या अरु कर्मके परस्पर विरोध कारणसे ब्रह्म आत्माकी एकताके ज्ञानके साथस्वप्नबिषे भी कर्म सम्पादन करनेको शक्य नहीं। अरु [उत्पन्नहुई विद्यावाला पुरुषभी जब ब्रह्म अरु आत्माकी एकताको भूलताहै,तब सिवाय कर्मके और क्याकरेगा,तातेज्ञान कर्मकासमुच्चयसंभवताहै, इसप्रकार कहनेको योग्य नहीं,सोई आचार्य कहते हैं]विद्याके कोईएककालबिषे अभावकेनिमित्तको अनियमितहोनेसे काल अरु कर्मसे संकोचका असंभव है। ननु, अङ्गिरा आदिक गृहस्थोंको विद्याके सम्प्रदायकी प्रवर्त्तकताके देखनेसे गृहस्थाश्रमके कर्मोंसे ज्ञानका समुच्चय, इस उक्त लिंगसे जानाजाताहै। यह शंका विचारके कहतेहैं। यहांयह भावहै कि युक्ति सहित लिंगको ही सूचकता के अंगीकार करनेसे अरु समुच्चयबिषे युक्तिकेअभावसे अरु उलटा विरोधके दर्शन से लिंगसे समुच्चयकी सिद्धिनहींहै। अरु सम्प्रदायके प्रवर्त्तक पुरुषोंको गृहस्थाश्रमके आभासमात्रपनेके अनुसंधानकर बारंबारबाधसे,अरु इस अर्थ बिषे "यस्यमेचास्ति सर्वत्र यस्यमेनास्तिकिञ्चन । मिथिलायांप्रदीप्तायां नमेकिञ्चनदह्यत इति"; [जिसमेरा सर्वत्र है अरु जिस मेरा कुछभी नहीं है मिथिलापुरीके दग्धभये मेरा कुछभी दग्धहोता नहीं। इसराजा जनकके उद्गार वा उद्धारको देखनेसे कर्माभास से समुच्चय नहीं होताहै। अरु तहां प्रेरक प्रमाणरूप श्रुतिभी नहीं देखतेहैं] जो पूर्व के गृहस्थोंबिषे ब्रह्मविद्याके सम्प्रदायका कर्त्तापना आदिक लिंगहै सोतो पूर्वस्थित विद्याको बाधकरनेको इच्छा करता है। अरु जब तम अरु प्रकाशका संभव अनेकन प्रकारसेभी एक ठेकाने करनेको शक्य नहीं, तब केवल लिंगों (चिह्नों) से एक ठेकाने करनेको शक्य न होय इसमें क्या कहनाहै, कुछभी नहीं। [अब सिद्ध करी जो इस उपनिषद् के व्याख्यान करनेकी योग्यता तिसको आचार्य समास करतेहैं] इस रीति से उक्त सम्बन्ध अरु प्रयोजन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाले इसमुंडक उपनिषद्का अल्पग्रंथरूप विवरण (संक्षेपसे
ख्यान) करनेका आरंभ करतेहैं । [इसग्रन्थविषे उपनिषद् शब्द
योजना कैसेहै इसशंकाके होनेसे ग्रंथको उपनिषद् शब्दकी
विद्यारूप अर्थवाला होनेसे ग्रंथविषे उपनिषद् शब्दकी यो
लक्षणासेहै इसप्रकार देखावनेके अर्थ विद्याको उपनिषद् शब्द
अर्थपना कहतेहैं] जो मुमुक्षुपुरुष इस उपनिषद्रूप ब्रह्मवि
को श्रद्धा भक्ति पूर्वक प्रवृत्तहुये परम प्रेमास्पद (परम प्रे
की विषय होनेकरके ग्रहणकरते हैं, तिनके गर्भवास जन्म
अरु रोग मरणादि क्लेशोंकेसमूहोंको शिथिल करेहैं । अर्थात्
यह अर्थ है कि अपरिपक्व ज्ञानसे दो वा तीन जन्मों करके
होनेका संभवहै ताते ब्रह्मविद्या क्लेशके समूहोंको शिथिल
ऐसे कहाहै] वा परब्रह्मको प्राप्तकरेहै । अरु अन्य अविद्याआदि
संसारके कारणको नाशकरे है, एतदर्थ इसको उपनिषद् क
हैं । अरु अब इसके मन्त्रोंका व्याख्यान करते हैं, ब्रह्मा जो
धर्म ज्ञान वैराग्य अरु ऐश्वर्य, इन चारगुणोंकरके अन्य स
उल्लंघके वर्त्ततेहै, एतदर्थ परिवृढ (सर्वसे बड़ा) है अरु इ
से महान्है ताते सो "ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव" । ब्रह्म
ताओंके मध्य प्रथम होताभया । ब्रह्मा द्योतनवान् (प्रकाश
इन्द्रादि देवताओंके मध्य गुणोंकरके प्रथम अर्थात् मुख्य
देवताओंके पूर्व हुआ स्वतन्त्र होनेकरके आपही प्रकट होता
जिसप्रकार धर्म अधर्म (पुण्यपाप) के वशते अन्य संसारी
उपजते हैं तैसे नहीं । "योसावतीन्द्रियग्राह्य इत्यादिस्मृतेः"
यह इन्द्रियनसे ग्राह्यवस्तुको उल्लंघके वर्त्ततेहै सूक्ष्महै, अव्यक्त
सनातनहै, सर्वभूतमयहै, अरु अचिन्त्य है सो यह आपही
होताभया । अर्थात् शुक्र शोणितके संयोग विना आविर्भावको
इस स्मृतिके प्रमाणसे ब्रह्मदेवका स्वतन्त्रपना जानाजाता
अरु पुनः सो ब्रह्मा कैसाहै "विश्वस्यकर्त्ता भुवनस्यगोप्ता"
श्वका उत्पन्न करनेवाला अरु भुवनका पालन करनेवाला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्व जगत्का उत्पन्नकरनेवाला है अरु उत्पन्न किये भुवनों का (जगत्का) पालन (रक्षा) करनेवाला है। यह जो विद्याके प्रवर्त्तक ब्रह्माका विशेषण है सो विद्याकी स्तुत्यर्थ है अरु "। सब्रह्म विद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठां "। सोई सर्व विद्या की प्रतिष्ठारूप ब्रह्म विद्या को। सोई प्रख्यात महान् भाववाला ब्रह्मा, ब्रह्मजो परमात्माअक्षर है तिसकी जो विद्या कि ६ येनाक्षरंपुरुषवेदसत्यं ६। जिसकरकेसत्य (अक्षर) पुरुष जानाजाताहै। जिस विद्याकरके अक्षरब्रह्मजानाजाता है, इसश्रुति उक्त विशेषणसे परमात्माको विषयकरनेवालीहै, एतदर्थब्रह्मविद्या कहतेहैं। अथवा सर्वकेअग्रज (प्रथमउत्पन्नहोनेवाले) ब्रह्माने अपने अनुभवसे कथन कियाहै, एतदर्थ इसको ब्रह्मविद्या कहते हैं। अरु सो सर्व विद्याके आविर्भाव प्रकट होने की हेतु है तिसकरके सर्व विद्याओंकी प्रतिष्ठा (आश्रय) है। [महा वाक्यसे उत्पन्नभई बुद्धिवृत्तिसे आविर्भाव (साक्षात्कार) को प्राप्तभया ब्रह्मही ब्रह्मविद्या है। अरु सोई ब्रह्म जिसकरके सर्वका प्रकाशक है तिसही करके सर्वविद्याकी प्रकाशक होनेकरके आश्रय करतेहैं, ऐसी जो ब्रह्मविद्या सो सर्व विद्याकी प्रतिष्ठा (आश्रय) है] अथवा सर्व विद्या करके जानने योग्य वस्तु जिस (विद्या) करके जानते हैं, अर्थात् जिस (विद्या) के उत्पन्नहुये सर्व विद्याकी समाप्ति होतीहै,। तथाच ६ येनाश्रुतं श्रुतं भवति अमतंमतमविज्ञातं विज्ञातमितिश्रुतेः ६। जिसकरके नहीं श्रवण किया वस्तु श्रवणकिया होता है। अरु, नहीं मनन किया वस्तु मनन किया होता है अरु नहीं विज्ञात (निश्चय) किया वस्तु विज्ञात (निश्चय) किया होता है, इस श्रुति के प्रमाणसे। एतदर्थ सो (ब्रह्मविद्याको) सर्व विद्याकी प्रतिष्ठा (अवधि) कहते हैं। तिस सर्व विद्याकी प्रतिष्ठारूप ब्रह्मविद्याको, ब्रह्माके अनेक सृष्टिके प्रकारों विषे एक सृष्टिके प्रकारके पूर्वमें अथर्व्वानाम ऋषि उत्पन्न कियाहै, एतदर्थ सो ब्रह्माका ज्येष्ठपुत्रहै, तिस "। अथर्व्वायज्येष्ठपुत्रायप्राह "। अथर्व्वानाम ज्येष्ठ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथर्व्वणेयांप्रवदेतब्रह्माऽथर्व्वातांपुरो वाचाङ्गिरेब्रह्म विद्याम् । सभारद्वाजायसत्यवाहायप्राह भारद्वाजोऽङ्गिरसेपरावराम् २ ॥

पुत्रके अर्थ कहता भया। अथर्वानामवाले अपने ज्येष्ठपुत्रके ताई (ब्रह्मा) कहता भया १ ॥ ॐ तत्सत् ॥

२ हे सौम्य! "अथर्वणेयांप्रवदेतब्रह्मा"। जिस को ब्रह्म अथर्वाऋषिके अर्थ कहताभया। जिस इस ब्रह्मविद्या को ब्रह्म अपने ज्येष्ठपुत्र अथर्व्वानामवाले ऋषिके अर्थ कहताभया। अरु "तांपुरोवाचांगिरेब्रह्मविद्याम्"। तिस ब्रह्मविद्याको पूर्व अङ्गिरा को कहताभया। तिस ब्रह्मासे पाईभई ब्रह्मविद्याकोही अथर्वा नामवाला ऋषिसर्व से पूर्व (पहिले) अङ्गिरानामवाले ऋषीश्वर के अर्थ कहताभया। अरु "सभारद्वाजायसत्यवाहायप्राह"। सो भारद्वाज गोत्रोत्पन्न सत्यवाहके अर्थ कहताभया। सो अङ्गिरा नामवाला ऋषीश्वर, भारद्वाजगोत्रवाले सत्यवाहनामवाले ऋषि के अर्थ कहताभया। अरु "भारद्वाजोऽङ्गिरसेपरावराम्"। भारद्वाजपरसे अवर करके प्राप्तभई विद्याको अङ्गिरसके अर्थ कहता भया। सो भारद्वाज गोत्रोत्पन्न सत्यवाहनामक ऋषि जो परब्रह्म से अवर (अश्रेष्ठ) ब्रह्माकरके प्राप्तभई है परावरा है। वा पर अर अपररूप सर्वविद्याके विषयबिषे व्याप्तहोनेकरके जिसको परावर कहते हैं। ऐसी तिस परावररूप विद्याको अङ्गिरसनामवाले अपने शिष्य वा पुत्रके अर्थ कहता भया २ ॥

३ हे सौम्य! "शौनकोहवैमहाशालोऽङ्गिरसंविधिवदुपसन्न पप्रच्छ"। बड़े घरवाला शौनकऋषि विधिवत् समीपआय हि श्यच स्पष्ट पूछता भया। महान् गृहस्थ (धन कुल विद्या स म्पन्न) ऐसा जो शुनक नाम ऋषि का पुत्र शौनक नामवाल ऋषि, सो भरद्वाज गोत्रवाले सत्यवाह नामवाले ऋषिके शिष्य अङ्गिरस नामवाले मुनीश्वर रूप आचार्य के ताईं विधिवत्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शौनकोहवैमहाशालोऽङ्गिरसंविधिवदुपसन्नःपप्रच्छ।
कस्मिन्नुभगवोविज्ञाते सर्वमिदंविज्ञातंभवतीति ३ ॥

अर्थात् शास्त्रानुसार समिधादि द्रव्य लेके, समीप प्राप्तहोय प्रश्न करता भया। यहां शौनक अरु अंगिरसके सम्बन्ध के पीछे विधिवत्, इस विशेषण को कहाहै, तिस करके पूर्वके ऋषियों के, आचार्य समीप जाय प्रश्न करने की विधिका अनियम है, ऐसा जानाजाता है। अथवा, विधिवत्, यह जो विशेषण है सो मध्यदीपकन्याय के प्रमाण है, अर्थात् [जैसे देहली के ऊपर धरा दीपक दोनोंओर प्रकाश करताहै, तैसेही मूल श्रुतिविषे अंगिरा शब्द अरु शिष्य का विशेषण रूप, उपसन्न, शब्द इन दोनों के मध्य जो, विधिवत्, शब्द है तिसका दोनों ओर सम्बन्ध है] अरु अस्मदादिकों बिषे भी आचार्य के समीप जायके प्रश्नकरने की विधिकी इष्टता है ॥ प्र० ॥ सो आचार्य के समीप जायके प्रश्नका करना क्याहै ॥ उ० ॥ शौनकउ० ॥ "कस्मिन्नुभगवो विज्ञातेसर्वमिदंविज्ञातंभवतीति" । हे भगवन्! किसके विशेष करके जाने हुये सर्व यह विशेष करके जानाजाता है। हे भगवन्! हे पूजा करने योग्य! किसके विशेष करके जाने हुये यह सर्व जानने योग्य वस्तु विशेष करके जानाजाता है यहां "एकस्मिन्ज्ञाते सर्वविद्भवतीति"; । एकके जानने से सर्व का जानने वाला होताहै। इसप्रकार शिष्ट पुरुषों के संवादको शौनक ऋषि पूर्व श्रवण करता भयाहै। ताते तिस एक वस्तु के विशेष रूपके जानने की इच्छा करता भया "कस्मिन्नुविज्ञाते"; । किसके जाने हुये। ऐसे तर्कको करताहुआ पूछताभया [उपादान कारण (जैसे घटका उपादान मृत्तिका)से कार्यकी पृथक् सत्ताका अभावहै,तिस करके उपादानके जानेहुये, तिसका कार्य तिस उपादान से भिन्न नहीं, इस प्रकार जानाजाता है, ऐसी लोकों बिषे सामान्य व्याप्ति है तिसके बलसे वो पूछता भया, ऐसे कहते हैं] अथवा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मैसहोवाच । द्वेविद्येवेदितव्यइतिहस्म यद्ब्रह्मवि
दोवदन्ति पराचैवापराच ४ ॥

लोकनकी सामान्यदृष्टि से जानकेही पूछता भया । जैसे लोक
बिषे समान जातिआदिक समस्त भेद जोहैसो समानजाति आ
दिककी एकताके ज्ञानसे लौकिक पुरुषोंकरके जाननेबिषे आवत
हैं । तैसेही सर्व जगत्के भेदका एक कारण कौनहै, कि जिस एक
के जानेहुयेसर्व जानाजाताहै, यहभी लौकिक जनोंकरके जानने
में आवता है । एतदर्थ सामान्य लोकोंकी दृष्टि से यहप्रश्न बनता
है । [अब प्रश्नके अक्षरोंकी असमीचीनताका आक्षेप करके समा
धान करते हैं । यहां यह अर्थ है कि, सो क्याहै इसप्रकार उच्चार
के किये अक्षरोंकी बाहुल्यतासे श्रम होता है, तिससे भयकरा
'कस्मिन्नु विज्ञाते' । किसके जानने से । इसप्रकार अक्षरोंकी सू
मताके लाघवसे यह प्रश्नहै] ननु जब अज्ञातबस्तुबिषे 'कस्मि
विज्ञाते' । किसके जानने से । यह प्रश्न अघटितहै, ताते प्रथम
सो क्याहै, ऐसा प्रश्नयुक्तहै, पश्चात् बस्तुके सद्भाव के सिद्ध
'कस्मिन्नु विज्ञाते' । किसके जानने से ऐसा प्रश्नहोताहै । जै
लोकबिषे पेटी (सन्दूक) आदिक आधारके सद्भावका प्रथम
होनेसे तब पश्चात् यह अमुकबस्तु किसबिषे रखने के योग्य
यह प्रश्न होताहै तैसे ॥ सो कथन बने नहीं । क्योंकि शिष्य अक्ष
की बाहुल्यता करके श्रम से भयको प्राप्तभया होताहै ताते
क्याहै कि जिसके जानने से सर्वका जाननेवाला होता है,
प्रश्न संभवेनहीं, किन्तु 'कस्मिन्नु विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भ
वीति' । किसके जानने से यहसर्व जानाजाताहै । इस प्रकार
प्रश्न संभवताहै ३ ॥

४ हे सौम्य ! "तस्मै सहोवाच" । तिसके अर्थ सो स्पष्ट कह
भया । तिस प्रश्नकर्त्ता शौनकऋषिके अर्थ सो अंगिरस ब्राह्मी
नामक मुनीश्वर आचार्य स्पष्ट कहताभया ॥ प्र० ॥ क्या कह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्रापरा ऋग्वेदोयजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदःशिक्षा कल्पोव्याकरणंनिरुक्तं छन्दोज्योतिषमिति । अथपराय यातदक्षरमधिगम्यते ५ ॥

भया ॥ उ० ॥ अङ्गिराउवाच "द्वेविद्ये वेदितव्य इतिहस्म यद्ब्रह्मविदो वदन्ति" । दोनोंविद्याजाननेयोग्यहैं ऐसेप्रसिद्ध ब्रह्मवेत्ता कहतेहैं। अर्थात् दोनोंविद्या जाननेयोग्य हैं, इसप्रकार प्रसिद्ध जो वेदार्थके जाननेवाले परमार्थदर्शी ब्रह्मवेत्ता सो कहते हैं ॥ प्र० ॥ कौन वे दोनों विद्याहैं ॥ उ० ॥ "पराचैवपराच" । पराअरुअपरा है। एक परा, अर्थात् परमार्थ विद्याहै । अरु दूसरी अपरा अर्थात् धर्म अरु अधर्म के साधन अरु तिनके फलको विषय करनेवाली विद्या है ॥ शङ्का ॥ ८कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति? । किसके जाननेसे सर्वका जाननेवाला होताहै। इसप्रकार शौनक मुनिने प्रश्नकिया है । तिसके उत्तर कहनेको योग्यहोते सन्ते भी अङ्गिरा मुनि ८द्वेविद्ये वेदितव्ये? । दोनों विद्या जानने योग्यहैं। इत्यादिरूप वाक्यों से न पूछेहुये अर्थको कहते हैं सो योग्य नहीं ॥ स० ॥ यहदोष बने नहीं, क्योंकि प्रतिउत्तरको क्रमकीअपेक्षावाला होनेसे। अरु जिसकरके अपरा विद्या जो है सो निषेध करनेयोग्य अविद्या है । ताते तिसके विषयको न जानने से कुछ तत्त्व (वस्तु तिसका विषय) न जानाहुआ होताहै। इसकरके प्रथम पूर्वपक्षको निषेध करकेही पश्चात् सिद्धान्त कहनेको योग्यहोता है। इस न्यायसे अङ्गिरामुनि प्रथम न पूछेहुये अर्थको कहतेहैं ४ ॥

५ हे सौम्य! पूर्व कही जो दोविद्या तिन दोनों में अपराविद्या कौनसी है तिसको श्रवणकरो "। तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षाकल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति" । तहां ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अरु अथर्ववेद, शिक्षा कल्प व्याकरण निरुक्त छन्द ज्योतिष, यहअपरा विद्या है। अर्थात् ऋग्यजु साम अथर्व यह चारवेद, अरु शिक्षा कल्प व्याकरण निरुक्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(वेदके नामोंका कोश) छन्द (पिङ्गल), अरु ज्योतिष, यह ६ अङ्गहैं। यहसर्व अपरा विद्याहै॥ अरु "अथ परायया तदक्षर गम्यते" ।अब जिसकरके अक्षर (ब्रह्म) प्राप्तहोताहै सो परा है। अब यह पराविद्या कहते हैं, जिस विद्याकरके सो अग्रिम मन्त्रसे कहनेको हैं विशेषण जिसके ऐसा अक्षर (ब्रह्म) प्राप्त है, [जिसकरके अविद्याकी निवृत्तिही परब्रह्मकी प्राप्ति कहा भिन्न अर्थ नहीं, ताते परब्रह्मकी प्राप्ति अरु अधिगम शब्दके का भेद नहीं] सो पराविद्याहै॥ ननु [षट् अङ्गसहित वेदोंको रविद्याकरके कहने से तिनसे भिन्नवेदसे बाहर होनेकरके ब्र द्याको पराविद्यापना नहीं सम्भवेहै, इसप्रकार वादी आक्षेप है। यहां यह अर्थ है कि विद्याको वेदसे बाहरपने के हुये, तिस वाले उपनिषदोंकोभी ऋग्वेदादिकों से बाहरपना अर्थात् बाह्यपना प्राप्तहोवेगा] ब्रह्मविद्या जब ऋग्वेदादिकोंसे बाह तब सो पराविद्या कैसे होवेगी। अरु मोक्षकी साधन कैसे हो अरु जिसकरके 'जो वेदसे बाह्य स्मृतियां हैं, अरु जो कुदृष्टियां हैं सो जिसकरके मरणको पायके नरक में स्थित वालीकहीगई हैं, एतदर्थ वे सर्व निष्फल हैं, इसप्रकार स्मृति कहाहै एतदर्थ कुदृष्टिरूपहोने से, अरु निष्फल होनेसे सो विद्या अनादरकरनेको योग्य होवेगी। अरु उपनिषदों को दादिकों से बाह्यपना सिद्धहोवेगा। अरु जब सो ब्रह्मविद्या दादिरूप हैं, तब 'अथपरा' 'अबपरा' इत्यादिरूप वाक्य तिसका ऋग्वेदादिकों से पृथक्करना व्यर्थहै। यह कथन बनेने [उपनिषदोंको वेदसे बाह्य होनेकरके विद्याका तिनसे भिन्न ना नहीं सम्भवता है, किन्तु यहां वस्तुको विषयकरनेवाले ज्ञानभी शब्दकेसमूहरूप वेदसे अधिकताके अभिप्रायसे विद्या भिन्नकरना है इस अभिप्राय से कहते हैं] क्योंकि यहां योग्य विषयके विज्ञानको पराविद्या शब्दसे कहनेको इष्ट ताते। अरु जिसकरके यहां उपनिषदों से जानने योग्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्तदद्दश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुः श्रोत्रंतदपाणि
पादम् । नित्यंविभुंसर्व्वगतंसुसूक्ष्मंतदव्ययंयद्भूतयोनिं
परिपश्यन्तिधीराः ६ ॥

ब्रह्म को विषयकरनेवाला विज्ञान पराविद्याहै, इसप्रकार मुख्यताकरके कहने को इच्छितहै। अरु उपनिषद् शब्दका समूह नहीं अरु वेद शब्दसे तौ सर्व ठिकाने शब्द समूह कहने को इच्छित है। अक्षर (ब्रह्म) को शब्दके समूह से जानने योग्य होनेसे भी गुरुके समीप जाने आदिक अन्य उपाय विना 'अरु वैराग्यरूप अन्य प्रयत्नविना अक्षरका विज्ञान संभवता नहीं। एतदर्थ ब्रह्म विद्याका पृथक् करना अरु यह परा विद्याहै, यह कथनबने है५॥

६ हे सौम्य ! जैसे विधिका विषय जो वाक्यार्थज्ञान तिसके कालसे अन्यकाल विषे कर्त्ता आदिक अनेक कारकोंकी समाप्ति के द्वारसे अग्निहोत्रादिरूप अनुष्ठान करने योग्य अर्थ है। तैसे यहां पराविद्या के विषयविषे नहीं। किन्तु यहां तो जाननेरूप अर्थ वाक्यार्थ ज्ञानके समकाल विषेही तिस अवधिको प्राप्तहोता है, क्योंकि केवलशब्दसे प्रकाशकिये अर्थके ज्ञानमात्रकीही निष्ठा से भिन्न अनुष्ठानका अभावहै ताते। एतदर्थ यहां अपराविद्याको षष्ठवाक्यसे लेके नवमवाक्यके पर्यन्त विशेषणों सहित अक्षरसे युक्तकरे हैं "यत्तदद्दृश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुः श्रोत्रं तदपाणि पादम्"। जो अदृश्यहै अग्राह्यहै अगोत्रहै अवर्ण है अचक्षु श्रोत्र है सो अपाणिपादहै। जो सो अदृश्यहै [यहां 'जो, 'सो, इनशब्दों से अग्रिम कहनेका वस्तु, बुद्धिविषे रखके सिद्धवत् स्मरणकरते हैं] अर्थात् सर्वज्ञानेन्द्रियोंका अविषयहै। अरु अग्राह्य है, अर्थात् कर्मेन्द्रियों का अविषय होने से ग्रहणकरने में आवता नहीं। अरु अगोत्रहै, अर्थात् गोत्रजो वंश तिससे रहितहै। अर्थ यह जो जिस करके सो अक्षर (ब्रह्म) वंशवालाहोय ऐसा तिसका कोई नहीं है। अरु जो वर्णन करते हैं ऐसे जो स्थूलपने आदिक वा शुक्लपने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आदिक गुणवान् वस्तुरूप शरीरादिक द्रव्यके धर्म हैं, सो
कहते हैं । सो वर्ण जिसको अविद्यमानहै, ऐसा जिसकरके
है तिसकरके सो ८अवर्ण है? । अरु चक्षु अरु श्रोत्र जो हैं सो
जीवोंका वस्तुओं के नाम अरु रूप विषयके ग्रहण विषे सा
(करण) हैं ८ सो चक्षु अरु श्रोत्र जिसको विद्यमान नहीं,
जिसकरके अक्षर (ब्रह्म) है तिसकरके सो ८अचक्षुःश्रोत्रं?
अरु श्रोत्र से रहितहैं) है । [अप्राप्तके निषेध के प्रसंग से
अक्षर शब्दको प्रधान (प्रकृति) रूप अर्थकी परताहै, इसक
शंकाकरने को योग्य नहीं है यह मानके कहते हैं] ८यःसर्वज्ञ
वित्? । जो सर्वज्ञहै अरु सर्ववित् है । इत्यादिरूप इसही
के नवम मन्त्रबिषे चेतनवान्पनेरूप विशेषणकरके ब्रह्मको सं
जीवोंवत् चक्षु अरु श्रोत्रादिक साधनों से विषयोंकी साक्ष
प्राप्तभई, सो यहां ८अचक्षुःश्रोत्रं? । अचक्षुः श्रोत्र । इन
णों से निवारण करते हैं । क्योंकि ८पश्यत्यचक्षुः सशृणोत्यक
। सो (परमात्मा) चक्षुरहितहुआ देखताहै अरु कर्ण रहित
सुनताहै । इत्यादि विशेषणों को देखते हैं ताते । अरु ८सो
(ब्रह्म) ८अपाणि पादहै? अर्थात् कर्मेन्द्रियों करके रहितहै
करके इसप्रकार अग्राह्य अरु अग्राहकरूपहै तिसहीकरके
विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मम्" । । नित्यहै विभुहै सर्वगतहै अरु
शय सूक्ष्म है ८सो? नित्य है, अर्थात् अविनाशी है । अरु ब्र
आदिलेके स्थावर पर्यन्त प्राणियों के भेदरूप विविध प्रक
होतेहैं ताते ८विभुहै? । अरु ८सर्वगतहै? अर्थात् आकाशवत्
व्यापकहै । अरु (आकाशसेभी) अतिशय सूक्ष्महै, क्योंकि
दिक स्थूलभावके कारणों से रहितहै ताते । अरु शब्दादि
सो आकाश अरु वायु आदिकों के उत्तरोत्तर स्थूलभावके
हैं, तिनके अभावसे सो अतिशय सूक्ष्महै अरु " तदव्ययं
योनिम्परिपश्यन्ति धीराः" । । सो अव्ययहै भूतयोनि है,
धीर, सर्वओरसे देखते हैं । 'सो, अव्यय है, अर्थात् उ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथोर्णनाभिःसृजतेगृह्णातेचयथा पृथिव्यामोषधयः सम्भवन्ति । यथासतःपुरुषात्केशलोमानितथाऽक्षरात् सम्भवतीहविश्वम् ७ ॥

वाला होनेसेही सो घटने बढ़ने रूप व्ययको पावता नहीं, ताते अव्यय है, अरु जिसकरके अङ्ग रहित ब्रह्मको शरीरवत् अङ्गोंके घटने रूप व्ययका होना सम्भवता नहीं । अथवा राजाओं के भण्डारवत् धनके भण्डारके घटने रूप व्ययभी सम्भवता नहीं । अरु गुण (बुद्धिरूप) द्वारवाला व्ययभी सम्भवता नहीं, क्योंकि गुणसे रहित है ताते । अरु सर्वका आत्माहै ताते, एतदर्थ अव्यय है अरु सो पृथिवीवत् स्थावर जङ्गमरूप भूतोंका कारणहै, एतदर्थ भूतयोनिहै । जिस ऐसे लक्षणवाले अक्षर (ब्रह्म) को धीर जो विवेकी पुरुष हैं सो सर्व ओरसे सर्वका आत्मारूप देखते हैं ॥ इसप्रकार अक्षर (ब्रह्म) जिस विद्यासे प्राप्तहोता है तिस विद्या को पराविद्या कहते हैं । यह पदों में समुदाय रूप वाक्यार्थ है ॥ इति सिद्धम् ६ ॥

७ हे सौम्य ! अबहीं छठे मन्त्रकरके ‘ यद्भूतयोनिं ’ (जो भूतयोनिरूप) अर्थात् सर्वका कारणरूप अक्षर (ब्रह्म) है । इस प्रकार कहाहै, तहां अक्षर (ब्रह्म) का भूतयोनि (सर्वका कारण) पना कैसे है, इस अर्थको लौकिक प्रसिद्ध दृष्टांतों पूर्वक कहतेहैं । “ यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णातेच ” (जैसे ऊर्णनाभि (मकड़ी) सृजता है पुनः ग्रहण करताहै (जैसे लोकविषे प्रसिद्ध ऊर्णनाभि (मकड़ी आदिक) नामवाला कोई एक कीट (कीड़ा) है, सो अन्य किसीभी कारण (निमित्त) की अपेक्षा न करके आपही अपने शरीरसे अभिन्न तन्तुओंको सृजता है, अर्थात् बाहरको प्रसारित करताहै पुनः तिन प्रसरित किये तन्तुओंको ग्रहणकरता है, अर्थात् तिन तन्तुओंको अपने आत्मभावके ताईं प्राप्तकरताहै अरु [ब्रह्मजगत्का उपादान नहीं है तिससे अभिन्न है ताते,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तपसाचीयतेब्रह्म ततोऽन्नमभिजायते । अन्नात्प्रा
मनःसत्यं लोकाःकर्मसुचामृतम् ८ ॥

स्वरूपवत् । इस अन्यरीतिके अनुमानका व्यभिचारीपना पृथि
के दृष्टान्तसे कहते हैं] "। यथा पृथिव्यामोषधयः सम्भवन्ति
। जैसे पृथिवी बिषे ओषधियां उपजती हैं । जैसे लोकमें पृथि
बिषे तंडुल (धान्य) आदिलेके वृक्षादिरूप स्थावर पर्यन्त जो
ओषधियां हैं, सो स्वरूप से अभिन्नही उत्पन्न होती हैं ।
[जगत् जो है सो ब्रह्मरूप उपादानवाला नहीं, क्योंकि वि
विलक्षण है ताते, अरु जो जिससे विलक्षण होता है सो तिस
पादानवाला होता नहीं । जैसे घट जो है सो तन्तुरूप उपा
वाला होता नहीं तैसे इस अनुमानकाभी पुरुष (शरीर) के स
न्धी केश लोमादिकों के दृष्टान्त से व्यभिचार कहते हैं]
सतः पुरुषात् केश लोमानि "। । जैसे जीवते पुरुषसे केश रो
त्पन्न होतेहैं। जिसप्रकार विद्यमान अर्थात् जीवतेहुये पुरुष
से केशरोम अरु नख यह विलक्षण उत्पन्नहोतेहैं ॥ हे सौम्य!
प्रकार ये सर्व दृष्टान्तहैं । "। तथाऽक्षरात् सम्भवतीह विश्वम्"
अक्षरसे इसबिषे विश्व उत्पन्न होताहै। तिसहीप्रकार अन्य
त्तकी अपेक्षासे रहित छठे मन्त्रकरके कहे प्रमाण लक्षणवाले
र (ब्रह्म) से इस संसारमण्डलबिषे विपरीत लक्षणवाला
समान लक्षण सम्पूर्ण विश्व (जगत्) उत्पन्न होता है ।
एकही दृष्टान्तबिषे उक्ततीनों अनुमानोंका व्यभिचारीपना
लावनेको शक्य है इसप्रकारकी शङ्का करनेवालेप्रति कहते
यहां अनेक दृष्टान्तोंका जोग्रहण है सो सुखपूर्वक भलीप्र
जिज्ञासुप्रति अर्थके समुझावने के अर्थ है । अरु ब्रह्मसे उ
भया जो विश्व (जगत्) है सो इसही क्रमसे उत्पन्न होता
बदरीफलकी मुष्टीके फेंकनेवत् नहीं, यह भाव है ॥ ७ ॥

हे सौम्य ! अब सृष्टिके क्रमके नियमकेकहनेकी इच्छासे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाला इस अष्टम मन्त्रका आरंभ करते हैं "। तपसा चीयतेब्रह्म ततोऽन्नमभिजायते "। । ब्रह्म तपसे स्थूलताको पावता है, तिस ब्रह्मसे अन्न होताहै। उत्पत्तिकी विधिका ज्ञाताहोनेकरके भूतयोनि अक्षररूपजो ब्रह्म सो ज्ञानरूप तपसे सृष्टिकी अनुकूलतारूपस्थूलताको पावता है, अर्थात् जलकणके पूर्णहुये क्षेत्रबिषे अंकुरकेताईं उत्पन्न कराने को तैयारभये बीजवत्, अरु पुत्रकेताईं उत्पन्नकरने को इच्छा करते हुये पितावत्, इस जगत्के ताईं उत्पन्न करनेको इच्छा करताहुआ अक्षररूप ब्रह्म हर्षसे पुष्टता (स्थूलता) को पावताहै। इसप्रकार सर्वज्ञपनेसे जगत्की उत्पत्ति स्थिति संहारकी शक्तिके ज्ञानवाला होनेकरके पुष्टताको प्राप्तभये तिस ब्रह्मसे यह भोगते हैं (आवरणादि रूपसे अनुभव करतेहैं) इसप्रकारका, अथवा अन्नवत् सर्वके अर्थ साधारण होनेवाला, ऐसा जो संसारीजीवों का साधारण अव्याकृतिरूप अन्न, सो उपजावने की इच्छायुक्त प्रधान अवस्थारूप से उत्पन्न होताहै। अरु "। अन्नात्प्राणो मनः सत्यं लोकाःकर्मसुचामृतम् "। । तिस अन्न से प्राण मन सत्य सर्वलोक कर्मोंबिषे अमृत (होताहै)। तिस जगत् के सृजने की, अर्थात् [शुद्ध ब्रह्मको ईश्वरपनेका उपाधि रूप जो मायातत्त्व सो महाभूतादि रूपसे सर्व जीवोंकरके देखते हैं, एतदर्थ साधारण है। तथापि सो अनादि सिद्ध होने करके कैसे उत्पन्न होता है, यह शंका चित्तबिषे ल्यायके कहते हैं। यहां यह रहस्य है कि कोई एक कहते हैं कि, कर्म के संस्काररूप अपूर्वके समवाय (मिलाप) रूप सम्बन्धवाला सूक्ष्मभूत अव्याकृतहै। सो कहना बने नहीं। क्योंकि तिसको जीव जीवके प्रति भिन्न २ होने से ईश्वरपने की उपाधि होनेका असंभव है ताते। अरु सामान्यरूपसे संभवहुयेभी पृथिवी आदिक सामान्य रूपोंकी बाहुल्यता करके प्रकृतिबिषे एकताकी श्रुतिके विरोधकी प्राप्तिहै ताते। अरु जड़ महामायारूपसेही संभवहुयेभी तिसको कर्म के अपूर्व के समवाय करके युक्तपना न होवेगा। क्योंकि तिस महामायाको अकारकरूपहोनेसे अरुबुद्धि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आदिकों काही कारक (कर्त्ता) पनेका कथनहै तातें। अरु कार
अवयवों बिषेही क्रियाके समवायसम्बन्धकाअंगीकारहै तातें
कार्यको अपने कारणका उपादानपना नहीं देखा है । एतदर्थ
को तंतुके उपादानतावत्, अपञ्चीकृत भूतोंकी समष्टिरूप सू
भूतोंको अपने कारण अपञ्चीकृत पंच महाभूतोंका उपादान
न होवेगा। एतदर्थ महाभूतोंकी उत्पत्तिआदि संस्कारका आ
जो तीनगुणकी साम्य (ऐक्य) अवस्थारूप जो मायातत्त्व है
यहां अव्याकृतादि शब्दोंका वाच्य अङ्गीकार करनेको योग्य
इच्छायुक्त अवस्थावाले अव्याकृत (माया) रूप अन्न से, ब्रह्म
अर्थात् [पूर्व कल्पबिषे हिरण्यगर्भ भावकी प्राप्ति के निमित्त
उपासना अरु कर्म जिसने अनुष्ठान किया है, तिसके अनुग्र
माया उपाधिवाला ब्रह्म हिरण्यगर्भ अवस्थाके आकारसे होता
अरु तिस अवस्थाका अभिमानी सोकर्म अरु उपासनाका क
जीव हिरण्यगर्भ करके कहते हैं, इस अभिप्राय से यहां प्रतिपा
करते हैं] ज्ञानशक्ति अरु क्रियाशक्ति करके युक्त व्यष्टिरूप जी
का साधारण समष्टिरूप सूत्रात्मा नामवाला] अविद्या काम
अरु भूतों के समुदायरूप बीजका अंकुर जगत्का आत्मा, हिर
गर्भरूप प्राण उत्पन्न होताभया । अरु तिस हिरण्यगर्भरूप प्र
से संकल्प विकल्प संशय अरु निश्चयरूप मन नामवाला अन्
करणादिकका उपादान अपञ्चीकृत भूतों का पञ्चक उत्पन्न हो
है । अरु तिस संकल्पादि रूपवाले मनसे भी सत्य नामक
आकाशादिक अपंचीकृत भूतोंका पंचक विराट् उत्पन्न होता
अरु तिस सत्यनामवाले भूतों के पंचक से क्रम करके ब्रह्मांड
पृथिवीआदि सातलोक उत्पन्न होते हैं । अरुतिन उत्पन्नभये लो
बिषे मनुष्यादि प्राणियों के वर्ण अरु आश्रमके क्रमसे कर्म उत्
होताहै । अरु तिन निमित्तरूप कर्मोंबिषे कर्म्मजन्य फलरूपभ
तउत्पन्न होताहै । अरु यावत्पर्यन्त शतकोटि कल्पनामेंभी क
नाशको पावते नहीं तावत् पर्यन्त तिनका फलभी नाशको प

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यःसर्व्वज्ञःसर्वविद्यस्य ज्ञानमयंतपः। तस्मादेतद्ब्रह्म नामरूपमन्नञ्चजायते ९॥

इति प्रथममुण्डकगत प्रथमखण्डः॥

ता नहीं। एतदर्थ इन कर्म्मों के फलको अमृत कहते हैं॥ ८॥

हे सौम्य! कथनकियेहुये अर्थकोही संक्षेपसे कहनेकी इच्छावाला नवम मन्त्र सो आगे प्रतिपादन करने के अर्थको कहता है "यः सर्व्वज्ञः सर्व्वविद्यस्य ज्ञानमयं तपः"। जो सर्वज्ञ है सर्ववित् है जिसका ज्ञानमय तपहै। जो उक्त लक्षणवाला अक्षर नाम करके परमात्मा सो सामान्य करके सर्वको जानता है, अर्थात् [यहांसमष्टिरूप मायानामक उपाधि सामान्य कहते हैं। तिससे सर्वको जानताहै याते सो सर्वज्ञहै] ताते सर्वज्ञ है। अरुविशेष [यहांव्यष्टिरूप अविद्यानामक उपाधि विशेष कहते हैं] अरु तिसकरके उपाधिवाला हुआ उन जीवोंकरके सृजेहुये सर्व जगत्को जानता है ताते सर्ववित् है] करके सर्वको जानता है एतदर्थ सर्ववित् है। अरु जिसका, ज्ञानरूप तपहै, परिश्रमरूप नहीं अर्थात् [ननु, प्रजापतियोंकोतपकरके सृष्टिका स्रष्टापना प्रसिद्धहै, एतदर्थ स्रष्टापना बिषे तपका अनुष्ठान कहनेको योग्यही है, परन्तु ईश्वरको स्रष्टापना बिषे तपका अनुष्ठान कहने से संसारीपना प्राप्तहोवेगा, यह आशङ्का विचारके कहते हैं। यहांयह अर्थ है कि सत्त्वगुण प्रधान मायाअरु अज्ञाननामक जो विकारहै तिन उपाधिवाला उत्पन्नभया जो सर्व पदार्थों के जानने रूप ज्ञानस्वरूप विकार सो विकारही ईश्वरका तपहै, परन्तु प्रजापतियों के तपवत् क्लेशरूप तपनहीं] "तस्मादेतद्ब्रह्मनामरूपमन्नञ्चजायते"। तिससे यह ब्रह्मनाम रूप अरु अन्न उत्पन्न होताहै। तिस उक्तलक्षणवाले सर्वज्ञसे यह कथनकिया हिरण्यगर्भ नामवाला ब्रह्म उत्पन्न होताहै। अरु यह यज्ञदत्त है, यह देवदत्त है, यह विष्णुदत्तहै, इत्यादि नाम, अरु यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ प्रथममुण्डकेद्वितीयखण्ड आरभ्यते ॥

तदेतत्सत्यंमन्त्रेषुकर्म्माणिकवयोयान्यपश्यंस्तानित्रेतायांबहुधासन्ततानि । तान्याचरथनियतंसत्यकामा एषवःपन्थाःस्वकृतस्यलोके १ । १० ॥

शुक्ल (श्वेत) है, यहपीत है, यहरक्त (लाल) है यह नीलहै, इत्यादि स्वरूपवाला रूप, अरु तंडुल यवादिरूप अन्न, अथम मन्त्रादि उक्त क्रमसे उत्पन्नहोते हैं । इसप्रकार पूर्व मन्त्र से इस मन्त्र अविरोधजानना ॥ ९ ॥

इति प्रथममुण्डकगतप्रथमखण्डभाषाटीका समाप्ता ॥

अथ प्रथममुण्डकगतद्वितीयखण्डभाषाटीका प्रारम्भः

हे सौम्य ! तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः [तहां ऋग् यजु साम अथर्व] इत्यादि रूप प्रथम खण्डके प्रथम मन्त्र से षट् अंगोंसहित चार वेदरूप अपरविद्या कही । अरु तदक्षर्य ? [जो सावयव है] इत्यादि षष्ठ मन्त्रसे लेके तस्मान्नाम मन्नञ्चजायते ? [नाम रूप अरु अन्न उत्पन्न होताहै] इस मन्त्र मन्त्र पर्यन्त जो ग्रन्थ है तिस करके कहे लक्षणवाला जो अक्षर (ब्रह्म) है सो जिस विद्याकरके प्राप्तहोता है सो पराविद्या है इसप्रकार विशेषणों सहित यह पराविद्याकही । यातें परन्तु इन दोनों विद्या के विषय (आधीन) जो संसार अरु मोक्ष सो विवेचनकरने को योग्य है, इस प्रयोजन के अर्थ अब उत्तरग्रन्थ का आरम्भ करते हैं, तिनमें कर्त्ता आदिक साधन क्रिया अरु फल के भेदरूप अरु उपादानरूपसे अनादि, अरु ब्रह्मज्ञानहोनेसे अत्यन्त निवृत्ति के असम्भवसे अन्तरहित जो संसार है, सो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विद्याका विषयहै । अरु सोई दुःखरूपहोने से सर्व शरीरधारी जीवोंकरके [एक जीववादी जो कहते हैं कि एक चैतन्य एकही अविद्यासे बद्धभया संसारको पावता है, अरु सोई कदाचित् मुक्त होताहै । अरु हम तुम आदिक जो जीवाभासहैं तिनको बन्ध अरु मोक्ष नहीं ॥ सो पक्ष यहां जीवोंके बहुवचनकी सूचना से भाष्यकार स्वामीने निषेध किया, क्योंकि वो एक जीववादी का मत श्रुतिसे बाह्य है ताते] त्यागने योग्य है । अरु नदीके प्रवाहवत् उच्छेद (नाश) रहित जो संसार है, तिसकी अत्यन्त निवृत्तिरूप अरु ब्रह्मसे अपृथक् होनेकरके, अनादि अनन्त अजर अमर (अपक्षयरहित,अविनाशी) अभय शुद्ध प्रसन्न, अरु अपने आप बिषे स्थित परमानन्दरूप अद्वैत जो मोक्षहै अर्थात् (सुषुप्ति अवस्था बिषेभी क्रियाकारक अरु फल की निवृत्ति होती है, तिस निवृत्तिसे ज्ञानपूर्वक जो निवृत्तिहै तिसकी विलक्षणता कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि, अपनी उपाधिरूप जो अविद्या तिसके कार्य सम्बन्धी अविद्याकी निवृत्ति करके जो आत्यन्तिकी निवृत्ति सो विद्या का फल है) सो पर विद्याका विषयहै । तिनमें आदिबिषे प्रथम [अपर अरु पर दोनों विद्याके विषयको देखायके अब प्रथम अपर विद्याके विषयको देखावने बिषे श्रुतिका अभिप्राय कहतेहैं] अपर विद्याका जो विषयहै तिसके देखावनेके अर्थ इस द्वितीयखंड का आरम्भहै । क्योंकि तिस अपर विद्याके विषयको देखावने से तिसबिषे वैराग्य होनेका सम्भवहोताहै ताते । अरु तिसही प्रकार आगे इसही उपनिषद् बिषे ' परीक्ष्य लोकान् कर्मरचितान् ' [लोकोंको कर्मरचित जानके] इत्यादि इसही खण्डकी बारहवीं श्रुति से कहेंगे । अरु जिसकरके न देखेहुये पदार्थकी परीक्षा (ज्ञान) सम्भवता नहीं, तिसकरके उस अपर विद्याके विषयको देखावते हुये कहते हैं " तदेतत्सत्यं " [सो यह सत्य है] ॥ प्र० ॥ सो क्या है ॥ उ० ॥ " मन्त्रेषु कर्म्माणिकवयोयान्यपश्यंस्तानित्रेतायां बहुधासन्ततानि " [मन्त्रों बिषे कर्म है जिनको कवि देखतेभये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो त्रेता बिषे बहुत प्रकार से प्रवृत्तभये हैं । ऋग्वेदादि नाम
मन्त्रोंबिषे जो अग्निहोत्रादि कर्महैं, अरु मन्त्रों करकेही प्रका
भये जिन कर्मोंको वशिष्ठादि कवि (बुद्धिमान्) देखतेभ
ऐसा जो कर्मोंका समुदाय है सो सत्यहै अर्थात् [इष्ट फल
साधन होनेसे अथवा अनिष्टफलका साधन होनेसे, वेदकरके
कर्म बोधित किये हैं, तिन कर्मोंको प्रतिबन्धके अविद्यमान
तिन तिन फलोंके साधनहोने का अव्यभिचारहै सोई तिस
का सत्यपनाहै, स्वरूपसे अबाधहोने रूप सत्यपना नहीं । क्यों
'प्लवाह्येते अदृढाः' । जिसकरके यह प्लव । अर्थात् फलसहि
विनाशी कर्मवाले हैं-इत्यादि यह इसही खण्डके सातवें म
करके निन्दा कियेहुये ताते । अरु कर्मोंके स्वरूपसेही अबाध
रूप सत्यताके होने से, स्वप्नकी कामनावत् सफल क्रियाकी नि
र्वाहकता रूप अबाध्यता घटेहै, इस अभिप्राय से कहते हैं] क
कि पुरुषार्थका अर्थात् [धर्म अर्थ काम अरु मोक्ष, इन चारों
नाम पुरुषार्थ है, परन्तु यहां मोक्षको छोड़के अन्य तीनों
ग्रहण है ऐसा जानना] अव्यभिचारी साधनहै ताते । अरु वो
विदित अरु ऋषियों करके देखेहुये कर्म तिनके संयोगसयहो
अध्वर्यव अरु उद्गात्र, अर्थात् [ऋग्वेदबिषे बिधानकिया पद
तिसको होत्र कहते हैं, अरु यजुर्वेदबिषे बिधानकिया पदार्थ
सको अध्वर्यव कहते हैं, अरुसामवेदबिषे बिधानकिये पदार्थ
नको औद्गात्र कहते हैं, इन तीन प्रकार के कर्मरूप त्रेताबिषे
इन तीनप्रकार स्वरूप आधाररूप त्रेताबिषे, अथवा त्रेतायुगमें
कर्मिष्ठ लोगों करके कियेहुये, बहुत प्रकारसे प्रवृत्तभये । एतत्
हे लोको ! " तान्याचरथनियतं सत्यकामा एषवः पन्थाः सुकृत
लोके " । सत्यकामहुये तिनको नित्य आचरणकरो यह आप
आप करके आचरण कियेहुये कर्मके लोकबिषे मार्गहै । आप स
काम हुये अर्थात् जैसा विद्यमान है तैसे कर्म फलकी इच्छा
हुये तिन कर्मोंको नित्यनिर्वाह करो । जैसे नगरकी प्राप्ति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदालेलायतेह्यर्चिःसमिद्धेहव्यवाहने । तदाऽऽज्य भागावन्तरेणाहुतीःप्रतिपादयेच्छ्रद्धयाहुतम् २ । ११ ॥

निमित्तरूप मार्गका चलना है। तैसेही यह आपको आपकरके आचरण किये कर्म सो अपने फलरूप लोक बिषे, अर्थात् कर्मके फलकी प्राप्तिबिषे निमित्तरूप मार्ग है, अर्थात् जो जो अग्निहोत्रादिरूप ऋग्वेदादि तीनों वेदों बिषे प्रतिपादन किये कर्म हैं, सो यह मार्ग (अवश्य फलकी प्राप्ति का साधन) है १ । १० ॥

हे सौम्य! तिन (कर्मों) में से आदिबिषे तहां पर्यन्त, अर्थात् अन्तःकरणकी शुद्धि पर्यन्त अग्निहोत्रादि देखावने के अर्थ कहे हैं, क्योंकि अग्निहोत्र सर्वकर्मों के मध्य प्रथम है लाते ॥ प्र० ॥ सो अग्निहोत्र कैसे होता है ॥ उ० ॥ "यदालेलायतेह्यर्चिःसमिद्धे हव्यवाहने" [जब समिधाओं करके प्रज्वलितभये अग्निबिषे ज्वाला उठती है] जिससमय अर्थात् प्रातःकाल अरु सायङ्काल में सर्वओर से समिधा करके प्रज्वलित भये अग्निबिषे ज्वाला उठती है। "तदाऽऽज्यभागावन्तरेणाहुतीःप्रतिपादयेच्छ्रद्धयाहुतम्" [तब घृतके भाग मध्यरूप (कुण्ड) बिषे आहुतियों को डालना श्रद्धासे होम किया है] जिस समय उठतीहुई ज्वालामें दर्शं अरु पूर्णमासरूप दोनों घृतके भागोंको मध्य कुण्डबिषे देवताओंका उद्देश करके आहुतियों को डालना ॥ शं० ॥ ['सूर्यायस्वाहा, प्रजापतयेस्वाहा' इसप्रकार प्रातःकाल बिषे। अरु 'अग्नयेस्वाहा अरु प्रजापतयेस्वाहा' इसप्रकार सायङ्काल बिषे, यह दोनों आहुतियां प्रसिद्ध हैं। तब यहां श्रुतिबिषे आहुति शब्दको बहुवचन कैसे है ॥ स० ॥ अनेक दिवस पर्यन्त जो आहुतिको डालनेका अनुष्ठानहै तिसकी अपेक्षासे यहां श्रुतिबिषे आहुति शब्दको बहुवचन है] यह सम्यक् प्रकार आहुति डालनेरूप कर्म परलोक की प्राप्तिके अर्थ मार्ग है। अरुश्रद्धा से जो हवन कियाहै तिसका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यस्याग्निहोत्रमदर्शमपौर्ण मासमचातुर्मास्यमन
ग्रयणमतिथिवर्जितञ्च । अहुतमवैश्वदेवमविधिनाह
मासप्तमांस्तस्यलोकान्हिनस्ति ३ । १२ ॥

सम्यक्प्रकार आचरण दुष्कर है, अर्थात् तिसबिषे विपत्तिय
नेक हैं सो देखावते हैं २ । ११ ॥

हे गुरो! अग्निहोत्रकर्म कैसे दुष्करहै ॥ उ० ॥ "यस्याग्निहोत्र
र्शमपौर्णमासमचातुर्मास्यमनाग्रयणमतिथिवर्जितञ्च" [जि
अग्निहोत्र दर्शरहित, पौर्णमास रहित, चातुर्मास्य रहित, अग्र
रहित, अतिथि रहितहै,] अर्थात् जिसअग्निहोत्रीका अग्निहोत्र
नामक कर्म से रहितहै, अरु पौर्णमास नामक कर्म से रहित है
चातुर्मास्य नामक कर्म से रहितहै, अरु शरदादि कालबिषे [कं
उत्पन्नभये जे अन्नादिक तिनसे करनेयोग्य जो] आग्रयण नाम
कर्म तिनसे रहित है । अरु तैसेही जिसका अग्निहोत्र अतिथि
रहित है, अर्थात् जिस अग्निहोत्री के अग्निहोत्रमें नित्यनित्य
तिथिका पूजन कियाजावे नहीं । अरु "अहुतमवैश्वदेवमविधि
हुतमासप्तमांस्तस्यलोकान्हिनस्ति" [होम कियाहोय नहीं, वै
देवसे रहित, अविधिसे होम कियाहै, ससलोक सहित नाशक
जिसके अग्निहोत्र कालमें सम्यक्प्रकार होम कियाहोता न
अरु जिसका अग्निहोत्र वैश्वदेव नामवाले कर्मसे रहित है
जिसने हवनकिया है तथापि सो अविधि से कियाहै सो अग्निह
तिस अग्निहोत्रीरूप कर्त्ता के सप्तमलोक सहित जो लोक हैं
लोकोंको नाशकरनेवत् नाशकरे है क्योंकि उक्त कर्मका श्रम
ही फलहै ताते । अरु जिसकरके कर्मोंको सम्यक् करनेसे उ
र्मोंके परिणामरूप से पृथिवी आदि सत्यपर्यन्त सप्तलोकरूप
(जो सप्तव्याहृतियों के नामसे प्रख्यात हैं) सो प्राप्तहोतेहैं
लोक उक्तप्रकारके अग्निहोत्रादि कर्म से प्राप्तहोने के अयोग्य
से नाशहुयेवत् होते हैं, अर्थात् उक्तप्रकारके अग्निहोत्रादि कर्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कालीकरालीचमनोजवाच सुलोहितायाचसुधूम्र वर्णा । स्फुलिङ्गिनीविश्वरूपीचदेवीलेलायमानाइतिस प्तजिह्वा ४ । १३ ॥

एतेषुयश्चरतेभ्राजमानेषुयथाकालंचाहुतयो ह्याद दायन् । तन्नयन्त्येताःसूर्य्यस्यरश्मयो यत्रदेवानांपति रेकोधिवासः ५ । १४ ॥

उक्त सातलोकों में से किसीकीभी प्राप्ति होती नहीं । अरु परिश्रममात्र तो अव्यभिचारतासे भयाही हैं, एतदर्थ उनलोकों को नाशकरे है ऐसा कहा है ॥ अथवा पिण्डदानादिरूप अनुग्रहसे सम्बन्धको प्राप्तभये [यजमान जोहै सो पिता आदि तीनोंका पिंड उदकके दानसे उपकारकहै,अरु पुत्रादि तीनोंका अन्न वस्त्रादिकों के दानसे उपकार करताहै । एतदर्थ यहां मध्यवर्त्ती यजमान से सम्बन्धको प्राप्तभये पूर्वले अरु पिछले तीन तीन ग्रहण करते हैं ऐसा कहतेहैं] पिता, पितामह, प्रपितामह अरु पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र जो आपसहित सातलोकहैं, सो उक्तप्रकारके अग्निहोत्रादि कर्म से अपने उपकारके करनेवाले होते नहीं ॥ एतदर्थ नाशहोते हैं ऐसा कहते हैं । इस उक्तरीतिसे अग्निहोत्रादि कर्मसे उपलक्षित जो कर्म सो दुष्करहैं ३ । १२ ॥

हे सौम्य ! " कालीकरालीचमनोजवाच सुलोहितायाचसुधूम्रवर्णा " । काली अरु कराली पुनः मनोजवा, अरु पुनः सुलोहिता अरु जो सुधूम्रवर्णा अरु " स्फुलिङ्गिनीविश्वरूपी च देवी लेलायमाना इति सप्तजिह्वा " । स्फुलिंगिनी अरु विश्वरूपी, पुनः देवी, यह सात जलती (प्रज्वलित) हुई ज्वालारूप अग्निकी जिह्वा हैं । सो अग्निको हवन किये द्रव्यके ग्रसन करने के अर्थ उक्त सप्त जिह्वा हैं । इति सिद्धम् ४ । १३ ॥

हे सौम्य ! " एतेषु यश्चरतेभ्राजमानेषुयथाकालंचाहुतयो ह्याददायन् " । इन प्रकाशमान बिषे जो यथाकाल आहुतियों को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एह्येहीति तमाहुतयः सुवर्च्चसः सूर्य्यस्यरश्मिभिः
मानंवहन्ति । प्रियांवाचामभिवदन्त्योऽर्च्चयन्त्यए
पुण्यःसुकृतोब्रह्मलोकः ६ । १५ ॥

देताहुआ आचरताहै । इन प्रकाशमान अग्निकी जिह्वा के
बिषे जो अग्निहोत्रका कर्त्ता कालके बिभागानुसार अग्निहोत्र
रूप कर्मको करता है " तन्नयन्त्येताः सूर्य्यस्यरश्मयोयत्रे
पतिरेकोधिवासः " । तिसको यह ग्रहण करती हुई किर
होके प्राप्त करेहै जहां एक देवताओंका पति निवास कर
तिस यजमानको यह यजमान करके करीगई आहुतियां
करती हुई सूर्य्यकी किरणरूप होके तिन किरणरूप द्वारसे
यजमानको तिस स्वर्गबिषे प्राप्तकरेहैं ॥ प्र० ॥ किस स्वर्गबिषे
सकरेहैं ॥ उ० ॥ जहां एक देवताओं का पति इन्द्र निवास
रता है ५ । १४ ॥

हे सौम्य ! सो आहुतियां सूर्य्यकी किरणोंसे यजमानको
र्ग बिषे जिसप्रकार प्राप्त करती हैं तिसको श्रवणकरो " एह्ये
तमाहुतयः सुवर्च्चसः सूर्य्यस्यरश्मिभिर्यजमानं वहन्ति " । वे
हुतियां प्रकाशमान हुई तिस यजमानको सूर्य्यकी किरणों
लेजाती हैं । अरु कहती हैं ॥ प्र० ॥ क्या कहती हैं ॥ उ
" प्रियांवाचामभिवदन्त्योऽर्च्चयन्त्य एषवःपुण्यःसुकृतो ब्रह्मलो
" पूजन करतीहुई प्रियवाणी को कहती हैं कि यह आपका
रूप सुकृतका फल ब्रह्मलोकहै ॥ अथवा सो आहुतियां आ
ऐसे बोलावती हुई अरु प्रकाशमान अरु जैसे ब्रह्मलोक पु
फलरूप है, तैसा यह आपका पुण्य रूप सुकृत का फ
ब्रह्मलोक (स्वर्ग) है इसप्रकार प्रियवाणी को कहती
अरु पूजन करती हुई तिस यजमान को सूर्य्यकी किरणों
द्वार मार्ग से लेजाती हैं ६ । १५ ॥

हे सौम्य ! अब यह उपासना रहित केवलकर्म्म जोहै सो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्लवाह्येतेअदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषुक र्म । एतच्छ्रेयोयेऽभिनन्दन्तिमूढाजरांमृत्युंपुनरेवापियान्ति ७। १६ ॥

करके उक्त फलवाला है, अरु अविद्या काम अरु क्रियाका कार्य है, एतदर्थ असाररूप अरु दुःखका कारण है, इसप्रकार तिनकेवल कर्म्मोंकी निंदा वेदभगवान् करते हैं "प्लवाह्येते अदृढायज्ञ रूपा अष्टादशोक्तमवरंयेषुकर्म्म" ।यह यज्ञके निर्वाहक अष्टादश अदृढ़ कर्मके आश्रयहैं अरु तिसबिषे अश्रेष्ठ कर्म्म हैं। अर्थात् जिस करके यह यज्ञके निर्वाहक सोलह ऋत्विक् यजमानकी स्त्री अरु यजमान इस भेद से अष्टादश १८ संख्यावाले हैं सो अदृढ़ (अस्थिर) इस कर्म्म के आश्रय हैं, इसप्रकार वेदने कहाहै अरु जिन अष्टादश आश्रयों बिषे उपासना रहित होनेसे अश्रेष्ठ केवल कर्म है। एतदर्थ उन अश्रेष्ठ (निकृष्ट) कर्मके आश्रयरूप अष्टादश संख्यावालेको अस्थिर अरु विनाशवान् होनेसे तिन्होंकरके साध्य जो कर्म सो फलसहित विनाशको प्राप्त होतेहैं जैसे दूध अरु दधि आदिकों के आश्रयरूप मृत्तिका के पात्रके विनाश से तदाश्रितों का विनाश होता है, तैसेही तिन केवल कर्म के आश्रय फल स्वर्गरूपस्थान विनाशहोताहै। अर्थात् केवल कर्म अरु तिनके फल यह दोनों विनाशवान् हैं। जिस करके यह ऐसे हैं तिसही करके "एतच्छ्रेयोयेऽभिनन्दन्ति मूढाजरांमृत्युंपुनरेवापियान्ति" । जो मूढ़ यह कर्मश्रेय है ऐसे हर्षको प्राप्तहोते हैं सो फेरभी जरा अरु मृत्युको पावते हैं। जो अविवेकी मूढ़पुरुष, यह कर्म श्रेय (मोक्षका साधन) है ऐसे जानके हर्षको प्राप्त होते हैं सो थोड़ेकाल पर्यन्त स्वर्गबिषे स्थित होयके फिर भी जरा मृत्युरूप संसार कोही पावतेहैं। अर्थात् उनका आवागमन छूटता नहीं ७। १६॥ हे सौम्य! वे मूढ़ "अविद्यायामन्तरेवर्त्तमानाःस्वयंधीराःपण्डितम्मन्यमानाः" । अविद्याके अन्तर वर्त्तमान हुये हमहीं बुद्धि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अविद्यायामन्तरेवर्त्तमानाः स्वयंधीराःपण्डितम्म
न्यमानाः । जङ्घन्यमानाःपरियन्तिमूढाअन्धेनैवनीयम
नायथाऽन्धाः ८ । १७ ॥

अविद्यायांबहुधावर्त्तमानावयं कृतार्थाइत्यभिमन्य
न्तिबालाः । यत्कर्म्मिणोनप्रवेदयन्ति रागात्तेनातुराःक्षी
णलोकाश्च्यवन्ते ९ । १८ ॥

मान् पण्डित हैं ऐसे मानतेहैं । वे केवल कर्मकेही आश्रयश्रेयक
माननेवाले मूढ़ अविद्याके भीतरवर्त्तमानहुये, अर्थात् अत्यन्त
अविवेक युक्तहुये, अरु तत्त्वदर्शी आचार्योंके उपदेशकी अपेक्षा
विना अपनेही मनकरके, हमहीं बुद्धिमान् अरु हमहीं जानने
योग्य वस्तुके जाननेवाले पण्डितहैं, इसप्रकार आपको मानतेहैं
"जंघन्यमानाःपरियन्तिमूढाअन्धेनैवनीयमानायथाऽन्धाः" । मू
अत्यन्त पीड़ाको पावतेहुये सर्व ओरसे भ्रमतेहैं, जैसे अन्धेकर
प्राप्तकिया अन्धा (गिरता है) । सो मूढ़पुरुष जरा रोगादि अने
अनर्थ के समूहों करकेये अत्यन्त खेदको प्राप्तहोते हुये सर्वओ
से भ्रमते हैं, जैसे लोकबिषे अन्धे (चक्षुरहित) पुरुषकरके प्राप्त
किये जे मार्गके न देखनेवाले अन्ध (चक्षुविहीन) पुरुषगर्त
टकादि विषमस्थान बिषे गिरते अरु कष्ट पावते हैं, तैसे वो मू
अविवेकी कर्मी पुरुषभी संसाररूप अन्धकूप में गिरके कष्टपाव
हैं । इति सिद्धम् ८ । १७ ॥

हे सौम्य! "अविद्यायां बहुधावर्त्तमानावयंकृतार्था इत्यभिम
न्यन्तिबालाः" । बालक अविद्या बिषे बहुतप्रकार से वर्त्तमानहु
हमहीं कृतार्थ हैं ऐसे अभिमानको करते हैं। अज्ञानीरूप जो बाल
क (मूर्ख) हैं सो अविद्या बिषे बहुतप्रकारसे वर्त्तमानहुये, हम
कृतार्थ, अर्थात् प्रयोजनको प्राप्तहुये हैं, इसप्रकार अभिमान
करतेहैं । अरु "यत्कर्मिणोनप्रवेदयन्ति रागात्तेनातुराः क्षीणलो
काश्च्यवन्ते" । जातेकर्मिष्ठ पुरुष रागसेतिसकरके आतुर हु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इष्टापूर्त्तमन्यमानावरिष्ठंनान्यच्छ्रेयोवेदयन्तेप्रमूढाः। नाकस्यपृष्ठे ते सुकृतेऽनुभूत्वेमंलोकं हीनतरञ्चाविशन्ति १०। १९॥

क्षीणलोक होतेहैं। जिसकरके ऐसे कर्म करनेवालेपुरुष कर्मफलके रागसेहोता जो अपना तिरस्कार तिसके निमित्तको जानते नहीं तिसकारणसे दुःखसेआतुरहुये क्षीणभयाहै कर्मकाफलरूप लोक जिसका, ऐसे हुये स्वर्गलोक से गिरतेहैं ९। १८॥

हे सौम्य! "इष्टापूर्त्तमन्यमानावरिष्ठं नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमूढाः"। प्रमूढ़ इष्ट अरुपूर्त्तको मुख्यजानतेहुये अन्यश्रेयको जानते नहीं। पुत्र पशु अरु स्त्री आदिकों बिषे प्रमादको प्राप्तहोने करके जो मूढ़,इष्ट,कहिये जो यज्ञादिरूप श्रुतिकरके प्रतिपाद्यकर्म्महैं अरुपूर्त्त कहिये वापी कूप तड़ाग आराम धर्मशाला आदि निर्माण करनेयहस्मृति प्रतिपाद्य कर्म्म हैं, तिन्होंको यही अतिशय करके मुख्यपुरुषार्थ(मोक्ष)का साधनहै,इसप्रकार चिन्तन करतेहुये अन्य जो आत्मज्ञान संज्ञक परम श्रेयका साधनहै तिसकोतो जानतेही नहीं॥ हेसौम्य! ऐसा जेपरम पुरुषार्थ साधक साक्षात् आत्मज्ञान तिसको न जाननेवाले जे मूढ़हैं "नाकस्यपृष्ठेते सुकृतेऽनुभूत्वेमं लोकंहीनतरञ्चाविशन्ति"। सो स्वर्गके ऊपर (अयन) सुकृतके (फलको) अनुभवकरके (पुनः) इस लोकको वा अतिशय हीन लोकको पावते हैं। सो स्वर्गलोक ऊपर विद्यमान दिव्य भोगोंके स्थान बिषे अपने सुकृत कर्मके फलको साक्षात् अनुभव करके पुनः इस मनुष्य शरीररूपी लोकको अथवा इस मनुष्य शरीररूपी लोक से अतिशय हीन तिर्यक् (पक्षी) श्वान शूकरादि नारकी शरीररूप लोकको शेषरहे अपने कर्म्मानुसार पावते हैं। "योनिमन्येप्रपद्यन्ते शरीरात्यायदेहिनः। स्थाणुमन्येन संयान्ति यथाकर्म यथाश्रुतम्"॥ १०॥ १९॥

हेसौम्य! [उक्त प्रकार केवल कर्मिष्ठों के फलको कहके, अब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तपःश्रद्धेयेह्युपवसन्त्यरण्येशान्ता विद्वांसोभैक्ष्यच
चरन्तः । सूर्य्यद्वारेणतेविरजाःप्रयान्ति यत्रामृतःसपु
षोह्यव्ययात्मा ११ । २० ॥

सगुणब्रह्मकी उपासना सहित आश्रमके कर्मकरके युक्त पुरुष
संसार गोचरही फलको देखावतेहैं] "तपःश्रद्धेयेह्युपवसन्त्यर
शान्ताविद्वांसोभैक्ष्यचर्य्यां चरन्तः" । जोशान्त विद्वान् भिक्ष
अन्नको भोजनकरतेहुये अरण्यबिषे तप अरु श्रद्धाको सेवन
तेहैं । जो केवल कर्म करनेवाले से अन्य उपासनायुक्त संन्य
अरु वानप्रस्थ अरु जो शान्त (जितेंद्रिय ब्रह्मचारी) विद्वान् (उ
सनाप्रधान गृहस्थ) भिक्षान्नको भोजन करतेहुये संग्रहके अभ
से स्त्रीआदिक विक्षेपकारी जनसमूहोंसे रहित अरण्यबिषे वर्त्तम
हुये अपने आश्रमयोग्य शास्त्रविहित कर्मरूप तप अरु हिरण्य
र्भादिकोंको विषयकरनेवाली । उपासनारूप श्रद्धा इन दोनोंह
यथाविधि सेवनकरते हैं । "सूर्यद्वारेणतेविरजाः प्रयान्ति यत्र
तःसपुरुषोह्यव्ययात्मा" । सो सूर्यद्वारसे विरजहुये जाते हैं कि
बिषे अमृतरूप सो अविनाशी स्वभाववाला स्थित पुरुष है ।
सूर्य्य करके उपलक्षित जे उत्तरायणरूप द्वार तिस द्वारसे वि
हुये, अर्थात् मानो पुण्यपाप कर्मरूप मलसे रहितहुयेहोवें तैसे
तिसबिषे जातेहैं, कि जिस सत्यलोकादिकोंबिषे अमृतस्वरू
प्रथमउत्पन्नभया अरुअविनाशी स्वभाववाला, अर्थात् यावत्क
संसारहै तावत्पर्यन्त रहनेवाला हिरण्यगर्भरूप पुरुषहै ॥ हेसोम्
यहांपर्यन्ततो अपराविद्याकेआश्रय प्राप्तहोनेयोग्य संसारकी गति
हैं । ८ कई एक पुरुष निश्चय करके, ब्रह्मलोककी प्राप्तिरूप मोक्ष
इच्छा करते नहीं, किन्तु ८ इहैवसर्वे प्रविलीयन्ते कामास्ते सर्वे
र्वतःप्राप्यधीरा मुक्तात्मानःसर्वमेवाविशन्तीति, यहांहीअर्थात्
पुरुषोंके यहांही सर्वकामके अभावको अरु सर्वात्मभावको श्रुति
देखावेहैं । अरु ब्रह्मलोककी प्राप्तितो देशसे परिच्छिन्न फ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परीक्ष्यलोकान्कर्म्मरचितान् ब्राह्मणोनिर्वेदमाया न्नास्त्यकृतःकृतेन ॥ तद्विज्ञानार्थंसगुरुमेवाभिगच्छेत् स मित्पाणिःश्रोत्रियंब्रह्मनिष्ठम् १२ । २१ ॥

अर्थात् किसीएक देशबिषे हैं,ताते मोक्ष नहीं है,इसप्रकार यहां कहतेहैं] तिनके सर्वकाम अभाव होते हैं। अरु वो धीरपुरुष एकाग्र चित्तवाले हुये सर्वगत व्यापक वस्तुको सर्वओरसे पायके सर्व्वात्मभावको पावतेहैं; इत्यादि श्रुतियोंसे अरु प्रसंगसे यहजोऊपर कहीगई सो अपरविद्याके आश्रित मतिहै, इसप्रकार जानाजाता है। अरु जिसकरके यह प्रसंग, अपर विद्याके प्रसंग के प्रवृत्तहुये अकस्मात् प्रवृत्तभयाहै, एतदर्थ यह मोक्षका प्रसंग नहींहै। अरु पुण्य पापरूप कर्मकी क्षीणतारूप विरजपना जो कहा है सो तो आपेक्षिकहै, एतदर्थ समस्त साध्य अरु साधनरूप क्रिया कारक अरु फलके भेदसे भिन्न हिरण्यगर्भकी प्राप्तिपर्यन्त जो द्वैतहै इतनाही अपर विद्याका कार्य है। तैसेहुये स्थावरादिरूप संसारकी गतिको उल्लंघन करनेवाले पुरुषोंको ‘ब्रह्मा विश्वसृजो धर्मो महानव्यक्तमेवच। उत्तमांसात्त्विकीमेतां गतिमाहुर्मनीषिण इति’; ‘ब्रह्मा, मरीच्यादि प्रजापति,यम,महत्तत्त्व (सूत्रात्मा) अरुअव्यक्त (त्रिगुणात्मक प्रकृति) रूप इस गतिको पंडितजन सात्त्विक उत्तमगति कहतेहैं’, इस स्मृतिके प्रमाणसे ब्रह्मलोकादिकी प्राप्ति रूप उत्तमगति होतीहै यह सिद्धभया ॥ ११ । २० ॥

हेसौम्य! अब इस साध्य अरु साधनरूप सर्व संसारसे विरक्त पुरुषको ब्रह्मविद्याबिषे अधिकारके देखावनेके अर्थ यह कहते हैं “ परीक्ष्यलोकान् कर्मरचितान् ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन ” ‘ब्राह्मण कर्मसे रचित लोकोंको निश्चयकरके वैराग्य को करे अकृत नहीं है कृतसे क्याहै ’ ‘यथैकतासमता इति स्मृतेः; ‘ब्राह्मणका जैसा एकता समता अरु सत्यता (आदिरूप) धन है ऐसा और नहीं’ इस स्मृतिसे । अरु ब्राह्मणको निवृत्ति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रधान व्यवहारवाला होने से ब्रह्मविद्याका मुख्य अधि
ब्राह्मणकोही है [इस अभिप्राय से यहां श्रुतिविषे अधिकार
विशेषणरूप ब्राह्मणपद है] ब्राह्मण जो है सो अविद्याआ
दोषवाले पुरुषके प्रतिही विधान कियाहोनेसे स्वाभाविक अवि
काम अरु कर्मरूप दोषवाले पुरुषकरके अनुष्ठानकरने योग्य
यह ऋग्वेदादिरूप अपर विद्याका विषयहै, तिसको । अरु जो
अनुष्ठानके कार्य हुये फलरूप लोक हैं, अरु जो विहित क
अकरण, अरु प्रतिषेध कर्मका करना, अरु मर्य्यादाके उल्लंघ
दोषकरके साध्य जे नरक तिर्यक् प्रेतादि योनिरूप नरक हैं
संसारकी गतिरूप अव्याकृतादिलेके स्थावर पर्यन्त व्याकृ
अव्याकृतस्वरूप, बीजअरु अंकुरवत् परस्पर की उत्पत्तिके नि
अनेक शत अरु सहस्र अनर्थों करके पूर्ण कदलीके स्तम्भ
असारभूत, माया (छल) मरीचि जल गन्धर्वनगरके आकार,
जलगत बुद्बुद अरु फेनके तुल्य प्रतिक्षण नाशहोनेवाले, पी
देखेहुये अविद्या अरु कामरूप दोषकरके प्रवृत्तभयेधर्म अधर्म
कर्म से रचित लोकनको, प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, अरु
(शास्त्र) रूप इनचार प्रमाणोंसे [इसलोकसम्बन्धी कर्मक
रूप पुत्रादिकोंके नाशको विषयकरनेवाला प्रत्यक्ष प्रमाणहै
विवादका विषय स्वर्गादिक अनित्य है, क्रियाकरके साध्य
से, घटवत्, यह अनुमान परलोक सम्बन्धी फलके नाशको
करनेवाला । ‘तदथेह कर्मचितो लोकः क्षीयत ?’ । सो जैसे
कर्मकरके सम्पादित लोक क्षयको पावताहै । तैसे यहां
चितो लोकः क्षीयत ?’ । पुण्यसे सम्पादित किया लोक क्ष
पावताहै । इत्यादिरूप शब्द (आगम) प्रमाण है । तीन प्र
करके अनित्य होनेसे सर्व प्रकारसे निश्चयकरके यह अर्थ
ओरसे यथार्थपने से निश्चयकरके, तिनसे वैराग्यको क
वैराग्यका प्रकार देखावते हैं, इस संसारविषे कोई भी अक्ष
नन्य) पदार्थ नहीं है, किन्तु सर्वही लोक कर्मरचित है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्मरचित होने से अनित्य हैं ताते कुछभी वस्तु नित्य नहीं यह अभिप्राय है। अरु सम्पूर्ण कर्म अनित्यकाही साधन है। अरु जिसकरके उत्पत्ति होनेयोग्य, वा प्राप्ति होनेयोग्य, वा संस्कार करने योग्य, वा विकारकरनेयोग्य इनभेदसे चारप्रकारकाही समस्त कर्मका कार्य है। एतदर्थ इससे पर (अन्य) कर्मका विषय नहीं हैं। अरु मैं, नित्य, अमृत, अभय, कूटस्थ (परिणामरहित) अचल (स्फुरणरहित) ध्रुव (प्रयत्नरहित), वस्तुसेअर्थ (प्रयोजन) वालाहौं, तिससे विपरीत वस्तुसे प्रयोजनवाला, नहीं। एतदर्थ बहुत श्रमकरके युक्त अरु अनर्थके साधनरूपकृत (कर्म) तिनसे क्या प्रयोजनहै इसप्रकार वैराग्यको प्राप्तहोवे। पश्चात् "तद्विज्ञानार्थंसगुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्" [सो समित्पाणिहुआ तिसके विशेषज्ञानार्थ श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरुके ताईंही शरणको प्राप्तहोय] सो वैराग्यको प्राप्तभया ब्राह्मण, समिधोंका भार ग्रहण कियाहै जिसने अर्थात् अगर्वता विनयता आदि दैवीसम्पत्तिमान् ऐसाहुआ, अभय शिव अकृत अरु नित्यरूप जो पदहै तिसकी विशेषकरके प्राप्तिके अर्थ शमदम अरुदया करके सम्पन्न श्रोत्रिय, अर्थात् वेद शास्त्र अध्ययनकिये अरु तिनके श्रवणकिये अर्थ करके सम्पन्न, अरु ब्रह्मनिष्ठ, सर्व कर्मोंको त्याग के केवल अद्वैतरूप ब्रह्मविषे जिसकी निष्ठा होय [यहां ब्रह्मनिष्ठ शब्दहै सो तपोनिष्ठ शब्दवत्है। अरु जिसकरके कर्म अरु आत्मज्ञान इनदोनोंका परस्पर विरोधहै, तिसही करके कर्मिष्ठ पुरुष को ब्रह्मनिष्ठता सम्भवे नहीं। एतदर्थही यहां सर्व कर्मको त्याग के ब्रह्मविषे निष्ठा कही। अरुअमुक कर्मके करनेसे अमुक फलकी प्राप्ति होगी, अरु तिनके न करने से प्रत्यवायआदि अनर्थकीप्राप्तिहोगी, इस बुद्धिपूर्वक जो कर्मका अथवा किसी अन्य साधन का करना, तिसको कर्त्तव्य कहते हैं, तिस कर्त्तव्यकी बुद्धिका जो त्याग सोई यहां सर्वकर्मका त्याग है क्रियामात्रका त्याग नहीं] ऐसे सद्गुरुकी शरणको प्राप्तहोय। सो ब्राह्मण तिस गुरुके अर्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मैसविद्वानुपसन्नायसम्यक्प्रशान्तचित्तायशमान्विताय । येनाक्षरंपुरुषंवेदसत्यं प्रोवाचतांतत्त्वतोब्रह्मविद्याम् १३ । २२ ॥

इति प्रथममुण्डकगतद्वितीयखण्डःसमाप्तः ॥

इति प्रथममुण्डकम् ॥

शास्त्रके अनुसार समीपगयाहुआ गुरुको सेवाआदिकों से प्रसन्न करके सत्य अरु अक्षर (अविनाशी) रूपपुरुषको पूंछे १२ । २ ॥

हे सौम्य ! " तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक्प्रशान्तचित्ताय शमान्विताय " । तिस समीपआये शान्तचित्तवाले शम कानेष युक्तके अर्थ सो विद्वान्, तिस शास्त्रानुसार समीपआये शान्तचित्त वाले अर्थात् गर्वादिदोषरहित, अरु बाह्य ज्ञानेन्द्रियोंकी उपरति रूप शमकरके युक्त (सर्वसे विरक्त) शिष्यके अर्थ सो विद्वान् अर्थात् ब्रह्मनिष्ठगुरु । " येनाक्षरं पुरुषंवेद सत्यं प्रोवाचतां तत्त्वतो ब्रह्मविद्याम् " । तिससे सत्य अरु अक्षर रूप पुरुषको जानताहै तिस ब्रह्मविद्याको यथार्थकहै । जिस पराविद्यारूप विज्ञान अदृश्यत्वादि विशेषणवाले सत्य अरु अक्षररूप, [अवयवों अन्यथा भावरूप परिणामस्वरूप क्षरणसे रहित होने से, अ शरीर रहितरूप अक्षतपने से, अरु विकाररूप क्षयसे रहित होने से यह पुरुष (आत्मा) को अक्षर कहते हैं] पुरुषको जानता तिस ब्रह्मविद्याको यथार्थकहै ॥ आचार्यकाभी यह नियम है न्यायसे प्राप्तभये शिष्यको अविद्यारूप अपार महोदधिसे उद्धा करना १३ । २२ ॥

इति मुण्डकउपनिषद्गत प्रथममुण्डकके द्वितीय खण्डकी भाषाटीका समाप्ता ॥

इति प्रथममुण्डकं समाप्तम् ॥

तत्सद्ब्रह्मार्पणम् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तदेतत्सत्यंयथासुदीप्तात्पावकाद्विस्फुलिङ्गाःसहस्र
शःप्रभवन्तेस्वरूपाः । तथाऽक्षराद्विविधाःसौम्यभावाः
प्रजायन्तेतत्रचैवापियान्ति ॥ १ ॥ २३ ॥
अथद्वितीयमुण्डकगतप्रथमखण्डभाषाटीकाप्रारभ्यते२॥

अथ द्वितीयमुण्डकगत प्रथमखण्डः प्रारभ्यते ॥

हे सौम्य! यहां पर्यन्त अपरविद्याका सर्वकार्य कहा, अर्थात् द्विविद्येवेदितव्ये, [दोविद्याजाननेको योग्य हैं] यह इस उपनिषद्के प्रथम मुण्डकके प्रथम खण्डके चतुर्थ मन्त्र से दोनों विद्याके कहनेका आरम्भ करके, प्रथम मुण्डकसे अपर विद्याका वर्णनकरके पर विद्याका वर्णनकरनेको द्वितीय मुण्डकका प्रारम्भ [इस प्रकार यहां कहते हैं] अब सो अपरविद्याका कार्य (विषय) रूप संसार जिस सारवाला है, अरु जिस अक्षरनामवाले मूलसे उपजता है, अरु जिसबिषे लीनहोताहै, सो पुरुषनामवाला अक्षर सत्यहै। अरु जिसके जाननेसे यह सर्व जानाजाताहै, सो परारूप ब्रह्मविद्याका विषयहै सो कहने योग्यहै। ताते यह उत्तरग्रंथ को आरम्भकरते हैं। [जैसा पूर्व कर्मका भी सत्यपना कहा है, साही यह पर विद्याके विषयका सत्यपना माननेको योग्य नहीं सा कहते हैं] जो अपराविद्याका विषय कर्मका फल सत्य है सो आपेक्षिकहै। अरु यह पराविद्याकाविषय तो परमार्थसे सत्यरूपहोनेकरके "तदेतत्सत्यम्" [सो यहसत्य है] सो यह विद्याका विषय सत्य यथार्थहै। अरु अन्यअविद्याका विषय होने से मिथ्या है। [यहां यह हार्दव है ब्रह्मको, पुण्यपापरूप अपूर्ववत् अत्यन्त अदृक्षताहै, तिसकरके अर्थात् एक शब्द (शास्त्र) रूप प्रमाणकरके जानने को योग्य है ताते उसका प्रत्यक्षज्ञान सम्भवता नहीं, अरु अदृक्ष जोहै सो साक्षात्कारके आधीन है, विना ब्रह्मके साक्षात् जानेहुये मोक्षहोता नहीं, ताते उस सत्यरूप अक्षरको मुमुक्षुजन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कैसे प्रत्यक्ष प्रमाणवत् प्राप्तहोवेंगे । इस अभिप्रायसे जीवब्रह्मकी एकता बिषे दृष्टान्त कहते हैं । यहां यह अर्थहै कि ब्रह्म आत्माकी एकता होनेसे, जब प्रत्यक्रूप आत्मा अपनाआप अपरोक्ष है तब ब्रह्मका भी जैसे एकदेशी घटके प्रत्यक्ष ज्ञानहोने से सर्वदेशकेसब घटोंका ज्ञान प्रत्यक्ष होता है तद्वत्, प्रत्यक्षपना होगा यहां उक्त दृष्टान्त अरु सिद्धान्तका यह वर्णन है कि जैसे अग्नि के सूक्ष्म अवयवरूप विस्फुलिङ्गों (चिनगारियों) बिषे भिन्न भिन्न देशके अवच्छेदसे, अर्थात् पृथक् २ देशोंकरके युक्तहोने से आकार अरु यवादि पनेका व्यवहार है, अर्थात् अग्निकी चिनगारियों बिषे पृथक् २ आकारादि विकार व्यवहार है परन्तु स्वरूप करके पुनः भी सर्व चिनगारियों बिषे एक समान अग्निरूपताही है, क्योंकि उष्णता अरु प्रकाशताका अविशेषपनाहै ताते, अर्थात् सर्व चिनगारियोंबिषे उष्णताअरु प्रकाशतालक्षणवालानिर्विशेष अग्नि एकही है तैसेही चैतन्यरूपताके अविशेषसे जीवोंको स्वरूपसे ब्रह्मरूपताही है अर्थात् जैसे सोपाधि अग्निके नानाप्रकार विस्फुलिङ्गहोते हैं परन्तु तिनसर्वबिषे निरुपाधि समान उष्णता अरु प्रकाशतालक्षणवाला अग्नि एकही है, तैसेही मायोपाधियुक्त चैतन्यरूप अग्निसे नानालिङ्ग (जीव) रूप विस्फुलिङ्ग पृथक् २ निकलते परन्तुतिन सर्वबिषे चैतन्यतादि लक्षणवाला निरुपाधि ब्रह्मरूपताही होने से सर्व जीवों को स्वरूपसे ब्रह्मरूपताही है] अक्षरको अत्यन्त अपरोक्ष होनेसे प्रत्यक्ष (घट) वत् कैसे प्राप्तहोवेंगे इस शङ्काकोमनबिषे न्यायके दृष्टान्त कहते हैं " यथा सुदीप्तात् पावकाद्विस्फुलिङ्गाः सहस्रशः प्रभवन्ते स्वरूपाः " । जैसे भली प्रकारकरके प्रज्वलित भये अग्निसे अनेक अग्नि के समानरूपवाले विस्फुलिङ्ग निकलते हैं । जैसे भलीप्रकारसे प्रज्वलित अग्नि से सहस्रावधि अग्निके समानरूपवाले अग्निके अवयवरूप विस्फुलिङ्ग (चिनगारे) निकलते हैं । " तथाऽक्षराद्विविधाः सौम्यभावाः प्रजायन्ते तत्र चैवापियान्ति " । हे सौम्य ! तैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिव्योह्यमूर्त्तःपुरुषः सबाह्याभ्यन्तरोह्यजः। अप्राणो ह्यमनाःशुभ्रो ह्यक्षरात्परतःपरः॥ २। २४॥

अक्षर से विविध भाव उपजते हैं, पुनः तहांही लीन होते हैं। हे सौम्य! हे प्रियदर्शन! तिसही प्रकार उक्त लक्षणवाले अक्षर से आकाशादिकोंवत् नाना देहरूप उपाधि के भेदके अनुसारही होने से विविध (नाना) प्रकारके भाव (जीव) उपजते हैं जैसे घटादि उपाधिकरके परिच्छिन्न नानाप्रकारके आकाशरूप छिद्रके भेद, घटादिकों के भेदके अनुसारही होते हैं, इसही प्रकार जीव भी नाना नामरूप रचित देहरूप उपाधिके भेदके अनुसारही होते हैं। अरु पुनः भी घटादिकों के विलय भये पश्चात् आकाशरूप छिद्रनके विलयहोनेवत् तिसही अक्षरविषे देह (लिंग) रूप उपाधिके विलयभये पश्चात् लीन होते हैं। अरु जैसे आकाश को छिद्रों के भेद के उत्पत्ति अरु प्रलय का निमित्तपना जो है सो घटादि उपाधियोंका कियाहै, तैसेही अक्षरको भी जीवोंकी उत्पत्ति अरु प्रलयका निमित्तपना जो है सो नामरूप कृत देहउपाधि रूप निमित्तका कियाही है १। २३॥

हे सौम्य! अब [अक्षर पुरुषको जो उपाधिका किया जीवों की उत्पत्ति अरु प्रलयका निमित्तपना कहा, सो कार्य कारण भावकरके तिनकी अभेदताकी सिद्ध्यर्थ है। अरु परमार्थ से स्तुतिरूप निमित्तवाला जीवोंकी उत्पत्ति अरु प्रलय का निमित्त भावभी नहीं है, ऐसा कहते हैं [नामरूपके बीजभूत अव्याकृत नामवाले अरु अपने कार्यकी अपेक्षाकरके पर (श्रेष्ठ) अक्षर से पर जो सर्व उपाधियों के भेदसे रहित, अरु आकाशवत् सर्व मूर्त्ति (आकार) से रहित, अरु नेतिनेति; कार्यरूपभी नहीं अरु कारणरूपभी नहीं; इत्यादि विशेषणवाला जो अक्षरकाही स्वरूप है तिसको कहनेकी इच्छाकरतेहुये कहते हैं। "दिव्योह्यमूर्त्तः पुरुषःस बाह्याभ्यन्तरोह्यजः"। दिव्य अरु अमूर्त्त पुरुषहै सो बाहर भीतर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अजही वर्त्ततहै। जो स्वयंज्योति रूप होने से दिव्य (प्रकाशमा
है, अथवा अपने आत्मरूप स्वर्ग बिषे स्थित है, एतदर्थ दिव्य
अथवा अलौकिकहै ताते दिव्यहै। अरु जिसकरके सर्व मूर्त्ति
रहितहै इसही से अमूर्त्त है। अरु पूर्ण है, अथवा शरीररूपी पुरि
बिषे रहताहै ताते पुरुष है। ऐसादिव्य अरुअमूर्त्त (आकाररहि
जो पुरुषहै सो बाहर [देहकी अपेक्षासे जो बाहर अरु भीतर
देश प्रसिद्धहै तिसकेसाथही तादात्म्यसे, अथवा तिसके अधिष्ठा
पने से वर्त्ततहै, एतदर्थ {सबाह्याभ्यन्तरः} बाहर भीतर सहित
एतदर्थ सर्वरूप होनेसे तिससे पृथक् जन्मके निमित्तका अभा
ताते अज (जन्मरहित) है] अरु भीतरके देशकरके सहित वर्त्त
है। अरु अजन्मा है, अर्थात् किसी से भी जन्मको पावता नहीं
क्योंकि स्वरूपसे जो अजन्माहै तिसके जन्मके निमित्तका अभ
है ताते। अरु जैसे स्वरूपसे जन्मवाले जलगत बुद्बुद आदि
के जन्मके निमित्त वायुआदिकहैं। अरु जैसे स्वरूपसे जन्मव
आकाशके छिद्रोंके भेदक जन्मके निमित्त घटादिकहैं, तिसप्रक
स्वरूपसे जन्मरहित परमात्माके जन्मका निमित्त नहीं है। अ
एतदर्थ सर्व [जायते (जन्म), अस्ति (प्रकटता), विपरिणमते (वि
परिणाम), अपक्षीयते (अपक्षय), विनश्यति (विनाश), इन
स्कनामवाले मुनिने निरुक्तनामक ग्रन्थ बिषे कथनकिये षट्अ
र्वचनीय भावरूप विकारोंके निषेध बिषे अज शब्दके तात्पर्य
कहतेहैं] भावरूप विकारोंको जन्मरूप मूलवाले होनेसे तिसज
के निषेधसे सर्वविकार निषेधको प्राप्तहोते हैं। अरु जिसकरके
पुरुष बाहर भीतर रहित है अरु अजन्माहै, इसहीसे अजरहै, अ
तहै, अक्षयहै, ध्रुव है, अरु अभय है, यह अर्थ है। [जीवोंको प्र
आदिककरके युक्तहोने से तिनकी स्वरूपताकेहुये ब्रह्मकोभी प्र
आदिककरके युक्तपना प्राप्तभया तिसको निवारणकरतेहैं] यद्य
देहादिक उपाधियोंके भेदकीदृष्टिवाले पुरुषोंकी तलमल आदि
धर्मवाले आकाशवत् अविद्याके वशसे देहके भेदोंके बिषे, सोउ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणसहित मन सहित इन्द्रिय सहित अरु विषय सहित प्रतीत होता है, तथापि स्वरूपसे परमार्थ करके देखाहुआ क्रियाशक्ति के भेदवाला चलनरूप प्रसिद्ध विद्यमान प्राणवायु जिसबिषे विद्यमान नहीं है याते "अप्राणोह्यमनाः शुभ्रोह्यक्षरात्परतःपरः" (अप्राणहै अमनाहै शुभ्रहै अक्षरसे पर सो पुरुषहै) पुरुष अप्राणहै। अरु तैसेही अनेकज्ञान शक्तिके भेदवाला सङ्कल्पादिकरूप मनभी जिसबिषे अविद्यमानहै, एतदर्थ यह पुरुष अमनाहै यहां अप्राण अरु अमना, इस कथनसे प्राणादिक वायुके भेद कर्मेन्द्रियां अरु तिनके विषय, तैसे मनबुद्धि ज्ञानेन्द्रियां अरु तिनके विषय, निषेध कियेजानने। अरु जैसे "ध्यायतीव लेलायतीव" (ध्यान करतेहुयेवत् अरु लीला (क्रीड़ा) करतेहुयेवत्है) इसअन्य श्रुतिबिषेदोनों उपाधियों के निषेधसे सर्व उपाधियोंका निषेध जनाया है, तैसेही यहांभी जानलेना अरु जिसकरके उक्तप्रकार उपाधियों से रहित अद्वैतरूपहै, तिसही करके शुभ्र (शुद्ध) रूपहै। अरु जिसकरके शुभ्र है, इसही से नामरूपकेबीज (ब्रह्म) का उपाधि होनेकरके लक्षित है स्वरूप जिसका, ऐसे माया उपाधिरूप अरु तिस उपाधिकरके विशिष्ट ब्रह्मरूप सर्वकार्योंसे पर। [ननु, मायातत्त्वरूप अक्षर को परपना कैसेहै इस संशयके होनेसे कहते हैं, जिसकरके मायातत्त्व समस्त कार्य कारणका बीज होनेकरके लखिये है, तिसकरके पर है। अरु कार्य जो है सो अपर (अश्रेष्ठ) रूप प्रसिद्ध है। अरु जो तिसकार्यका कारण होनेकरके जानने बिषे आवता है एतदर्थ मायातत्त्वपर (श्रेष्ठ) है। अरु यौक्तिकबाधसे अनिर्वचनीय हुयेभी तिसके स्वरूपके उच्छेद (नाश) के अभाव मायातत्त्व अक्षर है। सो गीताशास्त्र के पन्द्रहवें अध्यायबिषे कहाहै "क्षरःसर्वाणि भूतानिकूटस्थोऽक्षरउच्यते। उत्तमःपुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः" (सर्व (कार्यकारणरूप) भूतक्षरहैं। अरु कूटस्थ (कपटवत्) मिथ्या स्थित होनेवाला मायातत्त्व अक्षर है। अरु उत्तमपुरुष तो इनसे अन्यही है जो परमात्मा नामसे कहाजाता है।] (श्रेष्ठ)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतस्माज्जायतेप्राणो मनःसर्व्वेन्द्रियाणिच । खंवायु
ज्योतिरापःपृथिवीविश्वस्यधारणी ३ । २५ ॥

अक्षर से पर (निरुपाधि) सो पुरुषहै । यह अर्थहै ॥ प्र० ॥ ननुजिस
बिषे सो आकाशनामक अक्षर सम्यक् व्यवहारका विषय हुआ
ओत अरु प्रोतहै, तिसअक्षर पुरुषको पुनः प्राणादिकों से रहित
पना कैसे है ॥ उ० ॥ जब प्राणादिक अपनी उत्पत्ति से पूर्व पुत्र
वत् अपने स्वरूपकरके विद्यमानहोय तब पुरुषको विद्यमान
प्राणादिकों से प्राणादिवान्पना होय । परन्तु वे प्राणादिक अपनी
उत्पत्तिसे पूर्व विद्यमानहैं नहीं, एतदर्थ पुरुष (अक्षर)प्राणादिकों
से रहित है २ । २४ ॥

हे सौम्य ! जैसे पुत्रके अनुत्पन्नभये देवदत्त पुत्रसे रहितहै ऐसा
कहते हैं । तैसे परमात्मा नामवाले पुरुषको वे प्राणादिक कैसे
विद्यमान नहीं हैं । यह शङ्का विचारके कहते हैं । [जोई चैतन्य
निरुपाधि शुद्ध अविकल्परूप ब्रह्म, तत्त्व ज्ञानसे जीवोंका कैव
ल्य मोक्षरूपहै, सोई ब्रह्म मायाबिषे प्रतिबिम्बरूपसे स्थित हुआ
कारण होताहै ऐसा कहते हैं] " एतस्माज्जायते प्राणो मनःस
र्व्वेन्द्रियाणिच " इससेही प्राण उपजे हैं, अरु मन अरु सर्व इंद्रि
यां (उपजे हैं) । जिसकरके नाम रूपके बीज (ब्रह्म) के उपाधि
करके लक्षित इस पुरुषसेही अविद्या के आधीन [जब प्राणकी
उत्पत्ति से पूर्व आत्माको प्राणसहितपना नहीं है, तब प्राणकी
उत्पत्तिसे पश्चात् आत्माको प्राणसहितपना होगा । इस शंकाकी
निवृत्ति के अर्थ प्रसिद्ध प्राणके विशेषणको कहते हैं] कार्यरूपनाम
मात्र मिथ्यास्वरूप प्राण उपजताहै ? वाचारम्भणंविकारोनामधे
यमिति ? । वाणी से उच्चारण किया विकार (कार्य) नाममात्रहै
इस छान्दोग्यकी श्रुति से । तिस हेतुसे, जैसे पुत्ररहित देवदत्त
को स्वप्नबिषे देखेहुये पुत्रकरके पुत्रसहितपना नहीं है, तैसेही अ
विद्या के विषय (आधीन) अरु गुणयुक्त प्राणसे परपुरुषका प्रा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अग्निर्मूर्द्धाचक्षुषीचन्द्रसूर्य्यौदिशः श्रोत्रेवाग्विवृत्ताश्चवेदाः। वायुःप्राणोहृदयंविश्वमस्य पद्भ्यांपृथिवीह्येष सर्व्वभूतान्तरात्मा ४। २६॥

सहितपना नहीं है। तैसेही मन अरु सर्व इन्द्रियां अरु तिनके विषय इसही पुरुषसे उपजते हैं। एतदर्थ इस पुरुषको आरोप से रहित (यथार्थ) प्राणादिकसे रहितपना सिद्धभया। अरु जैसे वे प्राणादिक अपनी उत्पत्तिसे पूर्व परमार्थ से अविद्यमान हैं, तैसेही उत्पत्तिसे पीछे तिसहीविषे लीनहोते हैं, इसप्रकार जानना। अरु जैसे इस पुरुषसे मन अरु इन्द्रियरूप करण उपजते हैं, तैसेही शरीर अरु विषयों के कारण "खंवायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्यधारिणी"। (आकाश वायु अग्नि जल अरु विश्वके धारण करनेवालीपृथिवी (उपजेहैं)। आकाश अरु आवहआदिक सातभेद वाला बाह्यका वायु अरुअग्नि अरु जल अरु विश्वको धारण करनेवाली पृथिवी, यह शब्द स्पर्शरूप रस अरु गन्धरूप पिछले २ गुण वाले अरु पूर्व पूर्वके गुणरहित पंचभूत इसही पुरुषसे उपजते हैं॥ "दिव्योह्यमूर्त्तः पुरुषः"। (दिव्य अमूर्त्त पुरुषहै)। इत्यादि मन्त्र से निर्विशेष सत्य अक्षर पुरुषरूप परविद्याके विषयको संक्षेप से कहके पुनः सोई पूर्वोक्त सविशेष वस्तु अब सविस्तर कहने को योग्यहै। अरु जिसकरके सूत्रभाष्य की युक्तिवत् एकही प्रसङ्ग विषे संक्षेप अरु विस्तारसे कहाहुआ पदार्थ सुख से जानने में आवता है, एतदर्थ पूर्व संक्षेप से कथनकिये निरुपाधिक वस्तु को अब सोपाधिकपने करके सविस्तर कहते हैं ३। २५॥

हे सौम्य! जो प्रथम उत्पन्नभये हिरण्यगर्भ रूपप्राणसे उपजा है। अरु अन्यतत्त्व सहित आकाशके स्वरूपसे लक्षाविषे आवता है ऐसा जो इस हिरण्यगर्भ के भीतर वर्त्तमान विराड् है सो भी इसी पुरुष से उपजा है अरु इसी का स्वरूप है, इसी अर्थको कहते हैं। अरु उस विराड्पुरुषको विशेषण देते हैं "अग्निर्मूर्द्धा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चक्षुषीचन्द्रसूर्य्यौदिशःश्रोत्रे वाग्विवृत्ताश्चवेदाः" । अग्नि मस्तक चन्द्रसूर्य दोनों चक्षु दिशा श्रोत्र प्रसिद्ध वेद हैं वाणी (जिसकी); हे गौतम! "असौवाव लोको गौतमाग्निरिति श्रुतेः" यह प्रसिद्ध स्वर्गलोक अग्नि है, इस श्रुतिकरके, अग्नि जो स्वर्गलोक सो है मस्तक जिसका। अरु चन्द्र सूर्य हैं दोनों चक्षु जिसके अरु दशो दिशा हैं श्रोत्र जिसके अरु प्रसिद्ध चारोंवेद हैं वाणी जिसकी । अरु "वायुःप्राणो हृदयं विश्वमस्यपद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्व भूतान्तरात्मा" । वायु है प्राण (अरु) समस्त विश्वहै हृदय जिसका (अरु) पादों से पृथिवी है यह सर्व भूतोंका अन्तरात्माहै। वायु है प्राण जिसका। अरु समस्त जगत् है हृदय (अन्तःकरण) जिसका। एतदर्थ अन्तःकरणका विकाररूपही सर्वजगत् मनविषे ही स्थित है, क्योंकि सुषुप्ति बिषे जगत्का प्रलय देखते हैं। अरु जाग्रत्बिषे भी किसी मनसेही, अग्निसे चिनगारेवत्, उत्पन्न होताहै, एतदर्थ यहां सर्व विश्व विराड्का अन्तःकरण कहाहै। अरु जिससे दोनों चरणों से पृथिवी भई है । यह प्रथम शरीरधारी त्रैलोक्यमय देहरूप उपाधिवाला अनन्तरूप विष्णुदेव आकाशादि सर्व भूतोंका अन्तरात्मा अर्थात् स्थूल पंचभूतरूप शरीरवाला विराड् है। सोई सर्वभूतों बिषे द्रष्टा श्रोता मन्ता विज्ञाता अरु सर्व करणोंका स्वरूप है। अरु पांच, अर्थात् [स्वर्गलोक, मेघ, पृथिवी, पुरुष अरु स्त्री, इन पांचोंबिषे अग्निकी दृष्टिको, अन्य छान्दोग्य उपनिषद्के पंचमाध्याय सम्बन्धीपंचाग्नि विद्याबिषेउक्त होनेसे उन स्वर्गादिक] पांच अग्निरूप द्वारसे जो प्रजा व्यवहार करे हैं सो प्रजाभी उसी पुरुषसे उपजे हैं, इसप्रकार अब अग्निके मन्त्र करके कहते हैं ४। २६ ॥

हे सौम्य! "तस्मादग्निः समिधोयस्यसूर्य्यः" । जिससे अग्नि होता है कि जिसका समिध सूर्य्य है । तिस पुरुष से प्रजाकी स्थिति विशेषरूप जो स्वर्गलोकरूप अग्नि है सो उत्पन्न होताहै। कि जिस अग्निका सूर्य समिधावत् समिध है । अरु जिस करके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मादग्निःसमिधोयस्यसूर्य्यः सोमात्पर्ज्जन्यओषधयःपृथिव्याम् । पुमान्रेतःसिञ्चतियोषितायांबह्वीःप्रजाःपुरुषात्सम्प्रसूताः ५ । २७ ॥

सूर्य्य से स्वर्गलोक प्रकाशित होताहै तिसकरके सूर्य्य उसका समिधहै, स्वयंप्रकाशी गोलही स्वर्गलोक है । अरु "। सोमात् पर्जन्यओषधयः पृथिव्याम् "। । चन्द्रमा से मेघ अरु पृथिवी बिषे ओषधियां (होती हैं) । तिस स्वर्गलोकरूप अग्नि से ६ सोमोराजा सम्भवति ; उत्पन्न भया जो चन्द्रमा तिस चन्द्रमा से मेघरूप द्वितीय अग्नि उत्पन्न होताहै । अरु तिस मेघ से भई वर्षा तिस करके पृथिवी बिषे ओषधियां (व्रीही यवादि अन्न) उत्पन्न होताहै। अरु "। पुमान् रेतः सिञ्चतियोषितायां "। । पुरुष है सो स्त्री बिषे रेतको सिंचन करताहै । पुरुष रूप अग्नि बिषे हवन की हुई अन्नादि ओषधियों से उत्पन्न भया जो रेत (वीर्य) तिसको पुरुष स्त्रीरूपा अग्निबिषे सिंचन करता है । इसप्रकार क्रम करके "। बह्वीः प्रजाः पुरुषात् सम्प्रसूताः "। । पुरुष से बहुतसी प्रजा उत्पन्न होती हैं । परब्रह्मरूप पुरुष से ब्राह्मणादि बहुतसी प्रजा उत्पन्न होती हैं ॥ अरु कर्म के साधन अरु फल उसी पुरुष से उत्पन्न होते हैं, इसप्रकार अब अगिले मंत्रकरके कहैंगे ५ । २७ ॥

हे सौम्य ! ॥ प्र० ॥ हे भगवन् ! । तिस पुरुष से कर्म के साधन अरु फल कैसे होते हैं ॥ उ० ॥ "। तस्माद्दचःसामयजूंषि "। । तिससे ऋचा (ऋग्वेद) सामवेद यजुर्वेद (होते हैं) । तिस पुरुष से नियमित अक्षरवाले पदहैं अन्तबिषे जिसके, ऐसे गायत्री आदिक छन्द करके युक्त मंत्ररूप ऋचा, अरु पांच अवयव वाला अरु सप्त अवयववाला [हिङ्कार, प्रस्ताव, उद्गीथ, प्रतिहार, अरु निधन, इन नामक पांचअवयववाला अरु हिङ्कार, प्रस्ताव, आद्य, उद्गीथ, प्रतिहार, उपद्रव अरु निधन, इननामक सातअवयवोंवाला, जो सामहै सो पांच विभक्तिक अरु सात विभक्तिकहै] अरु अर्थरहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मादृचःसामयजूंषिदीक्षा यज्ञाश्चसर्व्वेक्रतवोदक्षिणाश्च । संवत्सरश्चयजमानश्चलोकाः सोमोयत्रपवतेयत्रसूर्य्यः । ६ । २८ ॥

अक्षररूप स्तोमआदिकके गान करिके युक्त भेदसे तीनप्रकारका साम, अरु नियमरहित अक्षरवाले पदहैं अन्तविषे जिसकें, ऐसे वाक्यरूप यजुर्वेदके मन्त्र ऐसे तीनप्रकार के मन्त्ररूप वेद होते भये । अरु "दीक्षा यज्ञाश्च सर्वे क्रतवो दक्षिणाश्च" । दीक्षा अरु यज्ञके स्तम्भसहित सर्व क्रतुरूप यज्ञ अरु दक्षिणा (होतेभये) यज्ञोपवीतादि लक्षणवाले कर्त्ता के सत्यभाषणादि नियम विशेषरूपदीक्षा अरु यज्ञके यूप (स्तंभ) आदिक सहित अग्निहोत्रादिक क्रतुरूप यज्ञ, अरु एक गौसे आदिलेके [विश्वजित् अरु सर्वमेध इनदोनों यज्ञोंविषे सर्वस्व (सर्वधन) की दक्षिणा होती है, एतदर्थ एकगौसे लेके सर्वस्वधन पर्यन्त दक्षिणा दीजातीहै] अपरिमितसर्वधनके दानपर्यन्त दक्षिणा अरु "संवत्सरश्च यजमानश्च लोकाः सोमो यत्र पवते यत्र सूर्य्यः" । संवत्सर अरु यजमान अरु लोक (उपजते हैं) अरु जिनविषे चन्द्रमा पोषण करताहै अरु जिनविषे सूर्य्य पवताहै । कालरूप संवत्सर, अरु कर्त्तारूप यजमान, यह कर्मों के साधन (सामग्री) अरु तिनकर्त्ता के कर्म के फलरूप लोक उपजते हैं । अरु जिन लोकोंविषे चन्द्रमा लोकोंको (प्रजाको पोषणकरताहै, अरु जिन लोकोंविषे सूर्य तपताहै, सोलोक दक्षिणायन अरु उत्तरायण रूप उभय मार्गोंसे गमन करनेयोग्य विद्वान् अरु अविद्वान्रूप कर्त्ता के कर्मफलहैं ६ । २८ ॥

हे सौम्य ! "तस्माच्च देवा बहुधा सम्प्रसूताः" । तिससे बहुतप्रकारके देवता सम्यक् उत्पन्न होतेभये । तिस परमात्माख्य पुरुषसे कर्मके अंगभूत वसुआदिक गणोंके भेदसे बहुतप्रकारके देवता सम्यक् प्रकारसे उत्पन्न होतेभये । अरु "साध्या मनुष्याः पशवो वयांसि" । साध्य अरु मनुष्य अरुपशु अरुपक्षी उत्पन्न होतेभये ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्माच्चदेवाबहुधासम्प्रसूताः साध्यामनुष्याःपशवो वयांसि । प्राणापानौव्रीहियवौतपश्च श्रद्धासत्यंब्रह्मच र्यंविधिश्च ॥ ७ । २९ ॥

साध्य नामवाले देवविशेष, अरु कर्मके अधिकारी मनुष्य, अरु ग्राम तथा वनके निवासी {अरण्या ग्राम्याश्चये} [पशु अरु पक्षी] उत्पन्न होतेभये । अरु "[प्राणापानौ व्रीहियवौतपश्च श्रद्धासत्यं ब्रह्मचर्यंविधिश्च" [प्राण अरु अपान, धान्य अरु यव अरु तप अरु श्रद्धा अरु सत्य अरु ब्रह्मचर्य अरु विधि (उत्पन्न होतेभये) मनुष्यादिकोंका जीवन प्राण अरु अपान, अरु हवनरूप अर्थवाले धान्य अरु यव, अरु कर्मकाअङ्ग [{पयोब्राह्मणस्य व्रतं यवागूराजन्यस्यामिक्षा वैश्यस्येत्यादि श्रुतिः} ब्राह्मणका पयोव्रत, अरु क्षत्रियका यवागू (कांजी) व्रतहै, अरु वैश्यका आमिक्षा (मिश्रित दूध अरु दधिका विकार) व्रतहै,इत्यादि श्रुतिबिषे विधानकियाजो कृच्छ्र अरु चांद्रायण आदिक व्रत, सो कर्मका अङ्गभूत आदिक तप है] पुरुषके संस्काररूप अरु स्वतन्त्र कर्मका साधनरूप तप, अरु जिसके पूर्व होनेसे सर्व पुरुषार्थों के साधनको कारणरूपचित्त की प्रसन्नताहोती है, ऐसी आस्तिकपनेकी बुद्धिरूप श्रद्धा, अरु खेदका न करनेवाला झूठसेरहित यथार्थ अर्थका कथनरूप सत्य, अरु मैथुन (स्त्रीसंग) के अकरण (त्याग)रूप ब्रह्मचर्य, अरुकर्त्तव्यतारूपा विधि यहसर्व उक्तअक्षरसे उत्पन्न होतेभये ७ । २९ ॥

हे सौम्य !"[तिसप्राणाः प्रभवन्तितस्मात्तसार्चिषःसप्त समिधः सप्तहोमाः" [तिससे सात प्राण अरु सातज्वाला अरु सात समिध अरु सातहोम होतेभये] किंवा तिसही पुरुषसे मस्तकबिषे स्थित जो, दोश्रोत्र, दोनेत्र, दोघ्राण अरु एक मुखान्तर रसना, यह सात प्राणसंज्ञक इन्द्रियां होती हैं, अर्थात् {चक्षुःश्रोत्रे मुख नासिकाभ्यां प्राणः स्वयं प्रतिष्ठते} इस प्रश्न उपनिषद्के तृतीय प्रश्नकी पांचवीं श्रुतिके प्रमाणसे उक्त सातों स्थानों बिषे स्वयं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सप्तप्राणाःप्रभवन्तितस्मात्सप्तार्च्चिषः सप्तसमिधः सप्तहोमाः । सप्तइमेलोकायेषुचरन्तिप्राणागुहाशयानि हिताःसप्तसप्त ८ । ३० ॥

प्राण प्रतिघात (वर्त्तता)है ताते उक्त इन्द्रियोंकी प्राण संज्ञाहै । अरु उन प्राणोंकी अपने २ विषयको प्रकाशनेवाली ज्ञानयुक्त वृत्तिरूपी अर्च्चियां (ज्वाला) होती हैं, अरु तैसेही उन अर्च्चियोंके अर्थ सात विषयरूप समिध होती हैं, अर्थात् जिसकरके विषयों से मिलके यह इन्द्रियां रूप प्राण, जैसे समिध से मिलके अग्निकी ज्वाला तैसे, बाह्य प्रवृत्त होतीहै । ताते विषय इन्होंके समिधहै । अरु "तदस्यविज्ञानं तज्जुहोतीति श्रुत्यन्तरात्" (जो इसका विज्ञान है तिसको होमकरता है) इस अन्य श्रुतिके प्रमाण से, उन विषयोंके विज्ञानरूप सातहोम होतेहैं "इन्द्रियाग्निषु जुह्वती" अरु, "सप्त इमेलोका येषुचरन्ति प्राणागुहाशया निहिताःसप्तसप्त" (जिनविषे प्राण विचरतेहैं यह सातलोक (होतेहैं) अरु गुहाविषे रहतेहैं, अरु सात सात (स्थानकहतेहैं) जिन्होंविषे प्राण विचरतेहैं ऐसे इन्द्रियोंके स्थानरूप यह सातलोक होते हैं । अरु सोप्राण कैसे हैं कि जो निद्राकाल में शरीररूप अथवा हृदयरूप गुहाविषे रहतेहैं, अरु जो परमेश्वरने प्राणियोंके भेदके प्रति सात सात स्थान कियेहैं । हे सौम्य ! इस सम्पूर्ण प्रकरणका यह अर्थ है कि, आत्मयाजी अर्थात् ["सकलमिदमहंच वासुदेवः" (यह सर्व जगत् अरु मैं परमात्माही है) इस प्रकारकी दृढ़ भावना पूर्वक परमेश्वर की आराधनकी बुद्धिसे जो यजन करते हैं तिनको आत्मयाजी कहते हैं] विद्वान् पुरुषों के जो कर्म अरु तिन कर्मोंके साधन अरु कर्मों के फलहैं, अरु अविद्वान् पुरुषोंके कर्म अरु तिन कर्मोंके साधन अरु कर्मों के फल हैं, यह सर्व जगत् सर्वज्ञ पर पुरुष (अक्षर ब्रह्म) सेही उत्पन्न भयाहै ८ । ३० ॥

हे सौम्य ! "अतःसमुद्रा गिरयश्च सर्व्वेऽस्मात् स्यन्दन्ते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतःसमुद्राग्गिरयश्चसर्व्वेऽस्मात्स्यन्दन्ते सिन्धवः सर्व्वरूपाः। अतश्चसर्व्वाओषधयोरसश्चयेनैषभूतैस्तिष्ठतेह्यन्तरात्मा ९। ३१॥

सिन्धवः सर्वरूपाः" इसते सातों समुद्र अरु सर्व पर्वत अरु सर्व-रूपवाली नदियां होती हैं। इस अक्षर नामवाले पुरुष से क्षारादिक सप्त समुद्र होते हैं अरु हिमालय विन्ध्याचल आदि सर्व पर्वत, इस उक्त पुरुषसेही होते हैं, अरु बहुत रूपवाली जे गङ्गा यमुना सिन्धु आदिक नदियां सो भी इसही पुरुषसे स्रवती हैं, अरु "अतश्चसर्व्वाओषधयोरसश्च येनैषभूतैस्तिष्ठतेह्यन्तरात्मा" इसही से सर्व (अन्नादि) ओषधियां अरु रस होते हैं कि जिस करके भूतों करके अन्तरात्मा स्थित होता है। इसही पुरुष से तण्डुल यवादि सर्व ओषधियां उपजती हैं। अरु इसही पुरुष से मधुरादि अर्थात् मधु मीठा अरु कटु (कडुवा) अरु अम्ल (खट्टा) अरु तीक्ष्ण (तीखा) अरु क्षार (खारा) अरु कसायल (कसायला) यह छः प्रकारका रस होता है। अरु जिस रस करके स्थूल पंचभूतों करके आवृतभया अन्तरात्मा (लिंगशरीर) स्थित होताहै। अर्थात् लिंगरूप जो सूक्ष्म शरीरहै सो जिसकरके स्थूल शरीर अरु आत्माके मध्यबिषे बढ़ता (पुष्टहोता) है तिस करके इस लिङ्गको अन्तरात्मा कहते हैं ९। ३१॥

हे सौम्य! इसप्रकार पुरुष (अक्षर) से यह सर्व उत्पन्न भया है। एतदर्थ "वाचारम्भणंविकारो नामधेयं" वाणीसे उच्चार किया विकार नाममात्र (मिथ्या) होताहै। अरु पुरुष (अक्षरब्रह्म) ही सत्य है। एतदर्थ "पुरुषएवेदंविश्वंकर्म तपोब्रह्मपरामृतम्" पुरुषही यह सर्व है (सर्वक्याहै) कर्म अरु तप ब्रह्म पर अमृतरूप। पुरुष (अक्षर) ही यह सर्वहै। पुरुष से अन्य विश्वनामक कुछ भी वस्तु नहीं है। एतदर्थ "कस्मिन्नुविज्ञाते सर्वमिदंविज्ञातंभवतीति" हे भगवन्! किसके जानेहुये सर्व यह जाना जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुरुषएवेदंविश्वंकर्म तपोब्रह्मपरामृतम् । एतद्योवेद निहितंगुहायांसोऽविद्याग्रन्थिंविकिरतीहसौम्य १० । ३२ ॥

यह इसही उपनिषद् के प्रथम मुण्डकके प्रथमखण्डके तीसरे मंत्र बिषे जो कहाथा, सो यह कथन किया । अर्थात् [जो प्रथम मुण्डक के तृतीय मन्त्र करके जो शिष्यने प्रश्न किया था कि हे भगवन्! किसके जानने से यह सर्व जानाजाताहै तिसका उत्तर निरूपण किया । यह नामरूपात्मक सर्व परमात्मा सेही उपजता है । एतदर्थ परमात्मस्वरूप यह सर्व, तिस परमात्मा केही जानने से जाना जाताहै । इस प्रकार (आचार्यनेशिष्यकी) अविद्याके क्षयरूप फलके कथनसे समाप्तकिया] । ननु, सर्वके कारण भूत परमात्मा के जानने से 'पुरुषएवेदंविश्वं' 'पुरुषही यह सर्व विश्वहै' इसप्रकार जानाजाता है ॥ प्र० ॥ पुनःयह विश्व क्याहै ॥ उ० ॥ अग्निहोत्रादि रूपकर्म, अरु तिस कर्मका किया ज्ञानमय तप अरु अन्यभी जो यह सर्व है, सो जिस करके ब्रह्मका कार्यहै तिसही करके "एतद्यो वेद निहितं गुहायां सोऽविद्याग्रन्थिंविकिरतीहसौम्य" हेसौम्य! गुहाबिषे स्थित परम अमृतरूप, इसब्रह्म को जो जानताहै सो अविद्या ग्रन्थिको नाशकरे है। हे सौम्य! (हे प्रियदर्शन!) सर्व प्राणियोंकी हृदयरूपी गुहाबिषे स्थित परम अमृतमय इसब्रह्मको 'अहमेवेति' 'यहमैंहीहूं' इसप्रकारजो जानता है, सो ऐसे अभेद विज्ञान से यहां (संसारबिषे) जीवता हुआही, अर्थात् विनाही मरे, अविद्या की ग्रन्थिको, अर्थात् ग्रन्थिवत् दृढभई जो अविद्याकी वासना तिसको नाशकरे है १० । ३२ ॥

इति श्रीमुण्डकोपनिषद्गतद्वितीयमुण्डकेप्रथमखण्डस्य भाषाटीका समाप्ता ॥

तत्सद्ब्रह्म ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ द्वितीयमुण्डकेद्वितीयखण्डः॥

आविः सन्निहितंगुहाचरन्नाममहत्पदमेवैतत्समर्पितम्। एजत्प्राणन्निमिषच्चयदेतज्जानथसदसद्वरेण्यंपरविज्ञानाद्यद्वरिष्ठंप्रजानाम् १। ३३॥

अथ द्वितीयमुण्डकगतद्वितीयखण्डकी भाषाटीकाप्रारभ्यते॥

हे सौम्य! [अब जिसको एकबार आदेश (उपदेश) मात्रसे 'ब्रह्मास्मीति' अद्वितीय ब्रह्म मैंहूं, ऐसा वाक्यार्थका ज्ञान अनुभव पर्यन्त होवे नहीं, तिस पुरुषको वाक्यके अर्थकीही बाम्बार भावना अरु युक्तिके अनुसन्धानरूप उपायका अनुष्ठान कर्तव्य उचितहै, इस अभिप्रायसेकहते हैं] शिष्यका प्रश्नहै कि, अरूप अरु सद्रूप जो अक्षर (ब्रह्म) है सो किसप्रकारसे जाननेको योग्यहै॥उ०॥ "आविःसन्निहितं" प्रकाशरूपहै अरु सम्यक् स्थितहै सो ब्रह्मस्वयं ज्योति (प्रकाशरूप) है अर्थात् [विश्वके ज्ञानरूपकरके प्रकाशमान ब्रह्महै, तिसकी मुमुक्षुजन सदा भावनाकरें। यह अर्थ है सो अन्य ग्रन्थकारों ने भी कहा है जो है, जो भासताहै, सो आत्मरूप है। तिससे अन्य भासता नहीं, अरु अन्यहै भी नहीं। किन्तु केवल अपनी आप सत्तारूप संवित् (चैतन्य) भासता है। अरु ग्राह्य (विषय) अरु ग्रहीता (विषयी) यह सर्व कल्पना मिथ्याही है इति] अरु सम्यक् स्थितहै अर्थात् [सर्व प्राणियों के हृदय विषे स्थित वागादि उपाधियों से शब्दादि विषयों को प्राप्तहुयेवत् ब्रह्मही जीवभावको प्राप्तहुयेवत् भासताहै, एतदर्थ सो अपरोक्ष है, इसप्रकार सदाही स्मरणकरे] कहिये 'वागाद्युपाधिभिर्व्यक्तति आजतीति, श्रुत्यन्तरे' वाणीआदिक उपाधियोंसे प्रकाशता है अरु विराजमान है। इस अन्य श्रुतिके प्रमाणकरके शब्दादिकोंको प्रकाशताहुआ भासताहै अरु दर्शन श्रवणमनन अरु विज्ञा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न आदिक उपाधियों के धर्मोंसे प्रकटहुआ सर्व प्राणियों के हृदय
बिषे लखाजाताहै। अरु जो यह प्रकटहुआ ब्रह्म हृदयबिषे सम्यक्
स्थित है सो दर्शन श्रवणादिप्रकारों से "गुहाचरंनाम"। हृदय-
रूप गुहा बिषे विचरनेवाला (गुहाचर ऐसे) नामवाला प्रख्यात
है। अरु [अब यह सर्व जगत् कार्यरूप अरु परिच्छिन्नरूप है,
क्योंकि आश्रय सहितका कार्यरूपहोने से अरु परिच्छिन्न होने से
घटादिकोंवत्। एतदर्थ जो सर्वका आश्रयरूप है, सोई मायाका
आश्रय आत्मरूप है। इस युक्तिके अनुसन्धानको कहते हैं]"महत्
त्पदं"। महत्पद है। जो ब्रह्म सर्वसे बड़ा होनेसे महत् है। अरु
सर्व पदार्थोंका आश्रयहोनेसे सर्वसे प्राप्तहोताहै, यातेपदहै एतदर्थ
ही, महत्पदरूप है॥ प्र०॥ सो ब्रह्म महत्पदरूप कैसे है॥ उ०॥
"एजत्प्राणन्निमिषच्च"। चलनेवाला प्राणवाला निमिषवाला
है। जो चलनेवाले पक्षी आदिक हैं, अरु प्राण अपान आदिक
प्राणोंवाले मनुष्य पशुआदिक हैं, अरु निमिष आदिक क्रिया
वालाहै, अरु जो अनिमिषवालाहै। अरु "अत्रैतत्समर्पितं"। यह
इसबिषे प्रवेशको पायाहै। यह सर्व इस ब्रह्मबिषे प्रवेशको पाया
है। अरु "यदेतज्जानथ"। जो है इसको जानो। ऐसा जो (सर्व
का) आश्रयहै, इसको, हे शिष्य! तुम सर्वजानो अरु "सदसद्व
रेण्यं"। सत् असत् स्वरूप है अरु वरेण्य है। सो ब्रह्म तुम्हारा
आत्मरूपहै अरु सत् असत् रूपहै, क्योंकि सत्कहिये अमूर्त्त अरु
असत् कहिये मूर्त्तरूप जो स्थूल अरु सूक्ष्म प्रपंचहै तिसका तिस
ब्रह्म से भिन्न भावका अभाव है ताते, अरु सोई ब्रह्म वरेण्य है
अर्थात् नित्य होनेसे सर्वको माननेयोग्यहै। अरु "परविज्ञानाद्य
रिष्ठं प्रजानां"। प्रजाके विज्ञानसे परहै अरु वरिष्ठहै। प्रजाके विज्ञान
से पर (पृथक्) है, अर्थात् लौकिक ज्ञानसे अगोचरहै अरु वरिष्ठहै
अर्थात् सर्वश्रेष्ठ पदार्थोंबिषे सोई एकब्रह्म अतिशयकरके श्रेष्ठहै
क्योंकि सर्व दोषोंकरके रहितहै ताते १।३३॥

हे सौम्य! [घटादिकोंवत् सूर्य्यादिकोंको जड़ताके होनेसेभी जो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदर्चिमद्यदणुभ्योऽणुयस्मिन्लोकानिहितालोकिन श्च। तदेतदक्षरंब्रह्मसप्राणस्तदुवाङ्मनः तदेतत्सत्यंत दमृतंतद्वेद्धव्यंसौम्यविद्धि २। ३४॥

प्रकाशवान्पने बिषे विचित्रता है, तिसका ब्रह्मरूप प्रकाश विना असंभव है। तिस असंभवरूप अर्थापत्ति प्रमाणसेभी तिसका कारण निश्चय करनेको योग्यहै इसप्रकार यहां कहते हैं] "यदर्चिमत्" [जो प्रकाशवान् है] जो ब्रह्म अपने प्रकाशसे सूर्य्यादिकोंको प्रकाशताहै एतदर्थप्रकाशवान्है [ब्रह्मकोप्रकाशवान् होनेसे सूर्यादिकोंवत् इन्द्रियोंका विषयत्व प्राप्तभया, इस शंकाका यहां निषेध करते हैं] अरु "यदणुभ्योऽणु" [जो सूक्ष्मसेभी सूक्ष्महै] किंवा जो सामा (अन्नविशेष) आदिक सूक्ष्म वस्तुओं से भी सूक्ष्म है शंका॥ [तब ब्रह्मको परमाणु के परिमाणकरके युक्तपना होगा उ०॥ यह शंका करनेको योग्य नहीं ऐसा कहते हैं] अरु वो पृथिव्यादि स्थूल वस्तुओंसेभी अतिशयकरके स्थूल है "अणोरणीयान् महतो महीयान्" [शंका, तब ब्रह्मस्थूल होनेसे अन्य आधारवाला होवेगा॥ उ०॥ यहशंका करनेको योग्य नहीं, ऐसा कहते हैं] "यस्मिन् लोका निहिता लोकिनश्च"। [जिसबिषे लोक अरु लोक निवासी स्थितहैं] जिसबिषे पृथिवीआदिक लोक अरु जो मनुष्यादिक चैतन्यके आश्रय प्रसिद्ध सर्वलोक के निवासी प्रजा हैं सो स्थित हैं। अरु "तदेतदक्षरं ब्रह्म सप्राणस्तदुवाङ्मनः" [सो यह अक्षर ब्रह्महै सो प्राणहै अरु सो वाक् अरु मनहै] [अब प्राणादिकों की जो प्रवृत्ति है सो चैतन्य अधिष्ठानरूप निमित्तवालीहै जड़ोंकी प्रवृत्ति होनेसे रथआदिकोंकी प्रवृत्तिवत् अरु चैतन्य के भेद होने बिषे प्रमाणका अभाव है ताते एक चैतन्यमात्र है ऐसे विचार करना। यह कहतेहैं] सो यह सर्वका आश्रय अक्षर (अविनाशी) ब्रह्म है सो प्राणहै अरु सोई वाक् (वाणी) अरु मन है। अरु च शब्द करके उपलक्षित सर्व कारणरूपहै। अर्थात् प्राणादिकोंके भीतर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धनुर्गृहीत्वौपनिषदंमहास्त्रंशरंह्युपासानिशीतंसन्धीयत । आयम्यतद्भावगतेनचेतसालक्ष्यंतदेवाक्षरंसौम्यविद्धि ३ । ३५ ॥

विद्यमान जो चैतन्यहै, सो उनका आश्रय होनेसे प्राण अरुइन्द्रियादिक सर्व संघातरूप है । क्योंकि 'प्राणस्यप्राणः' 'प्राणकाभी प्राणहै' इत्यादि अन्यश्रुतियोंका प्रमाणहै ताते । अरु जो प्राणादिकोंके भीतर चैतन्यरूप अक्षरहै "तदेतत्सत्यं तदमृतं तद्वेद्धव्यं सौम्यविद्धि" 'सो यह सत्यहै, सो अमृतहै, सो बेधनेको योग्यहै हे सौम्य! बेधनकर' सो यह सत्य है, एतदर्थ सो अमृत (अविनाशी) है सो मन करके बेधने को (ताड़नाकरनेको) योग्यहै । अर्थात् तिस विषे मनका समाधान करना योग्य है । हे सौम्य! जिसकरके यह ऐसे है, तिसही करके बेधन करो अर्थात् (अक्षर विषे चित्त को एकाग्र करो) २ । ३४ ॥

हेसौम्य! [अब विचारविषे असमर्थको ओंकारकाआश्रयकरके ब्रह्म अरु आत्माविषे क्रमसुक्तिरूप फलवाली चित्तकी एकाग्रता के देखावनेका आरम्भ करते हैं । यहां यह अभिप्रायहै कि 'प्रणवो ब्रह्मेति' 'ओंकार ब्रह्महै' इसप्रकार ध्यानकरनेवाले जितेन्द्रिय पुरुषको जो ओंकार सम्बन्धी प्रतिबिम्ब स्फुरता है, 'तदात्मेति' 'सो आत्मा है' ऐसा जो चिंतन सो प्रणवरूप धनुषबिषे बाणका सन्धानहै । अरु तिस ब्रह्मका चैतन्यके प्रतिबिम्बरूप जीवसेएकतारूप जो अनुसन्धान, सो लक्ष्यका बेधहै] ॥ शंका ॥ कैसे बेधने को योग्यहै ॥ उ० ॥ "धनुर्गृहीत्वौपनिषदंमहास्त्रं शरंह्युपासानिशीतं सन्धीयत" 'उपनिषद्बिषे प्रसिद्ध धनुषरूप महान् अस्त्रको लेके निरन्तरध्यानसे तीक्ष्णकिये बाणको सन्धान करना' उपनिषदोंबिषे प्रसिद्ध प्रतिपाद्य जे धनुषरूप महान् अस्त्र तिसको लेके तिसधनुषबिषे, निरन्तर ध्यानकरके तीक्ष्णकिये बाणको सन्धान करना । जिसकरके यहां हाथसेही धनुषका आकर्षण (खींचना)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रणवोधनुःशरोह्यात्माब्रह्मतल्लक्ष्यमुच्यते। अप्रमत्तेनवेद्धव्यंशरवत्तन्मयोभवेत् ४। ३६॥

सम्भवता नहीं, एतदर्थ "आयम्यतद्भावगतेनचेतसालक्ष्यंतदेवाक्षरंसौम्यविद्धि" (तिसबिषे भावनाको प्राप्तभये चित्तसे आकर्षण करके हे सौम्य! तिसही अक्षररूप लक्ष्यको बेधनकरो। तिसअक्षर (ब्रह्म)रूप लक्ष्यबिषे भावनाको प्राप्तभये चित्तसे इन्द्रिय सहित अन्तःकरणको अपने विषय से निवृत्तकरके लक्ष्यबिषेही प्राप्तकरनेरूप धनुषका आकर्षण करके, हे सौम्य! तिसही उक्त लक्षणवाले अक्षररूप लक्ष्यको बेधनकर, अर्थात् लक्ष्य बिषे चित्तको एकाग्रकरो (यह वेदकी आज्ञाहै) ३। ३५॥

हे सौम्य! अब कथनकिये जे धनुषादिक तिनको स्पष्ट कहते हैं "प्रणवोधनुः" (प्रणव ॐकार धनुषहै। जैसे धनुष जो है सो लक्ष्य (निशाना) बिषे बाणके प्रवेशका कारण है, तैसे आत्मारूपी बाणका अक्षररूप लक्ष्यबिषे प्रवेशका कारण ॐकार है। अरु जैसे अभ्यासकिये धनुषसे संस्कार युक्त, अरु तिस धनुषरूप आश्रयवाला हुआ बाण लक्ष्यबिषे स्थित होताहै, तैसेही जिस करके अभ्यास किये ॐकारसे संस्कार (ध्यान) युक्त, अरु तिस ॐकाररूप आश्रयवालाहुआ आत्मा (बुद्धिविशिष्टचैतन्य) अक्षर (ब्रह्म बिषे स्थित होताहै, एतदर्थ ॐकार जो है सो धनुषवत् धनुषहै, अरु "शरोह्यात्मा" (आत्मारूपी) बाणहै। अर्थात् उपाधि करके लक्षित परमात्माही, जलादिगत सूर्य्यादिकों के प्रतिबिम्बादिकोंवत् इस देहरूप घटबिषे सर्व बुद्धि (रूपजल) की वृत्ति (रूपतरंग) नका साक्षी होनेकरके प्रवेशको पायाहै, सो (आत्मा) बाणवत्है अरु "अप्रमत्तेनवेद्धव्यं" (प्रमादसे रहितपने करके बेधनकरने को योग्यहै। आत्माके अर्थ विषयोंकी प्राप्तिकी तृष्णारूप प्रमादसे रहित, अरु सर्वसे विरक्त, अरु जितेन्द्रिय, अरु एकाग्र चित्तसे बेधने को योग्यहै। अरु "ब्रह्मतल्लक्ष्यमुच्यते" (ब्रह्मको लक्ष्य कहते हैं। ऐसा जो अक्षर (ब्रह्म) तिसको लक्ष्य कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस्मिन्द्यौः पृथिवी चान्तरिक्षमेतेमनः सहप्राणैश्चसर्व्वैः । तमेवैकंजानथआत्मानमन्यावाचोविमुञ्चथअमृतस्यैषसेतुः ५ । ३७ ॥

एतदर्थ तिस बेधन करने के पश्चात् "शरवत्तन्मयोभवेत्" बाणवत् तन्मय होताहै। बाणवत् तन्मय (लक्ष्यकारूप) होता है। जिस प्रकार बाणको लक्ष्यके साथ एकतारूप फल होताहै, तैसे देहादिक अनात्माकार वृत्तियों के तिरस्कार होनेसे अक्षर (ब्रह्म) के साथ एकरूपतामय फलको सम्पादनकरना, यह अर्थ है। इति सिद्धम् ४ । ३६ ॥

हे सौम्य! अक्षर (ब्रह्म) दुःख से जानने के योग्य होने करके तिसका बारम्बार जो कथन है सो उसका सुखपूर्वक लक्ष्यकराने के अर्थ है, एतदर्थ तिसहीको बारम्बार कहते हैं "अस्मिन्द्यौः पृथिवी चान्तरिक्षमेते मनः सह प्राणैश्च सर्व्वैः" जिस विषे स्वर्ग पृथिवी अरु अन्तरिक्ष आकाश प्रवेशको पायाहै। सर्व करण (इन्द्रियां) सहित मन (प्रवेशको पायाहै) जिस अक्षर पुरुषविषे स्वर्ग पृथिवी अरु आकाशरूप सर्व जगत् प्रवेशको पायाहै, अरु अन्य सर्वप्राण (करण, इन्द्रियां) करके सहित मन प्रवेश को पायाहै। अरु "तमेवैकंजानथआत्मानमन्यावाचोविमुञ्चथ" तिसही एक आत्माको जानके अन्यवाणी को छोड़ो। हे सौम्य! तिसही सर्वके आश्रय एक अद्वितीयरूप तुम्हारे अरु अन्य सर्व प्राणधारियों के प्रत्यक्रूप आत्माको जानो अरु तिस आत्माको जानके अन्य अपर विद्यारूप वाणीको अरु तिस करके प्रतिपाद्य साधन सहित सर्व कर्मको परित्याग करो, [अब साधन सहित सर्व कर्मको त्यागके एक आत्माही जानने को योग्यहै, इस विषयमें कारण कहते हैं "अमृतस्यैषसेतुः" । यह अमृतका सेतु है। क्योंकि यह सम्यक् आत्मज्ञान अमृत का, अर्थात् मोक्षरूप पारकी प्राप्तिके अर्थ सेतु (पुल) है क्योंकि संसाररूप महोदधि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अराइवरथनाभौ संहतायत्रनाड्यस्सएषोऽन्तश्चरते बहुधाजायमानः । ॐमित्येवंध्यायथआत्मानंस्वस्तिवः पारायतमसःपरस्तात् ६ । ३८ ॥

(बड़ासमुद्र) के पार जाने को (मुमुक्षु के अर्थ) कारण है ताते, अरु जैसे यह आत्मज्ञान मोक्षकी प्राप्तिके अर्थ सेतु पुलवत् सेतुहै। तैसे "तमेवविदित्वातिमृत्युमेति नान्यःपन्थाविद्यतेऽयनायेति" । तिसही को जानके मृत्युको लंघिके जाताहै, मोक्षकी प्राप्तिके अर्थ अन्यमार्ग नहीं" । यह अन्य श्वेताश्वतरकी श्रुति भी कहती है "इतिवेदानुशासनम्, ५ । ३७ ॥

हे सौम्य! "अराइवरथनाभौसंहतायत्रनाड्यस्सएषोऽन्तश्चरते बहुधाजायमानः" । जैसेरथकी नाभिबिषे प्रवेशको प्राप्तभये अरे हैं तैसे जिसबिषे नाड़ियां सम्यक् प्रवेश को प्राप्तभई हैं, सो यह तिस हृदयबिषे बर्त्ततीहै, अनेक प्रकार होताहै। जिसप्रकार रथकी नाभि (मध्यकाकाष्ठ) बिषे प्रवेशको प्राप्तभये अरा (सीधेकाष्ठ)हैं, इसप्रकार जिस हृदयबिषे, सर्व ओरसे देहबिषे व्यापनेवाली प्रसिद्ध नाड़ियां सम्यक्प्रकार प्रवेश को पाई हैं, तिस हृदय बिषे बुद्धिकी वृत्तियों का साक्षीरूप सो यह प्रसंगबिषे प्राप्तभया आत्मातिस हृदय के मध्यबिषे देखता हुआ, सुनताहुआ, मनन करता हुआ, जानता हुआ, बर्तता है, अरु क्रोध हर्ष आदिक वृत्तियों करके अनेक प्रकार को हुयेवत् होताहै। अर्थात् अन्तःकरणरूप उपाधि के अविवेक करके युक्त होनेसे इसको लौकिक जन हर्षवान् अरु क्रोधवान् कहते हैं। तिस "ॐमित्येवंध्यायथ आत्मानंस्वस्तिवः पारायतमसःपरस्तात्" । आत्माको ॐ इस प्रकार से ध्यानकरो तमसेपर पारके अर्थ निर्विघ्न होवो। आत्माको ॐइसप्रकार से ॐकाररूप आश्रयवाले हुये शास्त्रोक्त कल्पनासे ध्यानकरो। इस प्रकार ज्ञानवान् आचार्यने शिष्यके अर्थ कहने योग्य जो वस्तुहै सो कहा। अब ब्रह्मविद्याके जानने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यःसर्वज्ञःसर्व्ववित्यस्यैषमहिमाभुवि दिव्येब्रह्मपुरेह्येषव्योम्न्यात्माप्रतिष्ठितः । मनोमयःप्राणशरीरनेताप्रतिष्ठितोऽन्नेहृदयंसन्निधाय तद्विज्ञानेनपरिपश्यन्तिधीरा आनन्दरूपममृतंयद्विभाति ७। ३९ ॥

कीं इच्छावाले कर्मरहित अरु मोक्ष के मार्ग में प्रवृत्तभये जे जिज्ञासु शिष्य हैं, तिनको विद्यारहित होने करके, आचार्य ब्रह्मकी प्राप्तिको चाहते हैं । हे शिष्य ! तुमको मैंने कथन किया जो [सर्वेश्वरपना अरु मनोमयपना आदिक गुणकरके युक्त ब्रह्मका, हृदय कमलबिषे जो ध्यान है, सो क्रम मुक्तिरूप फलवालाहै । एतदर्थ हे मन्दबुद्धिवाले ब्रह्मवेत्ता (अधिकारी) ! तुम तिसध्यानको करो। इसप्रकार देखावने के अर्थ जो इस संसाररूप महोदधिको लंघिके प्राप्तहोने योग्य पर विद्याका विषय है इस प्रकार कहाहै। यह संसाररूप महान् अपार समुद्र तिसको लंघिके प्राप्तहोने योग्य पर (ब्रह्म) विद्याका विषय है सो तुझको मेरे उपदेश से पश्चात् अविद्यारूप तमसे पर [कर्मके सङ्गीजनों की सङ्गति से कर्म बिषे श्रद्धा अरु विषयों बिषेश्रद्धा होती है । सो वाक्यार्थके ज्ञानकी अनुभवपर्यन्तताकी प्रतिबन्धकरूप विघ्न है । सो विघ्न तुमको मत प्राप्तहोय । इसप्रकारका कथनहै परन्तु वाक्यार्थके अनुभव के उत्पन्न भये फलकी प्राप्ति बिषे विघ्नकी शङ्का नहीं है, इस अभिप्राय से कहते हैं] जो अविद्यारूप तम (अन्धकार) कापर पारहै, तिसके अर्थ, अर्थात् अविद्या राहित ब्रह्मात्मस्वरूपकी प्राप्तिके अर्थ निर्विघ्न जैसे होय तैसे होवो इत्यादेश: । ६ । ३८ ॥

हे सौम्य ! (॥ प्र० ॥ सो आत्मा किस बिषे बर्त्ततहै ॥ उ० ॥) "यःसर्वज्ञःसर्ववित्यस्यैष महिमाभुविदिव्येब्रह्मपुरेह्येषव्योम्न्यात्माप्रतिष्ठितः" । जो सर्वज्ञहै, सर्ववित् है, अरु जिसकी यह पृथिवी बिषे महिमाहै, सो यह आत्मा प्रकाशक ब्रह्मपुर बिषे विद्यमान आकाश बिषे स्थितहै । जो सर्वज्ञ है, सर्ववित् है, अरु जिसकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह प्रसिद्ध पृथिवी बिषे महिमा (विभूति है) ॥ प्र० ॥ कौन यह महिमा है ॥ उ० ॥ यह स्वर्ग अरु पृथिवी दोनों जिसकी आज्ञाबिषे धारण कियेहुये स्थित होते हैं। अरु सूर्य्य अरु चन्द्रमा यह दोनों जिसकी आज्ञाबिषे, अर्द्धदग्ध काष्ठके भ्रमावनेरूप अलात(बनेठी) चक्रवत् निरन्तर (आकाशमार्ग में) भ्रमते हैं। अरु जिसकी आज्ञा बिषे वर्त्तमान नदियां अरु समुद्र अपने देशको लंघिके वर्त्ततेनहीं। तैसे स्थावर अरु जंगमरूप यावत्हैं, सो जिसकी आज्ञासे अपने २ नियममें स्थितहैं। अरु तिसही प्रकार षट्ऋतु अरु दो अयन,अरु साठअब्द (संवत्सर, वर्ष,साल) जो हैं सो जिसकी आज्ञाको लंघिके वर्त्तते नहीं। तैसेही कर्त्ता कर्म्म अरु फल जो हैं सो जिसकी आज्ञासे अपने २ कालको लंघिके वर्त्तते नहीं ॥ सो यह महिमा है॥ इसप्रकार जिसकी पृथिवी लोकबिषे महिमाहै, सो यह सर्वज्ञ है। सो यह आत्मा सर्वबुद्धि वृत्तिके प्रकाशक हृदयरूप ब्रह्मपुर बिषे विद्यमान आकाश बिषे स्थितहुयेवत् भासताहै अरु जिस करके आकाशवत् सर्व व्यापक आत्माको गमनागमन वा स्थिति अन्यप्रकारसे संभवे नहीं। एतदर्थ सो आत्मा मनकी वृत्तिसेही तिसहृदयाकाश नामवाले ब्रह्मलोक बिषे स्थितहुआ भासताहै। अरु "मनोमयःप्राणशरीरनेता प्रतिष्ठितोऽन्ने हृदयंसन्निधाय" मनोमयहुआ प्राण अरु शरीरका लेजानेवाला है, अरु अन्नबिषे बुद्धिको स्थापित करके स्थितभया है। मनरूप उपाधिवाला होनेसे मनोमयहुआ यह आत्मा प्राण अरु शरीर का लेजानेवाला है। अर्थात् स्थूल शरीरसे अन्य सूक्ष्म शरीर को लेजाता है। अरु नित्य नित्य बढ़नेवाले अरु घटनेवाले भोजन किये अन्न के परिणाममय पिण्डरूप अन्नबिषे हृदय कमलगत छिद्र में अपनी उपाधिरूप बुद्धिको भलीप्रकार स्थापित करके स्थितभया है। अरु जिसकरके बुद्धिकी स्थितिही आत्माकी अन्नबिषे स्थिति है, एतदर्थ यहां, बुद्धिको स्थापित करके अन्नबिषे स्थित होताभया ऐसा कहाहै। "तद्विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीरा आनन्दरूपमृतं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भिद्यतेहृदयग्रन्थिश्छिद्यन्तेसर्वसंशयाः । क्षीयन्तेचास्यकर्म्माणितस्मिन्दृष्टेपरावरे ८ । ४० ॥

यद्विभाति" तिसको धीर श्रेष्ठज्ञानसे सर्वओरसे पूर्ण जानते हैं (तिनको) आनन्दरूप अरु अमृतरूपहुआ विशेषकरके भासता है। तिस आत्मतत्त्वको जो धीर (बुद्धिमान्, विवेकी) पुरुष हैं, सो शास्त्र अरु आचार्यके उपदेश से जन्य अरु शम दम ध्यान अरु वैराग्यकरके उद्भवको प्राप्तभये उत्तम ज्ञानसे सर्वओर से पूर्ण जानते हैं तिन पुरुषोंको जो सर्वअनर्थ अरु दुःख अरु श्रमसे रहित आनन्दरूप अरु अमृत अविनाशीरूप हुआ अपनेआप बिषे सदैव विशेषकरके भासता है ॥ सोई आत्मा अक्षर ब्रह्महै ७ । ३९ ॥

हे सौम्य ! अब इस (जिज्ञासु) पुरुषको (आचार्यकरके)कथन किये, अर्थात् (उपदेशकिये) सम्यक् परमात्मज्ञानका (जो फल होताहै सो) यह कहते हैं ॥ " तस्मिन्दृष्टे परावरे " । तिसपर अरु अवरके देखने से। अर्थात् तिस उपदेशकिये परमात्माबिषे, कारण रूपसे पर (श्रेष्ठ जे प्रकृति) अरु कार्य रूपसे अवर (अश्रेष्ठ जगत्) सो रज्जुमें सर्पवत् वाचारम्भणमात्रही है सो सर्वज्ञ असंसारी परमात्माको, "यह साक्षात् मैंहूं" इसप्रकार (अभेदतासे) देखेहुये " भिद्यते हृदयग्रन्थिः " । हृदयकी ग्रन्थि भेदनको पावताहै। इस पुरुषकी अविद्याकी वासनामय हृदयकी ग्रन्थि, अर्थात् हृदयशब्दकरके उपलक्षित बुद्धिके आश्रित ग्रन्थि अपने नाशको प्राप्तहोती है ॥ [यहां यहशङ्का समाधानरूप एक विचारहै, कि यहां (श्रीशङ्कराचार्य्यने) भाष्यबिषे,अविद्याकी वासनाके समुदायरूप हृदयकी ग्रन्थिभेद (नाश)को प्राप्त होती है, ऐसाकहाहै, तिस कहनेका क्याअर्थ (प्रयोजन)है,तिसको जानने के अर्थ वादी शङ्काकरता है॥शङ्का॥ हे सिद्धान्तिन् ! बुद्धिके विद्यमानहोते अविद्या आदिकका भेद(नाश)ज्ञानकाफलहै,अथवा तिसबुद्धिकी निवृत्तिकेहुये अविद्या आदिककाभेद (नाश) ज्ञानका फलहै,यहदो विकल्पहैं, तिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं प्रथमपक्ष बने नहीं क्योंकि उपादानके विद्यमानहुये कार्य के अत्यन्ताभावका असम्भवहै ताते। अरु द्वितीयपक्षभी बनतानहीं, क्योंकि ज्ञानको अज्ञानसेही साक्षात् विरोधकी प्रसिद्धिहै ताते॥ अथवा बुद्धिभी अनादि है वासादिहै, इसका जो विचारकरिये तो भी प्रथमपक्ष बनेनहीं। क्योंकि {एतस्माज्जायतेप्राणोमनःसर्वेन्द्रियाणिच;} इससे प्राणहोते हैं, मनहोताहै, सर्वइन्द्रियांहोती हैंइस श्रुति से विरोध होताहै ताते। अरु (सादिरूप) द्वितीयपक्ष भी बनता नहीं, क्योंकि प्रलयबिषे ब्रह्मज्ञान विनाही बुद्धिकेनाश का सम्भवहै ताते। अरु बुद्धिके सादिपने के होने से बुद्धिका उपादान जब साक्षात् ब्रह्मही है, तब तिस उपादानरूप ब्रह्मके नाश हुये विना बुद्धिका अत्यन्त नाशहोनेका नहीं। अरु जो कदापि बुद्धिकी उपादान मायाहै, तब सो द्रष्टागत ज्ञान से नाश होनेको योग्यनहीं। क्योंकि लोकविख्यात जो मायावी पुरुष तिसबिषे स्थित जो माया तिसका द्रष्टागत ज्ञानसे नाशका अदर्शनहै ताते। किंवा बुद्धिका जो नाशहै, सो तिस बुद्धिका फलनहीं क्योंकि अपने नाशको अफल रूपताहै ताते। अरु सो बुद्धिका नाश आत्माका भी फल नहीं, क्योंकि तिस आत्माको बुद्धिके संगका अभाव है ताते, तिस बुद्धिके नाशको अफलरूपता होनेसे। किंवा आत्माके अविद्या आदिकों के अनाश्रयपनेका कथनहै ताते सो श्रुतिसे विरुद्धहै। क्योंकि आरम्भबिषे "अविद्यायामन्तरेवर्त्तमानाः" {अविद्या के भीतर वर्त्तमान} ऐसा श्रवण होनेसे अरु समाप्तिबिषे {अनीशया शोचति मुह्यमानः;} {अनीशासे मोहको पायाहुआ शोच (शोक) को करताहै} ऐसा श्रवण होने से॥ अरु जो कहो कि, बुद्धिगतही अविद्या आदिकोंका आत्मा बिषे अध्यास होताहै, तो अध्यास होताहै, इस शब्दका कौन अर्थ है। आत्माबिषे स्थापित करते हैं (सो अध्यासहै) वा भ्रान्तिसे देखते हैं (सो अध्यास है)। तिनमें प्रथमपक्ष (जो आत्माबिषे स्थापनो सो) बनेनहीं, क्योंकि अन्यके धर्मकी अन्यके बिषे स्थिति(होने)का असम्भवहैतातें। अरु जो द्वि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तीयपक्ष (भ्रान्तिसे) कहोगे तो भ्रांतिसे (जो देखते हैं सो) किसकरके देखते हैं, आत्माकरके वा बुद्धिकरके तहां प्रथमपक्षजो आत्माकरके (भ्रान्त) सो बनेनहीं, क्योंकि आत्माको अविद्याकी आश्रयताका अनङ्गीकार है। ताते अरु द्वितीय पक्ष जो बुद्धिकरके सो भी देखना बनेनहीं, क्योंकि बुद्धिको आत्माकेताईं विषयकरनेका असम्भवहै, तिसकरके आत्मागत अविद्या आदिकोंके दर्शनका अभाव है ताते अरु भ्रान्तिको अपने आश्रयबिषे स्थित यथार्थ अनुभवसे निवृत्त होनेकी प्रसिद्धिहै ताते। अरु बुद्धिको अनुभवकी आश्रयताका प्रसंगहै ताते। एतदर्थ इसभाष्यका सम्यक् अर्थ हम देखतेनहीं उ०॥ हे वादिन् ! अब तेरी शङ्काका समाधान कहते हैं तिसकोश्रवणकरो। चैतन्यके आधीन अनादि अनिर्वचनीय जो अविद्या है, सो चैतन्यको अविच्छिन्नकरके आपकरके अविच्छिन्न (विशिष्ट) चैतन्यको बुद्धिआदिकों से तादात्म्य रूपकरके वर्त्तती है, तिस अविद्या के ब्रह्मात्माके साक्षात्कार से निवृत्त होने रूपके अङ्गीकार से, तिस अविद्याकी निवृत्तिकेहुये तिस अविद्या से उत्पन्न जो हृदय की ग्रन्थियां तिनकाभेद (नाश) श्रुतिने कहाहै। अरु भाष्यकारका जो बुद्धिके आश्रयकरके हृदयकी ग्रन्थिका कथनहै, सो बुद्धिको उक्त तादात्म्यरूप अहङ्कारको विशेषण होनेकरके अविद्या आदिकों के व्यावहारिकपने के अभिप्राय से है। अरु आत्माको ग्रन्थिकी अनाश्रयताका जो कथनहै, सो आत्माकी निर्विकारताके अभिप्रायसे है] तैसे [कामायेऽस्य हृदिश्रिताः—इति श्रुत्यन्तरात्,] जो काम इसके हृदयबिषे आश्रित हैं। यह अन्य कठवल्लीकी श्रुतिके प्रमाणसे बुद्धिके आश्रित कथन किये जे काम हैं, सो नाश को प्राप्त होते हैं। अरु यह ग्रन्थि हृदय के आश्रितहै, आत्माके आश्रय नहीं, ऐसा जानाजाता है। अरु " छिद्यन्ते सर्व्वसंशयाः " [सर्व संशय छेदन (नाश) को पावते हैं] इसके लौकिक जनों को मरणपर्यन्त गङ्गाके प्रवाहवत् प्रवृत्तभये जो अज्ञानको विषय करनेवाले सर्वसंशयहैं सो अपने नाशको प्राप्त होते हैं। अरु "क्षी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिरण्मयेपरेकोशेविरजंब्रह्मनिष्कलम्। तच्छुभ्रंज्यो-तिषांज्योतिस्तद्यदात्मविदोविदुः ९। ४१॥

यन्ते चास्य कर्माणि" । इसके कर्म क्षयको पावते हैं । इस निःसंशयभये अविद्यारहित पुरुषके, जो ज्ञानोत्पत्तिसे पूर्व इस जन्म विषेकिये । अरु फलके आरम्भसे रहित जन्मान्तर विषेकिये । अरु इसजन्म विषे ज्ञानोत्पत्तिके साथ होनेवाले, जे कर्म सो सर्व क्षयको पावतेहैं । परन्तु इस वर्त्तमान जन्मके आरम्भक जे प्रारब्ध कर्महैं सो क्षयको (नाशको) पावते नहीं, क्योंकि सो अपना फल देनेको प्रवृत्तहोचुके हैं ताते । इसप्रकार यह सम्यक् ज्ञानवान् पुरुष जन्म मरणादिरूप संसारके नाशहोनेसे मुक्तहोताहै । यह अभिप्राय है ८ । ४० ॥

हे सौम्य ! कथनकिये अर्थकोही संक्षेपसे कहनेवाले अग्रिम तीन मन्त्रहैं, तिनकाभी व्याख्यान अब करतेहैं । "हिरण्मयेपरे कोशे विरजंब्रह्मनिष्कलम्" । पर प्रकाशमय कोशविषे रजरहित निष्कल ब्रह्महै । तलवारके कोश (म्यान) वत्, आत्मस्वरूपकी प्राप्तिका स्थान होनेसे, अरु सर्व के भीतरहोनेसे पर जो बुद्धि के विज्ञानरूप प्रकाशमय कोशहै तिसविषे अविद्या आदिक दोषरूप रज (मल) से रहित अरु सर्व से बड़ा होनेसे अरु सर्वका एक आत्मा होनेसे ब्रह्मरूप, अरु सोलह कलारूप अवयवसे रहित होनेसे निष्कलरूप है । अरु जिसकरके, विरज अरु निष्कलरूप है, तिसहीकरके "तच्छुभ्रंज्योतिषांज्योतिस्तद्यदात्मविदोविदुः" । सो शुभ्रहै (अरु) सर्व ज्योतियोंका ज्योतिहै, ऐसा जोहै तिसको आत्माके जाननेवाले जानतेहैं । सो शुभ्र (शुद्ध) है । अरु अग्निआदि सर्व ज्योति (प्रकाशवान्) का भी सो ज्योति (प्रकाशक) है । अर्थात् अग्निआदिकोंका भी जो ज्योतिपना है, सो अपने अन्तर्गत ब्रह्मात्म चैतन्यरूप ज्योति का किया है । अरु जो अन्य प्रकाशोंसे अभासमान आत्मरूप ज्योति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नतत्रसूर्य्योभातिनचन्द्रतारकं नेमाविद्युतोभान्तिकुतोऽयमग्निः । तमेवभान्तमनुभातिसर्व्वं तस्यभासासर्व्वमिदंविभाति १० । ४२ ॥

(प्रकाश) है, सोई परमज्योति है । ऐसा जो परमज्योति है तिसको, शब्दादि विषय अरु बुद्धिकी वृत्तिके साक्षीरूप आत्मा को जाननेवाले आत्माकार वृत्तिके अनुसारी आत्मवेत्ता विवेकी पुरुष जानते हैं । अरु जिसकरके सो परम ज्योति है, तिसही से वो आत्माकारवृत्ति के अनुसारी पुरुषही तिसको जानते हैं। अरु तिससे अन्य जे बाह्य अर्थाकारवृत्ति के अनुसारी पुरुष हैं सो जानते नहीं ६ । ४१ ॥

हे सौम्य ! ॥ प्र० ॥ सो ब्रह्म ज्योतियों का ज्योति कैसे है ॥ उ० ॥ "न तत्र सूर्य्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः" । तिसबिषे सूर्य भासता नहीं (अरु) चन्द्रमा (अरु) तारागण भासते नहीं (अरु) यह बिजलियां भासती नहीं, यह अग्नि कहांसे भासेगा । तहां, अर्थात् तिस अपने आत्मारूप ब्रह्मबिषे, सर्वका प्रकाशक सूर्य भी भासता नहीं, अर्थात् ब्रह्मको प्रकाशता नहीं । अरु सो सूर्य तिसहीके प्रकाशसे अन्य सर्व अनात्माके समूहको प्रकाशता है, परन्तु तिसका अपने आपसेही प्रकाशके करने बिषे सामर्थ्य नहीं । यह अर्थ है । अरु तैसेही तिसबिषे चन्द्रमा सहित तारागणके भासतानहीं अरु यह बिजलियां जो मेघाश्रितहुई प्रकाशती हैं सो भी भासती (प्रकाशती) नहीं तब यह हमलोकों करके प्रकटकिया जो अग्नि सो कहांसे भासेगा किन्तु बहुत कहनेसे क्याहै "तमेव भान्तमनुभाति सर्व्वं तस्य भासा सर्व्वमिदं विभाति" । सर्व तिसही के भासमानहुये पीछे भासता है, अरु तिसहीके प्रकाशसे यह सर्व भासता है। परन्तु यह [यहां प्रकट अर्थ बिषे बाधित भयो जगत्की अनुवृत्ति (बाधभये पीछे प्रतीति) देखाई इस करके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मैवेदममृतंपुरस्ताद्ब्रह्म पश्चाद्ब्रह्मदक्षिणतश्चोत्त-
रेण। अधश्चोर्द्ध्वञ्चप्रसृतं ब्रह्मैवेदंविश्वमिदंवरिष्ठ-
म् ११।४३॥

शरीरसहितको बन्ध भ्रान्तिकी निवृत्तिरूप जीवन्मुक्ति विरोधको प्राप्त होती नहीं] जो जगत् भासताहै सो सर्व तिसही परमेश्वर के स्वरूप से प्रकाशरूप होने से भासमान होने पीछे भासता है, जैसे अग्निके संयोगसे जल अरु अर्द्धदग्ध काष्ठआदिक जो है, सो जलावनेवाले अग्निके पीछे जलावते हैं, आप से नहीं,। तैसेही सर्व जगत् तिसही के प्रकाशमान हुये पीछे प्रकाशता है, आप से नहीं। तिसही के प्रकाश से यह सर्वसूर्य्यादि प्रकाशमानों कर के युक्त जगत् भासताहै। [‘तस्यभासा सर्वमिदं विभाति’।तिस के प्रकाशसे सर्व यह भासता है। इसप्रकार इस ब्रह्मकी स्वयं प्रकाशरूपता बिषे तात्पर्य कहते हैं] जिसकरके इसप्रकार सोई ब्रह्म भासताहै, अरु कार्यगत विविधप्रकारके प्रकाश से विशेषकर के भासता (प्रकाशता) है, एतदर्थ तिस ब्रह्मका स्वरूपसे प्रकाशरूपतापना जानाजाताहै। अरु जो वस्तु स्वरूपसे अविद्यमान है, सो अन्यको प्रकाशने बिषे समर्थ होती नहीं, क्योंकि स्वरूपसे अविद्यमान प्रकाशवाले घटादिकों को अन्यकी प्रकाशकता देखने में आवती नहीं ताते, अरु प्रकाशरूप सूर्य्यादिकों को अन्यकी प्रकाशकताको देखते हैं ताते १०।४२॥

हे सौम्य! अब [समाप्ति के मन्त्रका तात्पर्य कहते हैं, इसमन्त्र बिषे ब्रह्मसे विविध प्रकारका करते नहीं, ऐसा तिसका विकार (कार्य) रूप जगत् जो यह स्थाणुहै, सो पुरुषहै, इस वाक्यवत् ‘सर्वंखल्विदंब्रह्म’। सर्व ब्रह्मही है। ऐसे बाधबिषे समानाधिकरणके हुये अन्वय अरु व्यतिरेक करके बाधरूप अभावके निषेधसे ब्रह्ममात्र बोधन करते हैं] जो, सो ज्योतियों का ज्योति ब्रह्महै, सोई सत्यहै, अरु अन्य जो ‘वाचारम्भणंविकारोनामधेयं’,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ तृतीयमुण्डकेप्रथमखण्डः ॥

द्वासुपर्णासयुजासखाया समानंवृक्षम्परिषस्वजाते।
तयोरन्यःपिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति
१ । ४४ ॥

[वाणी से आरम्भ किया विकार नाममात्र है। तिसका कार्य हो सो सर्व मिथ्याहै । इस विस्तारसे हेतुकरके प्रतिपादन किये अर्थ को वेदस्थानी इस मन्त्रसे फेर समाप्त करते हैं । यह जो अविद्या युक्त दृष्टिवाले पुरुषको " ब्रह्मैवेदममृतंपुरस्ताद्ब्रह्म पश्चाद्ब्रह्मदक्षिणतश्चोत्तरेण " [अग्रभाग बिषे भासमान अमृतरूप ब्रह्मही है, पीछे ब्रह्महै, दक्षिण ओरसे ब्रह्महै, उत्तर ओर से ब्रह्महै। अग्रभागबिषे भासमान वस्तुहै,सो उक्त दक्षिणवाला अमृतरूप ब्रह्मही है, तैसे पीछे ब्रह्म है, तैसे दक्षिण ओरसे ब्रह्महै, तैसे उत्तर (वाम) ओरसे ब्रह्महै । तैसेही "अधश्चोर्ध्वञ्चप्रसृतंब्रह्मैवेदं विश्वमिदंवरिष्ठम् " [नीचेपुनः ऊपर ब्रह्महै । यह फैलाहुआ ब्रह्मही है, यह जगत् अत्यन्त श्रेष्ठ ब्रह्मही है। नीचे ब्रह्महै अरु ऊंचे ब्रह्महै। अरु अन्यभी कार्य के आकारसे सर्वओरसे फैलाहुआ नामरूपवाला यह भासमान जो वस्तु सो ब्रह्महै ॥ हे सौम्य ! अब बहुत कहने करके क्याहै, परन्तु यहसर्व विश्व (जगत्) अत्यन्त श्रेष्ठ ब्रह्मही है । अरु ब्रह्मसे भिन्नप्रतीति है सो सर्व्व रज्जुबिषे सर्पकी प्रतीतिवत् अविद्यामात्र है । अरु "ब्रह्मैवेकंपरमार्थसत्यमिति" [एक ब्रह्मही परमार्थ से सत्यहै। यह वेदकी आज्ञाहै ११ । ४३ ॥

इति श्रीमुण्डकोपनिषद्गताद्वितीयमुण्डकेद्वितीयखण्डस्य
भाषाटीका समाप्ता ॥
तत्सद्ब्रह्मार्पणम् ॥

अथ मुण्डकोपनिषद्गततृतीयमुण्डकभाषाटीकाप्रारभ्यते ॥
हे सौम्य ! जिस पराविद्याकरके सो अक्षर पुरुष नामक सत्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राप्तहोताहै। अरु जिसकी प्राप्तिके होने से हृदयकी ग्रन्थि अरु संशय आदिक संसार के कारण का अत्यन्त नाश होताहै, ऐसी जो पराविद्या सो कही अरु अक्षरके दर्शनका उपाय जो योग्यहै, सो धनुषादिकों के ग्रहणकी कल्पनासे कहा। अब तिस ज्ञान के सहकारी सत्यादि साधन, कहने को योग्य हैं, तिनके अर्थ उत्तर ग्रन्थका अब आरम्भ है। तहां यथार्थ आत्मतत्त्व को अति दुःख से जानने योग्य होने करके, जो पूर्वक्रिया भी तत्त्वका उपदेश (निर्धार) सो पुनः अन्यप्रकारसे कहतेहैं। तहां सूत्ररूप जो प्रथम मन्त्रहै, सो परमार्थरूप वस्तुके निश्चयार्थ प्रारम्भ कहतेहैं। "द्वा-सुपर्णासयुजासखायासमानंवृक्षंपरिषस्वजाते"। दो पक्षी हैं साथ ही युक्तहैं (अरु) सखाहैं (अरु) समान हैं वृक्षको आश्रय करते भये। जीव अरु ईश्वर यह दोनों शोभायुक्त गमनवाले [जीवको अज्ञानी होने करके। अरु नियम में रखने के योग्य होने करके उचित होने से, अरु ईश्वर को सर्वज्ञ होने करके, अरु नियामकपने की शक्तिके योगसे, जीव अरु ईश्वर इन दोनोंका नियम्य अरु नियामक भावकी प्राप्तिरूप गमन (उड़ना) क्वचित् है] होने से अथवा पक्षीके समान होनेसे पक्षी हैं सो सर्वदा साथही युक्त (रहते) हैं। अरु जिसकरके तुल्य प्रख्याति कहावनेकी योग्यता) वाले हैं, अरु तुल्यही प्रकाशके कारण हैं, एतदर्थ परस्पर सखा हैं। अरु समान हैं,। इसप्रकार होनेसे दोनोंके ज्ञानका स्थानक होनेसे, एक जो वृक्षवत् छेदन (नाश) रूपधर्म की तुल्यतासे शरीररूपी वृक्षहै, तिसके अर्थ एक वृक्षके प्रति फल के उपभोगार्थ दोनों पक्षीवत् मिलापको करतेभये। अर्थात् यह शरीररूपी वृक्ष ? ऊर्ध्वमूलोऽवाक्शाखएषोऽश्वत्थःसनातनः ? ऊंचे (ब्रह्मरूप) मूलवाला है, अरु (प्राणादिक) नीची शाखावाला है। अरु अपनी स्थितिके नियमसे रहित होनेसे अश्वत्थ (अस्थिर) है अरु अज्ञान पर्यन्त होने (रहने) वालाहै, अरु ? क्षेत्रमित्यभिधीयते ? क्षेत्र नामवाला है, अरु सर्व प्राणधारियों के कर्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समानेवृक्षेपुरुषोनिमग्नोऽनीशयाशोचतिमुह्यमानः।
जुष्टंयदापश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमिति वीतशो
कः॥ २ । ४५ ॥

फलका आश्रय है, तिस (शरीररूपवृक्ष) को पक्षियोंवत् अविद्या काम अरु कर्मकी वासना के आश्रय लिंगशरीररूपी उपाधिवालाआत्मा (जीव) अरु ईश्वर यह दोनों मिलतेभये। अरु "तयोरन्यःपिप्पलंस्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति"। तिन दोनोंके मध्य एक वृक्षके फलके स्वादको भोक्ताहै और दूसरा भोक्ता नहीं किन्तु देखताहै। मिलेहुये तिन दोनोंके मध्य एक जो लिङ्ग शरीररूपी उपाधियुक्त क्षेत्रज्ञ नामवाला जीवहै सो शरीररूपी वृक्षको आश्रय करताहुआ अपने पाप पुण्यमय कर्मजन्य सुखदुःखमय अनेक प्रकारकी वेदना (दुःख) के अनुभवरूप स्वाद फलको अविवेकता करके भोक्ताहै, अरु अन्य (दूसरा) जो नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाववाला सर्वज्ञ शुद्ध सत्यगुणप्रधान मायोपाधिवाला ईश्वरहै सो भोक्ता नहीं अरु जिसकरके यह ईश्वर नित्यसाक्षीपनेकी सत्तामात्रसे भोग्य अरु भोक्ता दोनोंका प्रेरक है, एतदर्थ सो तो अभोक्ताहुआ वृक्षसे पृथक् होके केवल उदासीन हुआ देखताही है। अरु तिसका दर्शनमात्रसेही राजावत् प्रेरकपना सिद्धहै (विक्रियावान् नहीं) १ । ४४ ॥

हे सौम्य! "समानेवृक्षेपुरुषोनिमग्नोऽनीशयाशोचतिमुह्यमानः"। एक वृक्षबिषे पुरुषनिमग्नहुआ अनीशासे मोहकोपावता हुआ शोकको पावताहै तहां ऐसे होनेसे उक्तप्रकारके शरीररूप एकवृक्षबिषे पुरुष जो भोक्ता जीवहै, सो अविद्या काम कर्मफल रागद्वेषादिरूप बड़े भारकरके आक्रान्त (रोका)हुआ संसारसागर बिषे तूंबेवत् निमग्न भयाहै अर्थात् दृढ़करके देह (संघात) बिषे आत्मभावको प्राप्तभयाहै। अरु यहही हस्तपादादि अवयवयुक्त शरीररूप पिंड मैं अमुक (देवदत्त) का पुत्रहौं, अरु इस (ब्रह्मदत्त)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का पौत्रहौं, दुर्बलहौं, मोटाहौं, गुणवान्हौं, निर्गुणहौं, सुखीहौं, दुःखीहौं, इसप्रकारका (अज्ञानलक्षणात्मक) ज्ञान इसको होता है, इससे अन्य (सम्यक्) ज्ञान इसको नहीं होताहै। इसप्रकार जन्मता मरता रहता है। अरु सम्बन्धी बान्धवादिकों से संयोग वियोगको पावताहै। इस हेतुसे मोहको [आवरण अरु विक्षेप यह दोनों अविद्या के कार्य हैं। तिनमें ईश्वरभावकी अप्राप्ति रूप जो अनीशा, सो आवरण है अरु जो शोकको करता है सो विक्षेप है। अरु इनदोनोंका हेतु जो अनिर्वचनीय अज्ञान सो मोह है तिसमोह करके विशिष्ट भया। इत्यर्थः] पावताहुआ। अर्थात् अनेक प्रकारके अनर्थों से अविवेकी होताहै तिसकरके चिन्ताको प्राप्त हुआ मैं किसीभी कार्यके करनेबिषे समर्थ नहीं हौं, मेरा पुत्रनष्ट भयाहै, मेरी भार्या (स्त्री) मृत्युवश भई है, अब मुझको जीवने साथकहो क्या प्रयोजन है कुछभी नहीं॥ इस प्रकार अत्यन्त दीनभावतारूप जो अनीशा (अशक्तता) है, तिसकरके सन्तापरूप शोकोंको पावता है॥ सो इसप्रकार प्रेत तिर्यक् (पक्षी) अरु मनुष्यादिक योनियोंबिषे वेगवान्ताको प्राप्तभया जीव कदाचित् अनेक जन्मोंबिषे सञ्चय कियेशुद्ध धर्मरूप कर्म तिस निमित्तसे कोई एक परमदयालुआचार्य पुरुषने देखाया जो योगमार्ग तिस बिषे, अहिंसा, सत्य (यथार्थभाषण) ब्रह्मचर्य, वैराग्य अरु शम दमादि साधन तिनकरके युक्त, एकाग्र चित्तवालाहुआ, जिससमय अनेक योगीजनों करके अरु अनेक कर्मिष्ठ जनोंकरके "जुष्टंयदा पश्यत्यन्यमीशमस्यमहिमानमिति वीतशोकः" । सेवन किये अन्य ईश्वरको अरु इसकी महिमाको जिसकाल बिषे देखता है तब वीतशोक होताहै। सेवनकिये, देहरूप (वृक्षकी) उपाधि के लक्षणसे अन्य (विलक्षण) क्षुधा, पिपासा, शोक, मोह, जरा, अरु मृत्यु, यह जो देह, प्राण, मनकी षट्ऊर्मी हैं तिनसे रहित असंसारी, ईश्वरको अरु यह मैं सर्व जगत्का आत्माहौं अरु सर्व को समानहौं (सूर्य्यवत्) अरु सम्पूर्ण भूतोंबिषे स्थितहौं अरुअन्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदापश्यःपश्यतेरुक्मवर्णं कर्त्तारमीशंपुरुषंब्रह्मयोनिम् । तदाविद्वान् पुण्यपापेविधूय निरञ्जनःपरमं साम्यमुपैति ३ । ४६ ॥

अविद्याजन्य उपाधि सो जो परिच्छिन्न मिथ्या आत्मा सो मैं नहीं हौं । अरु जगत् जो है सो इसही मुझ परमेश्वरका रूपहै । इस प्रकारकी विभूतिरूप इसकी महिमाको ध्यावताहुआ देखता है तब वीतशोक होता है । अर्थात् सर्व शोकमय सागर से मुक्त (उत्तीर्ण) होताहै २ । ४५ ॥

हे सौम्य ! अन्य मन्त्र भी उक्त अर्थकोही सविस्तर कहते हैं, सोभी श्रवणकरो " यदा पश्यःपश्यते रुक्मवर्णं कर्त्तारमीशंपुरुषं ब्रह्मयोनिम्" जिसकालबिषे विद्वान् (जिज्ञासुपुरुष) स्वयंज्योति स्वरूपवाले (सर्वजगत्के) कर्त्ता ब्रह्मयोनि ईश्वररूप पुरुष को (अपनाआप) देखताहै " तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय निरञ्जनः परमंसाम्यमुपैति " तिससमय (सो देखनेवाला) विद्वान् (ब्रह्मरूप) पुण्यपाप (मयकर्म) को (समूल) दग्ध करके, वा (पुण्य पापमय कर्मरूप मलसे अत्यन्तशुद्ध होयके) निरंजन (अविद्या से रहित) हुआ परम (सर्वसे श्रेष्ठ) अद्वितीयरूप साम्य (एकता) भावको प्राप्त होताहै ३ । ४६ ॥

हे सौम्य ! " प्राणो ह्येषयः सर्व्वभूतैर्विभाति विजानन् विद्वान् भवते नातिवादी " । जो यह प्राण सर्वभूतों करके विविध प्रकार का भासता है विद्वान् जानता है अतिवादी नहीं होता है । जो यह प्राण का प्राण परमेश्वर ब्रह्मा से लेके तृणादि पर्यन्त सर्व भूतोंबिषे स्थित सर्वात्मा हुआ विविध प्रकार का भासताहै । इस प्रकार सर्वभूतोंबिषे स्थित सर्वात्मा परमेश्वर को जो वाक्यार्थ के ज्ञानबिषे विद्वान् हुआ यह मैंहूं इस प्रकार साक्षात् आत्मभाव से जानताहै, सो पुरुष अन्यसर्वको उल्लंघनकरके अतिवादी (कहने के स्वभाववाला) नहीं होताहै । अर्थात् जो पुरुष उक्तप्रकार " प्रा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणोह्येषयःसर्व्वभूतैर्विभाति विजानन्विद्वान्भव
तेनातिवादी । आत्मक्रीडआत्मरतिःक्रियावानेषब्रह्मवि
दांवरिष्ठः ४ । ४७ ॥

णस्य प्राणः ; प्राणकेभी प्राणरूप आत्माको साक्षात् सोहमस्मि भावसे जानताहै सो अतिवादी नहीं होताहै। क्योंकि जब ‘आत्मै वेदं सर्वं ; सर्वनाम रूपात्मक आत्माहीहै, तिससे पृथक् रंचकमात्र भी नहींहै, तब यह आत्मनिष्ठ विद्वान् किसको उल्लंघन (निषेध) करके कहै। अरु जिस पुरुषको उत्तम मध्यम अन्यवस्तु देखनेविषे आवतीहै सो तिसको उल्लंघनकरके कहताहै। अरु यह आत्मानुभवी विद्वान् तो अपने आपसे ‘नान्यत्पश्यति, नान्यच्छृणोति, नान्यद्विजानाति’ अन्य को देखता नहीं, अन्य को सुनता नहीं, अन्य को जानता नहीं, एतदर्थ अतिवादी होता नहीं। अरु “आत्मक्रीड आत्मरतिःक्रियावानेषब्रह्मविदांवरिष्ठः” । यह आत्मक्रीड़, आत्मरति, क्रियावान् ब्रह्मवेत्ताओंविषे, श्रेष्ठहै । यह विद्वान् कि आत्माविषेहै क्रीड़ा (विचारात्मकरमण) जिसकी, अन्य पुत्रदारा वित्तादिकोंविषे नहीं, सोकहिये, आत्मक्रीड़, अरु आत्मा विषेहीहै प्रीति जिसकी, अन्य देहादिकोंविषे नहीं सो कहिये आत्मरति। अरु तैसेही ज्ञान ध्यान अरु वैराग्यादिकहैं क्रिया जिसकी अन्य श्रौतस्मार्त्तादिक नहीं सो कहिये क्रियावान्, इसप्रकारहै। [यहां ज्ञान कर्मके समुच्चयके प्रतिपादक वेदान्तके एक देशीके व्याख्यानको प्रकटकरके निषेध करतेहैं] कोई एक (एकदेशीमतवाले) वादी तो ‘क्रियावान्’ इसपदके अर्थको अग्निहोत्रादिरूप (बाह्य) कर्म अरु ब्रह्मविद्याके समुच्चयविषे इच्छाकरतेहैं। परन्तु सो उनका इच्छा करना ‘एषब्रह्मविदां वरिष्ठः’ इस मुख्य अर्थवाले वचनसे विरोध को प्राप्त होताहै। व जिसकरके बाह्यक्रिया अरु आत्माविषे प्रीति (निर्विकल्पता) यह दोनों समकाल (साथही) होनेको अशक्य हैं। किन्तु कोई एक अग्निहोत्रादि बाह्य क्रियासे सम्यक् प्रकारसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्येनलभ्यस्तपसाह्येषआत्मा सम्यग्ज्ञानेनब्रह्मचर्य्येणनित्यम् । अन्तःशरीरेज्योतिर्मयोहिशुभ्रोयंपश्यन्तियतयःक्षीणदोषाः ५ । ४८ ॥

निवृत्तहुआ पुरुषही आत्मक्रीड़ होताहै, क्योंकि (अनात्माश्रय) बाह्यक्रियाँ, अरु (आत्माश्रय) आत्मक्रीड़ाका परस्पर विरोध है ताते । जैसे तम अरु प्रकाशकी एकत्र स्थिति सम्भवे नहीं, तैसे ६ क्रियावान् ? इस वाक्य से जो बाह्य क्रिया अरु ज्ञान (आत्मानुसंधान) का समुच्चय परस्परके विरोध कारण से संभवे नहीं, ताते ज्ञान अरु कर्मका जो समुच्चय प्रतिपादन करना सो व्यर्थ वाचालता (बकवाद) है । अरु ६ अन्यावाचोविमुञ्चथ ? । अन्य वाणी को छोड़ो । अरु ६ संन्यासयोगात् ? ।संन्यासयोगसे ? । इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे । एतदर्थ जो ज्ञान ध्यानादिक क्रियावाला अरु भेदरहित अर्थ की मर्यादावाला संन्यासीहै सोई यहां क्रियावान् है । जो ऐसे लक्षणवाला अतिवाद रहित आत्मक्रीड़, आत्मरति अरु योगादि क्रियावान् ब्रह्मनिष्ठहै सो यह सर्व ब्रह्मवेत्ताओंके मध्य वरिष्ठ सर्वमें मुख्यहै ४ । ४७ ॥

हे सौम्य! अब संन्यासीको सम्यक् ज्ञानके [यहां सम्यक् ज्ञान शब्दकरके वस्तुको विषयकरनेवाले अनुभवरूप फल पर्यन्त वाक्यार्थके ज्ञानको कहतेहैं । अरु जिसकरके अपरोक्ष अनुभवरूप जो ज्ञान तिसज्ञानको अविद्याकी निवृत्तिरूप जोअपना कर्तृत्वरूप कार्य तिसके करनेविषे सहकारीकी अपेक्षाका असंभवहै, एतदर्थ परिपक्व विद्याके लाभार्थ परिपक्व ज्ञानका अरु सत्यादि साधनों का समुच्चय मानतेही हैं । अरु इसकरके भास्करके मतकी सिद्धि होती नहीं । क्योंकि परिपक्व विद्या में सहकारीकी अपेक्षा विषे प्रमाणका अभावहै, अर्थात् परिपक्व विद्याका सहायक अरु विरोधी कोई नहीं, ताते अरु तिस विद्यासे कर्मके अलेपका श्रवण है, अर्थात् ६ नलिप्यतेकर्मणापापकेनेति ? । इत्यादि प्रमाण से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिपक्व विद्यावाला विद्वान् कर्म्मोंसे लिप्यमान होता नहीं, तातें। अरु कर्म रहित देवतादिकोंका मुक्तहोना सुना जाता है तातें] सहकारी जो निवृत्ति प्रधान सत्यादिक साधन हैं, सो विधान करते हैं। "सत्येनलभ्यस्तपसाह्येषआत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येणनित्यम्"। यह आत्मा नित्य सत्यसे प्राप्त होने योग्य है (नित्य) तप से (प्राप्त होने योग्य है) अरु यथार्थ आत्मज्ञान के दर्शन से (नित्य प्राप्तहोने को योग्य है) अरु (नित्य) ब्रह्मचर्य से (प्राप्त होने योग्य है)। यह आत्मा नित्यही असत्य भाषण के त्यागरूप सत्य से प्राप्त होने योग्य है। अरु नित्यही इन्द्रिय अरु मनकी एकाग्रतारूप तपसे प्राप्त होने के योग्य है। तथाच "मनसश्चेन्द्रियाणामेकाग्र्यंपरमंतपः"। मन अरु इन्द्रियोंकी एकाग्रता परम तप है। इस प्रकार स्मृतिविषे कहाहै तातें उक्त तपका लक्षण युक्तहै। अरु जिस करके सो तप आत्माके दर्शन के अभिमुख (सम्मुख) होनेसे आत्मदर्शन विषे, अनुकूल है, एतदर्थ यह तपका परम साधनहै। अरु अन्य जे चान्द्रायणादि रूप तपहैं सो तिस (आत्मदर्शन) का परम साधन नहीं। किंवा, यथार्थ आत्मज्ञानके दर्शन (विचार) से नित्य प्राप्तहोने योग्यहै अरु, नित्य मैथुन के अनाचरणरूप ब्रह्मचर्य से प्राप्तहोने को योग्यहै। अरु जिसप्रकार यह साधन कहे, तैसेही "नयेषुजिह्ममनृतंनमायाचेति"। जिन विषे कपट झूठ अरु माया नहींहै। यह प्रश्न उपनिषद्के वाक्य करके कहाहै॥ प्र०॥ जो इन साधनों से प्राप्तहोताहै यह आत्मा कौन अरु कहां है॥ उ०॥ "अन्तःशरीरेज्योतिर्मयोहिशुभ्रोयं पश्यन्तियतयःक्षीणदोषाः"। शरीर के भीतर आकाशमय शुद्धहै, जिसको दोषोंसे रहित संन्यासी पावते हैं। शरीरके भीतर हृदय कमल नामक एक मांस पिंडी है तद्गत आकाशरूप अन्तःकरणविषे प्रकाशमय शुद्ध आत्मा है, जिस आत्माको काम क्रोधादिक चित्तके मलरूप दोषोंसे रहित संन्यासी देखते (पावते) हैं। अर्थात् सो आत्मा नित्य सत्या-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्यमेवजयतेनानृतंसत्येनपन्थाविततोदेवयानः । येनाक्रामन्त्यृषयोह्याप्तकामा यत्रतत्सत्यस्यपरमंनिधानम् ६ । ४९ ॥

दिरूप साधनोंसे संन्यासियों करके प्राप्तहोता है । कदाचित् होने वाले सत्यादिकोंसे प्राप्त होता नहीं । यहां यह सत्यरूप साधन की स्तुत्यर्थ अर्थवाद है ५ । ४८ ॥

हे सौम्य ! "सत्यमेवजयतेनानृतंसत्येनपन्थावितो देवयानः" । सत्यही जयको पावता है अनृत नहीं, सत्यसे देवयान नामक मार्ग प्रवृत्तभया है सत्यवान्ही जयको पावता है, अनृत (झूठ) बोलनेवाला नहीं । जिस करके पुरुष के अनाश्रितही केवल सत्य अरु झूठके सम्भवहुये, जय वा पराजय सम्भवे नहीं किन्तु असत्यवान् जो अनृत (झूठ) बोलनेवाला पराभव को पावता है । सत्यवादी नहीं, यह लोकबिषे प्रसिद्ध है । इसकरके सत्यका बलवान् साधनपना सिद्धभया । किंवा सत्यका अतिशय साधनपना शास्त्रसे भी जाना जाता है ॥ प्र० ॥ किसप्रकार जानताहै ॥ उ० ॥ यथार्थ बोलने की व्यवस्थारूप सत्यसे देवयान नामवाला मार्ग निरन्तरपनेसे प्रवृत्तभयाहै । अरु "येनाक्रामन्त्यृषयोह्याप्तकामायत्रतत्सत्यस्यपरमंनिधानम्" । जहांसत्यकापरमांनिधानहै तहां जिसप्रकारसे आप्तकाम ऋषिजन गमन करतेहैं। जहां सत्यरूप उत्तम साधनका साध्य सो परमार्थ तत्त्वरूप पुरुषार्थ स्वरूपसे वर्त्तमान परमनिधानहै । ऐसा जो ब्रह्मलोक, तहां जिस प्रकारके प्रणवादि उपासनावाले अरु कपट माया झूठ अहंकार दम्भ शठता (आदि आसुरीसम्पदा) से रहित अरु सर्व ओरसे तृष्णा रहित ऋषिलोक गमनकरते हैं । सो सत्यसे निरन्तरपने करके प्रवृत्त भयाहै । यह पूर्वके पदसे सम्बन्ध है ६ । ४९ ॥

हे सौम्य ! सत्यका निधान जो पूर्व कहा तिसको पुनः विशेषणयुक्त कहते हैं ॥ प्र० ॥ सो सत्यका निधान क्या है, अरु सो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बृहच्चतद्दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्चतत्सूक्ष्मतरं विभाति । दूरात्सुदूरेतदिहान्तिकेचपश्यत्स्विहैवनिहितं गुहायाम् ७।५०॥

किस धर्मवाला है ॥ उ०॥ "बृहच्चतद्दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्च तत्सूक्ष्मतरंविभाति"। सो बड़ाहै अरु स्वयंप्रकाशहै अरु अचिन्त्यरूप है, अरु सूक्ष्मसे भी अतिशय सूक्ष्म है अरु विविधप्रकार भासता है। सो प्रसंग बिषे प्राप्तभया ब्रह्म, सत्यादि साधन करके सर्व ओर से व्याप्त है ताते बड़ा है, अरु स्वयंप्रकाश (इन्द्रियोंका अविषय) है अरु एतदर्थ ही, अचिन्त्यरूप है,। अरु सो आकाशादि सूक्ष्मोंसे भी अतिशय करके सूक्ष्महै । अरु जिस करके यह सर्वका कारण है, तिसकरकेही इसको सर्वसे अधिक सूक्ष्मताहै। अरु ऐसाहुआ भी सूर्य्य अरु चन्द्रादिक आकारसे नाना प्रकार का भासता (प्रकाशता) है। किंवा "दूरात्सुदूरेतदिहान्तिकेच पश्यत्स्विहैवनिहितंगुहायां"। सो दूरसे दूर है इसमें समीप वर्तता है, यहांही चेतनावाले गुहाबिषे स्थितहै। सो ब्रह्म अज्ञानी पुरुषों को अत्यन्त अगम होनेसे दूर से भी दूरदेश बिषे वर्तताहै, अरु विद्वानों का आत्माहोने से अरु सर्वान्तर होनेसे, अरु "आकाशमन्तरोयं" वा "आकाशशरीरंब्रह्म" आकाशकेभी भीतर है इस श्रुतिसे, इस देहमें समीप बिषे बर्तता है। अरु यहां ही चेतनावाले पुरुषों के मध्य बुद्धिरूपी गुहाबिषे स्थित यह ब्रह्मदर्शनादि क्रियावाला होने करके योगी पुरुषोंसे लक्ष्य में आवताहै, तथापि अविद्यासे आवृत हुआ तहांही स्थित ब्रह्म अविद्वानों करके कदापि लक्ष्यमें आवता नहीं। इतिसिद्धम् ७।५०॥

हे सौम्य! फेर भी, असाधारण बिषे भी असाधारणरूप जो तिसके ज्ञानार्थ साधनकहते हैं "नचक्षुषागृह्यतेनापिवाचानान्यैर्देवैस्तपसाकर्मणावा"। चक्षुकरके नहींग्रहणकरते,अरु वाणीकरके भी नहीं (ग्रहणकरते) अरु अन्यदेवताओंसेभी नहीं (ग्रहणकरते)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नचक्षुषागृह्यतेनापिवाचान्यैर्देवैस्तपसा कर्म्मणा वा । ज्ञानप्रसादेनविशुद्धसत्त्वस्ततस्तुतंपश्यतेनिष्कलं ध्यायमानः ८ । ५१ ॥

अरु तपसेभी (नहीं ग्रहणकरते) अरु कर्मसेभी (नहींग्रहणकरते)। जिसकरके यह ब्रह्मसे अभिन्न आत्मा सो अरूप होनेसे किसी भी पुरुषकरके चक्षुसे ग्रहण (विषय) किया जाता नहीं, अरु अवाच्य होनेसे वाणीसे भी ग्रहण किया (कहा) जाता नहीं, अरु अन्य जे देवता (इन्द्रियां) तिनकरके भी ग्रहण (विषय) किया जाता नहीं, अरु तप जो सर्व फलकी प्राप्तिका साधन तिस तप करकेभी ग्रहण कियाजाता नहीं, क्योंकि तपआदिकों के फलोंकोंसे पृथक् है । अथवा तैसे प्रसिद्ध महद्भाववाले अग्निहोत्रादि रूप वैदिक कर्मसे भी ग्रहण किया जाता नहीं ॥ प्र० ॥ जब उक्त प्रकार से नहीं ग्रहण होता, तब तिसके ग्रहणका साधन कौन है ॥ उ० ॥ "ज्ञानप्रसादेनविशुद्धसत्त्वस्ततस्तुतं पश्यतेनिष्कलं ध्यायमानः" । ज्ञानके प्रसाद से शुद्धअन्तःकरणवाला जानने को योग्यहै ताते सो तिस निष्कलको देखता है । ज्ञान जो है सो सर्व प्राणधारियोंको स्वभावसेही आत्माके बोधन करने विषे समर्थ है, तथापि बाह्य विषयों विषे रागादि दोषोंकरके मलिन हुआ नित्य समीपस्थ आत्माको भी, मैलसे आवृत दर्पणवत्, अरु चंचलजलवत्, बोधनकरता नहीं। सो ज्ञान, जब इन्द्रिय अरु विषयोंके सम्बन्धसे उत्पन्न भये जे रागादिक मैल तिन मैलको दूर करने से दर्पण अरु जलादिकोंवत् प्रसन्न (स्वच्छ अरु शान्त) स्थित होताहै, तब ज्ञानका [जिसकरके अर्थको जानिये ऐसी जो बुद्धि तिसको ज्ञान कहते हैं । तिसकी जो प्रसन्नता तिसको 'ज्ञान प्रसाद, कहते हैं । पुरुष ध्यान करता हुआ ज्ञानप्रसाद को पावताहै । अरु ज्ञानके प्रसाद से आत्माको देखता है । इस प्रकार अर्थका क्रम यहां जानना । क्योंकि संशय आदि मलसे रहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एषोणुरात्माचेतसावेदितव्योयस्मिन् प्राणःपञ्चधासं विवेश । प्राणैश्चित्तंसर्वमोतंप्रजानां यस्मिन्विशुद्धेविभवत्येषआत्मा ६ । ५२ ॥

प्रमाके ज्ञानकोही साक्षात्कारका हेतु होने से ध्यान क्रिया को प्रमाज्ञानकी साधनता की असिद्धि है ताते] प्रसाद होता है। तिस ज्ञानके प्रसादसे शुद्ध अन्तःकरणवाला पुरुष, जिस करके ब्रह्मके देखने को योग्यहै, एतदर्थ यह पुरुष,सर्व अवयवों के भेद से रहित निष्कलरूप तिस ब्रह्मको सत्यादि साधनवान् अरु जितेन्द्रिय होयके एकाग्रमन से ध्यान करताहुआ आत्मा कोही देखता (प्राप्तहोता) है ८ । ५१ ॥

हे सौम्य ! " एषोणुरात्माचेतसावेदितव्योयस्मिन्प्राणःपञ्चधा संविवेश " । यह आत्मासूक्ष्म है, सो जिस बिषे प्राण पांचप्रकार से सम्यक् प्रवेश को पायाहै तिस बिषे चित्त करके जानने को योग्यहै। यह आत्मा सूक्ष्महै, सो जिस शरीर बिषे प्राणवायु प्राण अपानादि पांचप्रकार के भेद करके सम्यक् प्रकार प्रवेशको पायाहै, तिसही शरीर बिषे हृदय कमलरूप देशमें केवल विशुद्ध ज्ञानरूप चित्तकरके जानने को योग्यहै ॥ प्र० ॥ किसप्रकार चित्तसे आत्मा जानने को योग्यहै ॥ उ० ॥ घृतसे दूधवत्, अरु अग्निसे काष्ठवत् [बौद्ध आदिकों को चित्तादिकों बिषे चेतना के भ्रमके दर्शन से, चित्त जो है सो तिस अपने सम्बन्धी वस्तु बिषे चैतन्यका आविर्भाव करने में स्वभाव सेही योग्यहै । एतदर्थ चित्तबिषे परमात्माकी अभिव्यक्ति (प्रकटता) के सम्भवसे चित्तसे ब्रह्मको जाननेकी योग्यता कहते हैं, इसप्रकार की सम्भावनाके अर्थ यहां कहते हैं " प्राणैश्चित्तंसर्वमोतं प्रजानांयस्मिन्विशुद्धेविभवत्येषआत्मा " । प्राणअरु इन्द्रियां सहित सर्व प्रजाका अन्तःकरण व्याप्तहै, तिस विशुद्ध (चित्त) बिषे यह आत्मा विशेष करके प्रकाशताहै । जिस चैतन्य करके प्राण अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यंयंलोकंमनसासंविभातिविशुद्धसत्त्वः कामयते यां श्चकामान् । तन्तंलोकंजायतेतांश्चकामांस्तस्मादात्म ज्ञंह्यर्चयेद्भूतिकामः १० । ५३ ॥

इति तृतीयमुण्डकेप्रथमखण्डः ॥

इन्द्रियों करके सहित, प्रजाका सर्व अन्तःकरण व्याप्त है । अरु जिस करके लोक बिषे प्रजाका सर्व अन्तःकरण चेतनावाला प्रसिद्ध है तिसही करके तिस चेतनावान् (अनुसन्धानात्मक)वृत्ति रूप चित्त से आत्मा जानने को योग्यहै । पुनः यह चित्त कैसा है कि, जिसक्लेशादि मलरहित शुद्धहुये चित्तबिषे यह कथनकिया आत्मा विशेष करके स्वस्वरूप सेही प्रकाशताहै ६ । ५२ ॥

हे सौम्य ! जो पुरुष ऐसे उक्त लक्षणवाले सर्व के आत्मा को अपना आप आत्मभाव से प्राप्तभया है तिस पुरुषको सर्वात्मा होने से सर्वकी प्राप्तिरूप फलहोता है, इसप्रकार कहते हैं। "यंयं लोकंमनसासंविभातिविशुद्धसत्त्वःकामयतेयांश्चकामान्" । [निर्मल अन्तःकरण । जिस जिस लोकको मन करके चितवता है अरु जिन भोगों की इच्छा करता है । जो क्लेशादि मल रहित है, अरु आत्माबिषे शुद्ध अन्तःकरणवाला पुरुषहै सो, जिस जिस पुत्रादिरूप लोकको "मह्यमन्यस्मैवाभवेदिति" [मेरेअर्थ वा अन्य के अर्थहोवे । इसप्रकार मनसे चितवता है अरु जिन जिन भोगों की इच्छा करताहै "तन्तंलोकंजायतेतांश्चकामांस्तस्मादात्मज्ञं ह्यर्चयेत् भूतिकामः" । [तिस तिस लोक को अरु तिन भोगों को पावता है, ताते विभूति की इच्छावाला आत्मज्ञानी का पूजन करे । (एतदर्थ विद्वान्को सत्यसङ्कल्पवाला होने से विभूति (धनादिक) की इच्छावाला जो पुरुषहै सो आत्मज्ञानसे शुद्धभये अन्तःकरणवाले आत्मज्ञानी को पादप्रक्षालनादि सेवा अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथतृतीयमुण्डकेद्वितीयखण्डः॥

सवेदैतत्परमंब्रह्मधामयत्रविश्वंनिहितं भातिशुभ्रम् । उपासतेपुरुषंयेह्यकामास्ते शुक्रमेतदतिवर्त्तन्ति धीराः १ । ५४ ॥

नमस्कारादि पूजन करे ॥ हे सौम्य ! इसप्रकार आत्मज्ञानी देवताओंवत् पूजने योग्यही है १० । ५३ ॥

इति मुण्डकोपनिषद्गततृतीयमुण्डकभाषाटीकासमाप्ता ॥

हरिः ओं तत्सद्ब्रह्मार्पणम् ॥

अथ तृतीयमुण्डकगतद्वितीयखण्डभाषाटीका ॥

हे सौम्य! "सवेदैतत्परमंब्रह्मधामयत्राविश्वं निहितंभातिशुभ्रम्" सो परमधामको जानताहै जिस विषे जगत् स्थितहै, अरु जो ब्रह्मरूप धाम शुद्धहुआ भासता है । जिस करके 'सो यह, इस उपलक्षणवाले ब्रह्मरूप सर्व कामना के आश्रय परमधाम को जानता है। अरु जिस ब्रह्मरूप धामबिषे सर्व जगत् स्थितहै। अरु जो ब्रह्मरूप धाम आप शुद्धहुआ अपने प्रकाशसे आपही भासता है। अरु "उपासतेपुरुषंयेह्यकामास्ते शुक्रमेतदतिवर्त्तन्तिधीराः" । पुरुषको भी बुद्धिमान् कामनासे रहितहुये उपासते हैं सो यह प्रख्यात वीर्य को उल्लंघ जाते हैं । एतदर्थ ऐसे उस आत्मज्ञानी पुरुषको भी जो धीर (बुद्धिमान्) पुरुष वैभव विभूतिकी कामना से रहित केवल मोक्षकी कामनावाले हुये, जैसे परमात्मरूप देवको, तैसे उपासते हैं सो पुरुष इस प्रसिद्ध शरीर के उपादान कारण बीजरूप वीर्यको उल्लंघके जाते हैं, बारंबार योनिको धारते नहीं "नपुनःकरातिंकरोतीति" । पुनः किसी विषे प्रीतिको करता नहीं । इस श्रुतिके प्रमाण से । एतदर्थ तिस सम्यक् आत्मज्ञानी को सर्वप्रकारसे उपासना योग्यहै १ । ५४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कामान्यःकामयते मन्यमानःसकामभिर्जायतेतत्र तत्र । पर्य्याप्तकामस्यकृतात्मनस्तुइहैवसर्व्वेप्रविलीयन्तिकामाः २ । ५५ ॥

हे सौम्य ! अब मोक्षकी इच्छावाले को सर्वथा कामका त्यागही मुख्य साधन है, इसबातको वेद भगवान् देखावते हैं "कामान्यःकामयतेमन्यमानःसकामभिर्जायतेतत्रतत्र" । जो भोगोंको चितवताहुआ इच्छाकरताहै सो कामनाके साथ तहांतहां जन्मता है। जो पुरुष दृष्ट अरु अदृष्ट विषयरूप भोगोंको गुण बुद्धिसे चितवता हुआ इच्छा करताहै, सो तिन धर्म अधर्म विषे प्रवृत्ति के कारण जे विषयोंकी इच्छारूप कामना तिसके साथ तहां तहां जन्मता है । अर्थात् जिन जिन विषयों बिषे, विषयोंकी प्राप्ति के निमित्त जो कामना सो कर्मोंविषे पुरुषको प्रेरणाकरे है, उन उन विषयों बिषे उन कामनाओंसे वेष्टित हुयेवत् जन्मता है। अरु "पर्य्याप्तकामस्यकृतात्मनस्तु इहैवसर्व्वेप्रविलीयन्तिकामाः" । पूर्णकामकृतात्माके तो इसही बिषे सर्व काम विनाश को पावते हैं। जो पुरुष परमार्थ तत्त्वके ज्ञानसे आप्तकाम होने करके सर्व ओर से प्राप्त भये हैं काम (भोग) जिसको सो पूर्णकामहै अरु निकृष्ट रूप अविद्याके स्वरूपसे निकालके, विद्याकरके अपने श्रेष्ठरूप से कियाहै आत्मा जिसका, ऐसा कृतात्मा है । तिस पूर्णकाम कृतात्मा पुरुष के तो इसही विद्यमान शरीर बिषे सर्व धर्म अधर्मों में प्रवृत्ति के हेतुरूप काम [विषयों बिषे यथार्थ दोषोंको देखने से पुरुष पूर्णकाम होताहै (अर्थात् उसकी सर्व कामना समाप्त होतीहैं) अरु सो विरुद्धलक्षणसे आप्तकाम भयाहै, अरु तिस आत्माकीजिज्ञासासेही चित्तकोवशकरनेवालेपुरुषके, विषयोंसेइच्छा के भेदरूपकाम निवृत्तहोतेहैं] विनाशको पावतेहैं। तिस कामके जन्मके कारणके विनाशसे वे काम उपजते नहीं। अर्थात् [उत्पन्न भये कामोंका ज्ञान विनाभी क्षयहोना सम्भवहै, ताते यहां स्वहेतु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नायमात्माप्रवचनेनलभ्यो नमेधयानबहुनाश्रुतेन।
यमेवैषवृणुतेतेनलभ्यस्तस्यैष आत्मावृणुतेतनूंस्वाम् ॥
३।५६॥

के विनाशसे काम पुनः उपजते नहीं] इत्यभिप्रायः २।५५॥

, हे सौम्य! जब इसप्रकार परमात्मा के लाभसे सर्व का लाभ होता है, तब तिसके लाभार्थ शास्त्र अध्ययनादि उपाय विशेषकरके करने को योग्य है। इसप्रकार प्राप्तहुए यह कहते हैं। "नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो नमेधया न बहुनाश्रुतेन" [यह आत्मा बहुत पढ़नेसे प्राप्तहोने योग्य नहीं, अरु बुद्धिसे पावने योग्य नहीं, अरु बहुतसे सुननेसे भी पावने योग्य नहीं] परम पुरुषार्थ रूप जिसका लाभ है, इसप्रकार व्याख्यान किया जो यह आत्मा, सो वेद अरु शास्त्र के बहुतसे अध्ययनरूप प्रवचनसे प्राप्तहोने योग्य नहीं अरु तैसेही वेदादिकों के अर्थकी धारणा शक्तिरूप मेधा (बुद्धि) सेभी पावने योग्य नहीं, अरु तैसेही उपनिषदों के विचार से इतर बहुत से शास्त्रों के श्रवणकरने से भी पावने योग्य नहीं॥ प्र०॥ तब वो आत्मा किनसाधनों से पावनेयोग्य है॥ उ०॥ "यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैषआत्मा वृणुते तनूंस्वाम्" [यह जिसकोही पावने की इच्छा करताहै, तिससे यह पावनेको योग्य है तिसको यह आत्मा अपनी तनूको प्रकाशता है] यह विद्वान् जिसआत्माकोही पावनेकी इच्छाकरता है तिसवर्णन (भजन)से [मैं परमात्माहूं,। इसप्रकार अभेद के अनुसन्धानको वर्णन कहते हैं तिस वर्णन से यह आत्मा पावने को योग्य होता है, अरु बहिर्मुख पुरुषोंकरके तो सैकड़ोंबार श्रवणादिक के कियेहुएभी यह आत्मा प्राप्तहोता नहीं। एतदर्थ मैं परमात्माहौं इस चिन्तनरूप परमात्माके भजनको पूर्वकरकेही श्रवणादिक सम्पादन करनेको योग्यहै, यहभाव है॥ अथवा जिस परमात्माको पावनेकी इच्छा करताहै सो तिस मुमुक्षुरूप से स्थित भये परमात्माकरके अभेदके अनुसन्धानरूप प्रार्थनाकरके मुमुक्षु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नायमात्माबलहीनेनलभ्यो नचप्रमादात्तपसोवाप्य लिङ्गात् । एतैरुपायैर्यततेयस्तुविद्वांस्तस्यैषआत्माविश तेब्रह्मधाम ४ । ५७ ॥

रूप से स्थित भया परमात्माही प्राप्तहोने को योग्य है । इसप्रकार अभेद के अनुसन्धानसेही आत्मा प्राप्तहोने योग्यहै, कर्मसे कदापि नहीं । इत्यर्थः] यह परमात्मा प्राप्तहोने योग्य है अन्य साधनोंसे नहीं, क्योंकि आत्मा नित्य प्राप्त स्वभाववाला है ताते ॥ प्र० ॥ विद्वान्को यह आत्माका लाभ किसप्रकार का है ॥ उ० ॥ तिस विद्वान् का यह आत्मा अविद्या से आवृत अपनी उत्कृष्ट स्वात्म तत्त्वस्वरूप तनुको प्रकाशता है, अर्थात् विद्याके होनेसे घटादिकों के प्रकाशवत् आविर्भावको पावता है, एतदर्थ अन्यके त्याग से आत्मा के लाभकी प्रार्थनाही आत्मप्राप्ति का साधन है ॥ इति सिद्धम् ॥ ३ । ५६ ॥

हे सौम्य ! जिसकरके यह लिङ्गयुक्त संन्यास सहित बल अप्रमाद अरु तपरूप साधन आत्माकी प्रार्थना के सहकारी है । "नायमात्माबलहीनेन लभ्यो नचप्रमादात्तपसोवाप्यलिङ्गात्" । यह आत्मा बलहीन करके पावने को योग्य नहीं, अरु प्रमाद से पावने को योग्य नहीं, अरु लिङ्ग से रहित तपसे पावने के योग्य नहीं। एतदर्थ यह आत्मा आत्मनिष्ठा से उत्पन्नभये बलसे रहित पुरुषों करके प्राप्तहोने को योग्य नहीं, अरु पुत्र पशुआदिक विषयोंकी आसक्तिरूप निमित्त से हुए कर्त्तव्य के विस्मरणरूप प्रमाद से प्राप्त होनेको योग्य नहीं । अरु तैसेही संन्यासरूप लिङ्गसे [॥ प्र० ॥ इन्द्र जनक गार्गी आदिकों को भी आत्मलाभ हुआ ऐसा श्रवण है तब संन्यासरूप लिङ्गसे रहित ज्ञानरूप तपसे भी आत्मा प्राप्तहोनेको योग्यनहीं, ऐसा कैसे कहतेहो ॥ उ० ॥ यद्यपि इन्द्र जनकादिकोंको बाह्य संन्यासका अभाव होने से भी आत्मलाभ भया है यह तेरा कथन सत्य है, तथापि संन्यासनाम सर्व के सम्यक् त्यागका है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संप्राप्यैनमृषयोज्ञानतृप्ताः कृतात्मानोवीतरागाःप्रशान्ताः । तेसर्व्वज्ञंसर्व्वतःप्राप्यधीरा युक्तात्मानःसर्व्वमेवाविशन्ति ५ । ५८ ॥

अरु तिनजनकादिकोंको ममतास्पद अरु अहंतास्पदविषे सम्यक् वैराग्य होनेसे अन्तरका संन्यास विद्यमानहीथा । अरु बाह्य का लिंग (चिह्न संन्यास) सो श्रुतिकरके कहनेको इच्छित नहीं। अर्थात् बाह्य चिह्न (संन्यास) का श्रुतिको आग्रह नहीं, क्योंकि [नलिङ्गंधर्म्मकारणम्;] [लिंग (बाह्य चिह्न) जो है सो धर्म्मका कारण नहीं। यह स्मृतिका प्रमाणहै ताते] रहित ज्ञानरूप तपसे भीप्राप्तहोने को योग्य नहीं । अरु "[एतैरुपायैर्यततेयस्तुविद्वांस्तस्यैषआत्मा विशते ब्रह्मधाम]" [जो विद्वान् उक्त उपायोंसे प्रयत्न करताहै तिसका यह आत्मा ब्रह्मधाम के अर्थ सम्यक् प्रवेशकरता है] जो विद्वान् तत्परहुआ इन बल, अप्रमाद, त्याग अरु ज्ञान रूप उपायों से भलीप्रकार यत्नकरता है तिस विद्वान्का यह (बुद्धिविशिष्ट) आत्मा ब्रह्मरूप धाम बिषे (कि जहांका गया पुनः नहीं आवता) सम्यक् प्रवेश करता है (समुद्रमें नदीवत्) इत्यभिप्रायः ४ । ५७ ॥

हे सौम्य ! प्र० ॥ विद्वान् ब्रह्मके बिषे किसप्रकार प्रवेशको करतेहैं ॥ उ० ॥ "[संप्राप्यैनमृषयो ज्ञानतृप्ताः कृतात्मानो वीतरागाः प्रशान्ताः]" [ऋषिलोग इसको जानके ज्ञान से तृप्तहुये सिद्धभये आत्मावाले हुये रागादि दोषों से रहित जितेन्द्रिय भयेहैं] जो परमात्माके दर्शनवाले ऋषिलोग इस (अपने आप) आत्माको जानके तिसही ज्ञानसे तृप्तहुये, कुछ शरीरकी वृद्धि क्षयके कारण जे बाह्यकी तृप्तिके साधन तिनसे नहीं, अरु परमात्माके स्वरूप से ही सिद्धभये आत्मावालेहुये रागद्वेषादि दोषोंसे रहित जितेन्द्रिय हुयेहैं । अरु "[तेसर्व्वज्ञं सर्व्वतःप्राप्यधीरा युक्तात्मानःसर्व्वमेवाविशन्ति]" [सो अत्यन्त विवेकी नित्य चित्तकी एकाग्रताके स्व-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः । तेब्रह्मलोकेषुपरान्तकालेपरामृताःपरिमुच्यन्तिसर्व्वे ६ । ५९ ॥

भाववाले पुरुष सर्वव्यापक अद्वैत ब्रह्मको सर्व्वत्र पायके सर्व्व के अर्थ प्रवेशको करते हैं। सो अत्यन्त विवेक शील योग करके नित्य विक्षेपसे रहित चित्तकी एकाग्रता के स्वभाववाले आत्मवेत्ता पुरुष आकाशवत् सर्वव्यापक अद्वैत ब्रह्मको कुछ उपाधिसे परिच्छिन्न एक देशसे नहीं पावते, किन्तु, सर्वत्र पाय के शरीर के पतनहुये भी सर्व्वके बिषे प्रवेशकरतेहैं। अर्थात् फूटे घटके आकाशवत् उपाधिकृत परिच्छेदको छोड़ते हैं । इसप्रकार ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मरूप धामके ताईं प्रवेशकरतेहैं ॥ इति भावार्थः ५ । ५८॥

हे सौम्य! "वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाःसंन्यासयोगाद्यतयःशुद्धसत्त्वाः"। वेदान्त से जनित विज्ञानके अर्थ के निश्चयवाले हुये संन्यास योगसे यतिहैं अरु शुद्ध चित्तवाले हैं। जो पुरुष वेदान्तशास्त्र से उत्पन्नभये विज्ञानके, परमात्मा के जानने योग्य, अर्थ को निश्चय करनेवालेहैं, अरु सर्व कर्मके परित्याग पूर्वक केवल ब्रह्मनिष्ठतारूप संन्यास योगकरके प्रयत्नकरने के स्वभाववाले यतिहैं, अरु संन्यास योगकरके शुद्धचित्तवाले हैं। "ते ब्रह्मलोकेषुपरान्तकालेपरामृताःपरिमुच्यन्तिसर्व्वे"। सो सर्व परान्तकाल बिषे परामृतहुये सर्वओरसे मुक्त होतेहैं। सोसर्व परान्तकाल बिषे अर्थात् [संसारी पुरुषोंका जो मरणकालहै सो परान्त काल है। अरु तिनकी अपेक्षासे मुमुक्षुओंका संसारके अन्त बिषे जो चरम देहके परित्यागका कालहै (अर्थात् मुमुक्षुका इस दृश्य शरीर के त्याग के समकालही संसारका अन्त है, क्योंकि पुनः उस को संसार नहीं, ताते उक्तप्रकार मुमुक्षु का जो चरम देह के त्याग का काल है) सो परान्तकाल है; तिस परान्तकाल बिषे ब्रह्मरूप लोकबिषे अर्थात् [(यह जो ब्रह्मलोक को बहुवचन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गताःकलाःपञ्चदशप्रतिष्ठादेवाश्चसर्व्वेप्रतिदेवतासु। कर्म्माणिविज्ञानमयश्चआत्मा परेऽव्यये सर्व एकीभवन्ति ७। ६०॥

है सो) यहां साधनों को बहुत होने से, जो ब्रह्मरूप लोक एक है तोभी अनेकवत् देखते हैं अरु पावते हैं एतदर्थ बहुवचन है। परन्तु [ब्रह्मलोकेषु; इसशब्दका अर्थ ब्रह्मबिषे है] जीवतेहुयेही परम अरु मरण धर्मरहितब्रह्म है आत्मा जिनका ऐसे, परामृत हुये सर्वओर से दीपक के निर्वाणवत् अर्थात् [दीपकको बत्ती के किये अवच्छेदके ध्वंस होने से जिसप्रकार तेज के सामान्यभाव की प्राप्तिहोती है, तैसेही इनआत्मज्ञानी पुरुषोंको उपाधिकेकिये अवच्छेदके ध्वंस होने से चैतन्यके सामान्यभावकी प्राप्तिहोती है] अरु (घटके ध्वंसहुये) घटाकाशवत् मुक्तहोता है। अरु गमनकरने योग्य अन्यदेश (लोक वा देह) को अपेक्षा करते नहीं, क्योंकि [यदंयथानदृश्येत तथाज्ञानविदांगतिः; [अनध्यगाअध्वसुपारयिष्णव इति; जैसे आकाशबिषे पक्षियोंका, अरु जल बिषे जलचरोंका पाद (खोज) नहीं पायाजाता है। तैसेही ज्ञानी पुरुषों की गति है। अरु संसार के मार्गों के पार (समाप्ति) होने की इच्छा वाले पुरुष नहीं गमनकरनेवाले होते हैं। ऐसा श्रुति अरु स्मृति का प्रमाण है ताते [यहां तर्क से भी मोक्ष कहने को योग्यहै, ऐसा कहते हैं] जिससे देशकर के परिच्छिन्न जो गति है सो संसार को विषयकरनेवालीही है, क्योंकि परिच्छिन्न साधनकरके साध्य है ताते। अरु ब्रह्म तो सर्वरूप होनेसे देशके परिच्छेद से गमन करने योग्य नहीं है। जब देशसे परिच्छिन्न ब्रह्महोय तब मूर्त्त द्रव्यवत् आदि अन्तवाला अन्य के आश्रित सावयव अनित्य अरु क्रिया साध्य होवेगा। परन्तु ब्रह्म इसप्रकारका होनेयोग्य नहीं, एतदर्थ तिसकी प्राप्तिभी देशकरके परिच्छिन्न होने योग्य नहीं ६। ५९॥

हे सौम्य! ब्रह्मवेत्ता पुरुष जो हैं सो अविद्या आदिक संसार के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बन्धनकी निवृत्तिरूप मोक्षकी इच्छा करते हैं, कार्यरूप मोक्षकी नहीं करते । किंवा "गताःकलाःपञ्चदशप्रतिष्ठा देवाश्चसर्व्वेप्रति देवतासु" [पंचदश कला लयको प्राप्तहोती हैं अरु सर्वदेवता प्रति देवताको प्राप्तहोते हैं] मोक्षकाल विषे जो देह की आरम्भ करने वाली प्राणादि पन्द्रह संख्यावाली कला प्रश्नउपनिषद्रूप इस उपनिषद् के ब्राह्मणभागके छठें प्रश्नबिषे कही हैं सो अपने २ कारणबिषे लयको प्राप्तहोती हैं । अरु देहके आश्रित चक्षुआदिक करणोंबिषे स्थित जे इन्द्रियाधिष्ठाता देवता सो सूर्य्यादिक प्रति देवताबिषे प्राप्तहोते हैं । अरु "कर्म्माणिविज्ञानमयश्च आत्मापरेऽव्ययेसर्व्वएकीभवन्ति" । [कर्म अरु विज्ञानमय (बुद्धिविशिष्ट) आत्मा पर अव्ययबिषे सर्व एकताको पावते हैं] जो मुमुक्षु के किये कर्म हैं, तिन में से फलके आरम्भ करनेवाले (प्रारब्धरूप कर्मोंको उपभोगसेही क्षीण होना है, ताते तिनको छोड़के यहां अवशेषरहे जे फलके आरम्भसे रहित (संचित कर्म हैं तिनका ग्रहण है । अरु आत्मा जो है सो अविद्या से रचित बुद्धि आदिक उपाधिको अपना स्वरूप मान के जलादिकों बिषे सूर्य्यादिकों के प्रतिबिम्बवत् तिसही विज्ञानमय स्वरूपके साथ इस देहके भेद बिषे प्रवेशको पायाहै । क्योंकि कर्मका उस विज्ञानमय बुद्धि के ताईं फलदेने के अर्थ होना है ताते, एतदर्थ आत्मा विज्ञानमय कहा जाता है) कर्म अरु विज्ञानमय आत्मा, सो यह सर्व उपाधिकी निवृत्ति से, सत्य, पर, अव्यय, अक्षर आकाश तुल्य अजन्मा, अजर, अमर, अकार्य, अकारण, अन्तररहित, बाहररहित, अद्वैत, शिव अरु शान्त ब्रह्मबिषे जलादिक आधारके दूरहोने से जलादिकोंबिषे सूर्य्यादिकों के प्रतिबिम्बवत् अरु घटादिकों के अभावभये घटादिकों के सम्बन्धी आकाशवत्एकताको पावता है ७ । ६० ।

हे सौम्य! "यथानद्यःस्यन्दमानाःसमुद्रेऽस्तङ्गच्छन्तिनामरूपे विहाय" [जैसे (गङ्गाआदिक) नदियां बहतीहुई (समुद्रको पायके) नामरूपको त्यागके समुद्र बिषे अस्तता (अभेदता) को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथानद्यःस्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तंगच्छन्तिनामरूपे विहाय। तथाविद्वान्नामरूपाद्विमुक्तःपरात्परम्पुरुषमुपैति दिव्यम् ८। ६१॥

सयोहवैतत्परमंब्रह्मवेदब्रह्मैवभवति नास्याब्रह्मवित्कुलेभवति। तरतिशोकंतरतिपाप्मानंगुहाग्रन्थिभ्योविमुक्तोऽमृतोभवति ९। ६२॥

प्राप्तहोती हैं "। तथाविद्वान्नामरूपाद्विमुक्तःपरात्परम्पुरुषमुपैतिदिव्यम्"। तैसे विद्वान् (आत्मज्ञानी अविद्याकृत) नाम अरु रूप से (भलीप्रकार) मुक्त हुआ (पूर्व कहे प्रकार अक्षररूप) पर से पर दिव्य (उक्त लक्षणवाले) पुरुष को पावता है॥ इतिवेदानुशासनम् ८। ६१॥

हे सौम्य!॥ शंका॥ ननु, मोक्षविषे अनेक विघ्न प्रसिद्धहैं,एतदर्थ ब्रह्मवेत्ताभी पंचक्लेशों के मध्य किसी एक क्लेशकरके, अरु वाद विषे अन्यवादी करके किये विघ्नसे मरणको पायाहुआ अन्य गति को पावेगा ब्रह्मको नहीं॥ स०॥ यह कहना तेरा बने नहीं, क्योंकि विद्यासेही सर्व प्रतिबन्धोंका अभाव करते हैं ताते अरु मोक्ष जो है सो केवल अविद्यारूप प्रतिबन्धवाला है अन्य प्रतिबन्धवाला है नहीं, क्योंकि मोक्ष नित्यहै ताते अरु आत्मरूपहै ताते। एतदर्थ "सयोहवैतत्परमंब्रह्मवेदब्रह्मैवभवति"। सो जो कोई एकलोक विषे प्रसिद्ध तिस परमब्रह्मको जानता है सो ब्रह्मही होता है। सो जो कोई एक लोक विषे प्रसिद्ध तिस परमब्रह्मको साक्षात् मैंही हौं, इसप्रकार अभेदतासे जानता है, सो अन्य गति को पावता नहीं, क्योंकि देवताओं की भी इसकी ब्रह्मप्राप्तिके बिषे विघ्नकरनेकी सामर्थ्य नहीं, क्योंकि यह ज्ञानी देवता आदि सर्व का आत्मा होताहै ‹ज्ञानीत्वात्मैवमेमतम्›, एतदर्थ ब्रह्मका जाननेवाला विद्वान् ब्रह्मही होताहै। अरु "नास्याब्रह्मवित्कुलेभवति" इसके कुलविषे अब्रह्मवित् होता नहीं। इसविद्वान्के कुल (शिष्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तदेतदृचाऽभ्युक्तंक्रियावन्तःश्रोत्रियाब्रह्मनिष्ठाः । स्व
यंजुह्वतेएकर्षिंश्रद्धयन्तस्तेषामेवैतांब्रह्मविद्यांवदेत शि
रोव्रतंविधिवद्यैस्तुचीर्णम् १० । ६३ ॥

परम्परा) बिषे अब्रह्मवित् (ब्रह्मका नजाननेवाला) होता नहीं। अरु "तरतिशोकंतरतिपाप्मानंगुहाग्रन्थिभ्योविमुक्तोऽमृतोभव ति" । शोकको तरताहै, पापको तरता है, गुहारूप ग्रन्थिसे मुक्त हुआ अमृत होताहै। किंवा यह आत्मवेत्ता जीवताहुआही अनेक इष्टवस्तुके वियोगरूप निमित्तसे भये जे मनके संतापरूप शोक तिनसे तरता (छूटता) है, अरु धर्म अधर्मनामक पापसेभी तरता है, अरु गुहा (बुद्धि) रूप ग्रन्थिसोंभी मुक्तहुआ अमृतरूप होता है॥ यह "भिद्यते हृदयग्रन्थिः" इत्यादि इसही बिषे पूर्व प्रतिपादन कियाहै ॥ इति सिद्धम् ९ । ६२ ॥

हे सौम्य! अब ब्रह्मविद्याके दानकी विधिके देखावने से, इस उपनिषद्की समाप्ति करते हैं "तदेतदृचाऽभ्युक्तंक्रियावन्तः श्रोत्रियाब्रह्मनिष्ठाः" । सो यह मन्त्रने कहा है, क्रियावाले श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठहैं। सो यह विद्याके दानका विधान इस मन्त्रने कहा है जो शास्त्र उक्त कर्मके अनुष्ठानरूप क्रियावाले अरु श्रोत्रिय, अर्थात् अपर ब्रह्मकी विद्याबिषे कुशलहैं, अरु ब्रह्मनिष्ठ अर्थात् परब्रह्मकी जिज्ञासावाले हैं । अरु "स्वयंजुह्वतिएकर्षिं श्रद्धयन्तस्तेषामेवैतां ब्रह्मविद्यां वदेत" । श्रद्धावान् हुये आप एकर्षिनामवाले अग्नि के अर्थ हवनकरते हैं, तिनसंस्कारयुक्त चित्तवाले अधिकारीरूप पुरुषके अर्थही इस ब्रह्मविद्याको कहना । अरु "शिरोव्रतंविधिवद्स्तुचीर्णम्" । शिरोव्रत जिन्होंनेविधिकेअनुसार कियाहै। मस्तक बिषे अग्निके धारणकरनेरूप अथर्वणवेदबिषे प्रसिद्ध जो शिरोव्रत है सो जिन्होंने शास्त्रउक्त विधिके अनुसार कियाहै तिनकेअर्थ इस ब्रह्मविद्याको कहना १० । ६३ ॥

हे सौम्य! "तदेतत्सत्यमृषिरङ्गिराःपुरोवाच नैतदचीर्णव्रतो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तदेतत्सत्यमृषिरङ्गिराः पुरोवाचनैतदचीर्णव्रतोऽधीते।
नमःपरमऋषिभ्योनमःपरमऋषिभ्यः ११।६४॥

इति तृतीयमुण्डकेद्वितीयखण्डः॥

धीते" तिस इस सत्यको पूर्व अङ्गिरा मुनीश्वर कहताभया, इस व्रतके आचरण से अध्ययन करताभी नहीं। तिस इस अक्षर नामवाले पुरुषरूप सत्यको पूर्व अङ्गिरा नामक मुनीश्वर, विधिवत् समीप प्राप्तभये अरु प्रश्नकर्त्ता शौनक नामवाले ऋषिकेअर्थ कहताभया। इसप्रकार अन्य आचार्यभी तिसही प्रकार से मोक्षके अर्थ विधिवत् समीप प्राप्तभये मोक्षार्थी मुमुक्षुके अर्थ कहै। अरु इस ग्रन्थको व्रतके आचरण से रहित पुरुष अध्ययन करता भी नहीं। अरु जिसकरके व्रतके आचरणवालेकी विद्या संस्कारयुक्त हुई फलके अर्थ होती है, एतदर्थ व्रतरहित पुरुष इसग्रन्थके अध्ययनयोग्य नहीं है। इसप्रकार समाप्तभई जे ब्रह्मविद्या, सो जिन ब्रह्मादिकों से परम्पराक्रमसे सम्यक् प्राप्तभई हैं। "नमःपरमऋषिभ्यो नमःपरमऋषिभ्यः" तिन परम ऋषियों के अर्थ नमस्कार है अरु जे ब्रह्मादिक परमब्रह्मको साक्षात् जानतेभये सो परमऋषि हैं। तिन परम ऋषियों के अर्थ पुनःभी नमस्कार है। यहां दोबार जो नमस्कारका कथन है सो अत्यन्त आदर के अर्थ है। अरुयह तृतीय मुण्डक अरु उपनिषद्की समाप्ति के अर्थ है ११।६४॥

इति तृतीयमुण्डके द्वितीयखण्डः॥

ॐब्रह्मानन्दंपरमसुखदंकेवलंज्ञानमूर्त्तिद्वन्द्वातीतंगगनसदृशंत त्त्वमस्यादिलक्ष्यम्॥एकंनित्यंविमलमचलंसर्वधीसाक्षिभूतं भावा तीतंत्रिगुणरहितंसद्गुरुंतन्नमामि॥

मुंशीनवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छपी
मार्च सन् १९०७ ई०॥
हक़्क़तसनीफ़ महफ़ूज़ है बहक़ इस छापेखाने के॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस मतबे में जितने उपनिषद् छपे हैं उनमें से कुछ नीचे लिखे हैं ॥

कठवल्ली उपनिषद् भा० टी० सहित की० ≡)॥

इस उपनिषद् में गुरु शिष्य संवाद द्वारा श्रीवाजश्रवा ऋषीश्वरके पुत्र श्रीउद्दालक ऋषिने जिसप्रकार से विश्वजित् नामा यज्ञ की और उसी यज्ञ की दक्षिणामें ऋत्विजादि ब्राह्मणोंको अपरिमित धन व गौओं का दान दिया और उसी यज्ञ में अपने परम प्रिय पुत्र ज्ञानशिरोमणि श्रीनचिकेता को मृत्यु के अर्थ दानदिया और नचिकेता यमालय में गया और मृत्यु ने सावधान पूजन किया और परस्पर वार्त्तालाप हुआ वह सब वृत्त संक्षित् मन्त्रों में वर्णित है ॥

माण्डूक्योपनिषद् भा० टी० सहित की० ॥≡)

ॐकारस्वरूप का प्रतिपादन व ब्रह्मकी आत्माकी अभेदताका निरूपण आगम, यवैताख्य, अद्वैताख्य व अलातशान्ताख्य इन चार प्रकरणों में निरूपण कियागया है अवलोकन करने योग्यहै ॥

तैत्तिरीयोपनिषद् भा०टी० सहित क़ीमत ।-)॥

यह उपनिषद् यजुर्वेद सम्बन्धी है—इसउपनिषद् में श्रीसच्चिदानन्दघन परब्रह्म परमेश्वर निराकार के साकार रूप होने का प्रतिपादन है ॥

ईशावास्योपनिषद् भा०टी० सहित क़ीमत -)

जिसे वाजसनेयी संहिता भी कहते हैं—इस उपनिषद् में यत् नाम रूपात्मक जगज्जाव है सब ईशही में घटित किया है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस मतबेमें जितने उपनिषद् छपे हैं उनमेंसे कुछ नीचे लिखे हैं ॥

कठवल्ली उपनिषद् भा० टी० सहित क्रो० ।)॥

इस उपनिषद् में गुरु शिष्यसंवाद द्वारा श्रीनचिकेता ऋषीश्वर के पुत्र श्रीउद्दालक ऋषिने जिस प्रकार से विश्वजित् नामा यज्ञ की और उसीयज्ञ के दक्षिणा में ऋत्विजादि ब्राह्मणों को अपरिमित धन व गौओंको दान दिया और उसी यज्ञ में अपने परमप्रिय पुत्र ज्ञानशिरोमणि श्रीनचिकेता को मृत्यु के अर्थ दानदिया और नचिकेता यमालय में गया और मृत्यु ने सावधान पूजन किया और परस्पर वार्त्तालाप हुआ वह सब वृत्त संक्षिप्त मंत्रों में वर्णित है ॥

माण्डूक्योपनिषद् भा० टी० सहित क्रो० ।)॥

ओंकारस्वरूप का प्रतिपादन व ब्रह्मकी आत्माकी अभेदताका निरूपण आगम, यवैताख्य, अद्वैताख्य व अजातशान्त्याख्य इन चार प्रकरणों में निरूपण कियागया है अवलोकन करने योग्य है ॥

ऐतरेयउपनिषद् भा० टी० सहित क्रो० ।)

यह उपनिषद् ऋग्वेदके आरण्यभाग से सम्बन्धित है—इस में मुख्य ब्रह्मविद्याका वर्णन है ॥

ईशावास्योपनिषद् भा० टी० सहित क्रो० ।)॥

जिसे वाजसनेयीसंहिता भी कहते हैं—इस उपनिषद् में यावत् नाम रूपात्मक जगद्भाव है सब ईशही में घटित किया है ॥

तैत्तिरीयउपनिषद् भा० टी० सहित क्रो० ।)॥

यहउपनिषद् यजुर्वेद सम्बन्धी है इस उपनिषद् में श्रीसच्चिदानन्दघन ब्रह्म परमेश्वर निराकार के साकार रूप होने का प्रतिपादन है ॥

छान्दोग्यउपनिषद् भा० टी० सहित क्रो० ॥)॥

इस उपनिषद् में इन्द्रियादिकों के संघात विषे स्थित प्राणों की ज्येष्ठताका व श्रेष्ठताका एक आख्यायिका द्वारा प्रतिपादन है—मतलब को भली सरल देशभाषा में सुन्दर तिलक किया गया है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५५२

तैत्तिरीयोपनिषद्

भाषाटीका सहित पुस्तकाकार,

श्री १०८ ईश्वर दास
उदासीन भवन, वाराणसी

जिसमें

तैत्तिरीय शाखा के प्रकट होनेका उदाहरण और स्वर मात्रा व वर्णोंके उच्चारण की शिक्षा का नियम व वर्णोंके सम्बन्धरूप संहिता की उपासना व बुद्धि व लक्ष्मी की कामनावाले पुरुषों के अर्थ साधन जप और हवनादिकी क्रियायें वर्णित हैं ॥

जिसको

श्रीमान् सर्वैश्वर्य्य सम्पन्न श्रीयुंशीनवलकिशोर (सी, आई, ई) जीने भारतवर्षीय जनोंके उपकारार्थ बहुतसा धन व्ययकरके कोलाख्य नगरनिवासी पंचोली यमुनाशंकर नागरब्राह्मण से सरल देशभाषा में उल्था कराय स्वयंत्रालय में मुद्रित कराय प्रकाशित किया ॥

दूसरीबार

लखनऊ

मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के आपेखाने में छपी
सितम्बर सन् १९०६ ई० ॥

इस किताबका इक तसनीफ़ महफ़ूज़ है बवक़ इस आपेखाने के ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

अथ तैत्तिरीयोपनिषद् का विज्ञापन ॥

विदित होकि यह कृष्ण यजुर्वेद तैत्तिरीय शाखाकी संहिताके ब्राह्मण भाग सम्बन्धी तैत्तिरीय नामक उपनिषद् (ब्रह्मविद्या) है, तिसका जो श्रीपरमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्रीशङ्कराचार्य्य जी कृत महाभाष्य अरु तिसपर आनन्दगिरी टीका है, तिसके अनुसारही मूलमन्त्रसहित यह भाषा भाष्य में अतिअल्पज्ञ अविद्वान्ने अपने गुरु महाराज श्री १०५ स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वतीजी महाराज की कृपादृष्टि के बलसे, अरु सर्व जनोपकारी परमधार्मिक ब्रह्मनिष्ठ मुंशीनवलकिशोर (सी,आई,ई) की आज्ञा सेअनुवाद किया, अरु इस भाषाभाष्यको श्रीद्विजवर पण्डितराज पिताम्बरजी महाराज की टीकानुसारही आनन्दगिरी टीका, भाष्य, अक्षरार्थ, को प्रायःलेख कियाहै, अरु कुछ स्वकल्पित भी है, अतएव सर्वसुज्ञ विवेकीजनोंसे प्रार्थना करताहौं कि इसभाषा भाष्यमें अनुचित लेखहुआ हो तिसको मुझ सेवक पर कृपापूर्वक क्षमा करना ॥

चिह्नानां सूचीपत्रम् ॥

१		पृष्ठोपरि पुष्टाक्षरों में उपनिषद्के मूलमन्त्र ॥
२	" "	इस चिह्नान्तर भाषानुवाद में मूलश्रुतिके वाक्य ॥
३	( )	इस चिह्नान्तरमें मूल श्रुतिवाक्य के अक्षरार्थ ॥
४	[ ]	इस चिह्नान्तर में आनन्दगिरीका अनुवाद ॥
५	" "	इस चिह्नान्तर में अन्यश्रुति स्मृतिआदिकों के प्रमाण अरु तिसके निकटही तिसका अक्षरार्थ । इस चिह्नकेपूर्व ॥
६	" "	इस चिह्नान्तर प्रमाणमें केवल श्रुतिवाक्यार्थ ॥
७	" "	इस चिह्नान्तरमें भाषाकार करके कल्पितविचार ॥

"इति"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुमुक्षु भवन

ॐ

एकमेवाद्वितीयं तत्सद्ब्रह्मणेनमः ॥

कृष्णयजुर्वेदीय तैत्तिरीयोपनिषद्

श्रीमच्छंकराचार्य्य कृत भाष्यानुसार भाषा टीका प्रारभ्यते॥

तत्रादौ भाष्यकार कृत मंगलाचरणम् ॥

ॐ यस्माज्जातं जगत्सर्वं यस्मिन्नेव विलीयते।
येनेदं धार्य्यते चैव तस्मै ज्ञानात्मनेनमः॥

अर्थ ॥

यजुर्वेद की शाखाके भेदरूप तैत्तिरीय उपनिषद्का [वेदव्यास जीके शिष्य वैशम्पायन ऋषिके पास याज्ञवल्क्यऋषि आदिक विद्यार्थी ब्रह्मचर्य्यादि व्रत धारण किये यजुर्वेदका अध्ययन करतेरहे तहां किसी एक निमित्तको पायके वैशम्पायनऋषि को ब्रह्महत्या प्राप्तहुई, तिसके निवारणार्थ सो वैशम्पायनऋषि याज्ञवल्क्यसे इतर अल्पवयवाले अपने विद्यार्थियोंके अर्थ नियमाचरण (प्रायश्चित्तरूपकर्म) करनेका उपदेश करतेहुये, तब उन मुनि से उत्तम अधिकारी प्रौढ़ वयवाले याज्ञवल्क्यऋषि ने प्रार्थना किया कि हे भगवन्! यह अतिकठिन प्रकार का नियमाचरण इनबालक विद्यार्थियों से होना अशक्यहै, और मैं परिपक्व वयवालाहौं अरु शरीर करकेभी दृढ़ हौं अतएव एकेलाही मैं इस कठिन नियमाचरणोंको करके आपकी ब्रह्महत्या निवारण करनेको समर्थहौं, ताते आप इन कठिन नियमाचरण करनेकी मुझको आज्ञा करिये। इस प्रकार जब याज्ञवल्क्य ने अपने उक्त गुरुसे विनय किया तब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्महत्या होनेके सम्बन्धसे जिसकी बुद्धि विपर्यय हुई है (पाप कर्मोंसे अवश्य बुद्धि विपरीत होती है) ऐसा जो वैशंपायनऋषि सो याज्ञवल्क्यप्रति कहताहुआ कि हे याज्ञवल्क्य! मैं मानता हौं कि तूबड़ा गर्विष्ठ है और इन ब्राह्मणोंके बालक विद्यार्थियों का अपमान करताहुआ है अतएव अब तू मुझसे अध्ययन करीहुई विद्याको त्यागकर, न करेगा तो तेरे अर्थ शीघ्रही मरणका हेतु शाप देऊंगा। इसप्रकार वैशंपायनने क्रोधित हो कहा तब याज्ञवल्क्य ऋषि उस शापके भय से तिस अध्ययन करीहुई वेद विद्याको गज क्रियावत् योगबलसे वमन करके त्यागताहुआ, तब तिस याज्ञवल्क्य करके वमन करीहुई विद्याको अन्य कईएक ब्राह्मणोंके बालक विद्यार्थियोंने अपने गुरुकी आज्ञासे अपने बिषे तीतर नाम पक्षी विशेषका रूपधारके वो विद्या ग्रहणकर लिया, तबसे उस विद्याका नाम तैत्तिरीयविद्या हुआ, अरु जिन ब्राह्मणों ने उस विद्या को धारण किया सो सर्व ब्राह्मण तैत्तिरीय शाखा वाले विख्यात हुये। अरु उनके वंशमें जो हैं सो आज पर्यन्त तैत्तिरीय शाखावाले कहेजाते हैं। औ तिस तैत्तिरीय शाखाका यह उपनिषद् भी तैत्तिरीय उपनिषद् कहाजाता है] व्याख्यान करनेको इच्छतेहुये भगवान् भाष्यकार तिस तैत्तिरीय उपनिषद् बिषे प्रतिपादन किया जो ब्रह्म सो जगत्के जन्मादिकके कारणपने रूप तटस्थलक्षणसे (जो लक्षण कदाचित् (किसी कालबिषे) हुआ व्यावर्तक (पृथक्करनेवाला) होय तिसको तटस्थलक्षण कहतेहैं।' जैसे देवदत्तके गृहपर बैठा जो काकनाम पक्षी सो यावत् उसगृहपर स्थित है तावत् उसगृहको अन्यगृहोंसे पृथक्करके जनावताहै कि देखो जिसगृहपर काकनाम पक्षी बैठा है वो देवदत्तका गृह है, इस प्रकार वो काकपक्षी देवदत्तके गृहका उपलक्षण है, तैसेही जगत्के जन्मादिकोंका कारणपना जो है सो कदाचित् (अज्ञानदशा बिषे वा सृष्टिकालबिषे) हुआ वेदबाह्यमतवादियोंकरके कल्पित जो परमाणु प्रधानादिक जगत्के कारण ति-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुरुस्तुति ॥

यैरिमे गुरुभिः पूर्व्वं पदवाक्य प्रमाणतः । व्याख्याताः सर्ववेदान्तास्तान्नित्यंप्रणमाम्यहम् १ ॥

नसे व्यावर्त्तक (पृथक् करनेवाला) होनेसेसोब्रह्मकातटस्थलक्षण है] मन्दबुद्धिवाले पुरुषों के अर्थ सामान्यभावकरकेलक्ष्यकराया है औ " सत्यं ज्ञानमनन्तंब्रह्म " इत्यादि प्रमाण से सत्यचैतन्यत्वादि स्वरूप लक्षण से [जो लक्षण सर्वदाहुआ व्यावर्त्तकहोय तिसको स्वरूप लक्षण कहते हैं, जैसे सर्वकालवर्त्तमान हुआ देवदत्त के गृहका अन्यगृहों से व्यावर्त्तक (पृथक् करनेवाला) धवल (श्वेत) पना वा ऊंचापना सो उस देवदत्तके गृहका स्वरूप लक्षण है, तैसे सत्य ज्ञानादि रूपपना जो है सो ब्रह्मविषे सर्वदा स्वरूप भूत वर्त्तमान हुआ अविद्यादिकों से व्यावर्त्तक (पृथक् करनेवाला) होनेसे सो ब्रह्मका स्वरूप लक्षण है] विशेषकरके निश्चय किया है, तिस ब्रह्म को नमस्कारके मिसकरके संक्षेपसे लक्ष करावे हैं " यस्माज्जातंजगत्सर्वंयस्मिन्नेव विलीयते । येनेदंधार्य्यतेचैव तस्मैज्ञानात्मनेनमः " (जिससे सर्व जगत् जन्मता है औ जिसविषे लीनहोता है औ जिसकरके यह धारण किया है तिस ज्ञानात्मा को नमस्कार करते हैं) अर्थात् जिस ज्ञानस्वरूप परमात्मा परब्रह्मसे यह समस्त कार्य कारण नामरूपात्मक जगत् उत्पन्न होता है औ जिस करके धारणाकिया वर्त्ताहै औ परिमाणमें जिसविषे लीनहोता है तिस महाकारण परमाश्रय सर्वाधिष्ठानको नमस्कार करते हैं ॥

हे सौम्य ! अब गुरुभक्तिको विद्याकी प्राप्तिविषे जो मुख्यतासे अन्तरंग साधनपनाहै तिसको प्रकट प्रसिद्ध करनेकेअर्थ गुरुनको प्रणाम करते हैं जिन गुरुओंकर के पदवाक्य औ प्रमाण(व्याकरण मीमांसा, न्याय) इनकेविवेचनसे यह सर्ववेदान्तशास्त्रका व्याख्यानकरते हैं तिनसद्गुरुओंके अर्थ मैं नित्य २ प्रणामकरताहों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तैत्तिरीयकसारस्यमयाऽऽचार्य्यप्रसादतः। विस्पष्टार्थरुचीनांहि व्याख्येयं सम्प्रणीयते २॥

हे सौम्य! अब व्याख्यान करने को इच्छित जो ग्रन्थ तिसका कथन करते हैं [मनुशास्त्रके बोधवाले पुरुषों को पदोंसेही पदों के अर्थ की स्मृति का सम्भवहै ताते, अरु पदोंकरके स्मरणहुये पदार्थोंके सम्बन्ध कोही वाक्यार्थ रूपताहै ताते,औ सूत्रकारकरके उपनिषदोंके तात्पर्य को निरूपणहुआ होने से भिन्न व्याख्यान का करना व्यर्थ है। यह शङ्का करके कहते हैं। यहां यह अर्थ है कि अशास्त्रज्ञ मन्दबुद्धिवाले पुरुषोंको स्वतःही सर्व पदों के अर्थों की स्मृति होने का असम्भवहै ताते, उपनिषद् गत सर्व पदों के अर्थोंके विशेष करके निःसंशय ज्ञान होने को इच्छते हैं तिनके उपकारार्थ पृथक् व्याख्यान करनेकाप्रारम्भहै, "विस्पष्टार्थरुचीनांहि" {विशेष करके स्पष्ट अर्थकी रुचीवाले के अर्थ} मया ऽऽचार्यप्रसादतः" {मुझकरके आचार्यके प्रसादसे} "तैत्तिरीयक सारस्य व्याख्येयं सम्प्रणीयते" {तैत्तिरीयक सारका व्याख्यान सम्यक् कियाजाताहै} अर्थात् विशेषकरके स्पष्ट अर्थ के जानने की इच्छावाले पुरुषों के उपकारार्थ मुझकरके आचार्यके प्रसादसे इस तैत्तिरीय उपनिषद्के सारका सम्यक् प्रकार व्याख्यान कियाजाता है॥ हे सौम्य! उक्त प्रकारही इस समय प्रायः बहुत से मनुष्यों की संस्कृत विद्या में प्रवृत्ति न होनेसे उनको पद पदार्थों का ज्ञान रंचक मात्रभी नहीं अरु उन सर्व पुरुषों में से किसी एक पुण्यशील पुरुषों को अपने पूर्व के अनेक जन्मों के उत्तम कर्म संस्कारोंके प्रभाव से उपनिषद् विद्या करके प्रतिपाद्य जो आत्मतत्त्व तिसके जानने की इच्छा होती है तिन पुरुषों के उपकारार्थ इस सांप्रतकालके श्रेष्ठ महात्मा पुरुषोंने उपनिषदादि बहुत से संस्कृतग्रन्थों को देशीय भाषावाणी में लिखा है, यह उन महात्मा पुरुषोंका सर्वजनों पर परम उपकार है। हे प्रियदर्शन! यह आत्म-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विद्या सनातनसेही अतिगुह्य औ दुःप्राप्यहै, इस विद्याका कहने सुननेवाला लाखों मनुष्यों में कोई एक बिरला होता है, और श्रुति स्मृति भी ऐसाही कहती है । तथाच " श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः शृण्वन्तोऽपि बहवो यन्न विद्युः । आश्चर्योक्ता कुशलोऽस्य लब्धाऽऽश्चर्यो ज्ञाता कुशलानुशिष्टः " " मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये । यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः " इत्यादि, अतएव अब सावधानचित्त करके इस तैत्तिरीय आदि उपनिषद् ब्रह्मविद्या को सम्यक्प्रकार श्रवण मनन निदिध्यासन करो २ ॥

अथ शिक्षाध्यायरूपा प्रथमावल्ली प्रारभ्यते ॥

हरिः ॥ ॐ ॥ शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा । शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः ॥ नमो ब्रह्मणे । नमस्ते वायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि । ऋतं वदिष्यामि । सत्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु । तद्वक्तारमवतु । अवतुमाम् । अवतु वक्तारम् । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ १ ॥

इति प्रथमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य ! [कर्म्मके विचारसेही उपनिषद्को प्राप्त अर्थवाला होनेसे और उपनिषद्का प्रयोजन जो मोक्ष तिसके कर्म्म करके ही सम्भव से इस उपनिषद्का पृथक् व्याख्यान करनेका आरंभ करना युक्तनहीं । इस शङ्काको दूर करनेके अर्थ यहां प्रथम कर्म्मकांड के अर्थ को कहते हैं ।)

हे सौम्य, ! यजुर्वेद विषे इस तैत्तिरीय उपनिषद्से पूर्व ग्रंथ विषे सञ्चित पापों के क्षयार्थ नित्यरूप अरु फलार्थी पुरुषों के काम्य रूप कर्म समास कियेहैं [कर्म्मकाण्डके अर्थको कहके, वहां अविचार किये उपनिषद्के अर्थ को यहां कहतेहैं] अब इस तैत्तिरीय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपनिषद् बिषे कर्म्मके अनुष्ठानके हेतुकी निवृत्तिके अर्थ ब्रह्मविद्याका आरम्भ करतेहैं। [कर्मके अनुष्ठानका हेतु नियोग (नियम) है तिसको प्रमाण करके सिद्ध होने से विद्यासे विरोध नहींहै। यह शङ्का करके कहै हैं। यहां यह तात्पर्यहै कि इसका यह साधन है, इसप्रकार प्रथमशास्त्र करके बोधन कियाहै। जिसकी जहां अभिलाषा है सो कामना से तहांहीं प्रवृत्त होता है, एतदर्थ नियोग को प्रवृत्ति करनेकी सम्भावना भी नहीं] कर्म्मका हेतु कामना होतीहै क्योंकि पुरुषोंकी पूर्वर्त्तकहै ताते। अरु पूर्णकाम पुरुषोंकी कामना के अभावहुये अपने आप आत्मा बिषे स्थिति होनेसे, कर्म बिषे प्रवृत्तिका असम्भवहै। [वांछित विषयकी प्राप्तिकी कामनाकी निवृत्ति बिषे हेतु आत्मविद्या नहीं है, अतएव कर्म्मके हेतु की निवृत्तिके अर्थ आत्मविद्याका आरम्भ क्यों करतेहो, यह शङ्का करके कहते हैं। यहां यह अर्थ है कि वाञ्छित विषयकी प्राप्ति से तिसकाल बिषे कामनाकी शान्तिमात्रही होती है, परन्तु कामना का नाश नहीं होता, क्योंकि पुनःभी विषयादिकों की आकांक्षा आदिक देखने बिषे आवते हैं। अरु निरंकुश "आत्मैववस्तुनान्यत्तोऽस्तीति" {आत्माहीवस्तु है ताते अन्यनहीं} इस रूपवाले आत्माकी कामना भी आत्मकामपने के होने से होती है, क्योंकि वाञ्छित वस्तुकी इच्छाका अभावहोने से। औ जिसकरके आत्मा के अद्वैत परमानन्दरूपको न जाननेवालाही पुरुष भिन्न विषयों को देखतसन्ते कामना करताहै, ताते कामकोआत्म विषयक अविद्यारूप मूलवाला होने से एक आत्मविद्याही तिसकी निवृत्ति का हेतुहै] आत्मा की कामना के होने से पूर्णकामना होती है [आत्मविद्या कामनाकी विरोधी होवे तो अस्तु, परन्तु कर्म्म के हेतुकी निवृत्तिके अर्थ ब्रह्मविद्याका आरम्भ करतेहैं इसप्रकारजो तुमने कहा सो किस प्रयोजन से कहा। इस शङ्कापर कहते हैं यहां यह सिद्धहुआ कि परमानन्दमयरूप परमात्मा को लेके यह श्रुति कही है। इस प्रकार प्रथम कर्म्मकाण्ड करके अप्राप्त अर्थ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाली होनेसे, अरु कर्म्म से अघटित जो मोक्षरूप प्रयोजन तिस वाली होने से उपनिषद्के व्याख्यान का आरम्भ घटितही है] आत्माही ब्रह्महै तिसके जाननेवाले को परब्रह्मही प्राप्ति आवे कहेंगे । अतएव अविद्या की निवृत्ति के हुये अपने आत्मा विषे स्थितरूप परब्रह्मकी प्राप्ति होवे है, क्योंकि " अभयं प्रतिष्ठां विन्दते " " एतमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रामतीत्यादिश्रुतेः " (शोकाको दूरकरके इस आनन्दमय अभय प्रतिष्ठा (आश्रय) रूप आत्मा को प्राप्त होता है) इस श्रुति के प्रमाणसे [पुनः आरंभवादी के प्रयोजन को कहते हैं, यहां यह अर्थहै कि आत्यन्तिक आगामी शरीरकी अनुत्पत्ति के होने से स्वरूप से स्थितिका नाम मोक्षहै, अरु शरीरकी जो अनुपपत्तिहै सो शरीरोत्पत्ति के हेतु के अभावसेही होवेगी, तब ज्ञान के अर्थ उपनिषद् के आरंभसे क्या प्रयोजनहै] ॥ शङ्का, जो कहे काम्य अरु निषिद्ध कर्मके अनारंभ से, अरु प्रारब्धकर्मका भोगकरके क्षयहोनेसे अरु नित्य विहित कर्मों के अनुष्ठानसे सञ्चितादि पापों के अभाव होनेसे, विनाही प्रयत्नके किये स्वस्वरूप से स्थितिरूप मोक्ष होवे है [यहां अन्य मतको भी कहते हैं, यहां अर्थ यह है कि जे स्वर्ग के साधक ज्योतिष्टोमादिक कर्म हैं सोई मोक्ष के साधन हैं, क्योंकि स्वर्ग पद के अर्थरूप निरतिशय प्रीति के मोक्ष से अन्य ठिकाने (मोक्षका) असम्भव है ताते, क्योंकि ' स्वर्ग से अन्यस्थानमें ।' शरीरके होते क्लेश अवश्य होता है ताते] अथवा स्वर्ग शब्दकी वाच्य निरतिशय प्रीतिहै सो कर्म्मरूप हेतुवाली है, ताते कर्म करकेही मोक्ष होता है ॥ सो कथन बने नहीं [अब एक भविकवादीके पक्षरूप प्रथम करी शंकावाले मतका निषेध करते हैं, यहां यह अर्थ है कि यद्यपि मुमुक्षु वर्त्तमान शरीर करके काम्य अरु निषिद्ध कर्मों का आरम्भ न करेगा, तथापि ' अनेकजन्मों के ' अनेकप्रकारके संचित कर्मों के सम्भव से पुनः शरीरोत्पत्ति के हेतु का अभाव असिद्ध है] क्योंकि कर्म्मको अनेक रूपता है ताते, । अरु जिस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके फल के आरंभक औ अनेक जन्मान्तर बिषे किये विरुद्ध फलवाले [विशेष करके सर्वही संचित कर्म मिलके एक शरीरकी 'उत्पत्तिका।' आरंभकरेहैं तहां सर्वकर्मोंका उपभोगसे क्षयहोने करके संचित कर्महीं नहीं हैं, इस शंका के निवारणार्थ यहां 'विरुद्ध फलवाले, ऐसा कहा है। यहां यह अभिप्रायहै कि स्वर्ग नरकरूप फलवाले ज्योतिष्टोमादि अरु ब्रह्महत्यादि कर्मों के एकही देहबिषे भोगकरके क्षय होनेका असम्भवहै ताते, अरु विशेषकरके इसजीव को एकही शरीर में सर्वकर्मों के फलों के अनुभव होनेबिषे प्रमाण का अभाव है ताते, बलवान् कर्मकरके प्रतिबंध को प्राप्तहुये दुर्बल कर्मकी स्थिति सम्भवे हैं] अनेक कर्म सम्भवे हैं, एतदर्थ उनकर्मों बिषे फलके आरम्भसे रहित कर्मों के एक जन्मबिषे उपभोगसेक्षय होने का असंभवहै ताते, शेष कर्मरूप निमित्त से शरीर के आरम्भ होने का संभव अरु शेष कर्मों के सद्भावकी सिद्धि होती है। क्योंकि "तद्य इह रमणियचरणा अभ्यासोह यत्ते रमणीयां योनिमापद्येरन्" "ततः कर्मशेषेणेत्यादि" श्रुति स्मृतियों करके, जो यहां शुभ आचरण करते हैं सो शुभ योनिको प्राप्तहोते हैं, अरु, तिसके पीछे कर्म शेषकरके, । अर्थात् मरण को पाय अपने कर्म फलका अनुभव करके पुनः कर्म शेषरहे जन्म को पावता है। इस प्रकार अनेक प्रमाण हैं॥ अरु जो ऐसा कहे कि, इष्ट अनिष्ट फलवाले अरु फल के आरंभ से रहित कर्मोंके क्षयार्थ नित्य कर्म हैं, सो क-पन बने नहीं, क्योंकि तिस नित्य कर्म के न करने विषे प्रत्यवाय होनेका श्रवण है ताते। अरु पापशब्द जो है सो अनिष्ट फलका वाची है। अरु नित्यकर्म के न करने रूप निमित्तवाले दुःखरूप आगामी पाप के निवारणार्थ नित्यकर्म हैं, परन्तु फल के आरंभ से रहित संचित कर्मों के क्षयार्थ नहीं, इसप्रकार अंगीकार करने से। यद्यपि फल के आरंभ से रहित कर्मों के क्षयार्थ नित्य कर्मों को मानिये, तथापि वो अशुभ संचित कर्मोंकोही क्षयकरेंगे शुभको नहीं, क्योंकि नित्य कर्मों का अरु शुभ कर्मोंका परस्पर में विरोध नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ताते। अरु इष्टफलवाले कर्मको शुभरूप होने से तिसका नित्य विहित कर्मों से विरोध नहीं संभवे है, शुभ अरु अशुभकाही विरोधयुक्त है। अरु कर्मरूप हेतुवाले भोगोंकी ज्ञान के अभावहोनेसे निवृत्तिका अभाव है ताते सर्वकर्मों के क्षयका संभवनहींहै। जिस करके अनात्मवेत्ता पुरुषकोही काम (कामना) है क्योंकि वो अनात्मरूप फलकोही विषय करनेवालाहै ताते। अरु अपने आत्मा विषे काम (कामना) का असम्भव है क्योंकि अपनाआप आत्मा नित्य प्राप्त है ताते, याते आप आत्मा परब्रह्म है ऐसा कहा है। औ नित्यकर्मों का जो न करना सो अभावरूप है, तिस अभावरूप कर्म से भावरूप पापका होना असम्भव है। ["अकुर्व्वन् विहितंकर्म निन्दितञ्च समाचरन्। प्रसज्जंश्चेन्द्रियार्थेषु नरः पतनमृच्छतीति" विहित कर्मों को न करता हुआ, अरु निन्दित कर्मों को करताहुआ, अरु इन्द्रियोंके विषयों बिषे आसक्त हुआ, मनुष्य पतनको पावताहै। ऐसे पावताहै इस क्रियापद बिषे स्थित शतृप्रत्ययसे कर्मके न करनेको भी पापका निमित्तपना जानाजाता है। यह शंका करके कहते हैं। यहां यह अर्थ है कि जब यथावत् नित्य अरु नैमित्तिक कर्मोंका अनुष्ठान होता तो तब संचित कर्मों का क्षयहोता, अरु जब यह पुरुष विहित कर्म न करेगा तब तिस करके पापहोवेगा, इसप्रकार श्रेष्ठपुरुषोंकरके लक्ष्यकरायाहै। ताते शतृप्रत्ययको अन्यथा अर्थवाला होनेसे तिसके बलकरके विहित कर्मके न करनेबिषे पापकी हेतुता जानने को शक्य होतीनहीं। याते पूर्व के संचित पापों से प्राप्तहोनेवाली पापरूप क्रियाके नित्यकर्मोंका न करनाही लक्षणहै, इसप्रकार "अकुर्व्वन्विहितं कर्मेति" विहित कर्मोंको न करताहुआ,। इस वाक्य बिषे उक्त शतृप्रत्ययका असंभव नहीं है [. क्रियाके लक्षण अरु हेतुविषे इसप्रकार शतृप्रत्यय को उभयस्थानमें विधान कियेहुये तिन में क्रियाकी हेतुताकोही तुम क्यों नहीं ग्रहण करतेहो। तहां कहते हैं, इसप्रकार प्रत्यक्षादि प्रमाण से जानाहै। अरु शतृप्रत्ययके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभावको हेतु भावके कथनहुये सर्व प्रमाणोंका विरोध होवेगा] अन्यथा अभावसे भावकी उत्पत्तिके कथनसे सर्व प्रमाणोंका विरोध होवेगा। [ननु तुमको भी शुभकर्मके न करने को पाप का लक्षणपना इष्टहै, अरु भट्ट अनुसारियोंकरके अप्रतीतिको अभाव प्रमाका हेतुपना अङ्गीकार कियाहै। अरु नैयायिककरके प्रतिबन्धके अभावको, अरु तिस तिस कार्यके प्राग्भावको तिस तिस कार्यकी स्थितिकी हेतुता अङ्गीकार कियाहै, ताते भावरूप वस्तु कोही कारणपना कैसेहै, सो अन्य शास्त्रबिषे कहाहै. जैसे भावहै तैसे अभावको भी कार्यवत् कारण माना है। तहां कहतेहैं। हम वेदान्तियों को प्रथम अभावकी स्वरूपसे कारणता इष्टनहीं, किंतु तिसके भानको पापकी सूचकता इष्टहै, अरु तिस रूपकरके पापकी जनकता अङ्गीकार नहीं करते, क्योंकि नित्यकर्मके न करने के ज्ञानबिषे पापपनेका अप्रसङ्गहै ताते। अरु भट्टके अनुसारियों को भी कईएक पुरुषोंको ज्ञातहुई योग्य अप्रतीतिको अभाव प्रमाकी हेतुताहै, परन्तु ध्वंसरूप होने करके प्रमाकी हेतुताके हुये अभाव प्रमा को प्रत्यक्षपनेकी प्राप्ति होवेगी। अरु नैयायिकों को भी प्रतिबन्धके अभावको कारणताके हुये अन्योन्याश्रयरूप दोष की प्राप्तिसे प्रमाणिकपना नहीं है। प्राग्भावको भी जिस करके यह कार्य पूर्व नहीं रहा, ताते यह अभी उपजा है, इस प्रकारके ज्ञातरूपसे वस्तुका ज्ञापकपनाही है, परन्तु प्राग्भावको जनकपना नहीं है। अरु पूर्वकाल को नियमित प्राग्भाववाला होने करके जो कारणपना है सो अपने बिषे कार्यके वर्त्तमानपनेकी प्राप्तिरूप है, औ तिसको प्राग्भावकरके युक्तपना भी अन्यथा सिद्ध है, इसप्रकार तत्त्वालोक नामक ग्रंथबिषे कहा है। जिस करके कर्म के न करनेरूप निमित्तवाले पापके निवारणार्थ नित्यकर्म नहीं है, किन्तु "कर्म्मणापितृलोकः"। "सर्वएतेपुण्यलोकाभवन्ति इतिश्रुतेः"। कर्मसे पितृलोक होताहै, ये सर्व पुण्यलोकवाले होते हैं, इन श्रुतियोंके प्रमाणसे नित्यकर्मोंका पितृलोककी प्राप्तिफल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है, ताते उक्त आचरणवाले मुमुक्षुको शरीरकी अनुत्पत्ति नहीं होतीहै, ऐसा कहतेहैं] याते अप्रयत्नसे अपने आत्माविषे स्थिति रूप मोक्ष सो बनेनहीं । [अब दूसरे मतका अनुवाद करके दूषण देतेहैं]औ जो कहा कि स्वर्गशब्दकी वाच्य निरतिशय प्रीति को कर्मरूप निमित्तवाली होने से कर्मसे आरंभकियाही मोक्षहै। सो कथन बनेनहीं क्योंकि मोक्षको नित्यपनाहै ताते। जिसकरके कुछभी नित्यवस्तु आरंभनहीं करते हैं,लोकविषे जो आरंभ करी हुई वस्तु है सो अनित्यही है, एतदर्थ कर्मसे आरंभकिया मोक्ष नहीं है । अरु जो कहे विद्यासहित कर्म्मको नित्यवस्तुके आरंभ करनेका सामर्थ्यहै । सोभी बनेनहीं,क्योंकि नित्य अरु आरंभका विरोधहै ताते, नित्य है औ आरंभ करतेहैं यह कथन विरुद्धहै॥ अरु जो ऐसाकहे कि जो वस्तु विनाशको प्राप्तहुईहै सोई उत्पन्न होवेनहीं, अतएव प्रध्वंसाभाववत् नित्यहुआ भी मोक्ष आरंभही करतेहैं । सोभी बनेनहीं, क्योंकि मोक्ष को भावरूपता है ताते। [वास्तव करके प्रध्वंसको कार्यपनाभी नहीं है,ऐसा कहतेहैंयहां यह भावहै कि प्रध्वंसको पृथम, जन्मका आश्रयपनाहै कार्यपना नहींहै, क्योंकि तिसको अन्यरूप कहेहुये भाव विकारवान्पनेके अङ्गीकारसे,अरु पूर्व अविद्यमान वस्तुका सत्ता समवाय आदिरूप धर्म नहीं होताहै, क्योंकि कालके सम्बन्धका अभावहै ताते,अरु अवच्छेद अरु अवच्छेदकभावरूप सम्बन्धको समवाय सम्बन्धरूप मूलवाला होनेसे,अरु अन्यसम्बन्धरूप मूलकरके युक्तताका अदर्शन है ताते। अरु जो कहे कि उत्तरकालके प्रध्वंसकी अवच्छेदकतारूप स्वभाव है, तो अन्यकी अवच्छेदकतारूप स्वभाव नहीं होवेगा । ताते अभावको निर्विशेष (एकरस) रूप होनेसे तिसका कार्यपना कल्पनामात्रही है] भावकी विलक्षणताके अभावसे प्रध्वंसाभाव भी आरम्भ करते हैं, यह कथन कल्पनामात्र है। जिस करके अभाव जो है सो भावरूप प्रतियोगीवाला है, जैसे अभिन्न एकरूप हुआ भी भाव, घट पट आदिकों करके भेदको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पावताहै, परन्तु घटकाभाव अरु पटका भाव भावरूपकरके एक-ही है। इसप्रकार अभिन्न एकरूपहुआ भी अभाव, भाव अभाव (उत्पत्तिविनाश) रूपक्रिया अरु गुणके योगसे द्रव्य आदिकों-वत् भेदको पावता है। अरु भाव जो है सो कमल आदिकोंवत् विशेषणवाला नहीं है, क्योंकि विशेषणवान् ताके होने से सो अभाव भावरूपही होवेगा॥ अतएव प्रतियोगीकेभेदसे अभावका भेद है यह केवल कल्पनामात्रही है॥ [इसप्रकार प्रध्वंस के दृष्टान्त करके विषय किये मोक्षके नित्यपने को निषेध करके, अन्य प्रकारसे जो आशंका है तिसका निषेध करते हैं। यहां यह अर्थ है कि विद्या अरु कर्मका कर्त्ता नित्यहै, इसप्रकार साधन की नित्यतासे मोक्षरूप साध्यकी नित्यता कहनेको योग्यनहीं है, क्योंकि कर्त्तापनेकी अनिवृत्तिकेहुये मोक्षके अभावका प्रसंग है ताते, अरु कर्त्तापनेकी निवृत्तिके होने से साधनकी नित्यता के अभाव होनेसे मोक्षका विनाश होवेगा] अरु जो ऐसाकहे कि विद्या अरु कर्म्मके कर्त्ताको नित्य होने से, विद्या अरु कर्म्मरूप साधनके प्रवाहसे जनित मोक्षकी नित्यता है। सो कथन बने नहीं, क्योंकि इस प्रकार माननेसे गंगाके प्रवाहवत् कर्त्तापने को दुःखरूप होने से अरु कर्त्तापने की निवृत्तिके हुये मोक्षका भंग होताहै ताते। अरु जिसकरके ब्रह्मज्ञानके विना मोक्ष दुर्लभ है, तिसप्रकार अविद्याकाम अरु कर्म्म के अनुष्ठान हेतुकी निवृत्ति के होने से अपने आत्माबिषे स्थितिरूप मोक्षहोवेहै। जाते आप-ही आत्मा ब्रह्महै तिसके विज्ञान से अविद्याकी निवृत्तिरूप मोक्ष होताहै, अतएव ब्रह्मविज्ञान के अर्थ उपनिषद् का आरम्भ करते हैं [ब्रह्म विद्याबिषे उपनिषद् शब्दकी प्रसिद्धि जो है सोभी विद्या कीही मोक्षकी साधनताबिषे प्रमाण है, ऐसा कहतेहैं] ब्रह्मविद्या जो है सो तिसबिषे तत्पर मुमुक्षुओं के गर्भ जन्म जरा आदिकों को शिथिल करेहै, वा उन गर्भादिकों को विनाशकरे है, वा ब्रह्म को प्राप्त करनेवाली है वा इससे अन्य साधनों से परमश्रेय नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होवेहै, यातें ब्रह्म विद्याको उपनिषद् कहते हैं । अरु तिस ब्रह्म-विद्या अर्थवाला होने से इस ग्रंथको भी उपनिषद् कहते हैं। इस प्रकार उपनिषद्के व्याख्यान के आरंभ की संभावना करके अब तिसके पद पद के व्याख्यान का प्रारंभ करते हैं ॥

"शन्नोमित्रः" { मित्र सुखकारी होवो } अर्थात् प्राणवृत्तिका अरु दिवसका अभिमानी देवतारूप जो मित्र सो हमको सुख-कारीहोवो । तैसेही "शंवरुणः" { वरुण सुखकारीहोवो } अर्थात् अपान वृत्तिका अरु रात्रिका अभिमानी देवतारूप जो वरुण सो हमको सुखकारी होवो । तैसेही "शंनोभवत्वर्यमा" { अर्य्यमा सुखकारीहोवो } अर्थात् चक्षुविषे वा सूर्य्यविषे अभिमानीदेवता जो अर्य्यमा सो हमको सुखकारी होवो । तैसही "शन्नइन्द्रोबृहस्पतिः" { इन्द्र अरु बृहस्पति सुखकारीहोवो } अर्थात् बलविषे अभिमानी देवता जो इन्द्र, अरु वाणी अरु बुद्धिविषे अभिमानी देवता जो बृहस्पति सो उभय हमको सुखकारी होवो । तैसेही "शंनोविष्णु रुरुक्रमः" { उरुक्रम विष्णु सुखकारीहोवो } अर्थात् बलिराजासे तीनपाद पृथिवी की याचनाकर सर्व राज्यके ग्रहणार्थ विश्वरूप धारके विस्तीर्ण पादों के क्रमवाला अरु पादकाभिमानी देवता जो उरुक्रम उपेन्द्र नामवाला विष्णु सो हमको सुखकारी होवो। इत्यादिकअध्यात्मरूप जो देवता है सो सर्व हमको सुखकारीहोवो। इसप्रकार सर्व ठिकाने (अनुषंग पिछले पदका सम्बन्ध) है। अध्यात्मरूप प्राण अरु करण (इन्द्रियन)के अभिमानी देवताओं का सुखकारी होनेपना क्यों प्रार्थना करतेहो, इस शंकाकेहुये । तहां कहते हैं । गुरुपादके समीप गमनपूर्वक वेदान्तकेतात्पर्यका निश्चय, श्रवण कहते हैं । अरु श्रवण किये अर्थका अविस्मरण रूप धारणा कहते हैं । अरु शिष्यों के अर्थ निवेदन करना उप-योग कहते हैं] उक्त देवताओं के सुखकारी हुये अप्रतिबन्ध से विद्याका श्रवणधारण अरु उपयोग होता है, एतदर्थ "शंनोभव" { हमको सुखकारी होवो } इसप्रकार तिन पांच देवताओं के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुखकारी होनेपनेकी प्रार्थना करते हैं ॥ अब ब्रह्मविद्याके जानने की इच्छावाले मुमुक्षु करके ब्रह्मविद्या के श्रवणादिकोंविषे विघ्नों की निवृत्ति के अर्थ वायुको विषय करनेवाली नमस्कार अरु वंदना रूप क्रिया को करताहौं। क्योंकि सर्व क्रिया का फल तिस वायु के अधीनहै ताते "नमोब्रह्मणे" (ब्रह्मके अर्थ नमस्कार है) "नमस्तेवायो" (वायुके अर्थ नमस्कार है) अर्थात् ब्रह्मरूपजो वायु है तिसके अर्थ मैं नमस्कार करताहौं, हे वायु! तेरे अर्थ मैं नमस्कार करताहौं [ब्रह्म अन्य है, वायु अन्य है, इस प्रकार जो कोई शंकाकरे तो, यह शंका करने योग्य नहीं। यहां यह अर्थ है कि, ब्रह्म, ऐसा परोक्षसे कहा है क्योंकि "सब्रह्मेत्याचक्षत, इतिश्रुतेः" सो ब्रह्महै ऐसा कहते हैं, इस श्रुतिने, स, शब्द करके ब्रह्मको परोक्ष कहा है। अरु वायु शब्दसे प्रत्यक्षपनेसे कथनहै क्योंकि प्राणवायुको प्रत्यक्षता है ताते। अर्थात् एकही ब्रह्म आत्मरूप से परोक्ष है अरु प्राणरूप से प्रत्यक्ष है ताते ब्रह्म अरु वायुका भेदनहीं।' यहां परोक्ष अरु प्रत्यक्ष करके वायुकोही कहते हैं। यद्यपि सूत्र आत्मारूपसे वायु परोक्षहै, तथापि अध्यात्मिक प्राणवायु रूपसे ब्रह्म शब्द का वाच्य हुयेभीवायु का अपरोक्षपना है ऐसा कहते हैं। यहां यह अर्थ है कि बाह्यके चक्षुरादिक जो हैं सो रूपके दर्शन आदिक लिंगसे अनुमान करने के योग्य हैं ताते, अन्तराय सहित है, अरु प्राणतो अन्तराय के अभाव से साक्षी करके वेद्य है, अरु भोक्ता के समीप है एतदर्थ चक्षु आदिकों की अपेक्षा से वायु प्राण प्रत्यक्ष है।] "त्वमेव प्रत्यक्षंब्रह्मासि" (तूही प्रत्यक्ष ब्रह्म है) अर्थात् हे वायो! तूही चक्षुरादिकों की अपेक्षाकरके बाह्य समीप औ अंतरायसे रहित प्रत्यक्ष ब्रह्म है। [यहां यह अर्थ है कि वृद्धि करने वाला होनेसे वायुको ब्रह्म कहते हैं। प्राणके किये श्वास आदिकों से वा भोजनादिकों से शरीरादिकों की वृद्धिहोनी प्रसिद्ध है। जैसे कोई एक राजा के दर्शनकी इच्छावाला मुमुक्षु हृदयगत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मके द्वारपाल को "त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मवदिष्यामि" तुझ कोही प्रत्यक्ष ब्रह्म कहताहौं, इस प्रकार कहताहै, ऐसी ब्रह्मका कथनरूप जो क्रिया है सो प्राणदेवताकी स्तुत्यर्थ है] अतएव मैं "त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मवदिष्यामि" {तुझकोही प्रत्यक्ष ब्रह्म कहता हौं} अरु जिसप्रकार शास्त्रोंविषे कहाहै, अरु जैसे करनेकोयोग्यहै, ऐसा बुद्धिविषे सम्यक् प्रकार निश्चयकिया जो अर्थ तिसको ऋत कहते हैं सोभी तेरे अधीनहै एतदर्थ तुझकोही "ऋतंवदिष्यामि" {ऋत कहताहौं}। अरु वाणी अरु शरीर करके सम्पादनहुआ जो सत्यहै सोभी तेरे अधीनही सम्पादन करतेहैं, एतदर्थ {तुझकोही "सत्यंवदिष्यामि" {सत्य कहताहौं} "तन्मामवतु" {सो मुझको (मेरी) रक्षाकरो} अर्थात् सो सर्वात्मा वायुनाम वाला ब्रह्म मुझकरके स्तुतिको प्राप्तहुआ मुझ विद्यार्थीकी विद्या विषे जोड़ने करके रक्षाकरो। अरु "तद्वक्तारमवतु" {सो वक्ता की रक्षाकरो} अर्थात् सोई ब्रह्म आचार्यको वक्तापने के सामर्थ्य विषे जोड़ने करके उसकी रक्षाकरो, "अवतुमाम्, अवतुवक्तारम्" {मुझकोरक्षाकरो {वक्ताको रक्षाकरो} यहां पुनः जो कथन सो मंगलाचरण के आदरार्थ है "सत्यंवदिष्यामि पञ्च" {सत्य कहताहौं अरु पांच} ॐ सत्यही कहताहौं "शान्तिः शान्तिः शान्तिः" {शान्ति होवे, शान्तिहोवे, शान्तिहोवे} यहां तीनबार जो शान्तिका कथनहै सो विद्याकी प्राप्तिविषे जो 'आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक, यह तीनप्रकार से होनेवाले जे विघ्नहैं तिनकी निवृत्तिके अर्थ है॥

इति प्रथमोऽनुवाकः १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ शिक्षां व्याख्यास्यामः। वर्णः। स्वरः। मात्रा। बलम्। साम। सन्तानः। इत्युक्तःशिक्षाध्यायः॥ शिक्षां पञ्च॥ २॥ इति द्वितीयोनुवाकः॥

अथ द्वितीयोऽनुवाकः २॥

हे सौम्य! अब अर्थके ज्ञानको प्रधान होनेसे उपनिषद्ग्रन्थके पाठविषे 'स्वर, उष्म, औ व्यंजनरूप अक्षरोंके अप्रमादरूप प्रयत्नकी निवृत्तिमत हो, इस अभिप्रायसे शिक्षाध्याय का प्रारम्भ करतेहैं। जिस करके शिक्षा करते हैं। ऐसा जो वर्ण आदिकोंके उच्चारण का लक्षण (शास्त्र) तिसको शिक्षा कहते हैं। वा जो शिक्षाको प्राप्तकरेहै ऐसे वर्ण आदिक सो शिक्षा कहते हैं। औ जो शिक्षा है सोई वेदांग विषे शिक्षा इस नामसे कहा जाता है। "शीक्षांव्याख्यास्यामः" {शिक्षा को स्पष्ट कथन करते हैं} अर्थात् तिसशिक्षाको स्पष्ट जैसेहोय तैसे सर्व ओरसे कथन करतेहैं,। "वर्णः। स्वरः। मात्रा। बलम्। साम। सन्तानः। इत्युक्तः शिक्षाध्यायः।" {वर्ण, स्वर, मात्रा, बल, साम, सन्तान, ऐसा शिक्षाध्याय कहा है} अर्थात्, तहां अकारादिवर्ण, अरु उदात्त आदिक स्वर, अरु ह्रस्वआदिक मात्रा, अरु प्रयत्न विशेषरूप बल, अरु वर्णोंका मध्यमवृत्तिसे उच्चारणरूप साम (समता), अरु सन्तति (संहिता) रूप सन्तान, यहही सखिने योग्य अर्थरूप शिक्षा, जिस अध्याय विषे है, ऐसा शिक्षाध्याय है, इसप्रकार आगे कहा है "शिक्षांपंच" {पांच शिक्षाको} अर्थात्, पांच प्रकारकी शिक्षाको आगे कहेंगे॥ इति द्वितीयोनुवाकः॥

अथ तृतीयोऽनुवाकः॥

हे सौम्य! अब वर्णोंके सम्बन्धरूप संहिताकी उपनिषद् अर्थात् उपासना कहते हैं। तहां संहितादिकों की उपासना के ज्ञानरूप निमित्तवाला जो यश सो प्रार्थना करते हैं, "सहनौयशः" {यश हमकोसाथ, ही हो} अर्थात्, सो यश हम शिष्य अरु आचार्य्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सहनौयशः । सहनौब्रह्मवर्चसम् । अथातःसंहिता-याउपनिषदं व्याख्यास्यामः ॥ पंचस्वधिकरणेषु । अधि-लोकमधिज्योतिषमधिविद्यमधिप्रजमध्यात्मम् । ता म-हासंहिताइत्याचक्षते । अथाधिलोकम् । पृथिवीपूर्व रूपम् । द्यौरुत्तररूपम् । आकाशःसन्धिः ३ ॥

दोनोंको साथही हौ, अरु "सह नौ ब्रह्मवर्चसम्" { ब्रह्मवर्चस हमको साथ, ही हो } अर्थात् तिस यशरूप निमित्तवाला जो ब्रह्मवर्चस (ब्रह्मतेज) है सो हमशिष्य अरु आचार्य्य दोनोंको साथहीहो । यहां प्रार्थनारूप शिष्यका वचनहै । यहां शिष्यको ही कृतार्थ होनेके अर्थ प्रार्थनाका करना संभवे है, अरु आचार्य जोहै सो तो प्रसिद्धही कृतार्थ होता है, एतदर्थ आचार्यको कृतार्थ के अर्थ प्रार्थना करनी संभवे नहीं । अब पूर्व व्यतीतहुये अध्ययन रूप विधानकी अत्यन्तग्रंथसे निश्चितहुई जो बुद्धि, सो तत्कालही अर्थ के ज्ञानविषे प्रवर्त्त करनेको शक्य होवे नहीं, अतएव अपनी शाखाकी संहितारूप ग्रंथके समीपवर्त्ती वर्णोंके संबन्धरूपसंहिता की उपासना को कहते हैं । [यहां "पंचस्विति"। पांच विषे,इस प्रकार जो सप्तमी विभक्ति कही है, सो तृतीया विभक्तिके अर्थ करके पलटनेको योग्य है । अरु अधिकरण शब्द है सो विषयका पर्य्याय है । ताते पांच पदार्थ करके विशिष्ट जो ज्ञानहै सो अक्षरों विषे कहनेको योग्य है, जैसे शालिग्राम प्रतिमा बिषे विष्णुका ज्ञानहै तैसे । यह अर्थ होता है] पांच आश्रयों (ज्ञानके विषय) बिषे जो अधिलोक [लोकको आश्रय करके जो ध्यान करने की योग्यता तिसको अधिलोक कहते हैं । अरु विद्या शब्दकरके विद्या से सम्बन्धको पाया आचार्य्यादिक कहनेको इच्छित है । तैसेही प्रजा शब्दकरके प्रजासे सम्बन्धको पाये पिता आदिक कहनेको इच्छित जानो । अरु अध्यात्म शब्दसे भोक्ता आत्माको आश्रय करके वर्त्तते हैं ऐसे जे जिह्वा आदिक सो कहनेको योग्य जानो ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वायुःसन्धानम्। इत्यधिलोकम्। अथाधिज्यौतिषम्। अग्निःपूर्वरूपम्। आदित्यउत्तररूपम्। आपःसन्धिः वैद्युतःसन्धानम्। इत्यधिज्यौतिषम्। अथाधिविद्यम्। आचार्य्यःपूर्वरूपम् ४॥

परन्तु सर्व ठिकाने तिनतिनके अभिमानी देवताही ग्रहण करने को योग्य है, क्योंकि देवताओं से अन्यवस्तु को उपास्य होना असंभव वा अयोग्य है ताते], अधिज्यौतिष, आधिविद्य, अधिप्रज, अरु अध्यात्म, यह पांचरूप उपासना है, इन पांच विषयवाली उपासनाको लोकादिक महावस्तुओं को विषय करनेवाली होने से, अरु संहिताको विषय करनेवाली होनेसे वेदके वेत्ता ब्राह्मण उसको महासंहिता ऐसा कहते हैं। "अथ अधिलोकम्, पृथिवी पूर्वरूपं, द्यौरुत्तररूपं, आकाशः सन्धिः॥ ३॥" (अब अधिलोक (तहां) पृथिवी पूर्वरूपहै, द्यौ उत्तररूपहै, आकाश संधिहै,) अर्थात् अब जिसप्रकार कहनेको आरम्भ किया है तिसप्रकार उन पांच प्रकारकी उपासना के मध्य प्रथम अधिलोक रूप उपासना को कहते हैं। यहां सर्व ठिकाने 'अथ,' (अब) शब्द जो है सो उपासना के क्रम देखावनेके अर्थ है। पृथिवी जो है सो पूर्व रूप (पूर्व वर्ण) है। अर्थात् संहिताके पूर्व वर्णबिषे पृथिवीकी दृष्टि कर्त्तव्यहै, ऐसा कहा होताहै। तैसेही स्वर्गलोक उत्तररूपहै, अरु आकाश (अन्तरिक्षलोक) संधिहै, अर्थात् संधि कहिये जिस विषे पूर्वरूप पृथ्वी अरु उत्तररूप स्वर्ग मिलापको पावते हैं तिस मध्य अन्तरिक्ष को संधि कहते हैं ३॥

हे सौम्य! "वायुःसन्धानम्" (वायु संधानहै) अर्थात् वायु जो है सो संधान है। जिसकरके मिलाप होय तिसको संधान कहते हैं, सो अन्तरिक्षरूप स्थलबिषे पृथ्वी अरु स्वर्गका मिलाप वायु करताहै। "इत्यधिलोकम्" (इसप्रकार अधिलोक कहा) अर्थात् उक्तप्रकार अधिलोक रूप उपासना कही। "अथाधि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तेवास्युत्तररूपम् । विद्यासन्धिःप्रवचनꣳसन्धानम् । इत्यधिविद्यम् । अथाधिप्रजम् । मातापूर्वरूपम् । पितोत्तररूपम् । प्रजासन्धिः । प्रजननꣳसन्धानम् । इत्यधिप्रजम् ५ ॥

ज्योतिषम् " (अब अधिज्योतिष) अर्थात् अब अधिज्योतिष रूप उपासना कहते हैं, तहां " अग्निः पूर्वरूपम्, आदित्य उत्तर रूपम्, आपः सन्धिः, वैद्युतः संधानम् " (अग्नि पूर्वरूप है, सूर्य्य उत्तररूपहै, जलसन्धि है, विद्युत संधान है " इत्यधि ज्योतिषम् " (यहअधिज्योतिषहै) अर्थात् इस प्रकार अधिज्योतिष रूप उपासनाकही ॥ " अथाधिविद्यम् " (अब अधिविद्यहै) अर्थात् अब अधिविद्यरूप उपासना कहते हैं । तहां " आचार्य्यः पूर्व रूपम् " (आचार्य्य पूर्वरूप है) ४ ॥

हे सौम्य ! " अन्तेवास्युत्तररूपम् " (अन्तेवासी उत्तररूपहै) अर्थात् आचार्य्य के गृह निवास करनेवाला शिष्य उत्तर रूप है। अरु " विद्यासन्धिः प्रवचनꣳसन्धानम् " (विद्या सन्धि है प्रवचन संधान है) अर्थात् प्रश्नोत्तर रूपों का कथन संधान है ॥ " इत्यधिविद्यम् " (यह अधिविद्य है) अर्थात् इसप्रकार अधिविद्यरूप उपासना कही ॥ " अथाधिप्रजम् " (अब अधिप्रजहै) अर्थात् अब अधिप्रजरूप उपासनाकहते हैं। तहां " मातापूर्वरूपम्, पितोत्तररूपम्, प्रजासन्धिः, प्रजननꣳसन्धानम् " (मातापूर्वरूप है, पिता उत्तररूपहै, प्रजासंधिहै, प्रजनन संधानहै) अर्थात् माता जो है सो पूर्वरूप है, अरु पिता उत्तररूप है, पुत्रादि प्रजासंधि है, अरु ऋतुकालविषे स्वभार्यासे संभोग संधान है । " इत्यधिप्रजम् " (यह अधिप्रज है) अर्थात् इस उक्तप्रकारकी अधिप्रज रूप उपासना कही है ५ ॥

हे सौम्य ! " अथाध्यात्मम् " (अब अध्यात्म, श्रवणकरो) " अधराहनुः पूर्वरूपम्, उत्तराहनुरुत्तररूपम्, वाक् सन्धिः, जिह्वा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथाध्यात्मम् ॥ अधराहनुः पूर्वरूपम् । उत्तराहनुरुत्तररूपम्। वाक्सन्धिः ॥ जिह्वासंधानम्। इत्याध्यात्मम्। इतीमामहासंहिताः । यएवमेतामहासंहिता व्याख्याता वेद सन्धीयते प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येनसुवर्गेण लोकेन ॥ सन्धिराचार्य्यः पूर्वरूपमित्यधिप्रजंलोकेन ६ ॥ इति तृतीयोनुवाकः ॥

सन्धानम्" (नीचे का हनु पूर्वरूप है, ऊपरका हनु उत्तररूपहै, वाक् संधिहै, जिह्वा संधान है,) अर्थात् नीचे का होठ पूर्वरूप है अरु ऊपर का होठ उत्तररूप है अरु वाणी संधि है अरु जिह्वा संधान है "इत्याध्यात्मम्" (यह अध्यात्म है) अर्थात् इसप्रकार अध्यात्मरूप उपासना कही है ॥ इन सर्व उपासनाओंको जिसप्रकार प्रथम लोकोपासना कहीहै तिसप्रकार जानना ॥ "इतीमा महासंहिताः" (ऐसे यह महासंहिता, ग्रहण किया है) अर्थात् इसप्रकार यह कहीहुई महासंहिता, अधिकारियोंको विधि के देखावने के अर्थ ग्रहण करते हैं [जैसे दर्शआदिक षटयाग समुच्चयहुये फलके साधक हैं अधिकारी के अंशसे अभेदता करके। तैसेही यह उक्त पांच उपासना भी समुच्चयवालीही हुई प्रजा आदिक फलकी कामनावाले पुरुषों को अनुष्ठान करने के योग्य हैं, इसप्रकार कहते हैं। यहां यह भाव है कि फलकी कामनावाले पुरुषों करके अनुष्ठान कीगई संहिता की उपासना वांछित फलकी प्राप्तिके अर्थ होती है। अरु फलकी इच्छासे रहित निष्काम पुरुषों करके अनुष्ठान कीहुई उक्त उपासना ब्रह्मविद्या की जिज्ञासा उपजावनेवाली होतीहै। अरु बुद्धिरहित पुरुषोंकरके ब्रह्मका जानना अशक्य होनेसे बुद्धिकी कामनावाले पुरुषों करके किया जपभी ब्रह्मविद्या के जाननेके अर्थ बुद्धिका प्रापक होता है। अरु धनसे रहित पुरुषों करके चित्तकी शुद्धिके अर्थ यज्ञादिकों का होना अशक्य है क्योंकि धन बिना यज्ञ होवेनहीं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतएव धनकी कामनावाले पुरुषों करके किया इसका हवनभी धनकी प्राप्ति वा चित्तशुद्धि वा ब्रह्म विद्याविषे उपयोगी होताहै। इसप्रकार ब्रह्मविद्या की सन्निधिविषे उपदेश कियेहुये साधनोंका महत् तात्पर्य है, सो सर्वत्र देखलेना] "। य एवमेता महासंधि-हिता व्याख्याता वेद संधीयते प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्गेण लोकेन ।" (जो पुरुष उक्तप्रकार कथन कीहुई इन महा संहिता को जानताहै, सो प्रजाकरके पशुओं करके ब्रह्मतेज करके अन्नादि करके अरु स्वर्गलोक करके जुड़ताहै) अर्थात् प्रजा पशु तेज अन्न धन स्वर्गादि फलको पावता है। अरु "। संधिराचार्यः पूर्वरूप मित्यधिप्रजं लोकेन ॥ ६ ॥ ।" (संधि आचार्य पूर्वरूप अधिप्रज लोक से) अर्थात् संधि आचार्य पूर्वरूप है इस प्रकार अधिप्रज, लोकसे जुड़ता है। यहां जो कहाहै कि, जानता है, इस पदका अर्थ उपासना करता है यहही होताहै, क्योंकि "। प्राचीन योग्योपास्वेति।" हे प्राचीनयोग्य ! उपासना कर। इस चतुर्दशवें वाक्य करके उपासना के अधिकार परत्वहै ताते। अरु उपासना जो है सो शास्त्रके अनुसार तुल्य वृत्तियों के प्रवाहरूप मिश्रित अर्थात् अन्य विषयाकार वृत्तिसे रहित है, एतदर्थ तदाकार वृत्तियों करके शास्त्रोक्त आश्रय को विषय करनेवाली उपासना कहते हैं। लोकविषे गुरुको उपासताहै, राजाको उपासता है, इसप्रकार उपासना शब्दका अर्थ प्रसिद्ध है। जो गुरु आदिकों को निरंतर समीप बसता है सो उपासना करता है, अर्थात् उप कहते हैं समीप को अरु आसन कहते हैं स्थित होनेको ताते जो आचार्य के समीप स्थित होयके उनकी सेवा शुश्रूषा करनी है तिसका नाम उपासना है। इसप्रकार कहते हैं। अरु सोई उपासनाके फलको पावताहै। अतएव यहांभी सो उपासना शब्द का अर्थ अरु तिसकरके उक्तफलकी प्राप्तिबने है ॥ ६ ॥

इति तृतीयोनुवाकः ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यश्छन्दसामृषभो विश्वरूपः छन्दोभ्योऽध्यमृतात्सम्बभूव। समेन्द्रो मेधया स्पृणोतु। अमृतस्य देवधारणो भूयासम्। शरीरंमेविचर्षणम्। जिह्वामेमधुमत्तमा। कर्णाभ्यां भूरिविश्रुवम्। ब्राह्मणःकोशोऽसिमेधया पिहितः। श्रुतं मेगोपाय। आहवन्ति वितन्वाना ७॥

अथ चतुर्थोनुवाकः॥

हे सौम्य!। "स मेन्द्रो मेधया स्पृणोतु"। अरु। "ततो मे श्रियमावहेति"। सो इन्द्र मुझको बुद्धिसे प्रसन्न वा समर्थ करो। अरु तिसके अनन्तर मेरे अर्थ लक्ष्मी को प्राप्तकरो। इस मन्त्रविषे अरु अगिले मन्त्रविषे कथनकिये लिंग (चिह्न) के देखनेसे। यहां बुद्धिकी कामनावाले अरु लक्ष्मी की कामनावाले पुरुषोंको तिनकी प्राप्तिके साधन जप अरु हवन कहते हैं।। "यश्छन्दसामृषभो विश्वरूपः छन्दोभ्योऽध्यमृतात्सम्बभूव"। (जो ॐकार वदके मध्य श्रेष्ठहै वेदरूप अमृतसे प्रतीतहोताहुआ) अर्थात् जो ॐकार वेदके मध्य प्रधान होनेसे श्रेष्ठवत् श्रेष्ठ है, अरु। "शंकुनेत्यादि।" सो जैसे शंकु (कीले) करिके इत्यादि अन्यश्रुतियों करके, सर्व प्राणियोंविषे व्याप्त होनेसे विश्वरूपहै, अरु इसहीसे ॐकार का उपासनाहै। इसकरके ॐकार यहां उपासना करनेको योग्य है। तदर्थही ऋषभआदिक शब्दों से ॐकार स्तुति करने के योग्यही है। अरु जो वेदरूप अमृत से प्रतीत होताहुआ, अर्थात् लोक अरु वेदरूप व्याहृतियों से सारिष्ट 'उत्तम भाग्य, को इच्छा करनेवाले अरु इसहीसे तपकरनेवाले प्रजापतिसे सारिष्ट' उत्तम भाग्य' रूप होनेकरके ॐकार प्रतीतहोताहुआ। अरु जिस करके नित्यरूप ॐकारकी उत्पत्ति अनायास से नहीं कल्पना करते हैं, याते सो प्रतीत होताहुआ, यह अर्थ बनता है। "समेन्द्रो मेधया स्पृणोतु"। (सो इन्द्र मुझको बुद्धिसे समर्थकरो) अर्थात् सो उक्त प्रकारका ॐकार रूप इन्द्र सर्व कामका स्वामी परमे-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्वर मुझको बुद्धिसे प्रसन्न वा समर्थकरो ॥ अब बुद्धिके बल की प्रार्थना करतेहैं।" अमृतस्य देवधारणो भूयासम्"। {हे देव! अमृतका धारण करनेवाला होहु} अर्थात् हे देव! तिस बुद्धिके अधिकार से अमर भावके हेतरूप ब्रह्मज्ञान का धारण करने वालाहोवो।" अरु शरीरंमे विचर्षणम्, जिह्वामे मधुमत्तमाकर्णाभ्यां भूरि श्रुवम्"। {मेरा शरीर विचक्षणहोहु, मेरी जिह्वा विशेष करके मधुर भाषिर्णाहोहु, कर्णकरके श्रोत्राहोहु} अर्थात् मेरा शरीरयोग्यहोहु, अरु मेरीवाणी अतिशय करके मधुर भाषण करनेवालीहो हु। अरु मैं दोनोंकानोंकरके वेदका बहुत श्रोताहोहु, किंवा मेराकार्य अरु करणरूप संघात जो है सो आत्मज्ञानकेयोग्य होहु, यहवाक्यका अर्थ है। अरु।" ब्रह्मणः कोशोसि मेधया पिहितः"।{ब्रह्मकाकोशहै बुद्धिकरकेआच्छादितहै}अर्थात् हे ओंकार! तू ब्रह्म(परमात्मा)का कोश कहिये स्थानहै, क्योंकि खड्गके कोश (स्थान) वत् ब्रह्मके प्राप्ति वा दर्शनका स्थानरूपहै ताते। अरु जिस करके तू ब्रह्मका प्रतीक(प्रतिमा)है याते तेरे बिषे ब्रह्मप्राप्तहोताहै। सो तू ब्रह्मकाकोशहुआ लौकिक बुद्धिकरके आच्छादितहै, अर्थात् मंदबुद्धिवाले पुरुषोंकरकेतेरासद्भाव अज्ञातहै।अरु।"श्रुतंमेगोपाय"। {मेरेश्रुतकोरक्षाकर} अर्थात् तूमेरे श्रवणपूर्वक आत्मज्ञान आदिकी की रक्षाकर, तिसकी प्राप्तिके अविस्मरणादिकों को कर॥ यह मन्त्र बुद्धिकी कामनावाले पुरुषको जप करनेके अर्थ कहा। अब लक्ष्मीकी कामनावाले पुरुषको तिसकी प्राप्त्यर्थहोमार्थ जो मन्त्र है सो कहते हैं।" आहवन्ती वितन्वाना"। {ल्यावनेवाली ओढि स्तारने वाली ॥ ७ ॥

हे सौम्य!।"कुर्वाणा चीरमात्मनः,वासाꣳसिममगावश्च, अन्नपानेचसर्वदा, ततो मे श्रियमावह, लोमशांपशुभिः सह स्वाहा। {आत्माके वस्त्रोंको, गौओं को अन्नपानको सर्वदा निर्वाह करनेवाली, अजा,भेड़ आदिकरके युक्त,पशुकरके सहित तिस लक्ष्मीको मेरे अर्थ ल्याव, स्वाहा} अर्थात् मेरे वस्त्रोंको अरु गौओं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुर्वाणाचीरमात्मनः। वासाꣳसिममगावश्च। अन्नपानेच सर्वदा। ततोमेश्रियमावह। लोमशांपशुभिः सहस्वाहा। आमायन्तु ब्रह्मचारिणःस्वाहा। विमायन्तु ब्रह्मचारिणःस्वाहा। प्रमायन्तु ब्रह्मचारिणःस्वाहा। दमायन्तुब्रह्मचारिणःस्वाहा। शमायन्तुब्रह्मचारिणःस्वाहा ८॥

अरु अन्नपानों को निर्वाह करनेवाली जो लक्ष्मी है, अरु तिस अजा अरु भेड़ आदिकों करके युक्त अरु अन्य, अश्वादि, पशुओं करकेयुक्त लक्ष्मीको बुद्धिके वर्धमान होनेके पश्चात् मेरे अर्थ प्राप्त कर,स्वाहा। अरु जिसकरके बुद्धिरहितपुरुषोंकोलक्ष्मीकी जो प्राप्ति है सो अनर्थके अर्थही होती है, अतएव यहां बुद्धिकी वृद्धि होनेके पश्चात् लक्ष्मीको प्राप्तकर इसप्रकार कहाहै॥ अरु यहां। ल्यावो इस क्रियापदकरके ॐकारही सर्वओरसे सम्बन्धको पावताहै। अरु यहां जो स्वाहा शब्दहै सो हवनके अन्तके मन्त्र रूप अर्थके जनावने के अर्थहै। "आमायन्तुब्रह्मचारिणःस्वाहा, विमायन्तु ब्रह्म चारिणःस्वाहा, प्रमायन्तुब्रह्मचारिणः स्वाहा, दमायन्तुब्रह्मचारिणः स्वाहा, शमायन्तुब्रह्मचारिणः स्वाहा। (ब्रह्मचारी मेरे अर्थ ल्याव स्वाहा, ब्रह्मचारी निष्कपटभावकोकरो स्वाहा, ब्रह्मचारी प्रमाको करो स्वाहा, ब्रह्मचारी दमकोकरो स्वाहा, ब्रह्मचारी शमकोकरो स्वाहा) अर्थात् ब्रह्मचारी जो है सो मेरे अर्थ प्राप्तकरो स्वाहा, ब्रह्मचारी जो है सो निष्कपट भावको प्राप्तकरो स्वाहा, अरु ब्रह्मचारी जो है सो यथार्थ ज्ञानको करो स्वाहा, अरु ब्रह्मचारी जो है सो इन्द्रियोंके दमनको करो स्वाहा, अरु ब्रह्मचारी जो है सो मनके निग्रहरूप शमको करो स्वाहा॥ ८॥ श्रीरामायनमः॥

हे सौम्य! "यशोजनेऽसानि स्वाहा, श्रेयान्वस्यसोऽसानि स्वाहा, तंत्वा भग प्रविशानि स्वाहा, समाभगप्रविश स्वाहा, तस्मिंस्तु सहस्र शाखे निभगाऽहंत्वयि मृजे स्वाहा" (जनविषे यशहोवों स्वाहा, अतिशय श्रेष्ठ अत्यन्त धनवान्से धनवान् होवों स्वाहा,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यशोजनेऽसानिस्वाहा।श्रेयान्वस्यसोऽसानिस्वाहा। तं त्वाभग प्रविशानिस्वाहा। समाभग प्रविशस्वाहा। तस्मिंस्तुसहस्रशाखे निभगाहंत्वयिमृजेस्वाहा। यथाऽऽपःप्रवतायन्ति। यथामासाअहर्जरम्। एवंमांब्रह्मचारिणःधातरायन्तुसर्वतः स्वाहा। प्रतिवेशोऽसिप्रमाभाहि-प्रमापद्यस्व॥ वितन्वानाःशमायन्तुब्रह्मचारिणःस्वाहा। धातरायन्तुसर्वतः स्वाहेकंच ९॥ इति चतुर्थोऽनुवाकः॥

भगवन् तिस तेरे ताईं प्रवेशकरु स्वाहा, भगवन् सो मेरे ताईं प्रवेशकर स्वाहा, भगवन् तिस सहस्र शाखावाले तुझ बिषे मैं शोधन करूंहूं; अर्थात् मैं जनके समूहबिषे यशस्वीहोवों स्वाहा, मैं अतिशय अरु श्रेष्ठ अत्यन्त धनवानों से भी धनवान्होवों स्वाहा, किंवा हे भगवन्! हे पूजने योग्य! तिस ब्रह्मके कोशरूप तेरे बिषे प्रवेशकरूं, अर्थात् तुझबिषे प्रवेशकरके अनन्य तेरा स्वरूपहीहोवों स्वाहा, हे भगवन्! सो तूभी मेरेबिषे प्रवेशकर, अर्थात् मेरी अरु तेरी दोनोंकी अभेद एकताहोवो स्वाहा, हे भगवन्! तिस सहस्र शाखावाले तुझबिषे मैं अपने पापरूप कर्म्मों को शोधनकरों स्वाहा, "यथाऽऽपः प्रवतायन्ति, यथा मासा अहर्जरम्, एवंमां ब्रह्मचारिणः धातरायन्तु सर्वतः स्वाहा" (जैसे जल नम्र देश में जाता है अरु जैसे मास सम्बत्सरको, ऐसे धातः ब्रह्मचारी मेरे ताईं सर्व ओरसे आवो स्वाहा) अर्थात् जैसे लोकों बिषे जल जो है सो नीचेही स्थलको जाता है, अरु जैसे मास जो हैं सो संवत्सरको जाते हैं [संवत्सर जो है सो दिवसों करके लोकों को जरावान् करता है, एतदर्थ संवत्सर को ,अहर्जर, इस नाम से कहते हैं अथवा दिवस जो हैं सो इस संवत्सर बिषे अन्तरभाव को पावते हैं एतदर्थ सो दिवस वा मास ,अहर्जर, नामसे कहे जाते हैं] इस प्रकार हे सर्वके विधाता ब्रह्मचारी! जो है सो मेरे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थ पूर्वादि सर्व दिशाओं से प्राप्तहोवो, स्वाहा। अरु "प्रतिवेशोऽसि प्रभा भाहि प्रभा पद्यस्व" (समीप का ग्रह है मुझको प्रकाशकर आपके अर्थ प्राप्तकर) अर्थात् हे भगवन्! जैसे श्रमके निवारण का स्थान समीपका ग्रह होताहै तैसे तू समीपके ग्रहतू समीप का ग्रहहै, अर्थात् तेरे भक्तों को सर्वपाप अरु तिसके फल सर्व दुःख तिनके निवारणका स्थान तू है। एतदर्थ मेरेको प्रकाशकर अरु अपने अर्थ प्राप्तकर, अर्थात् "शरवत्तन्मयोभवेत्" इसप्रमाण से लोहके शरकरके बेधेहुये लोहमें बाणतारूप होता है तैसे तू मुझको अपना स्वरूपकर "वितन्वाना शमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहा, धातरायन्तु सर्वतः स्वाहेकञ्च ६ ॥ ४ ॥" (विस्तार करतीहुई ब्रह्मचारीशमको करहु स्वाहा, सर्वओर से आवहु स्वाहा एक) अर्थात् हे धातः! (विधाता) विस्तार को करतीहुई, ब्रह्मचारी जोहै सोशमको करो स्वाहा, अरु सर्वओर से प्राप्तहोवो स्वाहा, यह एक है॥ इस विद्या के प्रकरण बिषे जो लक्ष्मीकी कामना कथनकियाहै सोधनके अर्थ है, अरुधनयज्ञादि कर्म्मों के अर्थ है अरु यज्ञादि कर्म सञ्चित पापों के विनाशार्थ है अरु पापों के विनाशहुये ब्रह्मविद्या प्रकाशती है। तथास्मृतिः "ज्ञानमुत्पद्यते पुंसांक्षयात्पापस्यकर्म्मणः। यथाऽऽदर्शतलेप्रख्ये पश्यन्त्यात्मानमात्मनीति" पुरुषों को पापकर्मके क्षयहुये ज्ञान उपजता है। जैसे स्वच्छ दर्पण बिषे, मुख देखते हैं तैसे, आत्मा (बुद्धि) बिषे (आत्मासाक्षी) को देखते हैं। इसस्मृति वाक्य प्रमाणसे ९॥ इति चतुर्थोऽनुवाकः॥

अथ पञ्चमोऽनुवाकः॥

हे सौम्य! [पूर्वकहे अर्थके अनुवाद पूर्वक अग्रिम कहनेके अनुवादके सम्बन्धसे कहते हैं यहां यह अर्थ है कि व्याहृतियों को श्रद्धासे ग्रहण किया होनेसे, तिनको परित्याग करके उपदेशकिया जो ब्रह्म सो बुद्धिबिषे स्थिरताको पावतानहीं, एतदर्थ व्याहृतिरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूर्भुवः स्वरिति वा एतास्तिस्रोव्याहृतयः । तासामु हस्मैतां चतुर्थीं । महाचमस्य प्रवेदयते । मह इति तद्ब्रह्म । स आत्मा । अङ्गान्यन्यादेवताः । भूरिति वा अयं लोकः । भुव इत्यन्तरिक्षम् । स्व इत्यसौ लोकः १० ॥

शरीरवाला हिरण्यगर्भनामक ब्रह्महृदयकेमध्य ध्येयहोने से उपदेशकरतेहैं] इसप्रकार बाणकेसम्बन्धरूपसंहिताको विषय करने वाली उपासनाकहा । तिसके पश्चात् बुद्धिकी कामना अरु लक्ष्मी की कामना के मन्त्रकहे । सो मन्त्र परम्पराकरके ब्रह्मविद्या के उपयोगार्थही हैं । यह सूचनकिया । अब तिसके अनन्तर व्याहृति रूप ब्रह्मकीहृदयके मध्य स्वाराज्य फलवाली उपासना कहते हैं । "भूर्भुवः स्वरिति वा एतास्तिस्रो व्याहृतयः तासामुहस्मैतांचतुर्थीं । महाचमस्य प्रवेदयते" (भूः भुवः स्वः, यह प्रसिद्ध जो तीन व्याहृतियां स्मरण करते हैं तिनके मध्य इस चतुर्थ को महाचमस जानताहुआ] अर्थात् 'भूः, भुवः, स्वः, यह प्रसिद्ध जो तीन व्याहृतियां (कि जिनको गायत्री आदिक मन्त्रों के साथ स्मरण करते हैं) तिनके मध्य यह चतुर्थ व्याहृति महर्लोक है तिस चतुर्थ व्याहृतिको महाचमसका पुत्र महाचमस्य नामवाला ऋषि है सो जानता (देखता) हुआ "मह इति ब्रह्म, स आत्मा, अङ्गान्यन्या देवताः, भूरिति वा अयंलोकः, भुव इत्यन्तरिक्षम्, स्व इत्यसौलोकः" (मह ऐसी सो ब्रह्महै, सो आत्मा हैं, अन्य देवता अंगहैं, भूः ऐसा प्रसिद्ध यह लोकहै भुवर् यह अन्तरिक्षहै स्वर् ऐसा वह (स्वर्ग) लोक है) अर्थात् यहां उपदेशसे जो यह महाचमस्य ऋषिने देखीहुई महर् ऐसी व्याहृति है [महर् इस व्याहृतिविषे अंगी ब्रह्मकी दृष्टि करनेको योग्य है । तिस व्याहृति औ ब्रह्म वा अंग अंगीविषे क्या तुल्यता है । तहां कहते हैं, यह यह अर्थ है कि ' जैसे देवदत्तके पादादिक अंगहैं अरु देहका मध्यभाग अंगी है, तिसको अन्य अंगोंका आत्मा कहते हैं क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मह इत्यादित्यः। आदित्येन वाव सर्वे लोकामही-यन्ते॥ भूरिति वा अग्निः। भुवइति वायुः। स्वरित्या-दित्यः। मह इति चन्द्रमाः। चन्द्रमसा वाव सर्वाणि ज्योतींष्यृषिमहीयन्ते॥ भूरिति वा ऋचः। भुव इतिसा-मानि। स्वरिति यजूंष्यृषि ११॥

वो सर्व अंगोंविषे व्याप्त है ताते। तैसेही महर्लोकरूप जो व्या-हृति है सो हिरण्यगर्भरूप ब्रह्मका मध्यभाग है अतएव उसको आत्मा ऐसी कल्पना करते हैं। अरु अन्य व्याहृतियां जो हैं सो पादादिक अवयवोंके भावसे कल्पना करते हैं तहां प्रथम व्याहृति दोनों पाद स्थानी है, अरु द्वितीय व्याहृति दोनों बाहु स्थानी है, अरु तृतीया व्याहृति शिरस्थानी है] सो ब्रह्म है। किस तुल्यता से। तहां कहते हैं। जिस करके ब्रह्म महत् है अरु व्याहृति महर् हैं तिसकरके उनकी एकता बने है। पुनः सो महर् क्याहै। सो आत्माहै। अरु जिसकरके वो महर् व्याप्तिरूप कर्मवान् है तिसही से सो आत्माहै। अरु अन्य जो व्याहृतिरूप ,लोक, देव,वेद,औ प्राणहैं, सो जिस करके "मह इतिब्रह्म" महर् ब्रह्महै,। इसअग्रिम कहने के वाक्य के कथनकिये व्याहृतिरूप ब्रह्म के ,देव, लोक, आदिक सर्व अवयव रूप हैं। अरु जिस करके सो ,सूर्य, चन्द्र, ब्रह्म अरु अन्नरूप करके व्याप्त होते हैं, एतदर्थ अन्य देवता जोहैं सो ब्रह्मके पादादिक अवयव हैं। यहां जो देवता का ग्रहण है सो उक्त लोकादिकों के ग्रहणार्थ है। अरु जिस करके "मह इति ब्रह्म" महर् ब्रह्म है,। इस अग्रिम कहनेके वाक्य करके कथन किये व्या हृतिरूप ब्रह्मके ,देव, लोक, आदिक सर्व अवयव रूप हैं, याते सू-र्यादिकों करके लोकादिक वृद्धि को पावते हैं। इस प्रकार आगे श्रुति कहती है भूः ऐसा प्रसिद्ध यह लोक है। भुवर् यह अन्त-रिक्ष है। स्वर् ऐसा यह स्वर्गलोक है १०॥

हे सौम्य! "मह इत्यादित्यः, आदित्येनवाव सर्वे लोका मही-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मह इति ब्रह्म । ब्रह्मणा वाव सर्वे वेदामहीयन्ते ॥ भूरिति वै प्राणः । भुव इत्यपानः । स्वरितिव्यानः । मह इत्यन्नम् । अन्नेन वावसर्वेप्राणामहीयन्ते ॥ तावा एताश्चतस्रश्चतुर्धा चतस्रश्चतस्रोव्याहृतयः ॥ तायो वेद सवेद ब्रह्म । सर्वेऽस्मैदेवा बलिमावहन्ति ॥ असौ लोको यजूंष्यृषिवेदद्वेच ॥ १२ ॥ इतिपञ्चमोऽनुवाकः ॥

यन्ते" । { महर् यह सूर्य है, सूर्य से प्रसिद्ध सर्वलोक वृद्धि को पावते हैं } "भूरितिवा अग्निः । भुव इति वायुः । स्वरित्यादित्यः । मह इति चन्द्रमाः । चन्द्रमसा वाव सर्वाणि ज्योतींष्यृषि महीयन्ते" । { भूः यह प्रसिद्ध अग्निहै, भुवर् यह वायु है, स्वर् यह सूर्य्य है, महर् यह चन्द्रमा है, चन्द्रमासे प्रसिद्ध सर्वज्योति (तारा) वृद्धिको पावते हैं } अरु "भूरिति वा ऋचः, भुव इति सामानि, स्वरिति यजूंष्यृषि" । { भूः यह प्रसिद्ध ऋचा (ऋग्वेद) है, भुवर् यह (सामवेद) है, स्वर् यह यजुर्वेद है ११ } ॥

हे सौम्य ! "मह इतिब्रह्म, ब्रह्मणा वाव सर्वेवेदामहीयन्ते" । { महर् यह ब्रह्म (ॐकार) है, ब्रह्मसे प्रसिद्ध सर्व वेद वृद्धिको पावते हैं } अरु "भूरिति वै प्राणः भुवरित्यपानः, स्वरिति व्यानः, महइत्यन्नम्, अन्नेनवाव सर्वेप्राणामहीयन्ते" । { भूः यह प्रसिद्ध प्राणहै, भुवर् यह अपानहै, स्वर् यह व्यानहै, महर् यह अन्नहै, अन्न से प्रसिद्ध सर्वप्राण वृद्धिको पावते हैं } अरु "ता वाएताश्चतस्रश्चतुर्धाचतस्रश्चतस्रोव्याहृतयः, तायोवेदसवेदब्रह्म" । { सो प्रसिद्ध ऐसीचार व्याहृतियां चारचार हुई चारप्रकार की होती हैं तिनको जो जानताहै सो ब्रह्मको जानताहै } अर्थात् [एक एक व्याहृतियां जब चारचार प्रकारकी चिन्तन करते हैं तब षोड़शकलात्मक पुरुष उपासना किया होताहै इस अभिप्राय करके संक्षेपसे कहते हैं] सो प्रसिद्ध जे भूः भुवर् स्वर् अरु महर् इस प्रकारकी जो चार व्याहृतियां हैं, सो व्याहृतियां जैसे कल्पना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करी है, तैसेही तिनका उपदेश जो है सो उपासनाके नियमार्थ है, सो व्याहृतियां जैसे कथन करी है, तिसप्रकार तिनको जो जानता है सो ब्रह्मको जानता है। ब्रह्मभावरूप स्वाराज्य की प्राप्तिके हुये "सर्वेऽस्मैदेवा बलिमावहन्ति, असौलोको यजूंष्यृषि वेदद्वेच।" {सर्व देवता इसके अर्थ बलिदानको ल्यावते हैं, यह लोक अरु यजुर्वेद दोनोंको जानता है} अर्थात् सर्व देवता अंग भूतहुये उस विद्वान्के अर्थ बलिदान ल्यावते हैं अरु इसलोक अरु अजुर्वेद इन दोनोंको जानताहै॥ ननु "तद्ब्रह्मस आत्मेति" सो ब्रह्म है सो आत्माहै, इसप्रकार ब्रह्मको जानेहुये अज्ञातवत् "सवेदब्रह्मेति" सो ब्रह्मको जानता है इस प्रकार कहना योग्य नहीं [अधिकारकी अविधिरूप वाक्य विषे ब्रह्मका ज्ञान फलपने करके कहते नहीं, किन्तु अग्रिम कहने के अनुवाक से इसही ब्रह्मकी उपासना विषे गुण का विधान होगा, इसप्रकार सूचना करने को यह कहते हैं] सो कहना बने नहीं, क्योंकि शास्त्र उसको बिशेष कहनेकी इच्छावाला है ताते, यह दोषनहीं है अरु यद्यपि चतुर्थ व्याहृति रूप ब्रह्म है, इसप्रकार जाना है, यह कहना सत्य है, तथापि उसका हृदय के मध्य प्राप्त होने के योग्यपने अरु मनोमय पनेसे आदि लेके "शान्ति समृद्धमिति" रूप शान्ति से समृद्धिको पाया, इस विशेषण पर्यन्त जो विशेष्य है, सो नहीं जाना है। एतदर्थ विशेषण अरु विशेष्य रूप धर्मका समूह जनावते हैं। इसप्रकार तिसके कहने की इच्छावाला जो शास्त्र सो अज्ञातवत् ब्रह्मको मानके "सवेद ब्रह्मेति" सो ब्रह्म को जानता है! इसप्रकार कहता है। एतदर्थ यह दोष नहीं है अरु जिस करके जो अग्रिम कहने के धर्म्म के समूह करके युक्त ब्रह्म को जानता है सोई ब्रह्मको जानताहै, यह अभिप्राय है। एतदर्थ अग्रिम कहने के षष्ठ अनुवाकसे इस पंचम अनुवाक की एक वाक्यताहै। अरु इन पंचम अरु षष्ठ दोनों अनुवाकों बिषे उपासनाभी एकही है, क्योंकि [जब व्याहृतिरूप अवयव वालाही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स य एषोंऽतर्हृदय आकाशः । तस्मिन्नयंपुरुषो मनोमयः । अमृतो हिरण्मयः । अन्तरेणतालुकेयएषस्तन इवावलम्बते । सेन्द्रयोनिः यत्रासौ केशान्तो विवर्तते व्यपोह्य शीर्षकपाले ॥ भूरित्यग्नौप्रतितिष्ठति । भुव इति वायौ १३ ॥

ब्रह्म आगे उपास्य कहते हैं, तबहीं उपासक को प्रथम व्याहृति रूप अग्निबिषे स्थिति का कथन घटितहै । एतदर्थ व्याहृतिरूप देवताकी प्राप्ति के कथनरूप उपासना की एकता बिषे लिंगको कहतेहैं] "भूरित्यग्नौ प्रतितिष्ठतीति" भू यह अग्निबिषे स्थित होता है, इत्यादिरूप वाक्यमें उपासनाकी एकता बिषे जो लिंग आगे कहाहै, तिसलिंगसे और भिन्न [एकठिकाने प्रधान विद्या की विधिहै, अरु दूसरे ठिकाने गुणबिधि है इसप्रकार अनुवाक भेदके कृत अर्थहुये अन्यप्रकार से असिद्ध भेदक प्रमाण प्रतीत होनेयोग्य नहीं है, ऐसा कहते हैं] उपासना के बोधक शब्द के अभावसे यह उपासना की एकता बिषे कहा जो लिंगसो युक्तहै। अरु जिसकरके यहां "वेदोपासितव्य" जानताहै सो उपासना करनेयोग्यहै, । इसप्रकार भिन्न उपासनाका बोधक कोईभी शब्द नहींहै, क्योंकि व्याहृतिके बोधक पञ्चम अनुवाकबिषे "तायोवेदेति" तिसको जो जानताहै, । ऐसा आगे कहनेका अर्थ है ताते एतदर्थ उपासनाका भेदक शब्द नहीं है। अरु तिन व्याहृतिके बोधक पंचम अनुवाक का आद्यम कहने के अर्थ करके युक्तपना जो है सो "तद्विशेषविवक्षुत्वादिति" शास्त्र को, तिसके विशेष के कहनेकी इच्छावाला होने से, इत्यादि वाक्यों करके हमने पूर्वहीं कहा है १२ ॥ इति पञ्चमोऽनुवाकः ॥

अथ षष्ठोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! "स य एषोंऽतर्हृदय आकाशः, तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः" (सो जो यह हृदय के भीतर आकाशहै, तिसबिषे यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुरुष है, मनोमय है) अर्थात् (भूः भुवर् स्वर्, इन तीन व्याहृतिरूप जो अन्यदेवता है, सो " महइति ब्रह्म " महर् ब्रह्म है, इस वाक्यसे हिरण्यगर्भ व्याहृतिरूप ब्रह्म के अंग हैं, इसप्रकार कहा। अरु अब जिसके वो देवता अंगभूत हैं, तिस इस ब्रह्म के साक्षात् ज्ञानार्थ अरु उपासनार्थ विष्णुके स्थानापन्न शालिग्राम-वत् हृदयादि आकाशरूप स्थान कहते हैं। अरु जिसकरके तिस स्थानबिषे उपासना किया हुआ मनोमयपने आदिक धर्म्मकरके युक्त सो ब्रह्म, हाथबिषे आमलक नामवाला फल वा निर्मलजल-वत् साक्षात् जाना जाता है। एतदर्थ सो स्थान अरु सर्वात्मभावकी प्राप्तिके अर्थ मार्ग कहने को योग्य है, इस अभिप्राय से यह षष्ठ अनुवाक का आरम्भ करतेहैं। सो प्रसिद्ध जो यह हृदय के भीतर (हाथ के कमण्डलु के अन्तर के आकाशवत् । वा वेणु (बांस) के परव (पोइ) के मध्य आकशवत्) आकाश है तिस तिसे सो यह पुरुष है, अर्थात् शरीर रूप पुरों बिषे पूर्णता से व्याप्त होवे (वा पुरीतती नाड़ीबिषे सोवता होवे) वा पृथिवी आदि लोक जिसकरके पूर्णहैं, एतदर्थ यहपुरुष है ऐसा कहतेहैं। सो पुरुष मनोमय है, अर्थात् ज्ञानरूप क्रियावाला होनेसे मन जो विज्ञानबुद्धि, तिस रूप है, क्योंकि तिस बिषे प्रतीयमान होता है ताते। वा जिसकरके मनुष्य मनन करते हैं ताते उसको मन कहते हैं। ताते ऐसा जो अन्तःकरण आकाशहै सो मनहै। अरु जिस करके पुरुष तिस मनका अभिमानी वा मनरूप लिंग (चिह्न वा उपलक्षण) वाला है, तिस करके (पुरुष को) तिस मनोमय रूप कहते हैं। अरु सो पुरुष अमृतरूप होने से मरण धर्म रहित अमर है, अरु हिरण्य (प्रकाश) मय है। अब तिस उक्तप्रकार के लक्षणवाले हृदयाकाश बिषे साक्षात्कार किये से विद्वान् के आत्मरूप पुरुष के, ऐसे स्वरूप के ज्ञानार्थ मार्ग कहते हैं। हृदयसे ऊपर प्रवृत्त हुई अरु योगशास्त्रबिषे प्रसिद्ध जो सुषुम्णा नाम्नी नाड़ी है सो मुखसे प्रसिद्ध (अन्तरेण तालुके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वरित्यादित्ये। महइति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वाराज्यम्। आप्नोति मनसस्पतिम्। वाकपतिश्चक्षुष्पतिः श्रोत्रपतिर्विज्ञानपतिः। एतत्तदोमवति। आकाशशरीरं ब्रह्म। सत्यात्मप्राणारामंमनआनन्दम्। शान्तिसमृद्धममृत इतिप्राचीनयोग्योपास्व। वायावमृतमेकवंच१४

इति षष्ठोऽनुवाकः ६॥

य एषस्तन इवावलम्ब ते" (तालुदेशके मध्य जो यह दोनों स्तनवत् स्थित है) तालुदेशके मध्य प्राप्तहुई है, अरु जो दोनों तालू के मध्य स्तनवत् मांस का पिण्ड स्थित है तिसके मध्य प्राप्त है। अरु "सेन्द्रयोनिः, यत्रासौ केशान्तो विवर्त्तते व्यपोह्य शीर्ष कपाले" (जहां यह केशोंका अन्त विभाग करके वर्त्तताहै) मस्तक के कपाल को भेदनकरके सो इन्द्रयोनि है) अर्थात् जहां यह केश का अन्त कहिये मूल विभाग करके वर्त्तता है ऐसा जो मस्तक देश तिस देशको प्राप्त होके मस्तक के कपालको भेदन करके जो निकली है,सो सुषुम्णा नाम्नी नाड़ी इन्द्रयोनि है,अर्थात् इन्द्र जो ब्रह्म तिसकी नामक मार्ग कहिये स्वरूप प्राप्तिका द्वार है। अरु तिसही नाड़ीसे मनोमय रूप आत्माका देखनेवाला विद्वान् मस्तक से निकलके "भूरित्यग्नौ प्रतितिष्ठति, भुवइतिवायौ" (भूःइस अग्निबिषे स्थितहोता है, भुवर् इस वायुबिषे अर्थात् इस लोकका अधिष्ठाता जो भूः इस व्याहृतिरूप महा ब्रह्माण्ड का अंग रूप अग्नि है तिस अग्निबिषे स्थितहोताहै अर्थात् अग्निरूपसे इसलोकको पावता है। अरु तैसेही भुवः इस द्वितीय व्याहृतिरूप वायु बिषे स्थित होता है १३॥

हे सौम्य,! "स्वरित्यादित्ये, महइति ब्रह्मणि, आप्नोतिस्वाराज्यम्, आप्नोतिमनसस्पतिम्" (स्वर् इस सूर्य्यबिषे, महर् इस ब्रह्मबिषे, स्वाराज्यको पावताहै, मनके पति को पावताहै) अर्थात् स्वर् इस तृतीय व्याहृतिरूप सूर्य्यबिषे स्थितहोताहै। अरु महर्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस अंगी (ब्रह्मस्वरूप) भूत चतुर्थ व्याहृतिरूप ब्रह्मविषे स्थित होताहै। तिन विषे आत्मभावसे स्थितहोयके ब्रह्मभूत हुआ स्वाराज्यको पावताहै, अर्थात् [स्वाराज्य जो है सो जगत्के स्रष्टापने आदिकरूप निरंकुश ऐश्वर्यरूप नहीं होताहै, इसप्रकारकहतेहैं] जैसे ब्रह्महै तैसे अंगभूत देवताओंका अधिपति होता है, अरु सर्व देव अंगभूत हुये जैसे ब्रह्मको बलिदेते हैं, तैसे इसके अर्थ बलिदान (भेट) देतेहैं। अरु इसप्रकार जाननेवाला जो विद्वान्है सो मनके पतिको पावताहै। अरु जिसकरके ब्रह्म सर्वात्मा है अरु जिसकरके सो सर्व मनकरके मननकरतेहैं, इसहीसे वो ब्रह्म सर्व मनोंका पतिहै तिसको विद्वान् पावताहै। अरु " वाक्पतिश्चक्षुष्पतिः, श्रोत्रपतिर्विज्ञानपतिः, एतत्तदो भवति " (वाणियोंकापति, चक्षुओंका पति, श्रोत्रोंका पति अरु विज्ञानों (बुद्धियों)का पति होताहै) अर्थात् यह सर्वात्मा होनेसे सर्व प्राणियोंके करणों (इन्द्रियों) करके (सम्पन्न होनेसे, तिस इन्द्रियोंवाला होता है किंवा (ताते भी यह अत्यन्त अधिक होताहै) अर्थात्। ताते भी यहआगम कहनेका ब्रह्मका विशेषण अत्यन्त अधिक होताहै।प्र० सो क्याहै। तहां कहतेहैं "आकाशशरीरंब्रह्म,सत्यात्म प्राणारामं, मनआनन्दम्, शान्तिसमृद्धममृत " (आकाश शरीरवाला ब्रह्म, सत्यस्वरूपहै, प्राणारामहै, मन आनन्दहै,शान्ति समृद्धिहै, अमृत है,) अर्थात् आकाशहै शरीर जिसका वा आकाशवत् सूक्ष्म है शरीर जिसका ऐसा जो यह आकाश शरीरवाला इस प्रसंगविषे प्राप्तहुआ ब्रह्म सो सत्यस्वरूप है। मूर्त्त अरु अमूर्त्तमय सत्य है स्वरूप कहिये स्वभाव जिसका ऐसा जो यह ब्रह्म सो सत्यरूप कहतेहैं। अरु सो प्राणाराम ऐसाकहते हैं। वा प्राणोंकाहै आराम (रमण) जिस विषे ऐसा जो ब्रह्म तिसको प्राणाराम कहते हैं। अरु सो मन आनन्दहै। अर्थात् मनहै आनन्दरूप सुखकारी जिसको ऐसा जो ब्रह्म तिसको मन आनन्दकहतेहैं। अरु सो शांति समृद्धिहै। जिस करके शांति अरु समृद्धिको पायाहुआ सो ब्रह्म

CC-0, Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौर्दिशोऽवान्तरदिशः । आग्नेर्वायुरादित्यश्चन्द्रमानक्षत्राणि । आपओषधयोवनस्पतयः । आकाशआत्माइत्यधिभूतम् । अथाध्यात्मम् । प्राणोऽपानोव्यान उदानःसमानः । चक्षुःश्रोत्रंमनोवाक्त्वक् । चर्म्ममाछं सछं स्नावास्थिमज्जा । एतदधिविधायऋषिरवोचत् । पाङ्क्तं वा इदछंसर्व्वम् । पाङ्क्तेनैवपाङ्क्तछंस्पृणोतीतिसर्वमेकञ्च १५॥ इतिसप्तमोऽनुवाकः ७॥

प्राप्तहोता है एतदर्थ उसको शांति समृद्धि कहते हैं, वा शांतिसे समृद्धि कहिये विभूतिको पायाहुआ प्राप्तहोवे है अतएव उसको शान्ति समृद्धि कहतेहैं । अरु सो अमृतहै । अर्थात् जिसकरके सो ब्रह्म मरण धर्मसे रहितहै तिसही करके अमरहै । यहां जो अत्यंत अधिक यह विशेषणहै तहांही पूर्व वाक्यबिषे उक्त मनोमय आदिक पुरुषके विशेषण देखलेने "इति प्राचीनयोग्योपास्व, वायुरमृतमेकंच" ऐसे प्राचीनयोग्यउपासनाकर वायुबिषे अरु अमृत रूप एकहै, अर्थात् इसप्रकार मनोमयपने आदि धर्मोंकरके विशिष्ट उक्त प्रकारका जो ब्रह्म है तिसको हे प्राचीनयोग्यशिष्य! तू उपासनाकर । यह जो आचार्य के वचनोंका कथनहै सो आदरार्थ हैं । वायु बिषे अरु अमृतरूप एक है॥ १४॥ इतिषष्ठोनुवाकः ६॥

अथ सप्तमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! आगे का अनुवाक भी अन्य प्रकार से हिरण्यगर्भ कीही उपासना को विषय करनेवाला है इसप्रकार कहते हैं जो यह उपासना करने योग्य व्याहृति रूप ब्रह्म कहा, तिसही का पृथिवी आदिक पांक्त कहिये पांच के समुदाय रूप से उपासना कहते हैं । अरु जिसकरके पृथिवी आदिकही पांचसंख्याके योग से पंक्ति नामक छन्दका सम्पादनहोवेहै, अतएव पृथिवी आदिक सर्वको पांक्तपना है । अरु यज्ञजो हैं सो पांक्तहैं "पांक्तोयज्ञ इति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रुतेः" इस श्रुति प्रमाणसे। पांच पादजो है सो पंक्तिरूप है, तिस वाला जो वेदका कोई छन्दहै, तिसको भी पंक्ति कहते हैं। अरु जिस करके यज्ञजो है सो पत्नी, यजमान, दैव, मानुष, अरु वित्त, इन पांच करके सम्पादन करते हैं। एतदर्थ पंक्तिछन्दके सादृश्य के सम्पादन से यह पांक्त कहते हैं तिस हेतुकरके जो यह लोक से आदिलेके आत्मा पर्य्यन्त जगत् है तिसको यज्ञ भावरूप पांक्त कल्पना करते हैं। तिस कल्पित यज्ञ करके पांक्तरूप प्रजापति को पावता है॥ सो यह पृथिवी आदिक पांक्तकैसेहैं। तहां कहते हैं "पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौर्दिशो ऽवान्तरदिशः, अग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमा नक्षत्राणि, आपओषधयो वनस्पतयः, आकाश आत्मा इत्यधिभूतम्" (पृथिवी अन्तरिक्ष स्वर्गलोकदिशा अरु आवान्तर दिश, अग्निवायु सूर्य चन्द्रमा अरु नक्षत्र, जल ओषधियां वनस्पतियां आकाश अरु आत्मा यह अधिभूतहै) अर्थात्, पृथिवी अन्तरिक्ष, स्वर्गलोक, दिशा, आवान्तरदिशा, इस प्रकारका यह लोकरूप पांक्तहै॥ अरु 'अग्नि' वायु, सूर्य, चन्द्रमा, अरु नक्षत्र, यह देवतारूप पांक्त है॥ अरु (जल, ओषधियां, वनस्पतियां, आकाश, अरु आत्मा, यह भूतरूप पांक्तहै। यहां आत्मा जो कहा, सो विराट्रूप हुये आत्मा के अधिकार कहिये मुख्यता से है। इसप्रकार अधिभूतरूप पांक्तकहा। यहां अधिभूत जोहै सो अधिलोक अरु अधिदैवतरूप, दोनों पांक्तों के उपलक्षणार्थ है, क्योंकि यहां लोक पांक्त अरु देवपांक्त को कथन कियाहै ताते "अथाध्यात्मम्, प्राणोऽपानो व्यान उदानः समानः, चक्षुः श्रोत्रंमनोवाक्त्वक्, चर्म्म मांसंस्नावास्थिमज्जा, एतदधि विधायऋषिरवोचत्" (अब अध्यात्म कहते हैं, प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, चक्षुः, श्रोत्र, मन, वाक्, त्वचा, । चर्म्म, मांस, नाड़ी, अस्थि, मज्जा। इस प्रकार कल्पना करके ऋषि कहताहुआ) अर्थात् अब इसके अनन्तर अध्यात्मरूप तीन पांक्तको कहतेहैं। प्राण अपान व्यान उदान अरु समान, यह वायुरूप पांक्त है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐमितिब्रह्म । ॐमितीदꣳ सर्व्वम् । ॐमित्येतदनुकृतिर्हस्म वाऽप्यो श्रावयेत्याश्रावयन्ति । ॐमितिसामानिगायन्ति । ॐꣳशोमितिशस्त्राणिशꣳसन्ति । ॐमित्यध्वर्य्युः प्रतिगरं प्रतिगृणाति । ॐमितिब्रह्मा प्रसौति । ॐमित्यग्निहोत्रमनुजानाति । ॐमितिब्राह्मणःप्रवक्ष्यन्नाह । ब्रह्मोपाप्नुवानीति ब्रह्मैवोपाप्नोति ॐ दश १६ ॥ इत्यष्टमोऽनुवाकः ॥

अरु चक्षु श्रोत्र मन वाक् अरु त्वचा, यह इन्द्रियरूप पांक्तहै। अरु चर्म मांस नाड़ी अस्थि अरु मज्जा, यह धातुरूप पांक्त है॥ एतनाही यह सर्व अध्यात्मअन्तर अरुबाह्यरूप जगत् पांक्तरूपही है, इसप्रकार कल्पनाकरके वेद वा तिसके ज्ञानकरके सम्पन्न कोई एक ऋषिजोहै सो कहताहुआ। क्या कहताहुआ। तहां कहते है। "पाङ्क्तं वा इदꣳसर्वम्, पाङ्क्तेनैव पाङ्क्तꣳस्पृणोतीति, सर्वमेकञ्च" (प्रसिद्ध यह सर्व पांक्तहै पांक्तसेही पांक्तको पूर्ण करेहै, सर्वएकहै)अर्थात् प्रसिद्ध यह सर्व पांक्तहै,अध्यात्मरूपपांक्त से ही संख्याकी तुल्यतासे बाह्य पांक्तको पूर्णकरे हैं [निकृष्ट बिषे उत्कृष्ट की दृष्टि फलवाली है, इस न्यायसे बाह्य पांक्तरूप से आध्यात्मिक तीनपांक्त जानने को योग्य हैं, इस अभिप्रायसे कहते हैं] अर्थात् एकरूप करके जानता है। अर्थ यह जो यह सर्व पांक्त है, इस प्रकार जो जानता है। सो प्रजापति रूपही होता है॥ सर्व एकहै १५ इति सप्तमोऽनुवाकः ७ ॥

अथ अष्टमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! [उक्त अर्थके अनुवाद पूर्वक अग्रिम अष्टम अनुवाकको प्रकट करते हैं] उक्तप्रकार प्रथम व्याहृतिरूप ब्रह्मोपासना कही। तदनन्तर पांक्तरूपसे ब्रह्मोपासना कही। [यहां यह अर्थ है कि जिसकरके वेदवेत्ता पुरुषोंकी सर्व क्रिया ॐकारके उच्चारणपू-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

र्वक प्रवर्त्त होतीहै, क्योंकि तिस ॐकारको श्रद्धा से ग्रहण किया होनेसे, अरु तिसको त्यागके उपदेश किया ब्रह्मबुद्धि विषे आरूढ़ होता नहीं, एतदर्थ तिस ॐकारको लेके उपासना का निर्धार करते हैं] अब सर्व उपासना के अंगभूत ॐकारकी उपासना कहते हैं। जिसकरके पर अरु अपरब्रह्मकी दृष्टिसे उपासनाकरते हैं, ऐसा जो ॐकार सो शब्दमात्र है, तथापि सो पर अरु अपर ब्रह्मकी प्राप्तिका साधन होताहै। अरु विष्णुकी प्रतिमावत् सो ॐकार परब्रह्म अरु अपरब्रह्मका आश्रय (आलम्बन) है "एतेनैवायतनेनैकतरमन्वेतीति श्रुतेः"। इसही आश्रय करके दोनों मेंसे एकको पावताहै, इस श्रुति प्रमाणसे,। अतएव यह ॐकार पर अरु अपर ब्रह्म की प्राप्तिका साधन संभवे है "ॐमितिब्रह्म, ॐमितीदꣳ सर्व्वम्"। (ॐ इसप्रकार का ब्रह्महै, ॐ इसप्रकार का यह सर्व्व है) अर्थात् ॐइसप्रकारकाशब्दरूपब्रह्महै,इसप्रकारमनकरके उपासनाकरे। अरु ॐइसप्रकारका शब्द यह सर्व है,अर्थात् शब्दरूप यह सर्व प्रपंच ॐकारसे व्याप्तहै "तद्यथा शंकुना इति श्रुत्यन्तरात्"। सो जैसे शंकु करके,। इसअन्य श्रुतिके प्रमाणसे। अरु जो वाच्य है सो वाचकके आधीनहै, एतदर्थ यह सर्व ॐकारहै ऐसा कहतेहैं अब अग्रिम कहनेका जो ग्रंथहै सो ॐकारकी स्तुत्यर्थ है, क्योंकि तिस ॐकारको उपास्यपना है ताते "ॐमित्येतदनुकृतिर्हस्मवा अप्यो श्रावयेत्याश्रावयंति"। (ॐ इसप्रकारका अनुकरण है प्रसिद्धहै, ॐ इसप्रकार श्रवणकराओ, श्रवण करावते हैं) अर्थात्ॐ इसप्रकारका यह अनुकरण है। अरु जाते अन्यकरके "करोमि या स्यामि वेति" कर्त्ताहौं पावताहौं इस प्रकार किये कथनको श्रवण करके अन्यपुरुष को ॐऐसा अनुकरण करता है। अतएव ॐकार अनुकरण है, यह ॐकारका अनुकरणपना प्रसिद्धहै। अरु ॐइस प्रकार श्रवण कराओ, इस कथनको पायके पुरुष तिस ॐकारके उच्चारणपूर्वक श्रवणकरावते हैं "ॐमिति सामानिगायन्ति,ॐꣳ शोमिति शस्त्राणि शꣳसन्ति, ॐमित्यध्वर्य्युःप्रतिगरंप्रतिगृणाति"।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(ॐइसप्रकार सामको गायनकरते हैं, ॐशोऐसे शास्त्रकथनकरे हैं, ॐइसप्रकार अध्वर्यु प्रतिगर प्रतिउच्चारताहै) अर्थात् तैसेही सामवेदके गानकरनेवाले ॐइसप्रकार सामको गायनकरते हैं, अरुजो ऋचाके कहनेवाले हैं सो, ॐ शो, इसप्रकार गानरहित ऋचाको कहते हैं, तैसेही अध्वर्यु, यज्ञविषे यजुर्वेदी ब्राह्मण ऋत्विज्, सोॐ ऐसे प्रतिगर, वेदके वाक्य विशेषको, होमकरनेवालेके कथनकथन के प्रति उच्चार करताहै, "ॐ मिति ब्रह्माप्रसौति, ॐ मित्यग्निहोत्रमनुजानाति, ॐ मिति ब्राह्मणः प्रवक्ष्यन्नाह । ब्रह्मोपाप्नुवानीति ब्रह्मैवोपाप्नुवन्ति ॥ ॐदश" ब्रह्मा ॐ ऐसा अनुमोदन करता है, ॐ ऐसा अग्निहोत्र को अनुमोदन करताहै, ब्राह्मण ॐ ऐसेही कहनेको इच्छताहुआ ॐकहता है ब्रह्मको पावोंगा, ऐसे ब्रह्मको ही पावताहै वा ब्रह्मको प्राप्तहोवोंगा, ॐ दश) अर्थात् ब्रह्मा यज्ञ कर्म का कर्त्ता वा यज्ञके दक्षिण भागमें तूष्णीं बैठनेवाला ऋत्विज् विशेष, सो ॐ इसप्रकार अनुमोदन करताहै, अरु ॐ इसप्रकार अग्निहोत्र को अनुमोदन करे है, अर्थात् होताकरके "जुहोमीत्युक्तः" हवन करता हौं इसप्रकार कथन कियेहुये, ॐ ऐसाही अनुमोदन करता है, अरु जो ब्राह्मणहै सो ॐ ऐसेही कहने को इच्छताहुआ अध्ययन करताहुआ ॐ ऐसेही कहताहै, अर्थात अध्ययन करनेको ॐ ऐसा ग्रहण करताहै । अरु ब्रह्मनामकवेद को पावोंगा, इसप्रकार इच्छताहुआ ब्रह्मको प्राप्त होताहै । अथवा ब्रह्मनामक परमात्मा को प्राप्तहोवोंगा, इसप्रकार आत्माको प्राप्तहोनेको इच्छताहुआ ॐ इसप्रकारही कहताहै । सो चैतन्य रूप ॐकारसे ब्रह्मको पावताही है ॥ इस प्रकार ॐकार पूर्वक प्रवृत्तहुई क्रियाको फलवान् पना (साफल्यता) है, अतएव ॐकाररूप ब्रह्मकी उपासनाकरे, यह समस्त वाक्यों का तात्पर्यार्थ है ॥ ॐ दश १६ इत्यष्टमोऽनुवाकः ८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऋतञ्च स्वाध्यायप्रवचनेच । सत्यञ्चस्वाध्यायप्रवचनेच । तपश्चस्वाध्यायप्रवचनेच । दमश्चस्वाध्यायप्रवचनेच । शमश्चस्वाध्यायप्रवचनेच । अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवचनेच । अग्निहोत्रञ्चस्वाध्यायप्रवचनेच । अतिथयश्चस्वाध्यायप्रवचनेच । मानुषश्चस्वाध्यायप्रवचनेच । प्रजाचस्वाध्यायप्रवचनेच । प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवचनेच । प्रजातिश्चस्वाध्यायप्रवचनेच । सत्यमितिसत्यवचाराथीतरः । तपइति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाको मौद्गल्यः । तद्धितप स्तद्धितपः । प्रजाचस्वाध्यायप्रवचनेच षट्च १७॥ इति नवमोऽनुवाकः ॥ ९ ॥

अथ नवमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य, "विज्ञानादेवाप्नोति स्वाराज्यमिति" विज्ञानसेही स्वाराज्य को प्राप्त होता है, इसप्रकार कथन कियाहै ताते श्रौत (वेदोक्त) अरु स्मार्त (स्मृतिउक्त) रूप कर्म्मोंका व्यर्थपना प्राप्त हुआ, एतदर्थ उनको व्यर्थपना मत प्राप्तहो, इसप्रकार कर्म्मोंके पुरुषार्थ प्रति साधन भावके देखावने के अर्थ यह अग्रिम अनुवाकरूप ग्रन्थका प्रारम्भ है । "ऋतञ्च स्वाध्यायप्रवचनेच, सत्यञ्च स्वाध्यायप्रवचनेच, तपश्च स्वाध्यायप्रवचनेच, दमश्च स्वाध्यायप्रवचनेच, शमश्च स्वाध्यायप्रवचनेच" (ऋत पुनः स्वाध्याय अरु प्रवचन, सत्य पुनः स्वाध्याय अरु प्रवचन, तप पुनः स्वाध्याय अरु प्रवचन, दम पुनः स्वाध्याय अरु प्रवचन, शम पुनः स्वाध्याय अरु प्रवचन) अर्थात् ,ऋत, कहिये शास्त्रादिकों करके बुद्धिबिषे निश्चित सूक्ष्म अर्थका होना, अरु ,स्वाध्याय, कहिये वेदादि अध्ययनकरना, अरु ,प्रवचन, कहिये अध्यापन करावना वा वेदाध्ययन ब्रह्मयज्ञ का करना, यह सर्वप्रकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुष्ठान करने योग्यहै, क्योंकि "स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्" ऐसा आगेकहेंगे ताते। अरु ,सत्य, काहिये सत्यबोलना वा यथार्थ कथनकिया अर्थ इसको सत्य कहते हैं, अरु स्वाध्याय अरु प्रवचन यह अनुष्ठान करनेको योग्यहै। अरु ,तप, काहिये कृच्छ्र चान्द्रायण प्राजापत्यादि व्रत अरु स्वाध्यायप्रवचन, यह करने योग्य हैं। अरु ,दम, बाह्य चक्षुरादि इन्द्रियोंका विषयों से निग्रह, अरु स्वाध्याय प्रवचन यह करने योग्यहैं। अरु ,शम, काहिये मनका निग्रह, अरु स्वाध्याय औ प्रवचन यह करने योग्य है। अर्थात् स्वाध्याय अरु प्रवचनका जो करना है सो उक्त प्रकारके ,ऋत, सत्य, तप, दम, शम, इन करके युक्तही कर्त्तव्य है, नतु मिथ्याचार है "अग्नयश्च स्वाध्याय प्रवचनेच, अग्निहोत्रञ्च स्वाध्याय प्रवचनेच, अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवचनेच, मानुषञ्च स्वाध्यायप्रवचनेच, प्रजाच स्वाध्यायप्रवचनेच, प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवचनेच, प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवचनेच," (अग्नि अरुस्वाध्याय प्रवचन, अग्निहोत्र अरुस्वाध्याय प्रवचन, अतिथि अरुस्वाध्यायप्रवचन, अरुमानुष अरुस्वाध्यायप्रवचन, प्रजाअरुस्वाध्याय प्रवचन, अरुप्रजन अरु स्वाध्यायप्रवचन, प्रजाति अरु स्वाध्याय प्रवचन) अर्थात् अग्निजोहै सो धारणकरनेयोग्यहै अरु तिसकेसाथहीस्वाध्याय अरुप्रवचन यहभी धारण करनेयोग्यहै। अरु अग्निहोत्र हवनकरनेयोग्यहै तैसे तिसके साथही स्वाध्याय अरुप्रवचन यह भी करने योग्यहैं। अरु अतिथि जोहै सो पूजन करने योग्यहै अरु तिसके साथही स्वाध्याय अरु प्रवचन यह भी करने योग्यहै। अरु मानुष काहिये विवाहादिक जे लौकिक व्यवहार सो जैसे जैसे प्राप्त होवें तैसे तैसे तिनका करना योग्य है, अरु तिसके साथही स्वाध्याय औ प्रवचन यह भी करनेको योग्य है। अरु प्रजा जो है सो उत्पन्न करने योग्य है। अरु तिसके साथही स्वाध्याय अरु प्रवचन यह भी करनेको योग्य है अरु प्रजन, काहिये ऋतु काल बिषे यथा शास्त्र प्रमाण भार्यागमन कर्त्तव्य योग्य है, अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वाध्याय प्रवचन यह करनेयोग्यहै। अरु प्रजाति, कहिये पौत्र की उत्पत्ति अर्थात् पौत्रोत्पत्ति होनेसे पुत्रको अपने स्थानापन्न स्थापित करना योग्य है, अरु स्वाध्याय प्रवचन भी साथही करनेयोग्य है, ॥ (अर्थात् जैसे स्वाध्याय प्रवचन उक्त प्रकारके ऋतसत्य तपदम शमादि करके सहितही करनेको योग्यहै तैसेही अग्नि सेवन से प्रजाति पर्यन्त जो जो कार्य करने को योग्य हैं सो सो उक्त प्रकारके स्वाध्याय प्रवचन करके युक्तही करनेको योग्यहैं॥ यहां इन सर्व कर्म्म करके युक्त पुरुषको भी स्वाध्याय अरु प्रवचन यत्नसे अनुष्ठान करनेयोग्य है, अर्थात् गृहस्थ पुरुष को भी स्वाध्याय प्रवचन के करने बिषे प्रमाद कदापि कर्त्तव्य नहीं। इसप्रयोजनको लेके सर्व कर्म्मोंके साथ स्वाध्याय अरु प्रवचनका ग्रहणहै। अरु स्वाध्यायके आधीन अर्थका ज्ञानहै, अरु अर्थ ज्ञानके आधीन परमश्रेयहै। अरु प्रवचन जो है सो तिसके विस्मरण न होनेके अर्थ है, वा धर्म्मकी वृद्धिके अर्थ है। एतदर्थ स्वाध्याय अरु प्रवचनबिषे आदर करना योग्यही है " सत्यमिति सत्यवचा राथीतरः, तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः, स्वाध्याय प्रवचने एवेति नाको मौद्गल्यः, तद्धितपस्तद्धितपः। प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने च षट् च " (सत्यही ऐसे सत्य वचन नाम वाला राथीतर, अरु तपही ऐसे तपोनित्य नामवाला, पौरुशिष्ट, अरु स्वाध्याय अरु प्रवचनही नाक नामवाला मौद्गल्य (मानते हैं) सोई तपहै, प्रजा अरु स्वाध्याय अरु प्रवचन अरु षट्) अर्थात् सत्यही अनुष्ठान करने को योग्य है, इसप्रकार सत्यवचन नामवाला रथीतर नामक कुलका गोत्र कहिये मूलपुरुष ऐसा जो राथीतर आचार्य मानताहै। अरु तपही कर्त्तव्यहै, इसप्रकार तपोनित्य इस नामवाला पुरुशिष्टका पुत्र पौरुशिष्ट आचार्य मानता है। अरु स्वाध्याय अरु प्रवचनही अनुष्ठान करनेको योग्यहै, इसप्रकार नाक नामवाला मुद्गल ऋषिका पुत्र मौद्गल्य आचार्य मानता है। जाते सोई स्वाध्याय अरु प्रवचन तपहै, सोई तप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अहं वृक्षस्य रेरिवा कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव । ऊर्ध्वं प-
वित्रो वाजिनीव स्वमृतमस्मि । द्रविणञ्च सुवर्चसम्।
सुमेधा अमृतोऽक्षितः इति । त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम्।
अहञ्च षट् १८ ॥ इति दशमोऽनुवाकः १० ॥

है, ताते सो अनुष्ठान करनेको योग्यहै ॥ पूर्व कथन किये भी सत्य, तप, स्वाध्याय अरु प्रवचनका जो पुनःग्रहणहै सो आदरार्थ है॥ प्रजा अरु स्वाध्याय औ प्रवचन अरु षट् यह अनुष्ठानकरने को योग्यही है ॥ १७ ॥ इति नवमोऽनुवाकः ॥ ९ ॥

अथ दशमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य, ["अहं वृक्षस्यरेरिवा" मैं वृक्षका प्रेरकहूं, इसमंत्र का त्रिशंकुऋषिहै, पंक्तिछंद है, परमात्मा देवताहै, ब्रह्मविद्याकी प्राप्त्यर्थ इसकेजपका विनियोगहै] मैं वृक्षका प्रेरक हौं, इस मंत्र का जो उपदेशहै सो स्वाध्याय कहिये जपके अर्थ है, अरु स्वाध्याय जो है सो प्रकरणसे विद्याकी उत्पत्तिके अर्थ है। अरु यह प्रकरण विद्याके अर्थ है अन्यके अर्थ नहीं, अतएव स्वाध्याय करके शुद्धहुये अन्तःकरण वाले पुरुषको विद्याकी उत्पत्ति कल्पना करते हैं अर्थात् कहते हैं "अहंवृक्षस्य रेरिवा कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव, ऊर्ध्वपवित्रो वाजिनीव स्वमृतमास्मि" (मैं वृक्षका प्रेरकहौं मेरी पर्वतके पृष्ठवत् कीर्तिहै, ऊर्ध्वपवित्रहौं, सूर्यवत्शुद्ध अमृतहौं) अर्थात् मैं उच्छेदरूप संसार वृक्षका अन्तर्यामीरूपसे प्रेरकहौं, अरु मेरी पर्वत के पृष्ठ (शिखर) वत् कीर्ति उठी है, अरु मैं ऊर्ध्व पवित्रहौं अर्थात् जिस मुझ सर्वात्मा का ऊर्ध्व कहिये कारण पवित्र ज्ञानस्वरूप परमात्माहै। "नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिहविद्यते" इस स्मृति प्रमाणसे। अतएव मैं ऊर्ध्व पवित्र हौं अरु मैं सूर्यवत् शुद्ध अमृतरूपहौं, अर्थात् जैसे अनेक श्रुति स्मृतियोंके प्रमाण से सूर्य विषे शुद्ध अमृतरूप आत्मतत्त्व है तैसे मैं शुद्ध अमृतमय आत्मतत्त्वहौं। अरु "द्रविण ञ्च सुवर्चसम्, सुमेधा अमृतोऽक्षितः इति"।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(प्रकाशवान् धनहौं वा प्रकाशवाला धन मुझको प्राप्त हुआ है, सुमेधा हौं अमृतहौं अक्षीण हौं) अर्थात् मैं सर्वलक्षणवाली शोभन है मेधा (बुद्धि) जिसकी ऐसा सुमेधाहौं, संसारकी उत्पत्ति स्थिति अरु संहार करनेरूप कुशलताके योगसे मुझको सुमेधापना है, इसही करके मरणधर्म बर्जित अमृतरूप हौं, अरु अक्षीण कहिये अव्यय क्षरभाव रहित वा अमरता युक्त मैं हौं। इत्यादि ब्राह्मण भाग है "त्रिशंकोर्वेदानुवचनम्, अहꣳ षट्" (ऐसा त्रिशंकु का वेदानुवचन है, मैं षट् रूप हौं) अर्थात् इसप्रकार ब्रह्मभूत ब्रह्मवेत्ता त्रिशंकु नाम ऋषिका वेदानुवचन है। वेद जो आत्माकी एकता का विज्ञान तिसकी प्राप्त्यर्थ जो वचन तिसको वेदानुवचन कहते हैं। अरु अपने को कृतकृत्यताकी प्रसिद्धि के अर्थ वामदेव ऋषिवत् त्रिशंकुऋषि ने ऋषि उक्त ज्ञानसे मन्त्र का आम्नाय कहिये आत्म विद्याकोश देखा है यह अर्थ है॥ अरु इस मन्त्रका जो जप (बारम्बार मनन) करना है सो आत्मविद्या की उत्पत्ति के अर्थ जाना जाता है। अरु [केवल इसमन्त्रका जपही विद्याके अर्थ है ऐसा नहीं किन्तु पूर्वोक्त कर्म्मभी विद्याके अर्थ है, ऐसा कहते हैं] 'ऋत, इत्यादि नवम अनुवाक बिषे कर्म के कहने के आरम्भसे लेके वेदानुवचन पर्यन्त पठन करने से यह जानाजाताहै कि ऐसे श्रौत स्मार्तरूप नित्यकर्मों बिषे युक्तहुये निष्काम अरु परब्रह्मके जाननेकी इच्छा वाले पुरुषोंको आत्माआदिकोंको विषय करनेवाले ऋषिउक्तज्ञान प्रकट होता है॥ मैं षट्रूप हौं १८॥ इति दशमोनुवाकः १०॥

अथ एकादशोऽनुवाकः॥

हेसौम्य "वेदमनुब्रूहि" वेदको पढ़ायके, इत्यादिरूपकर्त्तव्यता के उपदेशका आरंभ जोहै सो ब्रह्मज्ञानहोनेसे पूर्व श्रौत अरुस्मार्त्त रूप कर्म्म नियम से करने योग्य हैं, इस नियमके (लखावने) अर्थहै, क्योंकि अनुशासन(शिक्षा)करनेकी श्रुतिकोपुरुषकेसंस्कार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वेदमनूच्याचार्य्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति । सत्यंवद । धर्म्मञ्चर । स्वाध्यायान्मा प्रमदः । आचार्यायप्रियंधनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः । सत्यान्न प्रमदितव्यम् । धर्मान्न प्रमदितव्यम् कुशलान्न प्रमदितव्यम् । भूत्यैन प्रमदितव्यम् । स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम् १९ ॥

रूप अर्थवाली होने से । अरु संस्कार करके युक्त शुद्ध चित्तवाले पुरुषको अनायाससेही आत्मज्ञान उत्पन्न होता है । तहां "तपसा कल्मषंहन्ति विद्ययामृतमश्नुतइतिस्मृतिः"तपकरकेपापकोनाश करे हैं, विद्या करके अमृत को पावता है, इस स्मृति प्रमाणसे । अरु यहां भी आगे भृगुवल्ली बिषे कहेंगे कि "तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्वेति" तप करके ब्रह्मको जान, इस वाक्य करके । तातें विद्याकी उत्पत्ति के अर्थ कर्मानुष्ठान करने योग्य है । अरु "अनुशास्तीति" शिक्षा करता है, इसप्रकार,अनुशासन, इस श्रुति वाक्यके । हुये अनुशासन (शिक्षा)के उल्लंघन किये दोषोत्पत्ति होतीहै, क्योंकि केवल ब्रह्मविद्या के आरम्भसे पूर्व कर्मों के आरम्भसे अरु विद्या के उत्पन्न होनेसे "। अभयं प्रतिष्ठां विन्दते" "। नाबिभेति कुतश्चनेति" "। किमहं साधुना करवमिति "अभय स्थिति को पावताहै, किसी से भी भयको पावता नहीं, क्या मैं शुभ कर्म्मको न करताहुआ,इत्यादि श्रुति वाक्यों करके जाते कर्म्म की निर्पेक्षता आगे देखावेंगे, अतएव जानाजाता है कि केवल ब्रह्मविद्याकी उत्पत्तिसे पूर्व आरम्भ किये जो कर्म्महैं सो पूर्व संचय हुये पापके नाशद्वारा विद्याकी उत्पत्त्यर्थ है । क्योंकि "अविद्यया मृत्युंतीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुत इति"।अविद्या (कर्म) से मृत्युको तरके विद्या (आत्मज्ञान) से अमृत को पावताहै। यह ऋग्वेद का । वा यजुर्वेद का । मन्त्र भी विद्योत्पत्ति से पूर्वही कर्मानुष्ठान को सूचन करे है । पूर्व ऋत आदिकके उपदेश

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कियेकी व्यर्थताके निवारणार्थ कर्मानुष्ठान कहा, अरु यहां तो ज्ञानकी उत्पत्ति रूप अर्थवाला होनेसे करनेकी योग्यता के निमार्थ कर्मका अनुष्ठान कहतेहैं। [अध्ययन किये वेदके अर्थका विचार किये बिना गुरुके गृह से (निवृत्त होय) लौटना नहीं, किन्तु अध्ययनकी विधिको अर्थज्ञानद्वारा पुरुषार्थकेअवधिपनेकी सिद्ध्यर्थ अक्षर ग्रहणके अनन्तर अर्थ के ज्ञानविषे प्रयत्न करना योग्य है इसप्रकार कहते हैं। "(वेदमनूच्याचार्योऽन्ते वासिन मनुशास्ति "(वेद को पढ़ायके आचार्य्य शिष्यके अर्थ शिक्षा करे हैं) अर्थात् वेदको पढ़ाय के आचार्य्य जो है सो अपने शिष्योंके अर्थ ग्रन्थके धारणाकिये पश्चात् शिक्षा करे है,अर्थात् तिस (पढ़ाये हुये वेद) के अर्थ को ग्रहण करावे है। एतदर्थ जाना जाता है कि वेदाध्ययनवाले पुरुषको धर्म्म की जिज्ञासा न करके गुरुके गृहसे लौटना नहीं, क्योंकि "(बुद्ध्वा कर्म्माणि चारभेदिति स्मृतेश्च "(जानके कर्म्मों को आरम्भ करे, इस स्मृतिके प्रमाणसे ॥ प्र० आचार्य कैसे शिक्षा करे है। उ० तहां कहते हैं, आचार्य कहता है कि हे शिष्यो "(सत्यं वद, धर्म्मंचर "(सत्य बोल अरु धर्माचरण कर) अर्थात् सत्य , प्रमाणके अनुसार जानेहुये अर्थका कथनकर, तैसेही धर्म को आचरण कर। यहां जो धर्म शब्द है सो अनुष्ठान करने योग्य साधनों का तुल्यवाचकहै, क्योंकि सत्यादिकोंकी विलक्षणताका कथनहै ताते, अरु स्वाध्यायान्मा प्रमदः, आचार्य्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं माव्यवच्छेत्सीः "(स्वाध्यायसे प्रमाद मतकर, आचार्य के अर्थ प्रिय धन देके प्रजाका उच्छेदमत करे) अर्थात् स्वाध्याय कहिये अपने वेदके अध्ययन से प्रमाद मत करे, अरु आचार्य के अर्थ उनको प्रियधन देके (अर्थात् आचार्य को जो वाञ्छित धनहै सो अपने पास न होय तो वो धन अन्यसे ल्याय कै आचार्यको देवे) तदनन्तर आचार्य की आज्ञा पायके (ब्रह्मचर्यसे समावर्त्तन पूर्वक) अपने (जाति कुलके) समानस्त्रीसे बिवाहकरके (प्रजोत्पादन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करे।प्रजाकाउच्छेद मतकरे।यहांअभिप्राययहहै कि पुत्रकेअनुत्पन्न हुयेभी पुत्रोत्पत्तिके अर्थ दिशरथादिवत् पुत्रेष्टिआदिक।कामुकादि कर्मोंसे तिसकी उत्पत्तिके अर्थ प्रयत्न कर्तव्य है । क्योंकि प्रजा प्रजनन ,ऋतुकालबिषे भार्यागमन, अरु प्रजाति ,पौत्रोत्पत्ति, इनतीनके उपदेश का सामर्थ्य है ताते । अरु अन्यथा होता तो "प्रजनन"इस एकही को श्रुति कहती । अरु जिसकरके उक्त तीनों का श्रुति बिषे कथन कियाहै एतदर्थ इस कथनका उक्त अभिप्राय घटितही है ॥ अरु " सत्यान्न प्रमदितव्यम्, धर्म्मान्न प्रमदितव्यम्, कुशलान्न प्रमदितव्यम्, भूत्यै न प्रमदितव्यम्, स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम् " (सत्यसे प्रमाद करना योग्य नहीं, धर्म्मसे प्रमाद करना योग्य नहीं, कुशलसे प्रमाद करना योग्य नहीं, विभूतिके अर्थ प्रमाद करना योग्य नहीं स्वाध्याय अरु प्रवचनसे प्रमाद करना योग्य नहीं (अर्थात् सत्यसे प्रमाद करनेको योग्य नहीं है, सत्यसे जो प्रमाद है सो झूठका प्रसंगहै क्योंकि प्रमाद शब्दका सामर्थ्य। असत्यबिषेहै ताते एतदर्थ विस्मृति।भूल।से भी असत्य करना योग्यनहींयह अर्थहै। अन्यथा सत्यकेकथनका निषेधही होवेगा ।अरु" समूलो वा एष परिशुष्यति योऽनृतमभिवदति"इस अन्यश्रुतिके प्रमाण से जो मिथ्याभाषणकरताहैसो समूलसूखजाताहै।अतएवसत्यसे प्रमादकरना योग्य नहीं। अरु धर्म्मसे प्रमादकरनेको योग्य नहीं, क्योंकि धर्मशब्द अनुष्ठानकरनेयोग्य साधनोंकोविषयकरनेवाला है । ताते अरु साधनों के अनुष्ठानकाअभाव प्रमादहै सो करनेयो नहीं किंतु।साधनोंका।अनुष्ठान करनाही योग्यहै । अरु कुशल कहिये अपने रक्षणरूप अर्थवाले कर्मोंसे प्रमादकरना योग्यनहीं। अरु विभूति कहिये ऐश्वर्य तिसके अर्थ अर्थात विभूतिरूप अर्थ वाले मङ्गलयुक्त कर्मोंसे प्रमादकर्त्तव्य योग्यनहीं । अरुस्वाध्याय अरु प्रवचन इनसे भी प्रमाद कर्त्तव्य योग्यनहीं, किन्तु यहदोनों नियमसे कर्तव्य योग्यही है १६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देवपितृकार्य्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। मातृदेवोभव। पितृदेवोभव। आचार्य्य देवोभव। अतिथिदेवोभव। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानिसेवितव्यानि। नोइतराणि। यान्यस्माकꣳसुचरितानि। तानि त्वयो पास्यानि। नोइतराणि २० ॥

हे सौम्य, "देव पितृ कार्य्याभ्यां नप्रमदितव्यम्" (देवपितृयोंके काय्योंसे प्रमाद करना योग्य नहीं) अर्थात् देव अरु पितृ के सम्बन्धी (यज्ञ श्राद्धादि) कर्म कर्त्तव्यही हैं, उनसे प्रमादकरना योग्य नहीं। (हे प्रियदर्शन) "मातृ देवोभव, पितृ देवो भव, आचार्य देवोभव, अतिथि देवोभव" (मातृदेवहो, पितृदेवहो, आचार्य देवहो, अतिथि देवहो) अर्थात् हेशिष्य तू माताहै देव जिस का ऐसा मातृदेव हो, अरु पिता है देव जिसका ऐसा पितृदेव हो, अरु आचार्य है देव जिसका ऐसा आचार्यदेवहो, अरु अतिथि है देव जिसका ऐसा अतिथिदेवहो,। अर्थ यह जो माता से अतिथि पर्यन्त कहे जे चार सो (शिवादि) देवतावत् उपासनीय है। अतएव तू उक्त चारोंको देवतावत् मानके उनकी उपासना कर। अरु "यान्यनवद्यानि कर्म्माणि तानि सेवितव्यानि, नो इतराणि, यान्य स्माकꣳसुचरितानि, तानि त्वयोपास्यानि, नो इतराणि" (जो अनिन्दित कर्म्म हैं सो सेवन करने योग्य हैं, इतर नहीं, अरु जो हमारे श्रेष्ठ आचरण हैं सोई तुम्हकरके उपासना करने योग्य हैं, इतर नहीं) अर्थात् जो अन्य शिष्टाचाररूप अनिंदित कर्म हैं सो तुम करके सेवन करनेको योग्य हैं, अरु अन्य जे निंदित कर्म हैं सो यदि श्रेष्ठ पुरुषों करके किये हुये भी हैं, तथापि सो सेवन करनेको योग्य नहीं। अरु जो हम आचार्य्योंके वेदसे अविरुद्ध श्रेष्ठ आचरणहैं सोई तुम करके उपासना करनेको योग्य हैं, अर्थात् जो वेदसे अविरुद्ध श्रेष्ठ आचरण हैं सो पुण्यकी उत्पत्ति के अर्थ नियमसे सेवने योग्य हैं। अरु श्रेष्ठ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एकेचास्मच्छ्रेयाछंसोब्राह्मणाः। तेषांत्वयासनेनप्रश्वसितव्यम्। श्रद्धयादेयम्। अश्रद्धयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्रियादेयम्। भियादेयम्। संविदादेयम्॥ अथयदि ते कर्म्मविचिकित्सावावृत्तविचिकित्सावास्यात् २१॥

से अन्य अश्रेष्ठ यदि आचार्य करके भी सेवन किये हैं तथापि सो विपरीताचरण तुझ करके सेवन करने योग्य नहीं २०॥

हे सौम्य, "एके चास्मच्छ्रेया छं सो ब्राह्मणाः, तेषांत्वयाऽसनेनप्रश्वसितव्यम्" {कईएक हम सो अत्यन्त श्रेष्ठ ब्राह्मण हैं तिनका आसनके देनेसे तुझ करके श्रमका निवारण करने को योग्य है} अर्थात् जो कईएक आचार्य्यपने आदिक धर्म्मों करके विलक्षणता को प्राप्तहुये हम सो अत्यन्त श्रेष्ठ ब्राह्मण हैं, क्षत्रिय आदिक नहीं। अर्थात् हेसौम्य आचार्यपने आदिक उत्तम धर्म्मों करके विलक्षणता को प्राप्तहुये क्षत्रियों को श्रेष्ठपना है, परन्तु अत्यन्त श्रेष्ठपना तो उक्तप्रकार धर्म्मावष्टि ब्राह्मणको ही है सो क्षत्रिय को नहीं। तिनका आसन देने आदिक सेवासेतुझ करके श्रमका निवारण करना योग्यही है। अर्थात् हे सौम्य जो कदापि आचार्य कृपाकरके शिष्यके गृह पगधारे तो तिनके मार्गजन्य श्रमके निवारणार्थ शिष्यकरके अर्घ पाद्य प्रक्षालन आसन देने आदि सेवा का करना सर्वदा उचितही है। अथवा तिनकी वार्त्ताके निमित्तरूप आसनके सिद्धहुये श्रमका निवारण भी करने योग नहीं, किन्तु केवल उनके वाक्यके अर्थके सार कहिये लक्ष्य के ग्राही होनाचाहिये, किम्बा जोकुछ देनाहोवे सो "श्रद्धयादेयम्, अश्रद्धयाऽदेयम्, श्रिया देयम्, ह्रियादेयम्, भियादेयम्, संविदादेयम्" {श्रद्धा से देना, अश्रद्धासे न देना, लक्ष्मी से देना, लज्जा से देना, भयसे देना, संविदासे देना} अर्थात् आचार्य को वा अन्य ब्राह्मणादिकों को जो कुछ देना सो श्रद्धासेही देना योग्य है। क्योंकि श्रद्धासे किया दान फलके अर्थ होताहै तातें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्ता अयुक्ताः अलूक्षा धर्म्मकामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्त्तेरन्। तथा तत्र वर्त्तेथाः। अथाभ्याख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः युक्ता अयुक्ताः। अलूक्षा धर्म्मकामाः स्युः। यथा ते तेषु वर्त्तेरन्। तथातेषुवर्त्तेथाः। एषआदेशः। एषउपदेशः। एषा वेदोपनिषद् एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम्। एवमुचैतदुपास्यम्॥ स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। तानि त्वयोपास्यानि। विचिकित्सा वास्यात्तेषुवर्त्तेरन्सप्तच २२॥इत्येकादशोऽनुवाकः ११॥

अरु अश्रद्धासे देनायोग्य नहीं। क्योंकि अश्रद्धासे दियादानफल के अर्थ होवे नहीं ताते। अरु लक्ष्मीसे देना योग्य। अर्थात् अपने पास जो धनहै तो धन गऊभूमि अन्नआदिक ब्राह्मणादिकोंको दान देनायोग्यहै। अरुलज्जासेदेनायोग्यहै। अर्थात् जो दानकरे तिसविषे अपने दातापनेरूप अभिमानसे लज्जाकरकेही करे क्योंकि अभिमान आसुरीसम्पदा अश्रेष्ठहै ताते। अरुभयसे देनायोग्यहै। अर्थात् दानके न देनेसे संसारमें कृपणतारूप अपकीर्त्तिका अरु पुनर्जन्म में दरिद्रीहोनेके भयकरके भी दानदेनायोग्यहै क्योंकि मुख्यकरके दानरूप धर्म्मही मनुष्यका कल्याणकारी है ताते। अरुसंविदाकहिये मित्रादिक तिनके कार्यमें देना योग्यहै। अर्थात् मित्र उपलक्षण करकेमित्र वा सम्बंधीजे निर्धनहैं तिनकेशुभाशुभकार्य्यों में, धनकी पुनरावृत्तिकरने की इच्छात्याग के धनकादेना योग्य है। अरु "अथ यदि ते कर्म्म विचिकित्सा वा वृत्त विचिकित्सा वा स्यात्" (अथवा जब तुझको कर्म्मबिषे संशयहोय वा आचरणबिषे संशय होय) अर्थात् तुझको इसप्रकार वर्त्तमानहोते जब कदाचित् श्रौत वा स्मार्त्त कर्म्मबिषे वा आचरणबिषे संशयहोवै २१॥

हे सौम्य, "येतत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः, युक्ता अयुक्ताः, अलूक्षा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धर्म्मकामाः स्युः यथा ते तत्रवर्त्तेरन् तथातत्र वर्त्तेथाः ।" (जो तिस बिषे बिचारमें समर्थ, अन्यकार्यबिषेलगे, अक्रूरबुद्धिवाले धर्म्म के अर्थी ब्राह्मण होवें वो जैसे तिस बिषे वर्त्तमानहोवें तैसे तू भी तहां वर्त्तमान हो) अर्थात् तब जो तिस देशबिषे वा कालबिषे बिचारमें समर्थ अरु कर्म बिषे वा आचरणबिषे जुड़े अरु अन्य कार्यबिषे लगे स्वतन्त्र अरु । बुद्धिकी क्रूरता से रहित । अक्रूर बुद्धि वाले धर्म्म वा पुण्यके अर्थी अरु भोगोंकी कामनासे रहित जो ब्राह्मण होवें वो जिस प्रकार तिन कर्म्मोंबिषे वा आचरणों बिषे वर्त्तमानहोवें, तैसे तू भी तहां वर्त्तमानहो । अरु "अथाभ्याख्यातेषु, ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः युक्ता अयुक्ता अलूक्षा धर्म्मकामाः स्युः, यथातेषुवर्त्तेरन्, तथातेषु वर्त्तेथाः ।" (संशयरहित दोषकरके युक्त तिनबिषे जो तहां बिचारमें समर्थ अन्य कार्य्यों में लगे अक्रूर बुद्धिवाले धर्म्मके अर्थी ब्राह्मणहोवें सो जैसे तिन बिषे वर्त्तमान होवें तैसे तिनबिषे वर्त्तमानहो) अर्थात् किसी भी संशय रहित, अरु आरोपित दोषकरके युक्त जो पुरुष हैं तिनों बिषे जो तहां बिचारमें समर्थ, अरु कर्म्म वा आचरण बिषेलगे अरु । बुद्धिके क्रूरतादि दोषरहित । अक्रूर बुद्धिवाले, अरु धर्म्म वा पुण्यकेअर्थी जो ब्राह्मण होवें वो जिसप्रकार तिनकर्म्मोंबिषे वा अन्य आचरणों । बिषे वर्त्तमान होवें, तैसे तू भी । तिनबिषे । वर्त्तमान हो । अर्थात् पूर्वके मन्त्रके अन्तबिषे कहा है कि जो कदाचित्तुझको श्रौत वा स्मार्त्त कर्म्मोंबिषेवाआचरणोंबिषे संशय होवे, तिस कथन से यहां इस मन्त्रके यहां पर्य्यन्त संबंध है कि जो तुझको श्रौत वा स्मार्त्त कर्मोंबिषे वा अन्य आचरणों बिषे संशय होय तो उक्त प्रकारके ब्राह्मण उनकर्म्म वा आचरणोंबिषे वर्त्तते होवें तैसे तू भी तिनबिषे वर्त्तमानहो ॥ अरु "एष आदेशः एष उपदेशः, एषावेदोपनिषद्, एतदनुशासनम्, एवमुपासितव्यम्, एवमुचैतदुपास्यम् ।" (यह आदेश है यह उपदेश है, यह वेदका रहस्य है, यही अनुशासनहै, ऐसे करनेको योग्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शन्नो मित्रः शं वरुणः। शन्नोभवत्वर्य्यमा। शन्नइन्द्रो बृहस्पतिः। शन्नोविष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम्। ऋतमवादिषम्। सत्यमवादिषम्। तन्मामावीत्। तद्वक्तारमावीत्। आवीन्माम्। आवीद्वक्तारम्। सत्यमवादिषंपञ्चच। ॐशान्तिः शान्तिः शान्तिः २३॥ इति द्वादशोऽनुवाकः॥

है, ऐसे प्रसिद्ध करनेको योग्य है, अर्थात् यह आदेश कहिये विधि है, अरु यही पुत्रादिकों को उपदेशहै, अरु यही वेद का सूक्ष्मरहस्य वेदार्थ है, अरु यहही ईश्वरकी आज्ञारूप अनुशासन(शिक्षा) है, वा आदेश वाक्य रूपाविधि को कथन किया होनेसे यह सर्व प्रमाणरूप वाक्यों का अनुशासन है, एतदर्थ उक्तप्रकार का यह सर्व करनेको योग्य है, ऐसे प्रसिद्ध सर्व करने योग्यहै। यहां पुनः जो कथन है सो यह सर्व करने को अयोग्य नहीं, इस आदरके अर्थ है॥ "स्वाधाय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्, तानित्वयो पास्यानि, विचिकित्सा वा स्यात्तेषु वर्त्तेरन् सस्तच" (स्वाध्याय, अरु प्रवचनसे प्रमाद करना योग्य नहीं, वे तुझकरके करनेयोग्य हैं वा संशय होय, तिनविषे वर्त्तमानहोवे, सस्त) ॥ इति एकादशोऽनुवाकः ११॥

अथ द्वादशोऽनुवाकः॥

हे सौम्य, अब कथन की हुई विद्या की प्राप्तिविषे विघ्नों के निवारणार्थ शान्ति पाठ कहते हैं "शन्नो मित्रः, शं वरुणः, शन्नो भवत्वर्यमा, शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः, शन्नो विष्णुरुरुक्रमः" (मित्र हमको सुखकारीहो, बरुण हमको सुखकारी हो, अर्यमा हमको सुखकारी हो, इन्द्र हमको सुखकारी हो, बृहस्पति हमको सुखकारी हो, विष्णु हमको सुखकारी हो) अर्थात् प्राण का अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिवस का अभिमानी जो मित्र नामक देवता सो हमको सुखकारीहो अरु वरुण जो है सो भी हमको सुखकारी हो। अरु तैसेही सूर्य्याभिमानी जो अर्य्यमा सो हमको सुखकारीहो। तैसेही इन्द्र अरु बृहस्पति हमको सुखकारीहो । अरु तैसेही उरुक्रम कहिये प्रथम वामन होयके पश्चात् विश्वरूप होनेवाला, ऐसा जो विष्णु सो हमको प्रसन्न हो। "नमो ब्रह्मणे, नमस्ते वायो, त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि, त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम् । ऋतमवादिषम् । सत्यमवादिषम् " (ब्रह्मको नमस्कार करता हौं, वायु को नमस्कार करता हौं, तूही प्रत्यक्ष ब्रह्म है, तुझही को प्रत्यक्ष ब्रह्म कहताहौं, ऋत कहताहौं सत्य कहताहौं, अर्थात् ब्रह्मके अर्थ मैं नमस्कार करता हौं, हे वायो! तेरे अर्थमें नमस्कार करताहौं, अरु जिसकरके तू प्रत्यक्ष ब्रह्म है, एतदर्थही मैं तुझको प्रत्यक्ष ब्रह्म कहताहौं, ऋत कहताहौं, अरु सत्य कहताहौं, । "तन्मामावीत्, तद्वक्तारमावीत्, आवीन्माम्, आवीद्वक्तारम्," (सो मुझको रक्षाकरो, सो वक्ताको रक्षाकरो, मुझको रक्षाकरो, वक्ताको रक्षाकरो,) अर्थात् सो प्रत्यक्ष अपरब्रह्म वायु मुझ अपराविद्या के अर्थी को रक्षाकरो, अरु तिस विद्या के वक्ता आचार्य को रक्षाकरो, मुझको रक्षाकरो, वक्ताको रक्षाकरो "। सत्यमवादिषम्, पञ्च। ॐशान्तिःशान्तिः शान्तिः "। २३ ॥ (सत्य कहताहौं अरु पांच, ॐशान्तिहो, शान्तिहो, शान्तिहो ॥

हे सौम्य, "शन्नः शिक्षाञ्च, सह नौ, यश्छन्दसां भूः सयः पृथिव्योमित्यृतञ्चाहं वेदमनूच्य, शन्नो द्वादश " (हमको, सुख, शिक्षा को, हमको, साथही, जो वेदके मध्य पृथिवी, सो जो पृथिवी ॐ, ऐसे ऋत अरु मैं वेदको पढ़ायकै द्वादश अनुवाक हमको सुख) "शन्नो मह इत्यादित्यो, नो इतराणि, त्रयो विंश शतिः हरिः ॐ, शन्नो वक्तारम् " (हमको सुख महर ऐसा सूर्य्य है, अन्य नहीं। तेईस मन्त्र हैं हरिः ॐ। हमको सुख, वक्ताको सुख ॥ इति द्वादशोऽनुवाकः १२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शन्नः शीक्षा छं। सहनौ। यश्छन्दसां भूः। सयः पृथिव्योमित्यृतञ्चाहं वेदमनूच्य। शन्नो द्वादश॥ शन्नोमह इत्यादित्यो। नो इतराणि। त्रयोविछं शतिः॥ हरिः ॐ। शन्नो वक्तारम्॥ इतिद्वादशोऽनुवाकः २०॥

इति शिक्षाध्यायः प्रथमावल्ली १॥

हे सौम्य! अब यहां विद्या अरु कर्मके भिन्न भिन्न फलके लखावनेके अर्थ विचार कहते हैं, तहां प्रथम पांच विकल्प देखावते हैं सो यहहैं कि, क्या केवल कर्मसेही परमश्रेय होवेहै, वा विद्याकी अपेक्षावाले कर्मसे परमश्रेय होवे है, अथवा विद्या अरु कर्मके समुच्चय सेवन करनेसे परमश्रेय होवे है, किंवा कर्मकी अपेक्षावाली विद्यासे परमश्रेय होवे है, वा केवल विद्यासेही परमश्रेय होवे, यह ५ विकल्पहैं। तहां केवल कर्मसेही परमश्रेय होताहै, ऐसा प्रथम पक्षवादी कहते हैं क्योंकि समस्त वेदार्थ के जानने वाले पुरुषको ही कर्मका अधिकारहै ताते। अरु "स रहस्यो द्विजन्मनेति स्मरणात्" तीनवर्णके पुरुषोंकरके रहस्य सहित समस्तवेद अध्ययन करनेको योग्यहै, इस स्मृतिका प्रमाणकरके सम्पूर्ण वेदका अध्ययन जो है, सो उपनिषद्के अर्थ अरु आत्मज्ञान करके सहितही होताहै। अरु "विद्वान्यजते। विद्वान्याजयति" विद्वान् यजन करता है, विद्वान् यजन करावताहै, इस प्रकार श्रुति प्रमाण करके विद्वान्कोही कर्मोंबिषे अधिकार देखाजाता है। अरु सर्व ठिकाने जानके ही अनुष्ठान होता है। अतएव समस्त वेद कर्मकेअर्थहीहै, इसप्रकार कोईएक 'प्रथमविकल्पवादी, मानते हैं, अरु कहते हैं कि 'जो कदापि कर्म्मोंसे परम श्रेय प्राप्त न होवे तो समस्तवेद व्यर्थ होवेगा ["भूतंभव्यायोपदिश्यते" उक्त अर्थ जो है सो अग्रिम कथन करनेके अर्थ उपदेश करते हैं, इस न्यायसे, ज्ञानको भी कर्म कर्त्ताका संस्कार होनेकरके कर्म विधिका साधन है ताते' अरु श्रवणकिये फल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को भी अर्थवाद मात्रपनाही है ताते, अतएव कर्मसेही परमश्रेय मोक्ष होवेहै, यह ,केवल कर्मसेहीमोक्षहोवे है, ऐसा पूर्वविकल्प वादियोंका पूर्व पक्ष है, तहां अब सिद्धान्ति कहते हैं] सो प्रथम पक्षवादी का कथन बनेनहीं, क्योंकि मोक्ष नित्य है ताते। अरु जिसकरके मोक्षको नित्यअंगीकार करते हैं, अरु लोकविषे कर्मों के कार्योंको अनित्यपना प्रसिद्ध ही है, एतदर्थ जबकर्मोंकरकेही मोक्ष होताहोवे तो सोभी अनित्य होवेगा, सोइष्टनहीं ॥ अरु जो ऐसाकहै कि काम्य अरु निषिद्धइनउभयकर्मोंके अनारंभसे,अरु आरब्ध कर्म के भोगद्वारा क्षयहोनेसे, अरुनित्य विहित कर्म के अनुष्ठान करनेसे पाप कर्मोंके असंभव से, ज्ञानकी अपेक्षासे रहितही केवल कर्म करके मोक्ष है। [यद्यपि अध्ययनरूप विधिका विषय हुआ सर्व वेदोंका अर्थ एकही पुरुषकरके विचारकरनेयोग्यहै, तथापि अध्ययन विधिबिषे प्रतिवाक्य का पढ़ावना अरु प्रतिवाक्यके अर्थका जो विचार है, सो व्यापार के भेदसे तिस २ कर्मके किसे फलकी कामनावाले पुरुष को कर्म बिषे उपयोगी वाक्योंके अर्थ के ज्ञानवान् होने मात्रकरके कर्मबिषे अधिकारके असंभवसे, अरु ब्रह्मसाक्षात्कार जो है तिसका उन कर्म बिषे अनुपयोग है ताते, समस्त वेदार्थ के जाननेवाले पुरुषको कर्मके अधिकार बिषे प्रमाण नहीं अर्थात् जिस पुरुषका स्वर्गादिकजिसवस्तु की कामना होती है सो तिसफलके साधक कर्म बिषे उपयोगी वेदमंत्रके अर्थकोजानताहै, अरु वेदाध्ययनकेसाथ वेदान्तरजेब्रह्मसाक्षात्कारबोधक वाक्य तिनोंकाभी अध्ययन होताहै, परन्तु उनवाक्यों का कर्म्मों में उपयोग नहीं ताते उन वाक्यार्थ ज्ञानको जानते नहीं, अरु जो समस्त वेद वेदार्थ के जाननेवाला पुरुष है तिसकोही कर्मबिषे अधिकार है ऐसा कोई प्रमाण नहीं इस प्रकार कहते हैं] सो कथन बने नहीं। क्योंकि सञ्चित कर्म्मों में से जो कर्म अपना फल देनेको प्रारब्धरूपसे प्रवृत्तहुये तिनसे। शेष (बाकी सञ्चित कर्म रहनेका संभवहै, अरु उन शेष कर्म्मों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निमित्तवाली जो अन्य शरीरोंकी उत्पत्ति सो प्राप्तहोती है। अरु शेष संचित कर्मोंका नित्यकर्मों से अविरोध है। क्योंकि नित्य कर्म्महो करने के पश्चात् सञ्चितभाव को प्राप्त होता है। ताते नित्य कर्मके अनुष्ठान से शेष कर्मोंका नाश होना असंभवहै। इस प्रकार पूर्व कहा॥ अरु सर्व वेदार्थ के ज्ञानवाले पुरुष को कर्म के अधिकार से केवल कर्मसे ही मोक्षहोगा, इत्यादिक जो कहा सो [यद्यपि अध्ययन विधिकी प्रेरणासेहुआ जो वेदान्तका विचार सो भी गुरुके गृहविषे ही किया है, तथापि समस्त वेदार्थके जानने वाले पुरुष को तिसका अधिकार नहीं, क्योंकि उपासना करके साध्य जो ब्रह्म साक्षात्कार सो भिन्न है ताते, इस प्रकार कहते हैं। यहां यह अर्थहै कि गुरुके गृह विषे श्रवण किये अरु विचार किये वाक्यसे अनुष्ठान विषे उपयोगी जो ज्ञानहोता है तितनेही ज्ञानमात्र करके कर्म विषे अधिकार को पावता है, परन्तु सो ज्ञान ब्रह्म साक्षात्काररूप फलवाली उपासना की अपेक्षा करता नहीं क्योंकि उपासना से उसके भेदका अभाव है ताते] बनेनहीं, क्योंकि उपासनाको श्रवण जन्य ज्ञानसे भिन्नता है ताते। अरु श्रवण ज्ञानमात्र से कर्म्मविषे अधिकार को पावता है, उपासना की अपेक्षा करता नहीं। अरु उपासना जो है, जो श्रवण किये अर्थ के ज्ञानसे अन्य अर्थरूप विधान करते हैं। अरु मोक्ष रूप जो फल है सो अन्य अर्थ रूप प्रसिद्ध होता है। अरु "श्रोतव्यो" श्रवण करनेयोग्य है, इस कथनकरके, ताते भिन्न "मन्तव्यो, निदिध्यासितव्यो" मनन करने योग्यहै, निदिध्यासन करने योग्य है, इस प्रकार अन्य प्रयत्न के विधान से मनन अरु निदिध्यासन करनेको श्रवण ज्ञानसे अन्य अर्थपना प्रसिद्ध है॥ [केवल कर्म मोक्षका साधन है, इस प्रथम पक्षका निषेध करके अब 'विद्या सहित कर्म मोक्षका साधन है, इस द्वितीय विकल्प रूप पक्षका निषेध करते हैं] अरु जब इस प्रकारहै, तब विद्याकी अपेक्षावाले कर्मों से मोक्ष होवेगा, अरु विद्या सहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्म्मोंको अन्य कार्य के आरंभ का सामर्थ्य होवेगा । जैसे स्वरूप सेही मरण अरु ज्वर आदिक कार्य के आरम्भ करने के सामर्थ्य वाले हुयेभी विष अरु दधि (अर्थात् सांखियादि विषका मरणरूप कार्यको, अरु दधिको ज्वररूप कार्यको, आरंभ करनेकासा सामर्थ्य स्वरूपसे ही है) तिनको मन्त्र अरु शर्करा आदिकों करके सहितहुये अन्यकार्य के आरंभ का सामर्थ्य है। इसप्रकार विद्यासहित कर्मोंसे मोक्षरूप फल वा कार्य आरंभ करते हैं, इसप्रकार जो कहे, तो सो भी बनेनहीं । क्योंकि आरंभ करीहुई वस्तु को अनित्यता होती है ताते, अरु यह दोष पूर्व कह आये हैं ॥ अरु जो कहे वचनसे आरंभ करने योग्य भी नित्यहीं है ["न सपुनरावर्त्तते" सो पुनः आवृत्तिको पावतानहीं, इस वचनसे आरंभ किया भी मोक्ष नित्यहै, इसप्रकार कहने को शक्य नहीं है, क्योंकि प्रसिद्ध पदार्थकी योग्यताको लेके वचनको सम्बन्ध का ज्ञापकपनाहै ताते, अरु आरंभ करीहुई वस्तुको नित्य होने की योग्यता प्रसिद्ध नहीं है, अन्यथा वचनको कारकताका प्रसंग है ताते, अरु अंधपुरुष मणिको पावताहुआ, इत्यादिक वाक्योंविषे भी योग्यताकी कल्पना का प्रसंग है ताते, इसप्रकार कहते हैं] सो बनेनहीं, क्योंकि वचनको ज्ञापकताहै ताते, । अरु वचन जो है सो विद्यमान अर्थका ज्ञापकहै परन्तु विद्यमान अर्थ का कर्त्ता नहीं । अरु शतशः वचनों करके भी नित्य वस्तुका आरंभ नहीं करते वा आरंभ करी वस्तु अविनाशी नहीं होती है, इसहेतु से मिश्रितहुये विद्या अरु कर्मको मोक्षका आरंभकपना निषेधकिया जानना ॥ अरु जो कहे कि विद्या अरु कर्म जो हैं सो मोक्षविषे प्रतिबन्धके हेतु जे अविद्या अधर्म्मादिक तिनके निवर्त्तक हैं, सो भी बने नहीं क्योंकि कर्म के फल अन्य देखेजाते हैं ताते । अरु उत्पत्ति, संस्कार, विकार, अरु प्राप्तिरूप कर्म का फल देखते हैं (अर्थात् कर्मका जो फलहै सो उत्पत्ति संस्कार प्राप्ति, अरु विकारवालाही होताहै) अरु मोक्ष जो है सो उत्पत्ति आदिक रूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्म्मके फलों से विलक्षणहै वा विपरीत है एतदर्थ सो कर्म्म का फलहै नहीं॥ अरु जो कहे कि "सूर्य्यद्वारेणतयोर्द्ध्वमायन्निति" सूर्य रूपद्वारकरके तिस सुषुम्णानाड़ी करके ऊपरको जाताहुआ, इत्यादिक गमन प्रतिपादक श्रुतियों के प्रमाणसे ब्रह्मांडके बाह्य प्राप्त होने योग्य मोक्ष है, सो भी बने नहीं क्योंकि ब्रह्म सर्वगत है ताते, अरु गमन करनेवाले पुरुषसे अभिन्नहै ताते। अरु जिस करके आकाशादिकोंका कारण होनेसे ब्रह्म सर्वगत है अरु ब्रह्म से अभिन्न सर्वजीवहै, अतएव ब्रह्मांडके बाहिर जायके प्राप्तहोने योग्य मोक्ष नहीं। अरु गमन करनेवाले को अपने आपसे इतर विशेष करके भिन्न देशही गमन करने योग्य होताहै (अर्थात् जो गमन करताहै सो अपने स्वरूपसे भिन्न देशकोही करताहै) अरु जो जिससे अभिन्नहै सो तिससेही प्राप्तहोवे नहीं (अर्थात्आत्मा से ब्रह्म अभिन्न है ताते आत्माकरके ब्रह्म प्राप्त होवे नहीं क्योंकि आत्माका तो स्वरूपही ब्रह्म है) यह अनन्यभाव की प्रसिद्धि है। अरु "ततसृष्ट्वातदेवानुप्राविशत्" तिसको सृजके तिसके अर्थही पीछे प्रवेश करताहुआ,। अरु "क्षेत्रज्ञंचापिमांविद्धि" क्षेत्रज्ञ भी मुझको जान,। इत्यादिसैकड़ोंश्रुतिस्मृतियों करके ब्रह्मांडसे बाह्य प्राप्त होने योग्य मोक्ष नहीं है॥ अरु जो कदापि ऐसा कहो कि उक्तप्रकारहोनेसे गति अरु ऐश्वर्य्यादिकोंकी प्रतिपादकश्रुतियोंसे विरोधहोवेहै, तो मोक्षब्रह्मांडसेबाहर प्राप्तहोनेको योग्यहै,यहगति प्रतिपादक श्रुतियोंका तात्पर्य होता है (अर्थात् "तयोर्द्ध्व मायन्न मृतत्वमेति"। इत्यादि जे मार्ग प्रतिपादक श्रुतियां हैं सो योगी जनोंको सुषुम्णा नाड़ी द्वारा कपाल भेदनकरके ब्रह्मलोक प्राप्ति की बोधकहैं। अरु जोकहे कि सो मोक्ष जब एकप्रकारका होय तब "पितृलोक कामोभवति, स्त्रीभिर्वायानैर्वा" पितृलोककी कामना वाला होताहै, स्त्रियोंकरके वा वाहनोंकरके इत्यादि, श्रुतियोंका कोप होवेगा, सो बने नहीं क्योंकि उन श्रुतियों को कार्य ब्रह्म (हिरण्यगर्भ वा) को विषय करनेवालीपनाहै ताते अरु कार्य ब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषे स्त्री यानादिक होतेहैं कारण ब्रह्मविषे नहीं । अरु "एकमेवा द्वितीयं, यत् नान्यत्पश्यति, तत्केन कम्पश्येदित्यादि" । एकही अद्वितीय है, । जहां अन्यको नहीं देखता है, । तहां किस करके किसको देखे, । इत्यादि अनेक श्रुतियोंसे विरोध होता है । एतदर्थ विद्या अरु कर्म्मके समुच्चयका असम्भव है । अरु कर्त्ता आदिक कारकों के भेदसे रहित तत्त्वको विषय करनेवाली जो विद्या है सो तिससे (अपने विषयसे) विपरीत कारकों करके साध्य कर्म्मोंसे विरोधको पावती है । अरु एकही वस्तु परमार्थ से कर्त्ता आदिक भेदवाली है, अरु तिससे रहित है, ऐसे उभय प्रकार से देखने को शक्य नहीं है । उनदोनोंमें से एक अवश्य ही मिथ्या होवेगा, अरु दोनोंमें से एकके मिथ्यापनेके प्रसंग के हुये जो स्वाभाविक अज्ञानके आधीन द्वैतका मिथ्यापना है सो युक्तही होवेगा । क्योंकि "यत्र हि द्वैतमिव भवति, मृत्योः स मृत्युमाप्नोति, अथ यत्रान्यत् पश्यति तदल्पम्, अन्योऽसावन्यो हमस्मि उदरमन्तरं कुरुते अथ तस्य भयंभवति, इत्यादि" जहां ही द्वैतवत् होता है । सो मृत्युसे मृत्युको पावता है । अरु जहां अन्यको देखता है सो अल्प है । यह अन्य है मैं अन्यहूं । जो अल्पभी अन्तर (भेद) को करता है, पीछे तिसको भयहोता है, । इत्यादिक सैकड़ों श्रुतियों से । अरु एकता का सत्यपना है, क्योंकि "एकधैवानुद्रष्टव्यं, एकमेवाद्वितीयम्, ब्रह्मैवेद ꣳ सर्वमात्मैवेद ꣳ सर्वमित्यादि" एक प्रकार सेही देखनेको योग्य है, एकही अद्वितीय है, ब्रह्मही यह सर्व है, आत्माही यह सर्व है । इत्यादि श्रुतियों से । अरु संप्रदानादिक कारक भेदके अदर्शन होने से कर्म संभवेनहीं, अरु विद्याके विषयविषे अन्य भावकी दृष्टिकानिषेध सहस्रशः श्रवण करते हैं । एतदर्थ विद्या अरु कर्म का विरोध है, अरु इसही हेतु से उनके समुच्चयका असंभव है । अरु तहां जो कहा कि मिलेहुये कर्म अरु विद्यासे । अर्थात् कर्म अरु विद्याके समुच्चयसे । मोक्ष होवे है, सो अघटित है, क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[जब कर्त्ता आदिककारकों के भेदके सत्यतापने रूप अंशका बाध ब्रह्मज्ञान उपदेश करे है, तब उनको मिथ्याअर्थवाले होने से कर्म्मोंकी विधियोंकी अप्रमाणता होवेगी, इसप्रकार कहते हैं। इस शंकाके वर्णनका यहभाव है कि अध्ययन की विधि से ग्रहण करी श्रुतियों को पुरुषार्थ के उपदेशकी करनेवाली होने करके प्रमाणपना कहनेको योग्य है] कर्मों को विधान कियाहै ताते। अरु जो ऐसाकहे कि श्रुति का विरोध होवेगा, सो युक्त नहीं है, काहेते, जब सर्पादिकों की भ्रान्ति ज्ञानके नाशक रज्जु आदिकों को विषयकरनेवालेज्ञानवत् कर्त्ताआदिक कारक भेदको नाशकरके आत्माकी एकताका ज्ञान विधानकिया है, तब कर्म विधि की श्रुतियों को निर्विषयहोने से विरोध प्राप्तहोय। जिस करके कर्म विधान किये हैं याहिते सो विरोध युक्त नहीं है। अरु जो ऐसा कहे कि श्रुतिको प्रमाणरूप होने से तिनका परस्पर विरोध है। अर्थात् एक श्रुति तो कहती है कि "कुर्व्वन्नेवेह कर्म्माणि" विहित कर्म्मों को करे,। अरु एक श्रुति कहती है कि "न कर्मणा" कर्म से मोक्ष नहीं,। अरु श्रुति दोनोंही प्रमाण हैं ताते प्रमाण भूत श्रुतियों में परस्पर विरोध है। सो कथन बने नहीं, क्योंकि श्रुतियों को पुरुषार्थ के उपदेशकी परायणता है ताते। अरु जिसकरके "संसारात्पुरुषो मोक्षयितव्य इति" पुरुष संसार से मोक्ष करनेको योग्य है,। यह जो विद्या के उपदेश के परायण श्रुति है, सो प्रथम संसार की हेतु जो अविद्या तिसकी निवृत्ति करनेकोयोग्य है। इसप्रकार विद्याकी प्रकाशक होने करके प्रवृत्ति हुई है, एतदर्थ उन श्रुतियों का परस्पर विरोध नहीं है। अरु जो कहे कि उक्तप्रकार हुये भी कर्त्ता आदिक कारकों के सद्भाव प्रतिपादन के परायणजो शास्त्रहै, सो विरोधको पावताही है, सो यह कथनभी बने नहीं, क्योंकि शास्त्रजो है सो मुमुक्षुओं को पूर्व सिद्धही कारकोंके सद्भावकोलेके सञ्चितपापोंके क्षयार्थ कर्म्मों को विधान करता है, अरु फलकेअर्थी पुरुषों के अर्थ फल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के साधनोंको विधान करताहै, परन्तु कारक के सद्भाव कहने विषे प्रवृत्त होतानहीं, यातेसो विरोधको प्राप्त होतानहीं। अरुसञ्चित पापरूप प्रतिबन्ध के होतेहुये विद्या की उत्पत्ति होतीनहीं, जब सञ्चित पापरूप प्रतिबन्ध क्षयहोताहै तबविद्याकी उत्पत्ति होती है, अरु तिस विद्या की उत्पत्ति से अविद्याकी निवृत्तिहोती है, तब तिस करके संसार की आत्यन्तिक निवृत्ति होती है। किंवा आत्मदर्शी पुरुष को अनात्म पदार्थों को विषय करने वाली कामना होती नहीं, अरु कामना वाला पुरुष जो है सो कर्म्मों को करता है, तिसको तिसके फल भोगार्थ शरीरादिकों का ग्रहणरूप संसार होताहै। अरु तिसकामनावाले पुरुष से भिन्न आत्माकी एकताके दर्शीको विषयके अभावसे कामनाकी अनुत्पत्ति होतीहै। अरुआत्मा विषे अभिन्न होने से अरु कामनाके असंभव से स्वस्वरूपविषे स्थितिरूपमोक्ष होवेहै, एतदर्थ भी विद्या अरु कर्मों का विरोधहै। अरु विरोधसेहीविद्या जोहैसो मोक्षके प्रति कर्मोंकी अपेक्षाकरतीनहीं, परन्तु नित्यकर्म जोहै सो स्वस्वरूपके लाभहुये पूर्वसञ्चितपापरूप प्रतिबन्धके नाशद्वारा विद्याकी हेतुताको प्राप्तहोवेहैं। अर्थात् प्रथम विहितकर्म करनेसे सञ्चितपापों के क्षयहुये विद्याकी उत्पत्तिहोतीहै अतएव विहितकर्म्मोंको विद्या की उत्पत्ति में हेतुता है। अरु इसहीसे इसप्रकरण बिषे कर्म्मोंके कहनेका आरम्भकियाहै, इसप्रकार हमकहतेहैं। ऐसेहुये कर्मविधि की श्रुतियों का पुरुषार्थके उपदेशके परायण श्रुतियोंसे अविरोध है, याते केवल विद्याही से परमश्रेयहोवेहै यह सिद्धहुआ। अरुजो कहै कि जबऐसेहीहैतब अन्यआश्रमोंका असम्भवहोवेगा, क्योंकि विद्याकीउत्पत्ति कर्म्मरूप निमित्तवालीहै ताते, अरु कर्म्मजोहैंसो गृहस्थाश्रम विषे विधान किये हैं। इसप्रकार एक गृहस्थाश्रमही अनुष्ठान करनेको योग्यहै। अरु 'यावत्जीवं तावत् कर्मको करे' इत्यादिक कर्म्म प्रतिपादक श्रुतियां अत्यन्त अनुकूल होवेगी, सो बनेनहीं क्योंकि कर्म्मोंको अनेक रूपताहै ताते, अरुअग्निहोत्रा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिकही कर्म्म हैं ऐसा नहीं किन्तु विद्याकी उत्पत्ति विषे अत्यन्त साधक अरु अन्य आश्रमविषे प्रसिद्ध जे ब्रह्मचर्य तप सत्यभाषण शम दम अहिंसादिक हैं, अरु ध्यान धारणादिकहैं, सो भी कर्म है क्योंकि सो हिंसा आदिक निषिद्ध कर्मोंसे अमिश्रित हैं ताते। इसप्रकार यहां भी आगे कहेंगे "तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्वेति" तपकरके ब्रह्मको जान, इस वाक्यकरके। अरु गृहस्थाश्रमसे पूर्व भी जन्मान्तरविषे किये कर्म्मोंसे विद्याकी उत्पत्तिका सम्भव है ताते, अरु गृहस्थाश्रमकीप्राप्तिको कर्मकेअर्थ होनेसे कर्मकरकेसाध्य विद्याके हुये गृहस्थाश्रमकी प्राप्ति व्यर्थहीहै। अरु पुत्रादिकोंको लोकार्थहोनेसे पुत्रादिकोंकरकेसाध्य यहलोकअरु पितृलोकादिक लोकोंसे निवृत्तहुईहै कामनाजिसकी, अरु नित्यसिद्धआत्माके ज्ञानकरकेयुक्त अरु कर्म्मोंविषे प्रयोजनके न देखनेवाले पुरुषकी प्रवृत्तिकैसे सम्भवे किन्तु सर्वथा संभवेनहीं। किन्तुगृहस्थाश्रम को प्राप्तहुये अरु विद्याकी उत्पत्तिकेहुये अविद्याकी निवृत्तिसे विरक्तहुये अरु कर्म्मोंविषे प्रयोजनकोन देखनेवाले ऐसेपुरुषोंकी कर्म्मों से निवृत्तिहोवेहै क्योंकि "प्रवर्त्तयिष्यन् वाअरेऽहमस्मात् स्थानादस्मीति" अरे मैं निश्चय करके इस स्थान से प्रवृत्ति करावताहुआ हौं, इत्यादि श्रुतिउक्त लिंग के देखने से। अरु लोकहे कि कर्मकीप्रति श्रुति से अधिकयत्नरूप कर्मविषे बड़ाश्रम है क्योंकि अग्निहोत्रादिकों को अनेक साधनों करके साध्यताहै ताते, अरु तपब्रह्मचर्य्यादिक अन्य आश्रमके कर्म्मों को गृहस्थाश्रमविषे भी तुल्यता है ताते, अरु अन्य आश्रमको अल्पसाधनों की अपेक्षाहै ताते, तिस गृहस्थाश्रम का विकल्प अन्य आश्रमी पुरुषों से तुल्यवत् युक्त नहींहै, सो कथन बनेनहीं, क्योंकि जन्मान्तर विषे सम्पादन किये अनुग्रहसे "कर्म्मणिश्रुतेरधिकोयत्न" कर्मविषेश्रुतिका अधिकयत्नहै, । इत्यादिक जो कहा, यहदोषनहीं है अरु जन्मान्तर बिषे किये भी अग्निहोत्रादि अरु ब्रह्मचर्य्यादि रूप कर्म्म विद्याकी उत्पत्ति के प्रति अनुग्रहका करनेवालाहोता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है । अरु कईक पुरुषों को जन्मसेही विरक्त देखतेहैं, अरु कईकों को कर्मोंबिषे प्रवृत्त अरु विरक्त न हुये विद्याके द्वेषी देखतेहैं, ताते जन्मान्तर के किये । शमदमादि कर्मोंके । संस्कारों से विरक्तहुये पुरुषों के अर्थ अन्य आश्रमकी प्राप्तिही अंगीकार करतेहैं । अरु कर्मों के फलकी बाहुल्यता से 'पुत्र, स्वर्ग, अरु ब्रह्मतेजादिरूप कर्म्मोंके फलको असंख्यात होने से, अरु सो पुरुष पुरुषके प्रति कामना की बाहुल्यतासे तिनके अर्थ श्रुतिका कर्मोंबिषे अधिक यत्न सम्भवे है । अरु मुझको यहहोवे मुझको यह, ऐसे कामना की बाहुल्यता के देखनेसे अरु तिनका उपायरूप होनेसे कर्मजो हैं, सो विद्याके प्रति उपायरूपहैं इसप्रकार हम कहतेहैं । एतदर्थ उपाय बिषे अधिक यत्न करने योग्य है, उपेय (उपाय करके प्राप्य) बिषेनहीं । अरुजो ऐसाकहै कि विद्याकोकर्मरूप निमित्तवाली होनेसे अन्य यत्नकी व्यर्थताहै, क्योंकि कर्म्मोंसेही संचित पापरूप प्रतिबन्धके क्षयहोनेसे विद्या उत्पन्नहोतीहै, ताते कर्म्मोंसे भिन्न उपनिषदोंका श्रवणादि यत्न व्यर्थहै, सो कहना बने नहीं क्योंकि इसप्रकारके नियम का अभावहै ताते । अरु प्रतिबंध के क्षय हुयेही विद्या उत्पन्न होवे नहीं, अरु ईश्वर की प्रसन्नता से अरु ध्यानादिकों के अनुष्ठान से विद्या उत्पन्नहोवेहै ऐसा भी नियम नहींहै, क्योंकिअहिंसा अरु ब्रह्मचर्य्यादिकोंको विद्या के प्रति उपकारकपनाहै ताते, अरु श्रवण मनन निदिध्यासनको विद्याके साक्षात्हीकारण होनेसे । इसकरके अन्यआश्रम सिद्धहुये, अरु सर्वको विद्याबिषे अधिकार सिद्धहुआ, अरु परम श्रेय (मोक्ष) केवल विद्या सेही सिद्ध होवै है यह भी सिद्ध हुआ २४ ॥

इति द्वादशोऽनुवाकः ॥

इतिश्रीतैत्तिरीयोपनिषद्गताशिक्षावल्लीनामकप्रथमाध्याय भाषाभाष्यसमाप्तम् १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ द्वितीयाध्यायब्रह्मानन्दवल्ली।

हरिः ॐ। सहनाववतु। सहनौभुनक्तु। सह वीर्य्यं करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तु। माविद्विषावहै। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ १॥

ॐ ब्रह्मविदाप्नोति परम्। तदेषाऽभ्युक्ता। सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। यो वेद निहितं गुहायां। परमेव्योमन्। सोऽश्नुतेसर्व्वान् कामान्। सहब्राह्मणाविपश्चितेति। तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्याओषधयः। ओषधीभ्योऽन्नम्। अन्नाद्रेतः। रेतसःपुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः। तस्येदमेवशिरः। अयंदक्षिणःपक्षः। अयमुत्तरःपक्षः। अयमात्मा। इदंपुच्छंप्रतिष्ठा। तदप्येषश्लोकोभवति १। २५

इतिप्रथमोऽनुवाकः॥ १॥

अथतैत्तिरीयोपनिषद्गतब्रह्मानन्दवल्लीनामक द्वितीयाध्यायभाषाभाष्यंप्रारभ्यते॥

हेसौम्य! पूर्व उक्तविद्याकी उत्कर्षताके प्रतिबन्धकी निवृत्ति के अर्थ शान्ति पठनकिया, अब अग्रिम कहने की ब्रह्मविद्याकी प्राप्ति विषे विघ्नोंकी निवृत्ति के अर्थ प्रथम शान्तिपाठ करते हैं "सहनाववतु,सहनौभुनक्तु, सहवीर्य्यंकरवावहै" (सोई परमेश्वर हमको रक्षणकरो, सोई हमको भोगावो, सोई सामर्थ्यको सम्पादन करो) अर्थात् (जो सर्वात्मरूपसे सर्वत्र सुशोभितहै) सोई परमेश्वर हम शिष्य अरु आचार्य की सम्यक् प्रकार रक्षा करो, अरु सोई परमात्मा हम शिष्य अरु आचार्य को (सत्याविकनसे) पालनकरो, अरु सोई (सर्व शक्तिमान्,हमको विद्यारूप निमित्तवाले सामर्थ्य को सम्पादनकरो" (तेजस्विनामधीत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मस्तु, मा विद्विषावहै" (तेजस्वी हुये हमारा अध्ययन तेजस्वी होवो, हम परस्पर द्वेषको मत प्राप्तहोवें) अर्थात् तेजस्वी हुये हमारा अध्ययन तेजस्वी (अर्थज्ञानके योग्य) होवे, अरु विद्या ग्रहण के निमित्त शिष्य वा आचार्य के किये प्रमाद के अन्यायसे प्राप्तहुआ जो द्वेष तिसकी निवृत्तिके अर्थ यह प्रार्थनाहै कि हम परस्पर द्वेषको न प्राप्त होवें " ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः " (शान्तिहो, शान्तिहो, शान्तिहो,) यहां तीनबार जो शान्तिका कथन है सो आदरार्थ है, वा आध्यात्मिकादि तीनों प्रकारके विघ्नविक्षेपकी निवृत्तिके अर्थ है वा अग्रिम कहनेकी विद्या के विघ्न की निवृत्तिके अर्थ है । यह शान्ति पाठहै सो अविघ्नतासे आत्मविद्याकी प्राप्तिकी प्रार्थना के अर्थहै, अरु तिस आत्मविद्या की प्राप्तिरूप मूलवालाही परमश्रेयहै । [इस उक्त अर्थके अनुवादपूर्वक दूसरी आनन्दवल्ली के तात्पर्य को भाष्यकार स्वामी कहते हैं] पूर्वाध्यायविषे प्रथम संहिताको विषय करनेवाले अरु कर्म्मों से अविरुद्ध उपासना कही । तिसके पश्चात् व्याहृतिरूप द्वार से अरु स्वाराज्यरूप फल से अन्तःकरण के भीतर सोपाधिक आत्माका ज्ञान कहा । अरु इतने करके सम्पूर्णसंसारके बीज की निवृत्तिका साधन कोई एकहै, यह जानागया । एतदर्थ सर्व अनर्थों के बीजरूप अज्ञानकी निवृत्तिकेअर्थ सर्व उपाधियोंके भेद से रहित आत्माकोसम्यक्ज्ञानार्थ यहद्वितीय अध्यायका आरंभ करतेहैं । अरु इस ब्रह्मविद्या का प्रयोजन अविद्या की अशेष निवृत्तिहै, अरु तिसकरके आत्यन्तिक संसार का अभाव होवेहै । इसप्रकार अग्रिम " विद्वान्न बिभेतिकुतश्चनेति" विद्वान् किसी सेभी भयको प्राप्तहोतानहीं । इस वाक्यकरके यहश्रुतिकहेगी अरु जिसकरके संसार रूप निमित्तकेहोते सन्ते "अभयंप्रतिष्ठां ऽविन्दत " कृताकृतेपुण्य पापे नतपतइति " अभयस्थितिको पावताहै, अरु इसको किये अरु न किये पुण्य अरु पाप तपावे नहीं, । यह श्रुतिका कथन बनता नहीं, इसकरके जानाजाता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि इस सर्वके आत्मरूप ब्रह्मकोविषयकरनेवाले विज्ञानसेआत्यंतिक संसारकाअभावहोवे है। [अब प्रथमवाक्यके मध्यकेतात्पर्य कोकहतेहैं। केवल विद्याकरकेहीमोक्षसाधनेकोशक्यहै। अरु ब्रह्मवित् इस विशेषणसे सम्बन्धकेज्ञानको पुरुषकीइच्छकाविषयहोनेकरकेपरब्रह्मकी प्राप्ति विद्याकाप्रयोजनहै] इसप्रकार यह श्रुति "ब्रह्मविदाप्नोतिपरम्" ब्रह्मवेत्तापरब्रह्मको प्राप्तहोताहै, इत्यादिक वाक्यों विषेही सम्बन्ध अरु प्रयोजनके जनावनेके अर्थ प्रयोजनको कहते हैं। अरु संबन्ध अरु प्रयोजनके जानने से मुमुक्षु विद्याके श्रवण ग्रहण अरु धारण करनेके अभ्यासार्थ प्रवर्त्त होता है। अरु "श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो" आत्मा श्रवण करनेयोग्यहै, मनन करनेयोग्यहै, निदिध्यासन करने योग्यहै,। इत्यादिक अन्य श्रुतियोंके प्रमाणसे श्रवणादि साधन पूर्वक "ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति" ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मही होताहै,। इत्यादिरूप अग्रिम कहनेका विद्याका फल होताहै। एतदर्थ यहां श्रुति प्रथम विद्याके प्रयोजनको कहेहै। परमात्मा अत्यन्त बड़ा होनेसे ब्रह्म कहाजाताहै। तिसको जो जानताहै सो ब्रह्मवेत्ताहै। अरु "ब्रह्मविदाप्नोति परम्" {ब्रह्मवेत्ता परको पावताहै} अर्थात् यह ब्रह्मवेत्ता सर्वसे अधिक तिसही परब्रह्मको पावताहै। अरु अन्यके विज्ञानसे अन्यकी प्राप्ति होती नहीं। अरु ऐसे "स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवतीति" जो प्रसिद्धही तिस परब्रह्मको जानता है सो ब्रह्मही होताहै, इत्यादि रूप अन्यश्रुति स्पष्ट ब्रह्मवेत्ताको परब्रह्मकी प्राप्तिही देखावे है, ताते ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मको प्राप्तहोता है यह कथनयोग्यहीहै॥ शंका॥ ननु सर्वगत {सर्वका आत्मरूप} ब्रह्महै इसप्रकार यह श्रुति आगेकहेगी, ताते प्राप्तहोनेयोग्य ब्रह्मनहीं है। अरु प्राप्तिजोहै सो अन्य परिच्छिन्नकीअन्य परिच्छिन्नसे देखीहै अरुब्रह्म जो है सो अपरिच्छिन्न अरुसर्वका आत्माहै, एतदर्थ परिच्छिन्नवत् अरु अनात्मवत् तिसकी प्राप्ति अघटित है। तब श्रुति कैसेकहती है कि ब्रह्मवेत्ता परब्रह्मको पावताहै॥ समाधान॥ यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दोष । जो तुमने कहा सो । बने नहीं, क्योंकि ब्रह्मकी प्राप्ति अरु अप्राप्तिहै सोज्ञान अरु अज्ञानकी अपेक्षावाली है ताते । अरु परमार्थसे ब्रह्मरूपहुयेभी, अरु भूतोंके अंशकरके किये बाह्य परिच्छिन्न अन्नमयादि कोशोंबिषे आत्मभावके देखनेवाले अरु तिन अन्नमयादिकोंविषे आसक्त चित्तवाले इसजीवको दशमकी संख्याको पूर्ण करनेवाले अन्तरायसे रहित हुयेभी, दशमके स्वरूपको बाहरके नवकी संख्यावाले पुरुषोंबिषे आसक्त चित्तवालाहोने करके स्वरूपके अभावके ज्ञानवत् परमार्थ ब्रह्मस्वरूपके अभावके ज्ञानरूप अविद्यासेअन्नमयादिक बाहरके अनात्मपदार्थोंकोआत्मपनेकरके प्राप्तहुआ होनेसे, सो जैसे अन्नमयादिक अनात्माओं से मैं अन्य नहीं हौं, ऐसा मानताहै, इसप्रकार इस जीवको अविद्यासे, आत्मरूप हुआ भी ब्रह्म अप्राप्त होताहै । [दर्शन का न होनाही है निमित्त जिसका ऐसी जो अप्राप्ति तिसका विवेचन करके अब दर्शनका होनाहीहै निमित्त जिसका ऐसी जो प्राप्ति तिसका वर्णन करते हैं] अरु जैसे दशकी संख्याको पूर्ण करनेवाले दशमके स्वरूपको अविद्यासे अप्राप्त होतेसंते किसी भी आप्तपुरुषकरके स्मरण करायेहुये तिसहीकी विद्यासे प्राप्तहोवेहै, तैसेही अविद्यासेब्रह्मस्वरूपकीअप्राप्तिवाले तिसीही जीवको श्रुतिकरके उपदेशकिये सर्वात्मा ब्रह्मके आत्मभावके ज्ञानरूप विद्यासे तिसकी प्राप्ति संभवेही है ॥ " ब्रह्मविदाप्नोतिपरम् " ब्रह्मवेत्ता परब्रह्मको प्राप्तहोताहै, । यह वाक्य समस्तवल्लीके अर्थका सूचक होनेसे सूत्ररूप है " ब्रह्मविदाप्नोतिपरम् " ब्रह्मवेत्ता परब्रह्मको पावता है, । इस वाक्यकरके जाननेयोग्य होनेसे सूचनाकिये, अरु विशेष स्वरूपके निर्द्धारसे रहित ब्रह्मके सर्वसे भिन्नकरके जनाये विशेष स्वरूपके समर्पणबिषे समर्थ लक्षणके कथनसे स्वरूपके निर्द्धारण करके, अरु [पूर्व ,ब्रह्मवित्, इस विशेषणसे जिस ब्रह्मका ज्ञान कहाहै तिस ब्रह्मका " यो वेद निहितंगुहायां " जो गुहाबिषे स्थित को जानताहै, । इस वाक्य करके प्रत्यगात्मरूपसे ज्ञान कहनेसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

योग्यहै, इस अर्थ से अब ऋचा कहते हैं] सम्पूर्ण होनेकरके कथनकिये ज्ञानवाले ब्रह्म के अग्रिम कहने के लक्षणके विशेषकर प्रत्यगात्मा होने करके अनन्यरूपसे जनावने की योग्यताके अर्थ ब्रह्मवेत्ताको जो परब्रह्मकी प्राप्तिरूप, ब्रह्मविद्याका फलकहा सोई है॥ सो सर्व्वात्मभाव सर्व संसारके धर्म्म से रहित ब्रह्मस्वरूप भावहीहै, अन्यनहीं, इस अर्थ के लखावने के अर्थ यह ऋचा कहतेहैं "तदेषाऽभ्युक्ता। सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म"। (तिसही बिषे यह उपदेश करिये है। सत्यज्ञान अनन्तब्रह्महै) अर्थात् तिसही ब्राह्मणवाक्य करके उक्त अर्थ बिषे यह ऋचा उपदेश कियाहै। सत्यज्ञान अनन्त ब्रह्महै, यह वाक्य ब्रह्मके स्वरूपलक्षण अर्थ है अरु सत्यादिक जे तीन पद हैं सो विशेष्यरूप ब्रह्म के विशेषणार्थ हैं। अरु जानने योग्य होने करके कहने को इच्छित होने से, ब्रह्म विशेष्य है। अरु ब्रह्म जानने योग्य होने करके मुख्यता से कहने को इच्छित है, ताते विशेष्य रूप जानने के योग्यहै[विशेषण अरु विशेष्य भावकी प्रतीति काहेसे होतीहै, तहां कहते हैं। यहां यहअर्थहै कि नीलवर्ण अरु बड़ी सुगन्धिवाला कमल है, इत्यादिक वाक्योंबिषे विशेषण विशेष्य भावकेहोतेही समानाधिकरणपने करके एक विभक्तिरूप अन्तवाले प्रसिद्धहैं, अरु यह भी तिस प्रकार के नाना अर्थगत विशेषण अरु विशेष्य भाव के किये हैं, इस प्रकार जानते हैं] जिस करके अन्य विशेषण विशेष्य भावके होनेसेही सत्यादिक एक विभक्तिवाले पद, समान (एक) अधिकरण (अर्थ) वाले हैं, एतदर्थ सत्यादिकतीन विशेषणों करके विशेष्य हुआ जो ब्रह्म सो अन्य विशेष्यपनसे निर्द्धार करतेहैं। तैसेही [अब विशेषण विशेष्यभावके फलको कहतेहैं] जो अन्यों से निर्द्धार कियाहै, ऐसा तिसका ज्ञान होताहै। जैसे लोक बिषे नील अरु बड़ी सुगन्धिवाला कमल होता है। जब अनेकद्रव्य एक जातिवाले अरु अनेक विशेषणोंके सम्बन्धी होवें, तब विशेषणको अर्थवान्पना (सफलपना)होवे है, परन्तु एकही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वस्तु विषे अन्य विशेषणके असम्बन्धसे विशेषणको अर्थवान्पना नहींहै । जैसे यह एक सूर्यहै, अरु तैसे एकही ब्रह्महै, अन्य ब्रह्म नहीं है, जिनसे नीलकमलवत् यह ब्रह्म विशेष्य (भिन्न किया) होवे, [सो विशेषण विशेष्यभावको तात्पर्यसे प्रतिपादन करनेको योग्यहोने से, अरु अव्याकृतादिक शास्त्र उक्त ब्रह्मपद के अर्थके अवच्छेदसे अनिर्वाच्य विशेषण विशेष्यभाव के सम्बन्धसे तिस द्वारा ब्रह्मका लक्षण कहनेको इच्छितहै, ऐसा कहते हैं] यह कथन बनेनहीं, क्योंकि विशेषण लक्षणके अर्थ है ताते । अरु विशेषण जो हैं सो लक्षणरूप अर्थकी मुख्यतावालेहैं, विशेषणकी मुख्यतावालेही नहीं, याते यह दोष नहीं है ॥ शंका ॥ ननु तब लक्षण अरु लक्ष्यका वा विशेषण अरु विशेष्यका कौनभेदहै ॥ समाधान ॥ तहां कहते हैं, विशेषण जो है सो विशेष्यके समानजातिवाले द्रव्यनसेही निवर्त्तकहै, अरु लक्षण जो हैं सो लक्ष्यका सर्वसेही निवर्तकहै, जैसे अवकाशका देनेवाला आकाशहै, यह आकाशका जो लक्षणहै सोआकाशरूपलक्ष्यका पृथिवी आदिक सर्वसे निवर्तक (भेदकरनेवाला)है, तैसे । अरुलक्षण अर्थ "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" सत्य ज्ञान अनन्त ब्रह्म है, । यह वाक्य है, इसप्रकार हम कहते हैं ॥ सत्यादिक शब्द जो हैं सो परस्पर सम्बन्धको पावतेनहीं, अन्य अर्थवालेहैं ताते । अरु जिसकरके वे विशेष्यके अर्थ हैं, याते एक एक विशेषणरूप शब्द जो हैं, सो परस्परकी अपेक्षासे रहित हुआ "सत्यं ब्रह्म, ज्ञानं ब्रह्म , अनन्तं ब्रह्म" सत्य ब्रह्महै, ज्ञान ब्रह्महै, । अनन्त ब्रह्महै, । इसप्रकार ब्रह्मशब्दसे सम्बन्धको पावताहै, अरु जिसरूपसे जो निश्चितहै, अरु जिसरूपकेअर्थ व्यभिचारको पावता नहीं, सो सत्यहै । अरु जिस रूपसे निश्चित हुआजो तिसरूपके अर्थ व्यभिचारको पावताहै, सो मिथ्या, इसप्रकार कहते हैं । अरुइसहीसे विकार कहियेकार्यमिथ्याहै "वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येवसत्यम्" वाणीसे आरंभकिया विकार नाममात्रहै, अरु मृत्तिकाही सत्यहै, । अरु ऐसेसत्ही सत्यहै, इस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निश्चयसे। इसकरके "सत्यंब्रह्मेति" सत्य ब्रह्महै,। इसप्रकार सत्य शब्दजो है, सो ब्रह्मको विकारसे निवृत्त (पृथक्) करे है॥ इसकरके ब्रह्मको कारणता प्राप्तहुई, अरु कारणको कारकपना अरु वस्तुरूपता होने से मृत्तिकावत् जड़रूपता प्राप्तहुई, याते "ज्ञानंब्रह्मेति" ज्ञान ब्रह्महै,। ऐसा कहते हैं। यहां ज्ञान शब्दजो है सो निर्विशेष चैतन्यमात्ररूप अर्थवाला है, क्योंकि सत्य अरु अनन्त शब्दकरके सहित ब्रह्मका विशेषण है ताते। अरु सत्यता अरु अनन्तता जोहै सो ब्रह्मको ज्ञानके कर्त्तापनेके हुये सम्भवे नहीं, अरु ज्ञानका कर्त्ता होने करके विकारवान् हुआ जो ब्रह्म सो सत्य अरु अनन्त कैसे होय, जो वस्तु किसी से भी विभाग को प्राप्तहोती नहीं सो अनन्त है। अरु ब्रह्मको ज्ञानके कर्त्तापने के होने से, सो ब्रह्म ज्ञेय अरु ज्ञान दोनों करके विभाग को पावेगा, याते तिसको अनन्तता नहीं होवेगी। क्योंकि "यत्र नान्यद्विजानाति स भूमा, अथ यत्रान्यद्विजानाति तदल्पमिति" जहां अन्यको नहीं जानता है सो भूमा है, अरु जहां अन्यको जनताहै सो अल्प है,। इस अन्य श्रुतितें॥ अरु जो कहे "नान्यद्विजानाति" अन्यको नहीं जानता है,। ऐसे प्रपंच के निषेध से आत्मा को जानता है, सो कहना बने नहीं, क्योंकि उक्तवाक्य भूमा के लक्षण के प्रकार के परायण है ताते। अरु "यत्र नान्यत्पश्यति" जहां अन्यको नहीं देखता,। इत्यादि रूप जो वाक्यहैं सो भूमाकेलक्षण के प्रकार के परायण हैं। जैसे "यथा प्रसिद्धमेवान्यत्पश्यतीति" प्रसिद्धही अन्यको देखताहै,। उसको लेके "यत्रतन्नास्ति सभूमेति" जहां सोप्रसिद्ध अन्य वस्तु नहीं सो भूमा है,। इस प्रकार भूमा का स्वरूप तिस वाक्यबिषे जनायाहै, अन्यके ग्रहण की प्राप्ति के निषेधरूप अर्थवाला होने से स्वस्वरूपबिषे ज्ञानरूप (जाननेरूप) क्रिया नहीं है। याते यह उक्त श्रुति वाक्य इसही अर्थ के परायण होतु। अरु स्वस्वरूप बिषे भेदके अभावसे ज्ञान का असंभव है अरु आत्माको ज्ञेयपने के हुये ज्ञातापने के प्रसंग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का अभाव होवेगा, क्योंकि तिसको ज्ञेयपनेकरकेही उपयोग को प्राप्तहुआ होनेसे ॥ अरु जो ऐसा कहे कि एकही आत्मा ज्ञेय अरु ज्ञाता होने करके उभय प्रकारका होवे है, सो कथन बने नहीं, क्योंकि तिस आत्मा को एककालबिषे निरवयवता है ताते। अरु निरवयव को एककालबिषे ज्ञेयपने का अरु ज्ञातापने का संभव नहीं है। अरु आत्माको घटादिकोंवत् ज्ञेयपना होने से ज्ञानके उपदेश की व्यर्थता होवेगी। अरु जिसकरके घटादिकोंवत् प्रसिद्ध वस्तुके ज्ञानका उपदेश अर्थवान् नहीं है, तिसकरके ब्रह्मको ज्ञातापना होने करके सत्यता अनन्तताका असंभव होवेगा। अरु सन्मात्रपना भी अघटित होवेगा। अरु ज्ञानके कर्त्तापने आदिक विशेषण करके युक्तपने के हुये सन्मात्रपना संभवे नहीं, क्योंकि "तत्सत्यमिति" सो सत्य है, इस अन्य श्रुतिके प्रमाण से। अरु सत्य अरु अनन्त इन शब्द करके सहित ब्रह्मका विशेषण होने करके ज्ञान शब्दके उच्चार से यह ज्ञान शब्द चेतनमात्ररूप अर्थवाला है। एतदर्थ ज्ञानशब्द जो है सो "ज्ञानं ब्रह्मेति" ज्ञान ब्रह्म है, । इसप्रकार कर्त्तापने आदिक कारककी निवृत्ति के अर्थ अरु मृत्तिका आदिकोंवत् जड़पने की निवृत्तिके अर्थ बनता है ॥ अरु "ज्ञानं ब्रह्मेति" ज्ञानरूप ब्रह्म है, । इस वचन करके ब्रह्मको अन्तवान्पना प्राप्तहुआ, क्योंकि लौकिक ज्ञान को अन्तवान्पने करके युक्त देखते हैं ताते। एतदर्थ ज्ञान स्वरूप ब्रह्मबिषे लौकिक ज्ञानवत् प्राप्तहुई अनन्तता तिसकी निवृत्तिके अर्थ ब्रह्म अनन्त है, इसप्रकार श्रुतिकहती है ॥ अरु जो ऐसा कहे कि सत्यादिक विशेषणों को मिथ्या आदिक धर्म्मों की निवृत्ति के परायण होने से, अरु विशेष्य ब्रह्म को कमल आदिक विशेष्योंवत् अप्रसिद्ध होने से "मृगतृष्णाम्भसिस्नातः खपुष्पकृतशेखरः, एषवन्ध्यासुतो याति शशशृङ्गधनुर्धरः इति" मृगतृष्णा के जलबिषे स्नानकिये, अरु आकाशके पुष्पों का किरीट मस्तकपर धारणकिये अरु शशक (खरगोश) के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भावना अतिदृढ़ धनुष धारणकिये यह प्रत्यक्ष बन्ध्याका पुत्र
ता है। इस वाक्यवत् सत्यादिरूप वाक्यों को शून्यरूप अर्थ-
पनाही प्राप्त होवेगा, सो बने नहीं [सिद्धतामात्र करके
ार्थ्यताके सम्भवहुये अन्य प्रमाण का विशेषण व्यर्थ होवेगा
ोंकि केवल व्यतिरकके अभावसे अरु रज्जु सर्पादिरूप मिथ्या
र्थ के सत्यरूप अधिष्ठानवान् पनेके देखने से दृश्यता आदिक
ुओंसे मिथ्यापने करके जानेहुये प्रपंचको भी सत्यरूप अधि-
ानवान् पना संभवे है। अरु प्रपंचका अधिष्ठान होनेकरके नि-
य किये तिस ब्रह्मके स्वरूपके विशेष लक्षणार्थ यह वाक्य है,
तदर्थ इस वाक्य को असत् अर्थवान् पना नहीं है, इसप्रकार
हते हैं] क्योंकि सत्यादिरूप वाक्यों को लक्षणरूप अर्थवान्
ना है ताते। अरु सत्यादि पदों को विशेषणपने के हुये भी ल-
णरूप अर्थ की मुख्यता है, इसप्रकार हम कहते हैं। अरु
तिस करके लक्ष्य को शून्यरूप हुये लक्षणका वाक्य व्यर्थ होता
है याते सत्यादिरूप वाक्यों को लक्षणरूप अर्थवाला होनेसे
शून्यरूप अर्थवान्पना नहीं है, इस प्रकार हम मानते हैं।
[सत्यादि शब्दोंकी विशेषणरूप अर्थवान्ताको अंगीकार करके
कहते हैं। यहां यह अर्थहै कि नीलवर्ण महत्सुगंध, ऐसे विशेषण
रूप जो पदहैं, सो अपने अर्थ के समर्पणसे तिससे विरुद्ध अर्थसे
अपने आश्रय (विशेष्य) के व्यावर्त्तक (अन्यसे पृथक् करनेवाले)
प्रसिद्ध है, तैसे सत्यशब्द भी अबाधित सत्ताबिषे बर्तता है, अरु
ज्ञान शब्द स्वप्रकाश संवेदन बिषे बर्तता है, अरु अनन्तशब्द
व्यापकबिषे बर्तताहै "अनन्तोपमाकाशः" अनन्तकी उपमावाला
आकाशहै, इत्यादिक स्थलमें अनन्तशब्द व्यापकबिषे बर्तताहै।
ातेे अपने अर्थ के समर्पणसे विरोधी अर्थ से अपने आश्रयके
व्यावर्त्तक होनेसे सत्यादि शब्दोंका व्यावृत्तिमात्ररूप अर्थबिषे
पर्यवसान(समाप्ति वा बर्तना)नहीं है] सत्यादि शब्दोंको विशेषण
रूप अर्थकरके युक्तहुये भी अपने अर्थका परित्याग होतानहीं।अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिस करके सत्यादि शब्दों को शून्यरूप अर्थ करके युक्त विशेष्य के नियामकपनेका असम्भव होवेगा, अरु सत्यादि अर्थ करके अर्थवान्पने के होनेसे तो तिससे विपरीत धर्मवा विशेष्यों से ब्रह्मरूप स्वविशेषका नियामकपना सम्भवे है, ब्रह्मशब्द भी अपने अर्थकरके अर्थवान्ही है । तहां अनन्त जो है सो अन्तवान्पनेके निषेध द्वारा विशेषण है, अरु सत्यज्ञान यह शब्द तो अपने अर्थ को (ब्रह्मविषे) समर्पण करनेसे विशेषण होतेहैं । ["अनन्तं" अनन्त है, । इस पदकरके ब्र की आत्मासे एकता कही है, इस अभिप्रायसे एकता विषे शा के तात्पर्य को देखावते हैं] "तस्माद्वाएतस्मादात्मन इति" ति (ब्राह्मणभाग करके प्रतिपाद्य) से वा इस (मन्त्रभाग करके प्रतिपाद्य) आत्मासे, । इस वाक्यमें ब्रह्मविषेही आत्मशब्द मिलावने से, ज्ञाताका आत्माही ब्रह्म है । अरु "एतमानन्दमयमात्मानमुपसङ्क्रामति" इस आनन्दमय आत्माको प्रवेश करावता है, । अरु "तत्सृष्ट्वातदेवानुप्राविशादिति" तिसको सृजके तिसके प्रति पीछेप्रवेश करताहुआ, इस प्रकार तिसके प्रवेशसे । अरु जिसकरके तिसही परब्रह्म के जीवरूप से शरीर विषे प्रवेशको श्रुति देखावे है, इसही करके ज्ञानवान्का स्वरूप ब्रह्म है ॥ [जब ब्रह्मकी आत्मासे एकता कहनी इच्छित है, तब ज्ञानशब्द की भावरूप साधनता की व्याख्या भङ्ग होवेगी, इस प्रकार पूर्वपक्षी कहता है] जब इस प्रकारहै तब आत्मा होनेसे ब्रह्मको ज्ञानका कर्त्तापना होवेगा ॥ अरु जिस करके आत्मा ज्ञाता है, यह प्रसिद्ध है, अरु "सोऽकामयत" सो कामना करता हुआ, । इस प्रकार कामनावाले परमेश्वर को ज्ञानका कर्त्तापना प्रसिद्ध है, याते ज्ञानका कर्त्ता होनेकरके चेतन मात्र रूप ब्रह्म है, यह कथन अयुक्त होवेगा अरु उक्त प्रकार माने हुये अनित्यता के प्रसङ्गसे जब ब्रह्मको चेतनमात्र ज्ञानस्वरूपता है, तब अनित्यता अरु परतन्त्रता प्राप्त होवे है, क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धातुके अर्थको कारक की अपेक्षावान्पना है ताते। अरु ज्ञान, धातु का अर्थ है, एतदर्थ इस ज्ञानको अनित्यता अरु परतन्त्रता सो कथन बने नहीं, क्योंकि स्वरूपसे भिन्न होने करके कार्य के उपचार से। अरु चिन्मात्ररूप जो ज्ञानहै सो आत्माका स्वरूप है ताते भिन्न नहीं, याते नित्यही है, तथापि चक्षुरादि इन्द्रियों द्वारा विषयाकार परिणाम को पावनेवाली बुद्धिरूप उपाधिके जो शब्दादि विषयाकार प्रकाशहैं, सो आत्मस्वरूप ज्ञान विषयरूप उत्पन्न हुयेही आत्मस्वरूप ज्ञानसे व्याप्त संभवे हैं, ताते आत्मस्वरूप विज्ञान के जो प्रकाश हैं सो विज्ञान शब्द के वाच्य अरु धातुके अर्थरूप हुये आत्मा केही विकाररूप धर्म हैं, इसप्रकार अविवेकी पुरुषों करके कल्पना करी है। परन्तु जो ब्रह्म रूप विज्ञान है सो सूर्य के प्रकाशवत् अरु अग्निकी उष्णतावत् ब्रह्मस्वरूपसे अभिन्न हुआ स्वरूपही है, अरु सो अन्य कारणकी अपेक्षावाला नहीं, क्योंकि नित्यस्वरूपहै ताते। [प्रश्न ॥ ज्ञान जब नित्य है तब तिसविषे ब्रह्म के कर्त्तापने के अभाव हुये ब्रह्मको सर्वज्ञपना कैसे है ॥ उत्तर ॥ यहां यह अर्थ है कि ज्ञानके अन्तराय से विनाही बाह्यके विषयोंकी सिद्धि होतीहै, अरु सर्व वस्तु ज्ञान स्वभाववाले ब्रह्म से अंतरायरहित है, याते ब्रह्म सर्वज्ञ है, इस प्रकार आरोप करके कहते हैं] अरु सर्व पदार्थों को तिसकरके अभिन्न देश काल अरु आकाशादिक कारणवाले होने से अरु तिस ब्रह्म को निरतिशय सूक्ष्म होने से तिसको अन्य सूक्ष्म अन्तरायसहित दूरस्थित भूत भविष्यत् वा वर्त्तमान वस्तु जानने को योग्य नहीं है, ताते सो ब्रह्म सर्वज्ञ है। अरु "अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः। स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तमिति, मन्त्रवर्णात् "नहि विज्ञातुर्विज्ञातेर्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वान्नतु तद्द्वितीयो ऽस्ति, इत्यादि श्रुतेश्च" हस्त पाद से रहित हुआ जानेवाला अरु ग्रहणकर्त्ता है, अरु सो चक्षुरहित हुआ देखताहै कर्णरहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुआ सुनता है, सो जानने योग्य वस्तु को जानताहै, अरु हि
का जाननेवाला कोई नहीं, तिसको मुख्य महत् पुरुष कहते
इस मन्त्रके वर्णन से । अरु विज्ञाताकी विज्ञप्ति का लोप होत
नहीं अविनाशी है ताते, अरु तिससे दूसरा नहीं है, इत्यादि
श्रुतियों से । [ब्रह्म नित्यहै, ज्ञानस्वरूप होने से, लौकिक ज्ञा
वत्, इत्यादिरूप जो प्रश्न है, सो कथन करी युक्तियों से निषे
किया ऐसा कहते हैं । यहां यह भाव है कि लौकिक ज्ञान को
करणादिकों की अपेक्षा सहित होनेसे अनित्यपना है, अरु आत्म-
स्वरूप ज्ञान तो करणादिकोंकी अपेक्षा सहित नहीं,क्योंकिसमस्त
करणोंके व्यापारके उपरामहुयेभी सुषुप्तिबिषे तिसज्ञानका सद्भा-
वहै ताते, अरु अन्यथा हुये सुषुप्तिकी सिद्धताका असंभवहै ताते,
अरु सुषुप्तिसे जाग्रत्हुये पुरुषको सुषुप्तिके स्मरणके असंभवके
प्रसंग से, याते श्रुतितात्पर्यके विषयरूप अर्थबिषे सामान्यसे देते
हुये अर्थका प्रवेश नहींहै] अरु विज्ञाताके स्वरूपकरके अभेदसे
करणादि निमित्तोंकी अपेक्षासे रहित होने से ब्रह्मको ज्ञानस्वरू
पताके हुयेभी नित्यताकी सिद्धि है । एतदर्थ नित्य आत्मस्वरूप-
होनेकरके ब्रह्मरूप ज्ञान धातुका अर्थ नहीं है, इसही से । अर्थात्
नित्यहोने से ज्ञानकाकर्त्ताब्रह्म नहीं है, अरु इसही हेतुसेज्ञानशब्द
का वाच्यभी ब्रह्मनहीं है। [प्र०॥ तहांज्ञानस्वरूपब्रह्महै, यह प्रयोग
कैसे सिद्धहोवे है ॥उ०॥ तहां कहते हैं] तथापि तिसके । ज्ञानरूप
ब्रह्मके आभासके वाचक बुद्धिके जो धर्मविशेषहैं सो ज्ञानशब्दसे
लखे जातेहैं परन्तु कहतेनहीं क्योंकि शब्दकी प्रवृत्तिके हेतु जाति
आदिक धर्मसे रहितहै ताते । तैसे सत्य शब्द से भी वाच्य ब्रह्म
नहीं है । ब्रह्मको सर्व प्रपंचकी निवृत्तिकरके युक्त स्वरूपवाला
होनेसे, बाह्यसत्ता के भेदको विषयकरनेवाले सत्य शब्दसे ब्रह्म
सत्यहै, इसप्रकार लखते हैं, परन्तु सत्य शब्दका वाच्य ब्रह्म नहीं
है ।अर्थात् सत्यादि नामोंका नामीब्रह्म नहीं है किन्तु सत्यस्वरूप
है।[उक्तप्रकार एक एक पदके अर्थको निरूपणकरके अब समस्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाक्यके अर्थको कहतेहैं,। यहां यह अर्थहै कि यद्यपि सत्यादि शब्दों का ब्रह्मसे मुख्य अन्वय है, तथापि वह सत्यादि शब्द परस्परकी सन्निधिके हुये परस्परकी व्यावृत्तिके नियामक होतेहैं। अरु ज्ञान रूप विशेषकरके युक्त होनेसे सत्यशब्द जड़ कारण बिषे बर्तता नहीं, अरु सत्यरूप विशेषण करके युक्त होनेसे ज्ञानशब्द जो है सो विषयकी अपेक्षासहित जो ज्ञानहै तिसबिषे बर्तता नहीं, क्योंकि विषयापेक्षिक ज्ञान असत्यहै ताते। अरु ज्ञानस्वरूप विशेषणकरके युक्त होनेसे अनन्त शब्दज्ञातासे भिन्न अर्थबिषे बर्तता नहीं। एतदर्थ सत्यादिशब्दोंसे लौकिकवाच्य जोहै, तिससे विलक्षणअर्थ होनाचाहिये, इसप्रकार निश्चय करावतेहुये समस्तलौकिक अध्यासोंके अधिष्ठानको ब्रह्म होनेकरके लखावते हैं] याते "यतोवाचोनिवर्त्तन्तेअप्राप्यमनसासह" "अनिरुक्तेऽनिलयेनेति" जिससे अप्राप्तहोयके मनसहित वाणियां निवृत्तहोती हैं, अरु इस वाणीके अविषय अरु आधारसे रहित ब्रह्मबिषे अभय स्थितिको पावताहै,। इत्यादिक श्रुतियोंकरके प्रतिपादित ब्रह्मका अवाच्यपना अरु नीलकमलवत् वाक्यका अर्थपनासिद्धहुआ॥ उक्तप्रकार कथनकिया जो ब्रह्म सो कार्यमय बुद्धिरूप गुहाबिषे अनुस्यूत जो अव्याकृत (माया) नामवाला परमआकाश है तिसबिषे स्थित है॥ अरु जिसकरके इस बुद्धिबिषे ज्ञान, ज्ञेय, अरु ज्ञातारूपपदार्थ गूढ़हुये बर्तते हैं याते बुद्धिको गुहाकरके कहते हैं। वा इस बुद्धिबिषे भोग अरु मोक्ष यह उभय पुरुषार्थ गूढ़ कहिये छिपेहुये हैं एतदर्थ बुद्धिको गुहारूपसे वर्णन करतेहैं। वा "एतस्मिन्खल्वक्षरेगार्ग्याकाशः" हे गार्गि! इसअक्षरबिषे निश्चयकरके आकाशहै,। इसश्रुतिबिषे अव्याकृतको ब्रह्मकी सन्निधिसे परम आकाशरूपताहै [व्योमशब्दकी जो भूताकाशबिषे रूढ़िवृत्ति है तिसको परित्यागकरके अव्याकृतको विषय करनेपना क्या व्याख्यान किया, इस शंकापर कहतेहैं। यहांयह अर्थ है कि भूताकाशको कार्यहोनेकरके असृष्टपना हैताते, अरु अव्याकृतरूप आकाशको कारणहोने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके परमता (श्रेष्ठता) रूप विशेषणका संभवहै ताते, अरु अन्य शाखाके सत्पथनामक प्रकरणविषे अक्षररूप ब्रह्मसे तिस अव्याकृत आकाशकी समीपताका निश्चयहै ताते, यहां व्योमशब्दकरके अव्याकृतको लखायाहै] सो अव्याकृतरूप आकाशही गुहा है। क्योंकि तिसको तीनकाल बिषे कारणताहै ताते, अरु तिसको सूक्ष्म होनेकरके तिसबिषेभी सर्वपदार्थ गूढ़हुये वर्तेहैं, एतदर्थ उस अव्याकृतरूप आकाशको गुहाकरके वर्णन करतेहैं, तिसबिषे ब्रह्मस्थितहै। इसप्रकार अन्योंके अभिप्रायसे व्याख्यानकरके अब अपने अभिप्रायसे व्याख्यान करतेहैं। [हृदयनामकमांसपिंडीकरके अवच्छिन्नभूताकाशबिषे जोबुद्धिरूपागुहाहै तिसबिषे साक्षीहोनेकरके निहित कहिये प्रकट ब्रह्महै, इसप्रकार व्याख्यानकरना युक्तहै क्योंकि द्रष्टासे अभेदकरके ब्रह्मके अपरोक्षपनेका लाभहै ताते। अरु अन्यथा समष्टिरूप अव्याकृति नामक मायातत्त्वबिषे स्थितब्रह्महै, इसप्रकार कहेहुये ब्रह्मको परोक्षपना प्राप्त होवेगा। अरु ब्रह्मका जो परोक्षपनेसे ज्ञानहै सो अपरोक्ष संसारके अध्यासका निवर्त्तक होवे नहीं। ताते अपरोक्षद्रष्टा चैतन्यसे अभेदकरके ब्रह्मको अपने हृदयबिषे प्रत्यक्षपनेकरके कहनेको इच्छित है ताते, विज्ञानका साधनरूप हृदयाकाशही यहां व्योमशब्दकरके कहनेको इच्छितहै] अथवा हृदयावच्छिन्न जो भूताकाशहै सो परमव्योमहै, तिसबिषे जो बुद्धिरूपा गुहाहै तिसबिषे साक्षी होकरके ब्रह्मस्थित है, यह व्याख्यान युक्तहै, क्योंकि इस श्रुतिबिषे ज्ञानकासाधन होनेकरके आकाशको कहना इच्छितहै ताते। अरु "योवैसबहिर्हृदयपुरुषाकाशो योवैसोऽन्तःपुरुषाकाशः सोऽयमन्तर्हृदयाकाश इति" जोप्रसिद्ध बाहर पुरुषाकाशहै, अरु जोप्रसिद्ध सो भीतर पुरुषाकाशहै, सो यह अन्तर हृदयाकाशहै, इस अन्य श्रुतिसे भी हृदयाकाशका परम 'उत्कृष्ट स्वरूप प्रसिद्ध है। तिस हृदयाकाशबिषे जो बुद्धिनामक गुहा है तिसबिषेस्थित जो ब्रह्म है सो वृत्तिसे सूक्ष्महोने करके जानिये है। अरु अन्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

था कहिये प्रतीतिविना ब्रह्म को विशिष्ट, देश, अरु कालका, संबंध नहीं है, क्योंकि ब्रह्म सर्वगत है, ताते अरु सर्व उपाधि से रहित है ताते। इस प्रकार कथन किये बुद्धिरूपा गुहाबिषे अनुस्यूत अव्याकृत नामवाले परम आकाशबिषे वा हृदय करके अवच्छिन्न "यो वेदनिहितंगुहायां परमेव्योमन्। सोऽश्नुतेसर्वान्कामान् सहब्रह्मणाविपश्चितेति" {परमआकाशबिषे गुहा मेंस्थितको जो जानता है सो सर्वज्ञ ब्रह्मरूपसेही सर्वभोगों को एककाल बिषे भोगता है} अर्थात् परमआकाश बिषे वर्त्तमान बुद्धिरूपा गुहामें स्थित ब्रह्मको जो पुरुष जानताहै सो [यहां यह अर्थ है कि अविद्या अवस्थाबिषे जो हिरण्यगर्भादिक उपाधियों बिषे भोग्यहोने करके मानेहुये सुखके भेदहैं, तिन सर्वको ब्रह्मानन्दसे अभिन्न होनेसे ब्रह्मभूत जो विद्वान्है सो इन सर्व आनन्दों को भोगता है, इसप्रकार उपचारसे बहुवचन है] सब भोगों को भोगता है॥ प्रश्न॥ क्या अस्मदादिकोंवत्। इस लोकमें। पुत्र अरु। परलोक में। स्वर्गादि भोगोंको क्रमकरके भोगताहै॥ उ०॥ तहां कहते हैं, एक क्षण बिषे आरूढ़ही भोगोंको सूर्य के प्रकाशवत् नित्य ब्रह्मस्वरूप अभिन्न, अरु जिसको सत्य अरु ज्ञानरूप कहते हैं, ऐसे एकही ज्ञानकरके ब्रह्मरूप से भोगताहै, अर्थात् ब्रह्मभूत जो विद्वान् सो ज्ञानरूप होनेसे सर्वज्ञ ब्रह्मरूप से ही सर्वभोगों को एक काल बिषे भोगताहै। परन्तु जलगत सूर्य अरु आकाशादिकोंवत् उपाधिकृत प्रतिबिंबभूत संसारीस्वरूपसे पुण्यादिक निमित्तकी अपेक्षावाले अरु चक्षुरादि करणोंकी अपेक्षावाले लोकबिषे प्रसिद्धभोगोंको क्रमकरके भोगतानहीं, किन्तु उक्तप्रकारसे सर्वज्ञ सर्वात्मा नित्य ब्रह्मात्मस्वरूपसे पुण्यादिक निमित्तोंकी अपेक्षासे रहित अरु चक्षुरादिक करणोंकी अपेक्षासे रहित सर्व भोगोंको साथही भोगताहै, अरु सर्वज्ञ ब्रह्मस्वरूपसे जो भोगताहै सो तिसका विपश्चित् कहिये पंडितपनाहै। अरु यहां मूलशब्द बिषे "इति" शब्द जो है सो मन्त्रकी समाप्तिके अर्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है । अरु सर्वही वल्ली का अर्थ "ब्रह्मविदाप्नोतिपरम्" ब्रह्मवेत्ता परब्रह्म को पावता है, । इस ब्राह्मणवाक्य से सूचन किया, सो अर्थ संक्षेपसे मन्त्रकरके व्याख्यान किया, पुनः तिसही अर्थका विस्तारसे निर्णय कर्तव्य है, एतदर्थ उक्त मन्त्र की व्याख्यान स्थानी अग्रिम ग्रंथ प्रारम्भ करते हैं । तहां मन्त्रके आदि विषे "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" सत्य ज्ञान अनन्त ब्रह्म है, । इसप्रकार कहा, सो कैसे सत्य, ज्ञान, अनन्तरूप है, तहां पूर्वोक्त अर्थका अनुवादकरतेहुये कहते हैं, अनन्तपना जो है सो देशसे कालसे वस्तुसे, इन भेदकरके तीनप्रकारकाहै । जैसे देशसे अनन्त आकाशहै तिशका देशसे परिच्छेद नहीं है, परन्तु आकाशका काल से अरु वस्तुसे अनन्तपना नहीं है, क्योंकि आकाश कार्यरूप है ताते । इसप्रकार ब्रह्मको आकाशवत् कालसे भी अन्तवान्पना नहीं है, । अर्थात् आकाश उत्पत्तिमान् कार्यरूप अरु वस्तुरूपहोने से अपनी उत्पत्तिके पूर्वकाल बिषे है नहीं ताते आकाशको काल से अन्तवान्पनाहै तैसे ब्रह्मको नहीं । क्योंकि अकार्यरूप है ताते, अरु कार्यरूप जो वस्तुहै सो कालसे परिच्छेदको पावती है, अरु ब्रह्म जो है सो अकार्यरूप है ताते कालसे भी अनन्त है । तैसेही ब्रह्मका वस्तुसे भी अनन्तपनाहै, क्योंकि सर्व वस्तुओंसे अभिन्न है ताते । अरु भिन्न जो वस्तु है सो अन्यवस्तु का अन्तहोवे है । जैसे देवदत्तके गृहसे भिन्न समीप विष्णुदत्तका गृहहै सो देवदत्तके गृहका अन्तहै क्योंकि विष्णुदत्तके गृहके स्थान में देवदत्त का गृह नहीं, अरु एकठेकाने दोवस्तुरहती नहीं, अरु जो भिन्नवस्तु हैं सो परस्पर में एक दूसरे का अन्त लखावे हैं । अरु जिसकरके जिसकी बुद्धिकी निवृत्ति होतीहै सो तिसका अन्तहै । जैसे गौपने की बुद्धि अश्वपनेकी बुद्धिसे निवृत्त होती है, याते गौपना जोहै सो अश्वपनेका । अरु अश्वपनाहै सो गौपनेका । अन्त है, इस प्रकार सो अन्तवान्ही होते हैं । अरु सो अन्त अपनेसे भिन्नवस्तु विषे देखते हैं । अरु ब्रह्मका किसीसे भी भेद है नहीं एतदर्थ ब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का वस्तुसे भी अनन्तपनाहै ॥ प्र० ॥ पुनः॥ ब्रह्मको सर्ववस्तुओं से अभिन्नपना कैसे है, ॥ उ० ॥ तहां कहते हैं, ब्रह्म सर्ववस्तुओं का कारण है ताते ब्रह्मको सर्ववस्तुओं से अभिन्नपना है। अरु जिसकरके काल अरु आकाशादिक सर्ववस्तुओंका कारणब्रह्महै, ताते सो घटादिकोंसे अभिन्न मृत्तिकावत्अरु सर्पदंड मालादिकों से अभिन्न रज्जुवत् सर्ववस्तुओं से अभिन्न है ॥ अरु जो ऐसा कहे कि कार्यकी अपेक्षा से ब्रह्मको वस्तुओंसे अन्तवान्पना होवेगा, सोकहना बने नहीं,क्योंकि कार्यरूप वस्तुको मिथ्यापनाहै ताते। अरु जिसकरके वास्तव से कारण से भिन्नकार्य है नहीं, अरु जिसकरके कारण के जानेहुये कार्यकी बुद्धि निवर्त्त होतीहै "वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येवसत्यं" "सदेवसत्यमिति" वाणीसे आरम्भ किया विकार नाममात्र है, मृत्तिकाही सत्य है। ऐसे सत्रूपही सत्य है,। इन अन्य श्रुतियोंसे। ताते आकाशादिकोंका कारण होनेसे प्रथम देशसे अनन्तब्रह्महै। अरु आकाश देशसे अनन्तहै यह सर्वको प्रसिद्धहै, तिसआकाशकायह कारण है ताते आत्माको देशसे अनन्तपना सिद्धही है। अरु जिसकरके व्यापक से व्यापक उत्पन्नहुआ ऐसा कुछ नहीं देखते। इस करके आत्माका जो देशसे अरु अकार्यरूप होने से काल से अरु तिस आत्मा से भिन्नवस्तु के अभावसे जो अनन्तपना है सो निरतिशय (सर्वसे अधिक) है अरु जिसकरके आत्माका निरतिशय अनन्तपना है इसहीसे तिसका निरतिशय सत्यपना है [इसप्रकार सृष्टिवाक्य के तात्पर्य को कहके अब पदोंका विभाग करते हैं अन्तके कार्यपर्यन्त सर्वत्र परमात्माके ग्रहणहोनेसे आकाशभावको प्राप्तहुये परमात्मासेही वायु उत्पन्नहुआ, याही से तिसके गुण आगे अनुवृत्तिहै। इसप्रकार जानना] यहां इस कहनेके वाक्यविषे जो "तिस" शब्दहै तिसकरके मूलके वाक्य से सूचनकिया ब्रह्म ग्रहण करतेहैं, अरु "इस" शब्दकरके जो ब्रह्मही ब्राह्मणभाग से सूचन किया अरु जो "सत्यंज्ञानमनन्तं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्म" सत्यज्ञान अनन्त ब्रह्म है, इस वाक्य करके अनन्तरही लखाया है सो ग्रहण करते हैं "तस्माद्वाएतस्मादात्मनआकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यःपृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। ओषधीभ्योऽन्नम्। अन्नाद्रेतः। रेतसःपुरुषः। सवाएषपुरुषोअन्नरसमयः" ६ तिस इस आत्मासे आकाश उत्पन्न हुआ, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी, पृथिवीसे ओषधियां, ओषधियोंसे अन्न, अन्नसे रेत, रेतसेपुरुष उत्पन्न हुआ, सो प्रसिद्ध यह पुरुष अन्न रसमयहै,। अर्थात् तिस इस आत्मस्वरूप ब्रह्मसे आकाश उत्पन्नहुआ सो आकाश शब्द गुणवाला है सो मूर्त्तरूप द्रव्योंको अवकाशका देनेवालाहै। तिस आकाशसें अपने स्पर्श गुणकरके अरु पूर्वके आकाशके शब्दगुण करके इसप्रकार उभयगुणवाला वायु उत्पन्नहुआ। अरु तिसवायु से अपनेरूप गुणकरके अरु पूर्वके शब्द स्पर्श गुणकरकेयुक्त तीन गुणवाला अग्नि उत्पन्नहुआ।अरु अग्निसे अपने रस गुणकरके अरु पूर्व के ,शब्द, स्पर्श, रूप, इन तीन गुणकरके युक्त चारगुण वाले जल उत्पन्नहुये।अरु तिसजलसे अपने गन्धगुणकरके अरु पूर्व के ,शब्द, स्पर्श, रूप, रस, इन चारगुणकरके युक्त पांचगुण वाली पृथिवी उत्पन्न हुई । पृथिवी से ओषधियां, ओषधियों से अन्न, अन्नसे रेत कहिये वीर्य, अरु वीर्य से मस्तक अरु हस्त पादादिक अवयव आकृतिवाला पुरुष उत्पन्नहुआ [पञ्चकोश के आरम्भ का तात्पर्य कहते हैं] सो प्रसिद्धयह पुरुष अन्नरसमय है, अर्थात् अन्नके रसका विकार है ॥ जिस करके सर्व अङ्गों से उत्पन्नहुआ अरु पुरुषके आकार से सम्भव को पाया जो तेज सो रेत अरु वीर्य कहते हैं । ताते जो जन्मता है सो भी तैसा पुरुषाकार वाला होता है,क्योंकि सर्वजातियों बिषे उत्पन्न होने वाले शरीरको पिताके आकारसे होनेका नियमको देखते हैं ताते अरु सर्व शरीरोंकोअन्नके रसकी विकारताके अरु ब्रह्मके वंशबिषे उत्पत्ति की तुल्यता के हुये, यहां पुरुष (मनुष्य शरीर) ही किस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारणसे ग्रहण करते हौ, तहां कहते हैं, प्रधान होनेसे। अर्थात् विधि निषेधके विवेकके सामर्थ्यकरके युक्तहै ताते यहां पुरुषही ग्रहण करते हैं॥ प्र०॥पुनः पुरुषका प्रधानपना क्याहै॥ उ०॥तहां कहते हैं, कर्म अरु ज्ञानका अधिकार पुरुष शरीरबिषेही है, क्योंकि तिसको समर्थता है ताते, अरु अर्थ (कामना) वालाहै ताते अरु जिसकरके अर्थीविद्वान् अरु समर्थहुआ पुरुषकर्मअरुज्ञानबिषेअधिकारकोपावताहै,इसकरके तिसकी प्रधानताहै अरु पुरुषपनेबिषे (अर्थात् ब्राह्मणादि जातिवाले मनुष्यादि शरीरबिषे) आत्मज्ञान के अतिशयके देखावनेसे, अतिशयकरके प्रकटहै। अरु सो पुरुष विज्ञानकरके अत्यन्त सम्पन्न हुआ ज्ञात वस्तुको कहताहै, ज्ञात वस्तुको देखता है कल्प होनेवाले कार्यको जानता है, अरु लोक अलोकको जानताहै, मरने योग्य (शरीर) से अमृत (अक्षयपद) प्राप्तहोनेकी इच्छा करताहै। इसप्रकार (प्रधानताकरके) सम्पन्न हैअरु "पशूनामशनापिपासे एवाभिज्ञानमित्यादि" अन्य पशुओं के क्षुधा तृषाकाही ज्ञानहै,। इत्यादिरूप ऐतरेयकश्रुति वाक्यके देखनेसे॥ सोई पुरुष यहां विद्यासे अत्यंत आंतरब्रह्मको प्राप्त होनेकी इच्छा करताहै। अरु जिसकी अनात्मरूप बाह्य आकारों के भेदोंबिषे किसीभी आश्रयके अर्थ आत्माकी भावनाको प्राप्त हुई जो बुद्धि सो तत्काल अत्यन्त आन्तर प्रत्यगात्माको विषय करनेवाली अरु निराश्रय करने को अशक्य हैं, याते देखे हुये शरीररूप आत्माकी तुल्यता की कल्पना से शाखा चन्द्र के दृष्टान्तवत् भीतर प्रवेश करावते हुये कहते हैं "तस्येदमेव शिरः, अयंदक्षिणः पक्षः, अयमुत्तरः पक्षः, अयमात्मा, इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति" (तिसका यहही शिर है, यह दक्षिण पक्ष है, यह उत्तर पक्ष है, यह आत्माहै, यह पुच्छ प्रतिष्ठा है, तिसही बिषे यह श्लोक होताहै) अर्थात् तिस इस अन्न रसमय पुरुषका यहही प्रसिद्ध शिर है। शिरसे रहित प्राणमयादि (कोशों) बिषे शिरभाव के (श्रुति करके) देखने से यहां (अन्न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मयकोशविषे । भी तिसका प्रसंग मत हो, इस अभिप्रायसे यहां यहही शिर है, ऐसा कहा है । इसप्रकार इसके पक्षादिक अंगोंविषे भी योजना करनी । अरु यह पूर्व दिशा के सम्मुख हुये पुरुषका जो दक्षिण बाहु है सो दक्षिण दिशाकी ओर होताहै ताते सो यहदक्षिणपक्षहै । अरु यह वामबाहु । जोपूर्वाभिमुखहोनेसे उत्तर दिशा की ओर होताहै । सो यह उत्तरपक्षहै अरु यह देहका मध्य भाग अन्य अंगोंका । आश्रय होने से । आत्मा है " मध्यं ह्यषामङ्गानामात्मेतिश्रुतेः " यह अंगोंका मध्य आत्मा है, । इस श्रुति करके । अरु यह नाभि के नीचे जो अधो अंग है सो पुच्छ प्रतिष्ठा कहिये आधार है । जिसकरके शरीर स्थितहोता है ऐसे जे पाद तिसको प्रतिष्ठा कहते हैं । अरु जैसे गौका पुच्छहै तैसे यह नीचे के आश्रयकी तुल्यतासे पुच्छवत् पुच्छ कहते हैं । [पक्ष अरु पुच्छशब्दके उच्चारणसे पक्षिके आकारकी कल्पनाको देखावेहैं। आगे तिसकी कल्पनासे बाह्य विषयकी आसक्तिके निषेधकी हेतु बुद्धिके आत्मा विषे स्थिर करने के अर्थ है, उपासनाका विधान यहां कहनेको इच्छित नहीं] इस कथनकरके अग्रिम कहने के प्राणमयादि कोशोंके, सांचे विषे डालनेसे प्रगलितहुये ताम्रादि धातुओंकी प्रतिमावत्, रूपकपनेकी सिद्धिहोवे है । अर्थात् जिस आकारका सांचाहोताहै तिसमें पूर्णतासे तिसहीके आकार धातु की प्रतिमाहोती है परन्तु सो प्रतिमा सांचे के अन्तर तिसके पूर्णाकार हुई भी सांचे अरु तिसके धर्मादिकोंसे पृथक्ही होतीहै, तैसे अन्नमयकेभीतर प्राणमय तिसकेभीतर मनोमय तिसके भीतर विज्ञानमय तिसके भीतर आनन्दमय, इसप्रकार जानना । तिसही ब्राह्मणवाक्य करके उक्त अर्थाविषे अन्नमयके स्वरूप का बोधक यह श्लोक कहिये मन्त्र होताहै ॥

इति द्वितीयाध्यायान्तरप्रथमोऽनुवाकः १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायन्ते। याः काश्च पृथिवीꣳ श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदपि यन्त्यन्ततः। अन्नꣳ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वौषधमुच्यते। सर्वं वै तेऽन्नमाप्नुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासते। अन्नꣳ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वौषधमुच्यते। अन्नाद्भूतानि जायन्ते। जातान्यन्नेनवर्द्धन्ते। अद्यतेऽत्ति च भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यत इति॥ तस्माद्वा एतस्मादन्नरसमयात् अन्योऽन्तरात्मा प्राणमयः। तेनैष पूर्णः। सवाएष पुरुषविधएव। तस्य पुरुष विधताम् अन्वयंपुरुषविधः। तस्य प्राण एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकाश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति २६॥ इति द्वितीयोऽनुवाकः॥

अथ द्वितीयोऽनुवाकः॥

हे सौम्य! [यहां यह रहस्यहै कि उपक्रम अरु उपसंहारकी ब्रह्म अरु आत्माकी एकताके प्रतिपादनसेही, परिसमाप्तिसे ग्रंथ के मध्यमें उपासनाकी विधिविषे तात्पर्यके हुये वाक्य भेदके प्रसंगसे, अरु इसही से "एवाङ्गेस्तुतिपरार्थत्वादिति" अन्त बिषे स्तुतिपर अर्थके होने से,। इस न्यायकरके जैसे प्रयाजादि फल का श्रवण अर्थवादहै,तैसे अन्नमयादिकोंके ज्ञानके फलका श्रवण भी अर्थवादहीहै, क्योंकि तिस तिस कोशबिषे बुद्धिके स्थिर करने को पूर्व पूर्व कोशगत बुद्धिके विलयसे आत्माके निश्चयका साधन होताहै ताते]। अर्थात् अन्नमयादि कोशोंके श्रवणका फल केवल अर्थवादमात्रही है तथापि कोशों का श्रवण कोशातीत आत्माके निश्चयमें साधन है क्योंकि प्रथम अन्नमयके श्रवणसे बुद्धि तिसबिषे स्थिरताकोपावती है, पुनः प्राणमय जो अन्नमय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का अन्तरात्माहै तिसके श्रवणसेअन्नमयसे हटके बुद्धि प्राणमय में स्थितिको पावती है, इसप्रकार उत्तरोत्तर कोशों के श्रवण से बुद्धि पूर्व पूर्व कोशों के विचार को त्यागती है, इसप्रकार जब बुद्धि अन्तके आनन्दमयकोशके श्रवणसे तिसविषे स्थिरता पाय पश्चात् उस आनन्दमयके आधार आश्रय ब्रह्मसे अभिन्न सर्वकोशातीत आत्मा को श्रवण करती है तब आनन्दमय कोश से हट अपने प्रत्यगात्मा को यथार्थ निश्चयकर तिसविषेअचल स्थिरताको पावती हैं, ताते पंचकोशोंका श्रवण मनन विचार अपनेआप पंचकोशातीत आत्माके यथार्थ निश्चयका साधनहै। रसादि सप्तधातु भावसे परिणामको प्राप्तहुये " अन्नाद्वैप्रजाः प्रजायन्ते, याः काश्च पृथिवीꣳश्रिताः, अथो अन्नेनैवजीवन्ति, अथैनदपि यन्त्यन्ततः, अन्नꣳहिभूतानां ज्येष्ठम्, तस्मात्सर्वौषधमुच्यते सर्ववैतेऽन्नमाप्नुवन्ति, येऽन्नंब्रह्मोपासते " (अन्नसे प्रसिद्ध जेकोईपृथिवीको आश्रय करनेवाली प्रजाउत्पन्नहोतीहै, अन्न सेही जीवे है, पश्चात् अन्नविषे अन्नमेंही लीन होवेहै, ताते अन्न भूतोंके मध्य ज्येष्ठ है, ताते सर्वका औषध कहते हैं, जो अन्नरूप ब्रह्मको उपासते हैं, सो निश्चय करके सर्व अन्न पावते हैं, अर्थात् अन्नसे प्रसिद्ध जे कोई विलक्षण पृथिवी को आश्रय करनेवाली स्थावर जंगमरूप प्रजा है सो सर्व उत्पन्न होती है, अरु उत्पन्नहुई प्रजा अन्नसेही जीवेहै, पीछे अन्तविषे (अर्थात् आयुकी समाप्ति विषे इस अन्नरूपा पृथिवी मेंही लीन होवे हैं, क्योंकि जिसकरके अन्न जो है सो भूत कहिये प्राणधारियों के मध्य ज्येष्ठ है, अर्थात् प्रथम उत्पन्न हुआ है, अरु जिसकरके अन्त, अन्नमयादिक अन्यभूतों का कारणहै इसही करके सर्व प्रजा अन्नसे उत्पन्नहोती है, अरु अन्नसेहीजीवे है, औ अन्नविषे लय होवे है। जिसकरके ऐसे है ताते अन्न जो है सो सर्व प्राणियोंके देहके दाहकी निवृत्ति करनेवाला औषध कहते हैं ॥ अब अन्नरूप ब्रह्म के जाननेवाले पुरुषके अर्थ फल कहते हैं। जो पुरुष उक्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकारके अन्नरूप ब्रह्मको उपासते हैं सो निश्चय करके सर्व अन्नके समूह को पावते हैं। कैसे कि जिसकरके मैं ब्रह्मसे उपजा हौं अरु अन्नरूप हौं। अन्नसेही जीवताहौं। अरु अन्न विषेही लय होऊँगा, ताते अन्न ब्रह्म है, इसप्रकार जानते हैं॥ पुनः अन्नरूप आत्माकी जो उपासनाहै सो सर्व अन्नकी प्राप्ति रूप फलवाली कहते हैं। तहां "अन्नंवैप्राणिभूतानां ज्येष्ठम्, तस्मात्सर्वौषधमुच्यते,अन्नाद्भूतानिजायन्ते,जातान्यन्नेनवर्द्धन्ते, अद्यतेऽत्ति च भूतानि, तस्मादन्नं तदुच्यत इति"। "जाते अन्न भूतोंके मध्यज्येष्ठहै, ताते सर्वका औषध कहते हैं, अन्नसे भूत उपजते हैं, उपजेहुये अन्नसे वृद्धिको प्राप्तहोते हैं, भक्षण करते हैं अरु भक्षण करे है, ताते सो अन्न कहते हैं, अर्थात् जिस करके अन्न जो है सो सर्व भूतोंके मध्य बड़ाहै, क्योंकि प्रथम उपजाहै, ताते उसको सर्वका औषध कहते हैं, अरु तिसही से सर्व अन्नरूप आत्माके उपासकोंको सर्व अन्नकी प्राप्तिबने है, अरु अन्नसे भूत प्राणी उपजते हैं, अरु उपजेहुये अन्नसेही वृद्धिको पावते हैं,। यह पुनः जो कथनहै सो प्रसंगकी समाप्तिके अर्थ है॥ अब अन्न शब्द का अर्थ कहते हैं, जिसकरके जो अन्नमय स्थूलशरीर भूतोंकरके भक्षण कियाजाताहै, अरु आप भूतोंको भक्षण करताहै, ताते सो अन्न है ऐसा कहते हैं। अरु यहां मूल बिषे जो "इति" शब्द है सो प्रथम अन्नमय कोशके वर्णनकी परिसमाप्तिके अर्थ है॥ "हे सौम्य! भोजन किये अन्नसे पुरुषके उदराबिषे शुक्र अरु स्त्री के उदराबिषे शोणित उत्पन्न होवे है, सो शुक्र शोणित जब स्त्रीके गर्भ स्थानबिषे जन्म लेनहार जीवों के प्रारब्ध संस्कार से भोगालय स्थूल शरीर की उत्पत्ति के निमित्त से एकत्र होते हैं तब उस गर्भस्थान बिषे एक बुदबुद निर्माणहोय पश्चात् शिर हस्तपादादि अवयवों सहित यह शरीर निर्माण होताहै पुनः सो माताके उदर में अन्न के रसकरके वृद्धि को पावता है अरु गर्भ से बाहर आये पश्चात्भी दुग्धादि अन्नके रस वा साक्षात्अन्नसे वृद्धिको पावता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सता जीवताहै अरु आयुके समाप्तहुये अन्तविषे अन्नरूपा पृथिवी में लयहोता है वा सिंहादि मांस आहारी जीवों का अन्न होता है, ताते इस अन्नमय स्थूलशरीर को अन्नमय कोश कहते हैं, अरु शिर हस्त पादादिक अवयवों सहित जो प्रत्यक्ष भासता है सोई इसका स्वरूप है, अरु जीवोंको अपने शुभाशुभ कर्मों के सुखदुःखरूपफलके भोगने का स्थान भोगालय है, अरु जायते, अस्ति, इत्यादि षट् भाव विकार इसके धर्म हैं, ऐसा जो अन्नमय कोश अन्नादि भूतों का कार्य अरु जड़ होने से यह आत्मानहीं, आत्मा जो है सो „ घटद्रष्टा घटाद्भिन्न„ इस न्याय से इस अन्नमय कोशका द्रष्टा साक्षी अन्नमयसे पृथक्ही है, अरु इस अन्नमय का द्रष्टापना अपने विषे पायाजाता है ताते इस अन्नमयकेद्रष्टा चैतन्यसाक्षी आत्मा अपुन अन्नमयकोशनहोयके इससे पृथक्ही है, इसप्रकार विचारके अपने आपको अन्नमय से पृथक्ही निश्चय अनुभव करना॥ अब अन्नमयसे आदिलेकेआनन्दमय कोश पर्यन्त जो आत्मा हैं तिनसे अत्यन्त आन्तर जो ब्रह्महै, तिसको अनेक तुषाके दूरकरने करके तंदुलवत् वा अनेक मुंजको दूरकरके ईषिकावत् विद्यासे अविद्याकृतपंचकोशोंके दूर करनेकरके प्रत्यगात्मा रूपसे देखावने को इच्छताहुआ शास्त्र कहने का आरंभ करता है॥ " तस्माद्वाएतस्मादन्नरसमयात् अन्योऽन्तरात्मा प्राणमयः, तेनैषपूर्णः,सवाएषपुरुषविधएव " तिस इस अन्नरसमय से अन्य अन्तरआत्मा प्राणमयहै, तिसकरके यह पूर्णहै, सो प्रसिद्ध पुरुषके आकार वालाही है, अर्थात् तिस इस कथन किये अन्नरसमय पिंडसे अन्य (भीतर) पिंडवत्ही आत्मापने करके मिथ्या कल्पित आत्मा प्राणमय है, अर्थात् प्राणजो वायु तिसरूप है। तिस प्राणमय करके . वायुसे पूर्ण लोहकारके गृहकी धमनी चर्मवत्, यह अन्नरसमय आत्मापूर्ण है। सो प्रसिद्ध यह प्राणमयरूपआत्मा शिर अरु पक्ष आदिक अंगों से पुरुषके आकारवालाही है॥ क्या सो आपही पुरुषाकारहै,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तहां नहीं, ऐसा कहते हैं, प्रथम अन्नमयरूप आत्मा को पुरुष के आकार करके युक्तपना प्रसिद्ध है "तस्य पुरुष विधताम् अन्वयं पुरुषविधः, तस्य प्राण एवशिरः, व्यानो दक्षिणः पक्षः अपान उत्तरः पक्षः, आकाश आत्मा, पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा, तदप्येष श्लोको भवति" (तिसकी पुरुषाकारतासे पीछे यह पुरुष के आकारवाला है, तिसका प्राणही शिरहै, व्यान दक्षिण पक्ष है, अपान उत्तर पक्ष है, आकाश आत्मा है, पृथिवी पुच्छरूप प्रतिष्ठा है, तिसही बिषे यह श्लोक होता है) अर्थात् तिस अन्न रसमयकी पुरुषाकारताकेपीछे सांचेविषे डालेहुये प्रगलितताम्रादि धातुके प्रतिमावत् यह प्राणमय (अन्नमय) पुरुषके आकार वालाहै, स्वरूपसे ही नहीं। इसप्रकार पूर्व पूर्वकोशकी पुरुषाकारताकेपीछे पिछलापिछलाकोश पुरुषके आकारवाला होवे है, अरु पूर्वपूर्वकोश उत्तरउत्तरकोश करके पूर्ण है॥ इसप्राणमयको पुरुषकी आकारता कैसे है तहां कहते हैं,॥ तिसप्राणमय कोशरूप पक्षीका स्वयं प्राणही शिरहै, अर्थात् (" मुख नाशिकाभ्यां स्वयं प्राणः प्रतिष्ठते" इत्यादि अन्यश्रुतियोंके प्रमाणसे) वायुके विकार प्राणमयकोशका मुख नाशिकाके मार्गसे बाह्य निकलाहुआ वृत्ति विशेषरूप जो प्राणहै सो शिरवत् कल्पना कियाहै, क्योंकि श्रुति विषे कथन कियाहै ताते। इसप्रकार सर्व ठिकाने श्रुतिके कहने प्रमाणही पक्षादिकोंकी कल्पनाहै॥ अरु तिस प्राणमयका व्यान नामक प्राण वृत्ति विशेषरूप दक्षिणपक्षहै। अरु अपान नामक प्राण वृत्ति विशेष उसका उत्तरपक्ष है। अरु आकाश आत्मा है, अर्थात् अन्तराकाशमें समान नामवाला वृत्ति विशेषरूप प्राण है सो उसका आत्मा (मध्य शरीर) वत् आत्मा है, क्योंकि तिस समान को प्राणकी अन्य वृत्तियोंबिषे श्रेष्ठता है अरु नाभि के आकाश मध्यबिषे स्थित है ताते, अरु अन्य अन्तबिषे स्थित प्राणकी वृत्तियोंकी अपेक्षासे सो समान नामवाला वायु आत्मा है "मध्येह्येषामंगानामात्मेति" इन अंगोंका मध्य आत्मा है,।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस श्रुतिविषे मध्यभागमें स्थित वस्तुकाआत्मापनाप्रसिद्ध है॥ अरु इस प्राणमयकी पृथिवी पुच्छरूप प्रतिष्ठा (आधार) है। अरु अध्यात्मरूप प्राणका पृथिवीरूप देवता धारण करनेवाला है, क्योंकि पृथिवी को स्थितिकी हेतुताहै ताते॥ अरु "सैषापुरुष-स्यापानमवष्टभ्येति" सो यह पृथिवी पुरुषके अपानको धारण करके स्थित है,। यह अन्य श्रुतिका भी प्रमाणहै ताते। अन्यथा शरीरका उदाननामक प्राणवृत्ति से। जो ऊर्द्ध उत्क्रामण में मुख्य है,। ऊर्द्ध गमन होवेगा या भारी होने से पतन होवेगा, तस्मात् प्राणमय कोशरूप आत्माकी पृथिवी देवता पुच्छरूप प्रतिष्ठा है। अरु तिसही अर्थविषे अर्थात् प्राणमयआत्माके विषयमें यहश्लोक (मन्त्र) प्रमाणहै॥ । हे सौम्य! अन्नमय कोशके अन्तर वायुरूप जो प्राणमयकोशहै सो घटान्तर वायुवत् अन्नमयमें तिसहीके आकार पूर्णतासे स्थित है, अरु प्राणादिपंच प्राण अरु वागादि पंचज्ञानेन्द्रियांमिलके प्राणमयकोश हुआहै अरुप्राणकोक्रियाशक्ति प्रधान होनेसेवागादि कर्मेंद्रियोंविषे जोक्रियाशक्ति है सो प्राणकीहोनेसे कर्मेन्द्रियों की भी प्राणमय में योजनाहै, अरु प्राणमय कोश को अन्नमय से सूक्ष्म अरु तिसके अन्तर अरु तिसका धारकपना-होने से अन्नमय का आत्मा कहते हैं, अरु मुखनासिका के द्वारसे बाहर जाना अन्तर आवना लेना देना कूदना उछलना पसरना संकोचना अन्नरस को रोम रोम प्रति सर्व नाड़ियों में प्रासकरना मलमूत्रका त्यागना, इत्यादि इसकी क्रियाहै, चंचलता स्वभावहै, क्षुधा पिपासा इसकीऊर्मी (धर्महै) जड़ता इसमेंदोषहैं। ऐसा जो प्राणमयकोशहै सो आत्मानहीं, इस प्राणमयका प्रकाशक ज्ञाता साक्षी आत्मा है,सो ,घट द्रष्टा घटाद्भिन्नः, ज्ञेयसेज्ञाता पृथक् अरु चैतन्यहोताहै, इसन्यायसे प्राणमयकेज्ञाता चैतन्य आत्मा अपुन प्राणमय न होयके प्राणमयसे पृथक् तिसका साक्षी प्रत्यगात्मा है, अपुन प्राणमय नहीं॥ इसप्रकार प्राणमय से पृथक् अपने आपको यथार्थअनुभवकरनिश्चयकरना॥ इतिद्वितीयोऽनुवाकः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणं देवा अनुप्राणान्ति। मनुष्याःपशवश्चये। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्मात्सर्वायुषमुच्यते। सर्वमेव त आयुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासते। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्मात्सर्वायुषमुच्यत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य॥ तस्माद्वा एतस्मात्प्राणमयात् अन्योऽन्तरात्मामनोमयः। ते नैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यजुरेव शिरः। ऋग् दक्षिणः पक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छंप्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥ २७॥ इति तृतीयोऽनुवाकः॥

अथ तृतीयोऽनुवाकः॥

हे सौम्य! [आत्मशब्द के अमुख्य अर्थताके प्रसंग से, अरु प्रसंगविषे प्राप्त अर्थ के ग्राहक, एतत्, शब्दके विरोधसे। एतदर्थ सर्व कोशों के अध्यासका अधिष्ठानरूप चिदात्माही यहां आत्मशब्दकरके कथनकरने को इच्छित है, इस तात्पर्य को कहते हैं। यहां अर्थ से "इति" इस,। इस शब्दका आत्मशब्दके सामर्थ्य से अरु कल्पित को अधिष्ठानपने के असंभव से यह अर्थ है] "प्राणं देवा अनुप्राणान्ति, मनुष्याःपशवश्चये, प्राणोहि भूतानामायुः, तस्मात्सर्वायुषमुच्यते, सर्वमेव त आयुर्यन्ति, ये प्राण ब्रह्मउपासते" (प्राण के पीछे देवा प्राणन को करते हैं, जे मनुष्य अरु पशुहैं, जाते प्राणभूतोंका आयुहै, ताते सर्वका आयु कहते हैं, प्राणब्रह्मको जो उपासते हैं सो सर्व ही आयुको पावते हैं) अर्थात् जिसकरके प्राणके पीछे देवता प्राणन, जीवन, को करते हैं, अर्थात् अग्न्यादिक जे देवता हैं सो प्राणन कहिये जीवन क्रिया की शक्ति वाले वायुरूप प्राणके पीछे तिसके स्वरूप भूतहुये प्राणनरूप कर्म को करते हैं, अर्थात् प्राणन रूप क्रियासे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्रियावान् होते हैं, अथवा अध्यात्म रूप विकार के अधिकार से देव जे इन्द्रियां सो मुख्य प्राणके पीछे चेष्टा करते हैं। तैसे जो मनुष्य अरु पशु हैं सो प्राणन रूप क्रियासेही चेष्टावाले होतेहैं। याते परिच्छिन्न अन्नमयरूप आत्मासेही प्राणी आत्मावाले नहीं होते,किन्तु तिस अन्नमय के अन्तर्गत साधारणरूपही सर्व पिंड-विषे व्यापी प्राणमय सेभी मनुष्यादिकप्राणी आत्मावाले होतेहैं। इसप्रकार पूर्व पूर्व विषे व्यापी उत्तर उत्तर सूक्ष्म रूप आकाशादिक भूतों से आरम्भ किये अविद्यारचित मनोमय से आदिलेके आनन्दमय पर्यन्त आत्मा से सर्व प्राणी आत्मा वाले होते हैं। तैसे आकाशादिकों के कारण नित्य अविकारी सर्वगत सत्यज्ञान अनन्त रूप पंचकोशातीत सर्व स्वरूप स्वाभाविक आत्मा से भी सर्व प्राणी आत्मा वाले होते हैं। अरु जिसकरके सो परमार्थ से सर्वका आत्मा है तिसकरकेही यह कथन बनता है। यह अर्थ से कथन किया होता है॥ प्रश्न॥ देव जो है सो प्राणके पीछे जीवन रूप क्रियाको कहते हैं,इसप्रकार कहा तिसकरके क्या सिद्धहुआ॥ उ०॥ तहां कहते हैं, जिसकरके प्राण सर्व प्राणीमात्रका जीवनहै "यावच्चास्मिञ्छरीरे प्राणं वसति तावदायुरिति" यावत्इसशरीर विषे प्राणवसता है तावत् आयु है,। इसअन्य श्रुतिके वाक्य से ताते प्राणको सर्वकाआयु कहते हैं।अरुजिसकरके लोकविषेप्राणके गमनहुये मरणकी प्रसिद्धि प्रख्यातहै ताते प्राणको सर्वका आयुपना प्रसिद्धही है,याते इस बाह्य असाधारण अन्नमयरूप आत्मा से निकलके तिसविषे आत्मबुद्धिको त्यागके इसके भीतर साधारण प्राणमय आत्मरूप ब्रह्मको "योऽहमस्मिप्राणः सर्वं भूतानामात्मायुजीवनहेतुत्वादिति" मैं प्राण हौं अरु सर्व भूतों का आत्मा जीवनका हेतु होने से आयुहौं,। इसप्रकार जो उपासते हैं सो इस लोक विषे सर्वही आयुको पावते हैं, अर्थात् आयुकेक्षय से पूर्व अपमृत्युसे मरतेनहीं "सर्वमायुरिति" सर्व आयुको पावत हैं,। इस श्रुतिवाक्यकी प्रसिद्धिसे वे सौ (१००) वर्ष पर्यन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो जीवते हैं, यह युक्तहै। तहां क्या कारण है कि "प्राणोहि भूतानामायुः, तस्मात्सर्वायुषमुच्यत इति,तस्यैष एव शारीर आत्मा, यः पूर्वस्य, तस्माद्वा एतस्मात्प्राणमयात्। अन्योऽन्तरात्मा मनोमयः, तेनैष पूर्णः, स वा एष पुरुषविधएव, तस्यपुरुष विधताम्, अन्वयं पुरुषविधः"। (प्राणही भूतोंका आयुहै ताते सर्वायुष कहते हैं, यह ही तिस पूर्वके शरीराबिषे होनेवाला आत्माहै, तिस प्रसिद्ध इस प्राणमयसे अन्य अन्तर आत्मा मनोमय है, तिसकरके यह पूर्ण है, सो प्रसिद्ध पुरुषके आकारवाला है, तिसकी पुरुषाकारता के पीछे पुरुषके आकारवालाहै) अर्थात् जिसकरके प्राण भूतोंका आयुहै, तिसकरके इसको सर्वका आयु कहते हैं,। जो जिसगुणवाले ब्रह्मको उपासता है सो तिस गुणवालाहोता है। यहां विद्या के फलकी प्राप्तिके हेतु अर्थ पुनः कथन है। जो यह प्राणमय है यह ही तिस पूर्वके अन्नमयका शरीराबिषे होनेवाला आत्मा है॥ तिस प्रसिद्ध इस प्राणमयसे अन्य अन्तरात्मा मनोमयहै, अर्थात् संल्कप विकल्पमय वृत्तिरूप अन्तःकरण स्वरूप तो मनोमयहै सो यह (प्राणमयसे सूक्ष्महोने करके) प्राणमयके अन्तर आत्माहै। तिस मनोमय करके यह प्राणमय पूर्णहै। सो प्रसिद्ध यह मनोमय पुरुषके आकारवालाहै। सो तिस प्राणमयकी पुरुषाकारता के पीछे यह मनोमय पुरुषके आकारवालाहै (स्वरूपसेही नहीं) "तस्य यजुरेव शिरः, ऋग् दक्षिणः पक्षः, सामोत्तरःपक्षः, आदेश आत्मा, अथर्वांगिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा, तदप्येषश्लोकोभवति"। (तिसका यजुर्वेदही शिरहै, ऋग्वेद दक्षिण पक्षहै, सामवेद उत्तरपक्षहै, आदेश आत्माहै, अथर्वांगिरस पुच्छप्रतिष्ठा है, तिसही विषे यह श्लोक होताहै) अर्थात् तिस मनोमयका यजुर्वेदही शिर है, अरु ऋग्वेद दक्षिणपक्षहै, सामवेद उत्तरपक्षहै, आदेश कहिये ब्राह्मणभाग आत्माहै, अरु अथर्वांगिरस कहिये अथर्व वेद पुच्छरूप प्रतिष्ठाहै। अनियमित अक्षरोंकरके युक्त अन्तके पदवाला मन्त्र विशेष यजुर् कहते हैं, तिसके समान जातिवाले मन्त्रोंका वाची

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यजुःशब्दहै, तिसको मनोमयका शिरपनाहै, प्रधान होनेसे। अरु जिसकरके स्वाहाकारादिक यजुर्वेदके मन्त्रोंसे हवी देते हैं, ताते यागादिकों बिषे उपकार करनेसे तिसका प्रधानपना है। अथवा सर्वठिकाने जो शिर आदिकों की कल्पना है सो कथनमात्र है। [यहां "यजुः" शब्दसे बाह्यका यजुर्वेद कहते हैं। तिस यजुर्वेदको अन्तर के मनोमय के प्रति शिरपना कैसे होवेगा, यह आशंका करके कहते हैं। यहां यह अर्थहै कि यद्यपि यजुः शब्दबाह्य के शब्दोंके समूह बिषे वर्त्तता है, तथापि श्रुतिको अतिशय शंका करने के योग्य न होनेसे तिसके प्रमाण भावसे विशिष्ट मनकी वृत्ति यजुके संकेतकी विषय भूत, अरु "यजुर्वेदमधीमहे" यजुर्वेद को हम पढ़ते हैं, । अरु इस क्रमवाले अक्षर यजुर्वेदपने करके अध्ययन करने को योग्य है, इस संकल्परूप को। मनोमय का शिर। ग्रहण करने योग्य है] यहां मनकी ,स्थान, प्रयत्न,नाद, अरु स्वरकरके पूर्णपद अरु वाक्य को विषय करनेवाली तिन के संकल्परूप तिनकी भावनावाली जो वृत्तिहै, सो श्रोत्रादि करणद्वारा यजुर्वेद के संकेतसे विशिष्टहुई ,यजुर्, इसप्रकार कहते हैं। ऐसे ऋग्है, अरु ऐसे सामहै। इसप्रकार मन्त्रोंको मनोवृत्तिरूप ताके होनेसे मनकी वृत्तिही आवर्त्तन करिये है, याते मानस जप संभवे है, अन्यथा विषयरूप होनेसे घटादिकोंवत् मन्त्र आवृत्ति (वारंवार जप) करने को शक्यनहीं है, याते मानसे जप संभवे नहीं, औ मन्त्रकी आवृत्ति संभवे है॥ जो कहे कि बहुलताकरके कर्मोंबिषे अक्षरोंकी स्मृतिकी आवृत्ति से मन्त्रकी आवृत्ति होती है सोकथनबनेनहीं क्योंकि मुख्य अर्थका असंभवहै ताते, "त्रिःप्रथमामन्वाह त्रिरुत्तरामिति" तीनवार प्रथमकी ऋचाको पीछेकहै हैं, तीनवार पिछली ऋचाको पीछेकहैहै,। इसप्रकार ऋचाकीआवृत्ति सुनीजातीहै। तहांऋचाकी विषयताकेहुये तिसकी स्मृतिकी आवृत्तिसे मन्त्रकी आवृत्तिके कियेहुये "त्रिःप्रथमामन्वाहेति" तीनवार प्रथमकी ऋचाको पीछे कहे हैं, इसप्रकार विधान किया जो ऋचा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की आवृत्तिरूप मुख्यार्थ तिसका परित्याग होवेगा। [मन्त्रों की मनोवृत्तिरूप ताको कहके अब मनोवृत्तियों की सदा चेतन से व्याप्तहोने करकेही सिद्धिसे चेतनरूप ताको कहते हैं] ताते मनोवृत्तिरूप उपाधि करके परिच्छिन्न मनोवृत्ति बिषे स्थित आदि अन्तसे रहित आत्म चैतन्य यजुःशब्दका वाच्य है, अरु आत्माके विज्ञान रूप मन्त्र हैं। ताते इसप्रकार होने से वेदोंको नित्यपने की प्राप्ति होती है, अन्यथा विषयरूप ताके हुये रूपादिकोंवत् अनित्यता होवेगी सो युक्तनहीं। अरु "सर्वे वेदा यत्रैकं भवन्ति स मानसीन आत्मेति" जहां सर्ववेद एकत्र होते हैं सो मनबिषे स्थित आत्मा है,। यह श्रुति नित्यरूप आत्मासे ऋगादि वेदोंकी एकताको कहतीहुई तिनकी नित्यताबिषे अनुकूल होवेगी, अरु "ऋचोऽक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन्देवा अधिविश्वेनिषेदुरिति" विश्व के आधार अक्षररूप इस परमाकाश बिषे विधि निषेधमय ऋचारूप वेद तादात्म्य करकेस्थितहै, यह मन्त्रका वर्णन नित्यरूप आत्मा से तिनकी एकताको दिखाव हैं। अरु यहां आदेशनाम ब्राह्मणभागका है, सो कर्त्तव्यके भेदका उपदेश करता है, ताते उसको आदेश कहते हैं। अरु अथर्वांगिरा ऋषिने देखे जो मन्त्र अरु ब्राह्मण तिनको आंगिरस कहते हैं। सो शान्तिक अरु पौष्टिक आदि प्रतिष्ठाके हेतु कर्मकी प्रधानतासे पुच्छरूप प्रतिष्ठाहै। तिसही अर्थबिषे अर्थात् मनोमय आत्माका प्रकाशक, यह श्लोक कहिये मन्त्र [प्रमाण] होता है॥ [हे सोम्य! जैसे घटके भीतर तिसही के आकार पूर्णतासे व्याप्त अरु घट के धर्मादिकों से पृथक् वायु रहता है, अरु तिस वायु से सूक्ष्म होने से वायुके भीतर अरु घटान्तर वायुकेही आकार अरु वायुके धर्मादिकों से रहित पूर्णता से आकाश होता है, तैसेही इस अन्नमय कोश के भीतर तिससे सूक्ष्म अरु नख शिख पर्यन्त तिसही के आकार अरु तिसके धर्मादिकों से रहित वायुरूप प्राणमय कोश है, तिस प्राणमय से सूक्ष्म होनेसे प्राणमयके भीतर अरु नख शिख पर्यन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पूर्णता से व्याप्त आकाश भूतके वा पंचभूतों के समष्टि रजोगुणात्मक मनोमय कोश है "मनो वै अन्तराकाशः" तहां आकाशके रजोगुणके श्रोत्र, वायुके रजोगुणकीत्वक्, अग्निके रजोगुण की चक्षु, जल के रजोगुणकी रसना, पृथिवी के रजोगुणकी घ्राण, इन पांचों ज्ञानेन्द्रियों करके युक्त जो संकल्प विकल्पात्मक मन तिसको मनोमय कोश कहते हैं सो प्राणमयसे सूक्ष्म अरु भीतर होने से तिसके आकार हुआ प्राणमय का आत्मा है, अरु संकल्प विकल्पका करना इसका स्वभाव धर्म है, अरु नानाप्रकारके मनोराज्य इसकी क्रिया है, चंचलता जड़ता अरु विषयोंकी ओर गिरना यह इसमें स्वाभाविक दोष हैं । ऐसा जो मनोमय कोश है सो आत्मा नहीं क्योंकि काम क्रोधादि वृत्तियों से युक्त नियम रहित स्वभाववाला है ताते, अरु "घट द्रष्टा घटाद्भिन्नः" इस न्यायसे इस मनोमय का ज्ञाता साक्षी चैतन्य आत्मा पृथक् है सो मनोमय का साक्षित्व मेरे विषे होने से मैं मनोमय कोश न होके इसके जाननेवाला चैतन्य आत्मा इससे भिन्न मैंहौं, यह जड़ विकारीमनोमय कोशमय, नहीं अरु यह मेरा नहीं । इस प्रकार मनोमय कोशके पृथक् साक्षीरूप अपुनको यथार्थ अनुभव करके निश्चय करना । इति तृतीयोऽनुवाकः ॥

अथ चतुर्थोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य ! [यहां यह अर्थहै कि ब्रह्मकोवाणी मन आदिकों का विषयपना संभवे नहीं, क्योंकि अपनेस्वरूपविषे वर्त्तनेका विरोधहै ताते, एतदर्थ वाणी अरु मन करके विशिष्ट मनोमय से मन सहित वाणियां निवृत्त होती हैं] "यतोवाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्यमनसासह आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्, नबिभेति कदाचनेति, तस्यैष एव शारीर आत्मा, यः पूर्वस्य, तस्माद्वा एतस्मान्मनो मयात् अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानमयः" । [जिससे मन सहित वाणियां अप्राप्य होके निवर्त्त होती हैं, ब्रह्मको जाननेवाला कदाचित् भयको प्राप्त होता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदाचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य ॥ तस्माद्वा एतस्मान्मनोमयात् अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानमयः। तेनैषपूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुष विधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तरः पक्षः। योग आत्मामहः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति २८ ॥ इति चतुर्थोऽनुवाकः ॥

नहीं, जो यह मनोमय है यहही तिस पूर्वलेका शरीरविषे स्थित आत्मा है। तिस प्रसिद्ध इस मनोमयसे अन्य अन्तरात्मा विज्ञानमय है? अर्थात् जिससे मन सहित वाणीआदि इन्द्रियां प्राप्त न होके निवर्त्त होती हैं, अरु ब्रह्मको (सम्यक् प्रकार) जाननेवाला (विद्वान्) (कदाचित् भी भयको प्राप्तहोता नहीं, अरु जो यह मनोमय है सोई तिस पूर्वले प्राणमय का शरीर विषे स्थित आत्मा है, तिस प्रसिद्ध इस मनोमयसे अन्य अन्तरात्मा विज्ञानमय है। अरु मनोमयजो है सो वेदरूप कहाहै, अरु वेदके अर्थको (यथार्थ) विषय करनेवाली जो निश्चयात्मिका बुद्धि तिसको विज्ञान कहतेहैं, सो निश्चयरूप विज्ञान अन्तःकरणका धर्महै। अरु तिसरूपहुआ प्रमाणस्वरूप निश्चय रूप ज्ञानोंसे निर्वाहकिया जो आत्मा सो विज्ञानमय है। अरु जिसकरके प्रमाणके ज्ञानपूर्वक यज्ञादिक करते हैं, अरु तिस विज्ञानको जो यज्ञादिकोंकी हेतुता है सोअग्रिम मन्त्रकरकेकहेंगे इस प्रकार कहा जो विज्ञानमयहै "तेनैषपूर्णः, सवाएष पुरुष विध एव, तस्य पुरुषविधताम्, अन्वयं पुरुषावधः" (तिसकरके यहपूर्णहै, सोप्रसिद्धयह पुरुषकेआकारवालाही है, तिसकी पुरुषाकारताके पीछे यह पुरुषाकारवाला होता है) अर्थात् तिसकरके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह मनोमयपूर्णहै । जैसे शब्दात्मक ऋगादिवेद अपने अर्थों करके पूर्णहै, तैसेवेदरूप मनोमयअपने अर्थरूप विज्ञानमयकरके पूर्णहै, अरुजैसे वेदका अर्थ ज्ञानवेदकेभीतर होता है, तैसेअर्थ ज्ञानरूप विज्ञानमय वेदरूपमनोमयकेभीतरहै । अरु सोप्रसिद्धयह विज्ञानमयपुरुषके आकारवालाही है । अरु तिसमनोमयकी पुरुषाकारता केपीछे यह विज्ञानमय पुरुषके आकारवाला होता है " तस्यश्रद्धैवशिरः, ऋतं दक्षिणः पक्षः, सत्यमुत्तरः पक्षः, योग आत्मा, महः पुच्छं प्रतिष्ठा, तदप्येष श्लोको भवति " । तिसकाश्रद्धाही शिरहै, अरु तिसका ऋत दक्षिण पक्ष है, अरु सत्य उत्तरपक्ष है, योग आत्मा है, महत्पना पुच्छ प्रतिष्ठा है, तिसहीविषे यह श्लोक होताहै ; अर्थात् तिस विज्ञानमय का श्रद्धाही शिरहै, क्योंकि जिसकरके निश्चयरूप विज्ञानवाले पुरुषको करनेयोग्य अर्थोंविषे पूर्वश्रद्धा संभवे है, इस करके सो सर्व कर्त्तव्योंकेमध्य प्रथम (मुख) होनेसे शिरवत्शिर है । अरु तिसका ऋतनाम दक्षिणपक्ष है, अरु सत्यनाम उत्तरपक्ष है, अरु योगजो चित्तकी वृत्तिका निरोधरूप एकाग्रता सो आत्मावत् । विज्ञानमय का आत्मा है, अर्थात् जिस करके समाधानचित्तवाले युक्त पुरुषको श्रद्धादिक जो हैं सो अंगोंवत् यथार्थ निश्चयविषे समर्थहोते हैं, ताते चित्तका समाधानरूप योग विज्ञानमयका आत्मा है । अरु प्रथम उत्पन्नहुआ जो महत्पना सो पुच्छरूप प्रतिष्ठा है " महद्यक्षं प्रथमजामिति " महान् यक्ष प्रथम जन्यहै, । इस अन्य श्रुतिके प्रमाणसेसो महत्पना प्रथम उत्पन्नहुआ है यह कारण होनेसे महत्पना पुच्छ प्रतिष्ठा है । जिस करके कारण जो है सो कार्य्यों की प्रतिष्ठा है, जैसे वृक्ष अरु वल्लियों की प्रतिष्ठा कहिये आधार पृथ्वी है । तैसेही सर्व बुद्धिरूप विज्ञानी का महत्पना कारणहै । तिस हेतुकरके सो महत्तत्व तिसविज्ञानमयरूप आत्मा की प्रतिष्ठा है । तिसही अर्थविषे अर्थात् विज्ञानमयरूप आत्माका बोधक प्रकाशक यहश्लोक कहिये मन्त्र होताहै । जैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्राह्मणबिषे उक्त अन्नमयादिकों के प्रकाशक श्लोक हैं तैसे। इसप्रकार सर्वमयको भी विज्ञानका कर्त्तापना है॥ (हे सौम्य!) जैसे मृन्मय घटके अन्तर तिसही के आकार अरु तिससे भिन्न पूर्णतासे वायुहोताहै, अरु तिसवायुके अन्तर तिसहीके आकार अरु तिससे पृथक् आकाश होता है, अरु तिस आकाशके अन्तर अरु तिसहीके आकार तिससे पृथक् तिसका प्रकाशक सूक्ष्मतेज होता है। तैसे अन्नमयकोशरूप घटकेअन्तर तिसहीके आकार तिसके धर्म्मादिकों से पृथक् पूर्णतासे व्याप्त तिसका आत्मा प्राणमय है, तिस प्राणमयके अन्तर प्राणमय से सूक्ष्म प्राणमय के आकार अरु तिसके धर्मादिकों से पृथक् पूर्णता से व्याप्त प्राणमयका आत्मा मनोमय कोश है। अरु तिस मनोमयके अन्तर तिससे सूक्ष्म तिसही के आकार तिसके धर्मादिकों से पृथक् पूर्णता से व्याप्त मनोमय का आत्मा विज्ञानमय है। तहां चक्षुरादि पांच ज्ञानेन्द्रियां अरु विज्ञानवती निश्चयात्मक बुद्धिमिलके विज्ञानमय कोश हुआ है सो मनोमय से सूक्ष्म अरु तिसके अन्तर होने से तिसका आत्मा है, परन्तु साक्षी आत्मा जो विज्ञानके भावाभाव का प्रकाशक है, तिसकी अपेक्षा विज्ञानमय बुद्धि जड़ है, अरु सुषुप्तिबिषे चिदाभास सहित वा चिदाभाससे पृथक् हुई अपनेकारण अविद्या में लय होती है, अरु पुनः जाग्रत्को पाय चिदाभास करके युक्तहुई नखशिख पर्यन्त व्याप्त होतीहै अरु जिस अंगमें जहां कहीं दुःख वा सुख होताहै तहांहीं तिसको अनुभव करती है परन्तु साक्षी आत्माके आभास करके युक्तहुई करती है केवल स्वरूपसेही नहीं, ऐसा जो विज्ञानमय कोश है तिसके भावाभाव धर्म कर्मादिकों के प्रकाशक साक्षी आत्मा अपुन हैं सो अपुन विज्ञानमयकोश न होके तिसकेज्ञाता तिससे पृथक्ही है, ताते विज्ञानमय कोश अपुननहीं अरु सो अपनानहींइसप्रकार विज्ञानमयकोशसे पृथक्सर्वकेसाक्षी अपने आपकोयथार्थअनुभवकरकेनिश्चयकरना॥ इतिचतुर्थोऽनुवाकः ४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विज्ञानं यज्ञं तनुते । कर्माणि तनुतेऽपिच । विज्ञानं देवाः सर्वे । ब्रह्मज्येष्ठमुपासते । विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेद । तस्माच्चेन्न प्रमाद्यति । शरीरे पाप्मनो हित्वा सर्व्वान् कामान् समश्नुत । इति । तस्यैष एव शारीर आत्मा । यः पूर्वस्य ॥ तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञानमयादन्योऽन्तरआत्माऽऽनन्दमयः । तेनैष पूर्णः । सवा एष पुरुषविध एव । तस्य पुरुषविधताम् । अन्वयं पुरुषविधः । तस्य प्रियमेव शिरः । मोदो दाक्षिणः पक्षः । प्रमोद उत्तरः पक्षः । आनन्दं आत्मा । ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा । तदप्येष श्लोको भवति ॥ २९ ॥ इति पञ्चमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य ! "विज्ञानं यज्ञं तनुते, कर्माणि तनुतेऽपिच, विज्ञानं देवाःसर्वे, ब्रह्मज्येष्ठमुपासते, विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेद, तस्माच्चेन्न प्रमाद्यति, शरीरेपाप्मनो हित्वा सर्व्वान् कामान् समश्नुत इति" । "विज्ञान यज्ञको विस्तारताहै कर्मोंको विस्तारताहै, सर्व देवता विज्ञानरूप ज्येष्ठ ब्रह्मको उपासते हैं, विज्ञानरूप ब्रह्मको जब जानता है, तिस करके जब प्रमाद को पावता नहीं, शरीरविषे पापों को छोड़के सर्व भोगोंको भोगता है ? अर्थात् विज्ञानमय यज्ञोंको विस्तार करता है । अर्थात् जिसकरके विज्ञान (शास्त्रीय ज्ञान) वान् पुरुष श्रद्धा आदिक अंगोंपूर्वक यज्ञोंको करता है, तिसही करके विज्ञानको यज्ञोंका कर्त्तापना है । अरु कर्मोंको भी विस्तार करता है । अर्थात् जिस करके सर्व विज्ञानकाकर्तापनाहै तिसही से विज्ञानमय रूप आत्मा ब्रह्म है, यह कथन युक्तही है । किंवा सर्व इन्द्रियादिकदेवता विज्ञानरूप ज्येष्ठ (प्रथम उत्पन्न) ब्रह्मको उपासते हैं अर्थात् ध्यावते हैं, क्योंकि सर्व से प्रथम उत्पन्नहुआ है ताते, अथवा सर्व वृत्तियों को तिस विज्ञान के पूर्वक होने से विज्ञानको प्रथम उत्पन्नहुआ कहते हैं । अरु जिस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके उस विज्ञानमय ब्रह्मबिषे अभिमान करके देवता उपासते हैं, तिस करके सो देवता महद्ब्रह्मकी उपासना से ज्ञान ऐश्वर्यवाले होते हैं। तिस विज्ञानरूप ब्रह्मको जब जानता है, अरु केवल जाननाही है ऐसा नहीं, किन्तु [बाहिरके अनात्माबिषेही आत्मभावना के होनेसे विज्ञानरूप ब्रह्म बिषे आत्माकी भावना से हुआ जो प्रमाद है, तिसकी निवृत्तिके अर्थ "तस्माच्चेन्न प्रमाद्यति" तिससे जब प्रमादको प्राप्त होता नहीं,। अर्थात् जब अन्नमयादिकों बिषे आत्मभावको त्यागके केवल विज्ञानमयब्रह्म बिषे आत्मभाव की भावना करताहुआ स्थितहोवे, इस प्रकार कहते हैं] तिस विज्ञानमय ब्रह्मसे जब प्रमादको पावता नहीं तब शरीर बिषे पापों को त्यागके सर्व भोगों को भोगता है। अर्थात् सर्वपाप शरीरके अभिमानरूप निमित्तवाले हैं, अरु तिनका छत्रके नाशहुये छायाके नाशवत् विज्ञानमय ब्रह्मबिषे आत्माभिमान से शरीर के अभिमानरूप निमित्त के नाशहुये नाश सम्भवे है, ताते शरीर के अभिमानरूप निमित्तवाले अरु शरीर बिषे होनेवाले सर्वपापोंको शरीरबिषेही त्याग के विज्ञानमयब्रह्म स्वरूपकोप्राप्तहुआ तिसबिषेस्थित सर्वभोगोंको विज्ञानमयस्वरूप सेहीसम्यक्प्रकार भोगताहै। अरु"तस्यैषएवशारीरआत्मा,यःपूर्वस्य, तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञानमयात् अन्योऽन्तर आत्माऽऽनन्दमयः, तेनैषपूर्णः, सवाएष पुरुषविध एव, तस्य पुरुष विधताम्, अन्वयं, पुरुषविधः"। ९यहही तिस पूर्वलेका शरीरबिषे होनेवाला आत्माहै,तिसप्रसिद्ध इस विज्ञानमयसे अन्य अन्तरात्माआनन्दमयहै, तिसकरके यह पूर्णहै, सो प्रसिद्ध यह (आनन्दमय)पुरुषके आकारवाला ही है, तिसकी पुरुषाकारताके पीछे यह पुरुष के आकारवाला है? अर्थात् जो यह विज्ञानमयहै यहही तिसपूर्वले मनोमयका शरीरी कहिये मनोमयबिषे होनेवाला आत्माहै तिस प्रसिद्ध इसविज्ञानमयसे अन्य अन्तरात्मा आनन्दमयहै।[आनन्दमयकोश परमात्मा है, ऐसा वृत्तिकारोंने कहाहै तिनके निषेधसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्याख्यान करतेहैं] मुख्यतासे अरु विकारकेवाची , मय , शब्द करके यह आनन्दमय कार्यरूपसे प्रतीतिवाला है । अरु जिस करके अन्नमयादिक कार्यरूप भौतिक मुख्यता को यहां पावते हैं, अरु तिस मुख्यताको प्राप्तहुआ आनन्दमयहै, अरु यहां जो,मय, शब्द है सो अन्नमयवत् विकाररूप अर्थविषे देखा है । ताते अरु संक्रमण से, अर्थात् इस आनन्दमय को लङ्घिके जानेसे, यह आनन्दमय कार्यरूपही प्रतीति करने योग्य है। अरु "आनन्दमयमात्मानमुपसंक्रम्य " आनन्दमयरूप आत्माको लङ्घिके जाता है, । इस प्रकार आगे षष्ठ अनुवाकविषे कहेंगे । अरु कार्यरूप अनात्माको लङ्घना देखाहै। जैसे"अन्नमयमात्मानमुपसंक्रामति" अन्नमय आत्मा को लङ्घिके जाताहै, । इस वाक्य बिषे उल्लंघन करनेरूप क्रियाका विषय होनेकरके अन्नमयरूप आत्माकोश्रवण करतेहैं, तैसे "आनन्दमयमात्मानमुपसंक्रामति" आनन्दमयरूप आत्माको लङ्घिके जाताहै, । इसवाक्यबिषे उल्लंघनरूप क्रियाका विषय होनेकरके आनन्दमयरूप आत्माको श्रवणकरतेहैं।एतदर्थ यह आनन्दमय कार्यरूपही प्रतीति करनेके योग्यहै । अरु आत्मा काही उल्लंघन करना होता नहीं, क्योंकि अधिकार का विरोध है ताते अरु आत्माका उल्लंघन असम्भवहै ताते अरुआत्माकरके ही आत्माका उल्लंघन सम्भवे नहीं, क्योंकि स्वस्वरूपबिषे भेदका अभाव है ताते । अरु तिस उल्लंघन करनेवाले का आत्मरूपही ब्रह्म है । [आनन्दमयके परमात्मभावके असम्भव बिषे अन्य हेतुओंको भी कहते हैं] अरु तिसब्रह्मको शिर आदिक अवयवोंकी कल्पनाका असंभवहै ताते। अरु उक्त लक्षणवाले आकाशादिकों के कारण अरु कार्यों बिषे अप्राप्त ब्रह्मबिषे शिर आदिक अवयव रूपकी कल्पना सम्भवे नहीं, क्योंकि "अदृश्येऽनात्म्येऽनिलयनेऽनिरुक्ते, स्थूलमनणुनेति, नेत्यादि " अदृश्य, अशरीर, अवाच्य, अनाधार, इस ब्रह्मबिषे, अरु स्थूल नहीं, अणु नहीं, ऐसे नहीं, ऐसे नहीं, । इत्यादि प्रपञ्चके निषधकी श्रुतियोंके प्रमाणसे [जब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आनन्दमयके परमात्मभावके कहने की इच्छाहोय, तब मन्त्र करके तिसहीके असद्भावकी आशंका कहनेको योग्यहै। परन्तु तिसका असम्भव है ताते, आनन्दमय जो है सो परमात्मभाव करके प्राप्तहोवे नहीं, इसप्रकार कहते हैं] अरु मन्त्रके उदाहरण का असम्भवहै ताते। अरु जिस करके प्रियवृत्तिरूप शिरआदिक अवयव करके विशिष्ट प्रत्यक्ष अनुभूयमान आनन्दमय आत्मा रूप ब्रह्मविषे, सो ब्रह्म नहीं है ऐसी आशंकाका अभाव है ताते "असद्ब्रह्मेति वेदचेत् असन्नेवभवति" जब असद्ब्रह्महै, ऐसा जानता है तब असत्ही होता है,। यह मन्त्रका उदाहरण यहां सम्भवे है। अरु "ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा" ब्रह्मपुच्छरूप प्रतिष्ठा है,। इसप्रकार आनन्दमय कोश से भिन्न करके जो ब्रह्मका प्रतिष्ठा (आधार)पनाकरके ग्रहणहै सोअघटित होवेगा,एतदर्थकार्योंविषे प्राप्तहुआ जो यह आनन्दमय सो परमात्मरूप आनन्दनहींहै।इस प्रकार विद्या अरु कर्मका फलरूप, तिस परमात्मरूप आनन्दका विकार (कार्य) आनन्दमयहै। अरु [विशिष्ट वस्तुको विशेषण का कार्यहोनेसे "अहंसुखी" (मैं सुखीहूं) इसप्रकार प्रतीयमान हुआभोक्ता आनन्दमयहै, ऐसेकहा। तिस आनन्दमयका विज्ञान मयसे आन्तरपना कैसेहै, यहां यह अर्थहै कि कर्त्तापनेकी अपेक्षा से भोक्तापनेका पश्चात् होनेपना प्रसिद्धही श्रुतिने कहाहै] सो आनन्दमय, विज्ञानमयसे अन्तरहै, क्योंकि यज्ञादिकोंके हेतु विज्ञानमयके अन्तरपनेकी श्रुतिसे कर्त्ताकी अपेक्षा भोक्ताको अन्तरपना प्रसिद्ध है, [अब इसहीको स्पष्ट करते हैं। यहां यह अर्थहै कि आनन्दके साधक शरीरादिक से साध्य आनन्दकरके विशिष्ट आनन्दमय अत्यन्त आन्तर सिद्धहोताहै। किंवा प्रिय अरु प्रिय के साधनका उद्देशकरके कर्त्ता जो विज्ञानमयहै सो उपासना अरु कर्मका अनुष्ठान करताहै। ताते उद्देश के योग्य होनेसे इस आनन्दमयका अन्तरपना सिद्धहै, इसप्रकार कहते हैं] जिसकरके ज्ञान अरु कर्मका जो फलहै सो भोक्ताके अर्थ होनेसे अत्यन्त आ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न्तर होताहै, एतदर्थ आनन्दमयरूप आत्मापूर्वले अन्नमयादिकों से अत्यन्त आन्तर है। अरु जिसकरके विद्या अरु कर्मको प्रिय आदिक फलके अर्थ क्रियमाण विद्या अरु कर्म्म हैं, ताते फलरूप प्रिय आदिक वृत्तियोंको आत्मा के सम्बन्धसे विज्ञानमयको अन्तरपना सम्भवेहै। अरु जिसकरके स्वप्नविषे प्रियआदिकोंकीवासना करके निर्वाह किया जो आनन्दमय सो विज्ञानमय के आश्रित देखिये है, ताते तिस आनन्दमयको मुख्य आत्मापना है नहीं। इसप्रकार कथन किया जो आनन्दमय रूप आत्मा तिस करके यह विज्ञानमय पूर्ण है। सो प्रसिद्ध यह आनन्दमय पुरुषके आकारवालाही है। अरु सो तिसविज्ञानमयकी पुरुषाकारताके पीछे यह आनन्दमय पुरुषाकारवालाहै स्वरूपसेही नहीं। अरु "तस्य प्रियमेव शिरः, मोदो दक्षिणः पक्षः, प्रमोद उत्तरः पक्षः, आनन्द आत्मा, ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा, तदप्येष श्लोको भवति" ॥ तिसका प्रियही शिरहै, मोद दक्षिणपक्ष है, प्रमोद उत्तर पक्षहै, आनन्द आत्माहै, ब्रह्म पुच्छरूप प्रतिष्ठाहै,, अर्थात् तिस आनन्दमयरूप आत्माका, इष्ट पुत्रादिकोंके दर्शनसे जन्य जो प्रियवृत्ति सोई शिरवत् शिरहै, मुख्य होनेसे। अरु प्रियवस्तुके लाभरूप निमित्तसे होता जो है हर्ष तिसको मोद कहते हैं, सो मोद आनन्दमयका दक्षिणपक्ष है, अरु सोई हर्षरूप मोद अतिशयहुआ प्रमोद कहा जाता है, सो प्रमोद आनन्दमयका उत्तर (वाम) पक्षहै। अरु प्रिय आदिक सुखके अवयवोंके मध्य सामान्य सुखरूप जो आनन्दहै सो आनन्दमयका आत्माहै। अरु तिन प्रिय आदिकों बिषे अनुस्यूत होनेसे, ब्रह्मको आनन्द अरु पर (सर्वोत्कृष्ट) कहते हैं। अरु जिसकरके सोब्रह्म, शुभ कर्मोंकरके पुत्र मित्रादि विषय विशेषरूप उपाधि के निकट स्थतहुये अज्ञानकरके आवृत्त अरु प्रसन्न वा एकाग्रहुई जो अन्तःकरणकी वृत्तिविशेष तिसबिषे प्रकटहोवे है, ताते सो विषय सुख है, इसप्रकार लोकबिषे प्रसिद्ध है। तिस वृत्ति विशेषके कारण कर्मको अस्थिर होनेसे तिसबिषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुखको क्षणिकपनाहै। सो जो अन्तःकरण अज्ञानके नाशक, तप, विद्या, ब्रह्मचर्य श्रद्धा, करके यावत् निर्मलभावको पावता नहीं तावत् अन्तरमुख अरु प्रसन्न वा एकाग्रहुये अन्तःकरणकी वृत्ति विशेषविषे आनन्द विशेषहोताहै। सो [ब्रह्मकी आनन्द स्वभावता विषेहीक्या प्रमाणहै, तहांकहते हैं] आगे सप्तम अनुवाकविषे कहेंगे "रसोवै सः, रसंह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति, एष ह्येवानन्दया ति" "एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्तीति" रसहीसोहै, जिससे यह रसकोही पायके आनन्दीहोवे है। ऐसे, अरु इसही आनन्दकी मात्रा कहिये किणका के ताईं अन्यभूत उपजीविकाको करेहैं। अर्थात् ब्रह्मानन्दके लेशको पायके अन्यभूत अपने जीवनको करतेहैं,। इसअन्य श्रुतिके प्रमाणसे [अन्तःकरण की वृत्ति के उत्कर्षसेही आनन्दका सातिशयपना है, इसविषे में लिंग (चिह्न) कहते हैं, यहां यह अर्थहै कि जब किसी एक विषय से जन्य होनेकरके आनन्दका उत्कर्ष होताहै, तब निष्कामपुरुष को किसी विषयके उपभोग के असम्भवसे आनन्दके उत्कर्षका श्रवण नहीं होवेगा, परन्तु आत्मस्वभावरूपही आनन्दके आविर्भाव करनेवाले अन्तःकरणकी शुद्धिका उत्कर्ष होताहै, इसप्रकार होनेसे निष्कामता का उत्कर्ष संभवे है] इसप्रकार हुये इच्छाकी निवृत्तिके अधिकताकी अपेक्षासे आनन्द का शतगुणा अधिक उत्कर्ष आगे कहेंगे। ऐसे [उक्तप्रकार विषयानन्दकी अतिशयताके हुये तिसकरके विशिष्ट आनन्दमयका अब्रह्मपना सिद्धहोवे है, क्योंकि सातिशय होनेकरके प्रतिशरीरके ताईं भिन्न२ है तातें। अरुब्रह्म तो तिसके अध्यासका अधिष्ठान अद्वैतरूपहै, इस प्रकार कहतेहैं। यहां "एतस्मिन्नर्थे" इस अर्थविषे,। यापदका आनन्दमयकी प्रतिष्ठारूप ब्रह्मके प्रकाश करनेमें तत्पर अर्थविषे। यह अर्थ है।] हुये सातिशय करके युक्त आनन्दमयरूप आत्माका परमार्थरूपब्रह्मके विज्ञानकी अपेक्षासे जोप्रसङ्गविषे प्राप्तहुआ, सत्य, ज्ञान, आनन्दरूप परब्रह्मही है, अरु जिसकी प्राप्तिके अर्थ अन्नम-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यादिक पञ्चकोशको आरम्भ कियेहैं । अरु जो उन कोशोंसे भीतर है । अरु जिसकरके सो सर्वकोश आत्मावाले होते हैं, सो ब्रह्म पुच्छरूपहै अरु प्रतिष्ठाहै, आनन्दमयकी एकताका अवसानहोने से । इसप्रकार अविद्या कल्पितद्वैतका अवसानरूप जो अद्वैतब्रह्म सो प्रतिष्ठारूप पुच्छहै । तिसही अर्थविषे, अर्थात् आनन्दमयकी प्रतिष्ठारूप ब्रह्मके प्रकाशनेविषे तत्पर, यह श्लोक होताहै २९॥ हे सौम्य! जैसे घटके भीतर घटसे सूक्ष्मघटके आकारही पूर्णता से वायुहै, अरु तिस वायुसे सूक्ष्मवायुके भीतरवायुकेही आकार पूर्णतासे आकाशहै, अरु तिसआकाशके भीतर आकाश से सूक्ष्म तिसहीके आकार पूर्णतासे प्रकाशहै, अरु तिस प्रकाशके भीतर अरु सूक्ष्म तिसकेही आकार पूर्णतासे प्रकाशकत्वहै । यह दृष्टांत एकके अन्तर दूसरेकी तदाकार अरु सूक्ष्मतासेस्थिति देखावनेके अर्थ कल्पितहै । हे सौम्य! दृष्टान्त प्रमाणही इस अन्नमयकोशके भीतर तिससे सूक्ष्म तिसके आकार तिसकी अपेक्षा चैतन्य तिसका आत्मा पूर्णतासे स्थित प्राणमयकोश है । तिसही प्रकार प्राणमयके भीतर पूर्णतासे व्याप्त तिसका आत्मा मनोमय कोश है । अरु तिस मनोमयके भीतर तिसके आकार पूर्णतासे व्याप्त तिसका आत्मा विज्ञानमय कोश है, तिस विज्ञानमयके भीतर तिससे सूक्ष्म अरु पृथक् तिसहीके आकार पूर्णतासे व्याप्त तिसका आत्मा आनन्दमय कोशहै । सो आनन्दमयकोश बादल आदिक पदार्थोंवत् कदाचित् प्रकट होनेवालाहै, अर्थात् जैसे बादल सूक्ष्म सामान्यरूप करके अदृश्यहुआ परमाणु रूपसे आकाश बिषे रहे है सो जब अपने विशेषरूपसे प्रकट होनेका समयपावे है तब प्रकटहोय लोकोंबिषे प्रत्यक्ष भासेहै, तैसे आनन्दमयकोश अन्य कोशों से सूक्ष्महुआ अपने सामान्यरूप से विज्ञानमय के अन्तर व्याप्तहै सो जब अपने इष्ट पुत्रादि विषय वस्तुको देखते हैं तब अपने प्रिय आदि अङ्गोंकी विशेषतासे लोक विषे प्रकट भासताहै, एतदर्थ आनन्दमयको कचित् होनेवाला कहते हैं, ताते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असन्नेव भवति । असद्ब्रह्मेति वेद चेत् । अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेद । सन्तमेनं ततो विदुरिति । तस्यैष एव शारीर आत्मा । यः पूर्वस्य । अथातोऽनुप्रश्नाः ॥ उताविद्वानमुं लोकंप्रेत्य । कश्चन गच्छति ३ ॥ अहोविद्वानमुं लोकं प्रेत्य । कश्चित्समश्नुता ३ ॥ उ । सोऽकामयत बहुस्यां प्रजायेयेति । स तपोऽतप्यत । सतपस्तप्त्वा । इदꣳसर्वमसृजत । यदिदं किञ्च । तत् सृष्ट्वा । तदेवानुप्राविशत् । तदनुप्रविश्य सच्च त्यच्चाभवत् । निरुक्तञ्चानिरुक्तञ्च । निलयनञ्चानिलयनञ्च । विज्ञानञ्चाविज्ञानञ्च । सत्यञ्चानृतञ्च । सत्यमभवत् । यदिदंकिञ्च । तत्सत्यमित्याचक्षते । तदप्येषश्लोको भवति ३० ॥ इति षष्ठोऽनुवाकः ॥

क्षणिक है, अरु साक्षीआत्मा आनन्दमयकी क्षणिकता आदिकों का ज्ञाता उसके पृथक् है अरु आनन्दमयका कारण आधार अविज्ञान है उसहीके आश्रय आनन्दमयके आत्मापनेकी कल्पना होती है। अरु सो आनन्दमयके भावाभावका साक्षित्व अपनेविषे पायाजाता है ताते आनन्दमयसे पृथक् तिसके साक्षी चैतन्य परमात्मा अपुन हैं, अपुन आनन्दमयकोश नहीं अरु सो अपना नहीं। इसप्रकार अपने आपको आनन्दमय से पृथक् यथार्थ अनुभवकर निश्चय करना ॥ इति पञ्चमोऽनुवाकः ॥

अथ षष्ठोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! "असन्नेव भवति, असद्ब्रह्मेति वेद चेत्, अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेद, सन्तमेनं ततो विदुरिति" (जो पुरुष ब्रह्म असत् है इसप्रकार जब जानताहै, तबसो असत्ही होताहै, जब ब्रह्महै ऐसे जानता है, इस सत्रूप को जानते हैं तिस करके सो अन्यों को ब्रह्मवत् जानने योग्य होता है) अर्थात् जो पुरुष ब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असत् कहिये अविद्यमान, है इसप्रकार जानताहै तब सो 'असत्के तुल्यही, असत् होताहै । ब्रह्म तो जैसा कुछ है तैसा हैही परन्तु जो उसको असत् जानता है सो अपने आपको असत् करता है क्योंकि वास्तव करके वो ब्रह्म से अभिन्न है ताते। अर्थात् जैसे असत् पदार्थ पुरुषार्थ का सम्बन्धी होता नहीं, इसप्रकार सो ब्रह्म। पुरुषार्थ का सम्बन्धी होता है । अरु जब तिस असत्से। विपरीत जो सर्वविकल्पों का आश्रय सर्व वृत्तियों का बीज अरु सर्व प्रपञ्चातीत सो ब्रह्म है इसप्रकार जानताहै । पुनः तहां कौनसी शंका है, तिस अस्तित्वभावबिषे ब्रह्मको व्यवहार से रहितपना है इसप्रकार हम कहते हैं । अरु जिसकरके वाचारंभणमात्रव्यवहारके विषयबिषे अस्तिपनेके भावकरकेयुक्त बुद्धि प्राप्त होती है, अरु तिसकरके विपरीत व्यवहार से रहित वस्तु बिषे नास्तिपना भी प्राप्त होताहै । जैसे घटादिक व्यवहार का विषय होनेकरके प्राप्तहुई वस्तु सत्है, अरु तिससे विपरीत वस्तु असत् है, यह लोकबिषे प्रसिद्धहै, इसप्रकार यहांभी तिसकेतुल्य व्यवहारका अविषय होने करके ब्रह्मके नास्तिपने की शंका होती है । ताते "अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेदेति" ब्रह्म है, इसप्रकार जब जानताहै, । इसप्रकार आशंका सहित वचन कहतेहैं "ततः स्तीति" सो ब्रह्म है, इसप्रकार जाननेवाले पुरुषको क्या फल प्राप्त होताहै, तहां कहतेहैं । इस ऐसे जाननेवाले पुरुषको विद्यमान ब्रह्मरूप करके परमार्थ सत्रूपको प्राप्तहुआ ब्रह्मवेत्ता जानते हैं । तिस अस्तिभावके ज्ञान करके सो ब्रह्मवेत्ता। अन्य को ब्रह्मवत् जानने योग्य होता है, यह अर्थ वा फल है ॥ अथवा जो पुरुष ब्रह्म नहीं है, ऐसा मानता है, सो वर्णाश्रमादिकों की व्यवस्थारूप सर्वही सन्मार्ग के नास्तिकपने को प्राप्त होता है क्योंकि तिस सन्मार्ग का ब्रह्मकी प्राप्तिके अर्थ होना है। अर्थात् जिसके निश्चयमें ब्रह्म नहीं है तिसके निश्चय में वर्णाश्रम अ तदाश्रित धर्म कुछभी नहीं क्योंकि वर्णाश्रम के आश्रित धर्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो निष्कामता से अनुष्ठान करना है सो अन्तःकरणकी शुद्धि द्वारा ब्रह्मकी प्राप्तिके अर्थ है, सो प्राप्त होने योग्य ब्रह्म जबहैही नहीं तब वर्णाश्रम अरु तिनके धर्मके अनुष्ठानकी कल्पना व्यर्थही है, इसप्रकार ब्रह्मको न माननेवाले पुरुषको वर्णाश्रम के धर्मोंविषे नास्तिकभावकी प्राप्ति होती है। इसकरके सो नास्तिक पुरुष लोकविषे असत्असाधु कहेजातेहैं, । तब सो श्रद्धावान् होनेकरके तिस ब्रह्मकी प्राप्तिकेहेतु वर्णाश्रमादिकोंकी व्यवस्थारूप सन्मार्ग को ज्योंकात्यों प्राप्तहोताहै। अरु जिसकरके इसप्रकारहै,तिसही करके इसको साधुपुरुष सन्मार्गविषे स्थित जान्ते हैं। एतदर्थ ब्रह्म है इसप्रकार की प्रतीति करनेको योग्य है, यह वाक्यार्थ है "तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य, अथातोऽनुप्रश्नाः, ॥ उताविद्वानमुंलोकं प्रेत्य, कश्चन गच्छति ३, अहो विद्वानमुंलोकं प्रेत्य कश्चित्समश्नुता ३ उ" (जो यहही तिस पूर्वलेका शरीरविषे होनेवाला आत्माहै, याते अनन्तर पीछे प्रश्नहै, कोई एक अविद्वान् भी मरणको प्राप्त होके इस लोकको प्राप्तहोताहै, कोई एक विद्वान् मरणको पायके इस लोकको प्राप्त होता है) अर्थात् जो यह आनन्दमय है यहही तिस अपने पूर्वले विज्ञानमय शरीर (विज्ञानमय) बिषे होनेवाला आत्माहै [आनन्दमय का प्रकाशक यह श्लोक है, इसप्रकार कईएक कहते हैं, तिनके अर्थ यहां कहते हैं] तिसके प्रति शंका नहीं है, क्योंकि पूर्वली वस्तुका सद्भाव होनेसे अन्तकी वस्तुका निषेध होतानहीं, परन्तु ब्रह्म को सर्व विशेष वाला होनेकरके प्रत्यक्षता है ताते। [यहां यह अर्थ है कि सर्वको साधारण होनेसे ब्रह्मके व्यवहार करनेकी योग्यता सर्वके अर्थ होवेगी, अरु देखतेनहीं, एतदर्थभी नास्तिकपनेकी आशंका होती है] अरु सर्वके अर्थ साधारण होनेसेब्रह्म के नास्तिकपने की आशंका युक्त है। अरु जिसकरके इसप्रकार है याते अनन्तर शिष्य के श्रवण करने को आचार्यकी उक्तिके पीछे प्रश्न है। जिस करके ब्रह्म आकाशादिकों का अर्थात् भूतों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सहित सर्वजीवोंका कारण होनेसे विद्वान् अरु अविद्वान्को साधारण (समान) है, ताते अविद्वान्कोभी ब्रह्मकीप्राप्तिकी आशंका करतेहैं। (अर्थात् ब्रह्मसर्वजीवादिकोंका कारणहोनेसेसर्वकोसमान हीप्राप्तहै तब अविद्वान्कोभी तिसकी प्राप्तिहोतीहोगी। कोईएक अविद्वान्भी यहांसेमरणको पायके इस परमात्मरूप लोकको पावताहै, किंवा नहीं पावताहै, यहां (किंवा नहीं प्राप्त होताहै,ऐसा जो द्वितीय प्रश्न है सो "अनुप्रश्नाः" पीछे प्रश्न हैं,। इसबहुवचनके होनेसे जानना। अरु अब विद्वान्के अर्थ अन्य दो प्रश्न कहते हैं। जब अविद्वान् सामान्य कारणरूप भी ब्रह्मको नहीं प्राप्तहोताहै, तब विद्वान्कोभी ब्रह्मके अप्राप्तहोनेकी आशंका करते हैं। इस करके उस विद्वान् के प्रति यह प्रश्न है। कोई एक भी विद्वान् ब्रह्मवेत्ता यहां (इस शरीर) से मरणको पायके (शरीर को त्यागके) इस परमात्मरूप लोकको पावता है, किंवा जैसे अविद्वान् नहीं पावता तैसे विद्वान्भी नहीं पावता है, यह दूसरा प्रश्न है, वा विद्वान्अरु अविद्वान् इन दोनोंको विषय करनेवाले दोनोंही प्रश्न हैं। अरु बहुवचन तो सामर्थ्य से प्राप्तहुये अन्य प्रश्नकी अपेक्षा से घटित है [॥ प्र० ॥ किसके सामर्थ्यसे अन्य प्रश्न प्राप्तहुआहै ॥ उ०॥तहां कहतेहैं, यहां "चेच्छब्दात्" चेत् शब्दसे,। इस पदका पक्षसे प्राप्तहुये सद्भाव के ज्ञानके सामर्थ्य से यह अर्थ है।] "असद्ब्रह्मेति वेदचेत्। अस्ति ब्रह्मेतिचेद्वेद" ब्रह्म असत् है इसप्रकार जब जानता है, अरु ब्रह्म है इस प्रकार जब जानता है,। इस श्रवणसे ब्रह्म है वा नहीं है, ऐसा संशय होता है। ताते क्या है वा नहीं है, ऐसा प्रथम प्रश्नअर्थसे प्राप्त हुआ। अरु ब्रह्मको अपक्षपाती (सामान्य) होनेसे अविद्वान् पावता है वा नहीं पावता (अर्थात् ब्रह्मको यह पक्षपात नहीं जो मैं अमुकको प्राप्त होवों अरु अमुक को प्राप्त न होवों, अरु ब्रह्म आकाशादि सर्वकाकारण अरु आकाशवत् सर्वत्रव्याप्त अरु सर्वका आत्मा है ताते सर्वको समान है, इस कारण से उस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपक्षपाती सामान्यब्रह्मको अविद्वान् पावताहै वा नहींपावता। ऐसा द्वितीय प्रश्न प्राप्तहुआ। अरु ब्रह्मको समभावके हुये भी अविद्वान्वत् विद्वान् को भी आशङ्का करते हैं कि विद्वान् क्या पावताहै वा नहीं पावता है। अर्थात् जो ऐसाकहा जाय कि ब्रह्म को अपक्षपाती सामान्य होनेपर भी अविद्वान् नहीं पावता,तो यह आशङ्का होतीहै कि ब्रह्मको अपक्षपाती सामान्य समभावके हुयेभी जब अविद्वान् नहीं पावता तब अविद्वान्वत्विद्वान्को भी तिसकी अप्राप्तिकी आशङ्काहोती है कि ब्रह्मको विद्वान् भी क्या पावताहै वा नहीं। इसप्रकार तृतीयप्रश्न प्राप्तहुआहै। इनतीनों प्रश्नोंके समाधानार्थ अग्रिमग्रन्थका आरम्भ करतेहैं। तहांप्रथम ब्रह्मका अस्तिपनाही कहते हैं। जो पूर्व "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" सत्य, ज्ञान, अनन्तरूप, ब्रह्म है,। इस प्रकार कहा है। तहां सो ब्रह्मका सत्यपना कैसे कहते हैं, ऐसा प्रश्न करनेको योग्य है, तहां यह [उत्तर] कहते हैं कि, सद्भावके कथनसे ही ब्रह्मका सत्यपना कहते हैं। याते "सदेवसत्यमिति" सत्यही सत्य है। इसप्रकार श्रुतिबिषे कहा है, ताते सद्भाव के कथनसेही ब्रह्मका, सत्यपना कहतेहैं॥ प्रश्न॥ इस ग्रन्थको इसप्रकारके अर्थ करके युक्तता, अर्थात् सत्यपनेके प्रतिपादनसे सत्य वस्तुकी विषयता, है सो कैसे जानिये, तहां॥ उ०॥ कहते हैं जिसकरके शब्दकी सूचनासे इसही अर्थकरके युक्त "यदेषआकाश आनन्दोनस्यात्" जो यह आकाश बिषे आनन्द न होवे, इत्यादि अग्रिम कहने के वाक्य "तत्सत्यमित्याचक्षते" सोसत्यहै, ऐसा कहतेहैं। इनकरके विदित होताहै कि इसग्रन्थको उक्तप्रकारके अर्थकरके युक्ताहै। [ब्रह्मके सत्यपनेका साधननाम असद्भाव की निवृत्तिही है, इस अभिप्रायसे असद्भावकी शङ्काको प्रकट करते हैं। यहां यहभावहै कि विवादका विषय जो आकासादिक सो सत्पूर्वक हैं, क्योंकि घटादिकोंवत् कार्य है ताते। इसप्रकार लौकिक व्याप्तिके आश्रय करके सत्रूप कारण प्रथम सिद्ध होवे है। अरु तिसको देशादि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कों का कारण होनेकरके देशादिकों से अपरिच्छिन्न होनेसे ब्रह्म-पदका वाच्यपना सिद्ध होता है । अरु तिसकी विशेषता से अप्रतीतिके हुये तिस विषयक असद्भावकी शंका होती है, सो शंका उसको कारणपने करके निवारण करते हैं, परन्तु कारण होनेसे सद्भाव सिद्धहोवे नहीं, क्योंकि कार्य के आश्रय की असिद्धि का प्रसङ्ग प्राप्त है ताते [तहां वादी 'असत्ही ब्रह्म है' इसप्रकार शङ्का करताहै, क्योंकि जो है सो विशेष करके ग्रहण करते हैं (अर्थात् जानते हैं) जैसे घटादिकों को है ऐसा जानते हैं तैसे (अर्थात् जोवस्तु होती है सो घटादिकोंवत् विशेष (इदं-प्रत्यय) करके ग्रहणहोती है। अरु जो नहीं है सो नहीं जानिये है, जैसे शशशृंगादिक (अर्थात् जो वस्तु होती नहीं तिसको जानते भी नहीं जैसे शशशृङ्ग वा वन्ध्यासुतहै नहीं तबतिसको इदंकरके जानते भी नहीं जोयहहै, अथवा जोवस्तु घटादिकोंवत् इदंकरके नहीं जानी जाती वा नहीं ग्रहणहोती (सो होती भी नहीं)। इस प्रकार ब्रह्म नहीं प्रतीत होता ताते विशेषकरके अग्रहणसे नहीं हैं। (अर्थात् जिसकरके शशशृङ्गवत् ब्रह्म भी प्रतीत होता नहीं एतदर्थ उसके घटवत् इदं करके ग्रहण के न हुये सो है नहीं)। इसप्रकार (वादी) शङ्का करे है । तहां (समाधान यह है कि) ब्रह्मको आकाशादिकों का कारणपना होनेसे ब्रह्म है, इसप्रकार जानिये है, क्योंकि जिसकरके आकाशादिक सर्व कार्य्य ब्रह्मसे उत्पन्नहुआ ग्रहण करते हैं । अरु जिसकरके कुछ भी उपजता है सो है, इसप्रकार लोकबिषे देखाहै । (अर्थात् जिस वस्तुसे कुछ भी कार्य उत्पन्न होताहै तिसका अस्तित्व लोकबिषे मानते देखा है)। जैसे घट अरु अंकुरादिकों का कारण मृत्तिका अरु बीजादिकहैं । तैसे आकाशादिकों का कारण ब्रह्म है इसप्रकार जानते हैं । यहां अवसरपायके शिष्य शंका करेहै कि हेगुरो! आकाशादि कार्य के कारण ब्रह्मके अस्तित्व होनेके विषय में घट अरु अंकुर रूप कार्य के दृष्टान्तसे कहा कि जैसे घट अरु अंकुररूप कार्य दो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्रहणसे तिनके कारण मृत्तिका अरु बीजके अस्तित्वका ग्रहणहोताहै, तैसे आकाशादि कार्यके ग्रहणसे तिनके कारण ब्रह्मका अस्तित्व जानिये है, सो अस्तु परन्तु जैसे कार्यरूपघट अरु अंकुरका इदंकरके प्रत्यक्ष ग्रहणहोताहै, तैसेही तिनके कारण मृत्तिका अरु बीजकाभी इदं करके ग्रहण होता है, अरु यह लोकविषे प्रसिद्ध भी है कि जिसका कार्य प्रत्यक्ष इदं करके ग्रहण होताहै सो आप कारण भी प्रत्यक्ष इदं करके मृत्तिका बीज सुवर्ण लोह तन्तुवत् ग्रहण होता है। परन्तु जैसे आकाशादिक कार्य इदं करके प्रत्यक्ष ग्रहण होते हैं तैसे इनका कारण जिसको ब्रह्मकहते हैं सो मृत्तिका बीजवत् इदं करके प्रत्यक्ष नहीं ग्रहण होता अर्थात् नहीं जानाजाता, एतदर्थ तिसके अस्तित्वविषे निश्चय भी नहीं होता ताते ब्रह्म नहीं है, अरु जो कदापिहै तो ऐसे दृष्टान्तसे कहिये कि जिसकाकार्य प्रत्यक्षभासेअरु सो कारण प्रत्यक्ष न भासके भी होवे॥ उ०॥ हे सौम्य! यहां जो अंकुररूप कार्यका कारण बीज कहाहै सो तिस कहने से बीजान्तर सूक्ष्मसत्ताको जानना क्योंकि बीज को भी कार्यपनाहै ताते, अरु इस विषयमें छान्दोग्य उपनिषद् की श्रुति प्रमाण है। तथाच श्रुतिः "न्यग्रोधफलमत आहरेतीदं भगवइति भिन्धीतिभिन्नं भगव इति किमत्र पश्यसीत्यराण्यइवाधाना भगव इत्यासामङ्गैकां भिन्धीति भिन्नाभगव इतिकिमत्र पश्यसीति किञ्चन न भगव इति १॥ तꣳहोवाच यँ वैसोम्यै तमणिमानं न निभालयसएतस्य वै सोम्यैषोऽणिम्न एवं महान्यग्रोधस्तिष्ठति २॥" श्वेतकेतुप्रति उद्दालकमुनिका वाक्य। हेपुत्र! जो तू इस जगत्के कारण महासूक्ष्म सत्को प्रत्यक्ष देखनेको इच्छता है तो इस बड़वटके वृक्षसे एक फललेआव, तब वो लेआया अरु कहा कि हे भगवन्! वटके फलको लेआया, तब पिताने कहा इसको तोड़डालो, तब पुत्रने फलको तोड़के कहा कि हे भगवन्! तोड डाला, तब पिताने कहा कि अब इसमें क्या देखतेहो, पुत्रने कहा हे भगवन्! इसमें बहुतसे सूक्ष्मबीज देखताहौं, पिताने कहा कि हेपुत्र!

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसमें से एक सूक्ष्म बीजको तोड़ो, पुत्रने कहा हे भगवन् तोड़ा, पिताने कहा हे पुत्र! इस तोड़ेहुये सूक्ष्म बीजके अन्तर क्या देखतेहो सो कहो, पुत्रने कहा हेभगवन्! इसमें मैं कुछ भी नहीं देखता, पिताने कहा हे पुत्र! वटके तोड़ेहुये सूक्ष्म बीजके अन्तर अब तुम कुछभी नहीं देखते तथापि इस सूक्ष्मबीज के अन्तर इस महास्थूल वटवृक्षका कारणभूत महासूक्ष्म सत्ताहै तिसही महासूक्ष्म अदृश्यमान सत्ताका कार्यभूत यह अपने बीजादि अवयवों सहित महास्थूल वटवृक्ष सुशोभित है । अरु बीजका परिणामरूप कार्य वृक्षनहीं क्योंकि बीजकी विद्यमानताहीमें बीज के अन्तर से अंकुर पत्रादिक प्रकट होते हैं अरु तिनकी वृद्धि से बीज नष्टहोजाता है, ताते वृक्षका कारण बीज न होकेबीजोपलक्षित बीजसे पृथक् बीजान्तर कोई एकअदृश्यमान सत्यरूप सूक्ष्मसत्ताहै । हे सौम्य! तैसेही इन आकाशादि दृश्यमानकार्यका अदृश्यमान महासूक्ष्म सत्यरूपकारण ब्रह्महै ऐसा जानते हैं। यह इस भाषाभाष्यकारकी कल्पनायुक्तिविशेषहै। ॥[इसकथन करनेके हेतुसेभी जगत्के उपादान बिषे असत्पनेकी आशंका करनेको योग्य नहीं, ऐसा कहते हैं] अरु लोकबिषे असत् वस्तुसे कुछ भी कार्य उत्पन्न हुआ देखते नहीं । जब असत्से नामरूपादि कार्य उत्पन्न होवे, तब वो कार्य निःस्वरूप होने से प्रतीत हुआ न चाहिये अरु प्रतीत होताहै, ताते ब्रह्महै इसप्रकार जानते हैं । अरु जब असत् का कार्य ग्रहण होवे तब भी सो असत् करके युक्तही ग्रहण होवेगा । अरु ऐसे है नहीं, ताते ब्रह्म है इसप्रकार जानिये हैं । अरु "तत्कथमसतःसज्जायतेति" असत् से सो सत् कैसे उपजताहै, यह जो अन्यश्रुतिहै, सो युक्तिसे असत्से सत्के जन्म के असंभव को कहे है । ताते सत्ही ब्रह्म है, इसप्रकार कहना युक्तही है । [इसप्रकार ब्रह्म के असद्भावकी शंका को निषेध करके अब प्रसंगसे प्राप्त प्रधानवादी की अचेतनपने की आशंका को निषेध करते हैं] अरु जो ऐसा कहे कि सो ब्रह्म जब सृष्टिका आ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीजादिकोंवत् कारणहोवे तब अचेतन (जड़) होवेगा, सो कहना बनेनहीं, क्योंकि ब्रह्म इच्छावाला है ताते। अरु लोकबिषे इच्छावाली वस्तु अचेतन होतीनहीं, अरु ब्रह्म सर्वज्ञही है, इस प्रकार हम श्रुतिके वेत्ता कहते हैं, याते ब्रह्मको इच्छावान् होनेपनेका संभव है॥ अरु जो ऐसा कहे कि ब्रह्म इच्छावाला होनेसे अस्मदादिवत् अपूर्णकाम होवेगा, सो कथन बने नहीं, क्योंकि ब्रह्मस्वतन्त्रहै ताते। जैसे कामादि दोषजीवोंको अपने वा परवस्तु के वशकरके प्रवृत्त करे हैं, तैसे कामादिक ब्रह्मके प्रवर्तक नहीं॥ प्र०॥ तब ब्रह्मको काम कैसे है,॥ उ०॥ तहां कहे हैं सत्य ज्ञान स्वरूपवाले ब्रह्म के कामहैं सो ब्रह्म के स्वरूप भूतहोने से शुद्ध हैं ताते तिनकरके ब्रह्म प्रवर्त होतानहीं [यहां यह कथन किया होताहै कि मायाबिषे प्रतिबिम्बित हुआ ब्रह्म जगत्का कारणहै, सो माया के परिणाम रूपही कामना से कामनाका कर्त्ता होवेहै, अरु तिस मायाके परिणामों को अविद्या आदिकों से तिरस्कार को अप्राप्त हुये चेतन करके व्याप्त होनेसे सत्यज्ञान रूपताहै, अरु ब्रह्मको तिसरूप होने से पुण्यादिक करके स्पर्श के हुये शुद्धपना है। ताते ब्रह्मकी कामना को जीवों की कामनासे विलक्षणपना है यह सिद्ध हुआ] किन्तु प्राणियों के कर्मों की अपेक्षा से सो ब्रह्म तिनका प्रवर्त्तक है। ताते कामों बिषे ब्रह्मकी स्वतन्त्रता है। एतदर्थ ब्रह्म अपूर्णकाम नहीं। अरु [कामना को शरीरादिकोंके संबंधसे जन्यहोनेकी प्रसिद्धि से ब्रह्मको शरीरादिकवान् होनेपने का प्रसंग होवेगा, यह शंका करनेको योग्य नहीं, इसप्रकार कहते हैं यहां यह अर्थहै कि कामनाके संस्कारवाली मायासे ब्रह्मके तादात्म्यसे तिस मायाके परिणामको ब्रह्मके तादात्म्य से शरीररूप निमित्तकी अपेक्षा नहीं है] अन्य साधनकी अपेक्षा से रहित होनेसे भी ब्रह्म अपूर्ण काम नहीं है। किंवा जैसे जीवोंको अपने से भिन्नकार्य अरु कारणका रूप अन्य साधनोंकी अपेक्षावाले होनेसे अनात्मरूप अरु धर्मादिक निमित्तकी अपेक्षावाले काम हैं। अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीवों की जो कामना है सो अपनी सिद्धताके अर्थ अहंकारादि अनात्मरूप कारक अरु धर्मादिरूप निमित्त की अपेक्षा वाली है क्योंकि धर्म से अर्थादिक होते हैं ताते । । तैसे ब्रह्म के काम को निमित्तादिकों की अपेक्षावान्पना नहीं, किन्तु अपने स्वरूप से अभिन्न ब्रह्मके काम हैं । । अर्थात् जीवों के जो काम (कामना) हैं सो अविद्या के परिणाम वा पंच भूतों के मिश्रित सत्त्वगुण के कार्य अन्तःकरण के निमित्तवाले हैं, वो अन्तःकरण अपने कारण आकाशादिकों की उत्पत्ति से पूर्व आकाशादिकोंके कारण ब्रह्म बिषे है नहीं ताते ब्रह्म के काम किसी भी अनात्मा के निमित्त वाले नहीं, अरु आकाशादिभूत अरु तिनके कार्य अन्तःकरणादि भौतिक तिन सर्व के पूर्व "सो अकामयत" इत्यादि प्रमाण से ब्रह्मके काम हैं ताते सो काम अन्य निमित्त वाले न होके ब्रह्म की चैतन्यता वाले होने से उसके स्वरूप से अभिन्न उसके काम हैं । । सो श्रुति वाक्य कहे हैं कि जिससे आकाश उत्पन्न हुआ सो आत्मा "सोऽकामयत बहुस्यां प्रजायेयेति, स तपोऽतप्यत, स तपस्तप्त्वा,।इदꣳसर्व्वमसृजत, यदिदंकिञ्च" (सो कामना करता हुआ कि बहुत होवों, सो तपको तपताहुआ, सोई तपको तपिके, इस सर्व को सृजता हुआ, जो कुछ यह है) अर्थात् जिससे आकाश उत्पन्न हुआ ऐसा जो । सर्वका कारण । आत्मा सो कामना करता हुआ॥प्र०॥ सो कैसे वा क्या कामना करता हुआ ॥ उ० ॥ बहुत होवों यह । कामना करता हुआ । ॥ प्र०॥ एकको अन्य अर्थ बिषे अप्रवेशहुये बहुतपना कैसे होवेगा ॥ उ०॥ तहां कहते हैं, प्रजाको उत्पन्न करो । जिस करके पुत्रकी उत्पत्ति सेही अन्य अर्थ को विषय करनेवाला बहुत होना होवे नहीं, इस करके प्रजाकी उत्पत्ति के अर्थ अद्वैतकी हानि होवे नहीं ॥ प्र०॥ तब आप बिषे स्थित अप्रकट हुआ जगत् नामरूप की प्रकटता से कैसे होता है, ॥ उ० ॥ जब आप बिषे स्थित अप्रकट हुये नाम रूप प्रकट करते हैं, तब नाम रूप के अपरित्यागसेही ब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से अविभाग को प्राप्तहुये वे नामरूप देशकालादिक सो सर्व अवस्थाविषे प्रकटकरिये है, तब सो नामरूपका प्रकटकरना ब्रह्मका बहुतहोना संभवे, अन्यथा निरवयव ब्रह्मको बहुतपने की प्राप्ति वा अल्पपना सम्भवे नहीं। जैसे आकाश का अल्पपना अरु बहुतपना अन्य (घटादि) वस्तुओं का कियाही है, तैसे। एतदर्थ तिस नामरूपकी शक्तिरूप मायाके परिणाम द्वाराही आत्मा बहुतहोताहै। जिसकरके [जब नामरूपकी शक्तिरूप माया अंगीकार किया तब सो प्रधानवत् ' ब्रह्म से भिन्न सत्यरूपहुई, इस करके अद्वैत की हानि होवेगी, यह आशंकाकरके कहते हैं। यहां यह भाव है कि आत्मा से भिन्न जो वस्तुहै, सो क्या आपसेही सिद्धहोती है वा पर (अन्य) से (सिद्धहोवे है यह प्रष्टव्य है) तिनमें जो प्रथमपक्ष (कहे कि आत्मा से जो भिन्नवस्तु है सो आपसेही सिद्धहोवे है सो) बने नहीं, क्योंकि तिस को जड़ता की हानिहोने से अरु आत्मा से भिन्नताकी हानिहोने से (अर्थात् चैतन्य आत्मा से जो भिन्नवस्तु है सो जड़ अनात्मा होवे है, अरु तिसकी जब अपने आपसे सिद्धता मानी तब तिसको जड़ताकी अरु आत्मा से अभिन्नताकी हानिहोवे है अरु तिस की हानि से उसको आत्मरूपताहोने से आत्मा से भिन्नपने के अभावहुये सो वस्तुही नहीं यह सिद्धहोवे है) अरु जो दूसरा पक्ष (मानो कि आत्मा से भिन्नवस्तुकी पर (दूसरे) से सिद्धि होवे है तो सो) भी बने नहीं, क्योंकि तिस से ज्ञान कहिये चैतन्य के संबंध का अनिरूपणहै (अर्थात् निरूपण नहीं) ताते अरु जिस करके भिन्नदेश कालवाली वस्तुओं का संयोग आदि सम्बन्ध संभवे नहीं, वा विषय विषयीभाव सम्बन्ध बने नहीं, क्योंकि नियामक के खोजने से। अरु तिनका स्वभावरूपही सम्बन्ध बनेनहीं, क्योंकि दोनों स्वभावों को सम्बन्धरूप होने करकेही कृतार्थहुये सम्बन्धी के अभाव का प्रसंग है ताते। अरु आपने प्रति अपनाही सम्बन्धीपना बनेनहीं क्योंकि तिसकरके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्माश्रयरूप दोषकी प्राप्ति होती है ताते। तिसप्रकार के अर्थ के अभावहुये अरु व्यवहारमात्रकी प्रवर्तकता के होने से मिथ्या व्यवहारकी प्राप्ति से अनिर्वचनीय वादही सिद्ध होताहै] जिस करके आत्मा से अन्य अनात्मरूप अरु तिस (आत्मा) से भिन्न देश कालवाला सूक्ष्म अन्तरायसहित दूर स्थित भूत भविष्यत् वर्तमानरूप वस्तु नहीं है [जिस करके आत्मा से भिन्न वस्तु संभवे नहीं ताते आत्मा के तादात्म्य सेही नामरूपकी सिद्धि होवेहै, इसप्रकार कहते हैं] याते सर्व अवस्थावाले नामरूप ब्रह्म सेही स्वरूपवाले हैं। अरु [तब ब्रह्मको प्रपंच सहितता का प्रसंग होवेगा, सो। तुम्हारा। कहना योग्य नहीं, ऐसा कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि ब्रह्म तिस प्रपंचरूप नहीं है क्योंकि जड़रूप नहीं ताते, अरु सुषुप्ति आदिकों बिषे तिस प्रपंचकी निवृत्ति होने से भी तहां ब्रह्मकी सिद्धिका संभव है ताते] ब्रह्म तिसरूप नहीं है। [प्र० ॥ तब नामरूपको ब्रह्मरूपता कैसे है, ॥ उ० ॥ तहां कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि स्वप्नबिषे आकाशको भक्षण करनेवत् आरोपितकी अनुभव के अंगीकार से सिद्धि के असंभव से, अनुभवके विषय जे नामरूप सो अनुभवरूप ब्रह्मस्वरूपही कहिये है, परन्तु एकता के अभिप्राय से नहीं] सो नामरूपता के निषेध से, सोई, इस वाक्य करके तिसरूप कहते हैं। अरु तिसनामरूप उपाधि करके, ज्ञाता, अरु ज्ञानरूप शब्द अरु अर्थ आदिक सर्व्वविद्यमान व्यवहारका भजनेवाला ब्रह्म सो आत्मा है। सो आत्मा सृष्टिकी कामनावाला हुआ तपको तपता भया। यहां तप शब्दकरके। ऊर्द्ध्वबाहु जलस्थायी पंचाग्नि का तापना कृच्छ्र चांद्रायणादिकों को, न कहके। ज्ञानको कहते हैं, क्योंकि "तस्य ज्ञानमयं तपः" तिसका ज्ञान (विचार) मय तपहै। इस अन्य श्रुतिके प्रमाण से, अरु तिस। आत्मा। को आप्त। पूर्ण। कामहोने से अन्य। उक्तप्रकार के। लोकप्रसिद्ध तप का असंभवही है। एतदर्थ सो आत्मा उत्पन्न करने योग्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जगत् की रचना को विषय करनेवाले विचारको करता हुआ, यह अर्थ होताहै। सोई आत्मा तपको तपिके अर्थात् विचार अवलोकन करके, प्राणियों के कर्म्मादिक निमित्तों के अनुसार देश, काल, नाम, अरु रूप से जिसप्रकार अनुभव किया है, तैसेही सर्व अवस्थावाले सर्व प्राणियों करके अनुभव किये हैं, ऐसे इस जगत्को सृजताहुआ "तत् सृष्ट्वा, तदेवानुप्राविशत्, तदनुप्रविश्य सच्च त्यच्चाभवत्" {तिसको सृजके, तिसहीके ताईं पीछे प्रवेश करता हुआ, सच्च त्यच्चरूप होताहुआ} अर्थात्, तिसको सृजिके तिसही सृजेहुये जगत्के ताईं पीछे प्रवेशकरताहुआ। अब प्रवेशकी अनिर्वचनीयताके प्रकाशने से जीवको ब्रह्मस्वरूप होने करके प्रवेश वाक्यके तात्पर्य के देखावनेको विचारका आरंभ कहते हैं। तहां कैसे पीछे प्रवेश करताहुआ, यह विचार करने को योग्यहै। किंवा सो स्रष्टा (सृष्टिकर्त्ता) तिसही स्वरूप से प्रवेश करताहुआ, किंवा अन्य स्वरूप से {प्रवेश करताहुआ} यह दो विकल्प हैं। तिनमें प्रथम क्या युक्तहै, तहां श्रुतिके अनुसार जो स्रष्टाहै, सोई पीछे प्रवेश करताहुआ, यह युक्तहै। इसप्रकार जब सिद्धान्तीनेकहा, तब पूर्ववादी कहताहै। [पूर्ववादी कहताहै। यहां यह अर्थ है कि सृष्टि क्रिया अरु प्रवेश क्रियाके पूर्व अरु पीछे के कालबिषे होनेके असंभवहुये तिनके कर्त्ताकी एकता श्रुतिकरके बोधनकियाहै, परन्तु प्रवेशकी पिछले कालबिषे होनेकी योग्यता संभवेनहीं, क्योंकि सृष्टिके कालबिषेही उपादानको कार्य्यरूपसे स्थितहोनाहै ताते] ननु, जब ब्रह्म मृत्तिकावत्कारणहै तब कार्यको तिसब्रह्मरूप होनेसेतिस {कार्य} केबिषेतिस {कारण} का प्रवेशयुक्त नहीं है। जिस करके कारणही कार्यरूपसे परिणामको पावताहै, याते सो प्रविष्टवत्है, परन्तु कार्यकी उत्पत्तिके पीछे कार्य से भिन्न कारण का पुनःप्रवेश अघटितहै। अरु जिस करके घटके परिणामसे भिन्न मृत्तिकाका घटबिषे प्रवेश नहीं, इसकरके जगदाकार परिणाम से भिन्न ब्रह्मका जगत् बिषे प्रवेश अघटितहै। अरु जो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिद्धान्तका एक देशीकहे "जीवेनात्मनानुप्राविश्येति" इस जीव रूपसे पीछे प्रवेशकरके, । इस अन्य श्रुतिसे, जैसे घटविषे चूर्ण रूपसे मृत्तिकाका पीछे प्रवेश होताहै, तैसे आत्माका अन्यरूपसे नामरूपात्मक कार्यबिषे पीछे प्रवेश होताहै, यह कथन युक्त नहीं है, क्योंकि ब्रह्म एकरूप है ताते । अरु मृत्तिकाके स्वरूपको तो अनेक रूपताहै ताते, अरु सावयवताहै ताते अरु मृत्तिका का चूर्ण प्रवेश रहित देशवालाहै ताते, मृत्तिकाका चूर्णरूपसे घटविषे पीछे प्रवेश युक्तहै, परन्तु आत्माको एकताके होनेसे अरु निरवयव होने से अरु प्रवेश रहित देश का अभाव होने से तिसका प्रवेश संभवेनहीं। अरु जो सिद्धान्तका एक देशीकहे है कि[सृष्टि कर्त्ता से अन्यका प्रवेश जब नहीं संभवे है, तब किसप्रकार प्रवेश कहनेको योग्यहै। इसप्रकार सिद्धान्तका एकदेशी कहताहै] तब कैसा प्रवेश युक्तहै, अरु प्रवेश नहीं है ऐसा नहीं कहना चाहिये, किन्तु"तदेवानुप्राविशत्" तिसही के ताईं पीछे प्रवेश करताहुआ, इस श्रुतिकरके प्रवेश श्रवणकियाहै ताते प्रवेश कहना युक्त है। याते तब सावयवरूपही ब्रह्म होवो, अरु तिसको सावयव होनेसे मुखबिषे हस्तके प्रवेश होनेवत् तिसका जीवरूप से नाम रूपात्मक कार्य बिषे प्रवेशयुक्तही होवेगा, सो कथन बने नहीं, क्योंकि शून्यदेशका अभावहै ताते। अरु जिसकरके कार्यरूप से परिणाम को प्राप्तहुये ब्रह्मका नामरूप कार्यही देशहै, तिससे भिन्न आप करके शून्य अन्यदेशहै नहीं। अर्थात् जिसको शून्य कहते हैं सो लक्षणवाला होनेसे नामरूपवाला ब्रह्मका कार्य है ताते ब्रह्म से भिन्न शून्यदेश कोई नहीं। कि जिस प्रदेशके अर्थ जीवरूपसे प्रवेश करे। अरु [जो कारणही अन्य कार्यरूप से परिणाम को पाया है, तिसके प्रति कोई एककार्य जीव रूपसे प्रवेश को पावेगा, यह शंकाकरने योग्य नहीं है, इसप्रकार कहते हैं] जो कहै कारणही प्रवेशको पावेगा अरु जीवरूप को त्यागैगा। जैसे घट मृत्तिकाके प्रवेशहुये घटभावको त्यागताहै तैसे, तो[कोई एककार्यकेप्रवेशको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अंगीकार करके जो दूषणकहा सो संभवे नहीं क्योंकि श्रुतिका विरोधहै ताते, इसप्रकार कहते हैं]"तदेवानुप्राविशत्" तिसहीके अर्थ पीछे प्रवेश करताहुआ, इसश्रुतिवाक्यसे सो कारणका पीछे प्रवेशयुक्त नहीं हैं॥ [कारणके स्मारक तत् शब्दसेकार्यको लक्षणा सेजानिकेतिसबिषे अन्यकार्यकाप्रवेशकहतेहैं क्योंकिप्राप्तदेशका संभव है ताते। अरु इसकरके श्रुतिका विरोध नहीं है, इसप्रकार सिद्धान्तके एक देशी के मतको प्रकटकरके दूषण देते हैं] जो कहे, अन्य, कार्यही होवे है, अर्थात् "तदेवानुप्राविशत्" तिसही के ताईं पीछे प्रवेश करताहुआ, इस श्रुति करके जो जीव रूप कार्य सो नामरूपसे परिणामको प्राप्तहुये अन्य कार्यकोही प्राप्तहोता है सो बनेनहीं, क्योंकि ऐसेहुये श्रुतिसे विरोधहोताहै ताते। अरु जिस करके घट अन्यघटको पावता नहीं अरु व्यतिरेक श्रुतियोंके विरोधसे। अरु जिस करके नामरूप कार्य से जीवकेभेदकी अनुवाद करनेवाली श्रुतियां विरोधको प्राप्तहोंगी। अरु जीवको अन्य कार्यकी प्राप्ति के हुयेमोक्षका असंभव होताहै ताते। अरु जिस करके मुक्त होता है तिसही को पावता नहीं। अरु जिस करके बांधेहुये चौरादिकों को शृंखला (बेड़ी) की प्राप्तिहोवे नहीं। अर्थात् चौरादिकों को प्रथम बन्धन होता है अरु उसको शृंखलाकी प्राप्तिहुये उस बन्धनकी निवृत्ति होती है सो पुनः प्राप्तहोवे नहीं, एतदर्थ कहाहै कि जिससे मुक्त होताहै तिसको पावता नहीं। इस करके जीव अन्य कार्य को प्राप्तहोता है, यहकथन युक्तनहीं॥ [कारणके वाचक तत् शब्दसे कार्यकी लक्षणा बिषे कहने को अनिच्छित लक्षण जब प्राप्त होवे, तब 'तत्' शब्द कारण पर ही होवो इस प्रकार अन्य सिद्धान्तका एक देशी कहता है] अरु जो कहे बाह्य अरु अन्तरके भेद से परिणामको पावता है, अर्थात् सोई कारणरूप ब्रह्म शरीरादिकों का आधार होनेकरके अरु तिन शरीरादिकों के भीतर ध्येय होनेकरके परिणाम को पावता है सो कहना बनेनहीं, क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बाह्यस्थित वस्तुके प्रवेशका संभवहै ताते । अरु जिसकरके जो वस्तु जिसके भीतर स्थित है सोई प्रवेशको पाया, ऐसा कहते नहीं, इसहीसे बाह्यस्थित वस्तुका अन्तर प्रवेश होताहै । अरु प्रवेश शब्दके अर्थको इसप्रकार देखा होनेसे, जैसे गृहको राचि के प्रवेश करताहुआ, तैसे ॥ अरु जो अन्य वेदान्ती कहे कि जल बिषे सूर्यादिकोंके प्रतिबिम्बवत् ब्रह्मका प्रवेशहोवेगा सोभी कहनाबने नहीं,क्योंकि ब्रह्मको पूर्णताहै ताते अरुअमूर्त्त(निराकार)है ताते, अरु परिच्छिन्नमूर्त्तरूप सूर्यादिकोंका प्रसन्नता (स्वच्छता) निर्मलता के स्वभाववाले अन्य जलादिकों बिषे प्रतिबिम्ब का उदय होता है । अर्थात् प्रतिबिम्ब प्रकट भासता है, परन्तु आत्माको अमूर्त्त होनेसे, अरु आकाशादिकों के कारण आत्मा को पूर्ण होनेसे अरु व्यापक होनेसे । अरु आत्मा से दूर देशवाले प्रतिबिम्बके आधार वस्तुका अभाव है ताते, तिसका प्रतिबिम्बवत् प्रवेश कहना युक्त नहीं ॥ । अर्थात् हे सौम्य ! । जैसे पुरुषके प्रतिबिम्ब का आधार स्वच्छ स्वभाव वाला दर्पण पुरुषसे भिन्न देशमेंहोताहै, अर्थात् जितने अवकाशमें पुरुषके शरीरकीआकृति परिमेयता है तिससे पृथक् दूरदेशवाले अवकाशस्थलमें दर्पण के होनेसे प्रतिबिम्ब होता है, अरु साकार वस्तुका होताहै अरु बिम्बरूपसे अधिक स्वच्छस्वभाववाले दर्पणादिकों में प्रतिबिम्ब होताहै, इसप्रकार जब प्रतिबिम्बके होनेकी सामग्री होती है तब प्रतिबिम्बहोताहै, सो प्रतिबिम्बकी सामग्रीका एक अद्वैतआत्मा बिषे अभाव है, क्योंकि प्रथम तो आत्मा अपने प्रतिबिम्ब होनेके हेतु साकारतासे रहित निरवयव निराकार है, अरु सो आत्मा निराकार हुआ परिपूर्ण है तिससे इतर कहिये खाली ऐसा कोई देश (स्थान) नहीं जहां उसके प्रतिबिम्ब का आधार दर्पण स्थानीय बुद्ध्यादिक होवे, अरु तिस आत्मासे भिन्न अरु तिससे अधिक स्वच्छ कोई वस्तु नहीं कि जिस बिषे उसका प्रतिबिम्ब होवे । ताते प्रतिबिम्ब होनेकी ,यावत् साकारता, दूरदेश, पृथक्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आधार, अरु तिसकी स्वच्छता आदिक सामग्री हैं, तिन सर्व का एक अद्वैत निराकार स्वयं प्रकाश अतिस्वच्छ सर्वव्यापी परिपूर्ण आत्मा विषे अभाव है। ताते तिस आत्मा का सूर्यादिकों के प्रतिबिम्बवत् प्रतिबिम्बरूप से प्रवेश कहना युक्त नहीं॥ हे सौम्य! यहां इस "तदेवानुप्राविशत्" इस श्रुति के अर्थ विषे भाष्यकारस्वामी श्रीशंकराचार्य्यजीने प्रतिबिम्बरूप से आत्मा के प्रवेशका खंडन कियाहै, अरु छांदोग्यउपनिषद्के छठे अध्याय की "जीवेनात्मनानुप्राविश्य" इस श्रुतिके अर्थ विषे आत्माका प्रतिबिम्बरूपसे प्रवेश कहाहै, सो स्थान विशेष के भेदसे अर्थविशेषका भेदहै ऐसे जानना, विरुद्धार्थ न जानना॥ इसप्रकार सिद्धान्तके एकदेशीकेमतकोनिषेधकरके पूर्ववादीकीशंकाकीसमाप्ति करेहैं। जब इसप्रकारहै, तब ब्रह्मकाप्रवेश नहीं है। अरु"तदेवानुप्राविशत्" इसके अर्थपीछे प्रवेशकरताहुआ,।इस श्रुतिके अन्यार्थ को हम पावते नहीं। अरु श्रुति जो है सो हमको इन्द्रिय अगोचर (अर्थात् इन्द्रियोंका अविषय) वस्तुके ज्ञानकी उत्पत्तिविषे निमित्त है। अरु यत्न करनेवाले जे हम तिस हमको इस श्रुतिवाक्य से ज्ञानका होना संभवे नहीं, हा बड़ाकष्ट है। तब व्यर्थ होनेसे "तत्सृष्ट्वातदेवानुप्राविशत्" तिसको रचिके तिसके अर्थ पुनः प्रवेश करताहुआ,। यह वाक्य अंधपुरुष मणिको प्राप्तहुआ इसवाक्यवत् [सो श्रुतिसृष्टिकर्त्ताके प्रवेशको कहे हैं, यहां यह अर्थ है कि सोश्रुति हम मीमांसकोंको प्रमाणहै,ताते विरोधहुये अन्यकेप्रवेश की कल्पना युक्त नहीं है] अर्थ से शून्यहै, [शक्तिके विषयरूप अर्थका असम्भव होनेसे अर्थ करके शून्यता है, अथवा तात्पर्यके विषयके असम्भवसे अर्थकरके शून्यताहै, तिनमें प्रथमपक्षबनेनहीं क्योंकि समीप देशवाले भी जल में आकाशादिक मूर्त्त वस्तुके प्रतिबिम्बके होनेवत् अमूर्त्तब्रह्मके भी अनिर्वचनीय अविद्या आदिकों विषे प्रतिबिम्ब होनेकी उत्पत्ति के अनन्तर कालके ताईं अन्तःकरणादिकोंविषे प्रतिबिम्बके अभावके असंभवसे इसप्रकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहे हैं "नेति" नहीं इति, । अरु द्वितीयपक्ष भी बने नहीं, ऐसा कहते हैं] सो कथन बने नहीं, क्योंकि इस श्रुतिवाक्यको अन्य अर्थवालापनाहै ताते॥ प्र०॥ इस स्थान बिषे किस अर्थकी चर्चा करतेहौ॥उ०॥ इस वाक्यका प्रसंगबिषे प्राप्तहुआ यह अर्थ है, तथापि कहनेको इच्छित अन्य अर्थ है, सो स्मरण करनेको योग्यहै "ब्रह्मविदाप्नोतिपरम्" ब्रह्मवेत्ता परब्रह्मको पावता है, "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" सत्य ज्ञान अनन्त ब्रह्महै, "योवेदनिहितं गुहायाम्" जो गुहाबिषे स्थित ब्रह्मको जानताहै, ॥ ऐसे प्रसंगविषे प्राप्तहुआ जिस ब्रह्मका ज्ञान (जानना) सो कहनेको इच्छित है । अरु तिस ब्रह्मस्वरूपके जनावने के अर्थ आकाशादिकों से लेके अन्नमयकोशपर्यन्त सर्वकार्य देखाया । अरु ब्रह्मके जाननेका उपाय आरम्भ कियाहै । तहां "अन्नरसमयादन्योऽन्तरात्माप्राणमयः" अन्नरसमय आत्मासे अन्य भीतर आत्मा प्राणमय है, अरु तिसके भीतर मनोमयहै, तिसके भीतर विज्ञानमय है, अरु इस विज्ञानमय बुद्धिरूपा गुहा बिषे प्रवेश को पाया आनन्दमय रूप विशिष्ट आत्मा देखाया । [बुद्धिरूपा गुहाबिषे प्रवेशसे अनन्तर आनन्दमयही विशिष्टार्थ है, क्योंकि लिंगकरके चेतनरूप विशेष्यके विशेष्यपने के अव्यभिचारको देखते हैं ताते । तिसके ज्ञानद्वारा आनन्दके वृद्धिका अवधिआत्मब्रह्मरूपी जो है, सो इस ही (बुद्धिरूपा गुहाबिषे जाननेको योग्यहै, इस अभिप्रायसे जल बिषे सूर्यके प्रवेशवत् अनिर्वचनीय प्रवेश काहिये है । यह अर्थ है] याते पीछे आन्दमयरूप लिंग (चिह्न) के ज्ञानद्वारा आनन्दकी वृद्धिका अवधिरूप ब्रह्मपुच्छ प्रतिष्ठा सर्वविकल्पका आश्रय अरु निर्विकल्परूप जोआत्माहै, सो इसही बुद्धिरूपा गुहाबिषे जानने को योग्यहै । इस रीतिसे तिसका प्रवेश कल्पना करते हैं । [बुद्धिरूपा गुहाबिषेही ब्रह्मके ज्ञानका संभव होनेसे तहांहीं (उसका) प्रवेश कहनेको इच्छितहै, इसप्रकार कहते हैं] अरु जिस करके ब्रह्मनिर्विशेष है ताते अन्य ठिकाने जानाजाता नहीं । [तहु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्य ठिकाने प्रतीति के अयोग्य जो ब्रह्म है सो बुद्धिविषेही कैसे प्रतीत होता है, यह आशंका करके ऐसा कहते हैं कि उपाधिकी कोई योग्यता के सम्भव होनेसे बुद्धि बिषेही ब्रह्मप्रतीत होवे है. यहां यह अर्थ है कि अन्तःकरणके सम्बन्धसेही देह अरु घटादिकोंविषे चैतन्यका आविर्भाव होता है आपहीसे नहीं। अरु अन्तःकरण जो है, सो अन्तराय से विनाही अन्वय अरु व्यतिरेकसे चैतन्य के आविर्भावका करनेवाला है,] अरु विशेषसे जो सम्बन्ध है सोई ज्ञानका हेतु देखा है। जैसे (अदृश्यमान) राहुका चन्द्र अरु सूर्य करके विशिष्ट सम्बन्ध है (सोई राहुके दर्शन का हेतु है)। तैसेही अन्तःकरण (वा बुद्धिका) अरु आत्माका (विशिष्ट) सम्बन्ध है सोई (अविशिष्ट) ब्रह्मके ज्ञानका हेतु है, क्योंकि अन्तःकरण (आत्माके) समीपवर्त्ती है ताते अरु [जैसे अस्वच्छ (मलिन) स्वभाववाले घटादिकों बिषे मुख प्रतिबिम्बको पावतानहीं (अर्थात् मुखका प्रतिबिम्ब होता नहीं) अरु स्वच्छ (निर्मल) स्वभाव वाले जलादिकों बिषे प्रतिबिम्बको पावता है (अर्थात् प्रतिबिम्ब होताहै)। तैसेही शुद्ध सत्त्वगुण प्रधान अन्तःकरणकी (स्वच्छता) अरु एकाग्रता के स्वभाव से तहांही ब्रह्मका ज्ञानघटे है (घटवत् मलिन देहादिकोंबिषे नहीं) इसप्रकार कहते हैं] प्रकाशरूप होने से। [किं वा किरणाकार से विकाशको प्राप्तहुये जड़ सूर्यादिकों का अन्धकाररूप आवरण के तिरस्कारविषे समर्थ प्रकाश अङ्गीकार करते हैं, तैसे जड़ताके तुलहुये अरु वृत्तिके आकार से परिणाम को प्राप्तहुये अन्तःकरण का ही अज्ञानरूप आवरण के तिरस्कार का सामर्थ्य अङ्गीकार करने को योग्य है, ऐसा कहते हैं।] (हे सौम्य!) यहां जो दृष्टान्त दार्ष्टान्त करके कहा कि सूर्यका अपनी किरणों करके अन्धकारके तिरस्कार करनेका सामर्थ्य है, अरु वृत्तिरूपसे परिणामको प्राप्तहुये अन्तःकरण का अज्ञानके तिरस्कार करनेका सामर्थ्य है, सो स्वयंज्योतिः चैतन्य आत्माके निमित्त का किया जानना उनके स्वरूप का ही नहीं क्योंकि सूर्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहे हैं "नेति" नहीं इति, । अरु द्वितीयपक्ष भी बने नहीं, ऐसा कहते हैं] सो कथन बने नहीं, क्योंकि इस श्रुतिवाक्यको अन्य अर्थवालापनाहै ताते॥ प्र०॥ इस स्थान बिषे किस अर्थकी चर्चा करतेहो॥उ०॥ इस वाक्यका प्रसंगबिषे प्राप्तहुआ यह अर्थ है, तथापि कहनेको इच्छित अन्य अर्थ है, सो स्मरण करनेको योग्यहै "ब्रह्मविदाप्नोतिपरम्" ब्रह्मवेत्ता परब्रह्मको पावता है, "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" सत्य ज्ञान अनन्त ब्रह्महै, "योवेदनिहितं गुहायाम्" जो गुहाबिषे स्थित ब्रह्मको जानताहै, ॥ ऐसे प्रसंगबिषे प्राप्तहुआ जिस ब्रह्मका ज्ञान (जानना) सो कहनेको इच्छित है । अरु तिस ब्रह्मस्वरूपके जनावने के अर्थ आकाशादिकों से लेके अन्नमयकोशपर्यन्त सर्वकार्य देखाया । अरु ब्रह्मके जाननेका उपाय आरम्भ कियाहै । तहां "अन्नरसमयादन्योऽन्तरात्माप्राणमयः" अन्नरसमय आत्मासे अन्य भीतर आत्मा प्राणमय है, । अरु तिसके भीतर मनोमयहै, तिसके भीतर विज्ञानमय है, अरु इस विज्ञानमय बुद्धिरूपा गुहा बिषे प्रवेश को पाया आनन्दमय रूप विशिष्ट आत्मा देखाया । [बुद्धिरूपा गुहाबिषे प्रवेशसे अनन्तर आनन्दमयही विशिष्टार्थ है, क्योंकि लिंगकरके चेतनरूप विशेष्यके विशेष्यपने के अव्यभिचारको देखते हैं ताते । तिसके ज्ञानद्वारा आनन्दके वृद्धिका अवधिआत्मब्रह्मरूपी जो है, सो इस ही [बुद्धिरूपा गुहाबिषे जाननेको योग्यहै, इस अभिप्रायसे जल बिषे सूर्यके प्रवेशवत् आनिर्वचनीय प्रवेश कहिये है । यह अर्थ है] याते पीछे आन्दमयरूप लिंग [चिह्न] के ज्ञानद्वारा आनन्दकी वृद्धिका अवधिरूप ब्रह्मपुच्छ प्रतिष्ठा सर्वविकल्पका आश्रय अरु निर्विकल्परूप जोआत्माहै, सो इसही बुद्धिरूपा गुहाबिषे जानने को योग्यहै । इस रीतिसे तिसका प्रवेश कल्पना करते हैं । [बुद्धिरूपा गुहाबिषेही ब्रह्मके ज्ञानका संभव होनेसे तहांहीं [उसका] प्रवेश कहनेको इच्छितहै, इसप्रकार कहते हैं] अरु जिस करके ब्रह्मनिर्विशेष है ताते अन्य ठिकाने जाताजाता नहीं । [तहु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्य ठिकाने प्रतीति के अयोग्य जो ब्रह्म है सो बुद्धिविषेही कैसे प्रतीतहोताहै, यह आशंकाकरके ऐसा कहतेहैं कि उपाधिकीकोई योग्यता के सम्भव होनेसे बुद्धि विषेही ब्रह्मप्रतीत होवे है. यहां यह अर्थ है कि अन्तःकरणके सम्बन्धसेही देह अरुघटादिकोंविषे चैतन्यका आविर्भाव होता है आपहीसे नहीं। अरु अन्तःकरण जो है, सो अन्तराय से विनाही अन्वय अरु व्यतिरेकसे चैतन्य के आविर्भावका करनेवालाहै,] अरु विशेषसे जो सम्बन्धहैसोई ज्ञानका हेतु देखा है। जैसे {अदृश्यमान} राहुका चन्द्र अरु सूर्य करके विशिष्ट सम्बन्ध है {सोई राहुके दर्शन का हेतु है}। तैसेही अन्तःकरण {वा बुद्धिका} अरु आत्माका {विशिष्ट} सम्बन्ध है सोई {अविशिष्ट} ब्रह्मके ज्ञानका हेतु है, क्योंकि अन्तःकरण {आत्माके} समीपवर्त्ती है ताते अरु [जैसे अस्वच्छ (मलिन) स्वभाववाले घटादिकों बिषे मुख प्रतिबिम्बको पावतानहीं {अर्थात् मुखका प्रतिबिम्ब होता नहीं} अरु स्वच्छ (निर्मल) स्वभाव वाले जलादिकों बिषे प्रतिबिम्बको पावता है {अर्थात् प्रतिबिम्ब होताहै}। तैसेही शुद्ध सत्त्वगुण प्रधान अन्तःकरणकी {स्वच्छता} अरु एकाग्रता के स्वभाव से तहांही ब्रह्मका ज्ञानघटे है {घटवत् मलिन देहादिकोंबिषे नहीं} इसप्रकार कहते हैं] प्रकाशरूप होने से। [किं वा किरणाकार से विकाशको प्राप्तहुये जड़ सूर्यादिकों का अन्धकाररूप आवरण के तिरस्कारबिषे समर्थ प्रकाश अङ्गीकार करते हैं, तैसे जड़ताके तुलहुये अरु वृत्तिके आकार से परिणाम को प्राप्तहुये अन्तःकरण का ही अज्ञानरूप आवरण के तिरस्कार का सामर्थ्य अङ्गीकार करने को योग्य है, ऐसा कहते हैं।] हे सौम्य! यहां जो दृष्टान्त दार्ष्टान्त करके कहा कि सूर्यका अपनी किरणों करके अन्धकारके तिरस्कार करनेका सामर्थ्य है, अरु वृत्तिरूपसे परिणामको प्राप्तहुये अन्तःकरण का अज्ञानके तिरस्कार करनेका सामर्थ्य है, सो स्वयंज्योतिः चैतन्य आत्माके निमित्त का किया जानना उनके स्वरूप का हीं नहीं क्योंकि सूर्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरु अन्तःकरण का, अन्धकार अरु अज्ञान नाशक सामर्थ्य उनके स्वभाव स्वरूप का ही माननेसे "तस्यभासासर्वमिदंविभाति" अरु "यदादित्यगतंतेजो जगद्भासयतेऽखिलम्" इत्यादि श्रुतिस्मृतियों से विरोध आवता है ॥] अरु जैसे प्रकाश करके विशिष्ट घटादिकों का ज्ञान होता है, तैसे बुद्धि वृत्तिरूप प्रकाश करके विशिष्ट आत्माका ज्ञान होवेहै, ताते ज्ञानकी हेतु बुद्धिरूप गुहाबिषे स्थित, ऐसे प्रसंगबिषे प्राप्तहुआ । जो ब्रह्म । सोबुद्धि वृत्तिरूप स्थानवाला ब्रह्मही यहां पुनः तत्सृष्ट्वातदेवानुप्राविशत्" तिसको सृजिके तिसके ही अर्थ पीछे प्रवेश करताहुआ, । इसप्रकार कहियेहै । सोई यह आकाशादिकोंका कारण ब्रह्म सो कार्यको सृजके तिसके अर्थ पीछे प्रवेशहुयेवत् बुद्धिरूपा गुहाके भीतर । द्रष्ट, श्रोता, मन्ता अरु विज्ञाता, ऐसे विशेषवत् प्रतीत होताहै । सोई तिसका प्रवेश है । एतदर्थ सो कारणरूप ब्रह्महै, अरु सो अस्तिभाव के होनेसे है, इस प्रकार जाननेके योग्य है । सो तिस कार्यके ताईं पीछे प्रवेश करके सच्चकहिये मूर्त्त (स्थूलरूप) अरु त्यच्च कहिये अमूर्त्त (सूक्ष्मरूप) होताहुआ । अरु जिसकारके अप्रकट नामरूपमय आत्माबिषे स्थितमूर्त्त अरु अमूर्त्त, यह दोनों अपने अन्तर्गत आत्मासे प्रकट करते हैं । एतदर्थ वे मूर्त्त अरु अमूर्त्त शब्दके वाच्यहैं । अरु वे आत्मासे विभागरहित देशकालवाले हैं, एतदर्थही सो [मूर्त्त अमूर्त्त] दोनोंरूप आत्मा होताहुआ इसप्रकार कहिये है । "ब्रह्मणो वा द्वे रूपे मूर्त्तञ्चामूर्त्तञ्च" । श्रुत्यन्तरे । । किंवा समान अरु असमान जातिवाले पदार्थोंसे निकृष्टहुआ देश अरु काल तिनकरके विशिष्ट होनेसे "इदंतत्" यह अरु सो, । ऐसे कथनकिया जो "निरुक्तञ्चानिरुक्तञ्च, निलयनञ्चानिलयनञ्च, विज्ञानञ्चाविज्ञानञ्च, सत्यञ्चानृतञ्च, सत्यमभवत्, यदिदं किञ्च, तत्सत्यमित्याचक्षते, तदप्येष श्लोको भवति" । निरुक्त अरु अनिरुक्त, निलयन अरु अनिलयन, विज्ञान अरु अविज्ञान, सत्य अरु असत्य, सत्यरूप होताहुआ, तिसको सत्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसे कहते हैं, तिसबिषे यह श्लोक होताहै ; अर्थात् , यह अरु सो, इसप्रकार कथन किया जो निरुक्त अरु तिससे विपरीत सो अनिरुक्त । अर्थात् यह निरुक्त अरु अनिरुक्त यह भी मूर्त्त अमूर्त्तके ही विशेषणहैं, जैसे प्रत्यक्ष अरु परोक्ष रूप अर्थवाल सच्च अरु त्यच्चरूप विशेषण हैं तैसे । अरु निलयन अरु अनिलयन । निलयन जो आश्रय सो मूर्त्तकाही धर्म है, अरु तिससे विपरीत जो अनिलयन सो अमूर्त्तकाही धर्म है । [निलयन कहिये गृह अरु अट्टालिकादिक मूर्त्तिमान् स्थानविशेष, अरु अनिलयन कहिये अवयवरूप, देश विशेषसे रहितपना, सो अनिरुक्तादिक अमूर्त्तके धर्मवत् ब्रह्मकोही क्यों न होवेंगे, तहां कहते हैं] त्यत् अरु अनिरुक्त अरु अनिलयन, यह अमूर्त्त रूपताके हुये भी व्याकृतको विषय करनेवालेही हैं, क्योंकि सृष्टिके उत्तरकाल बिषे तिनके होनेका श्रवणहै ताते । याते त्यत् जे प्राणादिक अनिरुक्त हैं सोई अनिलयनहैं, याते यह अमूर्त्तके विशेषण व्याकृत ,कार्य, कोही विषय करनेवाले हैं । अरु विज्ञान (चैतन्य) अरु चेतन से रहित अचेतनरूप अविज्ञान, अरु पाषाणादिरूप सत्य । यहां सत्य जो कहा सो अधिकारसे व्यवहारको विषय करनेवाला है परन्तु परमार्थसे सत्य नहीं । परमार्थसे सत्यरूप तो एक ब्रह्मही है, अरु व्यवहार को विषय करनेवाला जो सत्य है, सो सापेक्षिक है । याते मृग जलादिक असत्यकी अपेक्षा से व्यावहारिक जलादिक सत्य कहते हैं, अरु तिस सत्यसे विपरीत सो झूठ (असत्य) यह सर्व सो परमार्थ से सत्यरूप जो ब्रह्म सो होता हुआ ॥ प्र० ॥ सो ब्रह्म क्या रूपहै॥उ०॥ सोब्रह्म " सत्यंज्ञानमनन्तं ब्रह्म " सत्य ज्ञान अनन्तब्रह्म है, । अर्थात् सोब्रह्म ,सत्य, चैतन्य, अनन्त रूप है । ऐसे प्रसंगमें प्राप्तहुआ होनेसे, सत्यादिरूप है। अरु जिस करके सत् अरु त्यत् आदिक मूर्त्त अरु अमूर्त्तरूप धर्मों का समूह जो कुछ यह विलक्षण विकारका समूह है, सो एकही सत् शब्दका वाच्यब्रह्म होताहुआ, तिससे भिन्न नाम रूपमय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विकार कहिये कार्य तिसके अभाव से । याते तिस (सर्व के कारणरूप) ब्रह्मको ब्रह्मवेत्ता सत्य ऐसा कहते हैं । [पदोंका अर्थ करके प्रसंगविषे प्राप्त प्रश्न के निषेधहुये " सोऽकामयत,इति " सो कामना करताहुआ, । इत्यादिरूप प्रकरणके तात्पर्यको देखाते हैं] (ब्रह्मवेत्ता तो ब्रह्मको सत्य कहते हैं, परन्तु) ब्रह्म है वा नहीं, ऐसा प्रसंगविषे प्राप्तहुआ प्रश्न है, तिसके उत्तर विषे यह कहा कि " बहुस्यामि " मैं बहुत होवों, । ऐसे कामना करता हुआ । अरु सो कामना के अनुसार सत् अरु त्यत् आदि लक्षण वाले आकाशादि कार्यरूप सृजके तिसके ताईं पीछे प्रवेश करके, देखताहुआ, सुनताहुआ, मनन करताहुआ, जानताहुआ, बहुत रूप होताहुआ । ताते सो यह आकाशादि कार्योंका कारण परम व्योमविषे अनुगत हृदयरूपा गुहाविषे स्थित, अरु तिस गुहाके अहंकर्त्ता भोक्ता इत्यादि वृत्तिरूप प्रकाशविशेषों से प्रतीयमान ब्रह्मको " है " इसप्रकार जानना ऐसे कथन कियाहै । अरु तिस (इस ब्राह्मण भागकरके उक्त, अर्थविषे यह श्लोक कहिये मन्त्र (प्रमाण) होताहै । अर्थात् जैसे पूर्व के पाँच अनुवाकों विषे भी अन्नमयादिक आत्माके प्रकाशक मन्त्रहैं, तैसे कार्यद्वारा अत्यन्त सर्वान्तर आत्मा के सद्भाव के प्रकाशक भी मन्त्र होतेहैं ॥ इति षष्ठोऽनुवाकः ॥

अथ सप्तमोऽनुवाकः ॥

हेसौम्य! "असद्वाइदमग्रआसीत्, ततोवैसदजायत, तदात्मान ँस्वयमकुरुत, तस्मात्तत्सुकृतमुच्यत इति" (यह आगे असतही होताहुआ, तिससेही सत्उत्पन्न होताहुआ, सो आपही आपको ही करताहुआ, ताते सो सुकृत कहिये है, अर्थात् यह जगत्आगे असतही होताहुआ । यहां असत् शब्दकरके प्रकटनामरूप प्रपंच से विपरीतरूपवाला अविकारी ब्रह्म कहतेहैं । पुनः सो अत्यन्तही असतहै ऐसानहीं जिसकरके असत्सेसत् ,विद्यमान, जन्मसेरहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असद्वा इदमग्र आसीत। ततो वै सदजायत। तदात्मनꣳ स्वयमकुरुत। तस्मात्तत्सुकृतमुच्यत इति। यद्वैतत्सुकृतम्। रसो वै सः। रसꣳ ह्येवायं लब्ध्वा ऽऽनन्दी भवति। को ह्येवान्यात्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनन्दो न स्यात् एष ह्येवानन्दयति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गतो भवति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते। अथ तस्य भयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषो मन्वानस्य। तदप्येष श्लोको भवति ३१॥ इति सप्तमोऽनुवाकः॥

ऐसानामरूप विशेषवाला व्याकृत(कार्य)रूप जगत् उत्पत्तिसे पूर्व नहीं हुआहै, किन्तु असत् ब्रह्मकावाच्य ब्रह्महोताहुआ। तिसअसत् ब्रह्म से निश्चयकरके नामरूपके विभागवाला प्रपंचरूप से सत् उत्पन्नहुआ॥ तिससे विभागवाला कार्य क्या पिता से पुत्रवत् उत्पन्नहुआहै, तहां नहीं, इसप्रकार कहते हैं, सो असत्, ब्रह्मका वाच्य ब्रह्म आपही आपकोही करताहुआ। इस करके ऐसे है, ताते सो ब्रह्मही सुकृत, (अर्थात् आपही कर्त्ता) कहते हैं। लोकविषे ब्रह्म सर्व्वका कारण होने से आपही कर्त्ता प्रसिद्ध है। जाते निश्चय करके सर्वरूपसे सर्वको आपही करताहुआ, ताते सो आपही कर्त्ता ऐसा कहते हैं। वा पुण्यरूपसे भी सोई ब्रह्मरूप कारण सुकृत कहते हैं। अरु लोकविषे सर्वथा भी फलका सम्बन्धादिक कारण सुकृत शब्दका वाच्य प्रसिद्धहै। अरु जब पुण्य है वा अन्य है, सो प्रसिद्ध चेतनवत् नित्य कारण के होते संभवे है, ताते सुकृत की प्रसिद्धि से सो ब्रह्म सुकृतरूप है। अरु इस अग्रिम कहने की रसरूपता की प्रसिद्धि रूप हेतु से भी यह ब्रह्म सुकृतरूपहै॥ प्र०॥ ब्रह्मको सुकृतपनेकी प्रसिद्धि काहे से है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ० ॥ तहां कहते हैं "यद्वैतत् सुकृतम्, रसो वै सः;रसं ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दीभवति" (यद्वा यह सुकृत, निश्चय करके सो रसरूप है, रसकोही पायके आनन्दित होते हैं) अर्थात् यद्वा यह सुकृत निश्चयकरके सो रसरूप है । लोक बिषे तृप्तिका हेतु आनन्दकारी मधुर आम्रादिक रूप रस प्रसिद्धहै यह पुरुष रसको ही पायके आनन्दित कहिये सुखी होताहै । लोकबिषे असत् वस्तुको आनन्द का हेतुपना देखा नहीं । अरु जिसकरके बाह्य आनन्द के साधन से रहितहुये भी इच्छा अरु एषणा से रहित विद्वान् ब्राह्मण बाह्य रसके लाभादिकों से रहित रसरूप आनन्द वाले देखते हैं, तिनका ब्रह्मही रसहै । एतदर्थ तिन विद्वानों को आनन्दका कारण रसवत् ब्रह्माही रसहै । अरु प्राणादिक क्रियाके देखने रूप हेतु से भी ब्रह्महै, इसप्रकार जानाजाताहै । अरु यह पिण्ड (देह) भी जीवते के प्राणसे प्राणन (जीवन) क्रिया को करताहै,अरु अपानसे अपाननक्रियाको करताहै,ऐसेवायुसम्बन्धी अरु इन्द्रियसम्बन्धी जो चेष्टाहै, सो मिश्रितहुये कार्य अरु कारण रूपसंघातकरके निर्वाह कियाहुआ देखतेहैं अरु सो एकप्रयोजन का साधनहोने करके परस्परके अधीनअचेतनरूप कार्य कारणका संघात चेतन करके युक्त संभवे है, क्योंकि [गृह अरु अटारीआदिकों बिषे स्वतन्त्र, अरु गृहादिकों से आरंभ करने को अयोग्य स्वामी विना मिलावने के अदर्शन से । अर्थात् गृहादिक जिनकी संज्ञाहै सो ईंट पाषाण चूना मृत्तिका काष्ठादि संघात से निर्मित होते हैं, परन्तु उन ईंट पाषाणादि जड़ों के संघात से पृथक् अरु चेतन कोई एक उनके स्वामी करकेही उन ईंट पाषाणादिकोंका एकत्रहोय गृहादिकों के नामरूप से निर्माण होना लोकबिषे देखाहै, उन ईंट पाषाणादिकों से भिन्न उनके स्वामी चैतन्य विना उन जड़ ईंट पाषाणादि संघातका एक होना देखा नहीं । कार्य कारण के संघात बिषे भी विलक्षण अरु शरीरवाला अरु अवयवादिकों से अरु बुद्धि आदिकों से रहित । उन जड़ संघात

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का एकत्र करनेवाला कोई एक। स्वामी जानिये है, अरु वह चेतनपने करके। सर्वत्र। भेदके अभाव से ब्रह्मही है, इसप्रकार तिसके सद्भावकी सिद्धिहै। यह अर्थ है] अन्य ठिकाने स्वामीसे रहित तिनका अदर्शनहै ताते। सो कहते हैं "को ह्येवान्यात्कःप्राण्यात्, यदेष आकाश आनन्दो न स्यात् एष ह्येवानन्दयति, यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते" (जब यह आकाशविषे आनन्द न होवे, कौनही अपान रूप चेष्टाको करेगा, कौन प्राणनरूप चेष्टाको करेगा, जिसकरके यहही आनन्द करावे है, जब याते यह इस अदृश्य अनात्म्य अनिरुक्त अनिलयन अभय स्थितिको पावताहै तब सो अभयको प्राप्त होताहै) अर्थात् जब यह आकाशसंज्ञक परमव्योमगत हृदयरूपा गुहाविषे स्थित आनन्द न होय तब लोकविषे कौनही अपानरूप चेष्टाको करेगा, अरु कौन प्राणनरूप चेष्टाको करेगा, किन्तु कोई भी न करेगा, ताते सो ब्रह्म है, ऐसा जानाजाताहै॥ जिसके अर्थ कार्य कारणादिकों की प्राणन आदिक चेष्टा होवे है, तिसका कियाही आनन्द लोकोंको होताहै॥ प्र०॥ यह काहे से जानतेहो, ॥उ०॥ जिसकरके यहही परमात्मा लोकोंको। उनके। पुण्योंके अनुसार आनन्द करावे है, अरु सोई आनन्दरूप आत्मा प्राणियों को अविद्या से परिच्छिन्न भासताहै, एतदर्थ अविद्वान् को भयका अरु विद्वान्को अभयका हेतु होने से, सो ब्रह्महै, इस प्रकार जानिये है॥ ननु, सत् अवस्थावाले वस्तुके आश्रयसे अभय होताहै, अरु असत् वस्तुके आश्रयसे भयकी निवृत्ति संभवे नहीं, इसकरके ब्रह्मको अभय का हेतुपना कैसे है, तहां कहतेहैं, जब जिसकरके यह साधक इस अदृश्य [दृश्यनाम देखनेयोग्य विकारका है, क्योंकि विकार (कार्य) दर्शनके अर्थहै ताते, । अरु ब्रह्म जिसकरके दृश्य नहीं, इसकरके अदृश्य कहिये अविकारहै। यह अर्थ है] ,अविकारी अरु अविषयरूपहै, अरु जिसकरके अदृश्यहै तिसही करके अनात्म्य कहिये अशरीरहै, अरु जिसकरके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनात्म्य । अशरीरी। है तिसही करके अनिरुक्त कहिये अवाच्यहै [जो विशेषहै सोई कहनेका विषय है, अरु सो विशेष विकार रूपहै । अरु ब्रह्म जिसकरके सर्व विकारों (कार्यों) का हेतु (कारण) है ताते अविकारीरूपहै, एतदर्थ अनिरुक्त कहिये अवाच्य है ।] अरु जिसकरके अनिरुक्तहै तिसही करके अनिलयन कहिये आधाररहित अनाधारहै ऐसा कहते हैं अरु पूर्व कार्य के धर्मसे विलक्षण ब्रह्मविषे अभय स्थितिकहिये आत्मभावकोपावता है, तब सो तिस ब्रह्म विषे भयके हेतु अविद्याकृत नानाभावके अदर्शनसे अभयको प्राप्त होताहै । अरु जिसकरके यह साधक जब स्वरूप विषे प्राप्त होताहै तब अन्यको देखता नहीं, अन्यको सुनता नहीं, अन्य को जानता नहीं अरु जिसकरके अन्य से अन्यको भय होताहै, आत्मा अपने आपसेही नहीं, एतदर्थ आत्मा से जो अभय कहा सो युक्त है ताते आत्माही आत्मा के अभयका कारण है । अरु भय हेतुके होते ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण सर्व ओरसे निर्भय देखिये है, अरु भयसे रक्षक ब्रह्मके अविद्यमानहुये सो अभयअयुक्तहै, ताते तिन ब्राह्मणको अभयके दर्शन से तिस अभयका कारण ब्रह्महै इसप्रकार जानते हैं ॥प्र०॥यह साधक कब अभयको प्राप्त होताहै॥उ०॥ जब यह साधक अन्यको नहीं देखता है, अरु आत्माविषे भेदको करता नहीं, तब अभयको प्राप्त होता है । यह अभिप्राय है " अथ सोऽभयंगतो भवति, यदाह्येवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते, अथ तस्य भयंभवति, तत्त्वेव भयं विदुषो मन्वानस्य, तदप्येष श्लोको भवति " (तब सो अभयको प्राप्त होताहै, जब जिस करके यह इसबिषे अल्पभी अन्तर को करताहै तब तिसको भय होताहै, जाननेवाले न माननेवाले को सोई तो भय होता है, तिसबिषे भी यह श्लोक होता है) अर्थात् तब सो तिस ब्रह्मविषे भयके हेतु अविद्याकृत नानाभावके न देखने से अभय को प्राप्त होता है, अरु जब अविद्यावस्था विषे जिसकरके यह अविद्यावान् अविद्या करके आरो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पित वस्तुको तिमिर दोषकरके आरोपित द्वितीय चन्द्रमावत् आत्मा विषे देखता है, अरु इस ब्रह्मविषे अल्प भी अन्तर कहिये भेददर्शन को करता है, अर्थात् अन्तःकरण विषे रंचक-मात्र भी भेदको देखता है, तब तिस भेद दृष्टिरूप हेतु करके तिस भेददर्शी आत्माको भय होताहै। एतदर्थ आत्माही आत्मा को भयका कारण होताहै, अर्थात् ईश्वर मुझ से अन्यहै अरु मैं तिससे अन्य संसारी हौं, इसप्रकार जाननेवाले अरु अल्प भी भेदके करनेवाले पुरुषों को भय होताहै। इसप्रकार जानके भी एकता करके न माननेवाले भेददर्शी को भेददृष्टिका विषयकिया सोई ब्रह्म तो भयका हेतु होताहै। ["दासोस्मि" "दासोऽहं तस्य देवस्य ममाराध्यःपरमेश्वर इति" मैं दासहौं, वा मैं तिसदेवका दासहौं अरु मेरा आराध्य परमेश्वर है, । इसप्रकार के भेदको, जाननेवालेको कैसे अज्ञानी कहतेहौ, यहां यह अर्थहै, जैसे चन्द्रमा के भेदको देखताहुआभी पुरुष अयथार्थदर्शी होनेसे अज्ञानीकहते हैंतैसे]जिसकरके जो यह एक अभिन्न आत्मतत्त्वको देखतानहीं, तिसही करके यह विद्वान् भी अविद्वान्है। तब तिस भेददर्शी को भयकी संभावना किसप्रकार होती है। तहां कहते हैं, यहांयहअर्थ है कि, संहारका कर्ता परमेश्वर हमको संहार करेगा, वा नरक विषे डालेगा, इसप्रकार देखनेवाले पुरुषको भय होताहै।]अरु नाश करनेयोग्य मानेहुये वस्तुके विनाशके हेतुके देखने से, तिस को भय होवे है। ब्रह्मही उच्छेदका हेतु काहेसे है। तहां कहे हैं। यहां यह अर्थ है कि, उच्छेद कहिये नाश तिसके हेतुके भी उच्छेद के हुये अनवस्थाके प्रसंगसे तिसकी नित्यता कहनेको योग्य है, सो उच्छेद का हेतु ब्रह्मसे अन्य संभवे नहीं] अरु अन्यों के नाश का हेतु जो ब्रह्महै, सो नाश करने को अयोग्य है, एतदर्थ तिस भेददर्शी के चित्त विषे तिस नाशके कारण। अरु नाश करनेको अयोग्य ब्रह्मके अविद्यमानहुये तिस नाशके हेतु भेदके दर्शनका कार्यरूप भय युक्तहै। अरु सर्व जगत्को भयवाला देखते हैं, ताते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भीषाऽस्माद्वातः पवते । भीषोदेति सूर्य्यः भीषास्मादग्निश्चेन्द्रश्च । मृत्युर्धावति पञ्चम इति । सैषाऽऽनन्दस्य मीमाष्ठंमा भवति । युवा स्यात्साधु युवाऽध्यायिकः । आशिष्ठो दृढिष्ठो बलिष्ठः । तस्येयं पृथिवी सर्वावित्तस्य पूर्णास्यात् । स एकोमानुष आनन्दः । ते ये शतं मानुषा आनन्दाः । स एको मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दाः । स एको देवगन्धर्वाणामानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतं देवगन्धर्वाणामानन्दाः । स एकः पितृणां चिरलोकलोकानामानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानामानन्दाः । स एक अजानजानां देवानामानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतमाजानजानां देवानामानन्दाः । स एकः कर्म्मदेवानामानन्दः । ये कर्म्मणा देवानपि यन्ति । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतं कर्म्म देवानामानन्दाः । स एको देवानामानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतं देवानामानन्दाः । स एक इन्द्रस्यानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतमिन्द्रस्यानन्दाः । स एको बृहस्पतेरानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः । स एकः प्रजापतेरानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ ते ये शतं प्रजापतेरानन्दाः । स एको ब्रह्मण आनन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ॥ स यश्चायं पुरुषे यश्चासावादित्ये । स

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एकः। स य एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य एतमन्नमय मात्मानमुपसंक्रामति। एतंप्राणमयमात्मानमुपसंक्रा मति। एतंमनोमयमात्मानमुपसंक्रामति। एतंविज्ञान मयमात्मानमुपसंक्रामति। एतमानन्दमयमात्मानमुपसं क्रामतितदप्येषश्लोको भवति३२॥इत्यष्टमोऽनुवाकः॥

जगत् के भयके देखनेसे जानिये है कि जिससे जगत् भयको पा-वताहै, ऐसा भयका कारण विनाशका हेतु अविनाशी रूप सो ब्रह्म निश्चय करके है। तिस इस अर्थबिषे भी यह अग्रिम कहनेका श्लोक कहिये मन्त्र प्रमाण होवे है॥ ३१॥ इति सप्तमोनुवाकः॥

अथाष्टमोऽनुवाकः॥

हे सौम्य"भीषाऽस्माद्वातः पवते, भीषोदेतिसूर्य्यः, भीषास्माद ग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चम इति"। (इससे भयकरके वायुच-लताहै, भयकरके सूर्य उदयहोताहै, इससे भयकरके अग्नि, इन्द्र, अरु पांचवां मृत्युधावताहै) अर्थात् जिसकरके वायु आदिक आप ईश्वरहुये भयके योग्यहोयके बहुत श्रमवाले गमनादिक कार्य्यों विषे नियमितहुये प्रवृत्त होतेहैं, सो भयकाकारण आनन्दरूपब्रह्म है। तिस इसआनन्दरूप ब्रह्मको यहयुक्तहै कि जिस नियामक के होते नियम करके तिनका प्रवर्त्तन होवे है। अरु राजा से किं-करवत् वे वायुआदिक इस ब्रह्म से भयकरके प्रवर्त्त होते हैं, एतदर्थ। उनको। भयका कारण तिनका नियामक ब्रह्महै। अरु सो भयका कारण ब्रह्म आनन्दरूप है [सो भयका कारण ब्रह्म "यदेष आकाशआनन्दो नस्यात्" जो यह आकाशबिषे आनन्द न होय तो, । इस श्रुतिबिषे आनन्द कहा। अरु यहां आनन्द जो है सो लोकबिषे जन्य प्रसिद्धहै, ताते विचारका आरंभ करते हैं] "। सैषाऽऽनन्दस्य मीमांसाभवति, युवास्यात्साधु युवाऽ ध्यायिकः। आशिष्ठो दृढिष्ठो बलिष्ठः, तस्येयं पृथिवी सर्वावित्त-स्य पूर्णा स्यात् स एको मानुष आनन्दः"। (आनन्द का सो यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विचार होताहै, श्रेष्ठ युवा, अधीत चारो वेद, और से पाया, दृढ़ अरु बलिष्ठ, तिसकी यह सर्व पृथिवी वित्तकरके पूर्ण होती है, सो एक मनुष्यों का आनन्द होताहै) अर्थात् तिस इस ब्रह्म के आनन्दका सो यह विचारहै ॥ प्र० ॥ आनन्दका क्या विचार करने को योग्यहै, तहां कहते हैं ॥ उ० ॥ ब्रह्मका आनन्द क्या लौकिक आनन्दवत् विषय अरु विषयी के सम्बन्धसे जन्यहै, अथवा स्वाभाविकहै, इसप्रकारका यह आनन्द का विचारहै । [जब ब्रह्मानन्दका विचार प्रसंगविषे प्राप्तहुआहै, तब यहां श्रुतिविषे सार्वभौमके आनन्दादिकों के कहनेका आरंभ किस अर्थ है, इस शंकापर कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि जो लौकिक आनन्द है सो कहीं भी अवधि को पायाहै ? कि यह इतनाहै ? क्योंकि सातिशयहै, परमाणुवत् । इसप्रकार ब्रह्मानन्द के विचार अनुमानार्थ लौकिक आनन्दोंके कथनका आरंभहै] यहां जो लौकिक आनन्दहै सो बाह्य अरु भीतरके साधनोंकी सम्पत्तिरूप निमित्त वालाउत्कृष्टहै, सो यह ब्रह्मानन्दके निश्चयार्थ कहतेहैं । अरु जिस करके इसप्रसिद्ध आनंदसे विषयरहित ब्रह्म अरु आत्माकी एकता के दर्शी पुरुषों की बुद्धिका विषय ब्रह्मानन्द जानने को शक्य है, एतदर्थ यह लौकिक आनन्द कहते हैं [अब अन्यप्रकारसे ब्रह्मानन्दके ज्ञानको कहते हैं] लौकिक आनन्द भी ब्रह्मानन्दका लेश है । अरु अविद्यासे तिरस्कारको पायाहुआ अज्ञात सो ब्रह्मानन्द, अविद्या के उत्कर्षहुये ब्रह्मादि प्राणियों करके कर्मके वशसे बुद्धिके अनुसार विषयादि साधन के सम्बन्ध के अधीन होवे हैं, अरु सो लोकविषे विपरीत भासमान होने से अस्थिर लौकिक होताहै अरु सोई ब्रह्मानन्द, अविद्या काम अरु कर्म्म इसकी न्यूनता करके मनुष्य गंधर्वादिकोंकी उत्तरोत्तर भूमिविषे निष्काम विद्वान् श्रोत्रियको प्रत्यक्षहुआ शत १०० गुणा अधिक अधिक उत्कर्ष से जहांलगि हिरण्यगर्भरूप ब्रह्मका आनन्द है तहां पर्य्यन्त भासताहै । अरु अविद्याकृत विषय विषयी के विद्याद्वारा निषेध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कियेहुये स्वाभाविक परिपूर्ण एक अद्वैत आनन्द होता है। इस अर्थको प्रकट करनेकी इच्छा करतेहुये कहतेहैं। श्रेष्ठ युवा अधीत चारोंवेद, माता पितादिक अन्यसे शिक्षा पायाहुआ अत्यन्त दृढ़ अरु बलिष्ठ, ऐसे अन्तरके साधनकरके सम्पन्न जोपुरुषहै तिसकी यह भोगके साधनधनकरके अरु कर्मके साधन दृढ़ अर्थकरके पूर्ण सर्वपृथिवी होती है, अर्थात् सम्पूर्ण पृथिवीका पति चक्रवर्ती राजा होताहै। तिसका जो आनन्दहै सो एक मनुष्योंका उत्कृष्ट आनंद है। तेये शतं मानुषा आनन्दः, स एको मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दः, श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य ॥ (वे जे शत मनुष्योंके आनन्दहैं, सो एक मनुष्य गन्धर्वका आनन्दहै, सो श्रोत्रिय मनुष्यके विषयभोग अरु कामनाके निवृत्तहुये होती है) अर्थात् वह जो एक चक्रवर्ती राजाका आनन्द है तैसे सौ चक्रवर्ती के आनन्दहैं सो मिलके एक मनुष्य गन्धर्वोंका आनन्दहै। अर्थात् मनुष्योंके आनन्दसे सौगुणा अधिक मनुष्य गन्धर्वोंका आनन्द होता है मनुष्य होके जो कर्म उपासनाके बलसे गन्धर्वपनेको प्राप्तहुये हैं, तिनको मनुष्य गंधर्व कहतेहैं। अरु सो जिस करके अन्तर्धानादिक होनेकी शक्तिकरके सम्पन्नहैं, अरु सूक्ष्मकार्य कारणवाले (आतिवाहक शरीरवाले) हैं, ताते उनको शीतोष्णादिक द्वन्द्वकृत पीड़ाकी अल्पताहै, अरु द्वन्द्वके निवारण करने की सामर्थ्यरूप साधनकी सम्पत्ति है। एतदर्थ मनुष्यके भोगोंकी कामनासे रहित मनुष्य गन्धर्वकोचित्त की प्रसन्नता होती है। तिसप्रसन्नता विशेषसेसुख विशेषकी प्रकटता होवे है। इसप्रकार पूर्व पूर्व भूमिकासे उत्तरोत्तर भूमिकाविषे प्रसन्नताके विशेषसे शतगुणा आनन्दका उत्कर्ष संभवे है। [प्रथम "अकामहत" निष्काम,। इस विशेषण से अग्रहण का तात्पर्य्य कहते हैं। यहां यह अर्थ है कि जब प्रथम पर्यायविषेही निष्काम ग्रहण करिये, तब तिसहीको सार्वभौम कहिये चक्रवर्त्ती राजाके तुल्य आनन्द होवेगा तब मानुष आनन्दकी इच्छासे रहित पुरुष मानुष आनन्दका भागी है, इस प्रकार व्याघात दोष होवेगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एतदर्थ मनुष्य गन्धर्वके आनन्दसे तुल्य तिसके आनन्दको देखावने को प्रथम पर्याय बिषे "अकामहतस्य" इस विशेषण का अग्रहण है] प्रथम तो "अकामहत" कामना से रहित, । इस विशेषणका अग्रहण है, क्योंकि मनुष्यों के विषय भोगकी कामनासे अहतहुये श्रोत्रिय ,विद्वान्,को मनुष्यके आनन्दसे शतगुण आनन्दका उत्कर्ष मनुष्य गन्धर्वके तुल्य कहनेको योग्य है, इस प्रयोजनार्थ "युवास्यात्साधुयुवाऽऽध्यायिकः" श्रेष्ठयुवा अरु अधीतिवेद । इन पदोंकरके श्रोत्रियपना अरु निष्पापपना ग्रहण करिये है । अरु जिसकरके सो दोनों विशेषण सर्वठिकाने समान हैं अरु कामनासे रहितपना तो विषयकी अधिकता अरु न्यूनता से सुखकी न्यूनता अधिकताके अर्थ विशेष होताहै । एतदर्थ तिसके विशेषसे शतगुणा सुखके अधिकताकी प्रतीति से कामनासे रहितपने को परमानन्दके प्राप्ति की साधनताके विधानार्थ प्रथम पर्य्याय बिषे कामनासे रहितपनेका अग्रहण है इस प्रकार कथन किया जो मनुष्य गंधर्वका आनन्द सो श्रोत्रिय मनुष्यके विषय भोगकी अरु कामनासे रहित ,ज्ञानी,को होवे है "तेयेशतं मनुष्य गन्धर्वाणामानन्दाः,सएकोदेवगंधर्वाणामानन्दः, श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य" (वह जोशतमनुष्य गन्धर्वोंका आनन्दहै सोएकदेवगंधर्वका आनन्दहै, सोश्रोत्रिय अरु कामनासे रहित पुरुषोंको होताहै। अर्थात् जो सौ १०० मनुष्य गंधर्वका आनन्दहै सो एकदेव गंधर्वका आनन्दहै सोआनन्द श्रोत्रिय अरुनिष्काम पुरुष कि जिसकी मनुष्य गंधर्वोंके आनन्दकी कामना उठगईहै तिसको होताहैअरु कल्पकी आदिबिषे जो जातिसेही गंधर्व होते हैं, तिनको देवगंधर्व कहतेहैं "तेयेशतं देवगन्धर्वाणामानन्दाः, सएकः पितृणांचिरलोकलोकानामानन्दः, श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य" (वे जो शतदेवगन्धर्वोंके आनन्द हैं सो एकचिरलोकवासी पितरोंका आनन्दहै, सो श्रोत्रिय अरु कामना से रहितको होता है) अर्थात् जो एक देवगन्धर्व के आनन्दहैं तिससे सौगुणा अधिक एक चिरलोकवे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निवासी पितरोंका आनन्द है, सो श्रोत्रिय अरु कामनासे रहित को होता है॥ अरु "तेयेशतं पितृणां चिरलोकलोकानामानन्दाः, स एक आजानजानांदेवानामानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य" (वह जो शत चिरलोकनिवासी पितरों का आनन्द है, सो एक आजानज देवोंका आनन्द है, सो श्रोत्रिय अरु अकाम को होता है) अर्थात् जो एक चिरलोक के निवासी पितृके आनन्द हैं तिनसे सौगुणा अधिक एक आजानज देवता के आनन्द हैं सो आनन्द श्रोत्रियपुरुषको, कि जिसकी चिरलोकके निवासी पितरों के आनन्दकी कामना अभाव हुई है तिसको होता है। आजानज जो देवलोक तिसबिषे स्मृति उक्त कर्मोंके करनेसे। तिनके फल भोगार्थ देवभावसे उत्पन्न हुये जे मनुष्य। तिनको आजानज देव कहतेहैं॥ "अरु तेयेशतमाजानजानां देवानामानन्दाः, सएक कर्मदेवानामानन्दः, येकर्मणा देवानामपियन्ति श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य" (वे जोशत आजानज देवोंके आनन्दहैं, सो एककर्म देवों का आनन्द है, जो केवल वेदोक्त अग्निहोत्रादि कर्म करके देवभावको पावते हैं, सो श्रोत्रिय अरु कामनासे रहितको होता है) अर्थात् जो एक आजानज देवके आनन्दहैं तिसके शतगुणे अधिक कर्मदेवों का आनन्द है अरु जो वेदोक्त अग्निहोत्रादि कर्म विद्याके ज्ञान सहित करते हैं सो पुरुष देवभावको पावते हैं, अर्थात् यहां शरीर त्यागके देवलोकमें देवभावसे उपजते हैं, तिन देवताओंका आनन्द आजानज देवके आनन्दसे शतगुणाअधिक है सो आनन्द श्रोत्रिय अरु कामनासे रहित पुरुष पावता है॥ अरु "तेयेशतंकर्मदेवानामानन्दाः, स एकोदेवानामानन्दः, श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य" (वेजेशत कर्म देवनके आनन्द हैं सो एक देवोंका आनन्दहै, सोश्रोत्रिय अरु कामनासे रहित पुरुषको होता है) अर्थात् जो एक कर्म जा देवके आनन्द हैं तिनसे शत १०० गुणाअधिक देवताका आनन्दहै, अरु अष्टवसु८, एकादशरुद्र ११, द्वादश आदित्य १२, चन्द्रमा प्रजापति २, यह सर्व मिल के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेंतीस ३३ देवता हैं अरु जे यज्ञबिषे हवीके भोक्ता । अरु सृष्टि के उत्पति कालबिषे प्रथम ब्रह्माके सङ्कल्पमात्र सेही उपजे अयोनिसम्भव हैं । ताते ये मुख्य देवता हैं, तिनका जो आनन्द है सो श्रोत्रिय अरु निष्काम पुरुषको होता है ॥ अरु "तेयेशतं देवानामानन्दाः स एक इन्द्रस्यानन्दः, श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य" ९ वेजेशत देवों के आनन्द हैं, सो एक इन्द्रका आनन्द है, सो श्रोत्रिय अरु कामनासे रहित पुरुषको होताहै ; अर्थात् जो एक देवतोंका आनन्द है तिससे सौगुणा अधिक देवताओं के अधिपति इन्द्रका आनन्दहै, सो श्रोत्रिय । विद्वान्, अरु सर्वकामनासे रहित पुरुषको होता है ॥ अरु "तेयेशतमिन्द्रस्यानन्दाः, स एको बृहस्पतेरानन्दः, श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य" । ९ वेजेशत इन्द्रके आनन्द हैं, सो एक बृहस्पतिका आनन्दहै, सो श्रोत्रिय अरु निष्काम को होता है ; अर्थात् जो एक इन्द्रको आनन्द है तिनसे सौगुणा अधिक इन्द्रके आचार्य बृहस्पतिका आनन्द है । क्योंकि जो सर्व देवताओं का अधिपति त्रैलोक्य का राजा इन्द्र है सो अपने गुरु बृहस्पति का सेवन आराधन करतसन्ते उनकी आज्ञामें बर्त्तता है अरु ईश्वरके तुल्य जानता है, एतदर्थ इन्द्र के आनन्द से सौ गुणा अधिक बृहस्पति का आनन्दहै। सो श्रोत्रिय अरु कामनारहितको होता है ॥ अरु तेयेशतं बृहस्पतेरानन्दाः स एकःप्रजापतेरानन्दः, श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य" । ९ वेजे शतबृहस्पतिके आनन्दहैं, सोएक प्रजापतिका आनन्दहै, सो श्रोत्रिय अरु कामनासे रहितको होताहै ; अर्थात् इन्द्रके आनन्दसे शतगुणा अधिक बृहस्पतिका आनन्दहै तिससे सौगुणा अधिक त्रैलोक्यमय शरीरवले विराडभिमानी प्रजापतिका आनन्दहै, सो श्रोत्रिय अरु कामनासे रहितहुयेको होताहै॥अरु " तेयेशतंप्रजापतेरानन्दः स एको ब्रह्मण आनन्दः, श्रोत्रियस्य कामहतस्य । ९ वेजेशत प्रजापति के आनन्द हैं , सो एक ब्रह्माका आनन्द है, सो श्रोत्रिय अरुकामनासे रहितको होताहै ; अर्थात् जोएकविराट्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरीरवाले प्रजापति का आनन्द है, तिस आनन्द से शतगुण अधिक ब्रह्मानामकरके हिरण्यगर्भका आनन्दहै। अर्थात् समष्टि व्यष्टिस्वरूप, अरु जन्ममरणरूप अग्निविषे व्यापी, अरु जहां पर्यन्त आनन्दके भेद एकताको पावते हैं, अरु जहां उनका निमित्त धर्म अरु तिनको विषय करनेवाला ज्ञान अरु कामना से रहितपना, ये सर्व अतिशय कहिये सर्व से अधिक हैं, सो यह हिरण्यगर्भ ब्रह्माहै जिसका यह आनन्दहै सो श्रोत्रिय (वेदशास्त्र को जानके धर्माचरणको करनेवाला) अरु कामनासे रहितपुरुष पावताहै। अर्थात् जो विद्वान् धार्मिक निष्पाप रूप है अरु तिस की विषय सुखकामना उठगई है ऐसा निष्काम पुरुष चक्रवर्त्ती राजा के आनन्दको भोगता है, अर्थात् जिसको जिस वस्तुकी कामना है तिसको तिसकी प्राप्तिके अर्थ श्रम होनेसे अरु प्राप्ति के प्रयत्नमें क्वचिद्विघ्न होनेसे अरु प्राप्तिके अनन्तर तिसकी अरु शरीर की अस्थिति निमित्तक वियोग होनेकी चिन्तासे सुख नहीं, अरु जिसकी विषय सुख कामना उठगई है सो तन्निमित्तक प्रयत्नादिकोंसे रहितहुआ आनन्दको भोगताहै। इसप्रकार जिस धार्मिकविद्वान् निष्पाप पुरुषकी चक्रवर्तिके आनन्दसे हिरण्यगर्भ के आनन्दपर्यन्त जिस जिस विषयक आनन्द भोगकी कामना उठगई है सो निष्कामपुरुष यहांही सुखपूर्वक उस आनन्द को प्राप्त होताहै। अतएव जिस निष्पाप धर्मात्मा श्रोत्रिय पुरुषकी जितनी जितनी कामना अधिकाधिक निवृत्तहुई है सो तिसके अनुसार अधिकाधिक आनन्दको पावता है। अरु जिसकी हिरण्यगर्भ के भी पद पर्यन्त की कामना उठगई है तिन की प्रशंसा वेद करता है अरु सोई ब्रह्मानन्द प्राप्तिका आधिकारी होताहै। तथाच "कामस्याप्तिञ्जगतः प्रतिष्ठांक्रतोरानन्त्यमभयस्य पारम्। स्तोममहदुरुगायम्प्रतिष्ठान् दृष्ट्वाधृत्याधीरो नचिकेतोऽत्य स्राक्षीः" इस श्रुति से मृत्यु भगवान्ने हिरण्यगर्भ के पदसे भी निष्कामहुये परमाधिकारी की प्रशंसा कियाहै ताते जिसकी हि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रण्यगर्भ के आनन्द भोगकी कामना भी अभाव हुई है सो ब्र-
ह्मानन्दका उत्तमाधिकारी है। ॥ अर्थात् श्रोत्रिय कहिये वेदशास्त्र
की आज्ञानुसार धर्म मार्गमें वर्त्तनेवाला अरु निष्पाप अरुकामना
सेरहित, ऐसे पुरुषकरके सो ब्रह्मदेवका आनन्द सर्वओरसे प्रत्यक्ष
अनुभव कियाजाताहै। एतदर्थ यह श्रोत्रियतादि तीन, आनन्दके
साधनहैं,इसप्रकार जानाजाताहै। अरु तिनमें भी श्रोत्रियपना अरु
निष्पापपना यह दोनों साधन नियमित हैं, अरु निष्कामता तो
अधिकाधिक होती है, ताते सर्व साधनों में तिसकी उत्कृष्टता
जानीजाती है। [तिसके अर्थ विचारका आरम्भकिया है, तिस
निरतिशय साधनकी सिद्धि विषे वाक्यके तात्पर्यके लखावने को
कहते हैं। यहां तिस हिरण्यगर्भरूप ब्रह्माका जो आनन्द है अरु
जो तिसके उपासक को प्रत्यक्ष है सो आनन्द जिसकी मात्रा
कहिये लेश (किणका) है सो यह परमानन्द स्वाभाविकहै, इ-
सप्रकार सम्बन्ध है] तिस ब्रह्मा को निष्कामपने की अधिकता
करके प्रतीयमान जो श्रोत्रियको प्रत्यक्ष ब्रह्मा का आनन्द है जो
जिस परमानन्दका एक अंशमात्र है ॥ (अथवा देश है जैसे एक
समस्त भूमंडल पर अनेक देश हैं तिनमें कोई एक देशके अधि-
पतिका देश भूमण्डलका कोई एक देश है, तैसे हिरण्यगर्भाख्य
ब्रह्मा का जो आनन्द है सो परमानन्द का कोई एक अंश है। ॥
क्योंकि "एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्तीति"
इसहीआनन्दके एकदेशके ताईं अन्य (ब्रह्मादि) भूत उपजीविका
करते हैं, । इस अन्य श्रुतिके वाक्यसे । अरु समुद्र जल के एक
बिन्दुवत् जिसका एकदेशरूप सो यह चक्रवर्त्ती आदिकोंका आ-
नन्द नानामात्रारूप विभागको पावता हुआ जहां (अर्थात् जिस
निष्काम ब्रह्मवेत्ता के प्रत्यक्ष अनुभव हुये ब्रह्मानन्दविषे) एकता
को पावता है, सो यह परमानन्द स्वाभाविक है ॥ (अर्थात् पर-
मानन्द जो है सो अथाह अपार समुद्र जलवत् है, अरु हिरण्य-
गर्भका आनन्द महानदजलवत्है, अरु प्रजापतिका आनन्द नदी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जलवत् है, अरु बृहस्पतिका आनन्द महाह्रदवत् है अरु इन्द्रका आनन्द लघुह्रदजलवत् है, अरु देवताओं का आनन्द सरोवर के जलवत् है, अरु कर्म्मज देवोंका आनन्दकुण्डके जलवत् है, अरु आजानजदेवका आनन्द वापीके जलवत् है, अरु पितरोंका आनन्द दीर्घ कूपके जलवत्है, अरु देवगंधर्वोंका आनन्द लघुकूपके जलवत् है, अरु मनुष्य गंधर्वों का आनन्द एक गृहस्थ के घरके जलवत् है, अरु चक्रवर्त्तीका आनन्द पानपात्र (गिलासादिक) के जलवत्है। इसप्रकार महानदके जलसे लेके पानपात्रके जल पर्यन्त अंशाअंशी भावकी तारतम्यतासे एक महासागर के जल का अंश व्याप रहा है, अरु उसीही के आश्रय सर्व अपने नाम रूपादिसहित अपने व्यापारको सिद्धकर रहे हैं। तैसेही एक परमानन्दका अंश से हिरण्यगर्भ के आनन्द से लेके चक्रवर्ती के आनन्द पर्यन्त फैल रहाहै अरु उसहीके आश्रय सर्व आनन्दित हुये अपनी २ उपजीविका को करते हैं ॥ अथवा जैसे एक सैंधव लवणकी आकर है तिसके लवणका कोई एक अंश वो लवण है जो आकर से बाहर पर्वत के समान एकत्र करके रक्खा है, तिस लवणका कोई एक अंश वो लवण है जो सहस्रावधि उष्ट्र शकटों में भरके महावणिज लिये जाते हैं, अरु तिस लवण का कोई एक अंश वो लवण है जो दीर्घ नगरों में वैश्यों ने अपने स्थानों में भर रक्खा है, अरु तिस लवण का कोई एक अंश वो लवणहै जोलघु वैश्यलोक अपनी दूकानपर विक्रय करते हैं, अरु तिस लवणका कोई एक अंश वो लवण है जो गृहस्थ ने अपने गृहके दीर्घपात्रमें भरा है, तिस लवणका कोई एक अंश वो लवण है जो गृहस्थ के यहां नित्य खर्च के अर्थ लघुपात्रमें कियाहै, तिस लवणका कोई एक अंश वो लवण है जो दाल शाकमें पड़ताहै, तिसलवणका कोई एक अंशवो लवणहै जो एक मनुष्य के भोजनमें आवता है। इसप्रकार उस आकरके लवणका कोई एक अंश आकर के बाहर पर्वताकार लवणसे लेके एक मनुष्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के भोजन पर्यन्त के लवणपर्यन्त व्याप्त होरहा है अरु उसही के आश्रय सर्व अपनी उपजीविका को करते हैं ॥ हे सौम्य! तैसेही आनन्दघन परमानन्दका कोई एक अंश हिरण्यगर्भका आनन्द है तिसका शतवांभाग प्रजापति (विराट्) का आनन्द है, तिस प्रजापति के आनन्दका शतवांभाग बृहस्पतिका आनन्दहै, तिस बृहस्पतिके आनन्दका शतवांभाग इन्द्रका आनन्दहै, तिसइन्द्रके आनन्दका शतवांभाग वसुआदि देवताओंका आनन्दहै,तिसका शतवांभाग कर्म्मज देवोंका है, तिन कर्म्मज देवों के आनन्दका शतवांभाग आजानजदेवोंकाहै, तिसआजानज देवके आनन्दका शतवांभाग पितरोंका आनन्द है, तिस पितरों के आनन्दका शतवांभाग देवगन्धर्वोंका आनन्दहै, तिस देवगन्धर्वोंके आनन्दका शतवांभाग मनुष्य गंधर्वोंका आनन्दहै, तिसमनुष्य गंधर्वकेआनन्दका शतवांभाग चक्रवर्ती राजाका आनन्दहै । हे सौम्य! उक्त प्रकारपरमानन्दका कोईएकअंशहिरण्यगर्भकेआनन्दसे चक्रवर्ती केआनन्दपर्यन्त अंशाअंशीभावसे फैलरहाहै अरु उसहीआनन्दके आश्रय हिरण्यगर्भसे पिपीलिका पर्यन्त सर्वभूत अपनी उपजीविकाको करते जीवतेहैं । हेसौम्य ! जिसधर्मात्मा परमपवित्र श्रोत्रिय पुरुषनेवेदशास्त्र करके हिरण्यगर्भकेपदसे लेकेतृणपर्यन्त सर्वकार्यमात्र जगत्को सम्यक्प्रकार नाशवान् अनित्य बन्धनका कारण जाना है अरु तिस ज्ञानकरके सर्वकी कामना अपने चित्त से अशेष त्याग कियाहै, सो पुरुष यहांही अपने आपबिषे उस परमानन्दको साक्षात् अनुभव करता है । अरु जिस धार्मिक पवित्र शास्त्रज्ञ श्रोत्रिय पुरुष ने साधारण मनुष्यों के विषय भोगकी कामनाका त्यागकिया है सो चक्रवर्ती के आनन्दको भोगता है अरु जब चक्रवर्ती के आनन्द की कामनाका त्याग करताहै, तब तिससे शतगुणा अधिक मनुष्य गन्धर्व का आनन्द यहां इसही शरीरमें भोगता है, अरु जब मनुष्य गन्धर्व के आनन्द भोगकी कामनाको त्यागता है तब तिससे शतगुणा अधिक देवगन्धर्वोंके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आनन्द को यहां इसही शरीरबिषे भोगता है, अरु जब तिसकी कामनाको त्यागताहै तब पितरों के आनन्दको भोगताहै। इस प्रकार पूर्व पूर्व के आनन्द भोगकी कामना के त्याग से उत्तरोत्तरके आनन्द को भोगता है, अरु जब हिरण्यगर्भके भी आनन्द भोगकी कामनाको अशेष त्यागता है, तब साक्षात् परमानन्दको यहांही अपनेआप बिषे यथार्थ अनुभव करता है। ताते अभिप्राय यह है कि ज्योंहीं ज्यों कामना का त्याग अरु प्रवृत्ति से निवृत्ति होती है, त्योंहीं त्यों आनन्दकी आधिक्यता है, ताते मुमुक्षुको कामनाका अशेषत्यागही परमानन्दकी प्राप्तिका मुख्य सर्वोत्कृष्ट साधन है। ॥ अरु। परमानन्दको। अद्वैतरूप होनेसे यहां आनन्द अरु आनन्दी का विभाग नहीं ॥ सो यह विचारका फल अब समाप्त करते हैं ॥ "। सयश्चायं पुरुषे यश्चासावादित्ये, सएकः "। (सो जो यह पुरुष बिषे है, अरु जो यह सूर्यबिषे है, सो एक है) अर्थात् " सयश्चायंपुरुषे " सो यह पुरुषबिषे, । ऐसा जो कहा सो। यहां परमव्योमगत गुहा बिषे स्थित हुआ आकाश से आदि लेके अन्नमय पर्यन्त कार्य को सृजिके तिसही के अर्थ। वा तिसही बिषे। पीछे प्रवेशको पावता है। वा करता है। ऐसा जो परमात्मा, यह। वा यह शब्द करके लक्षित जो यह परमात्मा। "स यः" सो जो,। इसप्रकार कहाहै, सो एकहै। अरु जो यह सूर्यबिषेहै, अर्थात् जो श्रोत्रिय कहिये ब्रह्मनिष्ठ को प्रत्यक्ष कथन किया परमानन्द है, कि जिसके एक देशके ताईं ब्रह्मा आदिक भूत सुख के योग्य हुये उपजीविका को करते हैं, यह "यश्चासावादित्ये" सो जो यह सूर्यबिषे है, इसप्रकार कहाहै, सो एकहै। इसप्रकार जिस [बिचारसे " निरतिशयानन्द ब्रह्मास्मीति " निरतिशय आनन्दरूप ब्रह्ममैंहूं,। इसप्रकार निर्द्धार किया, तिसकी निष्काम पुरुषके प्रत्यक्षके कथन से अभेदकी सिद्धि है। अरु जिसकरके परका आनन्द परको प्रत्यक्षहोवेनहीं। अर्थात् एकका आनन्द दूसरे को भासे नहीं। इसकरके निरतिशय आनन्दरूप ब्रह्मही तूहै। जी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वका तत्त्व " ब्रह्मविदाप्नोतिपरम् " ब्रह्मवेत्ता परमब्रह्मको पावता है, इसप्रकार कहने को आरम्भकिया, अरु विचार से सिद्ध हुआ, सो अब समास करिये है] विचार करके सिद्ध वस्तुको भिन्न देशगत घटाकाश अरु महदाकाश की एकतावत् उपसंहार करिये है [सूर्य, ग्रहणके अधिदैवक उपाधिरूप अर्थ के कहने के अनिच्छितपने के देखावने को प्रश्नको प्रकट करते हैं । यहां यह अर्थ है कि " य एष एतस्मिन्मण्डले पुरुषोयश्चायं दक्षिणेऽक्षन् पुरुषः " जो यह इस मण्डल बिषे पुरुष है अरु जो यह दक्षिण नेत्रबिषे पुरुष है, । इत्यादिरूप अन्य श्रुतिबिषे सूर्यमण्डल बिषे स्थित पुरुषकी दक्षिणनेत्र बिषे स्थित पुरुष से एकता के कथन हुये दक्षिण नेत्रका कथन युक्त है [ननु, तिसके निर्देशहुये " सयश्चायं पुरुषे " सो जो यह पुरुष बिष है, । ऐसे अविशेष करके अध्यात्म रूपका कथनयुक्त नहीं, परन्तु " यश्चायं दक्षिणेऽक्षन् पुरुषः " जो यह दक्षिण नेत्रबिषे पुरुष है, । ऐसा कथन युक्त है, क्योंकि अन्यश्रुतिबिषे प्रसिद्धहै तातें, । सो] अध्यात्म अरु अधिदैवतरूप जो लिंगात्मा है सो उपासना के कहने की इच्छाके हुये तैसे होता है । अरु यहां सो उपासना कहने को इच्छित नहीं, इसप्रकार कहते हैं । यहां यह अर्थ है कि जो उत्कृष्ट उपाधि बिषे प्रतिबिम्ब को पाया है सोई शिर अरु हस्त आदिक [अवयव] वाले पुरुषरूप निकृष्ट उपाधि बिषे प्रतिबिम्ब को पावता है, इसप्रकार परमानन्दकी अपेक्षा से समताहै । अरु विशिष्ट चैतन्योंकी स्वभाव से एकता कहने को इच्छित है, इसप्रकार जो जानता है सो निरतिशय आनन्द को पावता है [बनेनहीं, परमात्मा के अधिकार से । जिसकरके " अधिकृतोऽदृश्येऽनात्म्ये " " भीषास्माद्वातपवते " " सैषा नन्दस्यमीमांसेति " इस अदृश्य अरु अनात्म बिषे । इससे भयकरके वायु चलता है । सो यह आनन्द का विचार है, । इन श्रुतिवाक्यों करके यहां परमात्माही अधिकार को पाया है । अरु अकस्मात् प्रसंगबिषे अप्राप्त पदार्थ कहनेको युक्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं, अरु यहां परमात्माका विज्ञान कहनेको इच्छितहै, ताते "स एकः" सोएक है, । इसवाक्य करके परमात्माही कहाहै ॥ ननु, यहां आनन्दका विचार प्रसंगविषे प्राप्तहुआ है, तिसकाभी फलसमाप्त करने को योग्य है, तहां कहते हैं, अभिन्न स्वाभाविक जो आनन्द हैसो परमात्मा ही है, विषय विषयी भावसे । जनित आनन्द । नहीं, इस प्रकार सो विचारका फल समाप्त कियाहै । अरु "स यश्चायं पुरुषे" सो जो यहपुरुष विषेहै, । अरु "यश्चासावादित्ये, स एकः" जो यह सूर्यविषे है सो एकहै, । इसप्रकार भिन्नअधिकरण विषे स्थित वस्तुके भेदके निषेधसे जो यह कथन किया है सो निश्चय करके तिसके अनुसार ही है ॥ ननु ऐसेहुये भी सूर्यरूप विशेषण (उपाधि) का ग्रहण व्यर्थ है, सो व्यर्थ बनेनहीं, क्योंकि सूर्य के ग्रहणको उत्कर्ष अरु अपकर्ष के निषेधरूप अर्थवान् होनाहै ताते । अरु जब मूर्त्त अरु अमूर्त्तरूप द्वैतका जो सूर्यकेअन्तर्गत उत्कर्ष है, सो जब पुरुषगत भेदके निषेधसे परमानन्द की अपेक्षा करके समहोवे है, तब तिस गतिको प्राप्तहुये पुरुष को कोई भी उत्कर्ष वा अपकर्ष नहीं है, एतदर्थ " अभयं प्रतिष्ठां विन्दते" अभय प्रतिष्ठा को पावता है, । यह पूर्वोक्त अर्थ घटित होता है ॥ इसप्रकार [उक्त अर्थके अनुवाद पूर्वक उत्तरग्रंथ को प्रकट करते हैं [इस वल्ली के षष्ठ अनुवाक विषे, ब्रह्म है वा नहीं है, इसप्रकारका कथन कियारहा जो प्रश्न सो, 'एक, कार्य, रसलाभ, प्राणन, अभय, स्थिति, अरु भय दर्शनरूप युक्तियों से, सो आकाशादिकों का कारण ब्रह्म ही है, इस प्रकार करके उक्त प्रश्नगत संशयको । दूरकिया । अरु अन्यदोनों 'विद्वान्, अरु अविद्वान्, को ब्रह्मकी प्राप्ति अरु अप्राप्ति होती है, तिसको विषय करनेवाले प्रश्नहैं । तहां "विद्वान् समश्नुतेसमश्नुत इति" विद्वान् मरणको प्राप्त होके इस ब्रह्मरूप लोक को प्राप्तहोता है वा नहीं प्राप्तहोता, । इसप्रकारका अन्तका प्रश्नहै तिसकासमाधान करनेको कहते हैं । अरु मध्यका जो प्रश्न है सो अन्तके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रश्नके दूरकरने के साथही दूरहोवेगा, एतदर्थ तिसकेदूरकरनेको प्रयत्न करते नहीं " स य एवं वित्, अस्माँल्लोकात्प्रेत्य एतमन्नमयमात्मानमुपसंक्रामति, एतं प्राणमयमात्मानमुपसंक्रामति, एतं मनोमयमात्मानमुपसंक्रामति, एतं विज्ञानमयमात्मानमुपसंक्रामति, एतमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रामति " (जो ऐसे जानताहै सो इसलोकसे निरपेक्षहोके इस अन्नमय आत्मा को उल्लंघन करता है, इस प्राणमय आत्माको उल्लंघन करताहै, इस मनोमय आत्माको उल्लंघन करताहै, इस विज्ञानमय आत्मा को उल्लंघन करताहै, इस आनन्दमय आत्माको उल्लंघन करताहै) अर्थात् जो कोई एक उक्त प्रकार का, उत्कर्ष अरु अपकर्ष से रहित अरु सत्य, ज्ञान, अनन्तरूप ब्रह्म मैंहूं, इसप्राकार जानता है सो दृष्ट अरु अदृष्ट विषयका समुदायरूप जो यह (संसाराख्य) लोकहै तिसलोक से निरपेक्षहोके कथनकिये इनअन्नमय (कोशरूप) आत्माको उल्लंघन करके (अनात्मा जानके वा अन्नमयरूप आत्माही जानके) अर्थात् विषयके समूहको पिंडरूप अन्नमयसे भिन्न देखतानहीं, किन्तु सर्व को स्थूलभूत अन्नमयरूप आत्माही देखता है। ताते भीतर इस सर्व अन्नमयरूप आत्माविषे (घटमें पवनवत्) स्थित अभिन्न प्राणमय (कोशरूप) आत्माको उल्लंघन करता है। पीछे इस मनोमय (कोशरूप) आत्मको उल्लंघन करता है। पुनः इस (मनोमय के अन्तर जो विज्ञानमय (कोशरूप) आत्मा है (तिसको) उल्लंघन करता है तिसके पश्चात् जो (विज्ञानमयके अन्तर आनन्दमय कोश है तिस) इस आनन्दमयरूप आत्माको उल्लंघन करताहै। तिसके पश्चात्, अदृश्य, अनात्म्य, अनिरुक्त, अनिलय, ब्रह्म विद् अभयस्थितिको पावताहै॥ यहां यह विचारकरनेयोग्यहै, कि यह इसप्रकारका जाननेवाला कौनहै, वा सो कैसे उल्लंघन करता है अरु सो उल्लंघन कर्त्ता क्या परमात्मासे भिन्न किया है, अथवा सोई है, अरु तिससे [अंशयुक्त अरु प्रयोजनसहित वस्तु विचा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के योग्य होती है, अरु यहां किसपक्ष बिषे कौन दोष है वा कौन लाभ है, यह कहते हैं] क्याहै, जो ऐसा कहोगे सो परमात्मासे भिन्नहै, तब "तत् सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्" "अन्योऽसावन्योऽहमस्मीति, न स वेद" "एक मेवाद्वितीयम्" "तत्त्वमसि" तिसको सृजके तिसही के अर्थ पीछे प्रवेश करताहुआ। यह अन्यहै मैं अन्य हौं इसप्रकार जो जानताहै, सो सम्यक् प्रकार जानता नहीं। एकही अद्वितीय है। सो तू है। इत्यादि बहुतसी श्रुतियों से विरोध आवता है॥ अरु जो कहोगे कि यह सोई है, तब "आनन्दमयमात्मानमुपसंक्रामति" आनन्दमयरूप आत्मा को उल्लंघन करताहै, एकही को कर्म (विषय) भाव अरु कर्त्ता (विषयी) भाव इनका असंभवहोवेगा। अर्थात् एकही को कर्म अरु कर्त्तापना वा विषय विषयीपनेका असंभवहै। यद्यपि दोनोंप्रकारसे प्राप्तहुआ जो दोष सो निवारण करनेको अशक्यहै, ताते विचारकाकरना व्यर्थ है, तथापि उनदोनों में से एक पक्षबिषे दोषकीअप्राप्ति है, वा तीसरे अदृष्ट पक्षबिषे दोषकी अप्राप्ति है, अरु सोई शास्त्रार्थ है, ताते विचारका करना व्यर्थ नहीं, किंतु तिसशास्त्रार्थ के निर्द्धारणार्थ होने से यह विचार प्रयोजनवालाही है॥ इसप्रकार जब वादीने कहा तब सिद्धान्ती कहे है, प्राप्तहुआ जो दोष सो निवारण करने को अशक्यहै। अरु दोनों में से किसी एकके पक्षके वा तीसरे अदृष्ट पक्षके निश्चय किये हुये चिन्तन व्यर्थहोवेगा यह तेरा कथन सत्य है, परन्तु सो अबतक निश्चय कियानहीं याते तिसके निश्चयरूप अर्थवाला होने से यह चिन्तन अर्थवालाही है अरु सफल है॥ यद्यपि शास्त्रके निश्चय रूप अर्थवाला होने से यह चिन्तन अर्थवालाही है, अरु तू चिन्तन करता है यह कथन सत्य है, परन्तु तिसको क्यों निर्णय करतानहीं, अरु निर्णय करने को योग्य नहीं, इसप्रकारका वेदका वचन नहीं है। तब बहुत प्रतिपक्षों के होनेसे अरु वेदार्थ के परायण होने से एकताका निर्णय तू वादी कैसे करतानहीं, अरु जिसकरके बहुत नानाभावके वादी वेदते बाह्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेरे प्रतिपक्षी हैं, याते मेरी आशंका को निर्णय करतानहीं, इस प्रकार मैं जानताहौं [यहही विचारके आरम्भ करनेवाले मुझको कल्याणहै, जो तू मुझको, तुम एकत्व वादीहो, इसप्रकार कहता है । अरु अप्राप्य वस्तुका वादी होनेसे एकताके वादीको भी एक वस्तु सम्मत होनेसे अरु अनेक वस्तुके वादी बहुत मेरे प्रतिपक्षी हैं । इस अर्थ से भी मेरा कल्याणहै, क्योंकि अनेकताको अन्योन्याश्रयादिक दोषकरके दूषितपना है ताते, अरु पूर्वपक्षके निषेध से सिद्धान्तके संभव से यह अर्थ होताहै] तहां सिद्धान्ती कहे है, यहही मेरा कल्याणहै कि जो मुझ एकके सम्बन्धीको अनेक का सम्बन्धी अरु बहुत प्रतिपक्षवाला कहताहै, इसकरके मैं सर्वको जय करोंगा अरु चिन्तन (विचार) को आरंभ करों हौं, सोई [विचारके आरम्भको प्रतिपादन करके अब सिद्धान्तके कहनेका आरंभकरेहैं, यहां यह अर्थ है कि, इसप्रकार जाननेवाला पुरुष उपाधिकृत भेदसे भिन्नहुआभी परमात्माही होताहै] सो होता है, क्योंकि तिसके भावका कहना इच्छितहै ताते । अरु " ब्रह्म विदाप्नोतिपरम् " ब्रह्मवेत्ता परब्रह्मको पावताहै, । इस श्रुतिवाक्य करके तिसके विज्ञान से यहां परमात्मभाव कहने को इच्छितहै। अरुजिसकरकेअन्यकोअन्यभावकीप्राप्तिसंभवेनहीं,इसहीसेसोउल्लंघनकर्त्तापरमात्माहीहै ॥ ननु,तिस[ब्रह्मवेत्ता]कोभी तिसपरब्रह्मा के भावप्राप्तिअघटितहै।सोकहनाबनेनहीं,क्योंकि तिस[विद्या]को अविद्याकृत अनात्माके निषेधरूप अर्थवान्पना है ताते । अरु ब्रह्म विद्याकरके जो स्वस्वरूपकीप्राप्ति उपदेश करते हैं, सो आत्मापने करके आरोपितअनात्मरूप अविद्याकृत अन्नमयादि विशेषआत्मा के निषेधार्थहै॥ अर्थात् 'अन्नमयआत्मा'यहजोवाक्यहै तिसमें जो अन्नमयपद विशेषहै सो उसको आत्मत्वके निषेध बोधार्थ है॥ [अविद्याकरके आरोपित अब्रह्मभावकी निवृत्तिही ब्रह्मकीप्राप्ति [ऐसा] कहने को इच्छितहै । तहां फलवाक्यका ऐसे अर्थ करके युक्तपना कैसे जानिये है, अरु अप्राप्त वस्तुकी प्राप्ति होवेनहीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसप्रकार वादी [शंका] कहे है] जो ऐसा कहे कि इसप्रकार के अर्थ करके युक्तपना कैसे जानते हो, तहां श्रवण करो, [यहांऔर प्रकार से भी वादी असंभव को शंका करता है। यहां यह अर्थहै कि गमनकर्त्ता को स्वरूपसेही आमरूपता का अभाव होनेसे भी जैसे मार्गके ज्ञानका उपदेश सार्थक है ,तैसे जीवको भी स्वरूप से अमरूपता के अभाव होनेसे भी विद्याका उपदेश सार्थक है, क्योंकि अभ्यासद्वारा [विद्या] ब्रह्मकी प्राप्तिका हेतु है ताते] विद्यामात्रके उपदेश से इसप्रकारके अर्थकरके युक्तता जानिये है, अरु अविद्याकी निवृत्ति रूप विद्या का कार्य देखा है, सो आत्मा की प्राप्ति विषे विद्यामात्र रूप साधन यहां उपदेश किया है ॥ अरु जो कहे कि मार्गके विज्ञानके उपदेशवत् तिसके आत्मभाव विषे विद्यामात्र रूपसाधनका उपदेशहेतुहै, क्योंकि अन्यदेशकी प्राप्ति विषे मार्गके विज्ञानके उपदेशके देखने से, अरु जिसकरके आम ही गमन कर्त्ता (चलने वाला) नहीं है, इसकरके सो मार्गके ज्ञान का उपदेश सफल है, तैसे जीव स्वरूप से ब्रह्म नहीं है, तथापि विद्या का उपदेश आभास द्वारा ब्रह्मकी प्राप्तिका हेतु होनेसे सफल है, सो कथन बने नहीं, क्योंकि दृष्टान्त अरु सिद्धान्त की विषमताहै ताते। अरु जिसकरके जैसे तहां आमको विषय करनेवाला विज्ञान नहीं उपदेश करते हैं, किन्तु तिस आमकी प्राप्ति के मार्गको विषय करनेवाला विज्ञान उपदेश करते हैं,। तैसे यहां ब्रह्मके विज्ञान करके [ब्रह्मसे] भिन्न अन्य साधनको विषय करने वाला विज्ञान नहीं उपदेश करते , एतदर्थ उपदेश की विषमतासे मार्गविज्ञानके उपदेशका दृष्टान्त विषमहै ॥ अरु जो ऐसा कहेकि, उक्त कर्म्मादिक साधनकी अपेक्षावाला ब्रह्मका विज्ञानरूप साधन परब्रह्मकी प्राप्तिविषे उपदेश करतेहैं, सो कहना बने नहीं, क्योंकि "नित्यत्वान्मोक्षस्येति" मोक्षको नित्यताहै ताते,। इत्यादि वाक्यों करके पूर्व निषेधकियाहै ताते । अरु " तत् सृष्ट्वातदेवानुप्राविशत्" तिसको सृजके तिसके अर्थ पुनः पीछेसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रवेश वर रहुआ, । यह श्रुति कार्यकी तिस [ब्रह्म] रूपताको दे-
खावेहै । अरु अभयस्थितिके संभवसे, अरु जिसकरके जब विद्वान्
स्वस्वरूपसे अन्यको देखतानहीं, इसही करके अभय स्थिति को
पावता है, इसप्रकार होय, क्योंकि भयके हेतु अन्यका अभाव है
ताते । अरु [जब विद्वान् से अन्यभयका हेतु ईश्वर नहीं है, तब
भिन्न ईश्वरके ज्ञानकी कौनगति [अर्थात् कौन व्यवस्था] है, यह
आशंका करके कहते हैं । यहां यह अर्थहै कि कल्पित भेद सहित
रूपसे ईश्वरको अविद्यासे रचिततारूप मिथ्यापनेकेहुये विद्यासे
तिसविषे मिथ्यापनेका ज्ञान संभवे है "[ईश्वरो मम प्रशास्तेति]"
मेरा नियामक ईश्वर है, । यह ज्ञान जिसकरके मिथ्याहै, इसही
करके तिस ईश्वरकी अरु मेरी वास्तवकरके एकरूपताही है ।
इसप्रकार विद्वान्की दृष्टिसे उपाधिविशिष्ट चैतन्यरूप ईश्वरका
मिथ्यापना है] अन्य ईश्वरको अविद्याकरके रचितता के हुये वि-
द्यासे तिसके अवस्तुहोने रूप भावके दर्शनकासंभवहै । जैसे दू-
सरे चन्द्रमाका जो असत्यपना [वा सत्यपना] है सो तिमिर दोष
से रहित पुरुषकरके ग्रहणकिया जाता नहीं तैसे ॥ [अब वादी
दृष्टान्तकी विषमताकी शंका करताहै । यहां यह अर्थ है कि "जैसे
चन्द्रमाकीएकताके दर्शनसे दूसराचन्द्रमाजानते नहीं, ऐसा यहां
नहीं है किंतु यहां ब्रह्मवेत्ताकरके भिन्नईश्वर जानियेहै, क्योंकि भो;
जनादिककी प्रवृत्तिके असंभव करके जीवन्मुक्तको भी नियमित
प्रपंचकी प्रवृत्तिका अंगीकार है ताते, अरु प्रपंच के नियमको
ईश्वरके आधीन होने से अंगीकार है] अरु जो कहै इसप्रकार
नहीं ग्रहण करते हैं, [यद्यपि जाग्रत्विषे विद्वानको भिन्न आभा-
सका दर्शन होवेहै, तथापि वो भयका कारण नहींहै । अरु मा-
यावी पुरुष स्व रचित व्याघ्रसर्पादिकोंके आभास दर्शन से भय
को पावतानहीं । अरु अविद्वान्को भी भिन्न वस्तुका दर्शन सदाहै
नहीं, इसप्रकार कहते हैं] सो बनेनहीं क्योंकि सुषुप्तिवाले अरु
समाधिवाले पुरुषको तिस ईश्वरका अग्रहणहै ताते [सुषुप्तिविषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भिन्नवस्तुके अग्रहणके सद्भावका साधक नहीं है, इसप्रकार पूर्व वादी कहताहै। यहां यह अर्थ है कि जैसे बाणका बनानेवाला बाण बिषे आसक्त मनवाला होता है, सो तिस आसक्तिसे तिस बाणसे भिन्न विद्यमान वस्तुको भी देखता नहीं, तैसे सुषुप्तिबिषे भी सुखमें आसक्त होनेकरके विद्यमानहुये भी द्वितीय वस्तुको देखता नहीं परन्तु तिसके अभावसे नहीं] अरु जो कहे कि सुषुप्ति वाले पुरुषबिषे जो अन्यका अग्रहणहै सो अन्यकार्यबिषे आसक्त हुये पुरुषवत्है,॥ [अन्यवस्तुबिषे आसक्तपुरुषको तिससे कि जिस में आसक्त है। भिन्न वस्तुके अदर्शन हुये भी तिसका अदर्शनही है। अरु सुषुप्तिबिषे भी "न किञ्चिदज्ञासिषमिति" मैं कुछ भी न जानताहुआ, इस प्रतीतिसे सुखको भी आत्माके तादात्म्यसे अरु अज्ञानकी भिन्नताके अकथनसे, वास्तविक द्वितीयवस्तुके अभाव सेही द्वितीय वस्तुका अग्रहण है। ऐसा कहते हैं] सो बने नहीं क्योंकि सुषुप्तिबिषे सर्वका अग्रहण है ताते [जब सुषुप्तिबिषे अप्रतीतिसे द्वैतका असद्भाव है, तब जाग्रत् अरु स्वप्नमें प्रतीतिके होनेसे द्वैतका सद्भाव क्यों न होवेगा। इसप्रकार वादी कहताहै] अरु जो कहै कि जाग्रत् अरु स्वप्न बिषे अन्यके ग्रहणसे तिसका सद्भावही है। [अनात्मादिकों बिषे आत्मभावादिकों की बुद्धि अविद्याहै, तिसके होतेही द्वैतकी प्रतीति से प्रतीतिमात्र द्वैत के सद्भावकी साधक नहीं है, अन्यथा शुक्तिगत रूप्यादिकोंके भी सद्भावके प्रसंगसे] सो कहना बनेनहीं क्योंकि तिसको अविद्या करके रचितपनाहै ताते, जाग्रत् अरु स्वप्नबिषे जो अन्यका ग्रहण होताहै सो अविद्याकृतही है क्योंकि अविद्याके अभाव हुये तिनका अभाव है ताते॥ [यहां पूर्ववादी कहे है। इसका यह अर्थ है कि सुषुप्तिबिषे द्वैतका अग्रहण भी लयरूप अविद्याका कियाहै परन्तु भेदके अभावका कियानहीं। एतदर्थ सुषुप्तिबिषे सर्वात्मा ब्रह्मभूत हुआ जीव अपनेसे भिन्न वस्तुको तिसके अभावसेही देखतानहीं, इसप्रकार जो तुमने कहा सो असत्यहै] अरु जो कहे कि सुषुप्ति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिषे जो अग्रहणहै सोभी अविद्याका कियाहै, [विद्यमान हुये भी द्वैतका अविद्याके वशसे अग्रहण होताहै, इस तेरे वचनका क्या अर्थ है सो कहो । अग्रहण क्या ग्रहणका प्राग्भाव होताहै, अथवा अप्रकाशका आरोपहै, किंवा अग्रहण के आकारसे अविकार को प्राप्तहुये स्वरूपकी स्थितिहै, तिनमें जो प्रथमपक्ष कहै तो सोबने नहीं, क्योंकि प्राग्भावका अनादिपना अंगीकारहै ताते, अरु जो कदापि द्वितीयपक्ष कहै तो सो भी बने नहीं, क्योंकि अन्य [सांख्य] वादी करके द्वितीय [सुषुप्तिगत चैतन्य] वस्तुके स्वप्रकाशतारूप स्वभावके अंगीकारसे अरु अप्रकाशके आरोप के अनंगीकारसे, अरु प्रकाशके आरोपहुये सर्वकी स्वप्रकाश ब्रह्मरूपता के अंगीकार करनेकी योग्यतासे हमारे इष्टकी सिद्धि के प्रसंगसे । अरु जो तृतीयपक्ष कहे तो सो भी बने नहीं, इसप्रकार अब कहतेहैं । यहां यह अर्थ है कि अविकारको प्राप्तहुये स्वरूपकी जो स्थिति है सो अविद्याका कार्य नहीं है क्योंकि उत्पत्ति अरु विनाशकरके रहितहै ताते] सो बने नहीं क्योंकि तिसको स्वाभाविकपनाहै ताते । [इस उक्त अर्थकोही स्पष्ट करतेहैं, यहां स्वतन्त्रता की सिद्धिके अभिप्रायसे सन्मात्र वस्तु इष्ट कहते हैं, परन्तु वैशेषिकके अभिप्रायसे ऐसे जानना । अरु यहां जो अविक्रियाकही है सो विक्रियाके अभाव करके लक्षणासे जानने योग्य स्वरूपहै, क्योंकि तिसको निरपेक्ष सिद्धिवालापनाहै ताते, अरु ग्रहण आदिक विक्रिया जोहै सो स्वाभाविक नहीं है, क्योंकि तिसको स्फटिकके रक्तवर्णवत् पर की अपेक्षावाली होनेसे । अरु अब तो निरपेक्ष सिद्ध होनेसे अविक्रियपनाकहा, तिसको स्पष्ट करते हैं] अरु जिसकरके इष्ट कहिये ' सत्वस्तु ' का स्वरूप अविक्रिया है क्योंकि अन्यकी अपेक्षासे रहितहै ताते । अरु जो विक्रिया है सो तिसका स्वरूप नहीं क्योंकि विक्रिया अन्यकी अपेक्षावाला है ताते । अरु जिसकरके कारककी अपेक्षावाली वस्तु परमार्थ से सत्वस्तुका स्वरूप नहीं, अरु जो विशेषहै सो कारककी अपेक्षा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वालाहै, अरुविशेषही विक्रियाहै, अरु जाग्रत् स्वप्नका जो ग्रहणहै सो विशेषहै। अरु जो जिसका अन्यकी अपेक्षा से रहित स्वरूप है सो तिसका यथार्थ स्वरूपहै, अरु जो अन्यकी अपेक्षावाला है सो यथार्थ स्वरूपनहीं क्योंकि अन्यके अभावहुये तिसका अभावहै ताते। एतदर्थ स्वाभाविक होनेसे सुषुप्तिबिषे अग्रहण है सो जाग्रत् अरु स्वप्नवत् विशेष नहीं। [इसप्रकार सिद्धान्ती अपने मतबिषे चैतन्यकी सत्तासे भिन्नभयके हेतु ईश्वरके अभावसे विद्वान्को अभयता संभवे है, इसप्रकार प्रतिपादनकरके, अब द्वैतवादिनके पक्ष बिषे तिस अभयके असंभवको कहे है। यहां यह भावहै कि अन्यवस्तुकेस्वरूपके स्थितहुये वा नष्टहुये सत्वस्तुका ध्वंस होवे नहीं क्योंकि व्याघातते, अरु तिसकी अनवस्था से] अरु पुनः जिनके मतमें ईश्वर आत्मासे अन्य (भिन्न) है अरुकार्य अन्य है तिनको भयकी निवृत्ति होवे नहीं, क्योंकि भय जो है सो अन्य वस्तुके निमित्तवाला है ताते, अरु अन्य वस्तु के स्वरूपसे स्थितहुये वा नष्टहुये सत्वस्तुके स्वरूपका नाश होवेनहीं क्योंकि व्याघात अरु अनवस्था दोषहोता है ताते। [तब भयकी उत्पत्तिके हुये असत्ही अभयकी प्राप्ति होवेगी, यह आशंका करके कहतेहैं] अरु असत् वस्तु से आत्माका लाभ होतानहीं॥ जो [भिन्न ईश्वरको सद्भावमात्रसे भयकी हेतुता नहीं है, किन्तु धर्मादिक की अपेक्षावालेको भयकी हेतुताहै, एतदर्थ तिन धर्मादिकके अभाव से अभय होवेगा, यह आशंकाकरके, सिद्धान्ती यह सांख्यवादी करके कहनेको योग्य नहीं, क्योंकि सत्रूप अधर्मादिकके भी अत्यन्त असद्भावके अंगीकारसे। अरु नैयायिक आदिकों के मत बिषे भी सत् हेतुबिषे कार्यके अत्यन्त अभावके निश्चय न होने से तिन्होंकरके भी यह कहनेको योग्य नहीं, ऐसा कहते हैं] कहे अपेक्षा सहित अन्य वस्तुको भय का हेतुपना है, सो बने नहीं, क्योंकि तिसको भी तुल्यता है ताते। अरु जो अधर्मादिकों का अनुयायी रूप नित्य वा अनित्य निमित्तको अपेक्षा करके अन्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वस्तु भयका कारण होती है, तिसप्रकारके तिसको भी स्वरूपकी हानिके अभावसे भयकी अनिवृत्ति होती है वा आत्माकी हानि होवे है। अरु सत् [किंवा असत् रूप अधर्मादिक जब असत् भाव को प्राप्तहोवे हैं, तब आत्माबिषे भी कौन विश्वास है, ताते स्वभाव की विपरीततारूप जो असत् वस्तुको असद्भाव की प्राप्ति है, सो किसी के भी मत बिषे घटे नहीं] अरु असत् को परस्परकी प्राप्तिके हुये सर्वत्र अनास्थाही होवेगी। अरु एकताके पक्षबिषे सत्रूपनिमित्तवाले संसार को अविद्याकरके कल्पित होने से दोष नहीं है, एतदर्थ तिमिरदोषवाले पुरुष करके देखेहुये द्वितीयचन्द्रको स्वरूपका लाभ वा नाश नहीं है॥ [अविद्यासे कल्पित जो भय सो विद्या से निवृत्त होवे है, इसप्रकार कहनेवाले तुझ सिद्धान्ती के मतबिषे विद्या अरु अविद्या को आत्माका धर्मपना वाञ्छित है। ताते धर्मकी उत्पत्ति अरु विनाशके हुये आत्मा को विकारीपना अरु अनित्यपना प्राप्त होवेगा, इसप्रकार आशंका करते हैं] जो कहै, विद्या अरु अविद्या को तिस आत्माका धर्मपना है, सो बने नहीं, क्योंकि [विद्या अविद्या] प्रत्यक्ष है ताते, अरु अन्तःकरण बिषे स्थित जो विवेक अरु अविवेक, सो रूपादिकोंवत् प्रत्यक्ष प्रतीत होते हैं। अरु प्रत्यक्ष विद्यमान रूपको द्रष्टाका धर्मपना नहीं है, अरु जो अविद्या है सो अपने अनुभव से मैं ढूंढूंहूं मुझको ज्ञान अविचारित है, इसप्रकार निरूपण करते हैं, तैसेही विद्यारूप विवेक अनुभव करते हैं, अरु आत्मा की विद्याको जान के अन्योंके अर्थ उपदेश करते हैं, अरु तैसे अन्य अधिकारी निश्चय करे हैं, ताते नामरूप पक्षवाले की ही विद्या अरु अविद्या अरु नामरूप है, अरु नामरूपबिषे निर्वाह करीहुई यह विद्या अरु अविद्या आत्मा के धर्म नहीं, क्योंकि " यदन्तरात्तद्ब्रह्मेति " जो मध्यमें है सो ब्रह्म है, इस अन्य श्रुति से। अरु [चेतनमात्र के अधीत अनादि अनिर्वचनीय जो अविद्या है, सो अन्तःकरण रूपसे प-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रिणामको पावती है। अरु सो अन्तःकरण तामस अरु सात्विक अवस्था के भेदसे भ्रान्ति ज्ञान अरु सम्यक् ज्ञान के आकार से परिणाम को पावता है। तिस अन्तःकरण विषे प्रतिबिम्ब को पाया चैतन्य अपनी उपाधिके धर्म्म से ही भ्रांत दिवस अरु रात्रिवत् कल्पितहै, परमार्थ से विद्यमान नहीं॥ जो पूर्व कहा था कि अभेदके हुये „ एतमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रामति „ इस आनन्दमय आत्माको उल्लंघन करके जाताहै,इसप्रकार एकही परमात्मा को कर्म्मभाव अरु कर्त्ताभावका असंभवहै, सोबनेनहीं, क्योंकि उल्लंघन करने को विज्ञानमात्ररूपता है ताते। अरु जलौका (जोंकनामक जलजन्तुविशेष) आदिकोंवत् उल्लंघन करना यहां उपदेशकरते नहीं किन्तु विज्ञानमात्ररूप यहां उल्लंघन करनेकी श्रुतिका अर्थ है॥ ननु „उपसंक्रामतीति„ उल्लंघन करके जाता है। इस प्रकार मुख्यही उल्लंघन करना श्रवण करते हैं, इसप्रकार जो कहे तो सो भी बने नहीं, क्योंकि अन्नमयबिषे तिस उल्लंघन करनेका अदर्शन है ताते। अरु अन्नमय को उल्लंघन करनेवाले का जलौकावत् इस बाह्यसे उल्लंघन करके जाना व अन्य पक्षी के प्रवेश के प्रकारवत् जाना देखते नहीं॥ [उक्त न्यायसे ब्रह्मवेत्ता ताते (ब्रह्मसे (अभिन्न है, इस प्रकार कहा। तहां अन्यवादी के कथन को प्रकट करके निषेध करते हैं। यहां यह अर्थ है कि आनन्दमय कोशरूप परमात्मा नहीं, अरु तहां तिसका प्रवेशरूप उल्लंघन नहीं है, किन्तु अविषय ब्रह्मरूपताके ज्ञानसे भ्रांतिसे आत्मापनेकरके ग्रहणकिये आनन्दमय का बाधही यहां उल्लंघन कहनेको इच्छित है] अरु जो कहे बाह्य निकसे मनोमयका वा विज्ञानमय का फेर लौट के आत्मासे उल्लंघन करना होवे है, [यद्यपि अन्नमय कोश बिषे मुख्य संक्रमण (अर्थात् अन्यको लांघि के स्वरूपबिषे गमन) संभवे नहीं, तथापि बाह्यके विषयोंबिषे प्रवृत्त जो मन और बुद्धि तिन बिषे बाह्यके विषयोंसे लौटके स्वरूपबिषे स्थितिरूप संक्र-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मण (गमन) देखा है । तैसे दुःखी जो पुरुषहै, तिसका आनन्दमयके स्वरूपबिषे स्थितिरूप संक्रमण होवेगा, इसप्रकार वादी कहता है] सो बने नहीं क्योंकि स्वस्वरूप बिषे बिक्रिया का विरोध है ताते, अन्य जो है सो अन्नमय को उल्लंघन करके जाता है, इसप्रकार आरम्भ करके मनोमय वा विज्ञानमय आत्मा को ही उल्लंघन करिके जाता है, यह विरोध होवेगा । तैसे आनन्दमय का आत्मासे उल्लंघन नहीं संभवे है [तिसकी स्वरूप विषे स्थिति अस्थिर है ताते, अरु आरंभ किये अर्थका विरोधहै ताते, सो मुख्य संक्रमण नहीं है, इसप्रकार सिद्धान्ती कहे है] ताते देशान्तरकी प्राप्तिका उल्लंघन करनानहीं है, अरु अन्नमयादिकों मेंसे एकका कियाभी उल्लंघन करना नहीं है परिशेषसे अन्नमयसे आदिलेके आनन्दमय पर्यन्त जो आरोपित आत्माहैं, तिनसेभिन्न जो परमात्मा है, तिसका किया, अरु ज्ञानमात्र उल्लंघन करके जाना संभवे है । अरु ; संक्रमणको ज्ञानमात्र रूपता के होनेसे क्या सिद्ध होताहै, इस आशंकापर कहते हैं । यहां यह भावहै कि मुख्यार्थ के असम्भव होनेसे गौण अर्थका ग्रहण श्रेष्ठही है, याते अधिष्ठानके स्वभावके तिरस्कार करके युक्त अध्यस्त वस्तु का बाधकरना ही संक्रम सिद्ध होवे है] तिसकी ज्ञानमात्रताके हुये आनन्दमय पर्यन्त पंचकोशों में स्थित अरु सर्वान्तर अरु आकाश से आदिलेके अन्नमय पर्यन्त कार्य को सृजके तिसके अर्थ पीछे प्रवेशहुये आत्मा को हृदयरूप गुहाके सम्बन्धसे अन्नमयादिक अनात्माबिषे आत्माका जो विभ्रम है सो आत्माके विवेक ज्ञानकी उत्पत्ति से बिनाशको पावता है । तिस 'इस अविद्या रचित, विभ्रमके नाशहुये उल्लंघन करके गमनकरना, यह कथन उपचारसे कियाहै, अन्यथा सर्वगत आत्मा का उल्लंघन करके गमन संभवे नहीं, अरु अन्य वस्तुके अभावसे सो मुख्य गमन करनाही खोजने को योग्य है । अरु आत्मा का ही गमन करना नहीं है, अरु जलौका नामक जो जलजन्तु विशेष है सो आप;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यतो वाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतश्चनेति। तछंह वाव न तपति॥ किमहछंसाधु नाकरवम्। किमहं पापमकरवमिति॥ स य एवं विद्वानेते आत्मानछंस्पृणुते। उभे ह्येवैष एते आत्मानछंस्पृणुते। य एवं वेद इत्युपनिषद् ३३॥

कोही उल्लंघन करके जाता नहीं। ताते [संक्रमणके कथनमात्रपनेको व्याख्यान करके प्रकरणके महान् तात्पर्य की समाप्ति के मिसकरके कहते हैं "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" सत्य, ज्ञान, अनन्त, ब्रह्म है, । इस उक्त प्रकार के लक्षणवाले आत्मा के ज्ञानार्थही बहुरूपहोना, सृष्टि,प्रवेश,रस, भय,अभय, अरु उल्लंघनादिक जो हैं, सो व्यवहार आदिकों विषय कल्पित ब्रह्मबिषे संभवे है, परन्तु परमार्थ से निर्विकल्प ब्रह्मबिषे कोई भी विकल्प संभवे नहीं [उपनिषदोंबिषे जहांजहां प्रकरणकी आदि अरु अन्तबिषे उक्त निर्विकल्प ब्रह्मका कथन होनेसे उपक्रम अरु उपसंहारकी एक रूपताहै। याते मध्यमें कहे जे बहुरूप होने आदिक अर्थ तिनबिषे प्रकरणका तात्पर्य नहीं है, किन्तु आदि अन्त में कथन किये निर्विकल्प वस्तुबिषे ही तात्पर्य है। यह अर्थ है॥] तिस इस निर्विकल्प आत्मा को, ऐसे क्रमसे उल्लंघन करके [अर्थात् जानके] किसीसे भी भयको पावता नहीं, अरु अभय स्थिति को पावता है [तदप्येष श्लोको भवति "[तिसबिषे भी यह श्लोक होता है] अर्थात् तिस इस अर्थबिषे भी सर्वही इस आनन्दवल्ली के अर्थरूप प्रकरणके संक्षेपसे प्रकाशनार्थ यह अग्रिम मन्त्र[प्रमाण] होता है ३२॥ इत्यष्टमोनुवाकः॥

हे सौम्यो! "यतो वाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्य मनसा सह" [जिससे वाणियां अप्राप्तहोके मनकरके सहित निवर्त्त होवे हैं] अर्थात् जिस निर्विकल्प उक्त लक्षणवाले अद्वैत आनन्दरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मासे द्रव्यादिक सविकल्प वस्तुको विषय करनेवाले,अरु वस्तु
की समानता से निर्विकल्प अद्वैत ब्रह्मविषे भी वक्ता पुरुष करके
प्रकाशनार्थ योजना कियेहुये वचनरूपा वाणियां अप्राप्त होके
(अर्थात् प्रकाश किये विनाही) निवर्त्त होती है (अर्थात् अपने
सामर्थ्य से हीन (रहित) होती है । अरु यहां मननाम ज्ञानका
है, सो ज्ञान जहां इन्द्रिय अगोचरादिक अर्थ विषे वचन प्रवृत्ति
होते हैं, तहां तिनके पीछेही प्रकाश करने के अर्थ प्रवर्त्त होवे है,
अरु जहां ज्ञानहै तहां वाणीकी प्रवृत्ति होती है । ताते वचन अरु
वृत्तिरूपावाणी अरु मनकी सर्वत्र साथही प्रवृत्ति होती है । ताते
ब्रह्मके प्रकाशनार्थ सर्वप्रकारसे योजना करनेवाले वक्तापुरुष कर-
के योजना करीहुई भी वाणियां जिस ज्ञान अरु शब्दके अविषय
अरु अदृश्यादिक विशेषणवाले आत्मासे, सर्वको प्रकाशकरनेवि
समर्थ मन नामक विज्ञान करके सहितही निवर्त होवे हैं । तिस
श्रोत्रिय निष्पाप अरु निष्काम अरु लोकादि सर्व एषणासे रहि
पुरुषके आत्मभूत अरु विषय विषयी के सम्बन्ध से रहित, अ
स्वाभाविक नित्य विभाग वर्जित सर्वोत्कृष्ट "आनन्दं ब्रह्मणो
विद्वान्, न बिभेतिकुतश्चनेति" (ब्रह्मके आनन्दको उक्तप्रकार
जाननेवाला किसीसे भी भयको पावता नहीं) अर्थात् श्रोत्रि
अपाप,कामनासे रहित, विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ पुरुषके आत्मस्वरूपभू
केआनन्दको उक्तप्रकारके जाननेवाला विद्वान् किसीसेभी भय
पावता नहीं, क्योंकि भयके निमित्त (भेददृष्टि) का (उसविषे
अभाव है ताते । अरु जिसकरके विद्वान्को , कि जिससे भय
पावता है, ऐसा ब्रह्मसे पृथक् अन्य वस्तु कोई भी है नहीं, इस
करके उसको भयका निमित्त नहीं (अरु भयके निमित्तके अभा
से भय भी नहीं) । अरु अविद्या करके "यदोदरमन्तरंकुरुते,अ
तस्य भयं भवतीति" जब अल्प भी अन्तरको करताहै, तब
सको भयहोताहै, । इसप्रकार पूर्व कहाहै, अरुविद्वान्को अवि
के कार्य अरु तिमिर दृष्टिवाले पुरुषकरके देखेहुये द्वितीयचन्द्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भयके निमित्त अन्यवस्तुके नाशहुये वो किसी से भी भयको पावतानहीं, यह कथन घटित है। अरु मनोमयविषे उदाहरणकिया जो मंत्र सो मनके ब्रह्मज्ञान का साधन होनेसे, तिस मन विषे ब्रह्मभावको आरोप करके तिसकी स्तुतिके अर्थ है "न बिभेति कदाचनेति" किसी कालविषे भी भयको पावतानहीं,। इसप्रकार भयमात्रका निषेध किया। यहां अद्वैतविषे "नबिभेति कुतश्चनेति" किसीसे भी भयको पावता नहीं,। इसप्रकार भयके निमित्तकाही निषेध करते हैं, एतदर्थ पुनरुक्ति दोषनहीं॥ ननु शुभकर्म्मोंका न करना अरु पापक्रिय। करने। रूप भयका निमित्त है। तब कैसे कहतेहो कि विद्वान्को भयके निमित्तका अभावहै। इसप्रकार नहीं है। तब किसप्रकार है, तहां कहते हैं "तश्ंह वाव न तपति, किमहश्ं साधु नाकर वम्, किमहं पापमकरवमिति"। (इसको किस कारणसे मैं शुभकर्मोंको न करता हुआ, किसकारणसे मैं पाप कर्म्मोंको करताहुआ, ऐसे निश्चय करके तपावते नहीं) अर्थात् इस कथन किये ऐसे जाननेवालेको किस कारणसे मैं शुभकर्मोंको न करता हुआ, इसप्रकार पश्चात् मरणके समीप कालबिषे जो संताप होताहै, तैसे किसकारणसे मैं पापकर्मको करता हुआ, इसप्रकार नरकपातादि दुःखके भय से तापहोताहै, सो शुभकर्मका न करना अरु पापक्रिया यह दोनों जैसे अविद्वान्को तपावते हैं, ऐसे निश्चयकरके तपावते (उद्वेग करते) नहीं॥ प्र०, विद्वान्को वे कैसे तपावतेनहीं। तहां कहते हैं, "स य एवं विद्वानेते आत्मनश्ंस्पृणुते, उभेह्येवैष एते आत्मनश्ं स्पृणुते, य एवं वेद इत्युपनिषत्"। (जो ऐसे जाननेवाला है सो इन दोनोंको आत्मा देखताहै, जाते इन दोनोंको यह आत्मारूपसे देखताही है, जो ऐसे जानताहै सो अद्वैत ब्रह्मको जानता है, ऐसी यह उपनिषद् है) अर्थात् जो उक्त प्रकार जानने वाला है, सो तापके हेतु इनदोनों शुभ अशुभ कर्म्मोंको अपना आत्मा जानके आच्छादन कहिये तिरस्कार करता है वा परमात्मभाव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से देखता है । जाते इसप्रकार इन दोनों पुण्य पापोंको यह वि
द्वान् [शुभाशुभ जो कर्म हैं, सो अधिष्ठान से भिन्न किये नहीं है
अरु नहीं भासते हैं, याते सत् अरु प्रकाशमात्र आत्म तत्वही
तिन दोनों का स्वरूप है, अरु तिससे भिन्न अर्थ अरु अनर्थ है
हेतुपने रूप जो तिनका विशेष रूप है सो वस्तु नहीं है, क्योंकि
तिनको सत् अरु प्रकाशसे अन्यहोने करके असत्पनाहै तातें, अरु
अप्रकाशवान् होनेसे, इस अभिप्राय से कहते हैं] अपने विशेष
स्वरूप से शून्य करके आत्मस्वरूप से [आत्माही अविद्यासे शु-
भाशुभ कर्म रूपसे प्राप्त होताहुआ, इसप्रकार कहा। अरु अवतो
यह शुभाशुभ कर्मअर्थ अरु अनर्थके हेतु होतेहुये "तेआत्मैवेति"
सो आत्माही है, । इस ज्ञानसे स्वस्वरूप को शुभाशुभ कर्मरूप
करने करके विद्वान् तिनको देखताही है । अरु लौकिक दृष्टिसे
सम्पादन किये पुण्यपाप रूप देखिके विद्वान्को पुण्य पापवान्
देखते हैं, परन्तु सो उनसे भयको पावता नहीं, ऐसा कहते हैं
देखताही है, एतदर्थ इसको पुण्यपाप तपावते नहीं । ऐसा कौन
है जो ऐसे जानताहै सो उक्तप्रकारके अद्वैत आनन्दरूप ब्रह्मको
जानता है । अरु तिसके आत्मभाव के देखे हुये पुण्य पाप नि-
ष्फलताप वाले हुये जन्म के आरंभक होते नहीं । ऐसी यह
उपनिषद् जैसे है तैसे कथनकिया, अर्थात् इस वल्ली विषे ब्रह्म-
विद्यारूप उपनिषद् (सर्व विद्याओंसे परमरहस्य , गोप्य,) जो
है सो प्रकट देखाई । इसविषे परमश्रेय स्थितहै ३३ ॥

"ब्रह्म यह इत्यादिलेके, जो इसप्रकारजानताहै सो ब्रह्मवेत्ता
है, ऐसी उपनिषद् है " यहां पर्यन्त इस चौंतीसवें ३४ मन्त्र
का अर्थ है ३४॥ अरु इसकाविशेषार्थ श्रीभाष्यकारशंकराचार्यजी
ने भी किया नहीं अतएव यहां भी विशेषव्याख्यान नहीं ॥

इति नवमोऽनुवाकः ॥

इति श्री तैत्तिरीयोपनिषद्गत ब्रह्मानन्दवल्लीनामकद्वितीयाध्यायभाषाभाष्यसम्पूर्णम् हरिः ॐ तत्सत्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मेदमयमिदमेकविंशतिरन्नादन्नरसमयादन्नात्प्राणो व्यानोऽपान आकाशः पृथिवी पुच्छंषड्विंशतिः प्राणं यजुर्ऋक् सामादेशोऽथर्वाङ्गिरसःपुच्छं। द्वाविंशतिर्यत् श्रद्दत्तछं सत्यं योगो महोऽष्टादश विज्ञानं प्रियं मोदः प्रमोदआनन्दो ब्रह्म पुच्छं। द्वाविंशतिरन्नेवाथाष्टाविंशतिरसत्षोडश। भीषाऽस्मान्मानुषो। मनुष्यगन्धर्वाणां। देवगन्धर्वाणां। पितृणां। चिरलोक लोकानामाजानजानां। कर्मदेवानां। ये कर्म्मणा। देवा नामिन्द्रस्य बृहस्पतेः प्रजापतेर्ब्रह्मणः। स यश्च संक्रामत्येकपञ्चाशद्यतः कुतश्च। नैतमेकादश। नव॥ सहनाववतु माविद्विषावहै ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ब्रह्मविद्यएवंवेदेत्युपनिषत् ३४॥

इति द्वितीयोऽध्याय ब्रह्मानन्दवल्ली॥ हरिःॐ तत्सत्

अथ तैत्तिरीयोपनिषद्गत भृगुवल्लीनामक तृतीयाध्याय भाषाभाष्य प्रारभ्यते

हे सौम्य! अब भृगुवल्लीके विचारको श्रवणकरो कि जिसप्रकार वरुणनाम ऋषिका भृगुनामपुत्र अपने पिता के उपदेश से अन्नमयादि पंचकोशों के विचारसे पंचकोशातीत परमानंदरूपब्रह्मको अपना आप आत्मरूपसे साक्षात् यथार्थ अनुभव करके शान्त सुखी निर्भयहुआहै॥

जो [उक्त अर्थके अनुवाद पूर्वक तृतीयावल्लीके सम्बन्ध को कहते हैं] सत्य, ज्ञान, अनन्तरूपब्रह्म आकाशादिकोंसे लेके अन्नमय पर्यन्त कार्य को सृजके तिसही बिषे पुनः प्रवेशको पायाहै, सो जिसकरके विशेषवत् प्रतीति होवेहै, तिसकरके सर्व कार्यसे विलक्षण अदृश्यादिक धर्मवाला आनन्दरूपही है। तिसही को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ भृगुवल्लीप्रारभ्यते ॥

हरिः ॐ । सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्य्यं करवावहै । तेजस्विनावधीतमस्तु । मा विद्विषा वहै । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

भृगुर्वैवारुणिः । वरुणं पितरमुपससार अधीहि भगवो ब्रह्मेति । तस्मा एतत्प्रोवाच । अन्नं प्राणं चक्षुःश्रोत्रं मनो वाचमिति । तꣳ होवाच । यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते । येन जातानि जीवन्ति । यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति तद्विजिज्ञासस्व । तद्ब्रह्मेति ॥ स तपोऽतप्यत । स तपस्तप्त्वा ३५ ॥

इति प्रथमोऽनुवाकः

"तदेवाहमिति" सोई मैं हूं, । इसप्रकार जानना, क्योंकि तिस के प्रवेशको तिसे ज्ञानरूप अर्थवान्पना है ताते । अरु तिस ऐसे जाननेवाले ब्रह्मवेत्ताके शुभ अरु अशुभकर्म जन्मान्तरके आरंभक होतेनहीं, इसप्रकारका अर्थ उक्त आनन्दवल्ली बिषे कहनेको इच्छितहै । तिसबिषे ब्रह्मविद्या समाप्त किया । तिसके पीछे भृगुवल्ली बिषे ब्रह्मविद्या का साधनरूप तप (वाक्यार्थ के ज्ञान का साधन पदों के अर्थका विचार) कहनेको योग्यहै । अरु अन्नमयादिकोंको विषय करनेवाले उपासन कहे हैं । एतदर्थ प्रथमवत् शान्तिपाठपूर्वक यह (भृगुवल्ली) आरंभ करते हैं ॥ "(सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्य्यं करवावहै । तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै, ॐ शान्तिः ३ ") (सो हमको रक्षाकरो, सो हमको भोगावो, सो सामर्थ्य को करो , हमारा अध्ययन किया तेजस्वी होहु, हम शिष्य अरु आचार्य परस्पर द्वेष न करें, ॐ (सत्यही कहताहौं) । शान्तिहोउ ३) (इस शान्ति पाठका अर्थ पूर्व सविस्तर कहाहै (यहां विद्याकी प्रशंसाके अर्थ अपने प्रिय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुत्रको पिताने कथनकरी यह आख्यायिकाहै "। भृगुर्वैवारुणिः, वरुणंपितरमुपससार, अधीहि भगवो ब्रह्मेति, तस्मा एतत्प्रोवाच, अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमिति "। (भृगु प्रसिद्ध वरुण-ऋषिका पुत्र सो वरुण नाम अपने पिताके समीप जाय। कहता हुआ कि। हे भगवन् ब्रह्मको कहो, तिसके अर्थ यह करता हुआ अन्न, प्राण, चक्षु श्रोत्र, मन, अरु वाणी, कहता हुआ) अर्थात् भृगु इसनामवाला प्रसिद्ध वरुणनाम ऋषिका पुत्रथा सो ब्रह्म के जाननेकी दृढ़ जिज्ञासाधारके वरुणनाम अपनेपिताके समीप जाय यह वचनकहताहुआ कि हे भगवन्! आप मेरेप्रति ब्रह्मको वर्णनकरो, इसप्रकार जब भृगुने अपनेपितासे ब्रह्मकी जिज्ञासा अरु विनयपूर्वक कहा, तब सो वरुणनाम पिता विधिवत् अपने समीप प्राप्तहुये तिस भृगुनाम पुत्रकेताईं यहवचन कहताहुआ कि हे पुत्र!। तिसको अन्नकहिये शरीर अरु तिसकेभीतर प्राणअरु इन अन्तरके ज्ञानके साधन चक्षु, श्रोत्र, मन, अरु वाणी, इन ब्रह्मके [यहां यह भावहै कि, जिसकरके शरीरादिकोंकी चेष्टाके अन्यथा। अर्थात् चैतन्यबिना। असंभवकरके तिनका साक्षीरूप चैतन्यको विवेचनकरतेहैं, एतदर्थ यह शरीरादिक ब्रह्मके लक्ष-कहोनेसे तिसके ज्ञानबिषे। अर्थात् विवेकार्थ। द्वारवत् द्वारहै। तिनको। अपनेपुत्र, भृगुकेअर्थ [वरुणपिता] कहताहुआ। केवल अर्थ का ज्ञान। अर्थात् त्वं पदकार्थ। वाक्यार्थ के ज्ञानका सा-धननहीं, किन्तु तत्पदार्थका ज्ञानभी है, इस अभिप्रायसे तत्पदके अर्थरूप ब्रह्मके लक्षणको कहताहुआ] ज्ञानबिषे द्वारोंको कहता हुआ। अरु इन द्वारभूत अन्नादिको कहके पुनः तिस। अपने पुत्र जिज्ञासुको। ब्रह्मकालक्षण कहताहुआ। प्र० क्या तिस ब्रह्मका लक्षणहै। उ०। तहां कहते हैं, "यतोवाइमानिभूतानिजायन्ते। येनजातानिजीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति तद्विजिज्ञास स्व। तद्ब्रह्मेति॥ सतपोऽतप्यत। सतपस्तप्त्वा "। (जिससे प्र-सिद्ध यहभूत उपजे हैं, अरु जिसकरके उपजेहुये जीवते हैं, अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिस ब्रह्मकेअर्थ जाते हैं, अरु तदात्म्यकोही पावतेहैं, तिसको सो ब्रह्महै, ऐसे विशेषकरके जाननेको इच्छाकर, सो तपकोहीतपताहुआ, सो तपकोतपके ; अर्थात् जिससे प्रसिद्ध यह ब्रह्मादिकसोंलेके स्तंबपर्यन्त भूतउपजते हैं, अरु जिसकरके उपजेहुवे जीवते हैं । अर्थात् प्राणके धारणरूप जीवनको करते हैं । अरु विनाशकालबिषे जिस ब्रह्मकेताईं जाते हैं अरु तादात्म्यकोही पावतेहैं, अर्थात् उत्पत्ति स्थिति अरु लय, इन तीनोंकालोंविषे भूतों का देह जिसके स्वरूपभावको त्यागतानहीं, सो ब्रह्मका लक्षण हैं ॥ तिसको तू ,सो ब्रह्म है, इसप्रकार विशेषकरके जाननेकी इच्छाकर, अर्थात् जो उक्तलक्षणवाला ब्रह्म है तिसको तू अन्नादिक द्वारा प्राप्तहो । तहां " प्राणस्य प्राणः उत चक्षुषश्चक्षुरुत श्रोत्रस्य श्रोत्रमन्नस्यान्नं मनसो मनो ये विदुस्ते निचिक्युर्ब्रह्म पुराणमग्र्यमिति " प्राणका प्राणहै, चक्षुका चक्षु है, श्रोत्रका श्रोत्रहै, अन्नका अन्नहै, मनका मनहै, जो तिसको जानताहै सो पुराण (प्राचीन) अरु अग्रबिषे स्थित ब्रह्मको पावता है,। यह अन्य श्रुतिभी ब्रह्मके जाननेबिषे द्वारोंको देखावे है। सो भृगुइन ब्रह्मज्ञानके द्वारों को अरु ब्रह्मके लक्षणको पितासे श्रवण करके ब्रह्मज्ञानका साधनहोने करके तपकोही [यहां यह अर्थ है कि, पदार्थों के लक्षणकेही कथनसे अखंडनरूप वाक्यार्थ के अप्रतिपादनसे अरु पदार्थ के भेद ज्ञानसे पुरुषार्थ का असंभवताते अरु " उदरमन्तरं कुरुते अथ भयं भवति " जो अल्पभी अन्तर (भेद) को करताहै तिसको भय होताहै । इत्यादि श्रुति वाक्यों से भेद ज्ञान निन्दितहै ताते । एतदर्थ वाक्यार्थ के ज्ञान पर्यन्त तात्पर्य से लक्ष्यपदार्थों के विवरणको वारंवार आचरता हुआ] तपता हुआ ॥ ननु, भृगुको । तप करनेका । उपदेश नहीं किये ही । भृगुको । तपके साधन भावका निश्चय किस करके होताहुआ, तहां कहते हैं , उ०, अवशेष सहित ब्रह्म के कथनसे भृगुको नहीं उपदेशकिये तपके साधन भावका निश्चयहुआ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् भृगुको वरुणने, जिसकरके भूत उपजते हैं, अरु उपजे हुये जिसकरके जीवते हैं, अरु अन्तबिषे जिसमें लयहोते हैं तिसको तू ब्रह्मजान, इसप्रकार ब्रह्मको तटस्थ लक्षण से उपदेश किया, तब भृगुको स्वरूप लक्षणसे ब्रह्मको जानना अवशेषरहा तिसके जानने के अर्थ भृगु एकान्त विचाररूप तपरूप साधनका निश्चय करता हुआ, अरु पिताने कहा कि जिस करके भूत उत्पन्न होतेहैं, जिसकरके जीवते हैं अरु जिसबिषे प्रवेश को पावते हैं, सो ब्रह्महै, तब इन तटस्थ लक्षणों के श्रवण से भृगुको यह अवश्य विचारणीय हुआ, कि किससे यह सर्व्व भूत उपजते हैं, अरु उपजेहुये किस करके जीवते हैं, अरु अन्तबिषे किसमें प्रवेश पावते हैं, ऐसा विचार ब्रह्मके निश्चय जानने के अर्थ विचारमय तपरूप साधनका निश्चयकर आगे उक्त लक्षणों से प्रथम अन्नमयादिकों का विचाररूप तपकर पश्चात्, सत्यज्ञान अनन्तादि स्वरूप लक्षण से सर्व के आधार परमानन्दरूप ब्रह्म को अपने आत्मभाव से पावताहुआ॥ अरु जिसकरके ब्रह्मके निश्चयबिषे अन्नादिरूप द्वारको, अरु "यतो वा इमानिभूतानि जायन्ते" जिससे प्रसिद्ध यह भूत उपजते हैं, । ऐसे लक्षणको कहताहुआ सो अवशेषरहे साधन सहितही है, क्योंकि साक्षात् ब्रह्मके उपदेशसे। अन्यथा जिज्ञासु पुत्र के अर्थ, यह ब्रह्म ऐसे स्वरूपवालाहै, इसरीति से ब्रह्म उपदेश करने को योग्य है, अरु तिन अवशेष सहित क्या कहतेहुये, अरु याते जानाजाताहै कि पिता ब्रह्म ज्ञानार्थ निश्चय करके अन्य साधन की भी अपेक्षा करे है। अरु उन दोनोंका विशेष निश्चय तो तपको सर्वका अत्यन्त साधक होने से होताहै। कि सब साधनों में मुख्य विचार मय तपही है। अरु जिसकरके सर्व नियमित साध्यों को विषय करने वाले साधनों का उक्त तपही अत्यन्त साधक अरु साधन है, ऐसप्रकार लोकबिषे प्रसिद्ध है। ताते भृगु पिताने नहीं उपदेश किये भी तपको ब्रह्मज्ञानका साधनहोनेसे जानताहुआ। अरु सो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तप बाह्य अरु अन्तर के करणों का एकाग्रपना है । क्योंकि
ब्रह्मज्ञान तिस । इन्द्रिय अरु चित्तकी । एकाग्रतारूप द्वारवाला
है ताते । अरु "मनसश्चेन्द्रियाणाञ्चैकाग्र्यंपरमंतपः,तज्ज्यायः
सर्व धर्मेभ्यः सधर्मः पर उच्यतेति" मन अरु इन्द्रियों का
एकाग्रपनाहै सो परमतपहै, सो जाते सर्व धर्म्मों से बड़ाहै
तिसको परमधर्म कहते हैं । इस स्मृति के प्रमाणसे । अरु
[सो तपको तपिके, अर्थ यह पिताने कहा जो लक्षण सो
परिपूर्णहुआहै, इसप्रकार एकाग्रचित्तसे विचारके "अन्नंब्रह्मेति
अन्न ब्रह्महै, । ऐसा जानताहुआ । यहां यह अर्थ है कि सर्व
भोगियेहै, ऐसा जो सर्वकी प्राप्तिका साधारण स्थूलदेहका
विराट्नामवाला स्थूल पंचभूतोंका समूह, यहां अन्न शब्दसे
कहते हैं । तिसको स्थूल भौतिक पदार्थोंकाकारण होनेसे । जिस
यह भूतउपजते हैं, इस ब्रह्मके लक्षणको तहां योजना करने
शक्यहोने से सो । अन्न, ब्रह्महै इसप्रकार जानताहुआ] तप
तपके । अन्न ब्रह्म है इसप्रकार जानताहुआ, इसप्रकार प्रथम
अनुवाकसे सम्बन्धहै ॥ अर्थात् प्रथम अनुवाकके अन्तमें कहा
कि "तपस्तप्त्वा" तपको तपिके, अरु इस अनुवाकके आदि
कहाहै कि "अन्नंब्रह्मेतिव्यजानात्" अन्नको ब्रह्म जानताहुआ
ताते पूर्वानुवाकके अन्त अरु इसके आदिके सम्बन्ध से यह अ
हुआके, तपको तपके अन्नको ब्रह्म जानताहुआ ॥

इति द्वितीयोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! "अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्" (अन्न ब्रह्महै, ऐसे जान
हुआ) जिसकरके सो अन्न ब्रह्मके उक्त लक्षणों करके युक्तहै,
तिसकोब्रह्महै, ऐसे जानताहुआ । प्र० ॥ कैसे सो । अन्न ब्र
लक्षणोंकरके युक्तहै, तहांकहतेहैं "अन्नाद्ध्येव खल्विमानि भूत
जायन्ते, अन्नेनजातानि जीवन्ति, अन्नंप्रयन्त्यभिसंविशन्ति
(जिसकरके अन्नसेही प्रसिद्ध यह सर्वभूत उपजतेहैं, अन्नसे उ
हुये जीवते हैं, अन्नके ताईं सम्मुखजाते हैं प्रवेश को पावते हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्। अन्नाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। अन्नेन जातानि जीवन्ति। अन्नं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तद्विज्ञाय पुनरेव वरुणं पितरमुपससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। तꣳ होवाच। तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपस्तप्त्वा २।३६॥ इति द्वितीयोऽनुवाकः॥

अर्थात् अन्नसे उपजेहुयेभूत अन्नसेही जीवते हैं अरु परिणाम अन्नमेंही लयहोतेहैं, ताते अन्नका ब्रह्मपना युक्तहै। सो ऐसे तपको तपके लक्षण अरु युक्तिसे "तद्विज्ञाय वरुणं पितरमुपससार, अधीहि भगवो ब्रह्मेति" इतिसको जानिके पुनः वरुण पिता के पास जाताहुआ, अरु कहा, हे भगवन्! ब्रह्मको कहिये? अर्थात् अन्नरूप ब्रह्मको जानके पुनः संशयको प्राप्तहुआ भृगु अपने वरुण नामक पिताके समीप जाय कहताहुआ कि हे भगवन्! ब्रह्म को कथन करिये। प्र०। यहां संशयका कारण कौनहै, उ०। अन्नकी उत्पत्ति को देखने से उसको संशयहुआ। कि पिताकरकेकहे ब्रह्म के लक्षण अन्नविषे पायेजाते हैं परन्तु ब्रह्मअजहै औ अन्न उत्पत्ति वाला है ताते यह अन्न ब्रह्म कैसे होगा। "तꣳ होवाच तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व, तपो ब्रह्मेति, सतपोऽतप्यत, सतपस्तप्त्वा" इतिस 'भृगुको पिता, कहताहुआ तपब्रह्महै, ऐसे तपकरके तू विशेष ब्रह्म के जानने की इच्छाकर, पश्चात् सो भृगु पुनः तप को तपताहुआ, सो तप को तपिके?॥ इति द्वितीयोऽनुवाकः॥

हे सौम्य! प्राणोब्रह्मेति, व्यजानात्, प्राणाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, प्राणेन जातानि जीवन्ति, प्राणं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति" इ प्राणब्रह्म है, ऐसा जानताहुआ। प्राण से ही प्रसिद्ध यह सर्व भूतमात्र उपजते हैं, प्राणसे ही उपजेहुये जीवते हैं, अरु प्राणके अर्थ सम्मुख जातेहैं अरु प्रवेश को पावते हैं; अर्थात् प्राणसे ही सर्वभूत उपजते हैं अरु उपजेहुये तिसहीसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणो ब्रह्मेति व्यजानात् । प्राणाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते । प्राणेन जातानि जीवन्ति । प्राणं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति । तद्विज्ञाय पुनरेववरुणं पितरमुपससार । अधीहि भगवो ब्रह्मेति । तꣳहोवाच । तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व । तपो ब्रह्मेति । सतपोऽतप्यत । स तपस्तप्त्वा ३ । ३७ ॥ इति तृतीयोऽनुवाकः ॥

जीवते हैं, अरु अन्त बिषे तिन प्राणही में प्रवेश को पावते हैं "तद्विज्ञायपुनरेव वरुणं पितरमुपससार अधीहि भगवोब्रह्मेति" तिसको जानके पुनः ही वरुण पिताके समीप जाताहुआ, हे भगवन्! ब्रह्मको कहो; अर्थात् उक्तप्रकार तिस प्राणरूप ब्रह्म को विचारके पुनः वो भृगु अपने वरुणनाम पिताके समीपजाय कहताहुआ हे भगवन्! ब्रह्मको कहिये, इसप्रकार ब्रह्म विषयक प्रश्न करताहुआ, तब "तꣳहोवाच । तपसा ब्रह्मविजिज्ञासस्व, तपोब्रह्मेति, स तपोऽतप्यत । स तपस्तप्त्वा" सो पिता कहता हुआ तपसे विशेष करके ब्रह्मको जानने की इच्छाकर, तप ब्रह्म है सो तपको तपताहुआ, तपको तपिके ॥ अर्थात् प्राणको ब्रह्म के लक्षणों करके विचारनेसे भृगुको यह संशयहुआ कि यह प्राण उत्पत्तिमान् अरु आवागमन वाला अरु जड़ है अरु ब्रह्म अज अचल चैतन्य है, ऐसा विचार पितासमीप जा कहा हे भगवन्! ब्रह्मकहो तब पिताने कहा तप सर्व साधनों में बड़ा है ताते तू तप करके ब्रह्मको विशेषकरके जानने की जिज्ञासाकर, तब वो भृगु पुनः तपको तपताहुआ, तपको तपिके ॥ आगे चतुर्थ अनुवाक से पूर्ववत् सम्बन्धहै ॥ इति तृतीयोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! "मनोब्रह्मेति व्यजानात्, मनसोह्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, मनसा जातानि जीवन्ति, मनः प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति" मन ब्रह्म है, ऐसे जानताहुआ, मनसेही प्रसिद्ध यह भूत उपजते हैं, मनकरके उपजेहुये जीवते हैं, मनके अर्थ सम्मुख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनो ब्रह्मेति व्यजानात्। मनसो ह्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। मनसा जातानि जीवन्ति। मनः प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तद्विज्ञाय पुनरेव वरुणं पितरमुपससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। तꣳ होवाच। तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपस्तप्त्वा ४। ३८॥ इति चतुर्थोऽनुवाकः॥

जाते हैं अरु प्रवेशको पावते हैं; अर्थात् यहमनही ब्रह्महैऐसेजानता हुआ, मनसेही सर्वभूत उपजे हैं अरु सो उपजेहुये मनकरकेही जीवतेहैं अरु अन्तबिषे मनके सम्मुखहुये मनबिषे प्रवेश करतेहैं "तद्विज्ञाय पुनरेव वरुणं पितरमुपससार, अधीहि भगवो ब्रह्मेति, तꣳहोवाच, तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व, तपो ब्रह्मेति, स तपोऽतप्यत, स तपस्तप्त्वा" ऐसे तिसको जानके पुनः भी वरुण पिताकेपास जाताहुआ, हे भगवन्! ब्रह्मकहो, पिताने कहा तप बड़ाहै, तपकरके ब्रह्म के विशेष जानने की इच्छाकरो, सो तप को तपताहुआ, तपको तपि के; अर्थात् तिस मनरूप ब्रह्मको जानके। पूर्ववत् तिसबिषे संशयको पायके। पुनः वो भृगु अपने वरुणपिता के समीप जायके। अपना संशयकह। कहताहुआ कि। हे भगवन्! ब्रह्मको कहिये, इसप्रकार जब भृगुने ब्रह्म पुछा तब वरुण कहताहुआ, तप। सर्वसाधनों में। बड़ा है, ताते तू तपको तपिके ब्रह्मको विशेष जानने की इच्छाकर, तब वो भृगु पुनः तपको तपताहुआ, तपको तपिके॥ इसका सम्बन्ध आगेहै॥

इति चतुर्थोऽनुवाकः॥

हे सौम्य! "विज्ञानं ब्रह्मेति व्यजानात्, विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशंतीति" ऐसे विज्ञान ब्रह्म है ऐसा जानताहुआ, विज्ञानसेही यह सर्व प्रसिद्धभूत उपजे हैं। विज्ञानसेही उपजे जीवते हैं, विज्ञानके सम्मुखजाते हैं, प्रवेशकरते हैं; अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यजानात् । विज्ञानाद्ध्येव खल्वि-
मानि भूतानि जायन्ते । विज्ञानेन जातानि जीवन्ति ।
विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति । तद्विज्ञाय पुनरेव व-
रुणं पितरमुपससार । अधीहि भगवो ब्रह्मेति । तꣳ
होवाच । तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व । तपो ब्रह्मेति । स
तपोऽतप्यत । स तपस्तप्त्वा ५ । ३९ ॥ इति पञ्च-
मोऽनुवाकः ॥

विज्ञानही ब्रह्म है इसप्रकार जानताहुआ, क्योंकि विज्ञानसेही प्रसिद्ध यह सर्व भूतउत्पन्नहोते हैं, अरु उत्पन्नहुये सर्व विज्ञान सेही जीवते हैं, अरु अन्त विज्ञान के सम्मुखजाते प्रवेश करते हैं "तद्विज्ञाय पुनरेव वरुणं पितरमुपससार, अधीहि भगवो ब्रह्मेति तꣳहोवाच तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व, तपोब्रह्मेति, स तपोऽतप्यत, स तपस्तप्त्वा" ऐसे तिसको जानके पुनः ही वरुण पिताके पासजाताहुआ, हे भगवन्! ब्रह्मको कहो, पिता कहताहुआ, तप को तपिके ब्रह्मकी विशेष जिज्ञासा करो, सो तपको तपताहुआ सो तपको तपिके ; अर्थात् सो भृगु विज्ञानको ब्रह्म जानके, अरु पूर्वप्रकार तिसमें संशयवान्होके पुनः अपने वरुणनामक पिताके समीपजाय कहताहुआ कि हे भगवन्! ब्रह्म कहो, इसप्रकार जब भृगुने प्रश्नकिया तब सो वरुणपिता कहताहुआ कि हे पुत्र! ऐसे ही तपकरके ब्रह्मको विशेष करके जाननेकी इच्छाकरो, क्योंकि सर्व साधनों में तप ब्रह्म (बड़ा) है, तब पुनः वो भृगु एकान्तमें जाय तपको तपताहुआ, तपको तपिके ॥ इसका अग्रिम अनु-वाकसे सम्बन्धहै ॥ इति पञ्चमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! "आनन्दो ब्रह्मेतिव्यजानात्, आनन्दाद्ध्येव खल्विमा-नि भूतानि जायन्ते, आनन्देन जातानिजीवन्ति, आनन्दं प्रयन्त्यभि-संविशन्ति" आनन्द ब्रह्म है ऐसे जानताहुआ, आनन्दसे प्रसिद्ध यह भूत उपजतेहैं, अरु आनन्दसे उपजेहुयेजीवते हैं, अरु आनन्दको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्। आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते आनन्देन जातानिजीवन्ति। आनन्दं प्रयन्त्यभिसंविशन्ति। सैषा भार्गवी वारुणी विद्या। परमे व्योमन् प्रतिष्ठिता। स य एवं वेद। प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान् भवति। प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन। महान् कीर्त्या ६। ४०॥ इति षष्ठोऽनुवाकः॥

अर्थ सम्मुख हुयेजाते हैं अरु प्रवेशको पावते हैं; अर्थात् यहआनन्द ही ब्रह्महै क्योंकि। ब्रह्मासे पिपीलिका पर्यन्तसर्व। भूत उपजते हैं, अरु उपजेहुये सर्व आनन्दसेही जीवतेहैं, अरु अन्तमें आनन्द के सम्मुख जाते तिसहीबिषे प्रवेशको पावते हैं,। इसप्रकार जानता हुआ॥ यहां जो वारंवार तप का उपदेश है, सो तपकी अतिशय साधनता के निश्चयार्थ है। यावत् पर्यन्त ब्रह्मका निरतिशय लक्षण नहीं होताहै, अरु यावत् जिज्ञासा निवर्त्त नहीं होती है, तावत् तुझको तपही साधनहै, तिस तप करके ही ब्रह्मके जानने की इच्छाकर। यह पिताके। वारंवार तप करनेकी आज्ञा का, अभिप्रायहै॥ [यहां यह अर्थ है कि श्रुति स्मृतिबिषे विराट् की उत्पत्तिके देखने से तहां ब्रह्मके। अजत्वादि सर्व। लक्षण घटते नहीं, यह जानके। अन्न ब्रह्मके जाननेके पश्चात्। पुनः। वोभृगु। तपको तपताहुआ॥। अर्थात् यहां तप शब्दका अर्थ विचार है अरु यही अतिशय साधनहै अरु सो भी चक्षुरादि इन्द्रियां बाह्य करण अरु मन आदिक अन्तःकरण इनकी सम्यक् प्रकार एकाग्रता पूर्वक जो विचार है सो तप शब्द करके ग्राह्य है। ॥ तिस विराट् रूप अन्नके कारण क्रिया शक्तिका आश्रय होनेकरके प्राण शब्दके लक्ष्य अरु संकल्प अरु निश्चयकी सामर्थ्य से युक्त होन करके मन अरु विज्ञान शब्दके लक्ष्य हिरण्यगर्भ को, ब्रह्म है, इसप्रकार जानताहुआ। तदनन्तर तिस हिरण्यगर्भको भी। "हि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रण्यगर्भोजायमानः" इत्यादि वेद प्रमाणसे । कार्यरूप होने करके तहां भी ब्रह्मका । समस्त । लक्षण होतानहीं, यह विचारके तिस हिरण्यगर्भ के कारणको स्वतन्त्रपना होने से निश्चय करके प्रार्थना किया होनेसे आनन्द शब्दके वाच्य मायाविशिष्ट चैतन्य रूप अन्तर्यामी को , ब्रह्म है , ऐसा जानके उपाधि विशिष्ट को अन्य अविशिष्टकी स्वरूपताके संभवसे कारण भावकरके उपलक्षित शुद्ध आनन्द को , ब्रह्म है , इसप्रकार जानता हुआ] इस प्रकार भृगुऋषि जो है, सो तपकरके शुद्ध चित्तवाला हुआ प्राणादिकों बिषे सम्पूर्णपने करके ब्रह्म के लक्षणको देखताहुआ। अरु कुछ काल उपरान्त तिस बिषे प्रवेश करके, अत्यन्त आन्तर आनन्दरूप ब्रह्म को तपकरके अर्थात् तपरूप साधन करके ही जानताहुआ। ताते ब्रह्म के जिज्ञासु पुरुषकरके बाह्य अरु भीतर के करणोंकी । अर्थात् इन्द्रिय अरु मन आदिकों की । एकाग्रता रूप परम तपरूप । सर्वोत्तम । साधन अनुष्ठान करनेको योग्यहै यह इस समस्त प्रकरणका अर्थ । अभिप्राय । है ॥ अब पिता पुत्र की आख्यायिकाको त्यागिके श्रुति अपने वचनोंकरके आख्यायिकासे कथन किये अर्थको कहे है "। सैषा भार्गवी वारुणी विद्या, परमे व्योमन् प्रतिष्ठिता, सय एवं वेद, प्रतितिष्ठति, अन्नवान्नादो भवति, महान् भवति, प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन । महान् कीर्त्या" । सो यह, भार्गवी वारुणी विद्या, परम व्योम बिषे स्थितहुई है, जो ऐसे जानताहै, सो स्थितहोताहै, अन्नवान् होता है, अन्नाद होताहै प्रजाकरके पशु करके ब्रह्मवर्चसकरके महान् होताहै, कीर्त्तिकरके महान् होताहै, अर्थात् सो यह भृगुऋषि ज्ञातकरी ताते भार्गवी, अरु वरुणऋषिने कथनकरी ताते वारुणी विद्या, सो अन्नमय रूप आत्मासे प्रवृत्तहुई परमव्योम हृदयाकाशगत । बुद्धिरूपा । गुहा बिषे परमानन्दरूप अद्वैतबिषे स्थित कहिये समाप्त हुईहै । जो अन्य जिज्ञासु भी उक्तप्रकार तपरूप साधन करके ही इसही क्रमसे तिन अन्नमयादिक आत्मादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रवेशहोयके आनन्दरूप ब्रह्मको जानताहै,सो इसप्रकार विद्याकी स्थितिसे आनन्दरूप परब्रह्म बिषे स्थित होताहै, अर्थात् ब्रह्मही होताहै ॥ इसप्रकार तिसको अदृष्ट फलकी प्राप्ति कहके, अब दृष्ट फल कहते हैं ॥ [यहां मूल श्रुतिबिषे अन्नकी बाहुल्यतारूप विशेषण सुनानहीं, तब तिसको कैसे रखतेहो, यह आशंका करके कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि, यहां मूल श्रुति बिषे सामान्यमात्र अन्नके कहेहुये श्वान सूकरादिकोंको भी शरीरकी स्थित्यर्थ प्राप्त हुये अन्नकरके " अन्नवान् भवति " अन्नवाला होताहै, । इस विद्वान्के विशेषणसे विद्याका फल नहींकहा ऐसा होवेगा, एतदर्थ तिसके बलसे यहां अन्नकी बाहुल्यतारूप विशेषण धराहै] बहुत से अन्नवाला होताहै, । जिसकरके सामान्य रीतिसे तो सर्वजीव अन्नवान् है, इसकरके सो विद्यासे । विद्वान्का । विशेषण न होवेगा । एतदर्थ विद्वान् को ही बहुत से अन्नवाला कहा । अरु ऐसे अन्नको जो भोगता है, ऐसा जो प्रदीप्त जठराग्नि वाला अन्नका भोक्ता तिसको अन्नाद कहते हैं, सो होवे है । अर्थात् इस भार्गवी वारुणी विद्याका सम्यक् जाननेवाला बहुत अन्न (भोग्य सामग्री) अरु भोगनेकी विशेष शक्तिकरके युक्त होताहै। अरु पुत्रादिरूप प्रजा अरु गो अश्वादि पशुकरके, अरु शम दम ज्ञानादि निमित्तवाले ब्रह्मतेजरूप ब्रह्मवर्चस करके महान् (सर्व से अधिक । होवेहै । अरु शुभाचरण करने से प्रख्यातिरूप कीर्त्तिकरके महान् होताहै, अर्थात् तिनको साक्षात् अनुभव करताहै ६।४० ॥

इति षष्ठोऽनुवाकः ६

हे सौम्य ! [दैवगति से प्राप्तहुये निकृष्ट अन्न की भी निन्दा करनी नहीं, क्योंकि " अद्योच्छिष्टमुतावरमित्युक्तत्वात् " आज का पाककिया । सद्य । वा कल्लका पाककिया । बासी । अन्न भक्षण करना, । इसप्रकार शास्त्रान्तर बिषे कहाहै ताते । अर्थात् जो कदापि प्रारब्धवशात् सद्य पाकहुआ अन्न न प्राप्तहोय तो प्राप्तहुये बासी अन्नको भक्षण करना परन्तु अन्नकी निन्दा न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्नं न निन्द्यात् । तद्व्रतम् । प्राणो वाऽन्नम् । शरीरमन्नादम् । प्राणेशरीरं प्रतिष्ठितम् । शरीरेप्राणः प्रतिष्ठितः । तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम् । स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति अन्नवानन्नादो भवति । महान् भवति । प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन । महान् कीर्त्या ७ । ४१ ॥ इति सप्तमोऽनुवाकः ॥

करनी, अरु यावत् सद्यसिद्धकिया अन्नप्राप्तहोवे तावत् बासी अन्न न खावे क्योंकि गीतास्मृति में एक प्रहरमात्र के भी बासी अन्न को तामस अन्न वा भोजन कहाहै । यहां ब्रह्मवेत्ता को जो उक्त नियमकाकथन है सो, सो साधक के अनुष्ठानार्थ । अरु निन्दाके त्यागबिषे । है] किंवा जिससे द्वारभूत अन्नकरके ब्रह्मका विज्ञान होता है ताते गुरुवत् " अन्नं न निन्द्यात्, तद्व्रतम् " । अन्न की निंदाका विषय करना नहीं, सो व्रतहै ? । अर्थात् जैसे गुरु ब्रह्म की प्राप्तिका द्वार है तैसे अन्न भी विचारद्वारा ब्रह्मप्राप्तिका द्वार है, ताते किसीप्रकार के भी अन्नकी निंदा करनी नहीं । इसप्रकार का ब्रह्मवेत्ताओं का व्रत कहिये नियम उपदेश । प्रतिज्ञा । है यहां व्रतका जो उपदेश है सो अन्नकी स्तुत्यर्थ है वा । अन्न की महिमा प्रकाशनार्थ है अरु अन्नको ब्रह्मज्ञानका उपायरूप होने से स्तुति की योग्यताहै ॥[ऐसे वाक्यार्थ के ज्ञानबिषे लक्ष्यपदार्थ के अनुसंधान रूप मुख्य साधनको अरु तिसके फलको समाप्त करके, अब विचारबिषे असमर्थ मन्द अधिकारी को अन्न अन्नाद । भोग्य अरु भोक्ता । रूपसे प्राणादिकोंकी उपासना का गौण साधन को विधान करते हैं । यहां यह कथन किया होता कि उपासना भी फलकी इच्छा से अनुष्ठान की हुई मन्द अधिकारीको बुद्धिद्वारा ब्रह्मज्ञानके अर्थ उपकारकरेहै, अरुमुख्य उत्तम अधिकारीको तो प्रपञ्चके अपवादार्थ उपकार करेगी] " प्राणो वाऽन्नम्, शरीरमन्नादम्, प्राणे शरीरंप्रतिष्ठितम्, शरीरेप्राणः प्रति-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ष्ठितः।" (वा प्राण अन्नहै, शरीर अन्नादहै, प्राणबिषे शरीरस्थितहै, शरीरबिषे प्राणस्थितहै) अर्थात् वा प्राण अन्नहै, क्योंकि प्राणका शरीर बिषे अन्तरभाव है ताते, अर्थात् जो जिसके अन्तरहोताहै सो तिसका अन्न होताहै। अरु शरीरबिषे प्राणस्थितहोताहै ताते प्राण अन्नहैं अरु शरीर अन्नाद (अन्नका भोक्ता) है। तैसे शरीरभी अन्नहै, अरु प्राणअन्नादहै क्योंकि शरीरकी स्थितिप्राणरूपनिमित्त चालीहै ताते, अरुजिसकरके प्राणबिषे शरीरस्थितहै, अरुशरीरबिषे प्राणस्थितहै, इसकरके यह दोनों शरीर अरु प्राण परस्पर अन्न अरुअन्नादरूपहैं, अरु जिसहेतुकरके परस्परबिषे स्थितहैं तिसही करके अन्नहैं, अरु जिसकरके परस्परकी स्थितिरूपहै तिसहीकरके अन्नाद (भोक्ता) है। एतदर्थ प्राण अरु शरीर ये दोनों अन्न अरु अन्नादरूपहैं "तदेतदन्नमन्नेप्रतिष्ठितम्, स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति अन्नवानन्नादो भवति, महान् भवति, प्रजयापशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन, महान्कीर्त्या"। (सो यह अन्न अन्नबिषे स्थितहै, जो यह अन्नबिषे स्थितअन्नकोजानताहै सो अन्नअरुअन्नाद रूपसेही स्थितहोताहै, किंवा अन्नवान् अरु अन्नाद होताहै, अरु प्रजाकरके अरु पशुकरके ब्रह्मवर्चस करके महान् होता है अरु कीर्तिकरके महान्होता है) अर्थात् सो यह अन्न अन्नबिषे स्थित है, अरु जो इसअन्नबिषे स्थित अन्नको सम्यक्प्रकार जानता है सो अन्न अरु अन्नाद (अर्थात् भोग्य अरु भोक्ता) रूपसेही स्थित होताहै, अथवा अन्नवान् (अर्थात् अन्नादि सर्वभोग्य सामग्री सम्पन्न, अरु अन्नाद (अर्थात् भोगने के सामर्थ्य सम्पन्न सर्वभोगों का भोक्ता होताहै। अरु पुत्र पौत्रादि प्रजाकरके, अरु गो गज अश्वादि पशुओंकरके, शम दम समाधि आदि साधननिमित्तक ब्रह्मतेजकरके सर्वसे अधिक होताहै। अरु पुत्र पशु ब्रह्मवर्चस दानादि निमित्तक ख्यातिरूप कीर्ति करके लोकबिषे प्रख्यातहोताहै॥ ७। ४१॥

इति सप्तमोऽनुवाकः॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्नं न परिचक्षीत । तद्व्रतम् । आपो वाऽन्नम् ज्योतिरन्नादम् । अप्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम् । ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः । तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम् । सय उ तदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम् वेद । प्रतितिष्ठति । अन्नवानन्नादो भवति । महान् भवति । प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन महान् कीर्त्या ८ । ४२ ॥ इत्यष्टमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य! "अन्नं न परिचक्षीत, तद्व्रतम्, आपोवाऽन्नम्, ज्योतिरन्नादः, अप्सु ज्योतिःप्रतिष्ठितम्, ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः तदेतदन्नमन्नेप्रतिष्ठितम्" (अन्नको परित्याग करेनहीं सोव्रत वा जल अन्न है, ज्योतिः अन्नाद है, जलबिषे ज्योतिः स्थित ज्योतिःबिषे जलस्थितहै,सो यह अन्नबिषे स्थित अन्न है,) अर्थात् अन्नको परित्याग करेनहीं । अर्थात् जो कदापि अन्न निकृष्ट होय तथापि उसका निरादर वा निन्दारूप त्यागकरेनहीं । यह अन्नरूप ब्रह्मकेज्ञाता विद्वानोंका उद्देश (शिक्षा) रूप व्रतकहे हैं । यहां उक्त व्रतकाजो उपदेशहै सो अन्नकी स्तुतिके अर्थ है अरु अन्न ऐसे शुभाशुभकीकल्पनासे अपरित्यागकिया स्तुतिविषयकिया अरु महान् कियाहुआ होताहै । वा जल अन्नहै, ज्योतिः कहिये तेज अन्नाद है । अर्थात् जल, भोग्यहै अरु तेज भोक्ताहै, यह लोकबिषे प्रख्यात है । जलबिषे ज्योतिः स्थित ज्योतिः बिषे जलस्थित है । सो यह अन्नबिषेस्थित अन्नहै । "एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद, प्रतितिष्ठति, अन्नवानन्नादोभवति, महान् भवति, प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन, महान कीर्त्या ।" इस अन्नबिषे स्थित अन्नको जानता है, सो अन्न अरु अन्नाद रूपसे स्थितहोताहै,अथवा अन्न । भोग्यवान् अरु अन्नाद । भोक्ता होता है । अरु । पुत्रादि । प्रजाकरके, अरु । गवादि । पशुकरके अरु ब्रह्मवर्चस करके महान् । सर्वबिषे प्रख्यातहोवे है, अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्नं बहु कुर्वीत । तद्व्रतम् । पृथिवी वाऽन्नम् । आकाशोऽन्नादः । पृथिव्यामाकाशः प्रतिष्ठितः । आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता । तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम् । स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम् वेद । प्रतितिष्ठति । अन्नवानन्नादो भवति । महान् भवति । प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनामहान् कीर्त्या ९।४३॥इतिनवमोऽनुवाकः॥

नादि सद्धर्माचरणके निमित्तसे लोकबिषे सर्वसे अधिक कीर्ति यशा वाला होवे है ॥ ८ । ४२ ॥ इति अष्टमोऽनुवाकः ॥

हे सौम्य ! "अन्नं बहु कुर्वीत, तद्व्रतम्, पृथिवी वाऽन्नम्, आकाशोऽन्नादः, पृथिव्यामाकाशः प्रतिष्ठितः, आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता, तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्" ८ अन्नको बहुत करना, सो व्रत है, वा पृथिवी अन्न है, आकाश अन्नाद है, पृथिवीबिषे आकाश स्थित है, आकाश बिषे पृथिवी स्थित है, सो यह अन्न अन्नबिषे स्थित है । ३ अर्थात् अन्नको बहुत करना, सो व्रत कहिये उपदेश करते हैं । अर्थात् जल अरु तेज के अन्न अरु अन्नाद गुणवान्पनेकरके उपासकका अन्नका बहुत करना व्रत है । वा पृथिवी अन्न है अरु आकाश अन्नाद है । पृथिवीबिषे आकाश स्थित है । आकाशबिषे पृथिवी स्थित है । सो यह अन्न अन्नबिषे स्थित है "स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद, प्रतितिष्ठति, अन्नवानन्नादो भवति, महान् भवति, प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन; महान् कीर्त्या" ९ जो इस अन्नबिषे स्थित अन्नको जानता है, सो अन्न अरु अन्नाद रूपसे । भोग्य भोक्ताके रूपसे । स्थित होता है वा अन्नवान् । भोग्य सामग्री करके सम्पन्न । अरु अन्नाद । भोगनेकी शक्ति सम्पन्न । होताहै । अरु प्रजाकरके, पशु करके, ब्रह्मवर्चस करके महान् । सर्वसे अधिक । होवेहै, अरु शुभ गुणोंके निमित्तसे यशकरके लोकबिषे महान् । अति प्रख्यात । होवे है ३ ९ । ४३ ॥ इति नवमोऽनुवाकः ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न कञ्चन वसतौ प्रत्याचक्षीत । तद्व्रतम् । तस्मा
यया कया च विधया बह्वन्नं प्राप्नुयात् । अराध्यस्मा
अन्नमित्याचक्षते । एतद्वैमुखतोऽन्नछंराद्धम् । मुखत
ऽस्माअन्नंराध्यते । एतद्वैमध्यतोऽन्नछंराद्धम् । मध्यत
ऽस्मा अन्नछं राध्यते । एतद्वा अन्ततोऽस्मा अन्न
राध्यते ॥ ४४ ॥

हे सौम्य! "न कञ्चन वसतौ प्रत्याचक्षीत, तद्व्रतम्, तस्मा
यायाकया च विधया बह्वन्नं प्राप्नुयात्, अराध्यस्मा अन्नमित्या
क्षते" ? निवासार्थ, किसीको भी निवारण करना नहीं, सो व्र
है, ताते येनकेन प्रकारसे बहुत अन्नको प्राप्तहोना, इसके अ
अन्न सिद्ध है ऐसा कहते हैं ? अर्थात् तैसे पृथिवी बिषे आकाश
उपासक का निवास करने बिषे किसी को भी निवारण कर
नहीं, सो व्रत [प्रतिज्ञा] है । अर्थात् आकाश द्वारा ब्रह्मका उ
सक निवासार्थ अपने स्थानपर आये अभ्यागतको निवास क
में निवारण (निषेध) करते नहीं क्योंकि अपने स्थानपर अ
अभ्यागतको निवास देना ऐसा उनका प्रतिज्ञारूप व्रतहै त
अरु अब इस सांप्रतकाल में बहुधा ऐसा देखने में आयाहै
जो किसी धनवान् गृहस्थके स्थानपर रात्रिको वा सायंस
को मार्गचलनेसे श्रमितहुआ कोई साधुअभ्यागत आयके अ
एकरात्रिमात्र निवासार्थ स्थानकी याचनाकरताहै, अरु उस
स्थके यहां आरामादि स्थानभी हैं तथापि उस आये अभ्या
को अपने स्थानके विषयमें राजकीयपुरुषों का वा चोरादिकों
भय देखाय अपने स्थानपर निवासकरने का उस अभ्यागत
निषेधकरते हैं, अरु जो कदापि उस अभ्यागतके प्रारब्ध भो
उस समय दैवप्रेरित वर्षावातादिक भी दुःखदायी होय, त
निर्दयी अविवेकी अधर्मी महाकृपण वो गृहस्थ उस निवास
को अपने स्थानपर निवासमात्रभी देते नहीं तब अन्नदेने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो प्रसंगही क्याहै ? ॥ अरु अभ्यागतादिकों को निवास के दियेहुये भोजनका देनाभी अवश्य योग्यहीहै, ताते येनकेनप्रकार से (अर्थात् जैसे बनै तैसे अन्नको प्राप्त (संग्रह) करना। अरु अन्नवाले विद्वान् (अर्थात् जिसके पास अन्नादिक धनभीहै, अरु अभ्यागत अतिथिको अन्ननिवासादि देनेके पुण्यको अरु न देनेके पापको सम्यक् प्रकारजानताहै (अन्नके अर्थी अभ्यागत के अर्थ (अर्थात् जिससे किसीभी प्रकार का सम्बन्ध वा परिचय न होय अरु वो अपने स्थानपर निवासार्थी वा अन्नार्थी वा उभयार्थी होके आयाहोय तिसको अभ्यागत कहते हैं (इसकेलिये अन्नसिद्धहै ऐसाउदार वचन कहते हैं, अन्न नहीं है ऐसा (कृपण अरु अज्ञातपनेका (वचन बोलते नहीं (अन्न का निवारणकरते नहीं) तिससे बहुत अन्नका संग्रह करना, इसप्रकार पूर्वले पदसे सम्बन्धहै। अबअन्नदानका माहात्म्यकहतेहैं " (एतद्वैमुखतोऽन्नꣳराद्धम्,मुखतोऽस्मा अन्नं राध्यते, एतद्वै मध्यतोऽन्नꣳराद्धम्,मध्यतोऽस्मा अन्नꣳराध्यते" (इसप्रसिद्ध सिद्धान्नको मुखसे देताहै,इसके अर्थ अन्न सिद्धहोताहै, अरु (इस प्रसिद्ध सिद्ध अन्न को मध्यसे देता है ,इसके अर्थ मध्यसे अन्न सिद्ध होताहै) अर्थात् जिसकाल में अरु जिसभावसे अन्न दानकरताहै, तिसही काल में अरु तिसही भाव से वोभी अन्न पावताहै। प्र०। कैसे पावता है। उ०। इस (लोकबिषे (प्रसिद्ध (तंदुल (चावल)दाल, मधुकरी(रोटी) आदिक(सिद्धहुये (पाककिये) अन्नको मुखसे॥ (अर्थात् मुख कहिये मुख्य,शरीरकी किशोरादि सविवेक प्रथमावस्थाकरके वा मुख्य जे श्रद्धा तिस श्रद्धावृत्तिकरके, अर्थात् बृहदारण्यकी श्रुति प्रमाण से मनुष्यों के परम कल्याणार्थ एक दानदेनारूप धर्म्महीं मुख्य है, अरु " आशाप्रतीक्षे सङ्गतꣳ सूनृताञ्चेष्टापूर्तेपुत्रपशुꣳश्च सर्वान्, एतद्वृङ्क्ते पुरुषस्याल्पमेधसो यस्यानश्नन् वसति ब्राह्मणोगृहे " (इत्यादि प्रमाणसे जिस अल्पज्ञ अविद्वान् पुरुषके गृह आया अभ्यागत अतिथि विश्राम अन्नादिकों से सत्कार पावता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं तिसके धर्म कर्म पुत्र पशु आदिक सर्व नष्ट होते हैं, ताते अभ्यागतको श्रद्धा सत्कारपूर्वक सिद्धान्न देनायोग्यहै ऐसा विचारके, पूजनादि सत्कारपूर्वक जोअन्नार्थीअभ्यागतकोअन्नदेताहै, इसप्रकार जो अभ्यागतादिकों को सत्कारपूर्वक अन्नादिकों का देना है सो मुख्य वृत्तिसे देना है । अरु जो कहा कि प्रथमावस्था बिषे देना सो, मुख्य देनाहै, तिसका आशय यह है कि शरीर की प्रथमवय बालकिशोरादि अवस्था बिषे जो अतिथि अभ्यागतों की सेवारूप धर्मबिषे अरु दानादि सद्धर्मबिषे श्रद्धा पूर्वक रुचिका होना है सो पूर्वले उत्तमोत्तम संस्कारोंसे है, अरु उस प्रथमवयबिषे जो सद्धर्म में श्रद्धाका होनाहै सोपूर्वजन्मके धर्मात्मापने का बोधक असाधारण लक्षण है, अरु प्रथमवयबिषे उत्पन्नहुई सद्धर्म विषयक श्रद्धा सो उसपुरुषके धर्मात्मा होनेमें मुख्य हेतुहै, जैसे नचिकेताको प्रथमवयबिषेही पिताके हितरूप धर्म्म में श्रद्धा उत्पन्नहुई अरु सोई उसके परमधार्मिक होनेके प्रकाशार्थ मुख्यहेतुहुई, ताते प्रथमवय बिषे अरु श्रद्धा सत्कारादिवृत्तिपूर्वक जो दानादि होते हैं सो, मुख्य, ऐसा कहते हैं ॥ देताहै । प्र० । तिस । दाताको क्या फल होताहै । उ० । मुखसे । अर्थात् उक्तप्रकार । प्रथमवयबिषे वा मुख्य (श्रद्धादि) वृत्तिसे । अभ्यागतादिकों को अन्नादि दानदेता है । ऐसे अन्नदाताके अर्थ अन्न सिद्ध होताहै, अर्थात् जैसा । जिस अवस्थामें अरु जिस वृत्तिसे । दियाहै तैसाही । तिसवय अरु तिस वृत्तिसे उसको भी इसलोक वा परलोक में । प्राप्त होता है ॥ । अर्थात् जो पुरुष अपनी प्रथमवयबिषे श्रद्धा सत्कारपूर्वक अन्नादि देतेहैं, तिनके उस कर्म्म की उसही वयमें लोकबिषे प्रख्याति होने से उसको भी उसही वयबिषे श्रद्धा सत्कारादि मुख्य वृत्तिसे ही अन्नादिक प्राप्त होता है । अरु तिसकरके ही लोकबिषे प्रसिद्ध है कि जो जैसा करता है सो तैसा पावता है, अरु इस उक्तविचारार्थ को आगे भी लगायलेना । ॥ इसप्रकारही , इस प्रसिद्ध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

य एवं वेद। क्षेम इति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्म्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ॥ इति मानुषीः समाज्ञाः॥ अथदैवीः॥ तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति ४५॥

सिद्धान्नको मध्यसे। अर्थात् मध्यवयसे वा मध्यम वृत्तिसे। अभ्यागतों के अर्थ देताहै। तैसेही इस अन्नदाताके अर्थ मध्यसे। अर्थात् मध्यवयाबिषे वा मध्यमवृत्तिसे। अन्न सिद्धहोताहै। अर्थात् जो पुरुष मध्यम भावसे देत है तिसकोभी मध्यमभाव सेही प्राप्तहोताहै। ॥ अरु तैसेही "एतद्वा अन्ततोऽन्नꣳ राद्धम्, अन्ततोऽस्मा अन्नꣳ राध्यते" इस प्रसिद्ध सिद्धान्नकोअन्तसे देता है, इसके अर्थ अन्तसे अन्नासिद्ध होताहै; अर्थात् तैसेही इसप्रसिद्धसिद्धअन्नको अन्तसे। अर्थात् अन्तके वयबिषे वा अधम वृत्तिसे। अभ्यागतके अर्थ देताहै। तैसे ही इस अन्नदाताके अर्थ अन्तसे। अन्तकी वयबिषे वा अधमवृत्तिसे। अन्नासिद्ध होताहै ४४॥

हे सौम्य! "य एवंवेद, क्षेम इतिवाचि, योगक्षेम इतिप्राणापानयोः" ६ जो इसप्रकार जानता है, क्षेम है ऐसे वाणीबिषे, योग औ क्षेम है इसप्रकार प्राण अरु अपान विषे; अर्थात् जो ऐसे उक्तप्रकारके अन्नकेमाहात्म्यको जानताहै, सो उक्त प्रकारके अन्नदानके फलको प्राप्त होता है॥ अब ब्रह्मकी उपासना का प्रकार कहते हैं। ग्रहण किये वा प्राप्तहुये वस्तुकाजो रक्षण तिसको क्षेम कहते हैं, सो क्षेम ऐसे वाणी बिषे, अर्थात् ब्रह्म वाणी बिषे क्षेमरूपसे स्थित है, इसप्रकार उपासना करने को योग्यहै। (अर्थात् आचार्यसे ग्रहणकिया वा प्राप्तहुई विद्यारूपवस्तु सो यद्यपि संस्काररूप से अन्तःकरण बिषे स्थित है अरु स्मृति होना भी अन्तःकरणका धर्म है, परन्तु इस प्रसंगबिषे आचार्यसे प्राप्तहुई विद्या जिह्वाग्रहोने सों वाणीबिषेही स्थित माननीहै, अरु तिसकी जो सर्वकाल यथार्थ स्मृतिका रहनाहै सोई उसकी क्षेम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूप रक्षाहै अरु रक्षण करता चैतन्य होताहै अरु चैतन्यआत्मा-ही "। यो वाचि तिष्ठन्वाचोऽन्तरो यम् "। इस श्रुतिप्रमाणसे, वाणी बिषे स्थितहै, ताते वाणीबिषे ब्रह्म क्षेमरूपसे उपासना करनेको योग्यहै । ॥ अरु अप्रहण वस्तुका ग्रहण किंवा अप्राप्त वस्तु की प्राप्तिको योग, अरु प्राप्तवस्तु की रक्षा क्षेम, सो योग क्षेमरूप है, सो प्राण अपानबिषे है, यद्यपि वो योग क्षेम बलवान् हुये प्राण अपानबिषे ही होते हैं । क्योंकि सर्वका जीवनरूप योग क्षेम प्राण अपानकेही आश्रय होते हैं ताते । । तथापि वे योग क्षेम प्राण अपान रूप निमित्तवालेही नहीं हैं, किन्तु ब्रह्मरूप निमित्तवालेही हैं । । क्योंकि प्राण अपानका योग क्षेम भी किसी चैतन्य ब्रह्मके ही आश्रय है । तथाच "। न प्राणेन नापानेन मर्त्योजीवतिकश्चन इतरेण तु जीवन्ति "। यह अन्य श्रुतिका प्रमाण भी है । अरु "। य प्राणे तिष्ठन्प्राणादन्तरोयम् "। इस श्रुतिने प्राणके अन्तर अन्तर्यामी रूपसे चैतन्य ब्रह्मकोही कहाहै । । अतएव ब्रह्म योग क्षेम रूपसे प्राण अरु अपानबिषे स्थितहै, ऐसे जानके उपासना करनेको योग्यहै । इसप्रकार पिछले अन्य । ज्ञानेन्द्रियरूप । वस्तु बिषे भी तिस तिस । दर्शन श्रवणादि सामर्थ्य। स्वरूपसे ब्रह्मही उपासना के योगहै "। कर्म्मेति हस्तयोः, गतिरिति पादयोः, विमुक्तिरिति पायौ ॥ इति मानुषीः समाज्ञाः "। ६ कर्म्म है ऐसे हस्त बिषे, गतिरूपहै ऐसे पादोंबिषे, विमुक्ति रूपहै ऐसे पायु (गुद) बिषे, । ब्रह्म उपासना करने के योग्यहै । ऐसी मानुषी समाज्ञाहै, अर्थात् कर्म है इसप्रकार हस्तबिषे, अर्थात् कर्मोंको ब्रह्म करके निर्वाह करनेकी योग्यता होनेसे दोनों हाथोंबिषे कर्म रूपसे ब्रह्म स्थितहै । । अर्थात् हाथोंबिषे जो क्रियाशक्ति है सो सर्वशक्तिमान् चैतन्य ब्रह्मकीही है क्योंकि हस्तादिक कर्मेन्द्रिय जड़हैं तातेउन जड़ोंबिषे कर्तृत्वादि कोई भी शक्ति उनकी नहीं अरु जहां शक्ति होतीहै तहां उस शक्तिका आश्रय शक्तिमान् भी अवश्य होताहै, ताते कर्मरूपसे हाथोंबिषे ब्रह्म स्थितहै । । इसप्रकार उपासना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करनेको योग्यहै। अरु गति कहिये गममरूप है इसप्रकार पादों विषे, ब्रह्मउपासना करनेको योग्यहै। विमुक्ति (मलका त्याग वा मृत्यु) रूपसे है, इसप्रकार पायु (गुदेन्द्रिय) विषे, ब्रह्म उपासना करनेके योग्य है। (अर्थात् जैसे हाथोंविषे कर्म रूपसे ब्रह्मके अस्तित्वमें कल्पितविशेषार्थ है तैसेहीपाद अरु पायु इन्द्रियोंविषेभी अर्थकी योजनाकरके तिनकेतिनके कर्मरूपसे ब्रह्मको जानना) ॥ यह मनुष्योंविषे होनेवाली ऐसी अध्यात्मिकरूप मानुषी समाज्ञा कहिये उपासनाहै " अथ दैवीः " (अब दैवी) अर्थात् अब देवों विषे होनेवाली ऐसी देवी समाज्ञा कहते हैं। " तृप्तिरितिवृष्टौ, बलमिति, विद्युति " (तृप्तिरूपहै ऐसे वृष्टि विषे, बलरूपहै ऐसे विद्युतविषे) अर्थात् तृप्तिरूपहै इसप्रकार वृष्टिविषे, क्योंकि वृष्टि को अन्नादिकद्वारा तृप्तिका हेतुपनाहै ताते ब्रह्मही तृप्तिरूपसे वृष्टि विषे स्थितहै, इसप्रकार जानके उपासना करने को योग्यहै ॥ तथाच " यदा त्वमभिवर्षस्यथेमाः प्राण ते प्रजाः, आनन्दरूपास्तिष्ठन्ति कामायान्नं भविष्यतीति " यह अन्य श्रुतिके अर्थकी भी योजना होती है ॥ अरु इसप्रकार अन्यों विषे तिस तिस रूपसे ब्रह्मही उपासना करनेको योग्यहै ॥ (अर्थात् जिस जिस देवता विषे जो जो दैवी शक्तिहै सो सो उस सर्वशक्तिमान् परमात्मा कीही है, अरु उसही ने आकाशादि भूत सृजके तिसविषे आपही प्रवेशकरके अपनी पृथक् २ विशेषशक्तिको आपही अनुभव करता है, जैसे सूर्य अपनी किरणोंसे जल उत्पन्न करता है, तिस विषे प्रतिविम्बरूपसे प्रवेशभी आपही करता है, अरु तिस प्रतिबिम्ब द्वारा जलविषे आइ जो अपनी प्रकाशरूपा विशेषशक्ति तिसको अनुभव भी आपही करताहै तैसे, । ताते सर्वविषे सर्वशक्तिमान् एक ब्रह्मही उपासना करनेके योग्यहै) ॥ तैसे बल ऐसे (बलरूप से) बिजली विषे है ४५ ॥

हे सौम्य! " यश इति पशुषु, ज्योतिरिति नक्षत्रेषु, प्रजातिरमृतमानन्द इत्युपस्थे, सर्वमित्याकाशे, तत्प्रतिष्ठेत्युपासीत,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यश इति पशुषु । ज्योतिरिति नक्षत्रेषु । प्रजातिरमृतमानन्द इत्युपस्थे । सर्वमित्याकाशे । तत्प्रतिष्ठेत्युपासीत । प्रतिष्ठावान् भवति । तन्मह इत्युपासीत महान् भवति । तन्मन इत्युपासीत । मानवान् भवति ४६ ॥

प्रतिष्ठावान् भवति " ? यश ऐसे पशुबिषे, ज्योति ऐसे नक्षत्रोंविषे, अमृत अरु आनन्द उपस्थ बिषे, सर्व आकाशबिषे है ऐसे, सो सर्वकी प्रतिष्ठाहै ऐसे उपासनाकरना, प्रतिष्ठावान् होताहै ; अर्थात् यश इसप्रकार यशरूप से पशुओं बिषे, अरु ज्योति इसप्रकार नक्षत्रों बिषेज्योति रूपसे । अर्थात् " यश्चन्द्रतारके तिष्ठन् " " तस्य भासा सर्वमिदं विभाति " " यश्चन्द्रमसियश्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् " इत्यादि श्रुति स्मृतियों के प्रमाणसे । अरु प्रजापति अरु पुत्रसे पितृऋणकी निवृत्तिद्वारा अमरभावकी प्राप्तिरूप, अमृत औ आनन्द कहिये सुख, ऐसे उपस्थइन्द्रियबिषे, अर्थात् प्रजापतित्व, अमृत, सुख यह सर्व उपस्थइन्द्रियरूप निमित्तवाले हैं, ताते ब्रह्मही इनरूपसे उपस्थबिषे स्थितहै, इसप्रकार । जानके । उपासना करने को योग्य है । अरु जिसकरके सर्व आकाश बिषे स्थितहै, इसकरकेही, जो सर्व आकाशबिषे है सो ब्रह्मही है, इसप्रकार । जानके । उपासना करनी योग्यहै । अरु जिसकरके सो आकाश ब्रह्मही है, इसही से वो सर्वकी प्रतिष्ठा (आधार) है इसप्रकार । जानके । उपासनाकरना । तिस प्रतिष्ठा रूप गुणकी उपासना से प्रतिष्ठावान् होते हैं । । अर्थात् आकाश केवलअवकाशरूपहै ताते यावत् समस्त जगत् आकाशबिषे भासते हैं सो आकाशबिषे नहीं, किन्तु " य आकाशे तिष्ठन् " " आकाशशरीरम् ब्रह्म " इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे जैसे शरीरी के आश्रय शरीर अरु तदाश्रित अवयवादि सर्व होताहै, आकाश समेत सर्व ब्रह्म से उपजाहै । अरु तिसकरके आकर्षितहुआ तिसही बिषे स्थितहै, ताते जो आकाशबिषे है सो सर्व आकाशसहित ब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तन्मन इत्युपासीत। नम्यन्तेऽस्मै कामाः। तद्ब्रह्मेत्युपासीत। ब्रह्मवान् भवति। तद्ब्रह्मणः परिमर इत्युपासीत। पर्य्येण म्रियन्ते द्विषन्तः। सपत्नाः। परि येऽप्रिया भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासावादित्ये। स एकः ४७॥

ही है, अरु सो सर्व ब्रह्म के आकर्षण से स्थित है ताते सो सर्व की प्रतिष्ठाका ही ये आधार है "सर्व्वाधारो" इतिश्रुतेः। वा "सौम्येमाः सर्व्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठाः" इत्यादि श्रुति। जैसे पृथिवीसे उत्पन्नहुये घटसरावादिक पृथिवीरूपहैं, अरु पृथिवी के आश्रयहैं ताते पृथिवी उनकी प्रतिष्ठाहै, तैसेही ब्रह्मसे उत्पन्नहुआ सर्व ब्रह्मरूपही है अरु सर्व ब्रह्मकेही आश्रयहै ताते ब्रह्म सर्वका आधारभूतहोने से सर्वका आधाररूप प्रतिष्ठा है, इसप्रकार प्रतिष्ठारूप गुणविशिष्ट ब्रह्मको उपासताहै सो प्रतिष्ठावान् होताहै। इसप्रकार पूर्व कहि उपासना बिषे भी जो जिसके आधीन फलहै सो ब्रह्मही है,ताते तिसकी उपासनासे तिसवालाही होताहै।। "ये यथा मान्प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्"। इसप्रकार जानना क्योंकि "तं यथा यथोपासते तदेव भवतीति" तिसको जैसे जैसे उपासते हैं सोई (फल) होताहै। यहअन्यश्रुतिकाभी प्रमाणहै।"तन्महइत्युपासीत,महान् भवति,। तन्मन इत्युपासीत मानवान् भवति" ६ सो महत् है ऐसेउपासनाकरना, महान् होताहै, सो मन ऐसे उपासना करना, मानवान् होताहै; अर्थात् सो। ब्रह्म। महत्, पनेरूप गुणवान्, है इसप्रकार जानके उसकी उपासना करने से महान् होताहै, अरु सो। ब्रह्म। मनरूपहै ऐसा जानके उसकी उपासना करते हैं सो मानवान् कहिये मननबिषे समर्थ होताहै ४६॥

हे सौम्य! "तन्मन इत्युपासीत, नम्यन्तेऽस्मै कामाः, तद्ब्रह्मेत्युपासीत,ब्रह्मवान् भवति तद्ब्रह्मणः परिमर इत्युपासीत," ६ सो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नमहै ऐसे उपासनाकरना, इसके अर्थ काम नमते हैं, सो ब्रह्म है ऐसे उपासना करना, ब्रह्मवान्होवे है, सोब्रह्मका परिमरहै एसे उपासनाकरना ; अर्थात् सो नम , कहिये नमनरूप गुणवालाहै इसप्रकार । जानके । उपासना करना, तिसकरके इस उपासक के अर्थ भोगने योग्य विषयरूप कामनमते । प्राप्तहोतेरहते । हैं। अरु सो ब्रह्म । अर्थात् सर्व से बड़ा अत्यन्तघन परिपूर्ण । है ऐसा । जानके । उपासना करते हैं । सो उपासक ब्रह्मवान्।तिसब्रह्मके गुणवाला,होताहै।अर्थात्ब्रह्मकेगुणोंवाला तबहोवेगा जबब्रह्मरूप होवेगा, अतएव ब्रह्मका उपासक ब्रह्मरूपहुआ तिसगुणवानहोत है । । अरु सो ब्रह्मका परिमर , कहिये वायु, है इसप्रकार। जानके उपासनाकरना । अर्थात् जिसबिषे , बिजली, वर्षा, चन्द्रमा,सूर्य अरु अग्नि, यह पांचदेवता मरते हैं, ऐसा जो वायु सो " अतो वायुःपरिमर" याते वायु परिमरहै, । इस अन्य श्रुतिबिषे प्रसि द्धहै । ताते वायुको ब्रह्मका परिमरकहते हैं, सो यहही वायु जि सकरके आकाशसे अनन्यहै इसी से आकाश ब्रह्मका परिमरहै तिस वायुरूप आकाशको ब्रह्मका परिमरहै, इसप्रकार जानके उपासनाकरना ॥ इसप्रकार जाननेवाले उपासककेप्रति स्पर्द्ध करनेवाले द्वेषकरतेहुयेभी जिससे शत्रुहोते हैं, इसहीसे तिनके द्वेषकरनेवाले शत्रुहैं, इसप्रकारका विशेषणदेते हैं"पर्य्येणम्रियन्ते द्विषन्तः "। "द्वेषकरनेवाले सर्वओरसे मरते हैं ; अर्थात् सो इसके प्रति द्वेषकरनेवाले शत्रुसर्वओरसे मरतेहैं कहिये प्राणोंकोत्यागते हैं। किंवा " सपत्नाः । परियेऽप्रिया भ्रातृव्याः " । "जो अप्रियभ्राता केपुत्रहैं, वेसर्व ओरसे मरते हैं ; अर्थात् जो इस । उपासक । के अप्रियभ्राताके पुत्रहैं सो अद्वेषकरनेवाले हुयेभी सर्वओरसेमरते हैं । इसप्रकार [ऐसे मन्दाधिकारीके विषयउपासनाके समूहको अध्यारोप अवस्थासे उपदेशकरके , अब अपवाददृष्टिके अभिप्रा यसे कहतेहैं] "प्राणोवाऽन्नम्, शरीरमन्नादम् " । वा प्राण अन्न अरु शरीर अन्नाद है , । इससे आरंभकरके आकाशपर्यन्त क

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काही अन्न अरु अन्नादपना कहा ॥ प्र० ॥ यह कहां तिसकरके क्या सिद्धहुआ। उ०। तिसकरके यह सिद्धहुआ कि भोज्य अरु भोक्ताकाकिया जो संसार है सो कार्यको विषयकरनेवालाही है। अर्थात् यह सर्व भोग्य भोक्तारूप संसार है सो आप कार्यरूप होनेसे कार्यपनेकोही लखावनेवाला है। आत्माविषे तो नहीं है, परन्तु आत्माविषे। तिसका। भ्रान्तिसे आरोप करते हैं। ननु, [भोक्तापने आदिरूप जो संसारहै, सो कार्यको विषयकरनेवाला है, ऐसा वर्णनकियाहै, तहां जीवको उपाधिरहित (स्वरूपसे) संसारीपना देखाहै तिसकोभी कार्यरूपहोनेसे। इस वैष्णवोंकेमत को प्रकटकरके दूषणदेतेहैं] आत्माभी परमात्माका कार्यहै, ताते इसको संसारयुक्तहै, सो कथन बनेनहीं क्योंकि असंसारीकेही प्रवेशकी श्रुतिहै ताते। अरु "तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्"। तिसको सृजके तिसहीके अर्थ पुनः प्रवेशकरताहुआ,। इसप्रकार श्रुतिविषे आकाशादिकोंके कारण असंसारी परमात्माकाही कार्योंविषे प्रवेशकहाहै। अरु। सोई। सुनतेहैं ताते कार्योंविषे प्रवेशकोपाया जो जीवरूप आत्माहै सो परमात्मारूपही असंसारी है। अरु "सृष्ट्वानुप्राविशादिति"। सृजके पुनः प्रवेशकरताहुआ,। इसप्रकार सृष्टि अरु प्रवेशके समान कर्त्तापनेके संभवसे, जब सृष्टि अरु प्रवेश। उभय। रूप क्रियाका एककर्त्ताहै, ताते सृजिके प्रवेशकरताहुआ, ऐसाकहना युक्तहै। अरु जो कहे, प्रवेशकरनेवालेकोतो अन्नभावकी प्राप्तिहोती है, सोकथन बने नहीं, क्योंकि प्रवेशको अन्यअर्थपनेकरके पूर्व षष्ठमन्त्रविषे निषेधकियाहै ताते,। अरु जोकहे कि [छांदोग्यकी श्रुतिके अनुसारसे विकार (कार्य) के आकारवालेस्वरूपसे परमात्माके प्रवेशकी आशंकाकरके तहां वाक्यशेषके विरोधको कहेहैं] "अनेनजीवेनात्मनाऽनुप्रविश्य"। इस जीवरूपसे प्रवेशकरताहुआ,। इस विशेषश्रुतिसे अन्यधर्मसे प्रवेशहुआहै, सोभी बनेनहीं, क्योंकि "तत्त्वमसि"। सो तूहै,। इसप्रकार पुनः तिस परमात्मभावकाही कथनहै ताते,। अरुजो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[भ्रान्तिसे देहादिभावको प्राप्तहुये ब्रह्मसे व्यतिरिक्तजीवको ही रागके निषेधार्थ परस्त्रीबिषे माताकी बुद्धिवत् संसारीपनेके निषेधार्थ ब्रह्मदृष्टि छान्दोग्यश्रुतिबिषे उपदेशकियाहै, एतदर्थ "तत्त्वमसि" सो तूहै, । इस उपदेशसे अन्य अर्थवाला होनेसे, जीव को पारमार्थिक असंसारी ब्रह्मपना नहींहै । यह आशंकाकरके तिसको दूषणदेतेहैं । यहां यहअर्थहै कि अबाधित तत्पदसे मुख्य सामानाधिकरण्यके विरोधसे ब्रह्मरूपजीवबिषे अब्रह्मभावकसम्पादनकरनेरूप अर्थवान्पना कल्पनाकरनेको अशक्य है] कहे कि अन्यभावको प्राप्तहुये परमात्माकीही तिस अन्यभावके निषेधार्थ "तत्त्वमसि" सोतूहै, । ऐसे श्रुतिबिषे सम्पत्ति कही है सो बनेनहीं क्योंकि "तत्सत्यं, सआत्मा, तत्त्वमसि" सो सत्य है, सो आत्माहै, सोतूहै, । इसप्रकार जीव अरु परमात्मा के सामानाधिकरण्य (एकार्थरूपता) है ताते, । अरु जो [संसारीभावके ग्राहक प्रत्यक्ष प्रमाणके विरोधसे जीव बिषे अबाधितपना असिद्ध है, इसप्रकार पूर्ववादी कहे है । यहां सिद्धान्ती सर्व प्रमाणों का अनुग्राहक तर्क अङ्गीकारकरे हैं अरु आत्मा के संसारी रूप धर्मवान्पने को तर्ककरके असिद्धताहोने से, अरु तिस संसारीपने के प्रत्यक्ष प्रमाणको भ्रान्तरूप होनेसे तिस प्रत्यक्ष प्रमाण को शास्त्रजन्य ज्ञानका बाधकपना सम्भवे नहीं, इस प्रकार कहते हैं सुखादिकों को प्रतीयमान होनेसे रूपादिकवत् उपलब्धा (ज्ञाता) का धर्मपना सम्भवे नहीं, यह अर्थ है ।]कहे जीव का संसारीपना देखा है, सो कहना बने नहीं, क्योंकि उपलब्धा (प्रत्यक्षप्रमाण) को अप्रतीयमानपना है ताते, तिसका देखना सम्भवे नहीं क्योंकि धर्मों के अरु धर्मी के भेदसे अग्निके धर्म उष्णता अरु प्रकाशता को अग्नि करके जलावनेकी योग्यता अरु प्रकाश करने की योग्यता के असम्भववत्, अरु नेत्र के धर्म को नेत्रकी विषयता के असंभववत् आत्माके धर्म को आत्माके विषय होनेके असंभव से धर्म विशिष्ट आत्माकी प्रतीति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संभवे नहीं। अरु जो [प्रत्यक्ष प्रमाण के विरोधके अभावहुये भी। अर्थात् जीव ब्रह्मकी एकताबिषे प्रत्यक्षप्रमाण विरोधी है तिस विरोधके अभाव हुयेभी। अनुमान प्रमाण का विरोध तो होवेगा, इसप्रकार पूर्ववादी कहता है] कहे कि आत्माको भयादिकके देखने से दुःखीपने आदिक धर्मोंका अनुमान होताहै अर्थात् आत्मा बिषे भयादि लिंगों के देखने से आत्मा बिषे दुःखादि धर्मोंका होना सिद्ध होता है। सो भयादिक जोहै सो आश्रय सहित है, कार्य होने से, घटवत्, । अरु अन्य आश्रय के असंभवसे आत्माही तिसका आश्रय अनुमान से जानिये है। इसप्रकार कहना योग्य नहीं, क्योंकि जो जानने योग्य वस्तु है सो उपलब्धा कहिये जाननेवाला तिसका धर्मनहींहै,रूपादिकोंवत्, । इन व्याप्त्यन्तरके (अन्य व्याप्तिके) विरोधसे अध्यास से भी कार्यके दर्शनके असंभवसे। यह अर्थहै।] बने नहीं,क्योंकि भय आदिकोंको अरु दुःखोंको प्रतीयमान होने से सो उपलब्धा (जाननेवाला) का धर्म्म नहीं है। अरु जो [जीवकी ब्रह्मरूपता के प्रतिपादन करनेवाले शास्त्रको तर्कशास्त्रके विरोधसे अप्रमाणपनाहै, यह शंकाकरके दूषण देते हैं] कहे ऐसे माने हुये कपिल मुनिकृत सांख्यअरु कणादमुनिकृत वैशेषिक आदि तर्कशास्त्रोंका विरोध होवेगा, सो बनेनहीं, क्योंकि तिन कपिलादिकोंको मूल के अभावहुये अरु वेदके विरोधहुये, भ्रांतिके संभवसे, अरु आत्मा का असंसारीपना श्रुति अरु युक्तिकरके सिद्धहै। अरु जीव[किंवा तार्किककरकेभी जीवकासुखीपना ईश्वरके आधीन निरूपणकरने कोयोग्यहै, सो निरूपणकरनेकोयोग्यनहीं, क्योंकिअपने आत्मरूप ईश्वरबिषे सुखदुःखकी हेतुताका असंभवहै तातेइसअभिप्रायसे कहते हैं] ईश्वरकीएकतासे ईश्वरके आधीन जीवके सुखीपनेका निरूपणकरनेको शक्यनहीं। ननु, जीव अरु ईश्वरकीएकता कैसे है, तहां कहते हैं "। स यश्चायं पुरुषे, यश्चासावादित्ये, स एकः"। सो जो यह पुरुषबिषे है, अरु, जो यहसूर्य्यबिषे है,सो एकहै, ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स य एवंवित् । अस्माल्लोकात्प्रेत्य । एतमन्नमयमात्मानमुपसंक्रम्य । एतं प्राणमयमात्मानमुपसंक्रम्य । एतं मनोमयमात्मानमुपसंक्रम्य । एतं विज्ञानमयमात्मानमुपसंक्रम्य । एतमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रम्य इमांल्लोकान् कामान्नी कामरूप्यनुसञ्चरन् । एतत्साम गायन्नास्ते । हा ३ वु हा ३ वु हा ३ वु ॥ ४८ ॥

हे सौम्य! [अब इस तृतीयावल्लीकी समाप्ति पर्यन्त जो अवशेष ग्रन्थहै तिसके तात्पर्यको उक्त अर्थके कथनसे कहतेहैं] "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" सत्य ज्ञान अनन्त ब्रह्महै, इस २४ चौबीसवीं ऋचा का अर्थ तिसकी विवर्णरूप आनन्दवल्लीकरके विस्तारसे व्याख्यानकिया। अरु "सोऽश्नुते सर्वान् कामान्सह ब्रह्मणा विपश्चितेति" सो विपश्चित् (सर्वज्ञ) ब्रह्मस्वरूपसे सर्व कामों (भोगों) को भोगताहै,। इस तिसके फल-वचनके अर्थ का "कौन वे सर्वकामहैं, वा सो किसको विषय करनेवाले हैं वा तिनको कैसे सो ब्रह्मरूप हुआ एक कालमें भोगताहै, इस रीतिका विस्तार कहानहीं, सो कहनेको योग्यहै, याते यह अब आरंभ करते हैं। तहां पूर्वोक्त विद्याकी साधनरूप पिता अरुपुत्र की आख्यायिका विषे ब्रह्मविद्या का तपरूप साधनकहा। अरु प्राणसे आदिले आकाशपर्यन्त जो कार्य है तिसका अन्न अरु अन्नादपने करके उपयोगकहा,। अरु ब्रह्मको विषयकरने वाले उपासन कहे। अरु नियमित अनेकसाधनोंकरके साध्य आकाशादि कार्यके भेदको विषयकरनेवाले जो सर्व कामहैं सो देखाये। अरु एकता विषे काम अरु कामीपने का असंभव है, क्योंकि सर्वभेदके समूहको आत्मरूपता है ताते। तहां उक्त प्रकार जाननेवाला विद्वान् एककाल विषे ब्रह्मस्वरूपता करके सर्वकामोंको कैसे भोगताहै, तहां कहतेहैं, [विद्वान् जो है सो अविद्याके लेशमात्रके वशहोनेकरके द्वैत के भ्रमको अनुभवकरता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुआ „सर्वस्य आत्माहमिति,, सर्वका आत्मा मैंहौं,। इसप्रकार जानताहुआ, अणिमादि ऐश्वर्यवाले योगियोंका जो कामान्नपना [अर्थात् कामनाके अनुसार अन्नवान्पना, अरु कामरूपपना [अर्थात् कामनाके अनुसार रूपका धारनेपना, है तिसको [अपने एकात्मपनेके यथार्थ अनुभवसे [मेराही है, ऐसे देखता हुआ एककालबिषेही सर्व विषयानन्द को भोगताहै, ऐसा कहाहै, सोई कहते हैं] सर्वात्मता के संभव से सो एककालबिषे ब्रह्मरूपसे सर्व कामों (भोगों) को भोगताहै ॥ प्र० ॥ तिसकी सर्वात्मताका संभव कैसेहै, तहां कहते हैं। "स य एवंवित्, अस्माल्लोकात्प्रेत्य, एतमन्नमयमात्मानमुपसंक्रम्य, एतं प्राणमयमात्मानमुपसंक्रम्य, एतं मनोमयमात्मानमुपसंक्रम्य, एतंविज्ञानमयमात्मानमुपसंक्रम्य, एतमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रम्य," [जो ऐसे जाननेवाला है सो इस लोकसे निरपेक्ष होके, इस अन्नमय रूप आत्माको उल्लङ्घनकरके, इस प्राणमयरूप आत्माको उल्लंघन करके, इस मनोमयरूप आत्माको उल्लङ्घनकरके, इस विज्ञानमयरूप आत्माको उल्लङ्घनकरके, इस आनन्दमयरूप आत्माको उल्लङ्घन करके,, अर्थात् जो उक्तप्रकार [आत्मा को [जाननेवाला है सो इस दृष्ट अरु अदृष्ट [इसलोक परलोक [रूप इस लोकसे [अर्थात् समस्त नामरूपात्मक कार्यरूप जगत् से [निरपेक्षहोके [अर्थात् लोकादि एषणासे रहितहोके [पुरुष अरु सूर्यबिषे स्थित आत्माकी [अभेद] एकताके विज्ञान से उत्कर्ष अरु अपकर्षको दूरकर के, पुनः इस अन्नमयरूप आत्माको उल्लङ्घनकरके। [अर्थात् इस स्थूलदेहरूप अन्नमयकोशको पञ्चभूतों के तमोगुणकाकार्य केवल अन्नरूपहोने से इसको कार्यरूप विकारीजान इसमें से आत्म बुद्धि त्यागके [। पुनः प्राणमयरूप आत्माको उल्लङ्घन करके। [अर्थात् अन्नमय कोशके भीतर अरु अन्नमयसे सूक्ष्महोने से अन्नमय काआत्मा जो प्राणमय कोश तिसको भी भूतोंका कार्य विकारी मान तिस विषयक आत्मबुद्धि त्यागके [। पुनः मनोमयरूप आत्मा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को उल्लङ्घन करके । (अर्थात् उक्तप्रकार के प्राणमय कोश के भीतर अरु प्राणमयसे सूक्ष्महोने से प्राणमयका आत्मा जो मनोमय कोश तिसकोभी भूतोंके रजोगुणका कार्य विकारी चंचल आत्माके लक्षणसे विपरीतलक्षणवाला जान तिस विषयक आत्मबुद्धि त्यागके) । पुनः विज्ञानमयरूप आत्मा को उल्लंघन करके । (अर्थात् मनोमय कोशके अन्तर अरु मनोमय से सूक्ष्मअरु मनोमयकी नियन्ता मनीषा नामवाली बुद्धिरूप विज्ञानमय कोश तिसको भी भूतोंके सत्त्वगुणकाकार्य शुभाशुभकी कर्त्ता कारीजान, तिस विषयक आत्मबुद्धि त्यागके) । पुनः आनन्दमयरूप आत्माको उल्लंघनकरके । (अर्थात् विज्ञानमय कोशके अन्तर अरु विज्ञानमय से सूक्ष्महोनेसे विज्ञानमय कोशका आत्मा अरु अविद्याका कार्य धन पुत्रादिकोंके संयोगरूपनिमित्तसे अप्रिय आदिक अवयवोंसहित क्वचित् भासनेवाला अनात्मा तिसविषयक आत्मबुद्धि त्यागके, ॥ इसप्रकार अविद्याकल्पित अन्नमयसेलेके आनन्दमयपर्यन्त जो आत्मा कहेहैं, तिनको क्रमसे उल्लङ्घनकरके । (हे सौम्य ! यह जो अन्नमयादिकोशोंका उल्लंघनकरनाकहाहै सो किसी तीर्थके जानेवाला यात्री जैसे मार्ग के ग्रामोंको उल्लंघनकरके उस तीर्थको प्राप्तहोताहै (तैसे इन अन्नमयादि कोशरूपग्रामोंको उल्लङ्घनकरके मुमुक्षुरूप यात्री अपने परमानन्दमय आत्मरूपतीर्थको प्राप्तहोय अभेद अनन्यता अनुभवरूप स्नान कर परमपुरुषार्थ (मोक्ष) रूप फलको प्राप्तहोताहै । परन्तु, उक्त यात्रीका बाह्यगमनहै तैसे मुमुक्षुरूप यात्रीका देशान्तरके गमनवत् बाह्यगमन नहीं किन्तु अन्तरमुख गमन है, अब इसपर न्यदृष्टान्त श्रवणकरो । हे सौम्य ! जैसे किसी चक्रवर्त्ती राजा राजगृह की अनेककक्षा (ड्योढ़ी) होती हैं अरु जो पुरुष राजाके दर्शनार्थ उस राजगृह में जाताहै सो प्रथमकक्षासे अन्तकी कक्षापर्यन्त सर्वको देखता अरु द्वारपालों से मिलता जाता है तब राजाके साक्षात् दर्शन पावताहै, अरु जो कदापि वो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दर्शनाभिलाषी पुरुष उन कक्षाओं को देखे विना अरु उन द्वारपालों से मिले विना उस राजाके दर्शनार्थ जाय तो वो द्वारपाल उसको मार्गही में अपने निकट अवरोधकरके उसको राजाके सम्मुख प्राप्त होने देतेनहीं। हे सौम्य! तैसेही "निहितं गुहायां परमेव्योमन्" "गुहाहितं गह्वरेष्ठं पुराणम्" "अंगुष्ठमात्रः पुरुषो सर्वजनानां हृदि सन्निविष्टः" "पुरमेकादशद्वारमजस्यावक्रचेतसः" "नवद्वारे पुरे देही" इत्यादि अनेक श्रुतियों स्मृतियों के प्रमाणसे इस शरीररूप पुर विषे हृदयरूप गुहा किंवा बुद्धिरूपा गुहाहैं सो साक्षी आत्मारूप चक्रवर्त्ती राजाका राजगृह है तिसविषे वो महाराज विराजमानहै। अरु तिस राजगृहके प्राप्त होने को क्रमसे अन्नमयसे आनन्दमयकोश पर्यन्त पांच कक्षा हैं अरु तत्तद्विशिष्ट जो चिदाभासहै सोई उन कक्षाओंके अभिमानी द्वारपालहैं अरु "ते वा एते पञ्च ब्रह्म पुरुषाः स्वर्गस्य लोकस्य द्वारपाः" इस छांदोग्यकी श्रुतिसे भी उक्त पंचकोशोंको द्वारपना, अरु तदाभिमानी चिदाभासोंको द्वारपालत्वपना, सिद्ध होताहै,। हे सौम्य! उक्तप्रकारके राजमन्दिरविषेस्थित जो साक्षीरूप आत्मा "सर्वेषांराजा" सर्वइन्द्रादिकोंका राजा महाराज तिसके साक्षात् दर्शनाभिलाषी जिज्ञासु मुमुक्षु, सो जब क्रमसे अन्नमयादि कोश रूप द्वारमार्ग से इस शरीररूप पुरान्तर उक्त राजगृहको चलता है अरु उक्त द्वारपालों से विचारद्वारा मिलताहै पुनः क्रमसाध्य एक एक कक्षाको उल्लंघन करता उक्त द्वारपालों से उक्त प्रकार मिलता आगेको अन्तरमुख चलता अपने स्वस्वरूपकी ओर आताहै तब उक्त राजा महाराजको उक्त राजमन्दिरके भीतर केवल आनन्दरूप सिंहासन पर "अहंब्रह्माऽस्मि" भावसे साक्षात् यथार्थ अनुभव रूप दर्शनकर अभेदतासे परमानन्द सुखको प्राप्त होताहै। अतएव हे सौम्य! उसराजाके दर्शनार्थ तुमको जो जाना है सो उक्त कोशोंको उल्लंघन करते अन्तरको जाना है, क्योंकि "कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्" इस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रुतिप्रमाणसे उक्तप्रकार अन्तरमुख चलनेसेही आत्माका दर्शन
होवे है । ॥ अरु । सत्य, ज्ञान (चैतन्य), अनन्त, अदृश्यादि धर्म
वाले स्वाभाविक आनन्द स्वरूप अजन्मा अमृत अभय अविनाशी
अद्वैत,ब्रह्मरूप फलको प्राप्तहोके "इमाँल्लोकान् कामान्नी कामरू
प्यनुसञ्चरन् । एतत्सामगायन्नास्ते । हा३वु हा३वु हा३वु" (का
मान्नी, कामरूपीहुआ, इन लोकों के अर्थ विचरता हुआ हा३
हा३वु, हा३वु इस सामका गायन करताहुआ स्थित होताहै, अर्थात्
। उक्तप्रकारका विद्वान् ब्रह्मविद्याके विषय । अद्वैत ब्रह्मरूप फल
को प्राप्तहोके, कामान्नी (अर्थात् कामनाके अनुसार अन्नको पावने
वाला) । अरु कामरूपी । अर्थात् कामनाके अनुसार रूपको धारने
वाला । होयके इन पृथिव्यादि लोकोंके अर्थ विचरताहुआ । (अ
र्थात् "लोकैषणायाश्चव्युत्थायाथ भिक्षाचर्यं चरन्ति" इस बृह
दारण्य की श्रुतिप्रमाण लोकैषणा कि जिस बिषे पुत्रैषणा अरु
वित्तैषणाका अन्तरभावहै, तिसको त्यागके भिक्षान्न भोजनकरने
हुआ विचरताहुआ, अर्थात् सर्वात्मरूप से इनलोकोंको आत्मरू
करके अनुभव करता हुआ । । हा३वु, हा३वु, हा३वु, इस साम को
गायन करता हुआ स्थित होताहै । प्र० । काहे को इस साम को
गायन करताहुआ स्थितहोताहै, । उ० । । सर्वत्र सर्वबिषे । समरू
होने से ब्रह्मही साम है । । अर्थात् "समो नागे समो मशके
"विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणेगविहस्तिनि , शुनिचैवश्वपाके
पण्डिताःसमदर्शिनः" इत्यादि श्रुति स्मृतियों के प्रमाण से
व्याकृतसे लेके तृण पर्यन्त सर्वमें समरूपसे एक अद्वैत चैत
आत्माही सुशोभितहै । ताते साम नामवाले आत्माको ही गा
करताहै । । तिस सर्वसे अनन्य ब्रह्मरूप सामको सर्व लोकों
हितार्थ,आत्मज्ञान के फल अतिशय कृतार्थपने को गायन कर
हुआ । । अर्थात् एक अद्वैत चैतन्य आत्मा की सर्वत्र समता
लखावताहुआ । । स्थित होताहै । अरु यहां तीनबार हा३वु
हा३वु, ऐसे कहाहै,सो अहो! इस आश्चर्यरूप अर्थाबिषेवर्त्तमानहु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो ३ अहमन्नादो ३ अहमन्नादः। अह श्लोककृदहश्लोककृदह श्लोककृत्। अहमस्मिप्रथमजोऋता ३ स्य। पूर्वं देवेभ्योऽमृतस्यना ३ भायि। योमाददाति स इदेव मा ३ वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा ३ द्मि। अहं विश्वं भुवनमभ्यभवां ३। सुवर्ण ज्योतिः। य एवं वेद। इत्युपनिषद् राध्यतेविद्युति। मानवान् भवत्येको हा ३ वु य एवं वेदैकञ्च ४६ ॥

अत्यन्त विस्मय (आश्चर्य) के जनावनेके अर्थ है ॥ "आश्चर्य्योवक्ताकुशलोऽस्य लब्धाऽऽश्चर्य्योज्ञाता कुशलानुशिष्टः" "आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन" इत्यादि श्रुति स्मृतियोंकेप्रमाणसे ४८॥

हेसौम्य!। प्र०। यह विस्मय कौनहै,। उ०। अद्वैत आत्मारूप निरंजन हुआभी, "अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्, अहमन्नादो ३ अहमन्नादो ३ अहमन्नादः। अहश्लोककृदहश्लोककृदहश्लोककृत्" (मैं अन्न हौं, मैं अन्न हौं, मैं अन्न हौं। मैं अन्नादहौं, मैं अन्नादहौं, मैं अन्नादहौं। मैं श्लोककाकर्त्ताहौं, मैं श्लोककाकर्त्ता हौं, मैं श्लोकका कर्त्ता हौं,) अर्थात् श्लोक जो अन्न अरु अन्नादका संघातातिसकाकर्त्ता चैतन्यमैंहीं हौं। अथवा अन्नादरूपजोअन्यातिसके अर्थ हुये अनेकरूप जे अन्नकेही संघात तिनका परार्थ रूप हेतु करके कर्त्ता मैंहीं हौं। और यहां तीनबार जो कथन है, सो विस्मयपने के प्रख्यात करने के अर्थहै। किंवा "अहमस्मि प्रथम जो ऋता ३ स्य, पूर्वं देवेभ्योऽमृतस्यना ३ भायि, यो मा ददाति स इदेव मा ३ वाः, अहमन्नमन्नमदन्तमा ३ द्मि, अहं विश्वं भुवनमभ्यभवां ३, सुवर्ण ज्योतिः" (मैं ऋतरूप इसके पूर्व उत्पन्न हुआ हौं, देवताओं से पूर्व अमृतका नाभिहूं, जो मुझको देताहै सो मुझको रक्षण करताहै, अन्नके भक्षण करनेवालेको मैं अन्नही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भक्षण करता हौं, मैं भुवनको भक्षण करताहौं, प्रकाशवान् मेरा ज्योतिहै ; अर्थात् मैं ऋत कहिये मूर्त्त अमूर्त्त, रूप इस जगत्के प्रथम उत्पन्नहुआ हिरण्यगर्भ हूं, अरु व्याष्टिरूप देवताओं से पूर्व विराट् रूपही हौं, अरु मैं अमृतका नाभि (मध्य) हौं अर्थात् प्राणियों का अमृतभाव मेरे विषे स्थितहै । अरु जो कोई एक मुझ अन्नरूपको किसी अन्नार्थीके अर्थ देता है ।अर्थात् मुझ अन्नको किसी जिज्ञासेके प्रति अन्नरूपसे उपदेशकरताहै।सो ऐसे अविनाशी रूप हुयेभी मेरी रक्षा करता है । (अर्थात् अमृतवत् सर्व का जीवन जो अन्नरूप ब्रह्म तिसको जो पुरुष किसी क्षुधित अन्नार्थी के अर्थ देताहै सोई उसअन्नरूप ब्रह्म जो सर्वका जीवन हुआ आप अविनाशी है तिसकी रक्षा करताहै क्योंकि अन्नार्थी के अर्थ जो अन्नका देनाहै सोई उस अन्नकीसाफल्यता रूप रक्षाहै, अथवा उस अन्नार्थी को ब्रह्मसे अभिन्नहुये उसकी जो अन्नदान से रक्षा करनी है सोई उस अविनाशीरूप ब्रह्मकी रक्षाहै अथवा ब्रह्मको जो अधिकारी जिज्ञासुप्रति अन्नरूप से उपदेश करना है सोई उस अविनाशीरूप ब्रह्मकी रक्षाकरनी है क्योंकि अधिकारीके प्रति जो उपदेश होताहै सो अपने निरादरपनेरूप भयको पावतानहीं।।अरु जो कोई अन्य (अविद्वान्) मुझ अन्नको अर्थियोंके अर्थ समयके प्राप्तहुये न देके अन्नकोभक्षण करताहै। (अर्थात् जो अविद्वान् पुरुष अपने भोजन के समयआय प्राप्तहुये जे अन्नार्थी अतिथि अभ्यागत तिनको अन्न न देके आपही अन्नको भक्षण करताहै) । तिस अन्नको भक्षण करनेवाले पुरुषको मैं अन्नही उलटाभक्षण करता हौं । (अर्थात् गृहस्थ के यहां जो भोजनार्थ अन्नपाक होताहै तिस सिद्ध हुये अन्नमें से प्रथम गार्हपत्याग्नि (रसोई के व पाकशालाके स्थानका अग्नि) विषे बलि वैश्वदेव कर्म्म की आहुति, अरु प्राप्तहुये अतिथि अभ्यागत के जठरका वैश्वानरनाम अग्नि ' जोकि वैश्वानरविद्या के ज्ञाता विद्वान् के भोजन के निमित्त से सर्वात्मरूप से भोक्ता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुआ समस्त जगत्की तृप्ति करनेवालाहै, तिसमें भिक्षान्नरूप आहुति देने से अवशेष रहा जो सिद्धान्न सो "यज्ञशिष्टामृतभुजो वा यज्ञशिष्टाशिनःसन्तो" इत्यादिप्रमाणसे अमृतरूप होता है, अरु तिस यज्ञशिष्ट अन्नका भोजन करनेवाला विद्वान् ब्रह्मलोकको प्राप्तहोता है। वा सर्व पापों से छूटता है अरु जो विद्वान् से अन्य अविद्वान् गृहस्थ अपने गृहमें सिद्धहुआ जो अन्न तिस सिद्धान्न में से बलि वैश्वदेव की आहुति अरु अतिथि अभ्यागतको, भिक्षा, दिये विना जो आपही अन्न को भक्षण करताहै तब वो अन्न "भुञ्जतेतेत्वघंपापा येपचन्त्यात्मकारणात्" इत्यादि प्रमाणसे पापरूपहुआ, भक्षकका विनाशकर्त्ता विषके तुल्यहोताहै, एतदर्थ विद्वान् कहताहै कि जो पुरुष समयपर प्राप्त हुये अन्नार्थी अतिथिरूप जो मैं, कि जो "अतिथि देवोभव" इत्यादि श्रुतियोंने देवता के तुल्य पूजनीय लक्ष करायाहै, तिसको अन्न न देके आपही उस अन्नको भक्षणकरताहै तिस भक्षणकर्त्ता पुरुषको मैं अन्नही। उसके उदरमें अजीर्णादि दोष विकार प्रकटकर उस पुरुषको भक्षणकरताहौं। ॥ यहां वादी कहता है कि, जबऐसेही है। कि जैसे तुम कहतेहौ। तब मैं सर्वात्मभावकीप्राप्तिरूप मोक्षसे भयको पावताहौं, मुझको संसारही होवो। जिसकरके मुक्तहुआभी मैं अन्नरूपहुआ अन्नकाही भक्ष्यहोवोंगा, ताते मैं मोक्षसे भयपावताहौं, तहां सिद्धान्तीकहताहै कि, हे वादिन्! तू भय मतकर क्योंकि सर्वकामों के भक्षणको व्यवहार का विषयहोने से, यह अविद्वान् अन्न अरु अन्नादादिरूप अविद्या के किये व्यवहारके विषयको भक्षणकरता है, अरु विद्यासे ब्रह्मभावको प्राप्तहुआ जो विद्वान्है तिसको। आत्मासे। द्वितीय अन्य वस्तु है नहीं कि जिसकरके भयको प्राप्तहोवे, एतदर्थ मोक्षसेभय करनेकेयोग्य नहीं है ॥ प्र० ॥ जब ऐसेही है, तब यह विद्वान् "मैं अन्नहौं—३, मैं अन्नादहौं—३, इसप्रकार यह क्या कहता है, ॥ उ० ॥ जो यह अन्न अरु अन्नादादिक स्वरूप कार्यरूप व्यवहार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है सो व्यवहार कार्यरूपही है, परमार्थवस्तु नहीं, सो व्यवहार ऐसाहुआभी ब्रह्मरूप निमित्तसेहै ब्रह्मविना असत्है । । अर्थात् अध्यस्तकार्यकी जो व्यावहारिक सत्ताहै सो वास्तव में असत् है तथापि जो उसकी सत्यता प्रतीतिमात्र भासती है सो ब्रह्मरूप सत्य अधिष्ठानके आश्रयहुई भासतीहै अरु सत्यरूप अधिष्ठान विना बन्ध्यासुतवत् असत् है । । इसप्रकार होनेकरके विद्वान्के सर्वात्मभावकी स्तुतिके अर्थ "मैं अन्नहों, मैं अन्नहौं, मैं अन्नहौं" "मैं अन्नादहौं, मैं अन्नादहौं, मैं अन्नादहौं" इत्यादिरूप यह ब्रह्म विद्याका कार्य्य कहते हैं । । अर्थात् विद्वान्का सर्वात्मभाव कैसे है इसका भी किञ्चित् बुद्ध्यनुसार विचार कर्त्तव्य है 'एक अद्वैत, इस शब्दकाअर्थ सजातीय विजातीय स्वागतआदि सर्व भेद से रहित निर्विकल्पवस्तुको लखावे है अरु 'सर्व, इस शब्दका जो अर्थ है सो एक अद्वैतशब्दके अर्थ से विपरीतहुआ नानात्वका वा संघातका वा समुदायका वा भेदोंकाबोधकहै, ताते एक इसशब्द के अर्थ में सर्व इसशब्दके अर्थकाप्रवेश होवेनहीं, ताते 'सर्वात्म, इस शब्दमें जो आत्मशब्द के साथ सर्व शब्दका कथनहै सो कथनमात्रही है, जैसे एक मृत्तिकामें उससे अभिन्नहुये घट सरावादि हैं, तैसे भी एक अद्वैत निराकार परिपूर्ण आत्माबिषे सर्वशब्दका विषयनहीं अरु रज्जुमें सर्पवत्भी अद्वैत निराकार आत्मा में सर्व शब्दका अर्थ नहीं क्योंकि अदृश्य में दृश्यकी अरु निराकार में साकारकी भ्रान्ति होवेनहीं, अरु जिन शास्त्रकारों ने एक अद्वैत निराकार आत्मा में मृत्तिका में घटादि अरु रज्जु में सर्पादिवत् सर्व शब्दकाविषय नानात्वमाना है तिन्होंने मायाको स्वीकारकरके मानाहै ताते उनकाकथन मायामात्र है अरु , या , मा, माया अर्थात् जो वास्तव में होवेनहीं केवल कहनेमात्रही होवे सो माया अरु ऐसी कथनमात्रही जो माया सो शुद्ध एक अद्वैत आत्माबिषे कल्पकके अभावसेहै नहीं, अरु अमायी (मायारहित) शुद्ध आत्माके अनुभवमें मायामात्रभी नानात्व नहीं, ताते केवल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अविद्याकरके कल्पित नानात्व है परन्तु अविद्या जब अपने आश्रय शुद्ध अद्वैत आत्मा में परिणामहोती है तब अविद्यारूप कल्पक के अभावहुये कल्पनामात्रभी नानात्वनहीं 'जैसे रज्जुके ज्ञानमें जब रज्जुका अज्ञान अपने परिणामभावको पावता है, तब अपने कल्पकके अभावसे कल्पित सर्पभी अभावहोताहै तैसे। अर्थात् तमकी अरु अज्ञानकी वस्तुको यथार्थ न लखावने बिषे एक ताहै अरु प्रकाश अरु ज्ञानकी वस्तुको यथार्थ लखावने बिषे एकताहै क्योंकि बाह्यके तमको पायके तिसके आश्रय अन्तरका अज्ञानरूप तम रज्जुरूप वस्तुको सर्पादिरूपसे अन्यथाकर देखाताहै, अरु जब बाह्यका दीपकादिकों के निमित्तका प्रकाश होता है तब तिसके आश्रय अन्तरका ज्ञानरूप प्रकाश रज्जुरूप वस्तुको योंकीत्यों लखावे है, अरु जब बाह्यका प्रकाश अरु अन्तर का ज्ञान एकत्रहोते हैं तब बाह्यका तम बाह्यके प्रकाश में अरु अन्तरका अज्ञान अन्तर के ज्ञानमें परिणामको पावते हैं तब उस निर्विकार शुद्ध रज्जुबिषे कल्पकके अभावहुये पुनःभ्रान्तिमात्रभी सर्पहैनहीं, अरु जैसेसर्पका कल्पकअज्ञान ज्ञानरूप परिणामको पावताहै तब वो कल्पित सर्प अपने रज्जुरूप अधिष्ठानमें परिणाम कोपावताहै। सो अपने कारण कल्पकअज्ञानके अभावहुये पुनः वो भ्रान्तिमात्रसर्पभीउत्पन्नहोवेनहीं,अरुउसशुद्धरज्जुकोतोकालत्रय मेंभीसर्पका गंधमात्रभीनहीं वो अपने एकअद्वैत स्वरूप के यथार्थ अनुभवमें दूसरे सर्पको जानतीभी नहीं जो सर्प क्या अरु कैसा होताहै तैसेही एक अद्वैत आत्मा को सर्वत्र परिपूर्णतासे घन शिलावत् यथार्थअनुभव करताहै तिसविद्वान्के अनुभवमें सिवाय एक अपने आप अद्वैत परिपूर्ण अखण्ड आत्माबिषे सर्व शब्दके विषयका गन्ध भी नहीं, ताते उसके सर्वात्मअनुभव में यह भाव नहीं कि कुछ सर्व शब्द का विषय है अरु तिसका मैं आत्मा होनेसे सर्वात्मा हौं, किन्तु उसके अनुभव में ऐसा है कि मेरे एक अद्वैत परिपूर्ण स्वरूप में अज्ञान के अभावसे सर्व शब्द

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का विषय कल्पनामात्र भी नहीं ताते वास्तव करके मैं सर्व का आत्मा वा सर्वरूप आत्मा नहीं सर्व विकल्प कल्पनासे रहित अवाच्य निर्विकल्पहो अरु जो अज्ञानकरके मायाके आश्रय मुझ विषे नानात्व की कल्पना करते हैं तिस कल्पनाका आश्रय अधिष्ठान होनेसे उनके अनुभवका नानात्व ' जो वास्तव करके मेरे विषे गंधमात्रभी नहीं, सोभी मैंही हौं ताते मेरेविषेसर्व शब्द के विषयके अभावसे जो हौं सो मैंही हौं अरु अविद्या करके कल्पित अरु मेरे वास्तव स्वरूप में अत्यन्त अभावरूप अविद्यान्करके भासमान अन्न अरुअन्नाद सो भी मैंही हौं। इसप्रकार सम्यक् आत्मानुभावी विद्वान् अपने वास्तवस्वरूप में सर्वशब्दके विषयको न देखताअपनेसर्वात्मापनेको अनुभवकरताहै। एतत्पर्य उक्त प्रकारके ब्रह्मभूत विद्वान्को अविद्याकेनाशहुये अविद्याके निमित्तकाकिया भयादिकदोषोंका विद्वान्के विषे गंधमात्रभीनहीं इस अभिप्रायसे ब्रह्मभूत विद्वान् पुनः कहताहै कि ब्रह्मादिक भूतों करके भोगने योग्य वा जिसविषे भूत होवेहैं ऐसाजोभुवन है तिस [चतुर्दशादि] सर्व भुवनोंको मैं परमेश्वररूपसे संहार [ईश्वर रूपताके ज्ञानसे मैं द्वैतका बाधकरताहौं, तातेमुझको भयका कारण नहीं। [अर्थात् " द्वितीयाद्वैभयंभवति " इत्यादि प्रमाणसे भयकाहेतु अज्ञानजन्य द्वैतभावहै, तिसका विद्वान् ने एक अद्वैत सर्वात्मज्ञानकरके निःशेष बाधकियाहै ताते उस विद्वान्को भयका हेतु रंचकमात्र भी नहीं, यह अर्थ है] करताहौं अरु सूर्य्यवत् एकही कालबिषे प्रकाशवान् मेरा ज्योति है। अ "य एवंवेद, इत्युपनिषद् राध्यते त्विद्युति, मानवान् भवत्येवं हा३ वु ॥ य एवंवेदैकञ्च " ' यह उपनिषद् है जो ऐसे जानता है, सिद्ध होताहै मानवान् होताहै, एकहावु जो ऐसे जानताहै अरु एक है ? अर्थात् यह द्वितीय अरु तृतीयवल्ली करके कथन किया उपनिषद् , कहिये परमात्मविषयक ज्ञान, है। तिस इस उक्त प्रकार की उपनिषद्को " शान्तोदान्तउपरतस्तितिक्षु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समाहितो भूत्वा" शान्त (बाह्येन्द्रियकी उपरामता) दान्त (मन का दमन वा तृष्णादि दोषोंकी निवृत्ति) उपरति (पुत्रादि एषणाकी निवृत्ति) तितिक्षा (शीतोष्णादि द्वंद्वकी सहिष्णुता) समाहित चित्त (चित्तकी एकाग्रता) इसप्रकार साधन सम्पन्न होयके। भृगुवत् महान् तप (एकाग्र चित्तसे सम्यक् विचार) को आश्रय करके जो उक्त प्रकार। ब्रह्म आत्मा की अभेदताको सम्यक् प्रकार। जानता है, तिसको अग्रिम कथित फल होता है। सिद्ध होताहै। अर्थात् उस साधन सम्पन्न विचारशील विद्वान् पुरुषको अपने आपविषे सर्व्वात्मभाव अनुभव सिद्ध होताहै। मानवान् होताहै। अर्थात् उस ब्रह्मभूत पुरुषको लोक विषे विवेकी पुरुष ब्रह्मपनेका मानदेतेहैं। एकहावु। एकहीविस्मय (आश्चर्य)है। जोपुरुषअनादिकालकेअविद्याकरकेअल्पज्ञजीवभाव को पाया सताजन्मजरामरणादिकों के क्लेशोंको अनिवार्यतासेपावता अरु अपने किये शुभाशुभ कर्मोंके आश्रय स्वर्गनरकादिकोंमें सुखदुःख भोगता बारम्बार देवतासे तृण पर्यन्त शरीरोंको धारता तापत्रयरूपअग्निकरके जलताहायहायकरता रोवतासुखप्राप्तिकी कामनासे दीनहुआ वृक्ष पाषाणादिकोंको पूजता कामनाकी अतिद्धि अरु अनिवृत्तिसे सर्व ओर भ्रमता सर्वकरके तिरस्कारपाया अपनेको पापी अपराधी अतिदीन नारकी ईश्वरादिकोंका किंकर मानतारहा। सो पुरुष ब्रह्मविद्याके प्रताप से अपने स्वरूप को यथार्थ साक्षात् अनुभवकरईश्वरादिकोंकाभी ईश्वर ब्रह्मभूतहुआ ब्रह्मा विष्णु शिवादिकोंकरके पूज्यसर्वात्मभावसे स्थित अभय अक्रियअविनाशीअजअद्वय सत् चैतन्यआनन्दअनन्तपरमानन्दमय होताहै, यही ब्रह्मविद्याकी अलौकिक विलक्षण आश्चर्यरूपाशक्ति है। इसप्रकार जानताहै। अरु ऐकहै॥ अर्थात् अपने आप यथार्थ आत्मानुभव में सर्व शब्दके विषयको देखता सापेक्षिक एकसंख्या से रहित सर्व संख्यातीत एकअद्वैत अर्थात् द्वैतसंख्याकी सापेक्षिक जो एक संख्याहै तिस एक संख्यातीत सम अद्वैत है॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भृगुस्तस्मैयतो विशन्ति । तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्मेति । सयोऽन्नं प्राणंमनो विज्ञानमितिविज्ञाय । तन्तपसा द्वादशद्वादशानन्द इति । सैषा दशान्नं ननिन्द्यात् । प्राणःशरीरमन्नं न परिचक्षीतापो ज्योतिरन्नं बहुकुर्वीत । पृथिव्यामाकाश एकदशैकादश । न कञ्चनैकषष्टिरेकान्नविंशतिरेकान्नविंशतिः । सहनाववतु सहनौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै । तेजस्विनावधीतमस्तुमाविद्विषावहै । ॐशान्तिःशान्तिःशान्तिः भृगुरित्युपनिषत् शन्नोमित्रः । आवीद्वक्तारम् ॐशान्तिः इतिदशमोनुवाकः ५० ॥

इतिभृगुवल्ली इति तैत्तिरीयोपनिषत्सम्पूर्णम् ॥

हे सौम्य ! "सह नाववतु, सहनौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै । तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै" सो (परमात्मा) हमारी (गुरु शिष्यकी आसुरी सम्पदासे) रक्षाकरो, अरु सो (परमात्मा) हम (गुरु शिष्यको अपना अभेदानन्द) भोगावो, अरु सो (परमात्मा हमारे बिषे निदिध्यासन समाधिका) सामर्थ्यकरो, अरु (हे परमात्मन् !) हमारा अध्ययन किया (उपनिषद् अध्यात्मशास्त्र ब्रह्मविद्या सो) अविद्यारूपा अपराविद्या प्रवृत्तिशास्त्र, तिसकी विस्मृति पूर्वक । (अर्थात् "अन्याबाचो विमुञ्चथ" यह श्रुति ब्रह्मविद्या वेदान्तशास्त्र से इतर भाषण करनेका निषेध (त्याग) कहतीहै ताते, अरु ब्रह्मविद्याके विचारवान्को अपराविद्या प्रवृत्तिशास्त्रकी स्मृति विक्षेपकारीहै तातें) तेजस्वीहो, अरु हम शिष्य अरु आचार्य (किसीप्रकारके भी विमित्तको पायके) परस्परमें द्वेषको न प्राप्तहोवें, । ॐ (यह सत्य है । अर्थात् परमानन्द की प्राप्ति बिषे "एतदालम्बनंश्रेष्ठम्" यह प्रणवोपासनाही सत्य (मुख्य) है यह मैं सत्य कहताहौं) "ॐ शान्तिः शान्तिःशान्तिः" शान्तिहोवो, शान्तिहोवो, शान्तिहोवो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह जो उपनिषद् विद्याके अध्ययन वा पाठकरनेके आदि अन्त में शान्तिपाठ करना कहाहै तहां पूर्व के शान्तिपाठ से विद्याके समस्त अध्ययन होने पर्यन्त आध्यात्मिकादि क्लेशकी निवृत्ति के अर्थ परमात्मा से प्रार्थनाहै, अरु अन्तके शान्तिपाठसे अध्ययन कीहुई विद्याकीउक्त विघ्नोंसेविस्मृतिकी निवृत्तिकेअर्थ परमात्मा से प्रार्थनाहै। अरु जहांकहीं विघ्न विक्षेपहोताहै तहां आध्यात्मिकादि क्लेशोंके निमित्तसेही होताहै, एतदर्थ मुख्यकरके उक्त विघ्नों की निवृत्तिके अर्थही आदिअन्तमें परमात्माकी प्रार्थनारूप शांति पाठहै॥ हे सौम्य! इस मन्त्रके आरंभमें "भृगुस्तस्मै" भृगु तिस के अर्थ, यहां से लेके "एकान्नविंशति" एक उन्नीस १९, यहां पर्यन्त जो इस तृतीयाध्यायके मन्त्रकी स्मरणार्थ शृंखलाहै, तिस को निरुपयोगी जानके भाष्यकार श्रीशङ्कराचार्यजीने अर्थक्रिया नहीं, अरु तिसही अभिप्रायसे आनन्दगिरिने, वा अन्य भाषाटीकाकारोंने भी तिसका अर्थ कियानहीं। एतदर्थ ज्येष्ठ श्रेष्ठोंकी परम्परासे मुझ अल्पज्ञने भी उक्त मन्त्रों के अर्थ की कल्पनाकिया नहीं॥ १०। ५०॥ इति दशमोऽनुवाकः १०॥

इति तैत्तिरीयोपनिषद्गत भृगुवल्लीनामक
तृतीयोध्यायः समाप्तः॥

इति श्रीस्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती का अतिअल्पज्ञ शिष्य यमुनाशङ्कर नामक नागरब्राह्मण कल्पित यह तैत्तिरीय उपनिषद् का भाषाभाष्य समाप्त हुआ॥

ॐ हरिः॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणम्॥

लखनऊ मुंशीनवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखानेमें छपी॥
सितम्बर सन् १९०६ ई०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

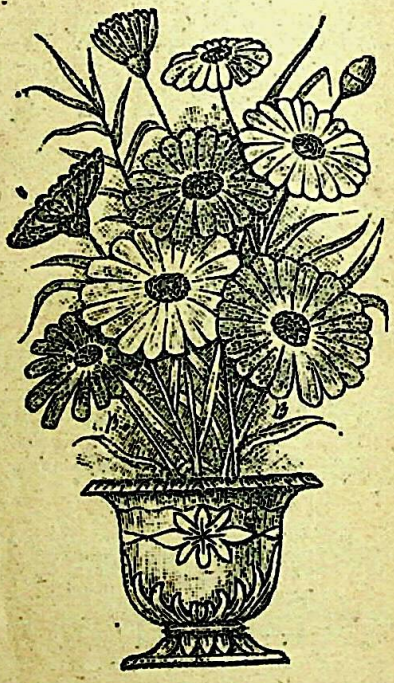

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस मतबेमें जितने उपनिषद् छपे हैं उनमेंसे कुछ नीचे लिखे हैं ॥

कठवल्ली उपनिषद् भा० टी० सहित की० =)॥

इस उपनिषद् में गुरु शिष्यसंवाद द्वारा श्रीवाजश्रवा ऋषीश्वर के पुत्र श्रीउद्दालक ऋषिने जिसप्रकार से विश्वजित् नामा यज्ञ की और उसीयज्ञ के दक्षिणा में ऋत्विजादि ब्राह्मणों को अपरिमित धन व गौओंको दान दिया और उसी यज्ञ में अपने परमप्रिय पुत्र ब्रह्मशिरोमणि श्रीनचिकेता को मृत्यु के अर्थ दानदिया और नचिकेता यमालयमें गया और मृत्यु ने सावधान पूजन किया और परस्पर वार्त्तालाप हुआ वह सववृत्त संक्षिप्त मंत्रों में वर्णित है ॥

माण्डूक्योपनिषद् भा० टी० सहित की० ॥=)

ॐ कारस्वरूप का प्रतिपादन व ब्रह्मकी आत्माकी अभेदताका निरूपण आगम, अवैताख्य, अद्वैताख्य व अलातशान्ताख्य इन चार प्रकरणों में निरूपण कियागया है अवलोकन करने योग्य है ॥

ऐतरेयउपनिषद् भा० टी० सहित की० =)

यह उपनिषद् ऋग्वेद के ब्राह्मणभाग से सम्बन्धित है—इस में मुख्य ब्रह्म विद्याका वर्णन है ॥

ईशावास्योपनिषद् भा० टी० सहित की० -)॥

जिसे वाजसनेयीसंहिता भी कहते हैं-इस उपनिषद् में यावत् नाम रूपात्मक जगद्ज्ञान है सब ईशही में घटित कियाहै ॥

केनोपनिषद् भा० टी० सहित की० =)

अब इसबार अत्यन्त शुद्धतापूर्वक सरलभाषा तिलक से युक्त मुद्रित की जाती है—इसमें आत्मविद्योपदेश श्रीप्रजापतिद्वारा वर्णन कियागयाहै ॥

छांदोग्यउपनिषद् भा० टी० सहित की० ॥=)॥

इस उपनिषद् में इन्द्रियादिकों के संघात विषे स्थित प्राणों की श्रेष्ठताका व श्रेष्ठताका एक आख्यायिका द्वारा प्रतिपादन है-मंत्रों के नीचे सरल देशभाषा में सुन्दर तिलक कियागया है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐतरेयोपनिषद्

श्री १०८ ईश्वर मठ पुस्तकालय, मुमुक्षु भवन, काशी

भाषाटीका सहित

जिसमें

आत्मा व ब्रह्मका निरूपण और प्राण व प्रणवकी उपासना की व्याख्या व संन्यासादि आश्रमों के लक्षण व धर्म अच्छेप्रकार वर्णित हैं ॥

जिसको

श्रीमान् सर्वैश्वर्य्य सम्पन्न श्रीमुंशीनवलकिशोर (सी, आई, ई) जीने भारतवर्षीय जनोंके उपकारार्थ बहुतसा धन व्ययकरके कोलाख्य नगरनिवासी पंचोली यमुनाशंकर नागरब्राह्मण से सरल देशभाषा में उल्था कराय स्वयंत्रालय में मुद्रित कराय प्रकाशित किया ॥

दूसरी बार

लखनऊ

मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छपी
सितम्बर सन् १९०६ ई० ॥

इस किताब का हक महफूज है बहक इस छापेखाने के ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

अथ विज्ञापनम्

विदितहो कि यह ऋग्वेदके ब्राह्मणभाग सम्बन्धी ऐतरेयनामक उपनिषद् (ब्रह्मविद्या) है, तिसका जो श्रीपरमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीशंकराचार्यजीकृत महाभाष्य, अरु तिसपर आनन्दगिरिकृत टीकाहै, तिसके अनुसार, मूलमन्त्रसहित, यह भाषाभाष्य मैं अतिअल्पज्ञ अविद्वान्ने, अपने गुरु श्री १०१ स्वामी ब्रह्मानन्दमहाराजकी कृपा बलसे, अरु सर्वजनहितकारी परमधार्मिक ब्रह्मनिष्ठ मुन्शी नवलकिशोर (सी, आई, ई) की आज्ञा से अनुवाद कियाहै, अरु मैं अतिअल्पज्ञ होनेसे सर्वसुज्ञविवेकी पाठकजनों से सविनय प्रार्थना करताहौं कि इस भाषाभाष्य में जोकुछ अनुचित लेखहुआहोय तिसको मुझपर क्षमाकरना, अरु इस भाषाभाष्य में बहुधा आनन्दगिरिके टीकाकी भाषा है सो श्रीद्विजवर पण्डित पीताम्बरजी महाराजकी टीकाके अनुसारहै॥

सूचीपत्रम् ॥

१ पृष्ठोपरि पुष्टाक्षरों में श्रुतिका मूलमन्त्र
२ " " इस चिह्नान्तर भाषानुवाद में मूलश्रुतिके वाक्य
३ ( ) इस चिह्नमें पूर्व अरु मूल श्रुतिवाक्य के अक्षरार्थ
४ [ ] इस चिह्नान्तर में आनन्दगिरिका अनुवाद
५ " " इस चिह्नान्तर में अन्यश्रुति स्मृतिआदिकों के प्रमाण वाक्य अरु तिसके पश्चात् निकट तिसका अक्षरार्थ'।
६ " " इस चिह्नान्तर प्रमाणमें केवल श्रुतिवाक्यार्थ
७ ।' '। इस चिह्नान्तरमें भाषाकार करके कल्पितविचार

"इति"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

तत्सद्ब्रह्मणेनमः ॥

"अथ"

ऋग्वेदीयैतरेयोपनिषद् ॥

अथ प्रथमाध्यायगत प्रथम खंडः प्रारभ्यते

हरिः ॐ ॥ आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत्। नान्यत्किञ्चन मिषत्। स ईक्षत् लोकान् नु सृजा इति ॥

श्री

ऋग्वेदीय

अथ ऐतरेयोपनिषद् भाषाभाष्य

प्रारभ्यते

"अथ"

ऐतरेयोपनिषद्गत प्रथमाध्याय भाषाभाष्य प्रारंभ

"अथ प्रथम खंड भाषाभाष्य"

हे सौम्य ! ["आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत्" (आगे एक आत्मा ही था) इत्यादि वाक्योंसे केवल एक आत्मविद्याके आरंभके अवसरके कहनेको उक्त अर्थका कथन करते । 'ऋग्वेद के ब्राह्मण में'। यहां पर्यन्त अपरब्रह्म । 'प्राण वा प्रज्ञा' की उपासना सहित कर्म समाप्त हुआ [तिस कर्म की समाप्ति कैसे विदित होती है, यह आशंका करके कहते हैं । यहां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ति शब्दका उत्कृष्ट गमनकरने योग्य।'अर्थात् प्राप्त होने योग्य'। लार्थहै सो यह उपासना सहित कर्मकी परगति उक्थ(प्राण)की पासनारूप द्वारसे समाप्त किया। [उपासना सहित कर्म की माप्ति को ही वाक्यके उदाहरण करके देखावें हैं। यहां यह है कि, तहां " सह सर्वेण भोज्येन संयुक्तोऽध्यात्माधिदैव-प्राणः प्राणः सत्यैकशब्दवाच्यो भवति " सर्व भोज्यकरके संयुक्त यात्म, अधिदैवरूप सो प्राण, एक सत्य शब्दका वाच्य होता। इस वाक्यसे प्राणका स्वरूप।'कथन'। समाप्त किया।] एतत् सत्यं ब्रह्म प्राणाख्यम् " " एष एको देवः " यह प्राण मक सत्य ब्रह्म है, । यह एक देव है, । [तब वाक्य और अ-दि देव कौन हैं, यह आशंका करके, " तस्य वाक् सन्ति " अथातोऽस्य पुरुषस्य" तिसका वाक् रूप सन्तान है, अरु अब करके इस पुरुषका, । इत्यादिक वाक्यों से सो वाकादिक णकी ही विभूतियां (विस्तार) हैं इस प्रकार कहा है। यह ते हैं] " एतस्यैव प्राणस्य सर्वे देवा विभूतयः " " एतस्य स्यात्मभावं गच्छन्देवता अप्येति " इसही प्राणकी सर्व देव-विभूतियां हैं, अरु इस [ऐसे सर्वात्मा प्राण के कर्म सहित त्मतत्त्व रूप करके विज्ञान से सर्व देवता के स्वरूप प्राणकी ति रूप फल " प्रज्ञामयो देवतामयो ब्रह्ममयोऽमृतमयोऽसं-देवता अप्येति य एवं वेद " जो इसप्रकार जानता है, सो मय, देवतामय, ब्रह्ममय, अमृतमय, होइके देवताओंको प्राप्त ाहै, । इस वाक्यसे समाप्त कियाहै, इसप्रकार कहतेहैं । यहां भाव है कि, तिस प्रकार हुये उपासना सहित कर्मसे केवल त्मस्वरूपकी स्थितिरूप मोक्षकी असिद्धिसे, तिसमोक्षकी सि-र्थ अब केवल आत्मविद्याके आरंभका अवसर (समय) है]प्राण आत्मभाव को पावताहुआ देवता को पावता है, । इस प्रकार ति विषे कहाहै ॥ [यहां मध्य में सर्व रूप सूत्रात्माकी प्राप्ति भिन्न, मोक्षके अभावसे, तिस सूत्रात्माकी प्राप्तिरूप मोक्षार्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

केवल आत्मविद्याका आरंभकरना युक्त नहीं । इसप्रकार [illegible] एक वादी के मतको उठावते हैं] सो यह देवता की प्राप्ति [illegible] परम पुरुषार्थ है, यह मोक्षहै, अरु सो यह मोक्ष उक्त प्रकार [illegible] उपासना अरु कर्मके समुच्चयरूप साधनसे प्राप्तहोने योग्य [illegible] इससे अन्य श्रेष्ठनहीं । इसप्रकार कोई एकवादी निश्चयको प्राप्त [illegible] हुयेहैं । तिनके । ' निश्चयको ' । निषेध करनेकी इच्छावालीहुई [illegible] उपनिषद् केवल आत्मज्ञान के विधानार्थ " आत्मा वा इदमेक [illegible] एवाग्र आसीत्" यह (कार्यरूपजगत्) आगे निश्चयकरके एक [illegible] आत्माथा, इत्यादि रूप अर्थको कहेहै ॥ [ननु " आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत् " यह आगे एकही आत्माथा, इत्यादि वाक्य केवल आत्माकोही विषय करनेवाले कैसे बने, क्योंकि " स इमान् लोकानसृजत " सो इनलोकोंको सृजताहुआ, इसप्रकार लोकनकी सृष्टिकी प्रतीतिसे, अरु तिस सृष्टिकी सोपाधिकता [illegible] एयगर्भकरके रचित होने से पुराणों बिषे प्रसिद्ध है ताते, [illegible] " ताभ्योगामानयत् " तिनके अर्थ गौवोंको ल्यावताहुआ । [illegible] स्यादि व्यवहारोंकी लोकबिषे सोपाधिक विषयभावकी [illegible] प्रसिद्ध है ताते । अरु पूर्व " अथातोरेतसः सृष्टिः " " प्रजा रेतोदेवाः" अब इसके पश्चात् वीर्यसे सृष्टि होवेगी । प्रजापति वीर्यरूप देवहैं, इसवाक्य बिषे प्रजापतिशब्दके वाच्य हिरण्य गर्भको प्रसंगबिषे प्राप्तकियाहै ताते " तस्य तद्विषयत्वसोपि दात्मग्रहीतिः " तिसको तिस विषयभावके उचितहोने से आ का ग्रहणहै, इस अधिकरणसूत्र बिषे उक्त पूर्वपक्षीकी रीति वादी शंकाकरेहै] पुनः कर्मके सम्बन्धी केवल आत्माकेविषय उत्तरग्रन्थहै, यह कैसे जानिये, तहां कहतेहैं, कि [" आत्मा इदमेक एवाग्र आसीत् " यह आगे एकही आत्माथा, इसप्र अद्वितीय आत्माके उपक्रमसे । अरु " एक ब्रह्मैव इन्द्रः " यह है, यह इन्द्र है, । इस अनुक्रमकरके " सर्वं तत्प्रज्ञानेत्रं प्रतिष्ठितम् " सर्व सो प्रज्ञारूप नेत्रवालाहै, अरु प्रज्ञानबिंबे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स इमाल्लँलोकानसृजत । अम्भो मरीचीर्मरमापोऽदोऽम्भः परेणदिवंद्यौः प्रतिष्ठाऽन्तरिक्षं मरीचयः । पृथिवी मरोया अधस्तात्ता आपः ॥

में है, परन्तु इस उक्त मन्त्र के अन्तका जो " सईक्षत लोकानु सृजा इति " यह वाक्यहै तिसके साथ उसका सम्बन्ध है, एतदर्थ उस वाक्यकी इस मन्त्रके साथ व्याख्या कियाहै १ ॥

हे सौम्य, [यहां ईक्षणपूर्वक सृष्टिके कथनका प्रयोजन सृष्टिकर्त्ता के चैतन्यभाव की सिद्धिही है, इस अभिप्राय से तिसप्रकार के तक्षा (शिल्पि आदिक) चेतनभावके उदाहरण करके कहते हैं] जैसे यहां बुद्धिमान् शिल्पि आदिक, इसप्रकार के गृहादिकनको मैं सृजों ऐसे ईक्षणको करके तिस ईक्षण के अनन्तरगृहादिकन को सृजताहै तैसे ॥ ननु पाषाणादिक उपादान सहित जो शिल्पि आदिक होते हैं सो गृहादिकन को सृजता है, परन्तु उपादानसे रहित जो आत्मा सो कैसे लोकनको सृजता है, तहां यह दोष नहीं है, क्योंकि जलस्थानी अरूप अरु आत्मा एक था, इस शब्द के वाच्य उपादान रूप अव्याकृति बिषे प्रकटहुये फेन स्थानी जगत् का संभव है, ताते आत्मभूत नामरूप का उपादानहुआ सर्वज्ञ आत्मा जगत्को रचताहुआ यह विरुद्ध नहींहै अथवा जैसे विज्ञानवाला मायावी आपते भिन्न उपादान से रहितहुआ आपकोही आपके भीतर होने करके आकाशबिषे चलते हुयेवत् रचताहै,तैसे सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान् महामायावालादेव अपनेकोही अपनेभीतर होनेकरके जगत्रूपसे रचताहै यह अत्यन्तयुक्तहै । अरु इसप्रकार होनेसे कार्य अरु कारण दोनोंके असद्वादादि पक्ष प्राप्तहोतेनहीं,अरु वोजो कदापि प्राप्तहुयेहोवें तो भी निषेधकिये जाते हैं ॥ प्र० ॥ सो आत्मा किन लोकोंको सृजता हुआ, तहां कहते हैं । " अम्भो मरीचीर्मरमापो ऽ दोऽम्भः परेण दिवं द्यौः प्रतिष्ठां ऽतरिक्षं मरीचयः पृथिवी मरोयाअध-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्तात्ता आपः ॥ २ ॥ ।" (अंभमरीचीयां मर अरु आप इनको अर्थात् सो आत्मा अंभ मरीचीयांमर अरु आप इनको सृजन हुआ अर्थात् [लोकनको भौतिक होनेसे अरु ब्रह्मांडके अन्तर्वर्ती होनेसे भूतोंकीसृष्टि अरु तिनके पंचीकरणद्वारा ब्रह्मांडकी सृष्टिके सृजनेके अनन्तर तिन [पंचभूतों के कार्यरूपा लोकनकी सृष्टि है [तिनके अनन्तर उनलोकों परकी प्रजारूपा सृष्टिहै] इसप्रकार गुणोपसंहार न्यायको आश्रयकरके कहते हैं। अरु भिन्नशाखागत अर्थोंका जो एक ठेकाने कथन, तिसको गुणोपसंहार न्यायकहते हैं।] आकाशादिकों के क्रमसे ब्रह्मांडको उत्पन्न करके जलादिक लोकनको सृजताहुआ। तहां जलादिकों को आपही श्रुति व्याख्यान करेहै, यह जो जल शब्दका वाच्यलोक है सो (स्वर्ग लोकसे पर अरु आश्रय स्वर्ग लोकरूपहै, अन्तरिक्ष मरीचियां पृथिवी सो मर है, जो अधः सो आप कहिये है) अर्थात् स्वर्ग लोकसे पर जो महर् आदिलोकहैं, अरु जो तिस जलरूप लोकका आश्रय स्वर्ग लोकरूप है, क्योंकि तिनमहरादि लोकोंविषे वृष्टि जलकेविद्यमानहोनेसे [अर्थात् इस पृथिवीलोकमेंवृष्टि होनेवाला जल महर्लोकादिकोंमेंरहताहै वहांसे पृथिवीपर वृष्टिहोतीहै ऐसा नहीं समझना क्योंकि पृथिवीपर वर्षा होनेवाला पृथिवीपरका जलसूर्यकी किरणोंकरके आकर्षितहुआ ऊर्ध्वकोजाताहै परन्तु वह जल पृथिवीके विशेष आकर्षणमें होनेकरके पृथिवीसे एकयोजन की अवधि पर्यन्त ऊर्ध्व को जाताहै पुनः वृष्टिरूप से पृथिवीपर आवता ताते, । अरु जो यहां कहा है कि महरादि लोकों विषे वृष्टि जल विद्यमान होनेसे स्वर्ग लोकसे पर है तिसको इस प्रकार जानना कि जैसे पृथिवीपर वर्षा होतीहै अरु तिसकरके यथेष्ट बहु अन्न होनेसे प्रजा प्रसन्नता से जीवती है ताते पृथिवी लोकसे पर (श्रेष्ठ) जलहै। तैसे महरादि लोकोंविषे भी जलको परत्व जानना । ॥ अरु जो स्वर्गलोक से नीचे अन्तरिक्ष [अर्थात् सूर्याख्य स्वर्गलोक से नीचे अरु पृथिवी के ऊपर अन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का जो आकाशहै तिस को अन्तरिक्ष कहते हैं। सो मरीचियां है। यहां सूर्य के किरणों के वाची मरीची शब्दसे लखाया जो अन्तरिक्ष सो एकहुआ भी अनेक स्थानों के भेदवाला होने से बहुवचनका भागी है। वा सूर्यके किरणरूप अनेक मरीचियों के सम्बन्धसे सो अन्तरिक्ष लोक बहुवचन का भागी है॥ । अथवा सूर्य अरु पृथिवी इनके मध्य में चन्द्र गोलादिव बहुत से गोलहैं तिनपर प्रजाके होनेसे अरु सूर्य पृथिवी के अन्तरिक्ष में होने से उनको अन्तरिक्षलोक बहुवचन से कहते हैं। ॥ अरु जिसबिषे भूत (प्राणी) मरते हैं ऐसी जो पृथिवी सोम रहै। अरु जो पृथिवी के नीचे लोकहैं वे आप नाम से कहेजाते हैं। [ननु, उक्त लोकन को पंचभूतों से सम्बन्धकी तुल्यता के होने से अन्य भूतनसे पृथिवी आदिकों के ऊपर के लोक देखते हैं। अरु । उक्त । अन्तरिक्ष (आकाश) को मरीचि (सूर्य के किरण) से भिन्न अन्य मेघादिरूप पदार्थों से भी सम्बन्ध से, तिससे पृथिवी को। अरु तिससे नीचे के लोकन को, मरणकी प्राप्ति से भिन्न गमनादिक अन्यक्रियाकेही सम्बन्धसे सो अधोलोक जाननेको योग्यहैं इसप्रकार वादी शंका करे है] यद्यपि इनलोकन को पंच महाभूतोंका सम्बन्धीपना है, तथापि [तिन लोकों बिषे जलादिकों कीही बाहुल्यताहै ताते तिन जलादिकनसेही वे लोक जानने के योग्यहैं " प्राचुर्येण व्यपदेशा भवन्तीति न्यायात् " बाहुल्यता करके तिनके नामसे कथन होतेहैं, । इसन्यायसे ॥ । अर्थात् जिस लोकबिषे जिस तत्त्व वा पदार्थकी बाहुल्यता होती है सो उसही नामसे कहाजाता है । इसप्रकार परिहार करते हैं] तिनमें जलादिकों की बाहुल्यता से वे जलादिक नामसेही " अम्भोमरीची मरमापो " अंभ मरीचि मर अरु जल, । ऐसे कहते हैं २॥

हेसौम्य, [यहां "आत्मा वा इदमग्र आसीत्" आगे आत्माही था, इस वाक्य करके उक्त आत्माके ज्ञानसे संसारी । पुरुष जोहै, सो मुक्तकरनेको योग्य होनेकरके । तिनकेअर्थ । कहनेको इच्छित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स ईक्षतेमे नु लोका लोकपालान्नुसृजा इति । सोऽद्भ्य एवपुरुषं समुद्धृत्यामूर्च्छयत् ३ ॥

है ताते, अरु असंसारी को मोक्षका असंभवहै ताते। अरु संसार जो है सो संसारके आश्रयलोक अरु तिसके उपाधिभूत लिंग शरीर अरु तिनके अभिमानी देव अरु तिनके अधिष्ठान स्थूल शरीर, अरु संसाररूप क्षुधादि धर्म अरु तिस संसार के अभिमानी तिनके भोक्ता विना नहीं संभवे है, एतदर्थ तिसकी सृष्टि को "अयमावसथ" यह आवसथ (स्थान) है यहां पर्यन्त जे ग्रन्थहैं तिन करके क्रम से कहते हुये संसारके अधिष्ठानरूप लोकनकी सृष्टि को करके,लोकपाल देवताओंकी सृष्टि के ईक्षणद्वारा समष्टि स्थूल शरीरकी, अरु समष्टि लिंग शरीरकी अरु तिनके अभिमानी देवताओं की सृष्टि के कहनेका आरंभ करते हैं।] सर्व प्राणियों के कर्म फल अरु तिसके उपादान अरु साधनरूप पूर्वोक्त चारो लोकों को सृजके " सईक्षते मेनुलोका लोकपालान्नु सृजा इति" (सो यह तो लोक,लोकपालोंको निश्चय करके सृजो इसप्रकार ईक्षण करताहुआ) अर्थात् सो ईश्वर पुनःही यह तो जलादिक मुझकरके रचेहुये लोक अपने पालन करता से रहित हुये नाश को प्राप्त होवेंगे, अतएव इनके रक्षणार्थ मैं लोकपालों को निश्चय करके सृजूं इसप्रकार ईक्षण करताहुआ। [समष्टि लिंग शरीर अरु तिन लोकपालनके अभिमानियों को, विराट् के अवयवपने से जन्य होनेते तिनकी सृष्टि के अर्थ विराट् की सृष्टि को कहते हैं। यहां यह भाव है कि, यद्यपि " अण्डमुत्पाद्यात्मप्रभृतीन् लोकानसृजतेति " ब्रह्माण्डको उत्पन्न करके जलादिक लोकनको सृजताहुआ, इस वाक्य करके भाष्यकार स्वामी ने लोकनकी उत्पत्ति से पूर्वही ब्रह्माण्डोत्पत्ति कहीहै, तथापि तिस सही उत्पत्ति का लोकपालनकी सृष्टिके अर्थ यहां अनुवाद करते हैं याते विरोध नहीं] इसप्रकार इक्षणकु करके " सोऽद्भ्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तमभ्यतपत्तस्याभितप्तस्यमुखंनिरभिद्यतयथाऽण्डम्। मुखाद्वाग्वोऽग्निर्नासिके निरभिद्येतांनासिकाभ्याम्प्राणः प्राणाद्वायुरक्षिणी निरभिद्येतां। अक्षिभ्याञ्चक्षुश्चक्षुष आदित्यः कर्णौनिरभिद्येतां। कर्णाभ्यांश्रोत्रं। श्रोत्रादिशस्त्वङ्निरभिद्यत। त्वचोलोमानि। लोमभ्य ओषधिवनस्पतयो। हृदयं निरभिद्यत। हृदयान्मनो। मनसश्चन्द्रमा। नाभिर्निरभिद्यत। नाभ्याअपानोऽपानान्मृत्युः। शिश्नं निरभिद्यत। शिश्नाद्रेतोरेतसःआपः ४॥

इति प्रथमखण्डः॥

एव पुरुषं समुद्धृत्यामूर्च्छयत्" ऐसो जल से पुरुष को ग्रहण करके मूर्च्छित करताहुआ; अर्थात् सो जल उपलक्षण करके जलप्रधान पंचभूतों से युक्त जलादिक चार लोकन को सृजताहुआ। तिनलोकोंसेही पुरुषके आकारकरकेयुक्त शिर हस्त पाद आदिक अवयवोंवाले विराट् । नामवाले । पुरुषको ग्रहण करके, पृथिवी से ग्रहणकिये मृत्तिकाके पिण्डको कुलालवत् मूर्च्छित करताहुआ । अर्थात् भूतों के अवयवों से अपने अवयवों की योजना कर मिश्रित करताहुआ । ३॥

हे सौम्य [उक्तप्रकार विराट् की उत्पत्ति को कहके अब तिस के अवयवों से लोकपालोंकी उत्पत्ति को कहते हैं] "तमभ्यतपत्तस्याभितप्तस्य मुखं निरभिद्यत यथाऽण्डम्" तिसकेअर्थ सर्व ओरसे तपताहुआ, तिस सर्वओरसे तप्तका मुख भेदको प्राप्त हुआ, जैसे अण्ड; अर्थात् तिस पुरुषाकारवाले पिण्डके अर्थ उद्देश करके । अर्थात् प्रथम जब परमात्माने पांचों तत्त्वों का पुरुषाकार एक विराट्नामक मृत्तिकाकी प्रतिमावत् एक कल्पित बनाया तिससमय उस विराट्नाम पिण्ड का आकार पुरुषाकारवत् शिर हस्त पादादि आकारवाला था परन्तु उससमय उसके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुखादिक इन्द्रियों के गोलकरूप छिद्र नथे तिनकी रचनाके
देशसे वो परमात्मा सर्वओरसे तपको तपताहुआ, अर्थात् तिस
सङ्कल्प वा विचार वा ज्ञान, को करताहुआ "तस्य ज्ञानमयंतप"
तिसका ज्ञानमय तप है, । तिस रूप तपसे सर्वओरसें तप्त (ज्ञान
को प्राप्त) ये पिण्डका मुख मुखाकारवाला छिद्र भेदको पावता
हुआ कहिये होताहुआ, जैसे पक्षीका अण्डा भेदको पावताहै तैसे
इसप्रकार तिस भेदको प्राप्तहुये "मुखाद्वाग्वाचोऽग्निर्नासिके नि-
रभिद्येतां । नासिकाभ्यां प्राणः प्राणाद्वायुरक्षिणी निरभिद्येतां ।
अक्षिभाञ्चक्षुश्चक्षुषआदित्यःकर्णौनिरभिद्येतां । कर्णाभ्यांश्रोत्रं ।
श्रोत्राद्दिशस्त्वंनिरभिद्यत । त्वचोलोमानि । लोमभ्य ओषधिवन-
स्पतयो । हृदयंनिरभिद्यत हृदयान्मनो । मनसश्चन्द्रमा । ना
भिर्निरभिद्यत । नाभ्या अपानोऽपानान्मृत्युः । शिश्नंनिरभिद्यत ।
शिश्नाद्रेतो रेतसः आपः" मुखसे वाक् वाक्से अग्नि दो नासिका
भेदको प्राप्तहोतीहुई, तिस नासिकासे प्राण प्राणसे वायुहोता
हुआ । दोनोंनेत्र भेदको पावतेहुये नेत्रसे चक्षु चक्षुसे सूर्य होता
हुआ । दो कर्ण भेदको पावतेहुये कर्णोंसे श्रोत्र श्रोत्रसे दिशा होती
हुई । त्वचा भेद को पावतीहुई त्वचा से लोम लोम से ओषधि
वनस्पति होतीहुई । हृदय भेदको पावताहुआ हृदयसे मन मन
से चन्द्रमा होताहुआ । नाभि भेदको पावतीहुई नाभिसे अपान
अपानसे मृत्यु होताहुआ । शिश्न भेदको पावताहुआ शिश्न से
रेत रेतसे जल होताहुआ, अर्थात् मुखसे वाक् इन्द्रियरूप करण
होताहुआ, अरु तिस वाक्से वाक्का अधिष्ठान अग्नि लोकपाल
रूप देवता होताहुआ, तैसेही दोनों नासिकाके छिद्र भेदको पा-
वतेहुये तिस नासिकारूपसे प्राण गोलकरूप (वा गन्धविषयका
ग्राहकरूप) करण होताहुआ । (यहां प्राण शब्दकरके प्राणवृत्ति
सहित घ्राणेन्द्रिय को जानना) । तैसेही तिस प्राणसे वायुरूप
देवता होताहुआ । तैसे दोनोंनेत्रके छिद्ररूप गोल भेदको पावता
हुआ तिस नेत्रसे चक्षुरूप करण होताहुआ तिस चक्षुसे सूर्यरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ द्वितीयः खण्डः॥

ता एता देवताः सृष्टा अस्मिन्महत्यर्णवे प्रापतंस्तमशनायापिपासाभ्यामन्ववार्जत्। ता एनमब्रुवन्नायतनंनः प्रजानीहि। यस्मिन् प्रतिष्ठता अन्नमदामेति १।५॥

देवता होताहुआ। तैसेही दोनों कर्णरूप छिद्र भेदको पावतेहुये तिन कर्णोंसे श्रोत्रेन्द्रिय रूप करण शब्द विषयका ग्राहक होता हुआ तिस श्रोत्रसे दिशारूप देवता होतीहुई। तैसेही त्वचारूप गोलक भेद को पावताहुआ तिस त्वचासे रोम होतेहुये रोम से ओषधि अरु वनस्पतियां होतीहुई। (यहां ओषधि अरु वनस्पति शब्दकरके तिनका अधिष्ठाता देवता कहते हैं)। तैसेही हृदय कमलरूप मांसपिंडि विशेष गोलक भेदको पावताहुआ तिस हृदय से मनरूप अन्तःकरण होताहुआ, तिस मनसे चन्द्रमारूप देवता होताहुआ। तैसेही सर्व प्राणों के रहने का स्थान नाभी भेद को पावताहुआ तिस नाभिसे अपान (पायु, गुद, इन्द्रिय) होता हुआ तिस अपान से मृत्युरूप देवता होताहुआ। तैसेही शिश्न (उपस्थ इन्द्रियकागोलकस्थान) भेदको पावताहुआ तिस शिश्न से रेत (उपस्थ इन्द्रिय) होताहुआ। (यहां रेत शब्दकरके शिश्नेन्द्रिय स्थानवाला रेतका सम्बधी उपस्थ इन्द्रिय कहते हैं। तिसको रेतके त्यागरूप अर्थवाला होने से रेतका सम्बंधीपना है) तिस रेतसे जल (अर्थात् प्रजापतिरूप देवता) होताहुआ ४॥

इति प्रथमाध्यायगत प्रथमखण्ड भाषाभाष्य समाप्तः॥

अथपृथमाध्यायगतद्वितीयखण्डभाषाभाष्यप्रारभ्यते॥

हे सौम्य, [इसप्रकार समष्टि इन्द्रियों की अरु तिनके अभिमानी देवताओं की उत्पत्ति कहके, अब तिन देवताओं के भोगने के योग्य अल्पव्यष्टि देहकी सृष्टिको अरु तिन बिषे देवता के भोगार्थ व्यष्टिरूपसे प्रवेशको कहने को इच्छाकरतेहुये तिनकी उपोद्घातरूप होनेकरके क्षुधा तृषाकी सृष्टि को देखावते हैं]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"ता ऐता देवताः सृष्टा" सो (यह अग्न्यादि देवता सृजेहुये, अर्थात् सो यह अग्निआदिक देवता लोकपालपने करके कल्पना कर ईश्वर करके सृजेहुये [क्षुधा आदिककी सृष्टिविषे उपयोगी होनेकरके इन देवतों के स्वरूप के अज्ञान पूर्वक जो ब्रह्माण्डरूप संसारविषे पतनहै अरु आसक्तपना है अरु तनमात्रापनेकी तिस रूपताके । अभिमान से बद्धपना है तिसको कहते हैं] अविद्या काम अरु कर्म करके उत्पन्न हुये दुःख की आधिकतावाले अरु तीव्ररोग जरा अरु मृत्युरूप ग्राहवाले अरु अनादि अनन्त अपार निराश्रय अरु विषय अरु इन्द्रियनके सम्बन्ध से जनित सुखके लेशरूप विश्रामवाले अरु पंच इन्द्रियन के विषय अरु विषयों की तृष्णारूप वायुके किये क्षोभते उठी ऊँची ऊँचा सहस्रसः अनर्थरूपा लहरियोंवाले, अरु महा रौरवादिक अनेक नरकगत हाहा आदिक शब्दों के पुकारसे प्रकट हुये महाशब्दवाले,अरु सत्य आर्जव दान दया अहिंसा दम शम आदिक दैविसम्पदा आत्माके गुणरूप मार्गके भोजनसेपूर्ण ज्ञानरूप नौकावाले, अरु सत्संग अरु संन्यासरूप ज्ञानमय नौका की प्रवृत्तिके हेतु मार्गवाले, अरु मोक्षरूपपार तीरवाले, ऐसे "अस्मिन्महत्यर्णवेप्रापतं" (इस बड़े समुद्रबिषे पतनहोतेहुये, अर्थात् इस उक्तप्रकारके संसाररूप महासागरमें गिरते हुये । ताते अग्न्यादि देवताओं की प्राप्तिरूप वी जो ज्ञानकर्म क समुच्चय के अनुष्ठानकी फलरूप गति व्याख्यानकिया सो भी संसार क दुःख के निवृत्ति के अर्थ परिपूर्ण नहीं है । यह यहां कहने को इच्छित अर्थ है अरु जिसकरके ऐसे है तिसही से इसप्रकार जानके संसार दुःखकी निवृत्ति के अर्थ अपना अरु सर्वभूतों का आत्मा जो अग्रिम कहने के विशेषणवाला,औ,,उत्पत्तिसे पूर्व यह एक आत्माथा,, इत्यादिक वाक्य करके जगत्की उत्पत्ति स्थिति संहारका हेतु होनेकरके प्रसंगबिषे प्राप्तहुआ है, सो परब्रह्म जानने को योग्यहै । (ननु, ,,यह ज्ञान) मार्ग है, यह कर्म है, यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है, यह सत्य है,, इसप्रकार आरम्भ करके „उक्थ (प्राण) ऐसे प्रसिद्ध है,, इत्यादि वाक्य से कर्मसम्बन्धी सगुण ब्रह्म आत्मा के ज्ञानकोही कथन कियाहै ताते तिसही को मोक्षकी साधनताहै, उक्त केवल आत्मज्ञानमात्र को नहीं। यह आशंका करके "एष पन्था" यह (ज्ञान) मार्ग है,। ब्रह्मात्माका ज्ञानही कहा है, कर्म समुच्चित ज्ञाननहीं, क्योंकि तिस कर्मसमुच्चित ज्ञानको उक्त वाक्य करके संसारकी हेतुताके जानने से सत्यता के असंभव से ऐसे कहते हैं] जिसकरके कर्मसहित प्राणके ज्ञानको संसाररूप फलवान्पनाहै ताते "एष पन्था" यह (ज्ञान) मार्ग है,। यह कर्म है, यह ब्रह्महै, यह सत्यहै,, इस श्रुति बिषे "एष" यह,। पदकरके जो यह परब्रह्म औ आत्माका ज्ञान है सोई कहाहै, क्योंकि ["तमेवविदित्वातिमृत्युमेति, नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय" तिसही को जानके मृत्युको लंघताहै, मोक्षके अर्थ अन्यमार्ग नहीं,। इस वाक्य से भी केवल आत्माके ज्ञानसे अन्य मार्ग के निषेध से भी उक्त ज्ञानरूपही मार्गहै, इसप्रकार कहते हैं। यहां यह भावहै कि "एष पन्था" यह मार्ग है,। इसप्रकार ब्रह्मात्मा के ज्ञानका आरम्भकरके मध्यबिषे प्राणकी उपासनाका कथन तो प्राणकी उपासनासे चित्तकी एकाग्रताके हुये अरु तिसकेफल (विवेकरूप दोष दृष्टि) से वैराग्यकेहुये "एष पन्था" यह मार्ग है,। ऐसे प्रारंभ किया मुख्य ज्ञान कहने को शक्य है, इस अभिप्रायसेहै। यद्यपि इस वाक्यसे व्याख्यानके अवसरबिषे कर्ममार्ग भी मार्ग शब्द का अर्थ होनेकरके कहा है, तथापि सो कर्ममार्ग ज्ञानमार्ग का उपाय होनेकरके कहाहै, प्रधानतासे नहीं कहा, यह अभिप्रायहै] "नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय" मोक्षके अर्थ अन्य मार्ग नहीं,। इस मन्त्रवर्ण से॥ तिस स्थान करण अरु देवताकी उत्पत्तिके बीजरूप प्रथम उत्पन्नकिये विराट् पुरुषमय पिंडरूप आत्माको "तमशनापिपाशाभ्यामन्ववार्जत्। ताएनमब्रुवन्नायतनं नः प्रजानीहि। यस्मिन् प्रतिष्ठिता अन्नमदामेति"। तिसको क्षुधा तृषा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ताभ्यो गामानयत्ता अब्रुवन्न वै नोयमलमिति । ताभ्योऽश्वमानयत्ता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति २ । ६ ॥

करके योजना करताहुआ, इसकेताईं कहतेहुये हमारेअर्थ स्थान को निर्माणकरो जिस विषे समर्थहुये हम अन्नको भक्षण करें, अर्थात् तिस विराट् पुरुषमय पिंडरूप आत्माको क्षुधा तृषाकरके योजना करताहुआ, तिस कारण रूप विराट् पुरुषको क्षुधादिक दोषयुक्त होनेसे तिसके कार्यरूप देवताको क्षुधादिक दोषवान् पनाहै, ताते वे देवता क्षुधा तृषाकरके पीड़ितहुये इस सृजनेवाले परमेश्वर रूप पितामह के अर्थ कहतेहुये कि हमारे अर्थ स्थान (शरीर) को निर्माणकरो कि जिस स्थानाविषे समर्थहुये हम अन्न को भक्षण करें १ । ५ ॥

हे सौम्य ! उक्तप्रकार जब तिन (देवताओं) ने कहा तब ईश्वर "ताभ्यो गामानयत्ता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति" (तिन के अर्थ गौ)ल्यावता वा देखावताहुआ, वे कहते हुये यह हमारे अर्थ पूर्ण नहीं है, अर्थात् तिन देवताओं के अर्थ गौ(गौकी आकृति करके युक्त पिंड) को तिनजल (आदितत्त्वों) से ही पिंडविषे ग्रहण करके (मूर्छितदृढ़) होनेकरके परस्पर अवयवोंकीयोजना से सृजिके ल्यावता वा देखावताहुआ । तब वो देवता पुनः तिस गौकी आकृतिवाले पिंडको देखके कहतेहुये कि यह पिंड हमारे अर्थ स्थित होयके अन्न भक्षणको निश्चय करके पूर्ण कहिये (योग्य वा समर्थ) नहीं, क्योंकि इस गौ शरीर में ऊपर के दंतका अभाव होने से दूर्वादि तृणके मूलको उखाड़नेविषे असमर्थताहै ताते ॥ गौकेनिषेध कियेहुये (अर्थात् देवताओंनेगौका शरीर ग्रहण करनेविषे निषेधकिया) तब तैसे ही "ताभ्योऽश्वमानयत्ता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति" (तिनके अर्थ अश्वको ल्यावता वा देखावताहुआ, वे कहतेहुये कि हमारे अर्थ निश्चय करके पूर्ण नहीं है, अर्थात् जब देवताओंने गौ का निषेध किया तब तिनके अर्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ताभ्यः पुरुषमानयत्। ता अब्रुवन् सुकृतं बतेति पुरुषो वाव सुकृतम्। ता अब्रवीद्यथाऽऽयतनं प्रविशतेति ३।७॥

उभय ओर दन्तवाला होनेकरके उक्त दोषके अभाव से अश्वको ल्यावता कहिये देखावताहुआ। तब वो [देवता] कहतेहुये कि यह पिंड हमारे अर्थ स्थित होयके अन्नके भक्षणको निश्चय करके पूर्ण नहीं है। इसप्रकार [यहां गौ अरु अश्वके ग्रहणको सर्व तिर्यग्देहके उपलक्षक होने से इस अभिप्रायसे सर्वपदकहा है। यह अर्थ है] सर्वके निषेधकियेहुये २।६॥

हे सौम्य! उक्त प्रकार जब देवताओं ने सर्वका निषेध किया तब "ताभ्यः पुरुषमानयत्, ता अब्रुवन् सुकृतंबतेति" तिनके अर्थ पुरुषको ल्यावता वा देखावताहुआ, वो निश्चय करके सुकृत है ऐसे कहते हुये; अर्थात् तिनदेवता के अर्थ स्वयोनिरूप [विराट् पुरुषके देहके सजातीय] पुरुष [रूपपिंडाको देखावता हुआ, वो देवता अपनी योनिरूप पुरुषको देखके खेद से रहितहुये यह शरीर निश्चय करके सुकृत है इसप्रकार कहते हुये "पुरुषो वाव सुकृतम्, ता अब्रवीद्यथाऽऽयतनंप्रविशतेति" पुरुषही सुकृत है, तिनको कहताहुआ यथा योग्य स्थानबिषे प्रवेशकरो; अर्थात् तिस करके पुरुषही सर्व पुण्यकर्म रूप सुकृत का हेतु होनेसे यह सुकृत है, वा परमेश्वर ने अपनेही स्वरूप से अपनी मायाकरके कियाहोने से तिस [पुरुष शरीर को सुकृत कहते हैं, पश्चात् ईश्वर जिस करके [इसप्रकार व्यष्टि देहकी सृष्टिको कहके, अब तिनबिषे करणों के अरु देवतों के व्यष्टिरूपसे प्रवेशको कहते हैं] सर्व अपनी योनिरूप शरीरोंबिषे रुचिकरते हैं, एतदर्थ यह शरीर देवताओं को प्रिय है, ऐसा मानके उन देवताओं से कहताहुआ कि यथायोग्य स्थानबिषे, अर्थात् जिसका जो वचनादि क्रिया योग्य स्थान है तिसबिषे प्रवेशकरो ३।७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अग्निर्वाग्भूत्वा मुखं प्राविशद्वायुः प्राणो भूत्वा नासिके प्राविशदादित्यश्चक्षुर्भूत्वाऽक्षिणी प्राविशद्दिशः श्रोत्रंभूत्वा कर्णौप्राविशन्नोषधिवनस्पतयोलोमानि भूत्वा त्वचं प्राविशंश्चन्द्रमामनोभूत्वा हृदयं प्राविशन् मृत्युरपानो भूत्वा नाभिं प्राविशदापोरेतो भूत्वा शिश्नं प्राविशत् ४ । ८ ॥

हे सौम्य ! जैसे राजाकी आज्ञा पायके तथाऽस्तु इस प्रकार कहके सेनापति आदिक नगरबिषे प्रवेश करते हैं, तैसे ईश्वर की आज्ञापायके " अग्निर्वाग्भूत्वा मुखं प्राविशद्वायुः प्राणोभूत्वा नासिके प्राविशदादित्यश्चक्षुर्भूत्वाऽक्षिणी प्राविशद्दिशः श्रोत्रं भूत्वा कर्णौप्राविशन्नोषधिवनस्पतयो लोमानि भूत्वा त्वचं प्राविशंश्चन्द्रमामनोभूत्वा हृदयं प्राविशन् मृत्युरपानोभूत्वानाभिं प्राविशदापोरेतो भूत्वा शिश्नंप्राविशत् " ८ अग्नि वाक्रूपहोके मुख बिषे प्रवेश करताहुआ, वायुप्राण होयके नासिकाबिषे प्रवेश करताहुआ, आदित्य चक्षु होयके नेत्र बिषे प्रवेश करता हुआ, दिशा श्रोत्र होयके कर्णों बिषे प्रवेश करतीहुई, ओषधि अरु वनस्पति रोम होयके त्वचा बिषे प्रवेश करतेहुये, चन्द्रमा मनरूप होयके हृदय बिषे प्रवेश करता हुआ, मृत्यु अपान होयके नाभि बिषे प्रवेश करताहुआ, जल रेत होयके शिश्न बिषे प्रवेश करताहुआ ; अर्थात् वाक्का अभिमानी जो अग्नि सो वाक् [यद्यपि वाक्का अभिमानी अग्नि है, वाक्ही नहीं है तथापि तिस अग्निकी वाक्बिना प्रत्यक्ष अप्रतीति से, अरु तिस वाचा के भी देवताबिना अपने विषय के ग्रहण में सामर्थ्य के अभावसे तिनके अकेली तादात्म्य करिके अभेदका कथन है, इसप्रकार कहते हैं ।] यद्यपि देवताका ईश्वर ने वा श्रुति ने प्रवेश कहा है तथापि करणों के बिना तिन देवता के साक्षात् भक्षणादि भोगके असम्भव से तिन करणोंका भी प्रवेश अर्थ से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तमशनाया पिपासे अब्रूतामावाभ्यामाभिप्रजानीही ति। सते अब्रवीदेतास्त्रेव वा देवता स्वाभजाम्येतासुभा गिन्यौ करोमीति। तस्माद्यस्यैकस्यैचदेवतायैहविर्गृह्यते भागिन्यावेवास्यामशनायापिपासे भवतः ५। ६॥

इति द्वितीयखण्डः॥

कहाही है। ताते तिनकाभी प्रवेश कहा जानना॥ [अर्थात् "अ-निर्वाभूत्वामुखंप्राविशत्" इत्यादि कहने से स्पष्ट विदित होताहै कि अग्नि आदिक देवताओं ने वागादिक करणोंका रूप धारके मुखादि गोलकों बिषे प्रवेश किया है स्वयं अपने स्वरूप से नहीं परन्तु ऐसा जानना चाहिये कि देवताओं ने अपना २ भोग्यरूप अन्न वा केवल अन्न के भोगने के अर्थ परमात्मा से प्रार्थना कर मनुष्य शरीररूप पिंडपाया तब तिस विभोग भोगनेकी सामग्री करणोंका अभावदेख भोग भोगार्थ अपने बिषे एक करणका स्व-रूप धार तिससहित मुखादि स्थानों बिषे प्रवेश कियाहै॥] रूपही होके अपनी योनि (उत्पत्ति स्थान) मुखबिषे प्रवेशकरता हुआ, तैसेही वायु प्राण (घ्राण) रूप होयके नासिकाबिषे प्रवेश करताहुआ, तैसेही सूर्य चक्षु होयके नेत्ररूप स्थानबिषे प्रवेश करताहुआ, तैसेही दिशा श्रोत्र होयके कर्णों बिषे प्रवेश करता हुआ, तैसेही ओषधि अरु बनस्पतियां रोमरूप होके त्वचा बिषे प्रवेश करतीहुई, तैसेही चन्द्रमा मनरूप होयके हृदयबिषे प्रवेश करताहुआ, तैसेही मृत्युअपान (गुदा) रूप होयके नाभि बिषे प्रवेश करताहुआ, तैसेही जल वीर्यरूप होयके शिश्न (उपस्थ) बिषे प्रवेश करताहुआ ४। ८॥

हे सौम्य! "तमशनापिपासे अब्रूतामावाभ्यामाभिप्रजानी-हीति, सते अब्रवीदेतास्त्रेव वा देवतास्त्वाभजाम्येतासुभागिन्यौ करोमीति" (क्षुधा अरु तृषा तिसको कहतीहुई हमारे अर्थ चिं-तनकरो, सो तिनके अर्थ कहताहुआ देवताबिषेही तुम दोनोंको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ तृतीयखंडः ॥

सईक्षतेमेनुलोकाश्च लोकपालाश्चान्नमेभ्यः सृजा इति १ । १० ॥

अनुग्रह करताहौं इनबिषे भागवालियां करताहौं } अर्थात् इस प्रकार देवताओं को स्थानबिषे प्राप्तहुये, स्थान रहितहुई जो क्षुधा अरु तृषा सो दोनों तिस ईश्वर से प्रार्थना करतीहुई कि { हे भगवन् } हमारे अर्थ स्थान को चिन्तन (निर्माण) करो, इसप्रकार जब { उन क्षुधा तृषाने } कहा, तब सो ईश्वर तिन क्षुधा अरु तृषा के अर्थ कहताहुआ कि जिसकरके तुमको भाव (धर्म) रूप होनेसे अरु चेतनावाली वस्तु के आश्रयरहित होनेसे भोक्तापना नहीं संभवे है, अतएव इन अध्यात्म (व्यष्टि देहगत) अरु अधिदैव (समष्टि देहगत) रूप अग्निआदिक देवताओं के बिषेही तुम दोनों को वृत्तिके विभाग से अनुग्रहकरताहौं । अरु इन देवतावि तुमको भागवाली करताहौं, अर्थात् जिस देवताका जो हवी आदिक भागहै तिस देवता के तिसही भागसे तुमको भागवालिय करताहौं । अरु जिस करके सृष्टिकी आदिबिषे ईश्वर इसप्रकार करताहुआ "तस्माद्यस्यैकस्यैचदेवतायैहविर्गृह्यते भागिन्यावेव स्यामशनायापिपासेभवतः" { ताते जिसी अरु किसी देवताके हविग्रहणकरते हैं इसीबिषे ये क्षुधा अरु तृषा दोनों भागवालियां ही होती हैं } अर्थात् ताते अबभी जिसी अरु किसी देवताके अर्थ चरु अरु पुरोडाशादिरूप हविग्रहण करते हैं, इसही देवता विषे यह क्षुधा अरु तृषा दोनों भागवालियां { अर्थात् भागीदार हिस्सेदार } ही होती हैं ५ । ९ ॥

इति श्रीप्रथमाध्यायगत द्वितीयखंडभाषाभाष्यसमाप्तः ॥

अथ प्रथमाध्यायगततृतीयखण्डभाषाभाष्यप्रारभ्यते ॥

हे सौम्य ! [इसप्रकार भोग के साधनकी सृष्टि को कहके अब भोग्य की सृष्टि के कहने का आरंभ करते हैं] "सईक्षते मेनु लो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोऽपोऽभ्यतपत् । ताभ्योऽभितप्ताभ्योमूर्त्तिरजायत । यावैसामूर्त्तिरजातान्नंवैतत् ॥ २ ॥ ११ ॥

काश्च लोकपालाश्चान्नमेभ्य सृजा इति' (सो ईक्षण करता हुआ यह प्रसिद्ध लोक अरु लोकपालके अर्थ अन्न को सृजो इस प्रकार) अर्थात् सो ईश्वर इसप्रकार ईक्षण करताहुआ, कैसे कि यह प्रसिद्धलोक अरु लोकपाल मैंने सृजे हैं, अरु सो क्षुधा अरु तृषाकरके योजना कियेहुये हैं, एतदर्थ इन की स्थिति अन्नबिना होगीनहीं, ताते इन लोकपालनके अर्थ अन्नको सृजो, इसप्रकार ईक्षण (विचार) करताहुआ, ऐसेही लोकविषे ईश्वरोंका (अर्थात् सामर्थ्यवालोंका) अपने सेवक किङ्करादिकों में अनुग्रहविषे अरु निग्रह (दण्ड) विषे स्वतन्त्रपना देखते हैं । तैसे महेश्वरको भी सर्व का ईश्वर होनेसे सर्वकेप्रति निग्रह अरु अनुग्रह करने के विषय में स्वतन्त्रपनाही है ॥ १० ॥

हे सौम्य! "सोऽपोऽभ्यतपत्, ताभ्योऽभितप्ताभ्योमूर्त्तिरजायत यावैसामूर्त्तिरजायतान्नंवैतत्" (सो जलों के अर्थही तपकोकरता हुआ, तिस तपको प्राप्तहुये मूर्त्ति उत्पन्नहुई, जो प्रसिद्ध सोमूर्त्ति उत्पन्नहुई सो निश्चय करके अन्न है) अर्थात् सो ईश्वर अन्नको सृजने को इच्छाकरता हुआ तिन पूर्वोक्त जल उपलक्षणसे जलादि पंचभूतन के अर्थही उद्देशकरके तप [यहां यह अर्थ है, इन भूतों के अर्थ मनुष्यादिकन के अन्नरूप तंदुल यवादि उत्पन्नहोहु, अरु मार्जारि (बिल्ली) आदिकनके अन्नरूप मूषकादि उत्पन्नहोहु। इसप्रकार अवलोकनरूप संकल्पको करतादुआ] 'संकल्प, को करताहुआ। तिन तप (ईश्वरके संकल्प) को प्राप्तहुये उपादान रूप जलों से घन (कठिन) रूप अरु शरीर धारणके समर्थ चर अचररूप मूर्त्ति उत्पन्नहुई, जो प्रसिद्ध सो मूर्त्ति उत्पन्नहुई सो निश्चयकरके अन्नहै अर्थात् जो उत्पन्न हुआ अन्नहै सो मूर्त्तिरूप है। अरु जो सो मूर्त्ति उत्पन्नहुई सो यह अन्नहै ॥ २ ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तदेतदभिसृष्टंनदत । पराङ्त्यजिघांसत । तद्वाचाजिघृक्षत्तन्नाशक्नोद्वाचाग्रहीतुम् । सयद्वैनद्वाचाऽग्रहैष्यदभिव्याहृत्य हैवान्नमत्रप्स्यत् ३ । १२ ॥

तत्प्राणेनाजिघृक्षत् तन्नाशक्नोत्प्राणेन ग्रहीतुम् । सयद्वैनत्प्राणेनाग्रहैष्यदभिप्राण्यहैवान्नमत्रप्स्यत् ४ । १३ ॥

हे सौम्य! "तदेतदभिसृष्टंनदत" {सो यह छोड़ाहुआ} अर्थात् सो यह अन्न लोकपालों के सन्मुख छोड़ाहुआ । जैसे मूषक (चूहा) आदिक मार्जार (बिल्ली) आदिकों के दृष्टिके सम्मुख छोड़ाहुआ यह मेरा । भक्षणकरनेवाला । मृत्यु अन्नाद (भोक्ता) है ऐसे मानिके पीछे जाताहै, तैसे "पराङ्त्यजिघांसत्" {पराङ्मुख हुआ उल्लंघनकरने को इच्छताहुआ} अर्थात् पराङ्मुखहुआ अन्न ने भोक्ताको उल्लंघन करनेको इच्छाकरताहुआ, अर्थात् अपनी पालना (रक्षा) करनेको प्रारंभकरताहुआ, तिस अन्न के अभिप्राय को मानिके सो लोक अरु लोकपालों के संघातोंसे कार्य्य कारण रूप पिंड (विराट्) प्रथम उत्पन्नहुआ होनेसे अन्यों को अन्नावस्था तिस अन्नको पचनक्रियारूप "तद्वाचाजिघृक्षत्तन्नाशक्नोद्वाचाग्रहीतुम्" {तिसको वाणी से ग्रहण को इच्छता हुआ, तिस को वाणी से ग्रहण करने को समर्थ न हुआ} अर्थात् अन्न को पचन क्रियारूप वाणी से ग्रहण (भक्षण) करने को इच्छता हुआ, परन्तु तिसको वाणी से ग्रहण करने को समर्थ न हुआ "सयद्वैनद्वाचाऽग्रहैष्यदभिव्याहृत्य हैवान्नमत्रप्स्यत्" {सो जिसकरके इसको वाणी से ग्रहण करताहुआ ताते भी अन्नको कथनकरके ही तृप्त होताहुआ} अर्थात् सो प्रथम उत्पन्नहुए शरीरवाला विराट्, जिसकरके इसको वाणी से ग्रहण करताहुआ, ताते सब लोक भी तिसका कार्य होनेसे अन्नको वाचक शब्द से कथन करकेही तृप्त होताहुआ ३ । १२ ॥

हे सौम्य! "तत्प्राणेनाजिघृक्षत् तन्नाशक्नोत्प्राणेनग्रहीतुम्"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तच्चक्षुषाऽजिघृक्षत् तन्नाशक्नोच्चक्षुषाग्रहीतुम्। सय-
द्धैनच्चक्षुषाऽग्रहैष्यदृष्ट्वा हैवान्नमत्रप्स्यत् ५। १४॥
तच्छ्रोत्रेणाजिघृक्षत् तन्नाशक्नोच्छ्रोत्रेण ग्रहीतुम्। स
यद्धैनच्छ्रोत्रेणाग्रहैष्यच्छ्रुत्वा हैवान्नमत्रप्स्यत् ६। १५॥

तृतिसको प्राणसे ग्रहण करने की इच्छा करता हुआ, तिसको प्राण से ग्रहण करने को समर्थ न हुआ; अर्थात् तिस। अन्न। का प्राण कहिये घ्राणसों ग्रहण करने की इच्छा करता हुआ, परन्तु तिस। अन्न। को प्राण (घ्राण) से ग्रहण करने को समर्थ न हुआ "स यद्धैनत्प्राणेनाग्रहैष्यदभिप्राण्यहैवान्नमत्रप्स्यत्" सो इसको प्राणसे ग्रहण करता हुआ ताते भी इस अन्नको सूँघिके तृप्त होताहुआ; अर्थात् जिस करके सो इसको प्राण (घ्राण) से ग्रहण करता हुआ, ताते सर्व लोक भी इस अन्नको सूँघिकेही तृप्त होताहुआ ४। १३॥

हे सौम्य! "तच्चक्षुषाऽजिघृक्षत् तन्नाशक्नोच्चक्षुषाग्रहीतुम्" तिसको चक्षु से ग्रहण करने की इच्छा करता हुआ, तिसको चक्षु से ग्रहण करने को समर्थ न हुआ; अर्थात्। सो विराट् पुरुष। तिस। अन्न। को चक्षु से ग्रहण करने को इच्छता हुआ, परन्तु। तिस। अन्न। को चक्षु से ग्रहण करने के विषय में समर्थ न हुआ, "स यद्धैनच्चक्षुषाऽग्रहैष्यत् दृष्ट्वा हैवान्नमत्रप्स्यत्" ताते सो इसको चक्षु से ग्रहण करताहुआ अन्नको देखकेही तृप्त होता हुआ; अर्थात् जिस करके सो। विराट् पुरुष। तिस। अन्न। को चक्षु। दृष्टि। से ग्रहण करता हुआ, तिस करके सर्व लोक भी इस अन्नको देखकेही तृप्त होताहुआ ५। १४॥

हे सौम्य! "तच्छ्रोत्रेणाजिघृक्षत् तन्नाशक्नोच्छ्रोत्रेणग्रहीतुम्" तिसको श्रोत्र से ग्रहण करने को इच्छताहुआ, तिसको श्रोत्र से ग्रहण करने को समर्थ न हुआ; अर्थात् तिस। अन्न। को श्रोत्र से ग्रहण करने को इच्छताहुआ परन्तु श्रोत्र से तिस। अन्न।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्त्वचाऽजिघृक्षत् तन्नाशक्नोत्त्वचाग्रहीतुम् । स यद्धैनत्त्वचाऽग्रहैष्यत् स्पृष्ट्वाहैवान्नमत्रप्स्यत् ७ । १६ ॥
तन्मनसाऽजिघृक्षत् तन्नाशक्नोन्मनसाग्रहीतुम् । स यद्धैनन्मनसाऽग्रहैष्यद्ध्यात्वाहैवान्नमत्रप्स्यत् ८ । १७ ॥

को ग्रहण बिषे समर्थ न हुआ, "स यद्धैनच्छ्रोत्रेणाग्रहैष्यच्छ्रुत्वा हैवान्नमत्रप्स्यत्" ।ऽसो । विराट् । इसको श्रोत्र से ग्रहण करता हुआ, ताते भी अन्नको श्रवण करकेही तृप्त होताहुआ; अर्थात् सो इस । अन्नको । श्रोत्र से ग्रहण करता हुआ, ताते । उसका कार्य । सर्व लोकभी अन्नको श्रवण करके तृप्तहोताहुआ ६ । १५ ॥

हे सौम्य ! "तत्त्वचाऽजिघृक्षत् तन्नाशक्नोत् त्वचाग्रहीतुम्" ।ऽतिसको त्वचा से ग्रहण करने को इच्छताहुआ, तिसको त्वचा से ग्रहण करनेको समर्थ न हुआ "स यद्धैनत् त्वचाऽग्रहैष्यत् स्पृष्ट्वा हैवान्नमत्रप्स्यत्" ।ऽसो इसको त्वचा से ग्रहणकरताहुआ ताते सर्व अन्नको स्पर्श करके तृप्त होतेहुए; अर्थात् सो । विराट् पुरुष । इस । अन्न । को त्वचा से ग्रहण करताहुआ, ताते सर्वलोक भी इस । अन्न । को स्पर्श करके तृप्त होतेहुये ७ । १६ ॥

हे सौम्य ! "तन्मनसाऽजिघृक्षत् तन्नाशक्नोन्मनसाग्रहीतुम्" ।ऽतिसको मन से ग्रहण करने को इच्छताहुआ, तिसको मनसे ग्रहण करने में समर्थ न हुआ; अर्थात् तिस । अन्न । को मनसे ग्रहण करने को इच्छताहुआ परन्तु तिसको मनसे ग्रहण करने में समर्थ न हुआ, "स यद्धैनन्मनसाऽग्रहैष्यद्ध्यात्वा हैवान्नमत्रप्स्यत्" ।ऽसो इसको मनसे ग्रहण करताहुआ ताते अन्नको चिन्तन करकेही तृप्त होतेहुये; अर्थात् सो । विराट् । इस । अन्न । को । मनसे ग्रहण करताहुआ, ताते सर्वलोक भी अन्नको ध्यान करके तृप्त होतेहुये ८ । १७ ॥

हे सौम्य ! "तच्छिश्नेनाजिघृक्षत् तन्नाशक्नोच्छिश्नेनाग्रहीतुम्" ।ऽतिस । अन्नको । शिश्न से ग्रहण करने को इच्छताहुआ,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तच्छिश्नेनाजिघृक्षत् तन्नाशक्नोच्छिश्नेनग्रहीतुम्। स यद्वैनच्छिश्नेनाग्रहैष्यद्विसृज्यहैवान्नमत्रप्स्यत् ९। १८

तदपानेनाजिघृक्षत् तदावयत्। सएषोऽन्नस्यग्रहोय द्वायुरन्नायुर्वा एष यद्वायुः १०। १९॥

स ईक्षत कथं त्विदं मदृते स्यादिति। स ईक्षत कतरेण प्रपद्या इति। स ईक्षत यदि वाचाऽभिव्याहृतं। यदि प्राणेनाभिप्राणितं। यदि चक्षुषा दृष्टं। यदि श्रोत्रेण श्रुतं। यदि त्वचा स्पृष्टं। यदि मनसा ध्यातंयद्यपानेनाभ्यपानितं। यदि शिश्नेन विसृष्टमथ कोहमिति ११। २०॥

[परन्तु] तिसको शिश्नसे ग्रहण करने में समर्थ न हुआ, "स यद्वैनच्छिश्नेनाग्रहैष्यद्विसृज्यहैवान्नमत्रप्स्यत्" (जाते सो इसको शिश्नसे ग्रहण करताहुआ, ताते सर्व लोक भी इस अन्नको त्यागकेही तृप्त होताहुआ ९। १८॥

हे सौम्य! "तदपानेनाजिघृक्षत् तदावयत्" (तिसको अपान से ग्रहण करनेको इच्छताहुआ, तब भक्षण करताहुआ) अर्थात् पश्चात् तिस [अन्न]को अपानवायु (मुखछिद्र) से ग्रहण करनेको इच्छा करताहुआ, तब तिस अन्नको भक्षण करताहुआ, "सएषोऽन्नस्यग्रहो यद्वायुरन्नायुर्वा एष यद्वायुः" (सो यह अन्न का ग्राहकहै जो वायु, अन्नसे जीवनवाला प्रसिद्ध है सो यह जो वायु है १०। १९॥

हे सौम्य! "सईक्षत" (सो ईक्षणको करताहुआ) अर्थात् सो [इसप्रकार भोगके अधिकरणरूप लोकों की, अरु भोगके आयतन समष्टि व्यष्टि शरीरों की, अरु भोगके साधन बागादिकों की, अरु समष्टि शरीराबिषे लोकपालों करिके अरु व्यष्टि शरीर बिषे करणों के अधिष्ठाता करके स्थितहुये देवताओं की, अरु भोगाबिषे प्रेरक क्षुधातृषाकी, अरु तिसके किये करणों बिषे स्थित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शब्दादि विषयोंकेग्रहणरूपभोगकीभी, अरु अन्नरूपवृत्तिवालेप्राणि
विषे स्थित अन्नपानके ग्रहणरूप भोगकी आत्माके संसारीपने की
सिद्ध्यर्थ सृष्टिको कहके अब संसारियोंके भोक्ताको देखावने अर्थ
सृष्टिकर्त्ता ईश्वरके विचारांशके देखावने को " सईक्षत " सो
ईक्षणको करताहुआ, । इस वाक्यका व्याख्यान करते हैं] इस
प्रकारके पुर अरु पुरके निवासी जन अरु तिनके पालक राज-
भृत्यों की स्थिति के तुल्य अन्नरूप निमित्तवाली लोक अरु लो-
कपालों के संघातकी स्थितिको करके पुर के स्वामीवत् ईक्षण
[अवलोकन] को कर्त्ताहुआ, क्योंकि कार्य कारणका संघातरूप
अग्रिमकहनेकाकार्य है सो परके [इदं शब्दार्थका "परार्थेसादिति"
यह विशेषण हेतु गर्भित है । इस संघातको परके अर्थ होने से,
इस हेतुरूप गर्भवाला यह विशेषणहै । परके अर्थहोनेवाले पदार्थों
की स्थिति वा चेष्टा मुझविना कैसेहोवेगी, इसही अर्थके "कथं"
कैसे, । इस अर्थकरके सूचनकिये व्यतिरेकको कहतेहैं] अर्थहुआ
स्वामी विना पुरवत् " कथं त्विदं मद्दते स्यादिति । सईक्षत कत-
रेणप्रपद्याइति, सईक्षत यदि वाचाऽभिव्याहृतं, यदि प्राणेनाभि-
प्राणितं । यदि चक्षुषादृष्टं, यदि श्रोत्रेणश्रुतं, यदि त्वचा स्पृष्टं,
यदि मनसाध्यातं, यद्यपानेनाभ्यपानितं । यदि शिश्नेन विसृष्ट
मथ कोऽहमिति" [मुझ विना निश्चयकरके किसप्रकार से हो-
वेगा, जब वाणीसे कथन कियाहोवे, जब प्राण (घ्राण) से सूंघा
होवे जब चक्षुसे देखाहोवे, जब श्रोत्रसे श्रवण कियाहोवे, जब
त्वचासे स्पर्शकियाहोवे, जब मनसे ध्यानकियाहोवे, जब अपान
से भक्षणकियाहोवे, जब शिश्नसे त्यागकियाहोवे, तब मैं कौनहौं,
इसप्रकार ईक्षण करताहुआ] अर्थात् [जैसे पुरके स्वामी राजा
विना प्रजाका व्यापार सिद्धहोवेनहीं, तैसे इस शरीररूप पुरके
स्वामी [मुझविना निश्चयकरके किसप्रकार होवेगा । अरु पुनः
[इसप्रकार वाणीके व्यवहारादिक कार्यकी सिद्धिकेअर्थ मुझको
प्रवेशकरना योग्य है, इसप्रकार कहके अब आत्मस्वरूप के बो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धार्थ मुझको प्रवेशकरना योग्यहै, यह कहनेके अर्थ "स ईक्षत" सो ईक्षणकरताहुआ,। "यदि वाचाभिव्याहृतं" जब वाणी से कथनकिया,। इत्यादिसेले "कोऽहमिति" अब, मैं कौनहौं,। यहां पर्यन्त जो वाक्यहै, तिसको तिस [परमेश्वर] के प्रवेश के प्रयोजन के कथनरूप होनेवाला करके "कथं त्विदं मदृते स्यादिति" यह मुझ विना कैसे होवेगा,। इसवाक्यके तुल्य होनेसे "स ईक्षत" सो ईक्षणकरताहुआ,। "कतरेण प्रपद्या" किस मार्गसेप्रवेशकरों,। इसवाक्यसे अन्तरायवाले वाक्यकोभी यहांही न्यायके व्याख्यानकरे है। इसवाक्यका यहअर्थहै कि, संघातरूप वागादिक कार्यका परोपकार रूपवदनादिक क्रिया के कर्त्तापने रूप जो परके अर्थहोनाहै सो उपकार के भागी परके अर्थी विना जब होवे तब] जब वाणीसे कहा, घ्राणसे सूंघा, चक्षु से देखा, श्रोत्रसे सुना, त्वचासे स्पर्शकिया, मनसे ध्यानकिया, अपान से भक्षणकिया॥ [हेसौम्य! यहां अपानवायुकरके भक्षणकिया ऐसा कहाहै अरु यहनिकटही कहआयेहैं कि मृत्यु अपान कहिये गुदा रूप से नाभिबिषे प्रवेश करताहुआ, अन्य बहुत से स्थानों बिषे अपानवायुको मल मूत्रके त्यागरूप क्रियाका करता अधोगामी कहाहै,। "पायूपस्थेऽपानं"। यह प्रश्नोपनिषद्का प्रमाण है कि पायु (गुदा) अरु उपस्थ (शिश्न) इन दोनों इन्द्रियों में स्थितहोयके अपाननामवाला वायु मल मूत्रका त्यागरूप क्रिया करेहै,। अरु यहां अपानवायुकरके भक्षण किया, ऐसा कहा है, ताते परस्पर विरुद्ध प्रतीत होवेहै, अतएव यहां ऐसा विचार है कि जैसे गुदस्थ अपान अधोगामीहै तैसेही मुख नासिकाके मार्ग से बाह्यरूप ऊर्ध्वको जानेवाला प्राणहै सो जब बाह्यरूप ऊर्ध्व से लौटके अन्तर अधोको आवताहै तब उसकीभी अपानसंज्ञाहोती है क्योंकि अन्तर अरु अधोगमनकी अधोगमन में एकताहै ताते, अतएव यहां मुख नासिका के मार्गसे अन्तर आवनेवाला प्राण अपानसंज्ञक जानना अरु सोई मुखमें पाये अन्न जलादिकों को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कण्ठके नीचे उतार उदर में प्रासकरता है, ताते मुखके मार्गके अन्तर आवनेवाले "यद्यपानेनाभ्यपानितं" जब अपानवायु करके भक्षण कियाहोवेहै, इसप्रकार जानना ।॥ शिश्न से त्याग किया, इसप्रकारहोवे, तबमैं कौनहौं । इसप्रकार ईक्षण (विचार) करताहुआ, इस [उक्त वाक्यके अर्थको स्पष्टकरतेहैं] वाक्यका यह अर्थहै कि केवलही भोक्तारहित वाणीआदिकों से उच्चारणादिक जो है, सो व्यर्थ होने से किसीप्रकार भी होवेनहीं क्योंकि सर्व प्रवृत्तियों का प्रयोजनके अर्थ होनाहै ताते । अरु जैसे पुरके निवासी अरु बन्दीजनादिकों करके योजना किया जो बलिदान (कर) अरु स्तुतिआदिक सो स्वामीके अर्थ होतेहैं, स्वामीविना व्यर्थहै, तद्वत् । अतएव पुरके अधिष्ठाता राजावत्, संघातसे अन्य मुझ स्वामी अधिष्ठाता अरु कृताकृतके फलके साक्षीरूप भोक्ता करके तहां [शरीरादि संघातविषे प्रवेशकरना योग्यहै । अरु जब यह संघातरूप कार्यका जो दूसरे के अर्थ होना है सो स्वामी के विना पुर अरु पुरवासियोंवत् पररूप अर्थी चेतन विना होवे, तब मैं किस स्वरूपवालाहौं, वा किसका ईश (स्वामी) हौं अर्थात् जब मैं कार्य कारणके संघातविषे प्रवेश करके अधिकारी पुरुषों के कृताकृत के देखने को राजावत् वागादिकों के उच्चारणादिक फलको न जानों तब कोई भी पुरुष मुझको यहआत्मा अरु यह इस रूपवाला है इसप्रकार न विचारेगा । अरु विपर्ययके [प्रवेश करके उच्चारणादिक के अनुभव के] हुये तो जो [ज्ञानरूपताको प्रतिपादन करते हैं । यहां यह जो वागादिकों के दनादिक क्रियाको जानता है सो ज्ञानरूप है, इसप्रकार जानने को योग्य होवेगा, यह अन्वय है । अरु जाननेवाले का ज्ञानरूपपना कैसे है, इसप्रकारकहनेको योग्यनहीं, क्योंकिज्ञाताकोअचेतनरूपताके होनेसे तिसको अन्य ज्ञानकी विषयता कहनी होवेगी [अर्थात् जब ज्ञाता अचेतन हुआ तब ज्ञाता अन्य ज्ञानकरके जानाजाता है, इसप्रकार कहना होवेगा] । अरु तिस ज्ञानविषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जब ज्ञाताही कर्त्ता है, तब एकही ज्ञातात्रिषे ज्ञानका कर्त्तापना अरु ज्ञानका विषयपना यह विरोध प्राप्त होवेगा, । अरु जब अन्य ज्ञाता कर्त्ता है तब तिसका भी अन्यज्ञाता होवेगा, ताते अनवस्था दोष प्राप्त होवेगा । इसप्रकार ज्ञाताकी ज्ञानरूपता सिद्ध होतीहै। इसही से अन्यश्रुतिविषे "यो वेदेदं जिघ्राणीति" जो जानता है इसको मैं सूंघताहौं सो आत्मा है, इसप्रकार घ्राता घ्रेय अरु घ्राणरूप त्रिपुटी के ज्ञानको आत्मरूपता कही है । यह भावहै] यह वागादिकों के उच्चारणादिकों को जानता है सो सत् है, अरु सो संवेदन (ज्ञान) रूपहै, इसप्रकार मैं जाननेयोग्य होऊँगा। अरु जिसके अर्थ यह संघातरूप वागादिकोंका उच्चारणादिकहै, सो वागादिकन से अन्य अरु अमिलित है, इसप्रकार जानने को योग्य है । [संघातरूप हुये पदार्थों के संघातसे भिन्नपरके अर्थ होनेविषे दृष्टान्त कहते हैं।यहां यहअनुमान कथनकियाहोताहै कि वागादिकों का संभाषणादिक जो है सो अपने से अमिलित अन्यके अर्थ होनेको योग्यहै । अर्थात् वागादिकों का जो वक्तृत्वादि व्यापार है सो वागादिकों के अर्थ न होयके वागादिकों से पृथक् किसी अन्यके अर्थ है । क्योंकि संघातरूप हैं ताते, भित्ति (दिवार) अरु गृहादिकोंवत्] जैसे गृहविषे मिलित हुये स्तंभ भित्तिकपाट आदिकोंका अपने अवयवनसे अमिलितहुये अन्यके अर्थही होनाहै तद्वत् । अर्थात् गृहमें ईंट पाषाण स्तंभ छज्जे टोड़े गोखे तिखालादिक जो होते हैं सो अपने २ अर्थ वा अपने अवयवों में एक दूसरे के अर्थ नहीं, अर्थात् स्तंभका होना स्तंभ के अर्थ वा भित्तिके अर्थ नहीं क्योंकि वो स्तंभ भित्तिआदिक जड़ होनेसे प्रयोजन रहित है, ताते उनका होना उनसे भिन्न उनका जाननेवाला स्वामी अन्यही है, तैसेही शरीर प्राण मन बुद्धि इन्द्रियादिक संघात जो काष्ठभारवत् जड़ हैं तिनका जो द्रष्टृत्व श्रोतृत्व वक्तृत्वादि व्यापारहैं सो स्वस्वके अर्थ किंवा एककादूसरे के अर्थ नहीं क्योंकि यह करणरूप होनेसे ज्ञानशून्य परतन्त्र है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स एतमेवसीमानंविदार्य्यैतया द्वारा प्रापद्यत । सैषा विदृतिर्नामद्वास्तदेतन्नान्दनं । तस्य त्रय आवस्थाःत्रयः स्वप्नाअयमावसथोऽयमावसथोऽयमावसथ १२।२१॥

ताते इनका सर्व व्यापार इनसे अभिश्रित अन्य किसी ज्ञाते चैतन्यके अर्थ है ।। इसप्रकार सो ईक्षण (विचार) करताहुआ। इसरीति से ईक्षण करके " सईक्षत कतरेण प्रपद्या " (सो ईक्षण करताहुआ किससे प्राप्तहोवो) अर्थात् (उक्तप्रकार विचार के सो परमात्मा पुनः (ईक्षण (विचार) करताहुआ कि, [अब " सईक्षत " सो ईक्षण करताहुआ कि " कतरेण प्रपद्या" किस मार्ग से प्रवेशकरों, इस वाक्य का व्याख्यान करते हैं। यहां यह अर्थ है कि, जिस करके प्रवेशकी, वागादिकों के व्यवहारकी सिद्धि अरु मेरे स्वरूप का बोध, इन दोनों प्रयोजनकी सिद्धिके अर्थ कर्तव्य है याते] किस द्वारसे इस संघात विषे प्राप्तहो अर्थात् इस संघात बिषे प्रवेशके मार्गपादका अग्रभाग (वा नीचेकाभाग (अरु मस्तकहै, इनदोनों बिषे किसमार्गसे इस कार्य कारणात्मक संघातरूप पुरबिषे प्रवेशकरों " इति, सईक्षत (इसप्रकार सो ईक्षणकरताहुआ) अर्थात् इसप्रकारसो (परमात्मा ईक्षण (विचार) करताहुआ, इसरीतिसे ईक्षण करके [किंकरके प्रवेशके मार्ग से स्वामी का प्रवेश अनुचित है, एतदर्थ इसही मार्ग से प्रवेशकरों इसप्रकार निश्चय करताहुआ, ऐसाकहते हैं] प्रथम मेरे सर्व अर्थ बिषे अधिकारी मेरे भृत्यरूप प्राणके प्रवेश के मार्गरूप दोनों पादों के अग्रनसे नीचे नहीं प्राप्तहोऊँगा, किन्तु परिशेषसे इस पिंड (शरीर) के मस्तकको विदीर्ण करके (इसबिषे (प्राप्तहोऊँगा । इसप्रकार निश्चयकरके ११ । २० ॥

हे सौम्य ! "स एतमेव सीमानं विदार्य्यैतया द्वारा प्रापद्यत" (सो इसही सीमाको विदीर्णकरके तिसद्वारा प्रवेशकरताहुआ) अर्थात् लोकवत् ईक्षणकर्त्ता जो स्रष्टा ईश्वरहै, सो यह जो कोई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के विभागपर्यंत मस्तककी मध्यसीमाहै।। अर्थात् दक्षिणकर्ण के ऊपरसेलेके वामकर्णके ऊपरपर्यन्त मस्तकपर आड़ीरेखा करिये अरु नासिकासेलेके पीछे के मेरुदंडपर्यन्त खड़ी रेखाकरिये तब जहां दोनों रेखामिलें व खड़ीरेखा आड़ीरेखाको काटे तिसमस्तक की मध्य सीमाको। विदीर्णकरके अर्थात् मस्तकमेंमध्य छिद्रकरके तिस द्वारसे (मार्गसे) इस कार्यकारणके संघातरूप लोक वा पुरि विषे प्रवेश करताहुआ ॥ । अर्थात् बालकों के मस्तकके मध्य में अतिमृदु त्वचासे आच्छादित छिद्रहोताहै अरु सो बालक के मस्तकपर स्पर्शकरनेसे प्रतीतहोताहै तिसछिद्रको निर्माणकर, अर्थात् मस्तकके तिस स्थानको विदीर्ण (छिद्र) कर परमात्मा ने प्रवेशकियाहै अरु वह छिद्र परमात्माके प्रवेशका द्वारहोनेसे,ब्रह्मप्राप्ति इसनामसेप्रख्यातहै ।॥ "सैषाविदृतिर्नामद्वास्तदेतन्नान्दनं" (सो यह विदृतिनामवाला प्रसिद्धद्वारहै सो यह नान्दनद्वारहै) अर्थात् सो यह [ननु,पुरुषबिषे नव द्वाण (द्वार) है,तहां सप्त मस्तक के अरु दोनीचेके इसप्रकार नव हैं "नवद्वारे पुरेदेही" नवद्वार वालेपुरविषे देही,। इत्यादि प्रमाणवाक्यकरके शरीररूपपुरके नव द्वारप्रसिद्धहैं, परन्तु मस्तकबिषे अन्यद्वार नहीं, यह आशंकाकरके प्रत्यक्षसे अरु "तयोर्ध्वमापन्नमृतत्वमेतीति" तिस (सुषुम्णानाम नाड़ी) से ऊर्ध्वको जाताहुआ अमरण भावको पावता है, । इस श्रुतिवाक्यसे, तिस मस्तकगत अन्य द्वारकी प्रसिद्धि से तिसका निषेध बनेनहीं, इसप्रकार कहनेको "सो यह" इस रीतिका वाक्यहै तिसका व्याख्यान करते हैं।] द्वार,मस्तककाछिद्र, मस्तक विषे तैलादिकको धारणकालमें तिसके रसआदिकों के जानने से प्रसिद्धहै। सो यह विदीर्णहुआ होनेसे विदृतिनामवाला प्रसिद्ध द्वार है । अरु अन्य श्रोत्रादिद्वार तो राजा के किंकरादिस्थानीय देवताओं के प्रवेशके साधारण मार्गरूप होनेसे समृद्धिवाल आनन्दकेहेतु। नहीं, यह द्वार तो केवल परमेश्वरकाही है, तातें सो यह द्वार नान्दन (आनन्दका हेतु) है। अरुजिस द्वारसे जायकेपर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मको पावता है तिस द्वारको नान्दन कहतेहैं । [इसप्रकार ईश्व-
रके प्रवेशको कहके, अब तिसके पूर्वोक्त कार्य कारणरूप संघात-
मय उपाधिकेकिये संसारको कहते हैं] "तस्य त्रयआवसथात्रय-
स्वप्ना अयमावसथोऽयमावसथोऽयमावसथ इति" । (तिस ई
तीन स्थानहैं, स्वप्नहै, यह स्थानहै, यह स्थान है, यह स्थान है,
अर्थात् तिसही स्रष्टाके अपने पुरकेअर्थ राजावत् जीवरूपपरमे-
श्वरके तीनस्थानहैं । तहां जाग्रत्कालविषे दक्षिणचक्षु (चक्षुरूप
गोलक) रूप स्थानहै । स्वप्नकालविषे अन्तरका मन (मनकाआ-
श्रय कंठ) स्थानहै । अरु सुषुप्तिकालविषे यह हृदयाकाश (हृदय
करके अविच्छिन्न भूताकाश) स्थानहै । अथवा यह अग्रिमकहे
के तीनस्थान , (पिताके शरीर, माताके गर्भके आशय (अर्थात्
गर्भाशय, गर्भस्थान) अरु अपना शरीर, यह तीनरूप स्थान है।
इनमें तीन जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति नामवाली अवस्था स्व
(भ्रमरूप) है ननु जाग्रत् अवस्था प्रबोधरूप होने से स्व
नहीं है, सो ऐसे नहीं, किन्तु सो स्वप्नही है । कैसे, [अविवेकी
योंको तैसे प्रसिद्धके अभावहुयेभी विवेकियोंको तिन (स्वप्नादि
के लक्षणके ज्ञातवाले होनेसे, तैसे (स्वप्नवत्) प्रसिद्ध है, ब
कहते हैं । यहां यह अर्थ है कि वस्तुके स्वरूपके तिरोधान
असत् वस्तुकी जो प्रतीति, सो स्वप्न कहते हैं, यह स्वप्न
लक्षण है । अरु जाग्रत् भी तिस प्रकार का ही है, क्योंकि ब्र
स्वरूपके तिरोधानहुये अरु अविद्यमान जगत् की प्रतीतिके हु
(जाग्रत्भी स्वप्न हैं ।] तहां परमार्थ स्वरूपके प्रबोधके अभाव
अरु विवेकी पुरुषों करके स्वप्नवत् इसकी असद्रूपताके देखेहु
यहही दक्षिण चक्षुरूप स्थान प्रथमहै । यह स्थान भीतर
मनरूप द्वितीय है, अरु यह हृदयाकाशरूप स्थान तीसरा है
यह "अयमावसथः" यह स्थान ऐसा जो उच्चारण है सो
अर्थकाही अनुवाद है १२ । २१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स जातो भूतान्यभिवैक्षत। किमिहान्यं वावदिष दिति। स एतमेव पुरुषं ब्रह्म ततमपश्यदिदमदर्शमिति १३।२२॥

हे सौम्य, [ननु, गृहविशेषके वाची आवसथ, शब्दका नेत्रादिकों बिषे व्यवहार कैसे बनेगा, यह आशङ्का करके गृहवत इन नेत्रादिकों बिषे स्थित पुरुषको दीर्घनिद्रा के देखने से अरु तिन नेत्रादिकों बिषे गृहमें सुखसे सोयेहुयेवत्, सोये पुरुष को तत्काल जागरण के देखने से गौणी वृत्ति करके नेत्रादिकन के आवसथ (गृह) पने को कहे हैं] जिसकरके यह आत्मा उन स्थानों बिषे क्रमकरके आत्मभाव से वर्त्तमान होयके स्वाभाविक अविद्यासे दीर्घकाल पर्यन्त गाढ़ निद्रा को पायाहुआ प्रबोध को प्राप्त होता नहीं, अरु वारंवार मरणके अनुभवसे अनेकशत सहस्र अनर्थोंकी प्राप्तिसे जन्य दुःखोंको अनुभव करे है, एतदर्थ यह चक्षुरादिकों को स्थान (गृह) करके कहतेहैं॥ [ननु, जागरणादिक जो है सो कार्य कारणके सङ्घातरूप भूतों के कार्यका धर्म है, आत्माका नहीं, ताते भिन्न आत्माको भी तिसबिषे तादात्म्य अभिमानसे तिस धर्मकरके युक्तपना है, इसप्रकार कहने को " स जातः " सो होताहुआ, यह वाक्यहै, तिसका व्याख्यान करते हैं] " स जातो भूतान्यभिवैक्षत " (सो प्रकटहुआ भूतोंकोही जानताहुआ) अर्थात् सो परमात्मा प्रकटहुआही भूतों को "अहं मनुष्यः, अहं काणः, अहं सुखी " मैं मनुष्य हौं, मैं कानाहौं, मैं सुखी हौं, । इत्यादि । अनेक । प्रकारसे । अनात्मसङ्घातबिषे । तादात्म्य करके स्पष्ट जानताहुआ, अरु । मानताहुआ, अरु कहता हुआ, । " किमिहान्यं वावदिष्यदिति " (इसबिषे अन्यको क्या कहताहुआ) अर्थात् इस शरीरबिषे भिन्न आत्माको क्या कहता हुआ, नहीं कहताहुआ, अरु नहीं जानताहुआ। अरु जिसकरके ऐसे है। अर्थात् अपनेआप आत्माको नहीं जानता कहता। तिसही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके भूतों को । आत्मा करके । स्पष्ट जानताहुआ । अथवा सो प्रकटहुआ भूतोंको चिन्तन करनेलगा, अर्थात् । भूतों को विचरताहुआ । कि क्या इनकी स्वरूप से सत्ता है वा नहीं । अरु विचार करके किस अन्य (आत्मासे भिन्न) सत्तावालेको कहौं । किसीको भी आत्मासे भिन्न । सत्तावाला । कहनेको समर्थ नहीं हौं, इसप्रकार निश्चय करताहुआ ॥ इसप्रकारके पदार्थ के शोधनवाले पुरुषको वाक्यार्थ का ज्ञान कहते हैं "स एतमेव पुरुषं ब्रह्म ततमपश्यदिदमदर्शमिति" । (सो इसही पुरुषको परिपूर्ण ब्रह्मरूप देखताहुआ, इसको देखताहौं ऐसे) अर्थात् सो कदाचित् परमदयालु आचार्य करके आत्मज्ञान के प्रबोधके कारक । महावाक्यार्थरूप । शब्दों को करनेवाली जे वेदान्त शास्त्ररूप । अलौकिक । महाभेरि तिसको । शिष्यके । कर्णमूलविषे । श्रोत्रके छिद्रपर । ताड़नकिये (बजायेहुये) सो इसही सृष्टि आदिकोंके कर्त्तापने करके प्रसङ्गविषे प्राप्तहुये शरीररूप पुरविषे रहनेवाले आत्मारूप पुरुषको आकाशवत् परिपूर्ण ब्रह्मरूपसे देखताहुआ। कैसे कि अहो इस परब्रह्मरूप मुझ स्वस्वरूप को देखताहौं । अर्थात् "अहं ब्रह्मास्मि भाव से साक्षात् यथार्थ अनुभवकर्त्ता हौं यह महान् आश्चर्य है ।। ऐसे। अरु जिसकरके "इदं" यह इस शब्दका वाच्य जो साक्षात् अपरोक्ष आवान्तर ब्रह्म है । अर्थात् , यह, शब्द अंगुली निर्देशहुआ साक्षात् प्रत्यक्षका विषय होताहै, तहां अभिप्राय यह है कि ब्रह्मवेत्ता आचार्य से तत्त्वमस्यादि, महावाक्यार्थ के श्रवण ज्ञानसे जो प्रत्यक्षादि सर्व प्रमाणोंका अविषय अरु सर्वका प्रकाशक द्रष्टा चैतन्य आत्मा सो इदं शब्दके विषय घटवत् प्रत्यक्ष न होयके इदं प्रत्यय को सविषयको प्रकाशक द्रष्टा आत्माको "प्रतिबोधविदितं" अपनेआप आत्मत्वपने से असंदिग्ध अनुभव करे हैं । तिसको अपरोक्ष देखताहुआ १३ । २२ ॥

—०—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मादिदन्द्रो नामेदन्द्रो ह्वै नाम । तमिदन्द्रंसन्त मिन्द्रमित्याचक्षते परोक्षेण । परोक्षप्रिया इवहिदेवाः परोक्षप्रियाइवहि देवाः १४। २३॥

इति तृतीयखण्डः॥

हे सौम्य, जिस करके सर्वान्तर ब्रह्मको यह। अपरोक्ष, चक्षुरादि सर्वका द्रष्टा, प्रत्यगात्मा। इसप्रकार। अंगुली निर्देश के विषय घटवत्। देखाहुआ, [तिसके इन्द्रनामकी प्रसिद्धिसे भी तिसके ज्ञानको अपरोक्षपना है, इसप्रकार कहने को "। तस्मादिदन्द्रोनाम" तातेइदन्द्रनामहै,। येह वाक्यहै तिसका व्याख्यान करते हैं] ताते "। तस्मादिदन्द्रो नामेदन्द्रो ह्वैनाम "। {इदन्द्र नामवाला होताहुआ, इदन्द्र नामवाला प्रसिद्ध है { अर्थात् परमात्मा इदन्द्र नामवाला होताहुआ, अरु लोकबिषे सो ईश्वर इदन्द्र नामवाला प्रसिद्धही है "। तमिदन्द्रं सन्तमिन्द्रमित्याचक्षते परोक्षेण "। {तिस इदन्द्रहुये सतेको परोक्ष करके इन्द्र ऐसाकहते हैं } अर्थात् तिस इस प्रकार इदन्द्रहुये परमात्माको यहब्रह्मवेत्ता। प्रत्यक्ष ब्रह्मको आत्मभाव से जाननेवाले। तिस को अत्यन्त पूज्य होने से अरु तिसके प्रत्यक्ष नाम ग्रहण के भयसे सम्यक् व्यवहारार्थ परोक्षनामसे इन्द्र ऐसा कहते हैं॥ [पूज्य पुरुषों का नाम परोक्षपने करके ही कहने को योग्य है इस अर्थ विषे प्रमाण कहते हैं। यहां यह भावहै कि, इसही से लोकबिषे आचार्य जो हैं सो, उपाध्याय, इस नामके कहनेसे ही प्रीति को करते हैं, परन्तु विष्णुमित्रादि नामके ग्रहण बिषे नहीं॥ । अर्थात् कोई एक, विष्णुमित्र, इस प्रख्यात नामसे प्रसिद्धहै, अरु विद्यार्थियोंको अध्ययन करावता है उस आचार्य पुरुष को उपाध्याय, इस गुणविशिष्ट नामसे बुलाइये तब वह विशेष प्रीति करता है, अरु जो कदापि उसको, विष्णुमित्र, इस सामान्य नामसे बुलावो तो उत्तर तो देताहै परन्तु प्रीतिसे नहीं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ द्वितीयाध्याय ॥

पुरुषे ह वा अयमादितो गर्भो भवति । यदेतद्रेतस्तदेतत्सर्व्वेभ्योऽङ्गेभ्यस्तेजःसम्भृतमात्मन्येवात्मानंबिभर्ति । तद्यदास्त्रियां सिञ्चत्यथैतज्जनयति । तदस्य प्रथमं जन्म १ । १४ ॥

यथार्थ नामका अन्यरूपके करने से स्वरूप का आच्छादन होता है सोई नामका परोक्षपना है, इस प्रकार कहते हैं] तैसेही देखावते हैं " परोक्षप्रिया इवहि देवाः परोक्षप्रिया इवहिदेवाः " { जाते देव परोक्ष प्रियवत् हैं २ } अर्थात् जब देवता परोक्षप्रिय । अर्थात् परोक्षनामसे प्रीतिवाले । वत् हैं, देव परोक्षप्रियवत् हैं, तब सर्व देवताओं का भी परमदेव । ताते महादेव । सो परोक्षप्रिय । अर्थात् परोक्ष नामके ग्रहण से प्रीतिवाला । है तिस में क्या कहना है, किन्तु कुछभी नहीं । यहां जो द्विवार कथन है सो इस अध्यायकी परिसमाप्त्यर्थ है १४ । २३ ॥

इति श्रीप्रथमाध्यायगत तृतीयखण्डभाषाभाष्य

इति श्रीऐतरेयोपनिषद्गतप्रथमाध्यायभाषाभाष्यंसमाप्तम् ॥

अथ ऐतरेयोपनिषद्गतद्वितीयाध्यायभाषाभाष्यं प्रारभ्यते ॥

हे सौम्य, [इस प्रथमाध्यायबिषे आत्मा की एकता, अरु लोकपालों की सृष्टि, अरु क्षुधा तृषाकी योजना, इत्यादिक बहुत अर्थोंको कथन किये हैं ताते, अरु सर्वके भी कहने को इच्छित की शङ्काके निवारणार्थ कहनेको इच्छित । अर्थात् जिस अर्थ कहने की इच्छा है । कहते हैं । यहां सर्व शरीरों बिषे भी एकही आत्मा है, सोई परमेश्वर है, इस प्रकार का जो अग्रिम कहनेका अर्थ सो "एतत्" यह, इस शब्दका अर्थ है] ॥ इस अध्याय बिषे अग्रिम कहनेकाअर्थ कहनेको इच्छित है [प्र० । यहही अर्थ कहनेको कैसे इच्छित है । क्या अन्य अर्थ नहीं । यह शङ्काकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पूर्व ग्रन्थकी रचनाको विचारकरके देखने से यह ही । जो आगे कहेंगे । कहनेको इच्छितहै, इसप्रकार कहतेहैं। यहां यहअर्थ है कि यद्यपि लोकादिक की सृष्टिसे अरु अन्यकी सृष्टि से उत्पत्ति अरु स्थिति ही कही, तथापि उत्पत्ति अरु स्थितिके कथनकरके अर्थ से प्रलय भी कथनकिया। अरु प्रलयका कर्त्ता, इसप्रकार कहे हुये लोकपालादिकों केही भोक्तापने के कथन से सो असंसारी है, इसप्रकार कहा ॥ सामान्य से सर्व्वको जानता है ताते सर्व्वज्ञ है। अरु विशेष करके सर्व्वप्रकार से भी सर्व्वका वेत्ता (जाननेवाला) होने से सर्व्ववित् है]। जिसकरके जगत्की, उत्पत्ति, स्थिति, अरु लय, का कर्त्ता असंसारी सर्व्वज्ञ, सर्व्ववित्, सर्वशक्तिमान्, परमेश्वर, इस जगत्को स्वरूप से भिन्न अन्य वस्तुको न ग्रहण करकेही आकाशादिकों के क्रमसे सृजके । तिनके कार्यकी सिद्धिके अर्थ । अरु स्वस्वरूपके प्रबोधार्थ प्राणादिक सर्वकलावाले शरीरों विषे आप प्रवेश करताहुआ। अरु प्रवेश करके अपने आत्माको "यथाभूतमिदं ब्रह्मास्मीति" यथाभूत यह ब्रह्म मैं हौं,। इसप्रकार साक्षात् जानताहुआ। [जिस करके सर्व्व शरीरों बिषे एकहीका प्रवेश कहाहै, अरु जिसकरके प्रवेशसे प्राप्तहुयेका ब्रह्मभावसे ज्ञान कहाहै, ताते सर्व शरीरों बिषे एकही आत्माहै, अरु सो सर्व्वज्ञ ईश्वर है अन्य नहीं। यह वाक्यार्थ कहनेको इच्छित है, इसप्रकार पूर्व से सम्बन्ध है] ताते सोई आत्मा सर्व्व शरीरों बिषे एकही है, अन्य नहीं। अरु अन्य वाक्यभी "स म आत्मा ब्रह्मास्मीति" सो मेरा आत्माहै,। ऐसे जानना, "मैं ब्रह्महौं" इसप्रकार जानना,। अरु "आत्मा वा इदमेकएवाग्रआसीत्" "ब्रह्मततामिति" यह आगे निश्चय करके एक आत्माहीथा, परिपूर्ण ब्रह्मको देखताहुआ,। इसप्रकार कहा। अरु [„सो मेरा आत्मा है ऐसे जानना„ यह संहितारूप उपनिषद्गत वाक्यका शेषभी इसही अर्थको कहताहै, इसप्रकार कहते हैं] अन्य वाक्योंबिषे भी यहही अर्थ कहाहै ॥ ननु [प्रवेश

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के वाक्य से जो आत्मा की एकता कही सो अयुक्त है, क्योंकि, उस वाक्यकोही असंगत अर्थवान्पना है, इसप्रकार वादी शंका करे हैं। यहां यह अर्थ है कि आत्माको अशरीर होने से मस्तक के विदीर्ण करनेरूप, करतापना, अरु सर्वगत होने से प्रवेश, संभवे नहीं] सर्वगत सर्व्वात्मा के प्रवेश से रहित केशाग्रमात्रभी वस्तु नहीं है, एतदर्थ सो छिद्रके ताईं पिपीलिकावत् सीमाको विदीर्ण करके कैसे प्रवेश करताहुआ, तहां। [यहां क्या प्रतीयमान अर्थबिषे असंगतपना है, अथवा कहने के अर्थबिषे असंगतपनाहै, यह दो विकल्प हैं। तिनमें प्रथम पक्ष वा विकल्पबिषे सर्व वेदको भी असंगत अर्थवाला होनेकरके सर्वको भी अप्रमाणपना होवेगा, अरु वेदको सो अप्रमाणपना युक्त नहीं, इसप्रकार सिद्धान्ती कहे है। यहां यह अर्थ है कि चक्षुरादिक करणों से ईक्षण प्रसिद्ध है। अरु मृत्तिका आदिक उपादानवाले कोही स्रष्टापनाहै। अरु दोनों हाथोंसेही ग्रहणकरना अरु अपने अवयवों से जोड़ना। [अर्थात् वस्त्र भूषणादिकों का धारणकरना आदिक होताहै, सो अशरीरीको असंगत है। अरु शस्त्रादिक मूर्त्त से विदारण होता है अमूर्त्त से नहीं। अरु मुखादिकनसे अग्न्यादिकों की उत्पत्ति के हुये तिन मुखादिकोंका दाहादिक होवेगा। जैसे काष्ठ से अग्निकी उत्पत्तिहुये काष्ठका तैसे। अरु मूर्त्तरूप वस्तु काही अन्य से संयोग करनेको शक्यहै, क्षुधादिक अमूर्त्तका नहीं अरु शरीरकी सृष्टिकी उत्पत्ति के पूर्व अग्नि आदिकों करके प्रार्थना करनी असंभव है। अरु तिसकालबिषे गौआदिक शरीरोंके अभावसे, अरु अपनेको अशरीरी होनेसे तिसके गौ आदिकोंके लेनेकाभी असंभवहै। अरु उन देवताओं को अशरीर होनेकरके अमूर्त्तरूप होनेसे तिनकेप्रवेशकाभी असंभवहै। अरुअचेतनरूप अन्न को पलायन होनेका असंभवहै। अरु वागादिकोंको हस्तादिकोंवत् वस्तुकेग्रहणविषयक असामर्थ्यसे तिनकरके ग्रहणकरनेकी इच्छा होनेका असंभवहै॥ इसप्रकार समस्त प्रकरण असंगत अर्थवाला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होवेगा] तहां सिद्धान्ती कहे है, हे वादी! यह तैंने अत्यन्त अल्प प्रश्नकिया, अरु यहां बहुत से प्रश्न करने को योग्य है। करण रहितहुआ ईक्षण को करताहुआ। कुछभी [अन्य] वस्तुके ग्रहण किये विनाही लोकनको सृजताहुआ। अरु जलादिकोंसे पुरुषको ग्रहण करके तिसको अपने अवयवों से [जो स्वरूपसे निरवयव है] योजना करता हुआ। तिस के चिन्तनमात्र सेही मुखादिक भेदको पावतेहुये। अरु मुखादिकन से अग्नि आदिक लोकपालहुये। अरु तिनके मध्य क्षुधादिकोंकी योजनाहुई। अरु तिन [अशरीरी] देवताओंने स्थानार्थ प्रार्थनाकिया। अरु तिनके अर्थ गौ आदिक शरीरों का देखावना। अरु तिन [देवताओं] का यथायोग्य स्थानों बिषे प्रवेश। अरु उत्पन्न किये अन्नका पलायन होना। अरु वाणी आदिकों को तिस अन्नके भक्षण करने की इच्छा होनी॥ यह सर्व सीमाके विदारण अरु प्रवेश इनके तुल्यही है॥ ननु, [तब सर्व अप्रमाण होवे, इस प्रकार कोई एक वादी शंका करे है] तब यह सर्व अघटित (होनेसे) अप्रमाण होवे, [अरु कहनेको इच्छित अर्थ बिषे असंगति नहीं इसप्रकार द्वितीय पक्षको दूषण देतेहैं। यहांयह अर्थ है कि,लोकों बिषे आपही द्वारको करके अनेक गृहबिषे स्थितहुये देवदत्त की एकताके देखने से, तैसेही यहां आत्मा की एकताहै, इसप्रकार बोधन करनेको विदारण अरु प्रवेश कहते हैं, परन्तु सो अर्थ कहने को इच्छित नहीं, क्योंकि तिस [सिद्धान्ती] को कहने को इच्छित जो आत्मा की एकता तिसके बोधका द्वार होने करके कथनकिये होनेसे [अर्थात् सीमाका विदारण अरु प्रवेश का कथन आत्माकी अभेदताका बोधकद्वारहै तातें तातेउत्तमता रूप अर्थ का द्वार होनेकरके, यज्ञ प्रकरण, बिषे उक्तवपा (पशु के अंगका भाग विशेष) के भक्षण आदिकवत् अर्थवादरूप है] सो कथन बने नहीं, क्योंकि यहां आत्माके बोधरूप अर्थमात्र कोही कहना इच्छित है, ताते यह सर्व अर्थवाद है, याते दोष

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं । अथवा [असत् ही प्रवेशादिकों का यहां कथन है, इस प्रकार अंगीकार करके वपा के भक्षणादिकों के वाक्यवत् तिस प्रवेशादिकों के गुणार्थवादपने को कहके अब „ अग्नि हिम का औषधहै„ इस वाक्यवत् तिसके भूतार्थवादपनेको अंगीकार करके कहते हैं । यहां यह अर्थ है कि मायासे अघटित भी सर्व घटता है, क्योंकि तिसको अघटित अर्थकी घटावनेवाली पनाहै ताते इस कथन करके सृष्टि आदिकों को अघटित अर्थरूप होनेसे गंधर्व नगरादिवत् मिथ्याहीहै, इसप्रकार स्पष्ट करनेको अघटित सृष्टि आदिक अर्थभी श्रुतिने देखायाहै । इस प्रकार कहतेहैं] मायावीवत् महामायावी सर्व्वज्ञ सर्व्वशक्तिमान् देव आख्यायिकादिक प्रपंच बिषे लौकिकवत् सुखसे वक्ताको प्रतिपादन करनेके अर्थ अरु श्रोताके निश्चयार्थ सर्व इस चराचरको रचताहुआ यह पक्ष अत्यन्त युक्तहै । [ननु, लोकनकीसृष्टि आदिकनको अन्य प्रमाण के अगोचर होनेकरके अपूर्व होनेसे यहां कथनकरी जो आख्यायिका है तिसको तिस सृष्टि आदिकरूप अर्थकी परायणता होवे, यह आशंका करके, तिसको अपूर्वताके हुये भी तिसके निश्चय करके फलके अभाव से, अरु फलवान् औ अज्ञात अपूर्व । अर्थ बिषे श्रुति के तात्पर्य के नियम से । अन्यथा रुदनादिकों को भी अपूर्व होनेकरके, तहांभी तात्पर्य की प्राप्ति से सृष्टि आदिकबिषे श्रुतिका तात्पर्य नहीं, इस प्रकार कहतेहैं] अरु सृष्टिकी आख्यायिकादिकों के ज्ञानसे कुछ भी फल अंगीकार करते नहीं, अरु [आत्माके निश्चय बिषे तो फलको देखते हैं, अरु तिस बिषे ही श्रुतिकी परायणता युक्त है इस प्रकार कहते हैं, यहां यह अर्थ है कि । "एतावदरेखल्वमृतत्वम्" "तमेवं विद्वानमृत इह भवति" । "विद्वानमृतस्समभवत्" इत्यादि अन्य श्रुतियों के प्रमाण से, अरे इतनाही निश्चय करने अमृतभावहै, तिसको इसप्रकार जाननेवाला यहां अमृत (मोक्ष) होता है, विद्वान् अमृत होताहुआ । इत्यादि अनेक श्रुतियों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानसे अमृत भाव [मोक्षरूप फल] प्रसिद्ध है] एक आत्म-स्वरूप के ज्ञानसे तो अमरणभावरूप फल सर्वउपनिषदों विषे प्रसिद्ध है । अरु " समंसर्वेषुभूतेषु तिष्ठन्तंपरमेश्वरमिति " सर्व भूतोंविषे समानता से स्थित परमेश्वरहै, तिसको, इत्यादिक गीता स्मृतिके वाक्यविषेभी प्रसिद्ध है ननु [आत्माकी एकता ही इस अध्याय का अर्थ है, इस प्रकार कहके अब इसही को स्थिर करनेको वादी शङ्का करता है] जीव ईश्वर अरु निरुपाधिकब्रह्म, इस भेदसे आत्मा तीनहैं । तिनमें कर्त्ता भोक्ता [सुखी दुःखी] संसारी जीव एक आत्मा है, सो सर्वलोक अरु शास्त्र विषे प्रसिद्ध है । अरु अनेक प्राणियों के कर्म फल के उपभोगके योग्य अनेकन स्थानवाले जो लोक अरु देह तिनके रचने रूप शास्त्रानुसार पूर्व [इसके प्रथम वाक्यविषे] कथन किये लिङ्ग (चिह्न) करके, पुर अरु अट्टालिका आदिकोंकी रचनारूप लिङ्गसे तिसकी कुशलताके ज्ञानवाले तिनके कर्त्ता तक्ष (शिल्पी) आदिकवत् जानने में आवताहै, ऐसा सर्व जगत्का कर्त्ता अद्वितीय चेतनरूप जो ईश्वरहै सो दूसरा आत्मा जानते हैं। अरु "यतोवाचो निवर्त्तन्ते" जिससे वाणियां निवृत्तहोतीहैं अरु "नेतिनेति" इत्यादि वाक्यकरके शास्त्रोंविषे विख्यात, अरु उपनिषदोंकरके प्रतिपाद्य [जो सर्व निषेधोंकी अवधि अर्थात् जहां सर्वनिषेधों का पर्यवसान है, अरु प्रत्यक्षादि सर्व प्रमाणोंका अविषय] जो शुद्ध ब्रह्म रूप परमपुरुष है, सो तृतीय आत्मा है । इसप्रकार यह तीनों आत्मा परस्परमें विलक्षण हैं । तहां एकही अद्वितीय असंसारी आत्मा है, यह किसप्रकार जाननेको शक्य है, तहां [जीवकी जो कर्त्ता भोक्तापना आदिरूप विलक्षणता कही सो असिद्धहै, क्योंकि तिस जीवको अन्यप्रमाणका अविषय होने करके तिस धर्मवान् पने करके प्रमाज्ञानका विषय करनेको अशक्य है ताते। इस हेतु करके जीव अरु परमात्मा का भेद है नहीं, इस अभिप्राय से सिद्धान्ती समाधान करता है । यहां यह अर्थ है कि तिस जीव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को ज्ञेयताके अभावहुये । अर्थात् जीव चैतन्य होनेसे किसीकाभी ज्ञेय, किसीकरके जाननेयोग्य, नहीं तिसहेतु से । कर्त्तापने आदिक धर्म । जो उस बिषे वास्तव करके स्वरूपसेही नहीं । तिन करके युक्तहुआभी सो । बुद्ध्यादिकों करके । जानने को शक्य नहीं] सिद्धान्ती कहे है, तिन तीनों आत्मा बिषे प्रथम जीवही प्रमाणोंका अविषय होनेकरके कर्त्ता भोक्तापने रूप धर्मकरके युक्त कैसे जानने में आवेगा । अर्थात् जब जीव प्रमाणका अविषय है तब कर्त्ता भोक्तापने रूपधर्मकरके युक्तभी, वाजीवकर्त्ता भोक्तापने रूप धर्मकरके युक्त है इसप्रकार, कैसे जाननेमें आवेगा । किन्तु किसीप्रकारभी जानने में आवे नहीं ॥ ननु, श्रोताहै, मन्ताहै, द्रष्टा है, आदेष्टा । वर्णरूप शब्दका वक्ता । है, अघोष्टा । ध्वनिरूपशब्द का कर्त्ता । है, विज्ञाता है, प्रज्ञाता है, इसप्रकार जानते हैं, तहां [पूर्ववाक्यबिषे "स एषोऽश्रुतोऽमतोऽविज्ञातः" सो यह अश्रुतहै, अमत है, अविज्ञात है, । इसप्रकार तिसकी ज्ञेयताका निषेध होनेसे तिसबिषे ज्ञेयपना विरूप है, इसप्रकार कहते हैं] सिद्धान्ती कहे है, जिसको श्रवणादिकों का कर्त्ता होनेकरके जानते हैं । अर्थात् जिसको श्रवणादिकों का कर्त्ता ऐसा जानते हैं परन्तु इदं प्रत्ययके विषय अंगुली निर्देश घटवत्, यह श्रोता है, इस प्रकार अपने जाननेवाले ज्ञातारूप से पृथक् करके ज्ञेयवत् जानतेनहीं, किन्तु अहंप्रत्ययका लक्ष्य अहं श्रोता है, अहंमन्ता है, इत्यादि प्रकार अपने ज्ञातास्वरूप से अभिन्नकरके उस श्रवणादि कर्त्ता धर्मवान् जीवको जानते हैं, ताते । सोई "अमतो मन्ता विज्ञातो विज्ञाता, इत्यादि" अमतहुआ मन्ता है, अविज्ञात हुआ विज्ञाताहै, । अर्थात् मनका अविषयहुआ माननेवाला अरु बुद्धि आदिकों करके अविज्ञात हुआ सर्वका जाननेवाला है । क्योंकि "यद्वाचानाभ्युदितं येनवागभ्युद्यते, यन्मनसानमनुतेयेनाहुर्मनो मतम्" वाग् अरु मैन आदिक बाह्यकरण अरु अन्तःकरण जो सर्व के जानने करने आदिकों बिषे सामग्री है सो उसको नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानती अरु वो उनसामग्रियों का ज्ञाता प्रकाशकहै, तातेही उस विषे ज्ञेयपनेका अभावहै। इसप्रकार अन्यश्रुतियोंने भी। उसविषे ज्ञेयत्वका। निषेध कियाहै। अरु "नमतेर्मन्तारं मन्वीथा न विज्ञाते विज्ञातारं विजानीयात्, इत्यादि" मतिके मन्ताको मनन करना नहीं। अर्थात् मतिके मन्ताको मनन न करोगे क्योंकि वो मनका विषय नहीं। विज्ञातिके विज्ञाताको जानना नहीं। अर्थात् विज्ञातिके (बुद्धिके जाननेपनेके) विज्ञाता (जाननेवाला) को न जानोगे, क्योंकि वो बुद्धिके ज्ञानका विषयनहीं। इत्यादि रूप यह अन्यश्रुति है॥ ननु [दोनों श्रुतियों की प्रमाणता की तुल्यता से निषेधके असंभव से प्रत्यक्ष प्रमाण करके अज्ञेयपना अरु अनुमान से भी अज्ञेयपना कहो] जब आत्मा सुखादिवत् प्रत्यक्ष प्रमाण से जाननेविषे आवे तब तिसका श्रुतिविषे निषेध करना, सत्यहै, । यहां, सत्यहै, यहकथन आक्षेपकहै ताते इसका पर्याय असत्य है ऐसा जानना, क्योंकि वादीका कथन है। अरु "नमतेर्मन्तारं मन्वीथा" मतिके मन्ताको मनन करना नहीं, इत्यादि वाक्य से प्रत्यक्ष ज्ञानका निवारण करते हैं, परन्तु श्रवणादिरूप लिंग से आत्माको जानते हैं, तहां किसकरके निषेध होवेगा, तहां [आत्माविषे एककालमें दोनों ज्ञानके असंभव से, श्रवणादिकालमें मनन अरु विज्ञानके असंभव से, श्रवणादिकरके मनन अरु विज्ञानरूप आत्मा को विषय करनेवाला, वा अन्य को विषय करनेवाला अनुमति ज्ञान सम्भवे नहीं, इस प्रकार सिद्धान्ती कहताहै, यहां यह अर्थ है कि, श्रवणादि क्रिया के साथही वर्त्तमान होने से श्रवणादि क्रियारूप आधारवाले होनेसे आत्माविषे वा अन्यविषे तिसकी मनन अरु विज्ञानरूप क्रिया संभवे नहीं। इस प्रकरण विषे मनन अरु विज्ञान शब्द करके अनुमति ज्ञान कहते हैं, क्योंकि यहां आत्मा को तिस अनुमतिके विषयता की शंकावादीने कियाहै ताते [सिद्धान्ती कहे है, श्रवणादिरूप लिंगसे भी आत्मा को किसप्रकार जानते हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किन्तु किसीप्रकार भी नहीं यावत् जब आत्मा श्रवण करने को योग्यहै,ऐसा शब्द सुनते हैं,तब तिसको श्रवणादि क्रियाकरकेही सहित वर्त्तमान होनेसे [अर्थात् श्रवणादि क्रियाका आश्रयहोनेसे] तिसको आप बिषे वा पर बिषे मनन अरु विज्ञानरूप क्रिया (अनुमति प्रमाण) संभवे नहीं, [तब श्रवणों के एक काल बिषे असंभवहुये अन्यको विषय करनेवाली मननक्रियासे आत्मा मानने को योग्य है, यह आशंका करके, विजातीय दोनों क्रियावत् सजातीय भी दोनों क्रिया संभवे नहीं, इस प्रकार कहते हैं [तैसे अन्य ठिकाने भी मननादिक क्रिया बिषे अन्य मननादिक क्रिया भी संभवे नहीं । अरु श्रवणादि क्रिया जो हैं सो अपने विषयोंबिषे ही हैं, अर्थात् अपने विषयकोही विषय करनेवालियां हैं, परन्तु अपने आश्रय को विषय करनेवालियां हैं नहीं । [किंवा "नमतेर्मन्तारं मन्वीथा" मति के मन्ता को मनन करनाही [इस प्रकार आत्माको मनन की विषयता का निषेध है ताते, मननकर्त्ता आत्माबिषे मनन क्रिया संभवे नहीं इस प्रकार कहते हैं] जिसकरके मनन करनेयोग्य वस्तुसे अन्य ठिकाने (मननका आधार आत्माबिषे) मनन कर्त्ताकी मनन क्रिया संभवे नहीं, क्योंकि 'जैसे कुठारादिकों के [काष्ठछेदनादि रूप] क्रियाका काष्ठसे इतर स्थानबिषे अदर्शन है । ताते मनन के अविषय अरु मनन कर्त्ता आत्माबिषे मननक्रिया संभवे नहीं ननु, ["मनसः सर्वमेवमन्तव्यम्" मनके आधीन यह सर्व होताहुआ [इस श्रुति करके सर्वको मनकी विषयता होने से आत्मा बिषेभी मननकी विषयताहै इसप्रकार वादी शंका करता है] मनको सर्वही मनन करने योग्य है, एतदर्थ आत्माबिषे भी मननकी विषयता होवेगी,तहां[ऐसेहुयेभी मनको करणत्वहोनेसे अरु क्रियाका कर्त्ताबिनाअसंभवहै ताते, मनसे भिन्नमननकर्त्ता अवश्य अंगीकार करनेको योग्यहै, इस प्रकार सिद्धान्ती कहते हैं] कहते हैं कि 'सत्य ऐसेही है । तथापि सर्व भी मनन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषय मननकर्त्ता विना मन करनेको शक्य नहीं । जब, [मनन कर्त्ताकी आवश्यकता होहु, तिस करके सिद्ध क्या होता है, इस प्रकार वादी शङ्का करेहै] एसेहै तबतिस करके सिद्ध क्याहोताहै, तहां सिद्धान्ती कहेहै, यहां यह सिद्धहोवेहै कि जो यह सबका मनन कर्त्ताहै सो मननकर्त्ता अर्थात् मननक्रियाका आश्रयहीहै, मननका विषयनहीं होवेगा अरु मननकर्त्ताका दूसरा मननकर्त्ता कोई नहीं, अरु जब सो मननकर्त्ता आत्मा अन्यचेतन करकेही मननकरनेको योग्यहै, तबजिसचेतन आत्माकरके मननकरने को योग्य है, अरु जोमनन करनेयोग्यहै, सोदोनों परस्परभिन्न हैं, । अर्थात् मनन करताआत्मा जबअन्यआत्मा करके मननकरने योग्यहै तब एक आत्मा मननकर्त्ता अरु एकमनन करनेयोग्य इसप्रकार परस्पर में दो भिन्न आत्माहुये । इस करके एकही शरीरविषे दोनों आत्मा प्राप्तहोवेंगे । अरु एकही आत्मा मनन कर्त्ता अरु मनन करने योग्य होने करके वंश आदिकोंवत् उभय प्रकार से खण्डित होवेगा, ताते दोनों प्रकार असंभवही है । जैसे दोनों दीपकके परस्पर प्रकाश अरु प्रकाशक भावका असंभव है, क्योंकि दोनों तुल्य हैं । अर्थात् एकस्थानमें दो दीपक हैं परन्तु तिनमें परस्पर प्रकाश प्रकाशक भावनहीं क्योंकि दोनों प्रकाश रूप हैं, अरु जो प्रकाशरूप है सो प्रकाशक है अरु जो अप्रकाशी है वो प्रकाश्य है ताते जहां एक प्रकाशवान् अरु एक अप्रकाशी होता है, तहां प्रकाश्य प्रकाशक भाव होताहै, अरु जहां दोनों समान प्रकाशधर्मा होते हैं तहां प्रकाश्य प्रकाशक भाव संभवे नहीं तैसेही एक शरीर में दो आत्माके होने से भी एक मननकरने योग्य अरु एकमननकर्त्ता मानिये तो सो बनेनहीं, क्योंकि दोनों आत्मा समान चैतन्य हैं, अरु मनन करने योग्य वस्तु जड़ होती है अरु मननकर्त्ता चैतन्यहोता है, अरु आत्मादोनों चैतन्य हैं ताते एक शरीरविषे दो आत्मा मानने से भी परस्परमें मनन करता अरु मननकरने योग यह भाव बने नहीं । अरु मननकर्त्ता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के मनन करने योग्य वस्तुविषे आत्माके मननार्थ मननरूप व्यापारसे रहितकाल नहीं । अरु जब मननकर्त्ताभी लिंगसे आत्मा को मनन करताहै तबभी पूर्ववत् लिंगसे मननकरनेयोग्य आत्मा, अरु जो तिसका मननकर्त्ता, वे दोनों एकही शरीराविषे प्राप्त होवेंगे, ताते यहां भी " एक एव वा द्विधेति " सो एकही है वा दो प्रकारका है, । यह पूर्वोक्त दोष होवेगा । ननु, [ऐसे " अमतो अविज्ञात " अमतहै अविज्ञातहै, । इस युक्तिसाहेत श्रुति करके सर्वप्रकार से आत्माकी ज्ञेयताके अभाव से, ऐसे सिद्धहुआ,तहां पूर्ववादी शंका करताहै] जब आत्मा प्रत्यक्षप्रमाण से नहीं जाना जाताहै,अरुअनुमान सेभी नहीं जाना जाताहै तब"समआत्मेति" सो मेरा आत्माहै, ऐसे जानना, । यह कैसे कहतेहौ, वा " श्रोता मन्तेत्यादि " श्रोता है मन्ता है, इत्यादि वाक्य कैसे कहतेहौ, । तहां [तहां " विद्यादिति " इस श्रुतिविषे अन्य के निषेध हुये स्वप्रकाशपने करके आत्माका स्वरूपसे स्फुरणही कहते हैं,परन्तु विषय होनेकरके वेद्यता नहीं, इसप्रकार हम समाधानको कहते हैं । इस अभिप्राय से आत्माके श्रोतापने आदिककी श्रुतिविषे सिद्धान्ती समाधान कहे है] कहे है, आत्मा श्रोतापने आदिक धर्मवाला नहीं, क्योंकि आत्माका अश्रोतापनादिक श्रुति विषे प्रसिद्धहै, तहां [ऐसे हुयेआत्मा श्रोता है मन्ताहै, अरु श्रोतानहीं मन्तानहीं, इसरीतिसे दोनोंप्रकारकरके श्रवणहुये श्रोतापने धर्म वालाही है इसप्रकार पश्चात् विपरीत ग्रहण तुझको युक्त नहीं, इसप्रकार सिद्धान्ती कहता है] क्यों बिषम देखता है, हे वादी [ननु, लोक प्रसिद्धिके बलसे अनात्मधर्मताके निश्चयसे विषमता नहीं यहआशङ्का करकेसिद्धान्ती निषेधकरेहै]यद्यपि तुझको बिषमनहीं है परन्तु मुझको बिषम भासता है । कैसे कि जब यह आत्मा श्रोताहै तब मन्ता न होवेगा, अरु जब मन्ताहै तब श्रोता न होवेगा। तहां ऐसेहुये एकपक्षबिषे श्रोता वा मन्ताहै अरु द्वितीय पक्ष बिषे आत्माश्रोताभी नहीं अरु मन्ता नहीं । तैसे अन्यठिकाने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(द्रष्टापने अरु विज्ञातापने आदिकोंविषे) भी कदाचित् होने पनाहै। जब ऐसे है तब श्रोतापने आदिक धर्मवाला अरु अश्रोता आदिक धर्मवाला आत्मा है, इस संशयके ठिकाने कैसे तुमको विषमता नहीं भासती, किन्तु भासनी चाहिये जैसे जब देवदत्त चलता है तब स्थित नहीं किन्तु गंताही है, अरु जब बैठा है तब सो गंता नहीं किन्तु स्थितही है। जब ऐसे व्यवस्था है, तब तिसको पक्षविषे (क्रमसे) गंतापना अरु स्थितपना है; परन्तु गंतापना वा स्थितपना नित्य नहीं। तद्वत् आत्मा का श्रोतापनादिकभी नित्य नहीं। [इसके मध्य अभिप्रायके न जानने वाले जो वैशेषिकादि हैं सो आत्माका श्रोतापना अरु अश्रोतापनादिक दोनों भी कदाचित्क (अनित्य) ही होवो, इसप्रकार कहते हैं, सोई कहते हैं, यहां वैशेषिकादिवादी भी तैसेही देखते हैं। पक्षके प्राप्तहुये श्रोतापने आदिक करके, आत्मा श्रोता अरु मन्ता इत्यादिक कहते नहीं! जिस करके ज्ञानको संयोग से जन्यपना अरु एक कालविषे न होनेपना कहते हैं। अरु मैं अन्याठिकाने [ज्ञानके कदाचित्पने विषे अरु एक कालमें न होने विषे क्रमके अनुसार वे वैशेषिकादि प्रमाण कहते हैं,। तहां यह अर्थ है कि जब मन न होवे चक्षुरादि इन्द्रियन के एक कालबिषेही रूपादिकन से सम्बन्धकेहुये एक कालबिषेही सर्व इन्द्रियों से सर्व विषयों का ज्ञान होवेगा, क्योंकि इन्द्रिय अरु विषयों के सम्बन्धरूप सामग्री का सद्भाव है ताते, अरु तैसे एक कालबिषे सर्व विषयों का ज्ञान नहीं होवे है, एतदर्थ क्रमकरके तिस तिस इन्द्रियसे संयोगीमन अंगीकार करनेयोग्य है। तैसेहुये एककाल विषेसर्व इन्द्रियों से मनके संयोगके अभावसे, एक कालबिषे सर्व विषयों का ज्ञान नहीं होताहै। एतदर्थ एककाल विषे रूपादिसर्व विषयों के ज्ञानके असंभवरूप लिंगसे, मन है ऐसा कहते हुये वैशेषिकादि एककालबिषे सर्वके ज्ञानोंका असंभव है। इसप्रकार कहतेहैं।] मनवाला होताहुआ (अर्थात् मेरामन अपने ठिकाने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न रहा । ताते नहीं देखताहुआ । अर्थात् मेरा मन और ठिकाने था ताते मैंने देखा नहीं । इत्यादिक एककालबिषे ज्ञानका जो असंभव है सो मनका लिंगहै, इस अर्थको योग्य देखते हैं । [वैशेषिकादिककेमतकेसिद्धान्तीकरकेदेखायेहुयेतब वैशेषिकादिकों की रीतिसे दोनों श्रुतियों के संभवसे अरु आत्माके श्रोतापने आदिक धर्मकी सिद्धि से तैसेही होय, इस प्रकार पूर्वपक्षी वा तटस्थी, सिद्धान्ती के प्रतिशंका करते हैं । यहां यह अर्थ है कि जब इस प्रकार युक्त होय तब ऐसेही होय, क्या तुमको इष्ट नहीं] जब ऐसे योग्य होय तब ऐसे ही होय, क्या तुमको इष्ट नहीं, यहां सिद्धान्ती कहे हैं कि ऐसे जब [आत्मा के कदाचित्कज्ञानसे श्रोतापने आदिक धर्मवान्पने को श्रुति करके असम्मत होनेसे, सो योग्य नहीं है, इस प्रकार सिद्धान्ती तिस पक्षको खंडन करते हैं] तुमको इष्ट है तो होवो, परन्तु श्रुति का अर्थ तो । तुमारे कथन प्रमाण । संभवे नहीं ॥ क्या श्रोता है, मन्ताहै, इत्यादिरूप श्रुतिका अर्थ नहीं है तहां ["न श्रोता न मन्तेत्यादि" श्रोता नहीं मन्ता नहीं, इसश्रुति करके विशेष से तीनों कालोंबिषे भी श्रोतापने आदिक धर्मकी रहितता के । अर्थात् आत्मा कालत्रयमें भी श्रोतामंतापने आदि धर्मवान् स्वरूप करके नहीं, इस प्रकार श्रोतापने आदिक धर्म की रहितताके । प्रतिपादन से, तिन श्रोतादि धर्म करके युक्तपना असम्मतही है, इस प्रकार सिद्धान्ती उत्तर कहे हैं] कहते हैं, "न श्रोता मन्तेति" न श्रोता है न मन्ता है, इत्यादि श्रुति वचन से आत्मा को श्रोतापने आदिक धर्म करके रहितपना है ॥ तातु ["जब यह श्रोता है,,इत्यादि वाक्य करके श्रोतापने आदिक के पक्षबिषे प्राप्तहोने को तुमोंकरके कथनकिया है ताते, अरु वैशेषिकके मतको देखावने की बेलाबिषे कदाचित्क ज्ञानसे तिसके प्रतिपादनसे पक्षबिषे प्राप्त श्रोतापने आदिक अरु तिसके अभाव की विषय होनेकरके दोनोंश्रुतियों के सम्बन्धको वादी शंकाकरता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है] पक्ष कहिये विकल्पविषे प्राप्तहोने करके तुमने निषेधकिया सो [पक्ष। उभयरूपता।] के असम्बन्धी श्रोतापने अरु तिसके अभावकी श्रुतियों करके अपनीप्रीतिसे प्रतीतिसे पक्षके सम्बन्धी होनेकरके तिसका संकोचयुक्त नहीं, इस प्रकार सिद्धान्ती अपने अभिप्रायको वर्णन करतेहुये कहते हैं] बने नहीं, क्योंकि आत्मा का जो अश्रोतापनादिक है सो नित्य है, क्योंकि। "नहिश्रोतुः श्रुतेर्विपरिलोपो विद्यते"। श्रोताके श्रवणका विनाश नहीं है, इत्यादि श्रुति करके कहे तिसके अंगीकार से॥ अरु जब ऐसे है तब श्रोतापनादिक नित्यही है, इसप्रकार अंगीकारहुये प्रत्यक्ष प्रमाणसे विरुद्ध एक कालविषे ज्ञानका असंभव अरु आत्माके अज्ञान का अभाव कल्पित होवेगा, अरु सो [होना] अनिष्टहै, तहां [यहांसे सिद्धान्ती, उक्त पूर्वपक्ष का समाधान करता है। यहां यह अर्थ है कि एक कालविषे ज्ञानका संभव अरु अज्ञान का सद्भाव इन दोनों दोषोंका संभव नहीं] सिद्धान्ती कहे है कि दोनों दोषोंका संभव नहीं, क्योंकि आत्माको श्रवणादिक अरु श्रोतापने आदिक धर्मवान् पनेकी श्रुतिसे। अरु अनित्य, मूर्त्तरूप अरु संयोग वियोगरूप अर्थवाले चक्षुरादिकनकी दृष्टि आदिकों को अनित्य पनाही है। जैसे अग्नि आदिकों का जो जलावना है सो तृणादिकों के संयोगसे जन्यहोनेकरके अनित्य है, तद्वत्। अरु नित्य अमूर्त्तरूप अरु संयोग, विभागरूप धर्म से रहित आत्माको संयोग से जन्य दृष्टि आदिकरूप अनित्यधर्मवान् पना नहीं संभवताहै। जैसे "नहि द्रष्टुर्दृष्टेर्विपरिलोपोविद्यते" द्रष्टाकी दृष्टिका लोपनहीं। इत्यादिरूप श्रुतिहै। अरु जब [नित्य अरु अनित्य भेदसे] दोनों दृष्टिके अंगीकारविषे वादी गौरवदोष की शंकाकरेहै] ऐसे है तब दृष्टिदोहैं, तिनमें चक्षुकी दृष्टि अनित्य है अरु आत्माकी दृष्टि नित्य है। अरु तैसे श्रुति (श्रवण) भी दो हैं तिसमें श्रोत्रकी श्रुति अनित्य है, अरु आत्मस्वरूप की श्रुति नित्य है। तैसे मति (विज्ञाति) भी बाह्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरु अबाह्य है । [श्रुतिकी प्रमाणता से उभय प्रकारकी दृष्टि के अंगीकार विषे गौरव प्रमाण करके सिद्ध (अकिंचित्कर) है इस प्रकार सिद्धान्ती कहताहै] ऐसेहुयेही "दृष्टेर्द्रष्टाश्रुतेःश्रोता" दृष्टिका द्रष्टा है, श्रुतिका श्रोताहै , इत्यादिरूप यह श्रुति घटित होवेहै। अरु लोकविषे भी चक्षुके तिमिरके आवने अरु जानेविषे दृष्टिनाशहुई, अरु दृष्टि उत्पन्नहुई इसप्रकारचक्षुकी दृष्टिका अनित्यपना प्रसिद्धहै।तैसे श्रुति अरु मति आदिकोंका भीहै। अरु आत्मा की दृष्टिका नित्यपनाही प्रसिद्धहै । अर्थात् जिस अन्तर दृष्टिकरके बाह्य दृष्टिकी मन्दता तीव्रता भावाभाव जानाजाताहै, सो नित्य अविनाशी आत्म दृष्टिहै । अरु लोकविषे निमीलित नेत्रवाला पुरुष कहताहै कि आज मैंने स्वप्न विषे अपना भ्राता देखा, तैसेही बधिर भावको प्राप्तहुआ पुरुष कहता है कि आज मैंने स्वप्न विषे मन्त्र । वा सुन्दर गायन श्रवणकिया । इत्यादि प्रसिद्धहै। अरु जब चक्षुके संयोगसे जन्यही आत्मा की नित्य दृष्टि होवे, अरु तिस चक्षु संयोगके नाशहुये नाशहोवे, तब निमीलित नेत्रवालापुरुष स्वप्नविषे नीलपीतादि पदार्थोंको न देखेगा। अरु "नहि द्रष्टुर्दृष्टे र्विपरिलोपोविद्यते" द्रष्टाकी दृष्टिकालोप होता नहीं, । इत्यादिरूप यह श्रुति अघटित होवेगी। अरु "तच्चक्षुः पुरुषे यन स्वप्नंपश्यतीति" जिसकरकेस्वप्नको देखताहै सोचक्षुपुरुषविषेहै, इत्यादिरूप यह श्रुति नित्य आत्मदृष्टि की अरु अनित्य बाह्य दृष्टिकी ग्राहकहै। अरु बाह्य दृष्टि को उत्पत्ति विनाशादिक अनित्य धर्मवाली होनेसे तिसकी ग्राहक आत्मदृष्टिको तद्वत् प्रकाशकपना अरु अनित्यपनादिक जो लोकको प्रतीत होते हैं सो भ्रान्तिरूप निमित्त करके हैं, यह युक्त है। अरु जैसे भ्रमणादि धर्मवाले अलातादिकोंको विषयकरनेवाली दृष्टिभी भ्रमतेहुयेवत् होती है, तद्वत्ही लोककी दृष्टि है। अरु तैसे "ध्यायतीव लेलायतीव" ध्यानकरतेवत् लीला करतेवत् होवे है, यह श्रुति स्पष्ट कहती है। तिसकरके आत्मदृष्टिको नित्य होने से एककालविषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होना अरु एक काल बिषे न होना ऐसा नहीं। बाह्य अनित्य दृष्टि-रूप उपाधि के बशसे लोकों को अरु तार्किकनको, वेदके सम्प्रदाय करके रहित होने से "अनित्यात्मनो दृष्टिरिति" आत्माकी दृष्टि अनित्यहै, यह भ्रान्ति घटितही है। अरु जीव ईश्वर अरु परमात्माके भेदकी कल्पना भी इसहीकी भ्रान्तिरूप निमित्तवालीही है। अरु जितने [किम्वा "आत्मनैवायं ज्योतिषाऽऽस्ते" "अयमात्मा ब्रह्म" "सर्वानुभूः प्रज्ञानघन एव" आत्मरूप ज्योतिसेही यह सर्व है, यह आत्मा ब्रह्महै, सर्व का अनुभवरूप प्रज्ञानघनही है, इत्यादि श्रुतियों से आत्माको नित्य दृष्टिरूप होने से, अरु "सर्वाः प्रजा यत्रैकं भवन्तीति" जहां सर्व प्रजा एक होतीहै, इत्यादि श्रुति करके सर्व कल्पना के तन्मात्रपने करके, अरु ताते भिन्नकरके अभावका कथन होने से, अरु आत्माको निर्विशेषरूप होने से, तिस आत्मरूप नित्य दृष्टिबिषे ,है वा नहीं है, इत्यादि सर्व कल्पना भ्रान्तिरूप निमित्तसेही है। इसप्रकार कहते हैं,] वाणी के नाममय अरु मनके रूप (वा संकल्प) मयभेद जहां (जिस आत्माबिषे एक होते हैं, तिसको बिषय करनेवाली (तिसकी स्वरूपभूत) इसही से नित्य निर्विशेष (अर्थात् सर्वभेद रहित) दृष्टिकी „है„ ऐसी कल्पना आस्तिकन को है, अरु „नहीं है„ ऐसी कल्पना, नास्तिकन को है, अरु "है 'नहीं है" ऐसी कल्पना दिगंबरमतवाले को है, अरु अन्योंको भी सावयव भावादिकों की कल्पना है सो सर्वही भ्रान्तिरूप निमित्तवाली है। [ननु, वेतार्तिक आत्माके अस्तिपने आदिकों को युक्तिरूप तर्क से साधतेहैं, एतदर्थ उनको भ्रान्तिरूप निमित्त करके युक्तपना नहीं, यह आशंकाकरके श्रुति बिरुद्ध होनेसे, अरु आत्माबिषे असंभवसे अरु तिन कल्पना के सद्भाव हुये मोक्षका असंभव होनेसे, तिन तार्किकों की कल्पना प्रमाणके मार्गपर आरूढ़ होती नहीं, ऐसा कहते हैं,] कईएक वादियों के मतबिषे आत्मा है ऐसी कल्पना है, अरु किसी के मतबिषे नहीं है, ऐसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कल्पना है, अरु किसी के मतबिषे है औ नहीं है, ऐसी कल्पना है, अरु किसी के मतबिषे अनेक गुणवाला है, अरु किसी के मतबिषे गुण रहित है, अरु किसी के मतबिषे जानता है, अरु नहीं जानता है, अरु किन्हीं के मतबिषे क्रियावाला है, किसी के मतबिषे क्रिया रहितहै, अरु कोई के मतबिषे फलवालाहै, किसी के मतबिषे फल रहित है, अरु किसी के मतबिषे कर्म अरु वासनारूप बीजवाला है, अरु किन्हीं के मतबिषे बीज रहित है अरु किसी के मतबिषे सुखरूप है, किसी के मतबिषे दुःखरूपहै, किसी के मतबिषे मध्यम है (देहतुल्य आकारवाला है) अरु किसी के मतबिषे अमध्यम (अणु वा विभु) है, अरु किसी के मतबिषे शून्य है, अरु किसी के मतबिषे अशून्य है, अरु किसी के मतबिषे यह अन्य है, मैं अन्य हौं, ऐसी कल्पना है ॥ सो ऐसी कल्पना को मन बाणी से अगोचर आत्माबिषे कल्पना करनेको इच्छताहै सो निश्चयकरके आकाशको भी चर्मवत् वेष्टन करनेको । [अर्थात् आकाशको चर्म से वेष्टित (मढ़नेको) करनेको वा वेष्टन मृगचर्मादि वा चटाईवत् वेष्टन (लपेटनेको) करनेको] । इच्छताहै, अरु जलबिषे जलचरन के (खोज) पादचिह्नों को अरु आकाशबिषे आकाशचारियों के खोज (पादचिह्नों) को देखने को इच्छते हैं ॥ "नेति नेति" अरु "यतोवाचो निवर्त्तन्ते" जहां से बाणी निवृत्त होती है, । इत्यादि श्रुतियों से अरु "कोऽद्धावेदेत्यादि" कौन साक्षात् जाने, इसमन्त्रके वाक्य से, आत्मा को मन बाणी की अविषयता सिद्धहै ॥ ननु; [आत्मा कोबाणी अरु मनकी अविषयताकेहुये श्रवणअरुमननकेअसम्भव से आत्माका ज्ञान [होना] सम्भवे नहीं इस प्रकार वादी शंका करे है] तब तिस आत्मा का "तमहंसम आत्मेति विद्याम्" सो मेरा आत्मा है, इस प्रकार का ज्ञान कैसे होवेगा, जो "सम आत्मेति" सो मेरा आत्मा है तिसको मैं किस प्रकार जानों ताते सो प्रकारकहो । कि जिस करके मनबाणी आदिकों का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अविषय आत्मा अपना आप जाना जाय ?॥ यहां ["नेतिनेति" ऐसे नहीं, ऐसे नहीं, । इत्यादि श्रुतिके उदाहरण करकेही अन्यके निषेधसेही तिस स्वप्रकाशका बोध होताहै, इसप्रकार आत्मज्ञान के। होनेके। प्रकारको कथन कियाहै ताते अरु यहां अन्यप्रकार के अभावसे इसही प्रकारसे अविषय होनेकरके भी आत्मा जानेको योग्य है। अर्थात् बुद्ध्यादिकों का अविषय अरु सर्वका प्रकाशक साक्षी आत्मा श्रुतिके निषेधमुख वाक्य करके जानने योग्य है। इसप्रकार मानिके सिद्धान्ती उपहास सहित उत्तर कहताहै,] सिद्धान्ती आख्यायिका कहताहै, कोई एक प्रसिद्ध मूढ़ मनुष्यथा, तिसको किसीभी अपराधके होनेसे कईएक पुरुषों ने तुझको धिक्कार है, तू मनुष्य नहीं, इसप्रकार कहा। तब सो पुरुष मूढ़ होनेकरके, अपने मनुष्यपनेकी प्रतीति करनेको किसी अन्यपुरुष के पास जायके प्रश्न करताहुआ कि हे साधो, मैं, कौनहौं सो तुम कहो, तब वो उसकी मूढ़ताको जानके। कि यह मूढ़है। कहताहुआ कि तुझको क्रमसे बोध करौंगा॥ पीछे स्थानादि स्वरूपभात्र को निषेध करके तू अमनुष्य नहीं हैं, इसप्रकार कहके उपराम होताहुआ। पश्चात् वो मूढ़पुरुष उस बोध कर्त्ता के प्रति कहताहुआ कि, आप मुझको बोध करनेको प्रवर्त्त हुये, अरु चुप्प होतेहुये, सो बोध क्यों नहीं करते, तब पुनः उसने कहा कि तू अमनुष्यही है, इसप्रकार तिसके भावसे तैसेही वाक्य कहतेहुये, जो अपने मनुष्यपनेको जानता नहीं सो मनुष्यहै, इसप्रकार कहनेसे भी अपने मनुष्यपने को कैसे जानेगा जैसे शास्त्रके अनुसार उपदेशही आत्माके बोधका प्रकारहै अन्य नहीं। एतदर्थ अग्निसे जलावनेयोग्य जो तृणादि सो अन्यकिसी से भी जलावने को शक्य नहीं। इसही करके शास्त्र जो है सो आत्मस्वरूप को बोधन करनेको प्रवृत्तहुआ अमनुष्यपने के निषेधवत्, "नेति नेति" ऐसा कहके उपराम होता है। तैसे पुनः "अवाह्य" यह सर्वका अनुभवरूप आत्मा ब्रह्महै, "एतावदनु-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शासनम्" एतनाहीं अनुशासन (उपदेश) है, "तत्त्वमसि" सो तूहै, "यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवाभूत्तत्केनकं पश्येत्" जहां तो इसको सर्व आत्माही होताभया तहां किसकरके किसको देखेगा, इत्यादि श्रुति शास्त्रभी आत्मा के वेद्यपने को निषेधही करताहै। अरु यावत् यह पुरुष ऐसे उक्तप्रकारके इस (अपनेआप) आत्मा को जानता नहीं तावत् यह बाह्य अनित्य दृष्टिरूप उपाधि को आत्मापने करके जानके अविद्या से उपाधि के धर्म को अपने धर्मकरके मानताहुआ, ब्रह्मासे आदि लेके देवतिर्यक् अरु नरक योनिरूप स्थानों बिषे बारम्बार आवृत्ति (संसृति, भ्रमणको) प्राप्त होताहुआ, अविद्या काम अरु कर्म के वशसे संसारको प्राप्त होता है। सो इसप्रकार संसार को पावताहुआ। ग्रहण किये देह अरु इन्द्रिय के संघात को त्यागता है पुनः अन्य संघातको ग्रहण करता है। बारम्बार ऐसेही नदीके प्रबाहवत् जन्म मरण रूप बन्ध के अनाशकरके युक्त बर्त्तमानहुआ किन अवस्था करके युक्त वर्त्तता है, इसही अर्थ को। [यहां यह भाव है कि जीवकी अवस्थारूप तीन जन्मको अत्यन्त ग्लानिरूप होनेसे तिसके कि चारने से वैराग्य होता है,] वैराग्यके अर्थ देखावतीहुई श्रुति कहै है, कि [" पुरुषेहवा अयमादि तो गर्भो भवति " पुरुषबिषे यह आदिसे गर्भहोताहै, इस वाक्यबिषे ,इदं,शब्दके अर्थको कहते हैं यहां यह अर्थ है कि जो मस्तकको विदीर्ण करके तहां प्रवेश करि स्थित है सो „ यह „ इसप्रकार कहते हैं [यहही (कि जिस मस्तकके द्वार से प्रवेश कियाहै)। अविद्या काम अरु कर्मके जीव, यज्ञादि कर्मोंको करके इस मृत्युलोक में धूमादिकके से चन्द्रमसि (स्वर्ग वा पितृलोक) को पायके (कर्म्मोंका भोगके (कर्म्मों के क्षयवाला हुआ वृष्टि आदि क्रमसे इस लोकबिषे आयके अन्नरूप हुआ पुरुष कहिये पितारूप अग्निमें आहुति हुआ है। (" तस्मिन्नेतस्मिन्नग्नौ देवा अन्नं जुहुति इस श्रुति के प्रमाण से (" पुरुषेह वा आयमादितो गर्भो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भवति" (पुरुष बिषे प्रसिद्ध यह प्रथम गर्भ होता है) अर्थात् तिस पुरुष बिषे प्रसिद्ध यह संसारी रसादिक धातुके क्रमसे प्रथम वीर्यरूपसे गर्भ होता है। अर्थात् यह जीव स्वर्ग बिषे अपने पुण्य कर्म का फल भोग पुण्य के क्षयहुये वृष्टिके मार्ग से पृथिवी बिषे आय अन्नरूप से प्रकट होता है पुनः किंचित् पुण्य कर्म के शेष से कर्मानुसार इसको जिस वर्णजाति में जन्म पावना होता है तिस वर्णजातिके पुरुषके उदरबिषे आय वीर्यरूप से वह प्रकट होता है, इस प्रकार का सुकृती जीव का जो अपने कर्मानुसार पुरुषके उदरबिषे आवना है सो उसका प्रथम गर्भवास है, ॥ तिसको कहते हैं "यदेतद्रेतस्तदेतत् सर्वेभ्योऽङ्गेभ्यस्तेजः सम्भूतात्मन्येवात्मानंबिभर्त्ति तद्यथा स्त्रियां सिञ्चत्यथैतज्जनयति तदस्य प्रथमं जन्म" (जो यह रेत है सो यह सर्व अङ्गों से तेज उपजा है, आत्मा को आत्माबिषे धारता है तिसको जब स्त्री बिषे सिंचन करता है तब इसको जन्म देता है सो इसका प्रथम जन्म है) अर्थात् जो यह पुरुषबिषे रेत कहिये वीर्य है तिसरूपसे। सो प्रकट। होता है, अरु सो यह रेत अन्नमय पिंडके रसादि धातुरूप सर्व अंगों से शरीर का साररूप तेज उपजता है सो पुरुष का आत्मारूप होने से आत्मा है। अर्थात् अन्नमय पुरुष का सारभूत होने से रेत उसका आत्मा है। तिस रेतरूप से गर्भरूप हुये आत्माको। अर्थात् जो जीव अपने कर्मानुसार अन्नरूप से पुरुषके उदरबिषे आय वीर्यरूप से प्रकट हुआ है वा वीर्यविशिष्ट हुआहै तिसआत्माको। आत्मा (शरीर) बिषे धारताहै। तिस रेतको जब, जिस कालमें अपनी भार्य्या (स्त्री) ऋतुमती होय तब तिस कालमें। अर्थात् स्त्री के रजस्वला होनेके चतुर्थदिवस उपरान्त पञ्चमदिवससे सोलहवेंदिवस पर्यन्त स्त्री ऋतुमती रहती है सो ऋतुकालमें स्त्री से भोगकरना तिसमेंभी समदिवस अर्थात् चौथा छठा आठवां दशवां बारहवां चौदहवां सोलहवां यह त्याज्यहैं। तिस स्त्रीरूपाअग्निबिषे स्त्रीगमन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत् स्त्रिया आत्मभूयं गच्छति । यथा स्वमङ्गं तथा । तस्मादेनां न हिनस्ति । साऽस्यैतमात्मानमत्र गतं भवति २ । २५ ॥

करतसन्ते सिंचनकरे । अर्थात् स्त्री में अग्निकी भावना अरु वीर्य में हवीकी भावनाकर स्त्री के विषे वीर्य को स्थापनकरे इस प्रकार करने से सर्वोत्तम गुण विशिष्ट पुत्र प्रकट होता है । तब पिता तिस इस अपने गर्भरूप रेतको जन्मदेता है, इसलंसारी जीवका । जो पुरुषके वीर्यरूप गर्भ में आयाहै । वीर्य के सेचन कालविषे जो तिस पुरुषके स्थानसे निकलनाहै सो प्रथम जन्म । प्रथमावस्थाका प्रकटपना । है १ । २४ ॥

हे सौम्य! "तत्स्त्रिया आत्मभूयं गच्छति" (सो स्त्री के स्वरूपसे अभिन्नता को पावता है) अर्थात् भार्याविषे रेतको सिञ्चन करताहै इसअर्थविषे "असावात्माऽमुमात्मानमिति" यह आत्मा (पुरुष) इस आत्माको (अपने रेतरूप आत्मा को) इस (भार्यारूप) आत्माके अर्थ देता है, । यह वाक्य प्रमाणहै। सो [ननु स्त्री के शरीरविषे प्रवेशको पाया पुरुष का वीर्य स्त्रीको शरीरविषे लगे बाणवत् उपद्रव करनेवाला होवेगा, यह आशंका चित्तविषे ल्यायके "तत्स्त्रिया आत्मभूयं गच्छति" सो वीर्य स्त्री के आत्मभावको पावता है, । इत्यादिरूप यह वाक्य कहाहै, तिस का व्याख्यान करते हैं] रेत जिस स्त्री बिषे सिंचनकिया है तिस स्त्री के स्वरूप से अभिन्नताको प्राप्तहोता है, जैसे पूर्व पिताके स्वरूप से अभिन्नता को पाया तैसे, । अरु "यथास्वमङ्गं तथा। तस्मादेनां नहिनस्ति" (जैसे अपना अंग, तिस इसको नाश करता नहीं) अर्थात् जैसे अपना (स्त्री का) स्तनादिरूप अंग अपने स्वरूपसे अभिन्नताको पायाहै तैसेही अभिन्नताकोपावत है । तिस हेतुसे सो गर्भ इस माताको, पिटकादि शरीरविषे उत्पन्नहुये व्रण (फोड़ा रूप ग्रन्थीविशेष) वत् नाश (पीड़ा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सा भावयित्री भावयितव्या भवति। तं स्त्री गर्भं बिभर्ति। सोऽग्र एव कुमारं जन्मनोऽग्रेऽधिभावयति। स यत् कुमारं जन्मनोऽग्रेऽधिभावयति। आत्मानमेव तद्भावय-त्येषां लोकानां सन्तत्या एवं सन्तताहीमे लोकास्तदस्य द्वितीयं जन्म ३। २६॥

करता नहीं, ताते स्तनादि अपने अंगोंवत् आत्मभावको पाया है, ताते सो रेत माताको बाधाकरता नहीं। अरु "साऽस्यैतमात्मानमत्रगतंभवति" (सो इसके इस आत्माको यहां प्रवेश को जानके पालन करेहै) अर्थात् सो गर्भिणी ऐसे इस अन्न-रूप भर्त्ता के इस (वीर्यरूप) आत्माको यहां उदर विषे प्रवेशको पाया जानके पालन करेहै। अर्थात् गर्भ से विरुद्ध भोजना-दिकों के परित्याग को अरु गर्भ के अनुकूल भोजनादिकों के उपयोगको करे है॥ "गर्भइव सुभृतो गर्भिणीभिः"॥ २। २५॥

हे सौम्य! "सा भावयित्री भावयितव्या भवति" (सो पा-लन करनेवाली रक्षाकरनेको योग्य होती है) अर्थात् सो [सो गर्भिणी तिस गर्भरूप भर्त्ताका भी रक्षण करती है ताते सो भर्त्ता करके रक्षाकरने योग्यहै, इसप्रकार कहते हैं] गर्भरूप भर्त्ता के स्वरूपकी पालन करनेवाली गर्भिणी भर्त्ताकरके रक्षाकरनेयोग्य होती है! अरु जिसकरके लोकविषे उपकारके प्रतिउपकार किये विना किसीका किसी से भी सम्बन्ध संभवे नहीं तिसकरके सो गर्भिणी भर्त्ताकरके रक्षण करने योग्य है "तं स्त्री गर्भं बिभर्ति" (तिस गर्भको स्त्री धारण करेहै) अर्थात्। अरु तिस गर्भको स्त्री जन्मसे पूर्व उक्त गर्भधारण के विधानसे धारण करे है। अरु "सोऽग्र एव कुमारं जन्मनोऽग्रेऽधिभावयति" (सो जन्मसे पूर्वही कुमारको अरु जन्म से पीछे कुमारको पालनकरेहै) अर्थात् सो पिता जन्मसेपूर्वही उत्पन्नहोनहार बालकको पालनकरेहै। अरु "स यत् कुमारं जन्मनोऽग्रेऽधिभावयति, आत्मानमेव तद्भाव-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोऽस्याऽयमात्मा पुण्येभ्यः कर्म्मेभ्यःप्रतिधीयते। अथास्याऽयमितर आत्मा कृतकृत्यो वयोगतः प्रैति। स इतः प्रयन्नेव पुनर्जायते। तदस्य तृतीयं जन्म। तदुक्तमृषिणा ४। २७॥

यति" {सो जिस कुमारकी जन्मसे पूर्व रक्षा करे है अरु जन्मसे पीछे उत्पन्नहुये कुमारको जातकर्मादिकों से पालन करे है सो अपनेआपकोही पालनकरे है} अर्थात् पिताका आत्मा (शरीर) ही पुत्ररूपसे जन्मताहै। अरु तैसे "पतिर्जाया प्रविशति इत्यादि" पिता जो है सो गर्भरूप होयके जायारूप माताविषे प्रवेशकरता है तिस जायाविषे पुनः नवीन होयके दशम मासविषे जन्मताहै, यह वाक्यकहाहै। प्र०। किसअर्थ अपनेको पुत्ररूपसे उपजायके पालनकरे है,। तहां कहते हैं, "एषां लोकानां सन्तत्या एवंसन्ततारामे लोकस्तदस्याद्वितीयं जन्म" {इन लोकोंकी सन्तति के अर्थ (पालन करे है) जाते यह लोक प्रबन्धरूप करके वर्त्तते हैं, सो इसका द्वितीय जन्महै} अर्थात् इन पुत्रपौत्रादिरूप लोकोंकी सन्तति (अविच्छेद) के अर्थ पालनकरेहै। अरु जो पुत्रके उत्पादनादिकों को न करे तो यह लोक विच्छेदको पावेंगे। अरु जिस करके वे ये लोक पुत्रके उत्पत्त्यादि कर्म करके अविच्छेदसेही प्रबन्ध {अर्थात् पुत्रादिकों की उत्पत्त्यादि कर्मविषे विच्छेद न होय तिस संकेत} रूप करके वर्त्तते हैं, ताते तिनके अविच्छेदार्थ पुत्रकी उत्पत्त्यादि कर्म कर्त्तव्य है, मोक्षार्थ नहीं। अरु कुमाररूप से माता के उदरसे जो निकसना है सो रेतरूप की अपेक्षा से इस संसारी पुरुषका द्वितीय जन्म (द्वितीय अवस्था की प्रकटता) प्रसिद्ध है ३। २६॥

हेसौम्य! "सोऽस्याऽयमात्मा पुण्येभ्यःकर्म्मेभ्यः प्रतिधीयते" {इसका सो यह आत्मा पुण्यकर्म के अर्थ स्थापनकियाहै} अर्थात् इसपिताका सो यह पुत्ररूप आत्मा शास्त्रोक्त पुण्यकर्म के अर्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(कर्म्मोंके सम्पादनार्थ) स्थापनकियाहै, अर्थात् पिताको जो कर्म कर्त्तव्यहैं तिनके करने के अर्थ पिताके स्थानापन्न (पुत्रको) स्थापन करनाहै। तैसेही बृहदारण्यक उपनिषद्विषे सम्पत्तिनाम कर्मविद्या के प्रकरणविषे "पित्रानुशिष्टोऽहं ब्रह्माहं यज्ञोऽहं इत्यादि" पिताकरके शिक्षितहुआ, मैं ब्रह्माहूं, मैं यज्ञहूं, इत्यादि रूपको पावता है। इसप्रकार कहा है॥ "अथाऽस्याऽयमितर आत्मा कृतकृत्योवयोगतःप्रैति" (पश्चात् इसका यह अन्य आत्मा कृतकृत्यहुआ मरताहै) अर्थात्, पश्चात् पुत्रविषे भारको स्थापन करके इसपुत्रका यह जो पितारूप अन्यआत्माहै सो कृतकृत्यहुआ (तीनों ऋणरूप कर्त्तव्य से मुक्तहुआ) अरु आयुके पूर्णहुये मरताहै "सइतः प्रयन्नेव पुनर्जायते तदस्य तृतीयंजन्म, तदुक्तमृषिणा" (सो इससे शरीरको परित्याग करताहुआही पुनःजन्मता है सो इसका तृतीय जन्म है, सो ब्राह्मणभाग कहेहैं) अर्थात् सो इसलोकसे शरीरको परित्याग करताहुआही तृण जलौका (जोंक) वत् कर्म्मों करके रचित अन्यदेहको ग्रहण करताहुआ पुनः जन्मताहै। मरणको पायके जो (कर्मानुसार) प्राप्तहोने योग्यहै सो इसपुरुषका तृतीयजन्म (तृतीयावस्थाकी प्रकटता) है॥ ननु, संसार को करनेवाले पिता से रेतरूप करके प्रथम जन्म कहा। तिसहीका माताके उदरसे कुमाररूप करके प्रकट होना, द्वितीय जन्मकहा। अरु तिसही के तृतीय जन्मके कहने को योग्यहुये मरणको प्राप्तहुये पिताका जो जन्म सो तृतीय जन्म है, ऐसा कैसे कहते हो (तहां सिद्धान्ती कहताहै) कि यह दोष नहीं क्योंकि पिता अरु पुत्रकी एकताको कहनी इच्छित है नाते, सो पुत्रभी अपने पुत्रविषे अपना भार स्थापित करके यहांसे देहको त्यागताहुआही पितावत् पुनः जन्मको पावता है नाते पुत्रकाही तृतीयजन्म कहा है ऐसे जानना, अन्य (पिता के) ठिकाने कथनकिया सो जन्म अन्य (पुत्रके) विषयमेंकथन किया होताहै, इस प्रकार से श्रुति माननी है, क्योंकि पिता अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गर्भेनुसन्नन्वेषामवेदमहं देवानाजनिमानिविश्वाः।
शतंमापुरआयसीररक्षन्नधः श्येनोजवसानिरदीयमिति
गर्भएवैतच्छयानोवामदेवएवमुवाच ५ । २८ ॥

पुत्रकी एकता है ताते । इस प्रकार तीनअवस्था की प्रकटता करके संसारको पावताहुआ (जन्ममरणरूप बन्धनविषे आरूढ गाढ़बंधपाया) सर्वलोक संसार समुद्रविषे पतनको पाया है। सो किसी प्रकार से भी येनकेन अवस्थाविषे श्रुतिकरके प्रतिपादित आत्मा को जानता है तबही संसारके सर्व बन्धनों से मुक्त हुआ कृतकृत्य होवेहै । सो यह वस्तुका तत्व मन्त्रविषे भी कहा है । इस प्रकार अग्रिम वाक्य विषे यह ब्राह्मणभाग कहताहै ४।२७॥

हे सौम्य ! [यहां यह अर्थ है कि वाक् अरु अग्न्यादिकन के शरीरग्रहणरूप जन्म कहे, तिस करके उपलक्षित सर्व संसार भी वाकादिक करण अरु तिनके अधिष्ठाता देवतादिकोंके संघात रूप लिंग शरीरकोही है, परन्तु असंग अरु निष्पाप मुझको नहीं। इस करके पदार्थ के विवेकपूर्वक आत्मा का ज्ञान कहा । यद्वा सर्वज्ञ आत्मासेही इनके जन्म हैं, इसप्रकार इनके जन्मके हेतुरूप मूलकारण आत्माको मैं जानताहौं । यहां यह भावहै कि यद्यपि गर्भविषे श्रवणादिरूप ज्ञानकी सामग्री नहीं, तथापि पूर्व जन्मविषे किये श्रवणादिरूप सामग्रीके वशसे ही प्रतिबन्ध की निवृत्तिके हुये भी गर्भविषे ज्ञानकी उत्पत्ति सम्भवेहै] "गर्भेनुसन्नन्वेषामवेदमहं देवाना जनिमानि विश्वाः" (गर्भस्थानविषेही हुआ मैं इनदेवताओंके सर्व जन्मोंको अहो जानताहौं) अर्थात् माताके गर्भस्थानविषेही स्थितहुआ, अनेक जन्मान्तरकी परमशुद्ध शुभ भावनाके पर्यायके वशते । अर्थात् अनेक जन्मों में किये किंचित् किंचित् आत्मविचारके संस्कारएकत्रहोय दृढ़ता अरु वृद्धिको पावतेहैं अरु तिनके प्रभाव से कर्मादिकोंके संस्कार अतिहत पुरुषार्थ होते हैं, तब उस निर्विक्षेपहुये अन्तःकरणमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जन्म जन्मान्तरोंके किये आत्माके श्रवणादि किये ज्ञानके संस्कारोंकी तीव्रसंवेदनके होने से गर्भादि अवस्थाविषे स्वतः ही ज्ञानस्फुरणहो आवताहै "अनेकजन्मसंसिद्धस्ततोयातिपरांगतिम्" इत्यादि प्रमाण से। जैसे सोयेहुये पुरुषके स्वप्न में चलने के संस्कारों के तीव्र संवेग होनेसे वो निद्रामेंही उठके चलदेता है तैसेही अनेक जन्मों में किये आत्माके श्रवणादि ज्ञानके संस्कार एकत्रहोय। तीव्रसंवेग (उत्थान) कोपावतेहैं तबगर्भादिस्थानावस्थामें स्वतःज्ञानका स्फुरणहो आवताहै। अरु स्वप्नवालेपुरुषका जो निद्रामें गमनहै सो अज्ञानजन्यहै ताते उसको अपनी गमन क्रियाका ज्ञाननहीं, अरु यहां गर्भस्थ विद्वान्को जो आत्मस्वरूप ज्ञानका स्फुरणहै सो श्रवणादि ज्ञानके संस्कारजन्य है ताते सर्व अवस्थाविषे यथार्थही है। ॥ मैं इनवाक् अरु अग्न्यादिदेवताओं के जन्मोंको जानताहौं यह आश्चर्य्यहै, जो। देवताओंके जन्मकीभी मुझको ज्ञातहै, "शतं मा पुर आयसीररक्षन्नधःश्येनो जवासा निरदीयमिति" (मुझको अनेक लोहमयीपुरिया रक्षाकरतीहुई, अधो श्येन पक्षिवत् आत्मज्ञानके किये सामर्थ्य से निकला है) अर्थात् मुझको अनेक लोहमयीवत् भेदनकरनेको अयोग्य शरीररूपी पुरिया रक्षाकरतीहुई। अर्थात् जैसे पक्षीको लोहमयी पींजरा बन्धनकरताहै। तैसे विनाआयुके पूर्णहुये किसीप्रकारसे भी नाशको प्राप्तहोवै नहीं तातेलोहमयी यह शरीररूपी पुरिया मुझको बन्धन करतीहुई,। मैं संसारपाश (जाल) से निकसनेकरके अधोमुख (अन्तरमुख) देखताहुआ श्येन (शिकरा वा बाज पक्षीविशेष) पक्षीवत् आत्मज्ञानके किये सामर्थ्य से। अविद्यात्मक संसार वा अनात्म अभिमानरूपा। जालको भेदनकरके निकलाहुआहौं॥। यह गर्भस्थविद्वान् का विचार कथनहै कि मैं जालको भेदनकरके निकलाहौं ताते यह निश्चय है कि शरीर के त्यागसे संसारकीनिवृत्ति न होके सम्यक् आत्मज्ञान होनेके समकालही संसारपाशकी सकारण अशेषनिवृत्तिहै। "गर्भ एवैतच्छ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स एवं विद्वानस्माच्छरीरभेदादूर्ध्वं उत्क्रम्यामुष्मिन् स्वर्गे लोके सर्वान् कामानाप्त्वाऽमृतः समभवत् । समभवत् ६ । २९ ॥ इति चतुर्थखंडः ॥

इति ऐतरेयोपनिषद्गतद्वितीयोध्यायः अंतत्सत् ॥

यातो वामदेव एवमुवाच " ६ गर्भविषेही स्थितहुआ वामदेवऋषि यह इसप्रकार कहताहुआ; अर्थात् इसरीतिसे अहो (आश्चर्यहै) जो गर्भविषेही सोया (स्थितहुआ) वामदेवऋषि यह उक्तप्रकार का अनुभव प्रकटकरताहुआ॥-॥ यह आत्मज्ञानकी अचिंत्य अपार महिमाहै जो गर्भस्थादि किसीअवस्थामेंभी सम्यक् ज्ञानहोतेही , वाम , कहिये तत्पदके वाच्य ईश्वर से विपरीत त्वंपदकावाच्य, अरु , देव , कहिये बुद्धिआदिक सर्वकाप्रकाशक, ऐसा जो शरीर प्राण मन बुद्धि इन्द्रियादिक संघात विशिष्ट चैतन्यरूप वामदेव ऋषि सो अपने लक्ष्यसाक्षीआत्मा के सम्यक् अनुभवसे गर्भ में ही संसाररूप जालका भेदन करता है॥-॥ ५ । २८ ।

हेसौम्य ! "सएवं विद्वानस्माच्छरीरभेदादूर्ध्वं उत्क्रम्यामुष्मिन् स्वर्गेलोके सर्वान् कामानाप्त्वाऽमृतः समभवत् । समभवत् " ६ सो ऐसे जानताहुआ इस शरीरके भेदसे निकलके इस स्वर्ग लोकविषे सर्वकामों को पायकै अमृत होताहुआ, (अमृत,होता हुआ) अर्थात् सो, [ज्ञानको अव्यभिचारी होनेकरके फलवान्ता- के जनावनेकेअर्थ वामदेवने फलपाया, इसप्रकार कहनेको "स- एवं विद्वान् " सो इसप्रकार जाननेवाला, (यहवाक्यहै, तिसका व्याख्यान करते हैं] वामदेवऋषि उक्त आत्माको उक्तप्रकार जानताहुआ इस शरीरके भेदसे, अर्थात् अ विद्याकरके कल्पित (ताते भ्रान्तिमात्र) अरु लोहके पिंजरेवत् (दृढ़) अरु भेदन करनेको अयोग्य, अरु जन्म मरणादि सहस्रा धि अनर्थोंकरके व्याप्त शरीररूप बन्धन के, परमात्मा के ज्ञानरू प अमृत के यो से जनित सामर्थ्य के किये भेदसे । (अर्थात् शरी रोत्पत्तिके यो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अविद्याके विनाशते शरीरके विनाशहुये, अर्थात् अविद्याके अशेष नाशहुये शरीर के रहतेही विद्वान्की दृष्टिमें शरीर का अभाव है क्योंकि स्वप्नशरीरवत् भ्रान्तिमात्र है ताते। । ऊर्द्ध परमार्थरूप हुआ, अधोभावरूप संसारसे निकसाहुआ, ज्ञानकरके प्रकाशित निर्मल शुद्ध सर्वात्मभावको प्राप्तहुआ इस उक्तप्रकार के अजर अमर अमृत [इस स्वर्गविषे मनुष्य देहादिक के भावको छोड़ि के स्वरूपभावसेही स्थित होताहुआ, इसप्रकार कहते हैं] अभय सर्वज्ञ अपूर्व (अकारण) अनपरं (अकार्य)। अर्थात्, परावर, कारणकार्य भावरहित। अनन्त अबाह्य प्रज्ञान अमृत एकरस स्वस्वरूप भूत स्वर्गलोक विषे, निर्वाणको प्राप्तहुये दीपकवत्, प्राप्तहोताहुआ।। अर्थात् सामान्य उष्मालक्षणवाला जो सर्वत्र व्याप्तअग्निहै सो तेलवर्त्ती आदिक उपाधिके सम्बन्धमें विशेष दीपकभावसे प्रकटहोताहै अरु जब तेलवर्त्तीरूप उपाधिको भस्म करके निर्वाणहोताहै तब विशेषभावको त्यागके अपने सामान्य-रूपको प्राप्तहोताहै, तैसेही सामान्यज्ञानस्वरूप सर्वव्यापि चैतन्य परमात्मा प्राण अन्तःकरण इन्द्रियों के संघातरूपलिङ्ग शरीररूप उपाधि साथमिल विशेष जीवभावको प्राप्तहुआहै सो जब अपने सामान्य सर्वात्म चैतन्यस्वरूपकोजानताहै तब लिङ्गरूपवर्त्ती अरु कर्म्म संस्काररूप तेलको "ज्ञानाग्निसर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा" इत्यादि प्रमाणसे, भस्मकर अनहुई उपाधिसे मुक्तहुआ ,अर्थात् आकाशादि भूत भौतिक कार्यरूप उपाधिहै तिनसर्व का कारण एक अद्वैत आत्माही है, अरु कारणसे कार्यकी पृथक् सत्ता के अभावसे कार्य कारणरूपही है ताते अविद्याकरके कल्पित जो आत्माविषे उपाधिसो वास्तव विचारसे न होनेकरके अनहुईहीहै, तिस उपाधिसे मुक्तहुआ अपने सामान्य सर्वात्म चैतन्य भावको प्राप्तहोताहै। ॥ आत्मज्ञानकरके पूर्व प्राप्तकामवालाहोनेसे जीव-नाहुआही सर्वकामोंको प्राप्तहोके अमृतहोताहुआ।अर्थात् सर्वका कारण सर्वरूपआत्मा तिसकी सम्यक्प्राप्तिसे सर्वकीप्राप्तिहोतीहै

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ ऐतरेय उपनिषद्गत तृतीयोध्यायः

हरिः ॐ ॥ कोऽयमात्मेति वयमुपास्महे । कतरःस आत्मा । येन वा रूपं पश्यति । येन वा शब्दं शृणोति । येन वा गन्धानाजिघ्रति । येन वाचं व्याकरोति । येन वा स्वाद्दु चास्वाद्दु च विजानाति ॥ १ । ३० ॥

ताते आप्तज्ञानी विद्वान्को प्राप्तकामकहते हैं, अर्थात् "इहैवसर्वेप्र विलीयन्तिकामा" इत्यादिप्रमाणसे पुरुषकोसर्वात्मभावकीप्राप्ति सेही सर्वकामना अभावहोती है, अरु कामनाके अभावहुए जीवते ही अमृतहोताहै "यदा सर्व्वे प्रमुच्यन्ते कामायेऽस्यहृदिश्रिताः, अथ मर्त्योऽमृतोभवत्यत्र ब्रह्मसमश्नुते" इत्यादि प्रमाणसे। अमृत होता हुआ, यहां दो वार जो कथनहै सो फल सहित अरु बामदेव के उदाहरण सहित आत्मज्ञानकी परिसमाप्ति के दर्शनार्थ है ॥-॥ [अर्थात् बामदेवके उदाहरण से सिद्धहुआ कि आत्मविषयक क्रिया श्रवणादिकके संस्कार निष्फल न होयके जन्मान्तर में भी मोक्षकरनेवाले होते हैं, ताते विवेकी मुमुक्षु पुरुष करके आत्मविषयक श्रवणादि अवश्यकरने योग्यहैं ॥ ६ । २० ॥

इति श्रीऐतरेयोपनिषद्गतद्वितीयाध्यायभाषाभाष्य समाप्तम् ॥

अथ ऐतरेयोपनिषद्गततृतीयाध्याय भाषाभाष्यंप्रारभ्यते ॥

हे सौम्य ! [पूर्व के द्वितीयाध्यायबिषे ज्ञानोत्पत्तिके अर्थ तीन जन्मके निरूपणसे वैराग्यको निरूपणकिया । अरु पदार्थ के शोधन विना केवल वैराग्यमात्रसेही ज्ञानोत्पत्तिहोवे नहीं, याते पदार्थ के शोधन पूर्वक वाक्यार्थ के कहनेको तृतीय अध्यायहै । इसअभिप्रायसे पदार्थके शोधनबिषे अधिकारीको देखावतेहुये वाक्यको प्रकट करते हैं,] वामदेवादिक आचार्योंकी परम्परासे श्रुतिकरके प्रकाशितहुई, अरु ब्रह्मवेत्ताओंकी सभाबिषे अति प्रसिद्ध ब्रह्मविद्यारूप साधनके किये सर्वात्मभावरूप फलकी प्राप्तिको जानते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुए आधुनिक ब्राह्मणरूप मुमुक्षु ब्रह्मकी जिज्ञासावाले, अरु जीव भावपर्यन्त अनित्यसाधनरूप संसार से निकसनेकी इच्छावाले होयके विचारकरतसंते परस्पर प्रश्नकरतेहुए। प्र०। किसप्रकार पूछतेहुए, [विचारके प्रकारकोही वाक्यके अन्वयसे स्पष्ट करने को पूछताहै] तहां कहतेहैं, "कोयमात्मेति वयमुपास्महे कतरः स आत्मा" ? यह आत्माहै,हम उपासनाकरें कौन सो आत्माहै, कौन प्रसिद्ध सो आत्माहै ? अर्थात् जिस आत्माको "यह आत्मा है" इसप्रकार साक्षात् हम उपासनाकरें कौन सो आत्माहै? ऐसे अरु जिस आत्माको यह आत्माहै, इसप्रकार साक्षात् उपासना करताहुआ वामदेवऋषि अमृत होताहुआ। तिसही आत्मा को हम भी उपासनाकरें। कौन प्रसिद्ध सो आत्मा है। इसप्रकार परस्पर प्रश्न करतेहुये। इस रीतिसे [ननु, भूतोंके मध्य प्रकटता के अर्थ जो प्रवेशको पायाहै सो आत्माहै, इस निर्द्धारके सम्भव से विचारका असंभवहै, यह आशंकाकरके, ऐसे हुये भी प्राण अरु आत्मा दोनोंको प्रविष्ट होनेकरके स्मरण किये होनेसे। [अर्थात् प्राण अरु आत्मा दोनों के प्रवेशका स्मरण होने से]। तिनका निर्द्धारणनहीं है, इस प्रकार कहनेको दोनोंका प्रविष्टपना स्मरण किया,ऐसे कहते हैं] जिज्ञासापूर्वक परस्पर प्रश्न करनेवाले उन ब्राह्मणों को पूर्व कथन किये जो देहविषे प्रवेशको प्राप्तहुये प्राण अरु आत्मा तिनको विषय करनेवाली श्रवणसे जनित अनुभव से जन्य संस्कारसे उदयहुई स्मृति उपजतीहुई "तं प्रपादास्यां प्रापद्यत ब्रह्मेमं पुरुषं स एतमेवसीमानं विदार्य्य तयाद्वारा प्रापद्यत एतमेव पुरुषं," तिस इसपुरुष शरीरके अर्थ दोनों पादोंके अर्थों से ब्रह्मा (ब्रह्मरूप प्राण) प्रवेशको पायाहै, सो इसही मस्तककी सीमाको विदीर्ण करके तिस द्वारसे प्राप्त होताहुआ,। इस श्रुति करके इसही पुरुष के अर्थ दोनों ब्रह्म परस्पर की प्रतिकूलता करके प्रवेश करतेहुये, इसप्रकार की स्मृति होती हुई। अरु वो प्राण अरु परब्रह्म इसपिंडके आत्मरूपहैं। [तिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसप्रकार विचारविषे अपेक्षित दोनों आत्माकी स्मृतिको कहके अब विचारको कहते हैं] दोनोंविषे एकआत्मा उपासना करने के योग्य उचित है । जो यहां उपासना करनेको योग्य है सो निश्चय करके कौन आत्माहै, इसप्रकार विशेष निर्द्धारणार्थ पुनः विचारकरते परस्परमें प्रश्न करतेहुये । पुनः [ऐसे विचारके कियेहुये अतिशय शुद्ध अन्तःकरणवाले होनेसे, तिनको पादके अग्रसे प्रवेशको प्राप्तहुये प्राणविषे करणपने करके अनात्माका निश्चय होताहुआ, अरु मस्तक से प्रवेशको प्राप्तहुये आत्माविषे उपलब्धापनेकरके आत्मताका निश्चय होताहुआ, ऐसा कहाहै, इसका अर्थ यहहै कि तिनको विचारके स्थान प्राण अरु आत्मा इनदोनों को विषय करनेवाली, एकविषे करणपनेरूप अरु दूसरे विषे उपलब्धापनेरूप प्रकारसे विशेष (विलक्षण) रूप बुद्धि होतीहुई,] उन विचार करनेवालों को विशेष विचारके आश्रय को विषय करनेवाली बुद्धि होतीहुई । कैसे होतीहुई कि, इस पिंडविषे अनेक भेद करके भिन्न करण से दोनों वस्तु प्रतीतहोवे हैं । अरु जिस करके प्रतीत होवेहैं, अरु जो एक अन्य करणों करके जानेहुयें विषयों की स्मृतिके संघात से प्रतीत होवे है तहां प्रथम जिस करके प्रतीत होवेहै सो आत्मा होनेको योग्य नहीं । किस करके [इसप्रकार वर्णन करके तिस अर्थको श्रुतियोंके अक्षरों से आरूढ (दृढ) करनेको वादी प्रश्न करता है] प्रतीत होताहै ? । [तहां अब सिद्धान्ती प्रश्नकिये अर्थको श्रुति करके दृढ़ करताहै] कहते हैं " येन वा रूपं पश्यति, येनवाशब्दं शृणोति, येन वा गन्धानाजिघ्रति, येनवाचंव्याकरोति, येन वा स्वादु चास्वादुच बिजानाति " ? जिस चक्षु करके प्रसिद्धरूपको देखता है, जिस श्रोत्रकरके शब्दको श्रवण करता है, जिस घ्राण करके गन्धोंको सूंघताहै, जिस वाणीरूप करण करके नामरूपादिकों को कहता है, जिस (रसनेंद्रिय) करकेस्वादु अरु अस्वादु को जानता है ? । १ ॥ ३० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदेतद्धृदयं मनश्चैतत्। संज्ञानमाज्ञानं। विज्ञानं। प्रज्ञानं। मेधा। दृष्टिर्धृतिर्म्मतिर्म्मनीषा। ज्यूतिः। स्मृतिः। संकल्पः। क्रतुरसुः। कामोवशइति। सर्व्वाण्येवैतानि प्रज्ञानस्य नामधेयानिभवन्ति २। ३१॥

हे सौम्य, सो [ननु चक्षुरादि करणोंको करणपने के होने से भी पादके अग्रद्वारा प्रवेशको प्राप्तहुये प्राणकी करणरूपता के विषे क्या आया, इसप्रकार वादी शंकाकरता है [एक करण अनेक प्रकारके भेदको क्योंपायाहै। [तहां प्राणकीही करणता को कहने को प्रथम हृदय अरु मन शब्द के वाच्यकी चक्षुरादिकों के भेदसे भिन्नताको कहते हैं [तहां कहते हैं, कि "प्रजानां रेतो हृदयं हृदयस्थंरेतोमनो मनसा सृष्टा आपश्चवरुणश्च। हृदयान्मनो मनसश्चन्द्रमा तदेवैतद्धृदयं मनश्चैकमेतदनेकधा" प्रजाका रेतकहिये सारभूत वीर्य्य, हृदयहै, अरु हृदयविषे स्थित रेत [सारभूतकार्य] मनहै, अरु मनकरके जल अरु वरुण सृजेहैं, हृदय से मन अरु मनसे चन्द्रमा होते हैं। इत्यादि प्रकार श्रुतिविषे "यदेतद्धृदयं मनश्चैतत्" [जो यह हृदय अरु यह मन अर्थात् जो यह पूर्व कथन किया हृदय अरु मनरूप करण सोई यह तुझकरके प्रश्न कियाहुआ करण एकहुआ चक्षुरादिकोंके भेद करके अनेक प्रकारसे भेदको पायाहै। इस एकही चक्षुरूप हुये अन्तःकरण करके रूपको देखताहै, श्रोत्ररूपहुये अन्तःकरणकरके शब्दको श्रवण करताहै, घ्राणरूपहुये अन्तःकरणकरके गन्धलेता है अरु वाक्रूपहुये अन्तःकरण करके बोलताहै। अरु जिह्वा वा रसनारूपहुये अन्तःकरणकरके स्वादोंको लेताहै। आपही विकल्परूप मनकरके विकल्प करताहै। बुद्धिरूपकरके निश्चयको करताहै॥ ताते सर्वकरण अरु विषयरूप व्यापारवाला एक यह करण उपलब्धाको सर्व्व उपलब्धिके अर्थ होताहै। तैसेही कौषीतकि उपनिषद्विषे "प्रज्ञयात्मानं समारुह्य वाचा सर्व्वाणि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नामान्याप्नोति प्रज्ञया चक्षुः समारुह्य चक्षुषा सर्व्वाणि रूपाण्या प्नोति, इत्यादि" प्रज्ञा (बुद्धि) से वाचाके विषे आरूढ़ होय के वाचासे सर्वनामों को पावताहै, प्रज्ञासे चक्षु के विषे आरूढ़ होयके चक्षुकरके सर्व्वरूपों को पावता है, । इत्यादि वाक्यों करके कहा है । अरु बृहदारण्यउपनिषद् विषे „ मनसा ह्येव पश्यति मनसाशृणोति हृदयेन हि रूपाणि जानाति, इत्यादि„ मनसेही देखताहै,मनसे श्रवणकरताहै,हृदयसेही रूपको जानता है,। इत्यादि वाक्योंसे कहाहै । ताते हृदय अरु मनशब्दके वाच्यको सर्व उपलब्धि (ज्ञान) का कारणपना प्रसिद्धहै। अरुतिस हृदयरूप प्राणहै। तहां „ यो वै प्राणः सा प्रज्ञा या वै प्रज्ञा स प्राण इतिब्राह्मणम् „ जो प्रसिद्धप्राणहै सो प्रज्ञाहै, जो प्रसिद्धप्रज्ञाहै सो प्राण है,। यह ब्राह्मण प्रमाणहै । अरु "करण संहतिरूपश्च प्राण इति वो चाम" करणों का समूहरूप प्राणहै, ऐसा हम कहते हैं,। यह प्राण संवादादिकविषे स्थित वाक्यके वलसे प्राणकी करण समूह रूपता जानिये है । अतएव जो पादके अग्रभाग से शरीरविषे प्रवेशको पाया प्राणादिक करणहै, यह उपलब्धिका कारण होने करके ब्रह्महै । इसप्रकार कहते हैं । परन्तु यह करणका समूह रूप वस्तु गुणरूप होनेसे ब्रह्मभावसे उपासना करने योग्य (जानने योग्य) आत्मा होनेको योग्य नहीं । [तब तैसे (ब्रह्मकरके [जाननेयोग्य कौनहै, । तहां कहते हैं ।] परिशेषसे जिस उपलब्धा की उपलब्ध्यर्थ इसहृदय अरु मनरूप करणकी अग्रिमकहने की वृत्तियां हैं, सो उपलब्धा उपासना करने योग्य । अर्थात् जानने के योग्य हमाराआत्मा होनेको योग्यहै, इसप्रकार वो मुमुक्षुनिश्चय करतेहुये । प्रज्ञानरूप ["येन वै पश्यति" जिसकरके देखताहै इत्यादि लेके "मनश्चैतत्" यह मन, यहां पर्यन्त प्राणके करणपने करके अनात्मतारूप अर्थको कहके "संज्ञानं" संज्ञान, इत्यादि लेके "वश" यहां पर्यन्त जो वाक्य हैं सो अन्तःकरण की वृत्तिद्वारा तिससे भिन्न उपलब्धाके लखावने के अर्थ इति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकार कहते हैं] तिस अन्तःकरणरूप उपाधिविषे स्थित उपलब्धास्वरूप ब्रह्मकी उपलब्धि (ज्ञान) के अर्थ जो बाहर भीतर वर्त्तमान विषयनको विषयकरनेवाली अन्तःकरणकी वृत्तियां हैं सो यह वृत्तियां कहिये हैं "संज्ञानमाज्ञानं, विज्ञानं, प्रज्ञानं मेधा, दृष्टि धृतिर्म्मतिर्म्मनीषा, ज्यूतिः, स्मृतिः, सङ्कल्पः क्रतुरसुः, कामो, वश इति। सर्वाण्येवैतानि प्रज्ञानस्य नामधेयानि भवन्ति" "संज्ञान, आज्ञान, विज्ञान, प्रज्ञान, मेधा, दृष्टि, धृति, मति, मनीषा, ज्यूति, स्मृति, सङ्कल्प, क्रतु, असु, काम, वश, यह सर्वही प्रज्ञान के नाम होते हैं; अर्थात् ,संज्ञान, सम्यक् ज्ञप्तिरूप चैतन्यभाव। ,आज्ञान, सर्वओरसे ज्ञप्तिरूप ईश्वरभाव। ,विज्ञान, चौंसठ ६४ कलादिकों से जन्य लौकिक ज्ञान। ,प्रज्ञान, तत्कालीन भावरूप ज्ञान। ,मेधा, ग्रन्थधारणविषे शक्ति। ,दृष्टि, इन्द्रियोंद्वारा सर्वविषयों का ज्ञान। ,धृति, शिथिलहुये देहेन्द्रियोंका पुनः सावधान होना जिसकरके होय, अर्थात् जिसकरके धृतिसे शरीर वहन (चलना फिरनादि) करे हैं, ऐसा कहते हैं, तिसही करके ऐसा जो धारण सो धृति। ,मति, मनन। ,मनीषा, मननजन्य स्वतन्त्रता, वा मनका नियामकपना। ,ज्यूति, चित्तका रोगादि निमित्तसे दुःखित होनेपना। ,स्मृति, स्मरण। ,सङ्कल्प, रूपादिकोंका शुक्ल, कृष्णादि भावसे कल्पना करना। ,क्रतु, निश्चय। ,असु, प्राणनादि जीवन क्रियाके निमित्तवाली वृत्ति। ,काम, असंभीपस्थ विषयों की इच्छारूपा तृष्णा। ,वश, स्त्रीसंगादिकों की इच्छा। वा मनका अवश न रहना। ॥ इत्यादिक [इत्यादि वृत्तियां सर्व प्रज्ञान के नाम होते हैं, इसप्रकार अग्रिमवाक्यसे अन्वय है] यह अन्तःकरण की वृत्तियां हैं, सो चैतन्यमात्र रूप उपलब्धा की उपलब्धिके अर्थ होनेसे शुद्ध प्रज्ञानरूप असु नामरूपसे रहित ब्रह्म को जिसकरके उपाधिरूप है, एतदर्थ तिस उपाधि से जनित प्राणनाममय संज्ञादिक यह सर्व प्रज्ञप्तिमात्र प्रज्ञानके नाम होते हैं। साक्षात्स्वरूपसेही नहीं। तैसे "प्राणश्चेव प्राणानाम भवति"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणको करताहुआही प्राणनाम होताहै । [यहां यह कथन किया होताहै कि संज्ञानादिक जो शब्द हैं सो प्रकाशरूप वस्तुके वाची हैं, अरु जड़रूप अन्तःकरणकी वृत्तियों को साक्षात् प्रकाशरूपता संभवे नहीं, एतदर्थ प्रकाशरूप वस्तुविषे अध्यायसेही इन वृत्तियों की प्रकाशरूपताहै, इसप्रकार कहतेहुये अधिष्ठानरूप भिन्नप्रकाश को जनावते सन्ते तात्पर्य से प्रकाशरूप प्रज्ञानकेही नाम होतेहैं यहां संज्ञानादिक जड़ वृत्तियों को अनित्य होने करके प्रकाशरूप वस्तुके वाचक संज्ञानादिक नामवान्पने के असंभव से तिनसे भिन्न कोई एक प्रकाशरूप है, इसप्रकार कहा । तैसे संज्ञानादिक शब्दोंकीवाच्यताके कथनसे सो प्रज्ञानविज्ञानरूप चैतन्यहै यहांही प्राज्ञतारूप वृत्ति होती नहीं, इसप्रकार कहा, क्योंकि तिसकी अनेक रूपता करके तिस तिस वृत्तिगत तिस तिस नामवान्ता करके सर्वनामवान्ता के असंभव होने से । अरु "प्रज्ञान के" इस एक वचनका असंभव होनेसे । याते "येन वा पश्यति" जिस करके प्रसिद्ध देखता है, इत्यादि लेके "प्रज्ञानस्य नामधेयानि भवन्ति" प्रज्ञानके नाम होते हैं, यहां पर्यन्त जो वाक्य हैं तिनकरके सर्व करण अरु तिनकी वृत्तियों से भिन्न स्वप्रकाशरूप सर्वका साक्षी । सर्व से पृथक् । सर्व वृत्तियों विषे । जलकी सर्व तरंगों में सूर्य्यके प्रकाशवत् । अनुगत, । सर्व के धर्म कर्मादिकों से असंग । एक आत्मा शोधन किया] इत्यादि रूप वाक्य प्रमाण हैं २ । ३१ ॥

हे सौम्य, "एष ब्रह्मैष इन्द्र एष प्रजापतिरेते सर्वे देवा इमानिच पञ्चमहाभूतानि" । "यह ब्रह्म है, यह इन्द्र है, यह प्रजापति है, यह सर्वदेव, अरु पञ्च महाभूत हैं," अर्थात् सो [इसप्रकार शोधन किये आत्मा के शरीर शरीर के प्रति नानाभाव के निवारणार्थ "एष ब्रह्म" यह ब्रह्महै, । इत्यादि वाक्य हैं तिनका व्याख्यान करते हैं] यह प्रज्ञानरूप आत्मा ब्रह्म है । मुख्य ब्रह्मभावको आगे कथन किया है ताते यहां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एष ब्रह्मैष इन्द्र एष प्रजापतिरेते सर्वे देवा इमानि च पञ्च महाभूतानि । पृथिवी वायुराकाशआपोज्यो-तींषीत्येतानीमानि च क्षुद्रमिश्राणीव बीजानीतराणि। चेतराणि चाण्डजानि च। जरायुजानि च स्वेदजानि चोद्भिज्जानि। चाश्वा गावः पुरुषा हस्तिनो यत् कि-ञ्चेदं प्राणिजङ्गमं च पतत्रि च यच्च स्थावरम् । सर्वं तत् प्रज्ञानेत्रम्। प्रज्ञाने प्रतिष्ठितम्। प्रज्ञानेत्रो लोकः। प्रज्ञा प्रतिष्ठिता प्रज्ञानं ब्रह्म ३ । ३२ ॥

शब्द करके सर्व शरीरबिषे स्थित प्राण अरु प्रज्ञारूप आत्मा, जल भेदगत सूर्यके प्रतिबिम्बवत् अन्तःकरणरूपउपाधिबिषे प्रवेश की पाया समष्टि लिङ्ग शरीरोंका अभिमानी हिरण्यगर्भरूप प्राण प्रज्ञानात्मारूप अपरब्रह्मको कहते हैं) अरु यहही इन्द्रहै, क्योंकि इसको देखताहुआ,, इस श्रुतिउक्त गुणका योगहै ताते, वा दे-वताओं का राजाहै ताते। अरु यह प्रजापतिहै। जो प्रथम उत्पन्न हुआ शरीरवालाहै अरु जिसके मुखादि भेदोंद्वारा अग्न्यादिलो-कपाल उपजे हैं, सो प्रजापति, वा प्रजासहित सर्व्वका नायक प्रजापति। अरु यह अग्न्यादि सर्व्व देवता यही है। अरु पञ्च महाभूतभी यही है॥ तहां "पृथिवी वायुराकाश आपोज्योतींषी येतानीमानिचक्षुद्रमिश्राणीव बीजानीतराणि" "पृथिवी वायु आकाश जल तेज, यह अल्पजन्तुओं करके मिश्रित, अरु बीज अरु इतर" अर्थात् यह सर्व्व शरीरों के उपादानरूप, पृथिवी, वायु, आकाश, जल, तेज, रूप यह अन्न अरु अन्नादि भावरूप पञ्चमहाभूत यहही है। अरु अल्प जन्तुओं करके मिश्रित सर्पा-दिक भी यही है। अरु बीज (कारण) अरु इतर (कार्य) रूपभी यही है। अरु "चेतराणि चाण्डजानि च, जरायुजानि च, स्वेदजानि चोद्भिज्जानि, चाश्वा गावः पुरुषा हस्तिनो यत्किञ्चेदं प्राणि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जङ्गमं च पतत्रि च यच्च स्थावरम्" (अरु इतर, अण्डज, जरायुज, स्वेदज, उद्भिज्ज, अश्व, गऊ, मनुष्य, हस्ति अरु जो कुछ भी इन प्राणियोंकासमूह जङ्गम, पक्षी, स्थावर है ; अर्थात् अन्य स्थावर जङ्गम भेदसे कथन किये अण्डज (पक्षी आदिक) अरु जरायुज (मनुष्यादिक) अरु स्वेदज (जूंआं आदिक) अरु उद्भिज्ज (वृक्षादि) अश्व गौ मनुष्य हस्ति अरु अन्य जो यह कुछ भी प्राणियोंका समूह जो दोनों पादों से चलताहै ऐसा जङ्गम अरु जो आकाशमें उड़नेवाले पक्षी पतत्रि, अरु जो स्थावर(वृक्षादिअचल) हैं"सर्वं तत् प्रज्ञानेत्रम्, प्रज्ञाने प्रतिष्ठितम्, प्रज्ञानेत्रोलोकः, प्रज्ञा प्रतिष्ठिता, प्रज्ञानं ब्रह्म " (सो सर्व प्रज्ञारूप नेत्रवालाहै, [प्रज्ञा नाम प्रज्ञप्तिकाहै, सो ब्रह्मही है तिसकरके जो सत्ताको प्राप्तहोता है सो नेत्रकहिये है, अर्थात् प्रज्ञारूपहैं नेत्र जिनका ऐसा जो जगत् सो प्रज्ञानेत्र कहते हैं] प्रज्ञानबिषेस्थितहै, प्रज्ञानरूप नेत्रवालालोक है, प्रज्ञा प्रतिष्ठाहै प्रज्ञानब्रह्महै ; अर्थात् सो सर्वओरसे प्रज्ञारूपनेत्रवालाहै, अरु प्रज्ञानरूप ब्रह्मबिषे, उत्पत्ति, स्थिति, अरु लय, तीनोंकालबिषे स्थितहै (प्रज्ञाके आश्रितहै) ताते प्रज्ञारूपनेत्रवाला लोकहै, वा प्रज्ञानरूप चक्षुवाला सर्वलोकहै । एतदर्थ प्रज्ञा (ब्रह्म) सर्वलोककी (जगत्की) प्रतिष्ठा (आश्रय) है । ताते [इस प्रकार होनेसे प्रज्ञानरूप प्रत्यगात्मा का निर्विशेषपना आदिक प्रसिद्ध है, इसप्रकार कहते हैं । प्रज्ञानकोही अवशेषरूप होनेसे अरु परमार्थसे सत्य होनेसे, यहां यह अर्थ बनता है] प्रज्ञान (प्रत्यगात्मा) ब्रह्महै । सो [अब ब्रह्मशब्द के अर्थको कहते हैं ब्रह्म सर्व्व उपाधिके भेदसे रहित, सत्, निरंजन, निर्मल, निष्क्रिय, शान्त, एक, अद्वैत, अरु "नेतिनेति" इस श्रुति प्रमाण सर्व्व विशेषके अभावपूर्वक जाननेयोग्य, सर्व्वशब्द अरु वृत्तिका अविषयहै । सो अत्यन्त शुद्ध प्रज्ञा (माया) रूप उपाधिके सम्बन्धसे सर्व्वज्ञ ईश्वर नामसे कहाजाताहै, अरु सर्व्व साधारण अव्याकृतरूप जगत् के बीजका प्रवर्त्तक नियन्ता है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स एतेनप्रज्ञेनात्मनाऽस्माल्लोकादुत्क्रम्यामुष्मिन्-स्वर्गलोके सर्वान्कामानाऽप्त्वाऽमृतः समभवत्। समभवत् इत्योम् ४। ३३॥

इति ऐतरेयारण्यके षष्ठोध्यायः॥

उपनिषत्सुतृतीयोध्यायः समाप्तः ॐतत्सत्॥

से अन्तर्यामी नामसे कहा जाताहै। अरु सोई जगत् की वीजरूप समष्टि बुद्धिविषे आत्मापने के अभिमानरूप उपाधिवाला हुआ हिरण्यगर्भ नामसे कहाजाता है। अरु सोई ब्रह्मांडरूप उपाधिवालाहुआ विराट् नामवाला होताहै। अरु तिस विराट् के भीतर प्रकटहुये प्रथम शरीररूप उपाधिवालाहुआ प्रजापतिनामसे कहाजाता है। अरु तिस ब्रह्मांडसे उत्पन्नहुये अग्नि आदिक उपाधिवालाहुआ अग्न्यादि देवताओं के नामसे कहाजाता है। अरु तैसेही विशेष (व्यष्टि) शरीररूप उपाधिविषे तिसतिस नामसे ही कहाजाता है कि जिसजिस उपाधिवाला होता है। इसप्रकार ब्रह्मासे आदि लेके स्तंभपर्यन्त सर्व भूतों विषे तिस तिस नामरूपका लाभ होताहै। सोई एक ब्रह्म सर्व उपाधिके भेदसे भिन्नहुआ, सर्व प्राणियों करके अरु तार्किकों करके सर्व प्रकारसे जानते हैं, अरु अनेक प्रकारसे विकल्पों का विषय करते हैं। इस अर्थविषे "एतमेकेवदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्रजापतिम्। इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतमित्याद्या स्मृतिः" इस आत्माको कईएक अग्नि कहते हैं, कई एक मनुष्य कहते हैं, कईएक प्रजापति कहते हैं, कईएक मनु कहते हैं, कई एक इन्द्र, कई एक प्राण, कईएक ब्रह्म, कईएक नित्य शाश्वत कहते हैं, इत्यादि यह स्मृति प्रमाणहै ३। ३२॥

हे सौम्य! [अब इस प्रकारके ब्रह्मआत्माके अभेद ज्ञाता के अर्थ फलको कहनेको "स एतेनेत्यादि" सो इस करके, इत्यादि रूप श्रुतिवाक्यहै, तहां एकवचनांत "स" इसशब्दसे प्रसंग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषे प्राप्तहुये "कोऽयमात्मेति" कौन यह आत्माहै, । इसप्रकार विचारनेवाले बहुत मुमुक्षुओं के स्मरण की अयोग्यता से । अरु आधुनिक विद्वान् के "स" इस भूतकालके वाची शब्द करके स्मरणकी अयोग्यता से पूर्वाध्यायविषे उक्तवामदेव स्मरण करतेहैं, इसप्रकार कहते हैं] जिसही प्रज्ञानरूप से ब्रह्मके जाननेवाले पूर्व अमृत होतेहुये, अरु तिसही प्रज्ञानरूपसे उक्त प्रकारके ब्रह्मको जाननेवाला वामदेव वा अन्य विद्वान् सोअमृत होताहुआ "स एतेन प्रज्ञेनाऽत्मनाऽस्माल्लोकादुत्क्रम्यामुष्मिन् स्वर्गेलोके सर्वान् कामानाप्त्वाऽमृतः समभवत् । समभवत् इत्योम्" ।सो इस ही प्रज्ञानरूपसे इसलोकसे उत्क्रमणकरके उस स्वर्गलोकविषे सर्वकामोंको प्राप्तहोके अमृतहोताहुआ,होताहुआ ऐसे ॐ हैं; अर्थात् वामदेवादि उक्त प्रकारब्रह्मको जाननेवाला विद्वान् सो अमृत होताहुआ । तैसे यह आधुनिक विद्वान् भी इसही प्रज्ञानरूप से ब्रह्मको जानके इसलोकसे उत्क्रमण करके (देहात्मभावको त्यागकरके) उस ब्रह्मरूप स्वर्ग लोकविषे सर्व कामोंको पायके अमृत होताहुआ, इसप्रकार [उक्त आत्मतत्व को अंगीकाररूप अर्थके वाचीॐकार से अपने अनुभव के प्रकट करनेकरके । अरु "ॐकारश्चाथशब्दश्चद्वावेतौब्रह्मणःपुरा । कण्ठं भित्त्वा विनिर्य्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभाविति" ओंकार अरु अथ यह दोनों शब्द पूर्व ब्रह्माके कंठको भेदनकरके प्रकटहुये हैं एतदर्थ यह दोनों मांगलिक हैं,। इस स्मृतिके प्रमाण से, ओंकार से ब्रह्मात्माके स्मरणरूप मंगलके करनेके अर्थ अन्तविषे "ॐ" इसप्रकार कथन कियाहै ४ । ३३ ॥

इति श्रीऐतरेयोपनिषद्ततृतीयाध्यायभाषाभाष्यंसमाप्तमशुभम्॥

इति श्री स्वामी ब्रह्मानन्दसरस्वतीजी का अतिअल्पज्ञ
शिष्य यमुनाशङ्करनाम्ना नागरब्राह्मणविरचित
यह ऐतरेयउपनिषद्का भाषाभाष्य समाप्तम् ॥
हरिः ॐ तत्सत् ब्रह्मार्पणमस्तु शुभम् भवतु ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस मतबे में जितने उपनिषद् छपे हैं उनमें से कुछ नीचे लिखे हैं ॥

कठवल्ली उपनिषद् भा० टी० सहित की० =)॥

इस उपनिषद् में गुरु शिष्यसंवाद द्वारा श्रीवाजश्रवा ऋषीश्वर के पुत्र श्रीउद्दालक ऋषिने जिसप्रकार से विश्वजित् नामायज्ञ की और उसीयज्ञ के दक्षिणा में ऋत्विजादि ब्राह्मणों को अपरिमित धन व गौओंको दान दिया और उसी यज्ञ में अपने परम प्रिय पुत्र ज्ञानशिरोमणि श्रीनचिकेता को मृत्यु के अर्थ दानदिया और नचिकेता यमालयमें गया और मृत्यु ने सावधान पूजन किया और परस्पर वार्त्तालाप हुआ वह सब वृत्त संक्षिप्त मंत्रों में वर्णित है ॥

माण्डूक्योपनिषद् भा० टी०सहित की० ॥=)

ॐ कारस्वरूप का प्रतिपादन व ब्रह्मकी आत्माकी अभेदताका निरूपण आगम, यवैताख्य, अद्वैताख्य व अलातशान्ताख्य इन चार प्रकरणों में निरूपण कियागया है अवलोकन करने योग्य है ॥

तैत्तिरीयउपनिषद् भा० टी० सहित की० ।=)॥

यह उपनिषद् यजुर्वेद सम्बन्धी है-इसउपनिषद् में श्रीसच्चिदानन्द घन परब्रह्म परमेश्वर निराकार से साकार रूप होने का प्रतिपादन है ॥

ईशावास्योपनिषद् भा० टी० सहित की० -)॥

जिसे वाजसनेयीसंहिता भी कहते हैं-इस उपनिषद् में यावत् नाम रूपात्मक जगद्भाव है सब ईशही में घटित कियाहै ॥

केनोपनिषद् भा० टी० सहित की० =)

अब इसवार अत्यन्त शुद्धतापूर्वक सरलभाषा तिलक से युक्तमुद्रित की जाती है- इसमें आत्मविद्योपदेश श्रीप्रजापतिद्वारा वर्णन कियागयाहै ॥

छांदोग्यउपनिषद् भा० टी० सहित की० ॥=)॥

इस उपनिषद् में इन्द्रियादिकों के संघात विषे स्थित प्राणों की ज्येष्ठताका व श्रेष्ठताका एक आख्यायिका द्वारा प्रतिपादन है-मंत्रों के नीचे सरल देशभाषा में सुन्दर तिलक कियागया है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

केनोपनिषद

सामवेदीय तलवकार शाखीय की भाषा टीका

सरल मध्य देशी हिन्दी भाषा में

कोलाख्य नगर निवासी पञ्चोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मणने पण्डितराजशास्त्री मिहिरचन्द जी की सहायतासे अनुवाद कर प्रकाशित किया

सर्व्वलोकजनहितार्थ

तीसरीबार

लखनऊ

मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छपी

सन् १९०६ ई०॥

इस किताब की रजिस्ट्री दफा १८ व १९ ऐक्ट २५ सन् १८६७ ई० नं० ८५ पर हुई है इसकारण बिला इजाजत इस मतबे के कोई छापने का इरादा न करे॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ/२

ॐ

परमात्मनेनमः

एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म

विज्ञापनम्

सर्व्वसत्यावलम्बी सज्जन विचारशील
पाठकजनों पर विदित हो

कि यह सामवेदकी तलवकारनाम्नी शाखा सम्बन्धी तलवकार वा केन नामा आत्मविज्ञानप्रकाशक उपनिषद्है 'तिसबिषे 'ब्रह्मा, वा प्रजापतिने अपनेपुत्र वा शिष्य मुमुक्षुको आत्मविद्याका उपदेश किया है, तिसके ४ चार खण्डहैं तहाँ प्रथम खण्डमें शिष्यके प्रश्नानुसार प्रश्न शब्दानुरूपसे उत्तर उपदेश अरु आत्माको अविषयत्वपूर्व्वक ब्रह्मत्व अरु तद्व्यतिरिक्त को ब्रह्मत्वका निराकरण उपदेश किया है। द्वितीय खण्ड में शिष्यकी सम्यक् परीक्षा के अर्थ शिष्यसे प्रश्न पूर्व्वक उपदेश किया है। तृतीय खण्डमें देवताओं के असत्य अहंकार निवारणार्थ सर्व्वशक्तिमान् परमात्मा का यक्ष [पूजनीय] रूपसे देवताओं का प्रत्यक्ष होना अरु स्वशक्ति तृणमें स्थापितकर तिसके द्वारा देवताओंका असत्य अभिमान दूरकरना अरु सर्व्वोत्तम उमानाम्नी ब्रह्मविद्या, देवीरूप से दर्शनाभिलाषी इन्द्रको साक्षात् प्रकट दर्शन दे ब्रह्मबोध करना, सो उपदेश कियाहै। चतुर्थखण्ड में ब्रह्म के साक्षात् दर्शन स्पर्शकी महिमा से अग्नि, वायु, इन्द्र, इन तीन देवताओं का सर्वमें श्रेष्ठत्व, अरु अधिदैव अध्यात्म उभयरीत्या ब्रह्मोपदेश अरु ब्रह्म प्राप्ति होनेकी योग्यताके अर्थ साधनों की सूचना प्रशंसा अरु फलवाद सहित समाप्ति का उपदेश कियाहै॥ इसप्रकार इस उपनिषद् बिषे निर्विशेष अरु सविशेष उभय रीति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से ब्रह्मोपदेश प्रकाशितहैं अरु इसके चारों खण्डोंमें ३४ मन्त्रहैं ॥ १ प्रथमखण्डमें ८ ॥—॥ २ द्वितीयखण्डमें ५ ॥ ३ तृतीयखण्डमें १२ ॥—॥ ४ चतुर्थखण्ड में ९ ॥ इसप्रकार यह उभय रीतिसे साक्षात् ब्रह्मबोध उपदेशात्मक सर्व्वोत्तम ब्रह्मविद्या उपनिषद् है । तिसको तैसाही अनुभव करके, व्यवहार सत्ता, से सर्व्व आत्मनिष्ठों का सेवक मुझ कोलाख्य नगर निवासी पञ्चोली यमुनाशंकर नाम नागरब्राह्मण ने अपने श्रीमहाराज गुरुकी कृपाबल अरु पण्डितराज श्रीशास्त्री मिहिरचन्द्रजीकीसहायतासे किञ्चित् श्रीशंकराचार्य्यजीके भाष्याश्रय अपनी अल्प बुद्ध्यनुसार इसकी भाषाटीकाकियाहै । तिसकेलेखकी अनुक्रमणिका निम्नलिखित है

अनुक्रमणिका

(१)—प्रथम मूल मन्त्र तिसपर पदच्छेद की रेखा अरु अन्वयांक । ४ । २ । ३ । । १ ।

(२)—मूल के नीचे क्रम से अन्वय के पद अरु ऊपर अन्वयांक । १ २ ३ ४ ५

(३)—अन्वय पद के नीचे क्रम से भाषा में अर्थ सहित अन्वयांक । १ २ ३ ४ ५

(४)—भाषामें भावार्थ सहित मूल पदान्वय अक्षरार्थ के—

तिसके चिह्न

[ ]—इस चिह्नान्तर अन्वय पद अरुअक्षरार्थमें शेष विशेष के पद अरु भावार्थ में पदों के अर्थ ।

" "—इस चिह्नान्तरमें मूल मन्त्रके वाक्य ।

< >—इस चिह्नान्तर में वाक्यके क्रम पदसे ।

' '—इस चिह्नान्तर में अन्य श्रुति आदिकों के प्रमाण वाक्य अरु तिसके अग्रोपरि ।

* ० | × + ❀

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इत्यादि चिह्न हैं सो उन प्रमाण वाक्यों के स्थान बोधार्थ हैं अरु इन्हीं चिह्नों को पृष्ठकी अन्तिम पंक्ति के नीचे बनाय तिसके नाम स्थान अध्याय संख्या सूचित हैं ॥

इसप्रकार इस टीकाकी रचना भई है। तिसको अरु ईशावास्य उपनिषद् की टीकाको प्रथम श्रीमती ठकुरानी महताब कुँवरि रईस कोटिला परगनह फ़िरोज़ाबाद ज़िलअ़ आगरा ने मुद्रित कराय लोकोपकार में प्रकाशित किया। अब उन्हीं ग्रन्थों को शुद्ध कराय परमधार्मिक श्रीमान् मुन्शी नवलकिशोरजी साहबने अपने श्री लक्ष्मणपुरी के महायन्त्रालय में मुद्रित कराय प्रकाशित कियाहै। अरु अवतार सिद्धिनामा ग्रन्थ, श्री रामगीता की टीका, जो इस टीकाकारकरके रचित है तिसको भी उक्त महाशय ने मुद्रित कराय प्रकाशित कियाहै सो अस्तु ॥

ॐम् ॥

शान्तिपाठ ॥

ॐमाप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक् प्राणं चक्षुः श्रोत्रमथो बलमिन्द्रियाणि च सर्व्वाणि सर्व्वब्रह्मोपनिषदमाह ब्रह्म निराकुर्य्यान् मामाब्रह्म निराकरोदनिराकरण मस्त्वनिराकरणंमे अस्तु तदात्मनि निरतेय उपनिषद् सुधर्म्मास्तेमयिसन्तु ते मयिसन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

इति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐम्

सामशाखीयतलवकारकेनोपनिषद्॥

ॐपरमात्मनेनमः॥

अथ गुरुशिष्यके संवाद द्वारा इस केनउपनिषद् की भाषा-टीका प्रारम्भकरतेहैं। तहांयहउपनिषद् प्रजापतिअरुउनकेशिष्य अथवा अन्य वेदाचार्य अरु उनके शिष्य के संवादद्वाराही है परन्तु मूलश्रुतिमें प्रश्नोत्तरकर्त्ता के नाम कहेनहीं परन्तु उपदेशात्मक वाक्य विना परस्परके संवादके बने नहीं एतदर्थ उपदेश सम्बन्धके लिये आचार्य्य अरु जिज्ञासु के संवाद का सम्बन्ध भाष्यकाराचार्य्योंने प्रकट कियाहै तिसवेदाचार्य संवादको गुरु शिष्यके संवाद द्वारा भाषाऽनुवाद करते हैं॥

प्रश्न॥ शिष्यउवाच। हे गुरो हेभगवन्!यह जो मन आदि इन्द्रियां हैं तिनको जो कदापि विषयोंसे हटावते भी हैं तथापि वो बलात्कारसे अनिवारितहुए अपने २ विषयोंकी ओरही जाती हैं सो अपनी २ स्वतन्त्रता से जाती हैं अथवा किसी प्रेरककी प्रेरणा से सो आप कृपाकरके कहिये॥

उत्तर॥ श्रीगुरुरुवाच। हे शिष्य!तेरे इस प्रश्न के ऊपर वेद का कहाहुआ कहतेहैं। सामवेदकी तलवकारशाखाका केननाम उपनिषद्है तिसबिषे भी प्रजापतिसे जिज्ञासुका यही प्रश्नहै कि जो तूने हमारेप्रति कियाहै सोतिसका उत्तर जो प्रजापतिने कहाहै सो श्रवणकरो। हे शिष्य! कोई एक वैराग्यवान् आत्मजिज्ञासु को आत्मज्ञानविषयक श्रद्धा उत्पन्नभई तब आचार्य प्रजापति अथवा अन्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ के समीप प्राप्तहोय प्रश्न करताभया क्योंकि विना आचार्यके उस महासूक्ष्म प्रत्यगात्म विषयक सम्यग्ज्ञान स्वबुद्धिकी कल्पना तर्कादिकोंसे होतीनहीं। तथाच।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"नैषातर्केणमतिरायनेया"। एतदर्थ श्रुतिने नियम किया है कि "आचार्य्यवान् पुरुषोवेद"। "आचार्य्याद्धैव विद्याविदिता साधिष्टं प्रापदिति"। "तद्विद्धिप्रणिपातेन"। इत्यादि श्रुतिस्मृतिके प्रमाण से आचार्य्यद्वाराही आत्मज्ञान होताहै अरु सम्यक् आत्मज्ञानसेही अशेष संसार की निवृत्तिपूर्वक अजर अमर अभय अक्रिय शिव शान्त परमानन्द अपने आपकी प्राप्ति सिद्धहै "नान्यःपन्था विमुक्तये"। ऐसाअनेक श्रुतियोंके प्रमाणसे निश्चयकरके श्रुतिकेही "तद्विज्ञानार्थं सगुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियम्ब्रह्मनिष्ठम्"। इस प्रेरणा लक्षणवाक्यके प्रमाणसे विधिवत् समिधादिद्रव्यले गुरु शरणजायके प्रश्नकरताभया। तबतिसको जोआचार्य ने उपदेश किया सोई अब तेरे अर्थ कहते हैं॥

ॐ केनेषितं पतति प्रेषितं मनः केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः केनेषितां वाचमिमां वदन्ति चक्षुः श्रोत्रं क उ देवो युनक्ति १॥

[पदान्वयः]

केन इषितं प्रेषितं मनः पतति केन युक्तः प्राणः प्रथमः प्रैति केन इषितां इमां वाचं वदन्ति चक्षुः श्रोत्रं कः उ देवः युनक्ति १॥

[पदार्थ]

किसकरके इच्छाकियाहुआ [तथा] प्रेरितहुआ मन गिरताहै (अरु) किसकरके प्रेरितहुआ प्राण (जो) प्रथम है (सो) प्रवृत्तहोताहै (अरु) किसकरके प्रेरित यह वाणी उच्चारणकरे है (अरु) चक्षु श्रोत्रको कौन सा देव प्रेरणाकरे है १॥

[भावार्थ]

जिज्ञासुरुवाच। "केनेषितं पतति प्रेषितं मनः" (केन इषितं प्रेषितं मनः पतति) [किसकरके १। इच्छाकिया हुआ २। (तथा) प्रेरितहुआ ३। मन ४। गिरता है ५।] अर्थात् किसप्रेरक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके इच्छाकियाहुआ तथा सत्ताकरके प्रेरितभया । जैसे सूर्यकी प्रकाशरूप सत्तापायके सर्व अपने २ व्यापारों में प्रवृत्त होते हैं तैसे । यह मन किसकी इच्छा अरु प्रेरणाकरके प्रेरित हुआ विषयों प्रति जाता है क्योंकि जिस विषय को अनिष्ट जानके यह मन हटता है तथापि पुनः अनिवार्य्य हुआ बलात्कार से उसही विषयकी ओर जाता है । जैसे स्वामीकी इच्छा अरु प्रेरणासे प्रेरित भृत्यविनाही स्वइच्छा के युद्धादिक्रिया में प्रवृत्त होताहै तैसे ॥ अरु हे गुरो!मन जो है सो विषयोंसे निवृत्त होत संतेभी अनिवार्य्यहुआ अपनी स्वतन्त्रताकरके विषयोंप्रति जाता है उसका पृथक् प्रेरक कोई नहीं जो इसका पृथक् प्रेरक निवारक होता तो यह निवारण किया विषयों प्रति न जाता, ताते "केनेषितं" इत्यादि प्रश्न बनता नहीं ॥ गुरुरुवाच ॥ हे शिष्य!जो कदापि अपने विषयों में प्रवृत्ति निवृत्तिके अर्थ मन स्वतन्त्र है तो किसीको भी अनिष्टका चिन्तन बने नहीं परन्तु जिस विषयका फल अत्यन्त दुःखहै अरु तिसको मन जानताहै तथापि तिससे निवारण होत सन्ते भी उसही विषयकी ओर जाताहै सो किसी प्रेरककरके प्रेरितही जाताहै । ताते मन आदि अपने २ व्यापार बिषे स्वतन्त्र नहीं, यह सर्वकार्य कारणात्मक जड़हैं एतदर्थइन सर्वका प्रेरक प्रकाशक सर्व से पृथक् चैतन्य आत्मा है, ताते आचार्यसे जिज्ञासुका "केनेषितं" इत्यादि प्रश्नयुक्तही है । अथा "केन[६] प्राणः प्रथमः प्रैति[१०] युक्तः" [केन[६] युक्तः प्राणः प्रथमः प्रैति[१०]] [किसकरके ६ । प्रेरितहुआ ७ । प्राण ८ । जो प्रथम ९ । प्रवृत्त होता है १० ।] अर्थात् हे भगवन्! किस प्रेरक करके प्रेरित यह प्राणवायु जो इस संघातमें प्रथम (मुख्य) है सो पांच किंवा भेदको पायसर्वक्रियामें प्रवृत्तहोताहै । अरु । "के[११] नेषितां[१२] वाचं[१४] इमां[१३] वदन्ति[१५] " [केन[११] इषितां[१२] इमां[१३] वाचं[१४] वदन्ति[१५]] [किस करके ११ । प्रेरित १२ । यह १३ । वाणी १४ । उच्चारण करे १५ ।] अर्थात् किस इच्छुककरके प्रेरित यह वाणी जोशब्द लक्षण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पाहै तिसको लोक उच्चारण करे हैं। यहां वाचा उपलक्षण कर-
सर्व कर्मेन्द्रियों का ग्रहण है जो किसकी इच्छाकरके प्रेरित
सर्व कर्मेन्द्रियां अपने २ कार्य्यको करती हैं। अरु "चक्षुः
श्रोत्रम् कः उ देवो युनक्ति"। [चक्षुः श्रोत्रम् कः उ देवः युन-
क्ति] [चक्षु १६। अरु श्रोत्रको १७। कौन १८। सा १९।
२०प्रेरणाकरताहै २१।] अर्थात् चक्षु श्रोत्रको कौनसा स्वयं
काशदेव विषयोंप्रति प्रेरणा करेहै। यहां चक्षु श्रोत्र उपलक्षण
रके सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियोंका ग्रहणहै, कि कौनसा चैतन्यदेव इन
क्षु आदि इन्द्रियोंको रूपादि विषयोंप्रति प्रेरणा करता है १॥
त्पर्य यहहै कि अनात्मा अरु जड़रूप इन मन प्राण इन्द्रियादि
थूल सूक्ष्म सर्व संघातको सत्तादेके अपने २ व्यापारविषे वर-
नेवाला प्रेरक इन सर्वके पृथक् महासूक्ष्म चैतन्य आत्मा
न्तर होतसन्ते सर्व के धर्म्मसे रहित असंग सत्तारूप स्थित
तिस अपने आप प्रत्यगात्माके सम्यक् बोध विना अन्यउपाय
शेष दुःख निवृत्तिका कोई नहीं, एतदर्थ मुमुक्षु पुरुषको ब्रह्म-
ष्ठ आचार्य्यको प्राप्तहोय सर्वके प्रेरक तत्त्वान्तर प्रत्यगात्माके
थार्थ प्रश्नकर्त्तव्यहै। *"तद्विज्ञानार्थं सगुरुमेवाभिगच्छेत्"।
त्यादि श्रुतिप्रमाणसे। इसप्रकारजब जिज्ञासुने अपने आचार्य
जापतिसे प्रश्नकिया तबआचार्य्य प्रजापति उत्तरदेता हुआ॥

श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद्वाचो ह वाचं स उ
प्राणस्य प्राणः चक्षुषश्चक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेत्या
स्माल्लोकादमृता भवन्ति २॥

[पदान्वयः]

यत् श्रोत्रस्य श्रोत्रं [यत्] मनसः मनः [यत्] वाचः ह
वाचं सः उ प्राणस्य प्राणः चक्षुषः चक्षुः अतिमुच्य धीराः अस्मात्
लोकात् प्रेत्य अमृता भवन्ति २॥

* यहमुंडकउपनिषद्के द्वितीय मुंडककी १२ वीं श्रुति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[पदार्थ]

जो[1] श्रोत्रका श्रोत्र[2] है [जो] मनका मन[3] है [जो] वाक्[4] की[5] भी वाक् है सो[6] ई[7] [8] प्राण[9] का प्राण[10] है [सोई] चक्षु[11] का चक्षु[12] है भलीप्रकार[13] त्यागके धीर[14] पुरुष इस[15] लोक[16] से छूटके[17] अमर[18] होते[19] [20] हैं[21]॥

[भावार्थ]

श्रीगुरुरुवाच ॥ हे शिष्य! पूर्व कहेप्रकार जब जिज्ञासुने प्रजापति के प्रति प्रश्नकिया तब उसको उपदेशका अधिकारीजान प्रजापति कहतेहुए ॥ प्रजापतिरुवाच ॥ हे प्रियदर्शन! तुमने जो प्रश्नकिया कि इस मन प्राण वाचा चक्षु श्रोत्रादिकोंका प्रकाशक प्रेरकदेव कौनहै, सो। "श्रोत्रस्य[1]। श्रोत्रं[2]। मनसो[3]। मनो[4]। यद्[5]। वाचो[6]। ह[7] वाचं[8]"। { यत् श्रोत्रस्य[1] श्रोत्रं[2] [यत्] मनसः[3] मनः[4] [यत्] वाचः[6] ह[7] वाचं[8] } [जो १। श्रोत्रका २। श्रोत्रहै ३। जो मनका ४। मनहै ५। जो वाक्की ६। भी ७। वाक् है ८।] अर्थात् जो शब्द विषयके ग्रहणार्थ श्रोत्र इन्द्रियरूप करण सो श्रोत्र तिस श्रोत्र इन्द्रियद्वारा शब्दविषयका अनुभवकर्त्ता श्रोत्रस्थ अरुश्रोत्रसेभिन्न (घटाकाशवत्) प्रकाशक प्रेरकको श्रोत्रका श्रोत्रकरकेकहाहै। कुछ श्रोत्रइन्द्रियकीश्रोत्र इन्द्रियनहींकहाक्यों जोसर्व विशेष्यविशेषण सेरहितकेवलबोधरूपआत्मासो श्रोत्रादि सर्व्वान्तरस्वसत्तासेसर्व का अपने अपने विषयप्रतिप्रेरकहै। तातेउसनिर्विशेष आत्माकि श्रोत्रादि विशेषताको लेके श्रोत्रका श्रोत्र इस विशेषणसे कहा है क्योंकि सर्व नाम रूपादि उपाधि से रहित महासूक्ष्म आत्म जिस जिस विषयकेसाथ मिलता है तिस तिस नामरूपसे अन्त श्रुतियों नेभी कहाहै। तथाच। + "नित्यो नित्यानाम् चेतनश्चे तनानाम्"। ताते श्रोत्रका भी श्रोत्र कहने से श्रोत्र इन्द्रियक भी श्रोत्र इन्द्रिय इस अनवस्था बोधक अर्थ को न ग्रहण कर श्रोत्रोपहित शब्दानुभवी चैतन्य आत्मा को ग्रहण करना। सौम्य! इसही प्रकार जो मनका मन है जो वाक् की भी वाक्

+ कठवल्ली उपनिषद् विषे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"सं उं प्राणस्य प्राणः चक्षुषश्चक्षुः"। (सं उं प्राणस्य प्राणः चक्षुषः चक्षुः) [सो ६। ई १०। प्राणका ११। प्राण है १२। (सोई) चक्षुका १३। चक्षु है १४।] अर्थात् जो श्रोत्र का श्रोत्र मनका मन वाक्की वाक् करके कहा है, सोई प्राणका प्राणहै चक्षुका चक्षुहै॥ हे सौम्य इसप्रकार जो "श्रोत्रस्य श्रोत्रं" इत्यादि प्रतिवचनकहनेसे श्रोत्रादि इन्द्रियोंके विषे जोशब्दादिविषयग्राहकशक्तिहै सोस्वयंज्योतिचैतन्यआत्माकीहै तिसशक्तिमान् आत्माको इन्द्रियोंकेही विषे इन्द्रियों से पृथक् साक्षात् अपना आप अनुभव करके अज्ञानजन्यजे जन्म मरण का हेतु श्रोत्रादि अनात्म विषक आत्मभाव तिसको। "अतिमुच्य धीराः"। (अतिमुच्य धीराः) [भलीप्रकार त्यागकरके १५। धीरपुरुष १६।] "प्रेत्या स्माल्लोकादमृता भवन्ति"। (अस्मात् लोकात् प्रेत्य अमृता भवन्ति) [इस १७। लोकसे १८। छूटके १९। अमर २०। होतेहैं २१।] अर्थात् इसदेह इन्द्रिय पुत्र मित्र कलत्रादि अनात्म बिषयक अहं मम भावरूप संसारसे छूटके अमरभाव को प्राप्तहोते हैं २॥

तात्पर्य। विना सर्व अनात्म एषणाके त्यागकिये कदापि अमरभावको प्राप्तहोते नहीं, ऐसा अन्य श्रुतियोंका भी प्रमाणहै। तथाच। "* न कर्म्मणानप्रजयाधनेनत्यागेनैकेअमृतत्वमानशुः, + आवृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्, × यदासर्वेप्रमुच्यन्तेकामा, ० तत्र ब्रह्मसमश्नुते,, इत्यादि। ताते हेशिष्यश्रोत्रादि सर्वेषांपृथक् सर्वका प्रकाशक आत्माहै तिसको साक्षात् अपना आप अनुभव करके श्रोत्रादि सम्पूर्ण अनात्म विषयक सर्व एषणा सहित आत्मभाव जिस बुद्धिमान्ने निःशेष त्याग कियाहै सोई पुरुष अनात्मधर्म्म जे जन्म मरणादि तिनसे छूटके अजर अमर अभय परमशान्ति (मोक्ष) भावको प्राप्तहोते हैं॥ ॐतत्सत्॥

---

* कैवल्यउ० विषे। + × ० कठवल्ली उपनिषद्विषे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न त्रेत चक्षुर्गच्छतिनवाग्गच्छतिनमनोनं विद्मो न विजानीमो । यथै तदनु शिष्या दन्य देव तादिदि तादथोअवि दिता दधि इति । शुश्रुम पूर्वेषां ये नस्तद्व्याचचक्षिरे ३ ॥

[पदान्वयः]

तत्र चक्षुः न गच्छति (तत्र) वाक् न गच्छति (तत्र) मनः न (गच्छति) [तस्मात्] न विद्मः न विजानीमः यथा एतत् अनुशिष्यात् । अन्यत् एव तत् विदितात् अथः अविदितात् अधि इति शुश्रुम पूर्वेषां ये तत् नः व्याचचक्षिरे ३ ॥

[पदार्थः]

तहां चक्षु नहीं जाते (तहां) वाणी नहीं जाती (तहां) मन नहीं (जाता) [एतदर्थ] नहीं जानते हम [अरुयहभी] नहीं जानते कि किसप्रकार इसब्रह्मका अपने शिष्योंप्रति उपदेश करें (क्योंकि) पृथक् ही है सो विदितसे (अरु) सोईब्रह्म अविदिति सेऊपर (पृथक्) है ऐसाश्रवण किया है उनपूर्वाचार्यों को (वचन) जो उसब्रह्मको हमारे प्रतिउपदेश करतेहुये ३ ॥

[भावार्थमन्त्र ३]

गुरुरुवाच ॥ हे सौम्य श्रोत्रादिकोंका श्रोत्रादि करके प्रतिपादन किया जो श्रोत्रादिकोंका अन्तरात्मा सोई निर्विशेष ब्रह्म है एतदर्थ "न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति न मनः" (तत्र चक्षुः न गच्छति (तत्र) वाग् न गच्छति (तत्र) मनः न (गच्छति)) [तहां १ । चक्षु २ । नहीं ३ । जाते ४ । (तहां) वाणी ५ । नहीं ६ । जाति ७ । (तहां) मन ८ । नहीं ९ । (जाता)] अर्थात् चक्षुके आवान्तर सत्तारूप स्थित चक्षुका प्रकाशक प्रत्यगात्मा तिसको चक्षु विषय नहीं करते । जैसे दीपक जिस स्थानको प्रकाशताहै वो स्थान दीपकको नहीं प्रकाशता, अथवा नेत्रस्थ अंजनको नेत्र विषय नहीं करते । तैसेही चक्षुके आवान्तर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुभवसत्ता चक्षुका प्रत्यगात्मा तिसको चक्षुविषय नहीं करते। इसहीप्रकार वाग् मन प्राणादि कोई भी उसको विषय नहीं करते ऐसा अन्य श्रुतियोंका भी सिद्धान्त है। तथाच "। + योमनसि तिष्ठन्मनसोन्तरोयं मनो न वेद "। इत्यादि। तथा "। + यतोवाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्य मनसा सह "। इत्यादि अनेक श्रुतियों के प्रमाणसे मन आदि सर्व्व इन्द्रियां हैं सो अपने २ विषय को विषयकरे हैं परन्तु उन सर्वका जो प्रत्यगात्माहै सोपूर्वोक्तप्रकारसे उनमन आदिकोंका बिषयनहीं एतदर्थही "।न[१०] विद्मो[११]"।{न[१०] विद्मः[११]} [नहीं १० । जानते ११ ।] अर्थात् नहीं जानते हमवो ब्रह्म कि जिसकेबिषे तुम्हारा प्रश्नहै किसप्रकारका और कैसाहै। अरु इसही कारण से "।न[१२] विजानीमो[१३] यथै[१४] तदनु[१५] शिष्यात्[१६]"।{न[१२] विजानीमः[१३] यथा[१४] एतत्[१५] अनुशिष्यात्[१६]} [हम यह भी नहीं १२। जानते कि १३। किसप्रकार १४। इस ब्रह्मका १५। अपनेशिष्यों प्रति उपदेशकरें १६।] अर्थात् इस प्रत्यगात्माको मनआदिकोंका विषय न होनेसे हम नहीं जानते कि वो ब्रह्म कैसाहै, अरु आचार्यलोक अपने शिष्योंको उपदेश कैसेकरें। जो इन्द्रिय गोचर होताहै सो अन्यके अर्थ उपदेश कियाजाताहै सो भी जाति गुण क्रिया सम्बन्ध आदि विशेष्य विशेषणयुक्तही कियाजाताहै, अरु वो ब्रह्म जाति गुण क्रिया सम्बन्ध आदि विशेष उपाधि रहित निर्विशेषहै। एतदर्थही हम नहीं जानते जो उस निर्विशेष ब्रह्मका उपदेश कैसेकरें, ताते जो जाति गुण क्रिया सम्बन्धादि विशेषताहै तिसको० "नेतिनेति" निषेधमुखद्वारा गिरायके शिष्योंको उपदेशकर लक्ष्यकरावते हैं, परन्तु निषेधमुख उपदेश का जो लक्ष्यहै तिसके ग्रहणकरने में पुरुषार्थ अधिक कर्त्तव्यहै॥

प्रश्न॥ हे गुरो जो आप आज्ञा करते हौ सो यथार्थ है जो मन इन्द्रियादिकों का विषय नहीं अरु मन इन्द्रिय आदिकों से पृथक् महासूक्ष्म सर्व्वका प्रत्यगात्मा ब्रह्महै तिसको प्रत्यक्षादि

+बृहदारण्यउपनिषद्बिषे+ऐतरेयउपनिषद्बिषे०बृहदारण्यउपनिषद्बिषे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रमाण करके जाननेको कोई भी समर्थ नहीं, परन्तु उसको वेद द्वारा जानते हैं सो जिस प्रकार आचार्य उस ब्रह्मका निषेध मुख उपदेशकर अनुभव करावते हैं सोई प्रकार आप कृपाकर कहिये॥

उत्तर॥ हे सौम्य उस निर्विशेष ब्रह्मके उपदेशार्थ वेद ऐसा कहता है कि "अन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि" (अन्यत् एव तत् विदितात् अथो अविदितात् अधि) [पृथक् ही है १८ सो १९ विदितसे २० । अरु सोई ब्रह्म २१ । अविदितसे २२ ऊपर २३ । पृथक् है अर्थात् श्रोत्रादि इन्द्रियां शब्दादिविषय श्रवणादि क्रिया मनआदि अन्तःकरण इत्यादि यावत् नामरूप क्रियात्मक सर्व कार्य्यभूत है सोई सर्व विदितहै तिस विदितसे वो महासूक्ष्म आत्मा पृथक्है ॥

प्रश्न ॥ हे प्रभो जो प्रत्यगात्मा ब्रह्म सम्पूर्ण नाम रूप क्रियात्मक कार्य्य प्रपंच से पृथक्है तो सर्वका कारण अव्याकृति जो अविदितहै सोई ब्रह्महोगा ॥

उत्तर ॥ हे शिष्य जो प्रत्यगात्मा ब्रह्म सर्व विदितसे पृथक्है सोई ब्रह्म अविदित लक्षणवान् जो सम्पूर्ण विदितका मूलकारण अव्याकृति तिससेभी ऊपर (पृथक्) है। हे सौम्य जो विदित है सोसर्व उत्पत्तिमान् कार्य्यरूपहै तातेअल्पहै अरु जो अल्पहै सो नाशवान्है*"यदल्पंतन्मर्त्यं" अरुजोनाशवान्है सोदुःखरूपहै अरु जो दुःखरूप है सो त्यागनेयोग्य है, ताते विदित से अन्य जो प्रत्यगात्मा ब्रह्म है सो त्यागसे भिन्न अत्याग है, अरु आत्मा की प्राप्तिके अर्थ अव्याकृत कारणको उपादेय (ग्रहण करने योग्य) माने तो अन्यकी प्राप्तिके अर्थ अन्यका उपादेयत्व बनेनहीं, ताते आत्माको विदित अविदितसे पृथक् कहनेकर हेयोपादेय से भी पृथक् सूचित किया है ॥

प्रश्न ॥ हे गुरो जब कि ब्रह्म हेयोपादेय से भी पृथक् है तो जिज्ञासुकी आत्मजिज्ञासा निवृत्त होती है क्योंकि जो वस्तु

* छांदोग्य उपनिषद्विषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हेयोपादेयसे रहित होती है तिसके उपादेयार्थ पुरुषार्थ व्यर्थ है ॥

उत्तर ॥ हे सौम्य जो वस्तु आत्मासे भिन्न होती है सोई हेयउपादेय होती है अरु यह जो सर्वका प्रत्यगात्मा है सोई ब्रह्म है। तथाच "। ० अयमात्माब्रह्म, ? यआत्मा अपहतपाप्मा + ! यत्साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म, × अयमात्मा सर्व्वान्तर "। इत्यादि श्रुति सिद्धान्त करके सर्व विशेष्य विशेषणसे रहित सर्व्वात्मा स्वयं ज्योतिः चैतन्यकोही ब्रह्मप्रतिपादन किया है, अरु सोई आत्मा ब्रह्म विदित अविदित हेयोपादेय से पृथक् है, ताते ब्रह्म आत्मा के अभेद प्रतिपादक तत्त्वमस्यादि वाक्य द्वारा आचार्य के उपदेश की परम्परा करके उस प्रत्यगात्मा ब्रह्मकी प्राप्ति होती है ताते आत्म जिज्ञासुकी जिज्ञासाव्यर्थ नहीं "। इति[२४]। शुश्रुम[२५]। पूर्वेषां[२६] ये[२७]। न[२९]। स्त[२८]। द्व्याचचक्षिरे[३०]" {इति[२४] शुश्रुम[२५] पूर्वेषां[२६] ये[२७] तत्[२८] नः[२९] व्याचचक्षिरे[३०]} [ऐसा २४। श्रवण किया है २५। पूर्वाचार्यों का २६ (वचन) जो आचार्य्य २७। उस ब्रह्मका २८। हमारे प्रति २९। उपदेशकरतेहुए ३०।] अर्थात् हमने श्रवणकियाहै पूर्वके ज्येष्ठ श्रेष्ठ आचार्य्योंका वचन कि जिन ब्रह्मवेत्ता आचार्य्यने उस निर्विशेष ब्रह्मका हमारे प्रति भली प्रकार उपदेशकियाहै कि ब्रह्म जो चैतन्यआत्मा है तिसकी प्राप्ति आचार्यद्वारा ब्रह्मआत्माके अभेद वाक्यों के उपदेशसे होतीहै नतु तर्कादिकोंसे। तथाच "। + नैषातर्केण मतिरापनेया, + नायमात्मा प्रवचनेन लभ्योन मेधयान बहुना श्रुतेन, ÷ न कर्म्मणा न प्रजया "। इत्यादि प्रमाण से ॥

प्रश्न ॥ हे गुरो आपने श्रुतिवाक्य करके इस अन्तरात्मा को ब्रह्मकरके प्रतिपादन किया तिसके श्रवणसे एकशंका उत्पन्न हुई कि यह आत्मा ब्रह्म कैसे होगा यह तो नामरूप क्रियावान् पाप पुण्यादिकोंका कर्त्ता दुःख सुखादिकों का भोक्ता कर्म्म उपा-

---

० मांडूक्य उ० बिषे। ? छान्दोग्यबिषे। + ! बृहदारण्यउपनिषद् बिषे। × ठवल्ली उ० बिषे। + मुण्डकउ० बिषे + कैवल्यउ० बिषे। ÷

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सनादि साधनों से ब्रह्माऽऽदि देवताओंका उपासक स्वर्गादिकों की इच्छा कर्त्ता है, ताते इस आत्मासे ब्रह्म अन्यहै क्योंकि ब्रह्म नाम रूप क्रियासे रहित अकर्त्ता अभोक्ता अकाम सर्व्व उपाधि से रहित है। ताते इस आत्मासे ब्रह्म अन्य आत्माकरके उपास्य शिव विष्णु ईश्वर इन्द्र प्राणादि ब्रह्महोने के योग्यहैं यह आत्मा ब्रह्म नहीं। तथाच "। ० द्वासुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलंस्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति" इत्यादि श्रुति अरु लौकिक प्रमाणसे भी आत्मासे ब्रह्म पृथक् है, अरु नैयायिकादिक भी आत्माको ईश्वर से पृथक् ही मानते हैं, अरु कर्म्ममीमांसादी पूर्व मीमांसक भी ऐसाही कहते हैं ताते यह आत्मा ब्रह्म नहीं ॥

उत्तर ॥ हेसौम्य इनवाक् श्रोत्रादि संघात रूप उपाधिकेसंगसे अज्ञानके आश्रय इस चैतन्य आत्माको नामरूप क्रियावान् कर्त्ता भोक्ता कामी क्रोधी आदि कहते हैं। तथाच"। * आत्मेन्द्रिय मनो युक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः" इत्यादि, जैसे घटादि उपाधिके संग से आकाशबिषे गमनागमनादि व्यापार अविचारित भासेहै परन्तु विचार दृष्टिसे देखिये तो आकाश गमनागमनादि व्यवहार रहित सदा निरुपाधि एकरस अपने आप बिषे ज्योंका त्यों है तैसेही यह आत्मा इन्द्रियादि सर्व उपाधि अरु तत्तत् धर्म्म से रहित असंग एकरस इन्द्रियादिकोंका प्रकाशक आकाशवत् ज्योंकात्यों है। तथाच"। असंगोह्ययंपुरुषः, नैलिप्यतेकर्म्मणापापकेनेति, नैलिप्यतेलोक दुःखेनबाह्य, आकाशवत्सर्वगतःसनित्यः, तैस्यभाषासर्वमिदंविभाति, अयमात्माब्रह्म, यंआत्माअपहत पाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोकः" इत्यादि अनेक श्रुतियों के प्रमाण से। अतएव हे सौम्य मन इन्द्रिय आदि रूप उपाधिकेसम्बन्धसे आत्माको कर्तृत्व भोक्तृत्व प्रतीतिमात्र है वास्तवमें अस

* मुंडक उ०बिषे १ कठ, वल्ली ३ में। २-३ बृहदारण्य अ० ६ में। ४ कठ, वल्ली ५ में। ५ कठ, वल्ली ५ में। ६ मांडूक्यमें। ७ छान्दोग्य उपनिषद् में।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्द्रियादिकों का प्रकाशक मन आदिकोंके धर्म्म से रहित मन आदिकोंका अविषय मन आदिकों के आवान्तर परम सत्तामात्र चैतन्य ज्योतिः सर्वका प्रत्यगात्माहै सोई ब्रह्महै इससे व्यतिरिक्त ब्रह्म कोई नहीं, इस निश्चय आत्मक अर्थको स्वयं श्रुति प्रकट करती है। ताते नैयायिक मीमांसकादि मतवादी जे आत्मा से व्यतिरिक्त ब्रह्मको मानने कहनेवाले हैं सो सर्व वेद से बाह्य अपनी कल्पनासे कहते हैं, ताते निरुपाधि आत्माही ब्रह्म है "नातः परमस्ति" अन्य नहीं तिसको श्रुतिवाक्यसे श्रवणकरो॥

यद्वाचानभ्युदितं येन वाग भ्युद्यते तं देवं ब्रह्म त्वं विद्धि ने दं यदि दमुपासते ४॥

[पदान्वयः]

यत् वाचा ऽनभ्युदितं येन वाग्अभ्युद्यते। तत एव ब्रह्म त्वं विद्धि न इदं यत् इदं उपासते ४॥

[पदार्थ]

जो वाणीकरके प्रकाशितनहीं होता (अरु) जिसकरके वाक् प्रकाशितहै सो ईं ब्रह्म तुम जानो नहीं यह [ब्रह्म] जिसको ये उपासते हैं ४॥

[भावार्थ]

गुरुरुवाच॥ हे सौम्य "यद्वाचाऽनभ्युदितं" (यत् वाचा अनभ्युदितं) [जो वाणीकरके प्रकाशितनहीं होता ३] अर्थात् सत्तासमान चैतन्य लक्षणात्मक वाणी से (जो वाक् जिह्वा मूलादि स्थानसे अकारादि स्वर ककारादि व्यंजनादिककी उच्चारिका कारण अरु स्वर व्यंजन मिश्रित पद रूपहोय अर्थ बोधक शब्दरूपहै। तथाच "अकारोवै सर्व्वावाक्" इत्यादि श्रुति प्रमाणसे) कहने बिषे नहीं आवता, अरु "येन वाग्भ्युद्यते" (येन वाग् अभ्युद्यते) [जिस करके ४। वाग् ५। प्रकाशितहै ६।]

८ मुण्डक में १ छान्दोग्य उपनिषद् बिषे।

CC-0: Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् जिस चैतन्य आत्माकरके वाक् प्रकाशित होतीहै कि जो वाक्ही के अवान्तरहै अरु वाक् जिसको नहीं जानती। तथाच। "। यो[२] वाचितिष्ठन्वाचोन्तरोयं वाक् न वेद "। अरु जिस निर्विशेष आत्माको वाचारूप उपाधिकी विशेषतासे वाणीकी भी वाणी करके कहाहै "। तदेव[७] ब्रह्म[८] त्वं[९] विद्धि[१०] "। { तत्[७] एव[८] ब्रह्म[९] त्वं[१०] विद्धि[११] } [सो ७। ई ८। ब्रह्म ९। तुम १०। जानो ११।] अर्थात् जिस चैतन्य प्रत्यगात्माकी सत्तासे यह शब्दलक्षणात्मक वाक् इन्द्रिय अपने व्यापार वक्तृत्वादि बिषे प्रकाशित अथवा प्रवृत्तहोती है तिसही चैतन्य आत्माको तुम ब्रह्म करके अनुभव करो "। ने[१२] दं[१३] य[१४] दि दं[१५] मुपासते[१६] "। { न[१२] इदं[१३] यत्[१४] इदं[१५] उपासते[१६] } [नहीं है १२। यह १३। (ब्रह्म) जिसको १४। ये १५। उपासते हैं १६।] अर्थात् नहीं है यह ब्रह्म कि जिस नामरूप क्रियात्मक उपाधि विशिष्टको नाना मतवादी उपासते हैं सो ४॥

हे सौम्य "। तदेव ब्रह्मत्वं विद्धि "। इस श्रुतिकरके जो कि वाक् कीभी वाक् प्रकाशक प्रत्यगात्मा निर्विशेष। चैतन्यसत्ताहै तिसको तुम ब्रह्मकरके जानो ऐसा उपदेश करके ब्रह्मसे आत्माकी अभेदता सूचितकिया परन्तु तिसबिषे जिज्ञासुको मतवादियों के वाक्यसे विपरीत भावना उत्पन्न न होय एतदर्थ। "नेदं यदिदमुपासते।" इसवाक्यकरके पूर्ववाक्यके बोधकी दृढ़ता के अर्थ पुनः कहा कि यह जो नामरूप क्रियात्मक उपाधि विशिष्ट अनात्मा सो ब्रह्म नहीं क्योंकि ब्रह्म उपाधिसे रहितहै, अरु जो सोपाधि है सो उपाधि धर्मवान् कर्त्ता भोक्ता जन्म मरणवान् आत्मा है। एतदर्थही जो मनआदि उपाधि विशिष्ट चैतन्यहै तिसको उपाधिसे पृथक् करके उपाधिका विषय न होत उपाधिका प्रकाशक स्वयंज्योतिः आत्माको ब्रह्मकरके उपदेश कियाहै, ताते श्रुति के सिद्धान्तकरके यह आत्माही ब्रह्म है इससे इतरसर्व अज्ञानियों की कल्पना है ४॥

२ बृहदारण्य विषे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतं। तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ५॥

[पदान्वयः]

यत् मनसा न मनुते येन मनः मतं आहुः। तत् एव ब्रह्म त्वं विद्धि न इदं यत् इदं उपासते ५॥

[पदार्थ]

जो मनकरके नहीं मनन होता (अरु) जिसकरके मन विषयकिया कहते हैं। सोई ब्रह्म तुम जानो नहीं है यह (ब्रह्म) जो ये उपासते हैं ५॥

[भात्रार्थमन्त्र ५]

श्रीगुरुरुवाच॥ हे सौम्य! "यन्मनसा न मनुते" {यत् मनसा न मनुते} [जो १। मनकरके २। नहीं ३। मनन होता ४।] अर्थात् जो निर्विशेष चैतन्य सत्ता मन उपलक्षण करके मन बुद्धि चित्त अहंकारवृत्ति चतुष्टयात्मक अन्तःकरण, अथवा मननकरिये जिस कारणकरके सो मन तिस मनकरके संकल्प वा मनन में नहीं आवता न निश्चय कियाजाता है, अरु "येनाहुर्मनो मतं" {येन मनः मतं आहुः} [जिस करके ५। मन ६। विषय किया ७। कहते हैं ८।] अर्थात् जिस अपने उपहित चैतन्य के आभासयुक्त अन्तःकरण सोई अपनी साभास वृत्तिकरके मनन कर्त्ता मनसो ब्रह्म करके विषयकिया अर्थात् व्याप्त ऐसा कहते हैं ताते "तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि"। {तत् एव ब्रह्म त्वं विद्धि} [सो ९। ई १०। ब्रह्म ११। तुम १२। जानो १३।] अर्थात् सोई मन उपहित चैतन्य जोकि सर्व्वान्तर प्रत्यगात्मा है वह परमात्मा परब्रह्म तुम जानो अरु "नेदं यदिदमुपासते" {न इदं यत् इदं उपासते} [नहीं है १४। यह १५। (ब्रह्म) जो १६। ये १७। उपासतेहैं १८।] अर्थात् नहीं है यह ब्रह्म जो वृत्तिचतुष्टयात्मक अन्तःकरण है जो वेद से बाह्यमतवादी यह मनबुद्ध्यादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिनको ब्रह्मकरके उपासते हैं, अर्थात् मनवादी मनको विज्ञानवादी बुद्धिको ब्रह्मकरके उपासते हैं। इसप्रकार जो जो मतवादी जिस जिसको ब्रह्ममानके उपासते हैं सोई सो ब्रह्म नहीं क्योंकि मानेहुए कल्पित होते हैं अरु जो कल्पित है सो ब्रह्म नहीं ५॥

यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ६॥

[पदान्वयः]

यत् चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति तत् एव ब्रह्म त्वं विद्धि न इदं यत् इदं उपासते ६॥

[पदार्थः]

जो चक्षुकरके नहीं देखते (अरु) जिसकरके चक्षुओं को देखते हैं सो ई ब्रह्म तुम जानो नहीं है यह (ब्रह्म) जो ये उपासते हैं ६॥

[भावार्थ]

श्रीगुरुरुवाच ॥ हे सौम्य! "यच्चक्षुषा न पश्यति" (यत् चक्षुषा न पश्यति) [जो १। चक्षुकरके २। नहीं ३। देखते ४।] अर्थात् जिस प्रत्यगात्मा चैतन्यको अन्तःकरणकी साभास वृत्ति करके युक्त चक्षुइन्द्रिय रूपवत् विषय नहीं करते। अरु "येन चक्षूंषि पश्यति" (येन चक्षूंषि पश्यति) [जिस करके ५। चक्षुओंको ६। देखते हैं ७।] अर्थात् जिस चैतन्य आत्मा की ज्योति से अन्तःकरणकी वृत्तिके भेदसे अर्थात् नीलपीत आदि पृथक्२ चक्षुवृत्तियोंको लोक देखते हैं "तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि" (तत् एव ब्रह्म त्वं विद्धि) [सो ८। ई ९। ब्रह्म १०। तुम ११। जानो १२।] अर्थात् उसही चैतन्य प्रत्यगात्मा को ब्रह्म करके तुम जानो "नेदं यदिदमुपासते" (न इदं यत् इदं उपासते) [नहीं है १३। यह १४। (ब्रह्म) जो १५। ये १६। उपासते हैं १७।] अर्थात् नहीं है यह ब्रह्म जिसको यह विवेकशून्य अज्ञानी पुरुष उपासते हैं ६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यच्छ्रोत्रेणं न शृणोति येनं श्रोत्रमिदं श्रुतम्। तं देवं ब्रह्म त्वं वि द्धि नेदं यदिदमुपासते ७॥

[पदान्वयः]

यत् श्रोत्रेणं न शृणोति येनं श्रोत्रं इदं श्रुतम् तत् एवं ब्रह्म त्वं वि द्धि नं इदं यत् इदं उपासते ७॥

[पदार्थः]

जो श्रोत्रकरके नहीं श्रवणकरते (अरु) जिस करके श्रोत्र यह श्रवण कियागया सो ई ब्रह्म तुम जानो नहीं है यह (ब्रह्म) जो ये उपासते हैं ७॥

[भावार्थ मन्त्र ७ वें का]

श्रीगुरुरुवाच॥ हे सौम्य! चक्षुवत "यच्छ्रोत्रेणं न शृणोति"। (यत् श्रोत्रेणं न शृणोति) जो १। श्रोत्रकरके २। नहीं ३। श्रवण करते ४।] अर्थात् जिस चैतन्य आत्मा को आकाश भूत का सूक्ष्म कार्य जिसका दिग् देवता है। तथाच "दिशः श्रोत्रं भूत्वा कर्णौ प्राविषद्" सो श्रोत्र इन्द्रिय साभास अन्तःकरण की वृत्ति करके युक्तभी नहीं श्रवण करती, अर्थात् जो चैतन्य आत्मा श्रोत्रका विषय नहीं, अरु "येनं श्रोत्रमिदं श्रुतम्" (येनं श्रोत्रं इदं श्रुतम्) [जिसकरके ५। श्रोत्र ६। यह ७। श्रवण कियागया ८।] अर्थात् जिस चैतन्यकी ज्योतिरूप सत्तासे अन्तःकरण की वृत्तिके भेद युक्त श्रोत्र इन्द्रिय को लोक विषे करे हैं "तं देवं ब्रह्म त्वं वि द्धि" (तत् एवं ब्रह्म त्वं वि द्धि) [सो ९। ई १०। ब्रह्म ११। तुम १२। जानो १३।] अर्थात् सोई प्रत्यक् चैतन्य आत्माको तुम ब्रह्मकरके जानो "नेदं यदिदमुपासते" (न इदं यत् इदं उपासते) [नहीं है १४। यह १५। (ब्रह्म) जो १६। ये १७। उपासते हैं १८। अर्थात् नहीं है यह नामरूप क्रियात्मक ब्रह्म जो ये बहिर्मुख अविवेकी पुरुष ब्रह्मकल्पना करके उपासते हैं ७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्प्राणेन न प्राणिति येन प्राणः प्रणीयते । तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ८ ॥

[पदान्वयः]

यत् प्राणेन न प्राणिति येन प्राणः प्रणीयते । तत् एव ब्रह्म त्वं विद्धि न इदं यत् इदं उपासते ८ ॥

[पदार्थ]

जो प्राण (घ्राण) करके नहीं विषय करते (अरु) जिस करके घ्राण प्राप्तहोती है । सो ईं ब्रह्म तुम जानो नहीं है यह (ब्रह्म) जो ये उपासते हैं ८ ॥

[भावार्थमन्त्र ८ वें का]

श्रीगुरुरुवाच ॥ हे सौम्य! "यत्प्राणेन न प्राणिति" (यत् प्राणेन न प्राणिति) [जो १ । प्राण (घ्राण) करके २ । नहीं ३ । विषयकरते ४ ।] अर्थात् जो चैतन्य साक्षी आत्मा को पृथिवी तत्त्वका कार्य नासिका पुटान्तरवृत्ति प्राण सो अन्तःकरण की वृत्तिसहित भी प्राण, अर्थात् घ्राण इन्द्रिय गंधविषयवत् नहीं विषय करती, अरु "येन प्राणः प्रणीयते" (येन प्राणः प्रणीयते) [जिस करके ५ । घ्राण ६ प्राप्तहोती है ७ ।] अर्थात् जिस अन्तरात्मा चैतन्य के प्रकाशकर प्रकाशित अपने गंधादि विषयको घ्राण इन्द्रिय प्राप्तहोती अर्थात् विषय करतीहै "तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि" (तत् एव ब्रह्म त्वं विद्धि) [सो ८ । ईं ९ । ब्रह्म १० तुम ११ । जानो १२ । अर्थात् सोई स्वयंज्योतिः चैतन्य आत्माको ब्रह्मकरके तुम अनुभवकरो जो जिस स्वयंप्रकाश चैतन्य की सत्तापायके मनआदि सर्वइन्द्रियां अपनी २ तन्मात्रा विषय को विषयकरतीहैं अरु जो मनआदि विषयोंका विषय नहीं तिसही सर्वांतर प्रत्यगात्मा को तुम ब्रह्मकरके अनुभव करो "नेदं यदिदमुपासते" (न इदं यत् इदं उपासते) [नहीं है १३ । यह १४ (ब्रह्म) जो १५ ये १६ । उपासते हैं १७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् इस प्रत्यगात्मासे व्यतिरिक्त नहीं है यह ब्रह्मजो ये भेदवादी नामरूप क्रियात्मककी उपासना करते हैं॥

इति प्रथमखण्डः॥

श्रीगुरुरुवाच॥ हे शिष्य! जो कि हेय उपादेय विदित अविदित से विलक्षण प्रत्यगात्मा सोई ब्रह्म है, इसप्रकार प्रजापतिने जिज्ञासुप्रति उपदेश किया परन्तु शिष्य है सो मैंहीं ब्रह्महूं ऐसा सम्यक् प्रकारसे मैंने जाना है, इसप्रकारकी भावनाको न ग्रहण करे एतदर्थ शिष्यके सम्यक् बोधकी परीक्षार्थ अग्रिम खण्ड में आचार्य प्रश्न करेहैं कि "यदि मन्यसे सुवेदेति दभ्रमेवापि नूनं त्वं वेत्थ" हे सौम्य! जो कदाचित् तू हमारे उपदेश से मानताहोय कि ब्रह्म भलीप्रकार जानाहै तो अल्पही तूने जानाहै॥

प्रश्न॥ हे गुरो! यह तो आत्म जिज्ञासुको इष्टही है कि मैंने आत्मा ब्रह्मको भलीप्रकार जाना है, ताते आचार्य का यह प्रश्न जिज्ञासुप्रति अयोग्य है॥

उत्तर॥ हे शिष्य! तुम सत्य कहतेहौ जिज्ञासुको ब्रह्म आत्मा का सम्यक् अभेदज्ञानका निश्चय इष्टही है परन्तु मैं आत्माको सम्यक् प्रकार जानताहौं यह भेद भावना इष्ट नहीं, क्योंकि जो जाननेयोग्य वस्तु होतीहै सोई विषय करनेयोग्य है अरु उसही के बिषे मैंने भलीप्रकार जाना है यह कहना बनै है, परन्तु आत्मा किसीका बिषय नहीं सर्व आत्माके विषय हैं क्योंकि आत्मा चैतन्य है अरु ज्ञेयरूप विषय जड़ है, एतदर्थ आत्माके बिषे पूर्वोक्त मैं आत्माको भलीप्रकार जानताहौं यह निश्चय असत्य है यह आत्मा सर्वका प्रकाशक साक्षी ब्रह्म है ऐसा सर्व उपनिषदादि वेदान्त शास्त्रका सिद्धान्त है, अरु सोई यहां पूर्व प्रश्नके प्रतिवचनकरके आचार्य ने उपदेश किया है कि हे सौम्य! जिसको तुम पूछतेहौ सो श्रोत्रका श्रोत्र, मनका मन वाचाकी वाचा प्राणका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राण चक्षुका चक्षु है, अरु जिसको वाचा मन चक्षु श्रोत्र प्राण आदि विषय नहीं करते अरु जिस चैतन्य की सत्ता पायके चक्षु मन आदि सर्व अपने २ विषयको विषय करते हैं सोई तुम ब्रह्म करके जानो, परन्तु वो ब्रह्म विदित अविदित अर्थात् कार्य्य कारण हेय उपादेयसे अन्य है । इसप्रकार उपन्यासकरके आगे "अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम्" इस श्रुतिकरके उपसंहार किया है । एतदर्थ शिष्यकी यह बुद्धि कि आत्माको मैंने भलीप्रकार जाना है, तिसका निराकरण करना आचार्य को उचितही है । अथवा हे सौम्य ! जो सर्वका जाननेवाला है तिसका जाननेवाला कोई नहीं । जैसे अग्नि सर्वका दाहक है उसका दाहक कोई नहीं । तैसेही आत्मरूप ब्रह्मसे इतर आत्मा ब्रह्म का ज्ञाता कोई नहीं, ऐसा अन्य श्रुतियोंका प्रमाण है "नान्यदतोऽस्तिविज्ञातृ" तातेआत्मासे इतर आत्माका ज्ञाता अन्यआत्मा कोई नहीं, एतदर्थ यह जो निश्चयहै कि मैं आत्माको सम्यक् प्रकारसेजानताहौंसोमिथ्याहीहै तातेभी "यदिमन्यसेसुवेदेति" यह जो आचार्यका जिज्ञासुप्रति प्रश्नहैसो यथार्थहीहै।अथवा हेशिष्य! जो कदाचित् ऐसाही मानाजाय कि मैं ब्रह्मको भलीप्रकार जानताहौं तथापि श्रवणकिया जो आत्माब्रह्म सो दुर्विज्ञेय है सो कदाचित् अन्तःकरण के निःशेषदोष दूरहोनेसे कोई विरला अनुभव करताहै "[1] कश्चिद्धारा प्रत्यगात्मानमैक्षत्" इस संशयको लेके भी "यदिमन्यसे सुवेदेति" इत्यादि प्रश्न जिज्ञासुप्रति आचार्यका यथार्थही है । हे शिष्य! छान्दोग्य उपनिषद् के अष्टमाध्याय बिषे गाथाद्वारा कहाहै कि एक समय देवराज इन्द्र अरु असुरराज विरोचन यह दोनों आत्मजिज्ञासा करके प्रजापति (ब्रह्मा) के पासगये तब वहां बत्तीसबर्ष ब्रह्मचर्यकरनेके पश्चात् प्रजापतिने "[2] एषोक्षिणि पुरुषो दृश्यते एषआत्मेतिहोवाचैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति" यह प्रथम उपदेश किया कि यह अ

[1] बृहदारण्य उपनिषद्विषे।२ कठवल्ली उपनिषद्विषे ।३छांदोग्यउपनि

नक्षुविषे पुरुष दृष्टआवताहै यहीआत्मा अमर अभय ब्रह्महै, तब पण्डित होतसन्तेभी असुरराज विरोचन अपनेआसुरी सम्पदादि स्वभाव दोषकरके ब्रह्माके किये उपदेशकोभी विपरीति अर्थ से शरीरकोही आत्मा मानताहुआ जो चक्षुविषे शरीरकी छाया रूप पुरुषहै, सो इसवाक्य से जिस शरीरकी छाया है उसशरीर हीको प्रजापतिने ब्रह्मआत्मा कहाहै ताते यहशरीरही आत्मा है ऐसा अपनेचित्त में निश्चयकर तूष्णीम्होताहुआ। अरु देवराज इन्द्रने उसही उपदेशसे प्रथम शरीरकी छायाकोहीआत्मामाना क्योंकि "नैनंछिन्दन्तिशस्त्राणि" इत्यादि वाक्य प्रमाणसे आत्माके अछेद्यादि धर्म्म छायाविषे देख शरीर छायाको आत्मा मान प्रजापतिसे आज्ञालेे स्वलोक को चला तबमार्ग में विचार किया कि जिसशरीरकी छायाको हमने आत्मामानाहै सो शरीर नाशवान्है तब छाया शरीरके अनुरूप होनेसे वोभी नाशवान् सिद्धहुई, अरु आत्माको ब्रह्माने अमर अभय कहाहै ताते यह छाया आत्मानहीं। ऐसा विचार पुनः प्रजापतिके समीप गया तब पुनः बत्तीसबर्ष ब्रह्मचर्य करायके द्वितीय पर्य्यायसे ब्रह्माने "य एषस्वप्नेमहीयमानश्चरतीति" यह उपदेश किया तिस को श्रवणकर पुनः इन्द्रस्वधाम को चला तब मार्ग में स्वप्नस्थ आत्मा में भयआदि दोष विचार पुनः प्रजापति के पास आवता हुआ, तबउसको पुनःबत्तीसवर्ष ब्रह्मचर्य्य करायके तृतीयपर्य्याय से[1] "तद्यत्रैतत्सुप्तः समस्त सम्प्रपन्न इति" सुषुप्तिस्थ आत्मा का उपदेश किया तिसको श्रवणकर पुनःइन्द्रस्वलोक को चला तब फेरमार्गमें बिचारकरने से उस सुषुप्तिस्थ आत्माविषे अभावादि दोष देख पुनःब्रह्मा के समीपगया तब ब्रह्माने पुनः पांच वर्ष ब्रह्मचर्य्यकराया, इसप्रकार जब इन्द्रने वारंवार बिचारकर प्रजापतिके समीपजाय उनकी आज्ञानुसार १०१ वर्ष ब्रह्मचर्य्यकिया तब अन्तःकरणका निःशेषदोष अभावहोनेसे ब्रह्मा के

१—२ छान्दोग्य उपनिषद् विषे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"[1]य एष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात् समुत्थाय परंज्योतीरूपं सम्पद्येति" इसचतुर्थ पर्य्यायसे तुरीयसाक्षी आत्माको जो कि प्रथम पर्य्यायमें "[2]एषोक्षिणि पुरुषो दृश्यते" इस श्रुतिसे उपदेशकिया रहा तिसको यथार्थ अपना आप अनुभवकर शान्त आत्मा होता हुआ ॥ एतदर्थ हे सौम्य ! अभिप्राय यह है कि यह प्रत्यगात्मा जो चक्षुका चक्षु इत्यादि प्रति वचन करके कहा है अरु जो प्रत्यगात्मा चक्षुरादिकोंका विषयनहीं अरु जिसकी सत्तासे चक्षुरादि इन्द्रियां स्वस्व विषयको ग्रहण करती हैं, अथवा स्वस्व विषय को विषय करती विषयहोती है, सो निर्विशेष महासूक्ष्म आत्मा अत्यन्त दुर्विज्ञेय है उसका यथार्थ जानना सर्व को समान नहीं । तथाच "[2]नायमात्मा प्रवचनेनलभ्यो न मेधया न बहुनाश्रुतेन" इत्यादि । अरु हे सौम्य ! देखो इस लौकिक व्यवहार विषेभी कोई एकतो आचार्यके वाक्यको इन्द्रके चतुर्थ पर्य्यायवत् यथार्थ अरु कोई एकइन्द्रके प्रथम द्वितीय तृतीय पर्य्यायवत् अयथार्थ अरु कोई एक विरोचनवत् विपरीत अर्थ को ग्रहणकरते हैं, अरु कोईएक कुछभी नहीं जानते जो आचार्य्यने क्या कहा । ताते हे शिष्य ! यह महासूक्ष्म आत्मा अति दुर्विज्ञेय है इसका जानना तर्कादिकों से नहीं होता जो जो अपनी बुद्धिकी कल्पना से तर्कद्वारा आत्मा को प्रतिपादनकरते हैं सो तार्किकादि कोई भी नहीं जानते, एतदर्थ शिष्यके यथार्थ सम्यक् ज्ञानकी परीक्षा के हेतु "यदि मन्यसे सुवेदेति" यह आचार्यका प्रश्न सर्वथा उचितही है ॥

यदि[1] मन्यसे[2] सुवेदेति[3] दभ्रमे[4] वापि[5] नूनं[6] त्वं[7] वेत्थ[8] ब्रह्मणो[9] रूपं[10] यदस्य[11] त्वं[12] यदस्य[13] देवेष्वथ[14] नु[15] मीमांस्यमेव[16] ते[17] मन्ये[18] विदितम्[19] ९ ॥ १ ॥

---

१ छान्दोग्य उ० विषे । २ मुण्डक उपनिषद्विषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[पदान्वयः]

यदि मन्यसे सुवेद इति दभ्रं एव अपि नूनं त्वं वेत्थ ब्रह्मणः रूपं यत् अस्य (अध्यात्मोपाधिषुब्रह्मणोरूपं) त्वं (वेत्थ) यत् अस्य देवेषु (त्वंब्रह्मणः रूपं वेत्थ) अथ नु मीमांस्यं एव ते मन्ये विदितम् ९ ॥ १ ॥

[पदार्थः]

जो कदाचित् (ऐसा) मानताहो (कि ब्रह्मको) भलीप्रकार जानताहो (तो) अल्प ही ७—८ (तू जानताहै) (क्या) तू जानताहै ब्रह्मके रूपको जो इस (ब्रह्मका रूप अध्यात्मोपाधि विषे) तू (जानताहै अरु) जो इस (ब्रह्मकारूप) देवतों-ओंविषे(तू जानताहै) एतदर्थ अद्यापि विचारने योग्यही है तुम-को मानताहो जानताहै ९ । १ ॥

[भावार्थ]

प्रजापतिरुवाच ॥ हे सौम्य ! "यदि मन्यसे सुवेद इति" । यदि मन्यसे सुवेद इति ; [जो कदाचित् १ । (हमारे उपदेशसेऐसा) मानताहो २ । (कि ब्रह्मको) भलीप्रकार जानताहै ३ । ४ ।] अर्थात् जो कदाचित् हमारे उपदेशकरके तू ऐसामानताहो कि मैं आत्माब्रह्मको आचार्य के उपदेशसे भलीप्रकार जानताहौं तो "दभ्रमेवापि नूनं (त्वंवेत्थ) " । दभ्रं एव अपि नूनं (त्वंवेत्थ) ; [अल्पही ६।७।८ (तूजानताहै)] अर्थात् श्रेष्ठ नहीं जानता, क्योंकि एकतो तूने आपको ज्ञाता चैतन्य माना अरु दूसरे ब्रह्मको ज्ञेय जड़माना, क्योंकि जो ज्ञाताहै सो चैतन्य अजड़है अरु जो ज्ञेय है सो अचैतन्य जड़है " यद्ज्ञेयं तज्जडं " इसन्यायसे तूने श्रेष्ठ न जाना, अरु क्या " त्वं वेत्थ ब्रह्मणो रूपं " । त्वं वेत्थ ब्रह्मणः रूपं ; [तू ९ । जानताहै १० । ब्रह्मके ११ । रूपको १२ ।] अर्थात् क्या उस निर्विशेष निरुपाधिब्रह्म के रूपको तूजानताहै, क्या ब्रह्मके छोटे बड़े अनेकरूपहैं अर्थात् अध्यात्म उपाधि युक्त छोटा अरु अधिदैव अधिभूत उपाधियुक्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बड़ा, इत्यादि प्रकारसे क्या एकब्रह्म के नाना रूप हैं, अरु जो "रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च"[1] ब्रह्मके अनेकरूपही कहो तो अस्तु परन्तु अनेकरूप जो श्रुतिने प्रतिपादन किये हैं सो उपाधि के सम्बन्ध से कियेहैं वास्तव में ब्रह्म जो है सो "अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथाऽरसं नित्यमगंधवच्चयत्"[2] शब्दादि विषय धर्मरहित अविषय निर्विशेष है ॥

प्रश्न ॥ हे प्रभो ! जिसधर्म से जिसका निरूपण होता है सोई उसकारूपहै, इसन्यायसे ब्रह्मकोभी जिस विशेषणकरके निरूपण करिये सोई उसका रूप है ॥

उत्तर ॥ हे सौम्य ! श्रवणकरो चैतन्य परमात्मा है सो पृथिवी आदि भूतों में से अन्यतम अर्थात् कोई एकका अरु सर्व्वोंका अरु परिणामको प्राप्तहुए सर्व्वोंका जो धर्म्म तद्धर्मवान् नहीं। अरु तैसेही चक्षु श्रोत्रादि इन्द्रियोंका अरु मनआदि अन्तःकरणका जोकि भूतोंका रजसत्त्व गुणी भौतिककार्य्य है तिनका दर्शन श्रवण मननादि जे धर्म्म हैं तद्धर्मवान्भी आत्मा नहीं। अरु जो तू ऐसाकहे कि ब्रह्मको चैतन्यरूप करके प्रतिपादन किया है विज्ञानमानन्दं ब्रह्म"[3] अर्थात् विज्ञानघन सत् चिद् आनन्दआदि रूपसे ब्रह्मका निरूपणहै ताते सोई उसकारूप क्यों न होय, तो श्रवणकरो हे सौम्य ! श्रुतिने जो जो ब्रह्मकेरूप निरूपणकिये हैं सो सर्व सत्य हैं तथापि निर्विशेष परमात्मा को जो विज्ञान घनादि नामों से कहा है सो देह इन्द्रिय अन्तःकरणादि रूप उपाधि सम्बन्धकरके उपाधिस्थ निर्विशेष शुद्ध ब्रह्मका उपदेश करने के अर्थ उपाधि से विपरीत धर्मवान् आत्माको उपाधि के धर्म्म से विपरीत धर्म्मवान् कहके लक्ष्य करायाहै, अर्थात् देहेन्द्रियादि सर्व असत्य जड़ दुःख धर्म्मा हैं ताते इनसे विपरीत आत्माको सत्य चैतन्य आनन्दरूप से कहाहै। परन्तु उपाधि के अभावसे निरुपाधि आत्माबिषे विशेषके अभावसे विशेषण के

१—२कठवल्ली उपनिषद्विषे। बृहदारण्य उ० अ० ५ विषे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं, एतदर्थही श्रुतिने कहाहै कि "अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम्"[1] जो विज्ञात पुरुषहैं सो ब्रह्मको अविज्ञात अर्थात् किसीका विषय नहीं ऐसा जानते हैं, अरु जो अविज्ञात पुरुषहैं सो ब्रह्मको विज्ञात अर्थात् हम ब्रह्मको जानते हैं ऐसा मानते हैं। तातेजोजिस ब्रह्मकारूप तू जानताहै सो श्रेष्ठनहीं जानता अरु "यदस्य त्वं यदस्य देवेषु"। ६ यत् अस्य (ब्रह्मणः रूपं अध्यात्मोपाधिषु) त्वं (वेत्थ) यत् अस्य देवेषु (त्वं ब्रह्मणोरूपं वेत्थ तदपि दभ्रमेव); [जो १३। इस १४। ब्रह्मकारूप अध्यात्मोपाधि देहेन्द्रिय प्राण अन्तःकरणादि विशिष्ट परिच्छिन्न जिसको जीव क्षेत्रज्ञ आदि विशेषण से कहते हैं तिसको) तू १५। (जानताहै अरु) जो १६। इस १७। (ब्रह्मकारूप) देवताओं के बिषे १८। (तू जानताहै)] अर्थात् ब्रह्मा विष्णु शिवादि देवतारूप उपाधि परिच्छिन्न जे आत्मा ब्रह्म तिसहीको तू पूर्ण निर्विशेष ब्रह्मकारूप जानताहै तो भी अर्थात् अध्यात्मोपाधि अरु अधिदैवोपाधि उभय स्थानबिषे अल्पही जानताहै ऐसा हम मानते हैं, क्योंकि अध्यात्म विद्याकरके प्रतिबोधित आत्मा सोई ब्रह्म है तथापि उपाधि परिच्छिन्न आत्माबिषे प्राप्तहुई जे उपाधिजन्य परिच्छिन्नता तिसकरके सोपाधि आत्माका अल्पत्व दूरहोता नहीं, तैसेही अध्यात्म अधिदैव अधिभूतादि उपाधि परिच्छिन्न आत्माका अल्पत्व मिटे नहीं, ताते सोपाधि आत्माको ब्रह्मका रूप तूने जानाहै तो अल्पही जानाहै, क्योंकि शुद्ध आत्मा ब्रह्म तो सर्व उपाधिरूप विशेषता अरु तिस विशेषताद्वारा आया जो आत्मामें विशेषण तिसके अभावसे सर्व नाम रूप उपाधि रहित परमशान्त अनन्त एक अद्वैत सर्वका भूमा अवधि आश्रय अनिर्वाच्य ब्रह्म सो सुवेद्य नहीं, अर्थात् मैं ब्रह्मको भलीप्रकार जानताहौं इत्यादि वृत्तिका विषय नहीं, ताते ब्रह्मको मैं भलीप्रकार जानताहौं ऐसा जो हमारे उपदेशसे तू मानता होय तो यह तेरा

[1] केनोपनिषद् बिषे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मानना अल्पही है, ताते हे सौम्य! सोपाधि ब्रह्म अल्पहै निरुपाधि ब्रह्म दुर्विज्ञेयहै एतदर्थ "अथ नु मीमांस्य मेव ते" (अथ नु मीमांस्यं एव ते) [एतदर्थ १९। यद्यापि २०।विचारनेयोग्य २१।हीहै २२।तुमको २३।]अर्थात् जिसको तूने ब्रह्मकरके माना है सो अद्यापि तुझको विचारने योग्यही है, ताते विचारकरो हे शिष्य! जब इसप्रकार प्रजापतिने जिज्ञासुप्रति कहा तब श्रद्धावान् जिज्ञासु तथास्तु कहके एकान्तस्थानमें सुखासनहोय जिसप्रकार श्रुतिआर्चायनेकहा तिसकेअर्थकोविचार तिसबिषे नाना तर्क उठाय पुनः तिसका सिद्धान्त अनुभवकर गुरु प्रजापति के समीप जाय प्रणामकर कहताहुआ कि हे भगवन्! "मन्ये विदितम्" (मन्ये विदितम्) [मानताहौं मैं २४-जानाहै २५-(ब्रह्मको)] अर्थात् अब मानताहौं मैं जो ब्रह्मको मैंने जानाहै ९।१॥

प्रश्न प्रजापतिका ॥ हे सौम्य! जो तू ने जाना है ब्रह्मको तो किसप्रकार जाना है सो कहो ॥

नाहं मन्ये सुवेदेति नो न वेदे ति वेद च यो न स्तद्वेद तद्वेद नो न वेदे ति वेद च ॥ १० ॥२॥

[पदान्वयः]

न अहं मन्ये सुवेद इति नवेद इति नो च वेद (इति नो यो नः तत् वेद तत् वेद नवेद इति नो च वेद (इति नो)) १० ॥ २ ॥

[पदार्थाः]

नहीं मैंमानता सुवेद इति नहींजानता ऐसा नहीं पुनः जानताहौं(ऐसानहीं) जो हमारेमध्य सो जानता है सो जानता है नहीं जानता ऐसा नहीं पुनः जानता है (ऐसानहीं)

[भावार्थ मन्त्रदूसरेका]

॥ जिज्ञासुरुवाच ॥ हे भगवन्! "नाहं मन्ये सुवेदेति" (अहं सुवेद इति न मन्ये) [मैं १।(ब्रह्मको)सुवेद २। ऐसा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं ४। मानता ५।] अर्थात् मैं ब्रह्मको भलीप्रकार प्रत्यक्षादि प्रमाणसे जानने योग्यहै ऐसा नहीं मानता, क्यों जो ब्रह्म आत्मा है सो ज्ञानका विषय नहीं, ताते उस विषयक भलीप्रकार जानना बने नहीं, अतएव यह मानता हौं कि ब्रह्म सुवेद्य नहीं, क्योंकि- नो न वेदे ति वेदं च। ८नवेद इति नो च वेद (इतिनो ?) नहींजानता ६। ऐसा ७। नहीं ८। पुनः ९। जानताहौं १०। [ऐसाभीनहीं,] अर्थात्, निरुपाधि ब्रह्मको मैं जानताहौं ऐसा भी नहीं अरु नहीं जानता ऐसा भी नहीं ॥

प्रष्ण ॥ हे सौम्य ! तुम्हारे कहने बिषे दोष है कहां तो कहतेहौ कि ब्रह्मको नहीं जानता ऐसा नहीं, अर्थात् जानताहौं, अरु कहांकहतेहौ जानताहौ ऐसा भी नहीं अर्थात् नहीं जानता क्योंकि ब्रह्म ज्ञानका विषयनहीं। तहां जो कदापि आत्माको ज्ञानकाविषय नहीं मानते तो क्यों मानते हौ जो ब्रह्म को जानता हौ, अरु जो कदापि ऐसाही मानतेहौ कि मैं ब्रह्म को जानता हौं तो क्यों नहीं मानते जो मैं ब्रह्म को भली प्रकार जानता हौं। क्या एक वस्तु जिस करके जानी जाय सोई वस्तु उस करके न जानी जाय, ऐसानहीं, अरु तुम ब्रह्म को सुवेद्य नहीं भी मानते अरु जानता हौ ऐसा भी मानते हौ, सो यह विरुद्ध है ऐसा कथन संशय विपर्य्ययको छोड़कर यथार्थ वाक्यमें नहीं होता, अरु ब्रह्म संशय विपर्य्यय रहित है, क्योंकि संशय विपर्य्यय अनर्थके हेतुहैं, अथवा तुम्हारे वाक्य में और प्रकार भी संशय विपर्य्यय है, तुम कहतेहौ कि मैं भली प्रकार ब्रह्मको नहीं जानता इस वाक्यमें संशय है कि अद्यावधि शिष्यने ब्रह्मको नहीं जाना सो क्यों नहीं जाना, अरु मैं ब्रह्म को जानता हौं इस तुम्हारे वाक्यमें विपर्य्ययताहै कि ब्रह्म तो ज्ञानका विषय नहीं अरु यह कहताहै कि मैं ब्रह्म को जानताहौं तो जाने इसने किस अनात्माको ब्रह्म करके मानाहै, ताते हे सौम्य! तुम्हारे यह परस्पर विपरीत वाक्य संशय विपर्य्यय दोष युक्तहैं अरु संशय विपर्य्य-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यवान् पुरुष ब्रह्मको जानने में समर्थ नहीं क्योंकि ब्रह्मविषे संशय विपर्य्यय दोनों नहीं, अरु संशय विपर्य्यय भावही संसार में अनर्थका कारणहै ताते जो तूने जाना यथार्थ न जाना ॥ हे शिष्य! इसप्रकार जब आचार्य प्रजापतिने जिज्ञासुके सम्यक् बोधकी परीक्षा के अर्थ उसकी बुद्धिको चलायमान किया परन्तु दृढ़ यथार्थ बोधवान् जिज्ञासु चलायमान न हुआ अरु आपही आप विचारताहुआ जो विदित अविदित दोनोंसे अन्य आत्मा हमको पूर्व्व आचार्य्य ने कहाहै अरु सोई श्रुतिका सिद्धान्तहै अरु सोई अनुभव सिद्धहै। इसप्रकार आचार्य्य, श्रुति, अनुभव, इन तीनों के बलसे ब्रह्म विद्यामें दृढ़ विश्वासकर्त्ता गर्जना (प्रतिज्ञा) पूर्वक उच्चस्वर से ब्रह्मविद्या बिषे अपनी दृढ़ विश्वासता देखावताहुआ १० । २ ॥

प्रश्न ॥ क्या देखावताहुआ ॥

जिज्ञासुरुवाच ॥ हे प्रभो ! "। [११]यो [१२]न [१३]स्तद्वेद [१४] [१५]तद्वेद [१६]" । ८ [११]यो [१२]नः [१३]तत् वेद [१४] [१५]तत् वेद [१६]; [जो ११ । हमारे १२ । [मध्य] सो १३। तिसको जानताहै १४। सो १५। जानताहै १६ ।] अर्थात् जो कोई हमारे सहाध्यायी ब्रह्मचारी विद्यार्थियों के मध्य वो मेरा कहा वेद वचन तिसके अर्थको भलीप्रकार तत्त्वकरके जानताहै सोई उस ब्रह्मको जानताहै ॥

प्रष्ण ॥ पूर्व कहे वाक्यसे पुनः वो कौन वाक्यहै कि जिसके जानने से अविषय ब्रह्मजाना जाय ॥

उत्तर ॥ "। [१६]नो [१७]नवेदे [१८]ति [२१]वेद [२०]च" । ८ नवेद [१७] इति [१८]नो [२०]च वेद [२१] (इतिनो); [नहीं जानता १७। ऐसा १८। नहीं १९। पुनः २०। जानताहौ २१। (ऐसा नहीं)] अर्थात् मैं आत्माको नहीं जानता ऐसा नहीं क्योंकि आत्मा अपना आप है तिस का न जानना क्या, अरु फेर तैसेही जानताहौ ऐसा भी नहीं क्योंकि आत्मा ज्ञानका विषय न होत ज्ञानस्वरूप सर्वका जानने वाला है ताते उसका ज्ञेयवत् जानना बने नहीं तब उसका जानना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्या, अर्थात् आत्मा जानना न जानना जे बुद्धिके धर्म्म तिन दोनोंसे रहित सर्वका प्रकाशक साक्षी है ताते उस विषयक न जानना ऐसा भी नहीं अरु जानना ऐसा भी नहीं। तथाच "येनेदꣳ सर्वं विजानीयात् तत्केन विजानीयात्" जिस करके यह सर्व जानाजाताहै सो किस करके जानिये। अर्थात् आत्मा, मन आदि इन्द्रियां अहं आदि प्रत्यय शब्दादि विषय, इन सर्व का ज्ञाता प्रकाशक चैतन्यहै उससे पृथक् उसका प्रकाशक ज्ञाता कोई नहीं तब यह कैसे कहिये जो मैंने ब्रह्मको जानाहै, अरु यह भी कैसे कहिये जो नहीं जाना क्योंकि अपना आपहै। इसप्रकार जो हमारे वाक्यको विचारके जानताहै सोई उस अपने आप आत्मा ब्रह्मको जानताहै॥

यस्यामतं तस्य मतं मतं यस्य न वेद सः।
अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ११ ॥ ३ ॥

[पदान्वयः]

यस्य अमतं तस्य मतं यस्य मतं सः न वेद विजानतां अविज्ञातं अविजानतां विज्ञातम् ॥

[पदार्थः]

जिसका अमतहै तिसका मतहै जिसका मतहै सो नहीं जानता विज्ञातको अविज्ञातहै अविज्ञातको विज्ञात है ११ ॥ ३ ॥

[भावार्थमन्त्रतीसरेका]

श्रीगुरुरुवाच ॥ हे सौम्य! उक्त प्रकार जिज्ञासुकी परीक्षा के अर्थ जो गुरु शिष्यका परस्पर में संवाद तिसकी परस्पर में निवृत्तिके अर्थ श्रुति स्वयम्बोधन करेहै "यस्यामतं तस्य मतं। यस्य अमतं तस्य मतं; [जिसका १। अमतहै २। तिसका ३। मतहै ४।] अर्थात् जिस ब्रह्म वेत्ता पुरुषका यह निश्चय है कि ब्रह्म अविज्ञातहै ज्ञानादि किसीकाभी विषय न होते विशेष ज्ञान के

१ बृहदारण्यविषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभावसे केवल ज्ञप्तिमात्र है, ताते जिसको अविज्ञातहै तिसही पुरुषको मत अर्थात् ज्ञान (अनुभव) विषय है तिसमें विशेषणतासे भासमान जे ज्ञान (बोध) सोई सम्यक् ब्रह्महै । अरु "मतंयस्य न वेद सः" (यस्य मतं सः न वेद) [जिस पुरुषका ५ । मतहै ६ । सो ७ । नहीं ८ । जानता ९ ।] अर्थात् जिस पुरुषका यह निश्चयहै कि जाना है मैंने ब्रह्मको सो पुरुष ब्रह्म को नहीं जानता । इसही अर्थको पुनः श्रुति दृढ़करेहै कि "अविज्ञातं विजानतांम्" (विजानतां अविज्ञातं) [विज्ञात पुरुषको १० । अविज्ञातहै ११ ।] अर्थात् सम्यक् सूक्ष्मबुद्धिसे श्रुति वाक्यार्थ के जे विज्ञात पुरुष हैं तिनका यह निश्चय अनुभव है कि ब्रह्म जो परमात्माहै सो अविज्ञातहै, अर्थात् अन्तःकरण अरु तिसकी वृत्ति, अरु इन्द्रियां अरु तिनकी वृत्ति , इत्यादिमेंसे किसी का अरु सर्वका विषय नहीं ताते परमात्मा अविज्ञात अर्थात् अविदितहै । अरु "विज्ञातमविजानताम्" (अविजानतां विज्ञातम् [अविज्ञातको १२ । विज्ञात है १३ ।] अर्थात् जिनको बुद्धिकी सूक्ष्मताके अभावसे श्रुतियों के वाक्यका यथार्थ बोध न होने से देहेन्द्रिय मन प्राणादि बिषे आत्म प्रतीति ऐसेजे असम्यक् दर्शी पुरुषहैं तिनका यह निश्चयहै कि ब्रह्म विज्ञातहै, अर्थात् हमको ब्रह्म विदित है । ताते हे सौम्य ! तात्पर्य यह है कि जिस विद्वान्का यह निश्चयहै कि निर्विशेष ब्रह्म अविदितहै सोई पुरुष ब्रह्म को जानता है अरु सोई यथार्थ दर्शी है । अरु जिस अविद्वान् का यह निश्चय है कि ब्रह्म विदित है सोई पुरुष ब्रह्मको नहीं जानता अरु सोई असम्यक् दर्शी है हे सौम्य ! इसवाक्य से श्रुतिने जिज्ञासुके विचारित वाक्यको कि "नाहं मन्ये सुवेदेति" मैं नहीं मानताहौं ब्रह्म आत्माको मैंने जानाहै, तिसको दृढ़ करके अब महासूक्ष्म परमात्माको निर्विशेष लक्ष्य करावेहै ॥

प्रश्न शि० ॥ हे गुरो ! आपने अरु श्रुतिने यह निश्चय किया कि "अविज्ञातं विजानतां" । विद्वान् ब्रह्मवेत्ता के निश्चयमें ब्रह्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अविज्ञातहै, ताते जो कदापि ब्रह्मवेत्ताको भी ब्रह्म अत्यन्तही अविज्ञातहै तो लौकिक साधारणपुरुष अरु ब्रह्मवेत्ता बिषे विशेषता न हुई, तब ब्रह्मवेत्ता "अहं ब्रह्मास्मिभावको" कैसे धारणकरे हैं ॥

उत्तर ॥ हे शिष्य ! जो पूर्व "अन्य देवतद्विदितादथो अविदितात्" इत्यादि श्रुतिकरके कहा कि ब्रह्म जो है सो विदित अविदित दोनों भावसे पृथक्है तिस वाक्यके अनुसार सूक्ष्म बुद्धि ब्रह्मवेत्ता विचारते हैं कि जो अन्तःकरणकी अविज्ञातवृत्ति है। अर्थात् ब्रह्म अविज्ञात है ऐसी जे निश्चय आत्मकवृत्ति, अरु विज्ञातवृत्ति इन दोनों वृत्तिको साक्षीहोके जो प्रकाशहै सोई साक्षी आत्मा ब्रह्म मैं हौं तिस मेरे बिषे वृत्ति आदि उपाधिरूप साक्ष्यके सम्बन्धसे साक्षित्वहै। अरु वृत्तिआदि उपाधिके अभावसे साक्षित्व प्रकाशकत्व आदि विशेषणोंका भी अभाव होताहै तिस अभावके पश्चात् अवशेषरहा जो निर्विशेष अस्तिमात्र भावरूप विज्ञानघन ब्रह्म सो मैं हौं, इसप्रकार निर्विशेष ब्रह्मको अपना आप अनुभव करके "अहंब्रह्मास्मि" भावको प्राप्तहोतेहैं सोई श्रुति आप बोधन करे है ११।३॥

प्रतिबोधविदितं मतममृतत्वं हि विन्दते आत्मना
विन्दते वीर्य्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् १२।४॥

[पदान्वयः]

बोधं प्रति विदितं मतं अमृतत्वं हि विन्दते आत्मना वीर्य्यं विन्दते विद्यया अमृतत्वं विन्दते ॥

[पदार्थ]

प्रत्यय (प्रत्यय) प्रति विदित है सम्यक्दर्शनकियाहै (सो) अमृतत्वैको ही प्राप्तहोताहै आत्माकरके सामर्थ्य प्राप्तहोताहै विद्याकरके अमृत प्राप्तहोताहै १२।४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[भावार्थमन्त्र चौथेका]

गुरुरुवाच ॥ हे सौम्य! "प्रति[2] बोधविदितं[3]" ‹बोधं[1] (बोधं) प्रति[2] विदितं[3]› [बोध १ । (बोध) प्रति २ । विदित है ३ ।] अर्थात् बोध शब्दकरके बुद्धिका प्रत्यय अर्थात् बुद्धि उपलक्षण करके अन्तःकरण तिसका जो अहं आदि प्रत्यय सो जिस चैतन्य स्वयं प्रकाश साक्षी करके प्रकाशित होताहै सोई सर्व प्रत्ययका साक्षी प्रत्यगात्मा है सोई सर्वप्रत्ययका दृष्टाचिच्छक्तिस्वरूप मात्रहै सो प्रत्ययकरकेही प्रत्यय अविशिष्टतासे लक्ष्य अनुभव होय है ॥ जैसे चक्षुविशिष्ट सूर्य्य सत्ताकरकेही चक्षु अविशिष्ट सूर्य्य का अनुभव होयहै ॥ तैसेही साभास अन्तःकरणका जे अहंआदि प्रत्यय सो अन्तःकरण अविशिष्ट (उपहित) प्रत्यगात्मा करकेही प्रकाशित होताहै अरु तिसहीकरके अविषय ब्रह्मअनुभव होताहै कि जिसकी सत्ता पायके सर्वप्रत्यय अपने २ व्यापार में प्रवृत्त होते हैं । तथाच "विज्ञातेर्विज्ञाता" क्यों कि विज्ञाति जो बुद्धि तिसका भी विज्ञाता है, अर्थात् जिसके प्रकाश में बुद्धि के सर्व प्रत्ययोंका उत्थानलय भावाभाव सिद्ध होताहै सोई स्वयंज्योतिः साक्षी प्रत्यगात्मा ब्रह्महै, ताते "न[2]विज्ञातेर्विज्ञातारंविजानीयात्" बुद्धिकेविज्ञाता को बुद्ध्यादि कोई भी विषय नहीं करते, एतदर्थ ब्रह्म अविदितहै । हे सौम्य! इसप्रकार विचारके जिस विज्ञातपुरुष ने उस निर्विशेष अविषय ब्रह्म अपनेआप सर्व प्रत्यगात्मा को सर्व्व उपाधिसे रहित सर्व्वका प्रकाशक नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव सर्व्वात्मा निर्विशेष एक अद्वैतलक्षण भेदके अभाव से सर्वभूतों बिषे आकाशवत्, अर्थात् जैसे आकाश घट मठ गिरि गुहा अरण्यादि उपाधिबिषे उपाधिके धर्म्म से रहित समान एकरसहै । तैसेही "आ[3]काशवत्सर्व्वगतःसनित्यः" आकाशवत् समान एकरसजानाहै तिसका "मतं[4]" ‹मतं[4]› [सम्यक् दर्शन है ४ ।] अर्थात् सोई सम्यक् आत्मवेत्ता ब्रह्मज्ञानी सम्यक्

१ बृहदारण्य उ० विषे । २ बृहदारण्यअ० ५ में । ३ तैत्तिरीय उ० विषे ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दर्शी है, अरु सोई "अमृतत्वं हि विन्दते"[१] [अमृतत्वको ५। ही ६। प्राप्तहोताहै ७।] अर्थात् सम्यक् आत्मज्ञानी अमरणभाव जे परमात्मासाथ अभेदलक्षणरूप मोक्ष तिसको निश्चय प्राप्तहोताहै" हे सौम्य! कोई एकआचार्य इस प्रकारभी कहते हैं कि बोध क्रियाका कर्त्ता आत्माहै, सो बोध क्रिया लक्षणकरके बोधक्रियाका कर्त्ता जाना जाताहै ताते आत्माको "प्रतिबोध विदितं" ऐसाश्रुतिने प्रतिपादन किया है, जैसे जो वृक्षशाखाको चालनकरे है सोई वायुहै। तैसेही जो बोध क्रियाका कर्त्ता है सोई आत्मा है। तब बोधक्रिया शक्तिमान् जो आत्मा सो द्रव्य है बोधस्वरूप नहीं क्यों जो बोध तो उत्पत्ति विनाश होताहै ताते क्षणिकहै, जब बोध उत्पन्न होताहै तब बोधक्रिया के संग आत्मा सविशेष होताहै अरु जब बोध नष्ट होताहै तब नष्ट बोध आत्मा जड़ द्रव्यमात्र निर्विशेष होताहै॥ हे सौम्य! इसप्रकारके अर्थसे विकारवान् आत्मा सावयव हुआ अरु जब सावयव हुआ तब अनित्य अशुद्ध हुआ इसप्रकार विक्रियावान् आत्माबिषे अनात्मदोष सिद्ध होते हैं तिसको दूर करनेको वो उक्तप्रकार से कहनेवाले आचार्य कदापि समर्थ नहीं अरु श्रुति ने आत्माको "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" सच्चिदानन्द लक्षण करके लक्षित लक्ष्यकराया है। ताते जे आचार्य आत्माको बोध क्रिया का कर्त्ता कहते हैं सो वेदसे बाह्य बोलते हैं, अरु जो कणाद आचार्य है सो आत्मा बिषे संयोगज] संयोगजन्य [बोध मानते हैं, अर्थात् कहते हैं कि आत्माको बुद्धिका सम्बन्ध होनेसे आत्मामें बोधोत्पत्तिहोती है ताते आत्मा बोधवान् है बोधक्रिया का कर्त्ता नहीं परन्तु द्रव्यमात्र तो है ही है॥ हे सौम्य! इसपक्ष में भी अचेतन द्रव्यमात्रही ब्रह्महै, सो इसपक्षको भी। "ज्ञानमानन्दं, प्रज्ञानं, विज्ञानघनं"। इत्यादि अनेक श्रुतियोंने बाधित कियाहै, अरु आत्माको सर्व्वात्मा होनेसेभी वो अन्तःकरणादि

१ तैत्तिरीय उ० बिषे॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किसीकेभी धर्मसे तत्तद्धर्म्मवान् होता नहीं क्यों जो निराकार निर्विकार सत्तामात्रहै "असङ्गो नहि सज्जते, असङ्गोह्ययंपुरुषः, असक्तंसर्वभृच्चैव" । इत्यादि श्रुति स्मृति के वाक्यप्रमाणसे कणादमत श्रुतिबाह्य अप्रमाण है, अरु न्यायकरके भी विरुद्ध है क्योंकि गुणवान्का गुणवान्केसाथ संसर्ग होताहै अतुल्यजाति का परस्पर सम्बन्धहोता नहीं, ताते निर्गुण निर्विशेष निराकार सर्वसे विलक्षण आत्मा सो किस अतुल्यजातीय करके संसर्ग सम्बन्धवान् हो उत्पन्न कदापि न होगा, ताते कणादमत न्यायकरके भी अरु अनेक श्रुति स्मृतियों के प्रमाण करके भी वेद विरुद्ध अप्रमाणही सिद्धहै ॥ अतएव सबश्रुति स्मृतिप्रमाण अलुप्त ज्ञानस्वरूप स्वयंज्योतिः आत्मा ब्रह्म है ॥ हे सौम्य!इस प्रकार विचार के प्रत्यगात्मा ब्रह्मको जिसने माना है अर्थात् अपना आप अनुभव कियाहै सोई आत्मवेत्ता मोक्ष को प्राप्तहोता है ॥ हे सौम्य! कोई एक एकदेशी आचार्य "प्रतिबोध विदितं" इस वाक्यके अर्थ को इसप्रकार वर्णन करते हैं कि आत्मा स्वसंवेद्य बुद्धिमें आत्मभावका आरोपकरके तिससे आत्मावेद्य (जाननेयोग्य) है, यह उन आचार्य्यों का कथन भी यथार्थ नहीं, क्योंकि इसमतमें आत्माको सोपाधिकत्व आवताहै, जब बुद्ध्युपाधिस्वरूपआत्माहुआ तो निरुपाधि जोआत्मस्वरूपहै तिसकी सिद्धि न भई क्योंकि "आत्मन्येवात्मानं पश्यति" "स्वयमेवात्मनात्मानंवेत्थत्वंपुरुषोत्तम" इत्यादि श्रुतिस्मृतियोंसे आत्माका एकत्व अरु निरुपाधिकत्व अरु ज्ञानवेद्यत्व प्रतीतहोताहै, अरु जब आत्मा ज्ञानस्वरूपहै तब उसको ज्ञानान्तरकी अपेक्षा असंभवहै। जैसे प्रकाशको प्रकाशान्तरकी अपेक्षा नहीं ॥ ताते यह एक देशी का मत भी समीचीन नहीं ॥ हे सौम्य! बौद्धके मतमें आत्मा इस प्रकार स्वसंवेद्यहै कि संविज्ञान जो है सो स्वसंवेद्यहै ॥ अर्थात्

१ बृहदारण्य उ० विषे । २ भगवद्गीताविषे । ३ बृहदारण्य उ० विषे । ४ कौशीतकी उ० विषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बुद्धिही आत्मरूप होकर अपनेको विषय करती है, यह बौद्धका मत भी असम्यक् है, क्योंकि इसमें विज्ञानको क्षणभंगुरत्व अरु निरात्मकत्व होजायगा क्योंकि प्रत्यक्ष जो है सो वर्तमानका प्रकाशकहै अरु क्षणान्तर विशिष्ट आत्मामें क्षणान्तर विशिष्ट वोही विज्ञान (बुद्धि) ब्रह्मका अभिव्यंजक (प्रकाशक) नहीं होसक्ती इससे बौद्धको यह अवश्यमानना पड़ेगा कि स्वात्मामें आपही क्षणमात्र विज्ञानवर्त्ततीहै ताते क्षणिकत्व आत्मामें साक्षात् सिद्धहुआ, अरु जो क्षणिकहै सो निरात्मक है ताते निरात्मकत्व सिद्धहुआ, अरु "[1] नहि विज्ञातुर्विज्ञाते विपरिलोपोविद्यते अविनाशित्वात्, नित्यं विभुंसर्वगतं, सैएवैषमहानजआत्माऽजरोऽमरोऽमृतोऽभयः" इत्यादि श्रुतियों से आत्मा को नित्यत्व अरु अविनाशित्व प्रतिपादन कियाहै सो उसके मतमें सर्वथा असंभव है॥ हे सौम्य! कोई एकआचार्य्य "प्रतिबोधविदितम्" इस श्रुतिवाक्यके अर्थ को इसप्रकार वर्णन करते हैं कि निर्निमित्तक (हेतुरहित) जो बोध सो प्रतिबोध उससे आत्मा विदित (जानाजाता) है, अर्थात् "ब्रह्माहमस्मि" ऐसा चिन्तन करतेहुए मुमुक्षुको जो चित्तके व्यापार रहित संप्रज्ञात समाधि तिस के अनन्तर सुषुप्तिकाल के आनन्द साक्षात्कारके समान जो आत्म बोध, अर्थात् असम्प्रज्ञात समाधि उसही को प्रतिबोध कहते हैं, इसमें यह "[2] अपरायत्तबोधोहि निदिध्यासनमुच्यते" वार्त्तिक कारका वचन प्रमाणहै कि निराश्रय निष्कारण जोबोध तिसको निदिध्यासन कहते हैं॥ अरु कोई एक आचार्य यह वर्णन करते हैं कि सकृत विज्ञान जो अपनी प्रवृत्तिसे एकबारही क्रिया कारक रूप अज्ञानको निवृत्त करताहै ऐसा जो विज्ञान सोई प्रतिबोधहै क्योंकि जब क्रियासे ब्रह्मात्मभावका अनुभव होगा तो आत्मा में प्रमातृत्व न हुआ तिससे पुनः ज्ञानान्तरका असंभवहोनेसे एकबारही मुक्तिका कारण जो सकृत विज्ञान तिसको प्रतिबोध

१—२—३ बृहदारण्य उ० विषे। ४ वार्तिककार वचनम्॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहते हैं ॥ हे सौम्य ! यह निर्निमित्तक अरु सकृतबोधवादियों का मत भी असंगत है क्योंकि अविद्याकी निवृत्ति करनेवाला जो आगंतुक (भावी) बोध सोनिर्निमित्तक नहीं होता क्यों जो कार्य्यहै सोसनिमित्तहै अरु सुषुप्तिकालीन आनन्दभी सनिमित्तक है क्योंकि अविद्याका जो पूर्व पूर्व निरोध अवस्था संस्कार उससे उत्पन्नहुई जो आत्माकारवृत्ति तिससे अभिव्यक्त (ज्ञात-प्रकट) जो चैतन्य तिसको सुख साक्षात्कार होताहै । अरुसकृतबोध भी प्रतिबोध शब्दका अर्थ नहीं क्योंकि प्रवृत्त कर्म्म फलोंके प्रति बन्धसे जबतक वर्त्तमान प्रमातृत्वके आभासकी निवृत्ति नहीं होती तबतक असकृत बोध अनुभव सिद्ध है । इससे यह उभय पक्षभी मुमुक्षुको आदर करनेयोग्य नहीं" हे सौम्य ! इन पूर्वोक्त समस्तअभिप्राय से महाभाष्यकार श्रीशंकराचार्यने यहवर्णन कियाहै कि "निर्निमित्तः सनिमित्तः सकृत वा असकृतवा, प्रतिबोध एवहिसः" अर्थात् यह बोध निष्कारणहो वा सकारणहो एकबार हो वा बारम्बारहो, परन्तु वा प्रतिबोध अर्थात् बोध बोध (प्रत्यय प्रत्यय) प्रति साक्षितासे प्रकाशमानहै, इससे लक्ष्यपदार्थ के विवेचन पूर्वक महावाक्योंसे उत्पन्न जो "परमात्माऽस्मि" यहज्ञान सोई सम्यक्ज्ञान है तिसहीसे अमृतत्वको मुमुक्षु प्राप्तहोताहै ॥

प्रश्न ॥ हे गुरो! यथोक्त आत्मविद्याकरके किसप्रकार अमृतत्व [मोक्ष] को मुमुक्षु प्राप्तहोताहै ॥

उत्तर ॥ हे सौम्य! "आत्मना विन्दते वीर्य्यं" (आत्मना वीर्य्यं विन्दते) [आत्माकरके ८ । सामर्थ्य ९ । प्राप्तहोताहै १० ।] अर्थात् अपने आपही करके अमरभावप्राप्ति का सामर्थ्य प्राप्त होताहै । धन, सहाय, मन्त्र, औषध, तप, यज्ञ, योग, व्रतादि, कृत सामर्थ्यसे मृत्युको जितनेकी शक्ति होती नहीं क्योंकि योग तपादिकृत सर्वका अनात्माकृत सामर्थ्य है, अरु अध्यात्मविद्या कृत जे सामर्थ्य हैं सो मोक्षके हेतुहै सो आत्माकरकेही प्राप्तहोताहै अन्यकरके नहीं ताते "विद्यया विन्दते" ऽमृतम्" (वि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्यया अमृतं विन्दते [विद्याकरके ११। अमृत १२। प्राप्तहोताहै १३।] अर्थात् अपनेआप आत्माका श्रवण मनन निदिध्यासनरूप अनन्य आत्मविद्या कि जिसको आत्मविद्या ब्रह्मविद्या राजविद्या पराविद्या, इत्यादि नामसे कहते हैं तिसविद्या करके अमरभाव [मोक्ष] अर्थात् अविद्याकृत जन्ममरणादि जे अनात्मधर्म तिससे रहित परम अमृत अपने आपको प्राप्तहोता है, आत्मविचार विद्यारूप सामर्थ्य विना अन्य उपाय मोक्षका नहीं। तथाच "नायमात्मा बल हीनेनलभ्यः" १२। ४॥

इह चेद वेदी दथ सत्य मस्ति न चेदिहा वेदीन् महती विनष्टिः। भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोका दमृता भवन्ति॥ १३। ५॥

[पदान्वयः]

इह चेत् अवेदीत् अथ सत्यं अस्ति चेत् इह न अवेदीन् महती विनष्टिः। भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः अस्मात लोकात् प्रेत्य अमृता भवन्ति १३। ५॥

[पदार्थ]

यहां सर्व में अधिकारी यदि जानताभया तो सत्य है यदि अधिकारीहोके न जानताभया तो उसको अतिदीर्घ विनाश है भूतोंबिषे भूतोंबिषे जानके धीरपुरुष इस लोकसे उठके अमर हो तेहैं १३। ५॥

[भावार्थमन्त्र ५ में का]

प्रजापतिरुवाच॥ हे शिष्य! "इह चेद वेदी दथ सत्य मस्ति" इह चेत अवेदीत् अथ सत्यं अस्ति [यहां सर्व में अधिकारी १। यदि २। जानताहुआ ३। तो ४। सत्य ५। है ६।] अर्थात् सुर नर तिर्यक् प्रत्यादि यावत् प्राणी मात्रको अज्ञान करके इस अनन्त दुःखरूप जगत् बिषे नाना-

१ कठवल्ली उपनिषद बिषे॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकारके जन्म जरा मरण रोगादिकोंका कष्टा अतिदुःख देनेवाली अनिवार्य्य प्राप्तिहै, इससे तिन सर्व्वमें एक यह मनुष्यही अविद्या कारण सहित इस संसारसे छूटनेके अर्थ अधिकारी है। सो यदि समर्थ होकर आत्माको जानताहुआ, अर्थात् पूर्वोक्त श्रुतिके "अन्यदेव विदितादथा अविदितादधि"[1] इस वाक्यप्रमाणसे, विदित, अविदित, कार्य, कारण, हेय, उपादेय, आदि सर्वसे पृथक् अविषय निर्विशेष सर्व प्रत्यय साक्षी आत्माको सम्यक् जानताहुआ तो उसका इस मनुष्य जन्ममें, जन्म, कर्म्म, जप, तप, योग, ध्यान, धारणा, दान, ज्ञान, विचार, समाधि, आदि सर्व सत्यही है, अर्थात् उसका जन्मादि सर्व सफलहै। अरु "न चेदिहावेदीत्महती विनष्टिः" [न चेत्इह न अवेदीत् महती विनष्टिः] [यदि ७। पूर्वोक्त अधिकारी ८। न ९। जानताहुआ १०। तो दीर्घ ११। विनाशहै १२।] अर्थात् जो कदापि पूर्वोक्त सुरनरादि प्राणी मात्रोंमेंअधिकृत यहमनुष्य अपने आप अविषयआत्माको सम्यक् प्रकार से न जानताहुआ तो उस पुरुषका अत्यन्त दीर्घ अनन्ता विनाश है। अर्थात् वारंवार जन्म जरा रोग मृत्यु आदिकोंका अविच्छेद लक्षणरूपा संसारगति तिसही को प्राप्तहोती है। हेसौम्य! इसप्रकार अपने आप निर्विषय निर्विशेष प्रत्यगात्मा को जानने अरु न जानने में जे गुण दोष हैं तिनको सम्यक्प्रकार विचारके जाननेवाले जे आत्मदर्शी ब्राह्मण ब्रह्मवेत्ता सो "भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः" [भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः] भूतों १३। भूतों बिषे १४। जानके १५। धीरपुरुष १६। [अर्थात् अव्याकृत महत्तत्व अहंकार आकाश वायु अग्नि जल पृथिवी इन आठ ८ कारण भूतोंबिषे अरु तिनका कार्य जे ब्रह्मलोकादि सर्व लोक अरु तदाश्रित स्थावर जंगमात्मक सर्वजीवप्रजा तिनाकार्य्य भूतों बिषे "यः सर्व्वेषु भूतेषु तिष्ठन् सर्व्वाणि भूतानि मन्तरोयं

[1] बृहदारण्य उ० अ० ५ में।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्व्वभूतेषुचात्मानं, सर्वभूतस्थमात्मानं, भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य" इत्यादि श्रुतियों के वाक्य प्रमाणसे एक अपने आप प्रत्यगात्माको निर्विशेषतारूप से जानके साक्षात् अनुभवकर धीर जे बुद्धिमान् विवेकशाली आत्मदर्शी पुरुष है सो "प्रेत्यास्माँल्लोकादमृताभवन्ति" (अकस्माँत् लोकात् प्रेत्य अमृता भवन्ति) [इस १७। लोकसे १८ उठके १९। अमर २०। होते हैं २१।] अर्थात् लोकैषणा से ६ कि जिस बिषे वित्तैषणा अरु पुत्रैषणाका अन्तर भावहै; छूटके अमर होते हैं, अर्थात् सर्वरूपसे सर्वत्र एक अद्वैत प्रत्यगात्म भावका अनुभवकर तत्स्थितिपाय साक्षात् अमर अजर अभय ब्रह्मरूपही होते हैं। तथाच ॥ "सैयो ह वैतत्परमं ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" ॥ १३। ५ ॥

इति श्रीसामवेदीयतलवकारशाखीकेनोपनिषद्भाषाटीकायां द्वितीयखंडः २ ॥

गुरुरुवाच हे शिष्य! पूर्व प्रतिपादन किया जो "अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानतां" यह श्रुतिवाक्य तिसके श्रवण से मंद बुद्धि मध्यम जिज्ञासुको संशय उत्पत्तिका अवकाश प्राप्त भया कि जो वस्तु होती है सो विज्ञात भी होती है प्रमाणोंकरके अरु जो वस्तु नहीं होती सो अविज्ञात शश शृंगवत् अत्यन्त असत् होती है ऐसा अनुमान कर पुनः बिचारता है कि श्रुतिने ब्रह्मको भी अविज्ञात प्रतिपादन किया है ताते ब्रह्म असत्यही क्यों नहो। हे शिष्य! इसप्रकार मन्दबुद्धि जिज्ञासु पुरुषको ब्रह्म के अस्तित्व त्रिषयक त्रिकल्पात्मक ठ्यामोह न होय एतदर्थ आगे वेद भगवान् आख्यायिका का आरम्भ करते हैं अथवा सोई ब्रह्म कि जो सर्वप्रकार स्तुती करने योग्य है अरु देवताओं का परादेव

---

२ ईशावास्य उ० बिषे। ३ कैवल्य उ० बिषे। ४ केन उ० बिषे। ५ मुण्डक उपनिषद् के ३ मुण्ड बिषे॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ईश्वर का भी ईश्वर सो दुर्विज्ञेय है अरु सोई देवताओं को जय का असुरोंको पराजयका हेतु सो परमात्मा क्यों नहीं किन्तु सदा सर्वत्र सर्व को सिद्ध है इस अर्थ के बोधक श्रुति वाक्य आगे देखावे हैं अथवा ब्रह्मविद्याकी श्रेष्ठता प्रशंसाके अर्थ उत्तर ग्रंथका प्रारम्भ करते हैं क्योंकि अग्नि इन्द्रादि देवताओंको केवल ब्रह्म विज्ञान अर्थात् ब्रह्मविद्या बोधद्वारा सर्वांतर ब्रह्म बोधसे श्रेष्ठत्व अरु पूजनीयत्व प्राप्तभया है ताते ब्रह्म विद्याका महत्त्व सर्वोत्तम है ॥ अथवा ब्रह्म अति दुर्विज्ञेय है ऐसा सर्वको अनुभव करावने के अर्थ उत्तर ग्रंथका प्रारम्भहै क्योंकि अग्नि आदि देवता वीर्य्य विद्या, विज्ञान, तेज आदि श्रेष्ठ गुणों करके सम्पन्न हैं तथापि क्लेश करकेही ब्रह्म को ज्ञात करते भये अरु सर्व देवताओं का अधिपति ईश्वर होत सन्ते भी इन्द्र ब्रह्म के जानने में समर्थ न भया अरु ब्रह्मविद्या के विना प्राणियों को कर्तृत्वादि अभिमान है सो मिथ्याही है जैसे देवताओं ने सर्वशक्तिमान् परब्रह्म परमात्मा के महत्त्व को विनाही जाने असुरों के जय करने में अपना मिथ्याही अभिमान किया सो परिणाम में व्यर्थ भया तैसे इत्यादि तात्पर्य्य बोधनार्थ उत्तर ग्रन्थका प्रारम्भ करते हैं ॥

ॐतत्सत्ब्रह्म ॥

ब्रह्म[1] ह[2] देवेभ्यो[3] विजिग्ये[4] तस्य[5] ह[6] ब्रह्मणो[7] विजये[8] देवा[9] अमहीयंत[10]। त[11] ऐक्षन्त[12] अस्माकमेवायं[13] विजयोऽस्माकमेवायं[14] महिमेति[15] ॥ १४-१ ॥

[पदान्वयः]

ब्रह्म[1] ह[2] देवेभ्यो[3] विजिग्ये[4] तस्य[5] ह[6] ब्रह्मणः[7] विजये[8] देवाः[9] अमहीयंत[10] ते[11] ऐक्षन्त[12] अस्माकं[13] एव[14] अयं[15] विजयः[16] अस्माकं[17] एव[18] अयं[19] महिमा[20] इति[21] ॥ १४-१ ॥

[पदार्थ]

ब्रह्म[1] सोई[2] देवताओं[3] के अर्थ विजय प्राप्त करताभया तिस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही[६] परमात्माके[७] विजय[८] में सर्वदेवता[९] महिमाको[१०] प्राप्त होतेभये सो[११] देखते[१२] भये हमारा[१३] ही[१४] यह[१५] विजय[१६] अरु हमारी[१७] ही[१८] यह[१९] महिमा[२०] है[२१] ॥ १४-१ ॥

[भावार्थ]

प्रजापतिरुवाच ॥ हे शिष्य! प्रजापति अपने जिज्ञासु प्रतिकहतेभये कि हे सौम्य! पूर्व किसी एककालमें देवासुर संग्रामभया तहां असुरों से देवता जयप्राप्तकर कोई एक मेरुकिंवा। हिम शिखरादि स्थानमें विश्राम करते परमात्मशक्तिको न जान परस्पर विवाद करते भये। हे सौम्य! "ब्रह्म[१] ह[२] देवेभ्यो[३] विजिग्ये[४] ,।, (ब्रह्म[१] ह[२] देवेभ्यो[३] विजिग्ये[४] ([परमात्मा १। सोई २ देवताओंके अर्थ ३। विजय प्राप्तकरताभया ४।] अर्थात् पूर्व विदित अधिदितसे भिन्न सर्वप्रत्ययदर्शी अविषय निर्विशेष परमात्मा जो ,।, प्रतिबोधविदितं ,।, इस श्रुतिसे प्रतिपादन किया है सोई परमात्मा इन्द्रादि देवताओं के अर्थ विजयप्राप्त करताभया ताते देवताओं के मध्य विजयका हेतु स्वयंआपही हैं तैसेही असुरों के मध्य पराजयका हेतु भी हैं क्यों जो उससे इतर शक्तिमान् कोई नहीं किसीसमय देवताओमें जयशक्ति असुरोंमें पराजयशक्ति किसी समय असुरों में जयशक्ति देवताओं में पराजय शक्तिको प्रकटकर अपनी महिमाको आपही देखै है ,।,*सर्वस्य द्रष्टा ,।, सो परमात्मा देवता निमित्तकरके संग्राममें असुरोंको जीतताभया कैसेहैं वो असुरजगत् केवैरी ईश्वर मर्य्यादा जो वर्णाश्रमादिकोंके धर्म्म कर्म्म उपासना आदि हैं तिनके विघातक तिनको जयकर्त्ता परमात्मा "।: तस्य[५] ह[६] ब्रह्मणो[७] विजये[८] देवा[९] अमहीयन्तं[१०] ,।, (तस्य[५] ह[६] ब्रह्मणः[७] विजये[८] देवा[९] अमहीयन्तं[१०]) [तिस ५ ही ६ परमात्माके ७ विजयमें ८ देवता९ महिमाको प्राप्तहोते भये १०।] अर्थात् जो देवताओंके निमित्त से धर्म्मविघातक असुरों का जयकर्त्ता जे सर्व महिमावान् परमात्मा तिसकी विजय महिमा में इन्द्रादि सर्वदेवता सर्वत्र पूज्यादि महिमावान् होतेभये परन्तु जिस सर्वान्तर प्र-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्यगात्मा सर्व शक्तिमान् परमात्मा जो सर्व को सर्व कर्मों का फलदाता है अरु जिसकी सत्ताके आश्रय सर्व जगत् की स्थिति पालना संहारादि व्यापार होता है तिस प्रत्यगात्मा की विजय महिमा को न जानके "तै ऐक्षंतास्माकमेवायं विजयो स्माकमेवायं महिमेति" (ते ऐक्षंत अस्माकं एव अयं विजयः अस्माकं एव अयं महिमा इति) [सो । देखतेभये हमारा ही यह विजय हमारी ही यह महिमा है] अर्थात् सो अग्न्यादि देवता अग्नि आदि नामरूप शरीराभिमानी अपने आप कृत विजय महिमा को मान असत्य अभिमान कर परस्पर कहते भये कि हमहीं ने इन असुरों का जय किया है अरु हमारी ही यह सर्व विजय महिमा है। हे सौम्य! इस प्रकार अग्न्यादि सर्व देवता सर्व शक्तिमान् प्रत्यगात्मविषयक अज्ञानवश असत्य अभिमान कर परस्पर वाद करते भये जो असुरों को हमने जय किया २। इस प्रकार अग्नि वायु इन्द्रादि देवता विजयफल की प्राप्ति में अपनाहीं पुरुषार्थ मानते भये परन्तु सर्वांतर जे प्रत्यगात्मा ईश्वर तिसका दिया विजय फल है तिसको न जानते भये॥ १४।१॥

तद्धैषां विजज्ञौ तेभ्यो ह प्रादुर्बभूव तन्न व्यजानन्त किमिदं यक्षमिति ॥ १५ । २ ॥

[पदान्वयः]

तत् ह एषां विजज्ञौ तेभ्यः ह प्रादुर्बभूव तत् न व्यजानंत किं इदं यक्षं इति ॥ १५ । २ ॥

[पदार्थ]

सो निश्चय इनदेवताओंको जानतोभया तिन देवताओं के अर्थ निश्चय प्रादुर्भूत होताभया तिसको न जानतेभये कौन यह पूजनीय है ऐसो ॥ १५ । २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भावार्थ मंत्र २ का

प्रज्ञा० हे सौम्य! "तद्धैषां विजज्ञौ तेभ्यो ह प्रादुर्बभूव ,।, (तत् ह एषां विजज्ञौ तेभ्यः ह प्रादुर्बभूव) [सो १। ई २। इनदेवताओं को ३। जानता भया ४। तिन देवताओं के अर्थ ५। निश्चय ६। प्रादुर्भूत होता भया ७।] अर्थात् सोई परमात्मा जो सर्व प्रत्ययों का साक्षी निर्विशेष है सो निश्चय इन देवताओंको जे मिथ्याभिमानी हैं तिसको जानताभया वो सर्व का द्रष्टा है एतदर्थ देवताओं का मिथ्याभिमान समझ देवताओं पर कृपा करके कि मिथ्याभिमान करके ये देवता असुरवत् पराजय न पावें एतदर्थ मिथ्या अभिमान निवारण करके अनुग्रह करूं ऐसा विचार सर्व का प्रत्यगात्मा सर्व शक्तिमान् निर्विशेष अविषय ब्रह्म सो उन अग्नि आदि असत्याभिमानी देवताओं के हितार्थ जो परमात्मा बुद्ध्यादिकों का विषय न होत निर्विशेष सर्व का प्रकाशक है अपनी योग शक्ति निमित्तकरके अति अद्भुत सर्व को विस्मयकारक अपूर्वरूप से इन्द्रादि देवताओं के दृष्टिगोचर होत प्रत्यक्ष होताभया परन्तु "तन्न व्यजानन्त किमिदं यक्षमिति ,।, (तत् न व्यजानन्त किं इदं यक्षं इति)॥[वो प्रादुर्भूत ब्रह्म तिसको ८ न ९ जानतेभये १० कि कौन ११ यह १२ पूजनीय है १३।१४।] अर्थात् वो विशेषरूपसे प्रादुर्भूत जो निर्विशेष ब्रह्म तिसको देवता न जानके परस्पर कहतेभये कि हे भाई! यहअपनी वृष्टिगोचर जो महाअद्भुत अपूर्व विस्मय कारक प्रकाशरूप पूजनीय कौन है मत कोई असुरही मायारूप करके पुनः अपने सम्मुख आयाहो इसको भली प्रकार से जानना योग्य है॥ १५। २॥

ते अग्निमब्रुवन्जातवेद एतद्विजानीहि किमेतद्यक्षमिति तथेति ॥ १६। ३॥

[पदान्वयः]

ते अग्निं अब्रुवन् जातवेद एतत् विजानीहि किं एतत् यक्षं इति तथा इति॥ १६। ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[पदार्थ]

सो देवता अग्निसे कहतेभये (कि) हे जातवेद! यह ज्ञातकरो कौन यह पूजनीय है तथाऽस्तु ॥ १६ । ३ ॥

[भावार्थमंत्र तीसरेका]

प्रजा० हे सौम्य! पूर्वोक्त प्रकार उस अति अद्भुत सविशेष ब्रह्म रूपको न जानके "ते अग्नि मब्रुवन् {ते अग्निं अब्रुवन्} {सो देवता १। अग्निसे २। कहतेभये ३।} अर्थात् उस सविशेष ब्रह्मको जाननेकी इच्छाकरते सर्वदेवता अग्निदेवसे कहतेभये कि हे अग्नि! "जातवेदएतं द्विजानीहि" {जातवेदः एतं विजानीहि} [हे जातवेद! ४। इसको ५। ज्ञातकरो ६। ७] अर्थात् हे जातवेद! सर्व के जाननेवाले अथवा उत्पन्न भयाहै वेद जिस लोकादि अग्नि से सो कहिये जात वेद ऐसा जो तू है सो हम सर्व देवताओं के मध्य तेजस्वी अरु पराक्रमी है ताते इसको जो यह हम तुम सर्वके दृष्टिगोचर महाअद्भुत अपूर्व परमतेजवान् पूजनीय प्रतीत होता है तिसको सर्व रीति से ज्ञात करो जो "किमेतद्यक्षमिति {किं एतत् यक्षं इति} [कौन ८ यह ९ पूजनीयहै १०। ११] अर्थात् कौन यह महाप्रतापवान् अपूर्व पूजनीयहै। इसके समीपजाय भलीप्रकार ज्ञातकरो इस प्रकार जब सर्व देवताओं ने कहा तब वो अग्नि इन्द्रादि देवता से "तथेति {तथा इति} [तथास्तु १२ ऐसाकहताभया १३] अर्थात् देवताओं के वाक्यको अंगीकार करताभया ॥ १६ । ३ ॥

तदभ्यद्रवत्तमभ्यवदत् कोऽसीत्यग्निर्वा अहमस्मीत्यब्रवीज्जातवेदा वा अहमस्मीति ॥ १७ । ४ ॥

पदान्वयः]

तत् अभ्यद्रवत् तं अभ्यवदत् कः असि इति। अब्रवीत् अग्निः वा अहं अस्मि इति वा जातवेदा वा अहं अस्मि इति ॥

CC-0: Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[पदार्थ]

सो अग्नि जातोभया सो परमात्मा प्रश्नकर्तोभया (तू) कौन है इति (तबअग्नि) कहताभया अग्नि नामकरके मैं हूं अथवा जातवेदा मैं हूं इति ॥ १७ । ४ ॥

[भावार्थ मन्त्रचौथेका]

प्रजा० हे सौम्य ! उक्तप्रकार सर्व देवताओं ने अग्नि से जब कहा तब "तदभ्यद्रवत्" { तत् अभिअद्रवत् } [सो १ अग्नि जाताभया २ ।] अर्थात् अग्निदेव उस पूजनीय परमदेव के समीप जाताभया । परन्तु जिस ब्रह्मके ज्ञातके अर्थ गया तिसके समीप जातेही अपनी प्रगल्भतासे रहितहोय तूष्णी खड़ा रहा अर्थात् उस परमअद्भुत विशेष स्वरूपवान् परमात्मा के समीप उसकी परीक्षार्थ सर्व पुरुषार्थवान् अग्निगया सो उस परमशक्तिमान् सर्वज्ञ स्वयं प्रकाश परमात्मा के समीप जातेही प्रश्न शक्तिमें रहित काष्ठवत् मौन होके खड़ारहा । तब "तदभ्यैवदत्" { तत् अभि अवैदत् } [वोपरमात्मा ३ प्रश्न करता भया ४ ।] अर्थात् सो सविशेष परमात्मा कि जिसकेपास अग्नि खड़ा है अपने समक्ष खड़ा जो अशक्तिमान् अग्नि तिस प्रति प्रश्न करताभया कि "कोऽसीति" { कः असि इति ? [तू कौन ५ है ६-७-] अर्थात् तू कौन है । एतना जब उस अद्भुत अपूर्व पूजनीयने प्रश्न किया तब उस प्रश्नद्वारा उत्तर प्रदान शक्ति पाय साभिमान अग्नि "अग्निर्वा अहमस्मीत्यब्रवीज्जातवेदावा अहमस्मीति" { अब्रवीत् अग्निः वा अहं अस्मि इति वा जातवेदा अहं अस्मि इति ? [कहताभया ८ अग्नि ९ मैं १० हूं ११ अथवा १२ जातवेदा १३ । १४ मैंहूं १५ बस १६] अर्थात् वो साभिमान अग्नि कहता भया कि अग्नि नामकरके अरु जातवेदा विशेषण करके विख्यात जो प्रत्यक्षदेव सो मैं हूं ॥ १७ । ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मिंस्त्वयि किं वीर्य्य मित्यपीदꣳ सर्वं । दहेयं यं दिदं पृथिव्या मि ति ॥ १८ । ५ ॥

[पदान्वयः]

तस्मिन् त्वयि किं वीर्य्य इति अपि इदं सर्वं दहेयं यत् इदं पृथिव्यां इति ॥ १८ । ५ ॥

[पदार्थ]

तिस तेरे बिषे क्या सामर्थ्य है एतना । निश्चय यहँ सर्व भस्म करताहों जो यह पृथिवी बिषे हैं सो ॥ १८ । ५ ॥

[भावार्थ मन्त्र ५ मेंका]

॥ प्रजा० ॥ हे सौम्य ! उक्त प्रकार अग्नि ने साभिमानतापूर्वक जब उस पूजनीय परमात्मा प्रति अपने को नाम दो करके विख्यात कहा तब वो अभिमान नाशक सर्व शक्तिमान् सर्वज्ञ सविशेष परमात्मा कहता भया कि हे अग्नि ! " तस्मिंस्त्वयि किं वीर्य्य " (तस्मिन् त्वयि किं वीर्य्य) [तिस १ । तेरे बिषे २ । क्या ३ । सामर्थ्य है ४ ।] अर्थात् तिस तेरे बिषे कि जो नामद्वय करके विख्यात हैं क्या सामर्थ्य है " इति " (इति) [इसप्रकार ५ ।] जब परमात्मा ने अग्नि से पुनः प्रश्न किया तब वो साभिमानी अग्नि उत्तर देता भया कि " अपीदꣳ सर्वं दहेयं यं दिदं पृथिव्यां मि ति " (अपीदꣳ सर्वं दहेयं यत् इदं पृथिव्यां इति) [निश्चय ६ । यह ७ । सर्व ८ । भस्म करताहों ९ । जो १० यह ११ । पृथिवी बिषे है १२ । सो १३ ।] अर्थात् पृथ्वी उपलक्षण करके सम्पूर्ण जगत् बिषे यावत् नाम रूपात्मक जो कुछ है तावत् सर्व को मैं भस्म करताहों ताते ब्रह्माण्ड दाहक सामर्थ्य मेरे बिषे है ॥ १८ । ५ ॥

तस्मै तृणं निदधावे तं दहे ति तदुपप्रेयाय ॥ सर्वजवेन तन्न शशाक दग्धुं स तत एव निववृते नैतदशकं विज्ञातुं यदेतद्यक्षमिति ॥ १९ । ६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[पदान्वयः]

तस्मै तृणं निदधौ एतत् दहेः इति तत् उपप्रेयाय सर्वजवेन तत् दग्धुं न शशाक सः ततः एव निववृते न एतत् अशकं विज्ञातुं यत् एतत् यक्षं इति ॥ १६ । ६ ॥

[पदार्थ]

तिस अग्नि के समक्ष तृणं धरताभया (अरु कहा) इसको दहनकरो तब (सो अग्नि) तृणं समीपजायके सर्व पुरुषार्थ करके उस तृणको) दग्धकरनेके न शक्तिमान् होताभया (तब) सो अग्नि उस यक्षके समीपसे भी फिरताभया (अरु कहा कि) नहीं इसको जाननेको (हम) शक्तिमान् जो यह पूजनीय कौन है ॥ १६ । ६ ॥

[भावार्थ मन्त्र छठे का]

॥ प्रजा० ॥ हे सौम्य ! जिस परब्रह्म परमात्मा अन्तर्यामीकी सत्ताके लवलेशको पायके अग्नि सम्पूर्ण ब्रह्माण्डके दहन करने में सामर्थ्यवान् है तिसको साक्षात् विशेषरूपसे अपने समक्ष न जानके अभिमान पूर्वक अपना सर्व दाहक सामर्थ्य सूचितकिया तब ॥ "तस्मै तृणं निदधावेतद्दहे ति" ६ तस्मै तृणं निदधौ एतत् दहेः इति ? [तिसके समक्ष १ । तृण २ । धरताभया ३ । यह ४ । दहनकरो ५-६ ।] अर्थात् उस परमपूजनीय परमात्मा ने तिस साभिमान अग्निके समक्ष एक सूखातृण रक्खा अरु कहा कि हे अग्ने ! जो तेरे बिषे सर्व ब्रह्माण्ड दाहक शक्ति हैं तो तुम यह तृण जो तुम्हारे समक्ष रक्खा है तिसको दहनकरो अरु जो इसको दहन न करो तो सर्व दाहकत्व अभिमानको परित्याग करो । इसप्रकार जब उस परमात्माने उस साभिमान अग्निसे कहा तब अग्नि " तदुपप्रेयाय सर्वजवेन तन्न शशाक दग्धुं " ६ तत् उपप्रेयाय सर्वजवेन तत् न शशाक दग्धुं ? [उसतृण ७ । समीप जायके ८ । सर्व पुरुषार्थ करके ६ तिस तृणको १० । दग्धकरने बिषे ११ न १२ शक्तिमान् होताभया १३] अर्थात् उस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तृणसमीप अपने सर्वउत्साह पुरुषार्थ सहितजाय सर्वप्रकार उस तृणको दग्धकरनेके अर्थ अनेक रीत्या पुरुषार्थ करताभया तथापि उसतृणको दग्धकरनेको शक्तिमान् न भया। हे सौम्य! जब उस ब्रह्मदत्त तृणको दग्धकरनेमें वो जातवेदा अग्नि किसीप्रकार। समर्थ न भया तब हत प्रतिज्ञहोय लज्जा संयुत "। स[१४] तत[१५] एव[१६] निववृते[१७] "। <स[१४]: तत[१५]: एव[१६] निववृते[१७]> [सो अग्नि १४। उसके समीप से १५। भी १६। फिरता भया १७।] अर्थात् सो अग्नि जो दाहक सामर्थ्यका अभिमानीरहा उस परमपूजनीय ब्रह्मके समीपसे भी फिर जाय देवताओं से यह कहता भया कि "। नै[१८] तद[१९]शकं[२१] विज्ञातुं[२०] य[२२] देतद्यक्ष[२३][२४] मि[२५]ति"। <न[१८] एतत्[१९] विज्ञातुं[२०] अशकं[२१] यत्[२२] एतत्[२३] यक्षं[२४] इति[२५]> [नहीं १८। इसको १९। जाननेको २०। शक्तिमान् २१। जो २२। यह २३। पूजनीय २४। कौनहै २५।] अर्थात् नहीं है इसको भलीप्रकार जानने को सामर्थ्यवान् हम कि जो यह परम पूजनीय महाशक्तिमान् कौनहै ॥ १९। ६ ॥

अथ[१] वायु[२]मब्रुवन्[३] वाय[४]वेत[५] द्विजानी[६] हि[७] किमेतद्य[८] क्षमि[९]ति[१०] तथे[११]ति[१२][१३] ॥ २०। ७॥

[पदान्वयः]

अथ[१] वायुं[२] अब्रुवन्[३] वायो[४] एतत्[५] विजानी[६] हि[७] किं[८] एतत्[९] यक्षं[१०] इति[११] तथा[१२] इति[१३] ॥ २०। ७॥

[पदार्थ]

तिसके अनन्तर[१] वायु[२] से कहते[३] भये हे वायु[४]! यह[५] ज्ञात[६]कर निश्चय[७]करो कौन[८] यह[९] पूजनीय[१०] है[११] तथा[१२]ऽस्तु इति[१३] ॥ २०। ७॥

[भावार्थ मन्त्रसातवेंका]

प्रजा० हे सौम्य! पूर्वोक्त प्रकार जब अग्निने उस परम पूजनीय सविशेष महाशक्तिमान् परमात्मा के समीपसे लज्जावान् होय देवताओं के समीप आयकहा कि मैं उसयक्षके जाननेमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समर्थ नहीं जो यह कौनहै तब "अथवायुमब्रुवन्" (अथ वायुं अब्रुवन्) [तिसके अनन्तर १। वायुसे २। कहते भये ३।] अर्थात् तिसके अनंतर सर्व देवता वायु देवसे कहतेभये कि "वायेतद्विजानीहि" (हे वायो! एतत् विजानीहि) [हे वायु! ४। यह ५। ज्ञातकरके ६। निश्चयकरो ७।] अर्थात् हे वायु! देव यह अपूर्व अद्भुतस्वरूपसे जो अपनीदृष्टि गोचर स्थित अरु जिसके समीपसे अग्नि निवृत्त भयाहै तिसको आप ज्ञातकरके निश्चयकरो जो "किमेतद्यक्षमिति" (किं इदं यक्षं इति) [कौन ८। यह ९। पूजनीय है १०। वस ११।] अर्थात् कौन यह महाप्रकाशवान् अद्भुतरूप से प्रकट पूजनीय है तिसको। हे सौम्य! इसप्रकार जब सर्व देवताओंने वायुदेव से कहा तब वायु "तथेति" (तथा इति) [तथास्तु १२ ऐसा कहताभया १३।] अर्थात् देवताओं के वाक्यको अंगीकार करता भया॥२०।७॥

तदभ्यद्रवत्तमभ्यवदत्कोऽसीति। वायुर्वा अहमस्मीत्यब्रवीन्मातरिश्वा वा अहमस्मीति॥२१।८॥

[पदान्वयः]

तत् अभि अद्रवत् तं अभिअवदत् कः असि इति अब्रवीत् वायुः वा अहं अस्मि इति वा मातरिश्वा अहं अस्मि इति २१।८

[पदार्थ]

वोवायु जाताभया सो परमात्मा प्रश्न करताभया तू कौन है इति (तब वायु) कहताभया वायु नामकरके मैं हूं अरुमातरिश्वा मैं हूं इति॥२१।८॥

[भावार्थ]

प्रजा० हे सौम्य! उक्त प्रकार जब देवताओंने वायुदेवसे कहा तब तथास्तु कहके "तदभ्यद्रवत्" (तत् अभिअद्रवत्) [वो वायु १। जाताभया २।] अर्थात् देवताओं से तथास्तु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहके वायु देवता उस पूजनीय परमदेवके समीप जाता भया। परंतु जिस परमात्मा के विज्ञानार्थ गया तिसके समीप जाते ही अग्निवत् प्रश्नादि शक्तिसे रहित तूष्णीं खड़ारहा तब "तम[1] भ्यवदत्[4]" ८ तं[3] अभिअवदत्[4] ; [वो सविशेष परमात्मा ३। प्रश्नकरता भया ४।] अर्थात् वो देवहितार्थ विशेष रूप धारण किये जे निर्विशेष परमात्मा सो उस अशक्तिमान् वायु प्रति प्रश्नकरता भया कि तू "को[5] ऽसी[6] ति[7]" ८ कः[5] असि[3] इति[7] ; [कौन ५। है ६-७] इस प्रकार उस सविशेष परमात्माने प्रश्न किया तब वो वायु प्रश्नद्वारा उत्तर प्रदान शक्तिपाय कहताभया "वायुर्वा[9] अहमस्मी[11] त्य[12] ब्रवीत्[13]" ८ अब्रवीत्[8] वायुः[9] वा[10] अहं[11] अस्मि[12] इति[13] ; [कहताहुआ ८। वायु ९। नामा १०। मैं ११। हूं ४। ५ [अर्थात् वायु नाम करके जे विख्यात देवता सो मैं[12] हूं[13] "मातरिश्वा[15] वा[14] अहमस्मी[16] ति[17]" ८ वा[14] मातरिश्वा[15] अहं[16] अस्मि[17] इति[18] ; [अथवा १४। मातरिश्वा १५। मैं १६। हूं १७। इति १८।] अर्थात् अंतरिक्षमें चलने वाला ताते मातरिश्वा इस विशेषण से विख्यात जो देवता सो मैं हूं इति २१।८

तस्मिं[1]स्त्वयि[2] किं[3] वीर्य्य[4] मित्य[5]पीद[6]ग्वं सर्व[7] माददीयं[8] यदिदं[9] पृथिव्या[10]मिति[11] ॥ २२ । ९ ॥

[पदान्वयः]

तस्मिं[1] त्वयि[2] किं[3] वीर्य्यं[4] इति[5] अपि[6] इदं[7], सर्वम्[8] आददीयं[9] यत्[10] इदं[11] पृथिव्यां[12] इति[13] ॥ २२ । ९ ॥

[पदार्थ]

तिस[1] तेरे[2] बिषे क्या[3] सामर्थ्य[4] है इति[5] निश्चय[6] यह[7] सर्व[8] धारण[9]कररहाहौं जो[10] यह[11] पृथिवी[12] बिषे है तिसको[13] ॥ २२ । ९ ॥

[भावर्थ मन्त्रनवमेंका]

प्रजा० हे सौम्य ! उक्त प्रकार जब साभिमानता पूर्वक वायुने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तर दिया तब परमशांत परमात्मा गम्भीर स्वरसे पुनः प्रश्न करताभया कि हे वायु! "तस्मिंस्त्वयि किं वीर्यं" ? [तस्मिन् त्वयि किं वीर्यं ?] [तिस १। तेरे बिषे २। क्या ३। सामर्थ्य है] अर्थात् तिस तेरे बिषे कि जो नाम दो करके विख्यात हैं क्या सामर्थ्य हैं "इति" ? [इति ?] [सो कहो ५।] इसप्रकार जब परमात्माने सामर्थ्य विषयक प्रश्न किया तब वो साभिमान वायु उत्तर देताभया कि "अपीदꣳ सर्वं मादत्तीयं" ? [अपि इदं सर्वं आदत्तीयं ?] [निश्चय ६। यह ७। सर्व ८। धारण करताहौं ९।] अर्थात् निश्चयकरके इससर्वको मैं धारण करता हौं। "यादिदं पृथिव्यां मिति" ? [यत् इदं पृथिव्यां इति ?] [जो १०। यह ११। पृथिवी बिषे हैं १२। सो १३।] अर्थात् पृथिवी उपलक्षणकरके यावत् ब्रह्माण्डहैं तावत् सर्वको मैं धारण करताहौं। जैसे सूत्रमणि गणको तैसे। अरु सर्वके उड़ावनेमें भी समर्थहौं इति॥ २२। ९॥

तस्मै तृणं निदधावेतदादत्स्वेति तदुपप्रेयाय सर्वजवेन तन्न शशाकादातुं स तत एव निववृते नैतदशकं विज्ञातुं यदेतद्यक्षमिति ॥२३।१०॥

[पदान्वयः]

तस्मै तृणं निदधौ एतत् आदत्स्व इति तत् उपप्रेयाय सर्वजवेन तत् आदातुं न शशाक सः ततः एव निववृते न एतत् विज्ञातुं अशकं यत् एतत् यक्षं इति ॥ २३। १०॥

[पदार्थ]

तिसको तृणं धारताभया (अरुकहा) यह उठाओ तब सो वायु समीपजायके सर्व पुरुषार्थकरके उस तृणको उठावनेको न शक्तिमान् होताभया (तब) सोवायु उस यक्ष समीपसे भी फिरताभया (अरु कहा कि) नहीं इसको जाननेको शक्तिमान् (हम) जो यह पूजनीय कौन है॥ २३। १०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[भावार्थ मन्त्रदशमेंका]

प्रजा० हे सौम्य! जिस चैरन्य परमात्माके बल सत्ताके लवलेशको पाय वायु सर्व ब्रह्माण्डके धारने भ्रमावने में समर्थ हैं तिसको स्वसमक्ष में न जानके उसके आगे अपना सामर्थ्य साभिमानतासे सूचित किया तब वो अभिमान नाशक परमात्मा "तस्मै तृणं निदधौव" ¢ तस्मै तृणं निदधौ ; [तिसको १। तृण २। धरताभया ३।] अर्थात् उस साभिमान वायुके समक्ष एक सूखा तृण धरके कहा कि हे वायु! "एतदादत्स्वेति" ¢ एतत् आदत्स्व इति ; [यह ४। उठाओ ५। बस ६।] अर्थात् यह जो तुम्हारे समक्ष सूखा तृण है तिसको उठाओ वा भ्रमाओ। अरु जो इसको न उठाओ तो अपने नाम द्वय सहित ब्रह्माण्ड धारक अभिमानको त्यागकरो इसप्रकार जब उस गर्व नाशक परमात्माने कहा तब वो वायु "तदुपप्रेयाय सर्वजवेन तन्न शशाकादातुं" ¢ ततुं उपप्रेयाय सर्वजवेन तत् आदातुं न शशाक ; [उसतृण ७। समीप जाय ८। सर्व पुरुषार्थ करके ९। तिस तृणको १०। उठावनेबिषे ११। न १२। शक्तिमान् होता भया १३।] अर्थात् उस तृण समीप अपने सर्व उत्साह पुरुषार्थ सहित जाय उस तृणको उठावने के अर्थ अनेक प्रकार पुरुषार्थ करताभया तथापि उस तृणको उठावने बिषे न शक्तिमान् होता भया। हे सौम्य! जब उस ब्रह्मदत्त तृणको उठावने बिषे वो मातरिश्वा वायु किसी प्रकार समर्थ न भया तब हत प्रतिज्ञ होय लज्जा संयुक्त "स तत एव निववृते" ¢ सः ततः एव निववृते ; [सो वायु १४। उसके समीप से १५। भी १६। फिरताभया १७।] अर्थात् सो वायु जो ब्रह्माण्ड धारक अभिमानका धारकरहा उस परमपूजनीय ब्रह्मके समीप से भी फिरजाय देवताओंसे कहताभया कि "नैतद्देशकं विज्ञातुं यदेतत्यक्षमिति" ¢ एतत् विज्ञातुं न अशकं यत् एतत् यक्षं इति ; [इसको १९। जाननेको २०। नहीं १८।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हम शक्तिमान् २१। जो २२। यह २३। पूजनीय २४। कौन है २५] अर्थात् इसको भलीप्रकार जानने को नहीं हैं हम शक्तिमान् जो यह परमपूजनीय महाशक्तिमान् कौनहै॥२३।१०॥

अथेंद्र मब्रुवन्मघवन्नेतद्विजानी हि किमेतद्यक्षं मितीति तदभ्यद्रवत्तस्मात्तिरोदधे २४।११॥

[पदान्वयः]

अथ इंद्रं अब्रुवन् मघवन् एतत् विजानी हि। किं एतत् यक्षं इतीति तत् अभिअद्रवत् तस्मात् तिरोदधे॥२४।११॥

[पदार्थ]

तिसके अनन्तर इंद्रसे कहतेभये हे मघवा! यह ज्ञातकर निश्चयकरो कौन यह पूजनीय हैं बस तथास्तु इतिसोइन्द्र जाता भया इंद्रसे तिरोधान् होताभया॥ २४। ११॥

[भावार्थ मन्त्रग्यारहमेंका]

प्रजा० हे सौम्य! कहे प्रकार जब वायुदेव भी उस परमात्मा के समीप से लज्जावान्हो देवताओं के पास आया अरु कहा कि मैं उसके जानने में समर्थ नहीं तब "। अथेंद्र मब्रुवन्"। ८ अथ इंद्रं अब्रुवन्; [तिसके अनन्तर १। इन्द्रसे २। कहते भये ३।] अर्थात् सर्व देवता अपने अधिपति इन्द्रसे प्रार्थनाकरतेभये कि" मघवन्नेतद्विजानी हि"। ८ मघवन् एतत् विजानी हि; [हे मघवा! ४। यह ५। विज्ञातकर ६। निश्चय करो ७।] अर्थात् हे मघवा! आप हमारे राजा बल बुद्धि तेज करके सम्पन्न हौ ताते इस महाअद्भुत परम पूजनीय को कि जिसके समीपसे अग्नि अरु वायु विनाहीं उसके जाने लज्जावान्हो फिर आये हैं तिसको भलीप्रकार जानके निश्चय करिये जो "किमेतद्यक्षं मिति"। ८ किं एतत् यक्षं इति; [कौन ८। यह ९। पूजनीय है १०। इति ११।] अर्थात् अपने समक्ष कौन यह महाशक्तिमान् परम पूजनीय हैं। हे सौम्य! इसप्रकार जब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्व देवताओंने अपने अधिपति इन्द्रसे प्रार्थना किया तब इन्द्र ने कहा "तथेति" ८ तथा इति ; [तथास्तु] अर्थात् इंद्र तथास्तु कहते "तदभ्यद्रवत्" ८ तत् अभिअद्रवत् ; [सो १४ । जाताभया १५] अर्थात् सो देवराज इंद्र उस परम पूजनीय परमात्माके समीप जाताभया । हे सौम्य! जब वो इंद्र अपने देवराज्याभिमान युक्त उस पूजनीय ब्रह्मके समीप गया तब वो सविशेष ब्रह्म "तस्मात्तिरोदधे" ८ तस्मात् तिरोदधे ; [तिस कारण से १६ । तिरोधान होताभया १७ ।] अर्थात् जब इन्द्र साभिमानता से ब्रह्मके समीप आवनेलगा तिस कारणसे वो सविशेष ब्रह्म इंद्रके समक्षसे तिरोधान होताभया॥२४।११॥

स तस्मिन्नेवाकाशे स्त्रियमाजगाम बहुशोभमानाम् उमां हैमवतीं ताꣳ होवाच किमेतद्यक्षमिति २५ । १२ ॥ इति तृतीयखण्डः ३ ॥

[पदान्वयः]

सः तस्मिन् एव आकाशे स्त्रियं आजगाम बहुशोभमानां उमाम् हैमवतीं तां ह उवाच किं एतत् यक्षं इति २५ । १२ ॥ इति तृतीय खण्डः ३ ॥

[पदार्थ]

सो इन्द्र तिस ही अवकाशमें स्त्रीको प्राप्तभया सर्वशोभाओं की शोभाकरनेवाली उमानाम्नी हेमाभरणयुक्त तिससे ही कहताभया कौन यह पूजनीय था । इति ॥

[भावार्थ मन्त्र १२ में का]

प्रजा० वो सर्वज्ञ सर्वान्तर्यामी परमदयालु ब्रह्म सो देवराज इन्द्रका देवराजत्वादि असत्य अनात्म अभिमान दूरकरनेके अर्थ इन्द्रके समक्ष से तिरोधान भया तब "स तस्मिन्नेवाकाशे" ८ सः तस्मिन् एव आकाशे ; सो इन्द्र १ । तिस २ । ही ३ । अवकाशमें ४ ।] अर्थात् सो देवराज इन्द्र जो उस यक्ष ब्रह्मके वि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानार्थ गया सो तिसही अवकाशमें कि जहां वो पूजनीय परमात्मा प्रकटहोके अन्तर्द्धान होगया तिसकाल में इन्द्र जिस अवकाशमें खड़ारहा तहांही स्थितहो विचार करनेलगा कि जो अद्भुत रूपसे हम सर्वके समक्ष प्रकटहो पुनः तिरोधान होगया सो परम पूजनीय कौनथा अग्नि अरु वायु से तो उसने संभाषण भी किया अरु हम जो देवराज तिसके आवतेही तिरोधान होगया एतदर्थ हम् देवराज से तो वो अग्नि वायुकि जिसका उस परमदेव साथ सम्भाषण भया सोई श्रेष्ठ है। अरु अब हम उस परम पूजनीयका दर्शन कैसे करें उसका दर्शन करनाभीअवश्यहै सो वो अपनी कृपा शक्तिकर दर्शनदेगा। हे सौम्य! इत्यादि प्रकारसे इंद्र उसी स्थानपर स्थितहो सर्व अहंकार त्यागके विचारनेलगा तब सर्वान्तर्यामी सर्वज्ञ भगवान् परमात्मा इंद्रकी भक्ति अपने विषे अधिक देख पुनः इंद्र "स्त्रियंमाजगामं" ६ स्त्रियं आजगामं ? [स्त्रीको ५। प्राप्तभया ६।] अर्थात् स्त्री देवीके स्वरूप से प्रकट भई तिसके समीप प्राप्तभया अर्थात् इंद्रको उपदेश करने के अर्थ साक्षात्परमात्मा ब्रह्म विद्यारूपसे प्रकट होताभया सो कैसी हैं वो ब्रह्म विद्या "बहुशोभमानां" ६ बहुशोभमाना ? [बहुत शोभावान् हैं ७।] अर्थात् सम्पूर्ण शोभावान्को शोभा करनेवाली क्योंकि यावत् विद्याहै तावत् सर्व शोभाकरनेवाली शोभा रूपहैं सो भी सर्व ब्रह्म विद्याकरके शोभावती हैं। तथाच "ब्रह्मविद्यां सर्व विद्या प्रतिष्ठां" विना ब्रह्म विद्याके यावत् विद्याहैं तावत् सर्व अशोभित अविद्याहैं ताते सर्व शोभाओंकी शोभा ब्रह्म विद्या हैं सो "उमां हैमवतीम्" ६ उमां हैमवतीम् ? [उमानामा ८। हेमवती हैं ९।] अर्थात् इंद्रके समक्ष जो परमात्मा देवी रूपसे प्रकट भया सो देवी उमानाम्नी ब्रह्मविद्या हैं उसीसे इंद्रादि सर्वको ब्रह्मज्ञानभयाहै सो उमा कैसी हैं सुवर्ण के आभूषणादि करके भूषित हैं। अथवा उमा जो हैं सो हिमालय पर्वतपर अति शोभनीय रूपसे ब्रह्म उपदेशार्थ इंद्रके समक्ष

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकट भई ताते उसको हैमवती (पार्वती) नामसे कहते हैं ए-तदर्थ पार्वती साक्षात् ब्रह्मविद्या नित्यही अपने विशेष स्वरूपसे विशेष स्वरूप परमात्मा सर्वज्ञ सच्चिदानन्द सदा शिवके समीपवर्ते हैं अर्थात् शिवपार्वती साक्षात्परमात्माकाही विशेष रूपहैं ताते सर्व मुमुक्षुकरके अवश्य उपासनीयहैं । हे सौम्य ! ऐसी जे उमानाम्नी ब्रह्मविद्या "तां[१०] हो[११] वाच[१२] किं[१३] मे[१४] तद्यक्षं[१५] मिति[१६]" । ‹ तां[१०] ह[११] उवाच[१२] किं[१३] एतत्[१४] यक्षं[१५] इति[१६] › [तिस्से १० । निश्चयकरके ११ । प्रश्न करताभया १२ । कौन १३ । यह १४ । पूजनीय १५ । या १६ ।] अर्थात् तिस ब्रह्म विद्या से इंद्र प्रश्न करता भया कि हे देवी ! कौन यह हमारे समक्ष पूजनीयथा जो तिरोधान होगया सो ॥ २५ । १२ ॥ इति तृतीय खंडः ३ ॥

सा[२]ब्रह्मे[३]ति[४] हो[१] वाच[५]ब्रह्मणो[६] वै[७]एतद्[८]विजये[९] महीयध्व[१०]मिति[११] ततो[१२] ह[१४] वै[१३] विदांचकार[१७] ब्रह्मे[१५]ति[१६] ॥ २६ । १ ॥

[पदान्वयः]

सा[२] ब्रह्म[३] इति[४] ह[१] उवाच[५] ब्रह्मणः[६] वा[७] एतत्[८] विजये[९] महीयध्वं[१०] इति[११] ततः[१२] एव[१३] ह[१४] ब्रह्म[१५] इति[१६] विदांचकर[१७] ॥ २६ । १ ॥

[पदार्थ]

निश्चय[१] वो उमा[२] (इंद्रके प्रति उस यक्षको) ब्रह्म[३] ऐसा[४] कहतिभई[५] ब्रह्म[६] हीके[७] विजयमें[८] इस[९] महिमाको[१०] प्राप्तहौं इसकारण[११] से उस उमाके[१२] वचनसेही[१३] निश्चयसे[१४] (इंद्र उस यक्षको) ब्रह्म[१५] ऐसा[१६] जानताभया[१७] ॥ २६ । १ ॥

[भावार्थचतुर्थ खंडमन्त्र १ का]

प्रजा० हे सौम्य ! पूर्वोक्त प्रकार जब देवराज इंद्र अपने देवराजत्वादि असत्य अभिमानसे रहित ब्रह्म जिज्ञासाकरके उस उमानाम्नी ब्रह्मविद्या साक्षात् ब्रह्मावतार से प्रश्नकरताभया कि जो हमारे समक्ष से तिरोधानभया वो पूजनीय कौनथा तब "सा[१] ब्रह्मे[२] ति[३] हो[४] वाच[५]" । [ह[१] सा[२] ब्रह्म[३] इति[४]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उवाँच] [निश्चय १ । वोउमा २ । ब्रह्म ३ । ऐसा ४ । कहतिभई ५ ।] अर्थात् इंद्रके प्रश्नके उत्तरमें निश्चय करके वो उमानाम्नी साक्षात् ब्रह्मविद्या इंद्रके प्रति उसयक्षको कि जिस विषयक इंद्रका प्रश्नहै तिसको साक्षात् ब्रह्महै ऐसा उपदेश करतीभई, अर्थात् हे इंद्र! जिसपूजनीय के अर्थ तुम्हारा प्रश्नहै वो साक्षात् ब्रह्महीहै अरु "ब्रह्मणोवाँ एतद्विजये महीयध्वं" { ब्रह्मणः वाँ विजयेएतत् महीयध्वं } [ब्रह्म ६ । हीके ७ । विजयमें ८ । इस ९ । माहिमाको प्राप्तहौं १० ।] अर्थात् हे इंद्र! उस ब्रह्महीके विजयमें तुम इसविजयादि माहिमाको प्राप्तभये हो क्योंकि उस ब्रह्मपरमात्मानेहीं सर्व असुरोंका जयकियाहै उसकेविजयमें तुम देवता केवल निमित्तमात्रहीहौ अरु तिस निमित्तमात्रत्वसेही तुमको यह माहिमा प्राप्तभई है तातें पूर्व जो तुमने यह अभिमान किया कि "अस्माकमेवायं विजयोस्माकमेवायं महीमेति" हमाराही यह विजय अरु हमारीही यह माहिमाहै । सो तुम्हारा अभिमान मिथ्या है। हे सौम्य! इसप्रकार जब उस ब्रह्मविद्याने इंद्रको ब्रह्मका उपदेश किया "इति ततो ह वै विदांचकार ब्रह्मेति" { इति ततः एवं ह ब्रह्म इति विदांचकार } [इसकारणसे ११ । उमाके वचनसे १२ । ही १३ । निश्चयसे १४ । (इंद्र) ब्रह्म १५ । ऐसा १६ । जानताभया १७ । इसकारण सेही उस उमानाम्नी ब्रह्मविद्याके उपदेशात्मक वचनसेही निश्चय पूर्वक इंद्र उस यक्षको साक्षात् ब्रह्मही हैं ऐसा जानता भया ॥ २६ । १ ॥

हे शिष्य! तात्पर्य्य यह है कि अहंकारादि आसुरी सम्पदाकी अशेष निवृत्ति विना ब्रह्मउपदेश होता नहीं ॥

तस्माद्वाएते देवा अतितरामिवान्यान्देवान् । यदग्निर्वायुरिन्द्रस्ते ह्येनन्नेदिष्ठं स्पर्शुस्ते ह्येनत्प्रथमो विदांचकारब्रह्मेति ॥ २७ । २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[पदान्वयः]

तस्मात्[1] वा[2] अन्यान्[3] देवान्[4] एते[5] देवा[6] अतितराम्[7] इव[8] यत्[9] अग्निः[10] वायुः[11] इन्द्रः[12] ते[13] हि[14] एनत्[15] नेदिष्ठं[16] पस्पर्शुः[17] ते[18] हि[19] एनत्[20] ब्रह्म[21] इति[22] प्रथमः[23] विदाञ्चकार[24] ॥ २७ । २ ॥

[पदार्थ]

तिस्से[1] ही[2] अन्य[3] देवतौंओं से[4] ऐ[5] देवता[6] अतिशय[7] विशिष्टवत्[8] हैं जिस्से[9] अग्नि[10] वायु[11] इन्द्र[12] वे[13] ही[14] इस[15] समीपस्थ[16] (ब्रह्म को) स्पर्श[17] करतेभये[18] वे[19] ही[20] इसको[21] ब्रह्म[22] ऐसा[23] प्रधान[24] हुये जानतेभये ॥ २७ ॥ २ ॥

[भावार्थ मन्त्र २ का]

प्रजा० हे सौम्य! जिस्से अग्निवायु इन्द्र ये देवता ब्रह्मके सम्बाद दर्शनादि रूप कारणसे ब्रह्मके समीप प्राप्तभये " तस्माद्वा[1] ऐते[2] देवा[3] अतितरामिव[4] अन्यान्[5] देवान्[6] " । ६ तस्मात्[1] वा[2] अन्यान्[3] देवान्[4] ऐते[5] देवा[6] अतितरां[7] इव[8] ; [तिस्से १ । ही २ । अन्य ३ । देवताओं से ४ । ये ५ । देवता ६ । अतिशय विशिष्ट ७ । वत् हैं ८ । अर्थात् और जे वरुण कुबेर यमादि देवता हैं तिन देवताओं से ये अग्नि आदि देवता ब्रह्मके दर्शन सम्बाद स्पर्शादि करने से धन पुरुषार्थ गुण ऐश्वर्य्यादि करके अधिक तर हैं " यदग्निर्[10] वायु[11] रिन्द्रस्ते[12] ह्यो[13] नन्नेदिष्ठं[14] पस्पर्शुः[15] " । ९ यत्[1] अग्निः[2] वायुः[3] इन्द्रः[4] ते[5] हि[6] एनत्[7] नेदिष्ठं[8] पस्पर्शुः[9] ; [जिस्से अग्नि १० । वायु ११ । इन्द्र १२ । वे १३ । ही १४ । इस १५ । समीपस्थ १६ । (ब्रह्मको) स्पर्श करतेभये १७ ।] अर्थात जिस कारण से अग्नि वायु इन्द्र वेही इस समीपस्थ ब्रह्म को अर्थात् जो निर्विशेष परमात्मा ज्ञान विना " दूरात् सुदूरे " दूरसे भी दूर हैं सो देवताओं के हितार्थ एक विस्मय कारक अद्भुत अपूर्व रूपसे देवताओंके समीप प्रकटभया तिस समीपस्थ ब्रह्मको । अथवा जो सर्व के समीप बुद्धिरूपी गुफा बिषे सर्व का प्रत्यगात्माहै सो देवताओं के हितार्थ बाह्यप्रदेशमें अद्भुत विशेष

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपसे प्रकटभया ताते इस समीपस्थ ब्रह्मको ब्रह्मदत्त तृण अरु सम्भाषण द्वारा स्पर्श करते भये अरु "ते[१८] ह्ये[१९] नत्[२०] प्रथमो[२३] विदांचकार[२४] ब्रह्मे[२१] ति[२२]" ‹ते[१८] हि[१९] एनत्[२०] ब्रह्म[२१] इति[२२] प्रथमः[२३] विदांचकार[२४]› [वे १८। ही १९। इसको २०। ब्रह्म २१। ऐसा २२। प्रधानहुये २३। जानते भये २४।] अर्थात् वेही अग्नि वायु इन्द्र जो ब्रह्मका दर्शन स्पर्शन करतेभये सोई इस सविशेष पूजनीय को ब्रह्मही है ऐसा सर्व ब्रह्मवेत्ताओं में प्रधान हुये जानते भये ॥ २७। २॥

तस्मा[१] द्वा[२] इन्द्रो[५] ऽतितरा[६]मिवा[७] न्या[३] न्देवा[४]न् स[८] ह्ये[९] न[१०] न्नेदिष्टं[११] पस्पर्शुः[१२] स[१३] ह्ये[१४] नत्[१५] प्रथमो[१८] विदांचकार[१९] ब्रह्मे[१६] ति[१७] ॥ २८। ३॥

[पदान्वयः]

तस्मात्[१] वा[२] अन्यान्[३] देवान्[४] इन्द्रः[५] अतितरां[६] इव[७] स[८] ही[९] एनत्[१०] नेदिष्टं[११] पस्पर्शुः[१२] स[१३] हि[१४] एनत्[१५] प्रथमः[१८] ब्रह्म[१६] इति[१७] विदांचकार[१९] २८।३॥

[पदार्थ]

तिस्से[१] ही[२] अन्य[३] देवताओंसे[४] इन्द्र[५] अतिशय विशिष्टके[६] तुल्य[७] हैं वो[८] ही[९] इस[१०] समीपस्थका[११] स्पर्श[१२] करताभया वो[१३] ही[१४] इसको[१५] प्रधान[१८] हुआ ब्रह्म[१६] ऐसा[१७] जानताभया[१९] ॥ २८। ३॥

[भावार्थ मन्त्र ३ का]

प्रजा० जिस्से अग्नि वायु जो अन्य देवताओं से श्रेष्ठहैं सोभी इन्द्र के वाक्यसेही उस यक्षकों कि जिसके समीप गये अरु सम्भाषण किया अरु जिसके दियेहुये तृणको जलावने उठावने बिषे असमर्थ भये तिसको ब्रह्म हैं ऐसा जानतेभये। अरु इन्द्रने सर्वसे प्रथम उमानाम्नी ब्रह्मविद्याके वाक्यसे उस यक्षको ब्रह्मही हैं ऐसा श्रवण करके अग्नि वायु से कहा "तस्मा[१]द्वा[२] इंद्रो[५] ऽतितरा[६] मिवा[७]न्यान्[३] देवान्[४]" ‹तस्मात्[१] वा[२] अन्यान्[३] देवान्[४] इंद्र[५] अतितरां[६] इव[७]› [तिस्से १। ही २। अन्य ३। देवताओं से ४। इंद्र ५।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतिशय विशिष्टके ६ । तुल्य हैं ७ ।] तिसकारणसे अर्थात् साक्षात् ब्रह्म स्वरूप ब्रह्मविद्याके वाक्य करके सर्व से प्रथम ब्रह्मको जाना तिसकारणसेही आन्य सर्व देवताओं से श्रेष्ठ जे अग्नि वायु तिनसे भी इंद्र अतिशय विशिष्टके तुल्य अर्थात् विशेष धन विद्या ज्ञान गुण राज्यादि वैभव करके सम्पन्न हैं । अरु "स ह्येनन्नेदिष्ठं पस्पर्शुः" स हि एनत् नेदिष्ठं पस्पर्शुः ; [वो ८ । ही ९ । इस १० । समीपस्थका ११ । स्पर्श करताभया १२ ।] अर्थात् वोही इंद्र जो सर्वसे अधिक राज्यादि महिमावान् हैं सो इस समीपस्थ जो उमानाम्नी ब्रह्मविद्या साक्षात् ब्रह्ममूर्त्ति है तिससे उपदेशद्वारा उस परम पूजनीयका बोध रूपसे स्पर्श करताभया । अरु "स ह्येनत् प्रथमो विदांचकार ब्रह्मेति" । स हि एनत् ब्रह्म इति प्रथमः विदांचकार ; [वो १३ । ही १४ । इसको १५ । ब्रह्महैं १६ । ऐसा १७ । प्रधानहुआ १८ । जानताभया १९ ।] अर्थात् वोही इन्द्र उमाके उपदेश से इस परम पूजनीय सविशेष को जोकि अति अद्भुतरूप से विद्युतवत् प्रकटहो तिरोधान भया तिसको साक्षात् ब्रह्महींहैं ऐसासर्व ब्रह्मवेत्ताओं में प्रधानहुआ जानताभया ॥ २८ । ३ ॥ ओंतत्सत् ॥

तस्यैष आदेशो यदेतद्विद्युतो व्यद्युतदा इतीति न्यमीमिषदा इत्यधिदैवतम् ॥ २९ । ४ ॥

[पदान्वयः]

तस्य एष आदेशः यत् एतत् विद्युतः व्यद्युतत् आ इति न्यमीमिषत् आ इति अधिदैवतं इति ॥ १९ । ४ ॥

[पदार्थ]

तिसका यह आदेश है जो यह विद्युत के विद्योतन करने के तुल्य है यह आदेश हैं (अरु) चक्षुके निमेष करने के तुल्य हैं यह आदेश हैं अधिदैवतं इति ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[भाषार्थ मन्त्र ४ का]

प्रजापतिरुवाच ॥ हे सौम्य! अब उस निरुपम परमात्माका उपमाद्वारा जो उपदेशहै सोभी श्रवणकरो "तस्यै[1] षः[2] आदेशो[3]" (तस्य[1] एषः[2] आदेशः[3]) [तिसका १ । यह २ । आदेशहै ३ ।] अर्थात् तिस निर्विशेष निरुपम परमात्मा का उपमा करके यह आदेश है ॥

प्रश्न हे भगवन्! क्या आदेश है ॥

उत्तर हे सौम्य! "यं[4] देवतेद्युतो[5] व्यद्युतत्[6] दा[7] इति[8]" (यत्[4] एतत् विद्युतः[5] व्यद्युत[6] तत् आ[7] इति[8]) [जो ४ । यह ५ । विद्युतके ६ । विद्योतनकरनेके ७ । तुल्य है ८ । यह आदेश है ९ ।] अर्थात् हे सौम्य! जैसे लोक विषे जो यह प्रत्यक्ष मेघाविष्ट विद्युत (बिजली) चमकद्वारा अपने को प्रकट देखायकर तिरोधान होजाति है । तैसेही वो परमपूजनीय सर्वशक्तिमान् परमात्मा देवताओं के समक्ष अपने विशेष रूपको देखायकर तिरोधान होताभया यह दार्ष्टांतिक उपदेश है । अरु दूसरा उपमोपदेश यह है जो "इति[11] न्यमीमिषदो[12]" (न्यमीमिषत्[11] आ[12] इति)] चक्षुकेनिमेष करनेके ११ तुल्यहै १२ । यह आदेशहैं] अर्थात् जैसे पुरुषादिकों के चक्षु निमेष लगाय पुनः खुलतेहैं । तैसेही वो परमात्मा देवताओं के हितार्थ प्रकट हो तिरोधानहोता भया यह द्वितीय द्राष्टांतिक आदेशहैं "इत्यधिदैवतम्[13]" (आधिदैवतं[13] इति[14]) [अधिदैवत १३ । समाप्त भया १४ ।] अर्थात् यह अधिदैवतरित्या तुम्हारे प्रति उपमाद्वारा उस ब्रह्मका उपदेश समाप्तभया । हे शिष्य! तात्पर्य्य यह है जो देवता अवतारादि सविशेषरूप अरु सर्व प्रत्यगात्मा निर्विशेष स्वरूपएक ब्रह्महीके हैं सविशेषता अरु निर्विशेषता यह दोनों उस विज्ञान घन सर्व शक्तिमान् परमात्माकी महिमाहै अरु भेद कुछ नहीं ॥ २९ । ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथाध्यात्मं यदेतद्गच्छतीव च मनोऽनेनचैतदुपस्मरत्यभीक्ष्णंसंकल्पः ॥ ३० । ५ ॥

[पदान्वयः]

अथ अध्यात्मं यत् एतत् च मनः गच्छति इव अनेन च एतत् उपस्मरति अभीक्ष्णं संकल्पः ॥ ३० । ५ ॥

[पदार्थ]

तिसके अनंतर अध्यात्म (श्रवणकरो) जो यह पुनः मन गमनकरताके तुल्यहै इसमनकरके पुनः इसब्रह्मको शमीपहोकरस्मरणकरताहै (अरु) अत्यंत संकल्पहै ॥ ३० । ५ ॥

[भावार्थ मन्त्र ५ में का]

प्रजापतिरुवाच हे सौम्य ! "अथाध्यात्मं" (अथ अध्यात्मं) [तिसके अनन्तर १ । अध्यात्म श्रवणकरो २ ।] अर्थात् अधिदैव के अनन्तर अब प्रत्यगात्म विषयक अध्यात्म आदेश श्रवण करो "यदेतद्गच्छतीव च मनो" (यत् एतत् मनः च गच्छति इव ; [जो ३ । यह ४ । मन ५ । ६ । गमनकरताके ७ । समान हैं ८ ।] अर्थात् जो यह सर्व इन्द्रियों में श्रेष्ठ अनन्तर इन्द्रिय मनहैं सो निर्विशेष ब्रह्मको विषय करनेवाले के समान हैं । अरु "अनेन च तदुपस्मरति" (अनेन च एतत् उपस्मरति ; [इसमनकरके ९ । पुनः १० । इसब्रह्मको ११ । समीपस्मरण करताहै १२ ।] अर्थात् जो मुमुक्षु इसमनसे इस प्रत्यगात्मा ब्रह्मको समीपहोकर अर्थात् तदाकार वृत्तिसे स्मरण अभ्यास करता है तिसके "अभीक्ष्णंसंकल्पः" (अभीक्ष्णं संकल्पः ; [अत्यंत १३ । संकल्पहैं १४ ।] अर्थात् अतिशय करके मनरूप उपाधि द्वारा संकल्प स्मृति आदि प्रतीतियों से आत्मा अभिव्यंजक अर्थात् विषय किये भयेके समान होताहै मानो देखही लियाहै ॥ सो यह अध्यात्मोपदेशहैं । हे शिष्य ! पूर्वोक्त अधिदैवत ब्रह्मोपदेश विद्युत अरु निमेषण के समान शीघ्रही प्र-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काशनधर्म्मी हैं अर्थात् उपदेशके समकालही मुमुक्षुकोचिदानंद घनब्रह्मका प्रकाशकहै। अरुअध्यात्मोपदेश मनकी प्रतीतिकेसम काल अभिव्यक्त धर्म्मी है अर्थात् जब मुमुक्षु ब्रह्माकार वृत्तिनि-होकर चिदानन्दघन आत्माका ध्यान करताहै तब उस वृत्ति द्वारा ब्रह्म ज्ञापक है। तात्पर्य्य यह अधिदैवत अध्यात्मोपदेश मध्यमाधिकारी के अर्थ हैं। अरु उत्तमाधिकारी के अर्थ निर्विशेष ब्रह्म का सूक्ष्मादेश पूर्व प्रथमखण्ड में कहा है ३०।५॥

तद्ध तद्वनं नाम तद्वनमित्युपासितव्यं स य एतदेवं वेदाभि हैनं सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति ३१।६॥

[पदान्वयः]

तत् ह तद्वनं नाम तद्वनं इति उपासितव्यं सः यः एतत् एवं वेद एनं सर्वाणि भूतानि अभि ह संवाञ्छन्ति ३१।६॥

[पदार्थ]

वह ब्रह्म निश्चयसे सर्वकोभजनीयहै (तिससे) प्रख्यातं (वह ब्रह्म) सर्वकोभजनीय इस गुणद्वारा उपासना करने योग्य हैं जो कोई इस ब्रह्मकी इस प्रकार उपासना करताहै उसकी सम्पूर्ण भूत सर्वओरसे निश्चयसे प्रार्थनाकरते हैं ३१।६॥

[भावार्थमन्त्र ६ में का]

प्रजापतिरुवाच हे सौम्य! "तद्ध तद्वनं" {तत् ह तद्वनं} [वह १। निश्चय से २। सर्वको भजनीय है ३।] अर्थात् वह ब्रह्म जो अधिदैवत अध्यात्म उभयरीत्या तुम्हारे प्रति उपदेश किया है सो निश्चयपूर्वक देव मनुष्यादि सर्व करके भजनीय है एतदर्थ "नाम तद्वनमित्युपासितव्यं" {नाम तद्वनं इति उपासितव्यं} [प्रख्यात ४। सर्वको भजनीय ५। इस गुण द्वारा ६। उपासना करने योग्यहै ७।] अर्थात् सर्वको सर्व प्रकार से प्रख्यात सर्व का प्रत्यगात्मा ब्रह्म सर्वको भजनीय अ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

र्थात् ज्ञानपूर्वक विचारणीय अरु सेवनीय हैं इसही गुण द्वारा देवादि सर्वकी उपासना करने योग्यहै क्योंकि अधिदैवत रूपसे नानाप्रकारके स्वरूप धारणकर धर्म्मादि सर्वका रक्षक अरु पालक है। अरु अध्यात्मरूपसे सर्वका प्रत्यगात्मा चैतन्य विज्ञान घन सर्वका साक्षी अपना आप है ताते विशेष रूप किंवा निर्विशेष रूपसे यथाधिकार सर्वकोही उपासना करने योग्य है अरु उसकी यथोचित उपासनाका यह फल है "। स॑ य॑ ए॑तदेवं॑ वेद॑ ।" ८ सः यः एतत् एवं वेद ; [वह ८। जो ९। इस ब्रह्मकी १०। इस प्रकार ११। उपासनाकरताहै १२।] अर्थात् जो कोई अधिकारी अपने अधिकार योग्य इसप्रख्यात प्रत्यगात्मा ब्रह्मकी श्रुतिवाक्यानुसार ज्ञातपूर्वक उपासना करताहै "। अ॑भि॑ है॑ नं॑ स॑र्वाणि॑ भूता॑नि॑ सं॑वाञ्छन्ति॑ ।" ८ ए॑नं स॑र्वाणि भूता॑नि अ॑भि ह॑ सं॑वाञ्छन्ति ; [उसको १३। सम्पूर्ण १४। भूत १५। सर्व ओरसे १६। निश्चय १७। प्रार्थना करते हैं १८। अर्थात् उस उपासकको देव मनुष्यादि सम्पूर्ण भूत सर्वप्रकारसे निश्चय पूर्वक शुश्रूषादि द्वारा प्रार्थना करते हैं जैसे कि ब्रह्मकी। अर्थात् जैसे ब्रह्म सर्वकरके उपासनीय है तैसेही ब्रह्मवेत्ता भी सर्वकरके उपासनीय है क्योंकि "। ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति ।" ब्रह्मका वेत्ता ब्रह्मही होता है ३१। ६॥

उपनिषं॑द॑ भो ब्रू॑ही॑ त्यु॑ क्ता॑ त॑ उपनिष॑द्ब्राह्मीं॑ वा॑व॑त॑ उपनिष॑द॑ म॑ब्रूमे॑ ति॑ ३२। ७॥

[पदान्वयः]

भो॑ उ॑पनिषदं ब्रू॑हि इ॑ति उ॑क्ता ते॑ उदनिष॑त् वा॑व ब्रा॑ह्मीं॑ उ॑पनिषदं ते॑ अ॑ब्रूम इति ३२। ७॥

[पदार्थ]

हे भ॑गवन्! उ॑पनिषत् क॑हियें इसप्रकार जब शिष्यने कहा त॑ब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आचार्य्य कहतेभये तेरेको उपनिषत् कहा प्रसिद्ध ब्रह्मविषयक उपनिषत् तेरेप्रति हम कहतेभये बस ३२।७॥

[भावार्थ मन्त्र ७ में का]

जिज्ञासुरुवाच "उपनिषदं भो ब्रूहि" इति भोः उपनिषदं ब्रूहि; [हे भगवन् १। उपनिषत् २। कहिये ३।] अर्थात् ब्रह्मविद्या श्रवण करता जिज्ञासु तिसके प्रति अधिदैवत अध्यात्म उभय रीत्या ब्रह्म निरूपणकरके आचार्य्य किंचित्तूष्णीं भये तब श्रद्धावान् जिज्ञासुने पुनः आचार्य्य से निवेदन किया कि हे भगवन्! उपनिषत् कहिये। "इति" इति; [इसप्रकार ४।] जब जिज्ञासुने प्रश्न किया तब आचार्य्य प्रजापति कहतेभये "उक्ता ते उपनिषत्" इति ते उपनिषत् उक्ता; [तेरेको ५। उपनिषत् ६ कहा है ७।] अर्थात् हे सौम्य! यह सर्व हमने तुमको उपनिषत्ही कहा है॥

प्रश्न॥ हे प्रभो! कौन उपनिषत् कहा है॥

उत्तर॥ "ब्राह्मीं वाव ते उपनिषदमब्रूमेति" इति वाव ब्राह्मीं उपनिषदं ते अब्रूम इति; [प्रसिद्ध ८। ब्रह्मविषयक ९। उपनिषत् १०। तेरेप्रति ११। कहतेभये हैं १२। १३।] अर्थात् जो हमने तेरेप्रति कहाहै सोसर्व एकब्रह्मविषयक उपनिषत्हीकहाहै॥

शिष्यउवाच॥ हे गुरो! परमात्मविषयक उपनिषत् श्रवण करके जो पुनः जिज्ञासुने प्रश्न किया कि हे भगवन्! उपनिषत् कहिये तिसका क्या अभिप्राय है। जो कदापि श्रवणकरी विद्या तिसके अर्थ प्रश्न है तो पिष्टपेषणवत् श्रवण किये के अर्थ प्रश्न व्यर्थ हैं अरु जो कदापि आचार्य्य ने अशेष न कहाहोय एतदर्थ प्रश्नहैं तो भी योग्य नहीं क्योंकि आचार्य्यने पूर्वही फलवादसे उपसंहार अर्थात् उपदेश की समाप्ति कियाहै ताते शेषविषयक भी प्रश्न योग्य नहीं। अथवा क्या कोई और विद्या इस उपनिषत् ब्रह्मविद्या को सहकारी सहायक हैं कि तिसके अर्थ प्रश्न है। जैसे वेदके सहकारी शिक्षा निरुक्त ब्राह्मणादि वेदा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गहैं अरु जैसे यज्ञादि कर्म्ममें कारकादि सहायकहैं तैसे हे गुरो! जिज्ञासुके इस प्रश्नका अभिप्राय क्या है ॥

उत्तर ॥ हे शिष्य! तुम यथार्थ कहतेहो जिज्ञासुका प्रश्न पिष्टपेषणवत् श्रुतिविद्याके अर्थ नहीं। अरु आचार्य्यने पूर्वही "प्रेत्यास्माल्लोकादमृताभवन्ति (अरु) सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति" इस प्रकार फलवाद कहके विद्या की समाप्ति किया है। अरु प्रश्न के उत्तर में भी आचार्य्यने "उक्ता त उपनिषत्" ऐसाकहा है एतदर्थ शेषार्थ भी प्रश्न नहीं। अरु सहकारी विद्या अरु सहायक इनके अर्थ भी प्रश्न नहीं क्योंकि ब्रह्मविद्या निरपेक्ष है वह पूर्वकाण्ड वेदवत् सापेक्षनहीं वेदके अध्ययनमें शिक्षाकल्पादि सहकारीविना वेदार्थ बोध यथोचित होता नहीं। अथवा वेद करके प्रतिपाद्य नाना प्रकार के यज्ञ तिनके विधान में सूक्त, वाकोन वाक, सूत्र, ब्राह्मणादि, वेदांगविद्या सहकारी हैं। अरु ब्रह्मविद्या एक अद्वैत प्रत्यगात्म ब्रह्मकी प्रकाशक हैं ताते द्वैतापत्तिके अभावसे उसके सहकारी काभी अभावहै तथाच+"विद्या विमोक्षाय विभाति केवला" ताते सहकारी विद्याके अर्थ भी जिज्ञासुका प्रश्न नहीं। अरु निष्क्रिय आत्माके जिज्ञासुको कर्तृत्व का अभाव है। तथाच*। "नास्त्यकृतकृतेन × नकर्म्मणा" ताते जैसे यज्ञादिकर्म में ऋत्विज् ब्राह्मण देशकाल वस्तु आदि सामग्री सहायकहैं तैसेअकर्म्मणीब्रह्मविद्याकासहायक भी कोईनहीं वह अपने अपरोक्षहोनेके पूर्वही परोक्ष अर्थात् श्रवणकालमेंही ❀"निहन्ति विद्याऽखिलकारकादिकान्" सर्वकारकादिकोंकोनाश करेहै। ताते एतदर्थ भी जिज्ञासुका प्रश्न नहीं। हे शिष्य! प्रश्नका अभिप्रायय्यहै कि आचार्य्य से श्रवण किया जोनिर्विशेषब्रह्म तिसही को पुनः अधिदैवत अध्यात्मरीत्या सविशेषभी श्रवणकिया तब जिज्ञासु को ब्रह्मविद्याबिषे अधिकाधिक श्रद्धा होती भई अरु ब्रह्मविद्याके सर्वोत्तम महत्त्वको विचार तिसकी प्राप्ति दुःसाध्य

+ रामगीता * मुंडक × कैवल्य ❀ रामगीता ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जान तिसकी प्राप्ति के उपाय साधनके अर्थ प्रश्न कियाहै अन्य हेत्वर्थ नहीं। सो साधन आचार्य्य अग्रेप्रतिपादनकरे हैं ३२।७॥

तस्यैतपो दमः कर्मेति प्रतिष्ठा वेदाः सर्वाङ्गानि सत्यमायतनम् ३३।८॥

[पदान्वयः]

तस्यै तपः दमः कर्म्म इति वेदाः सर्वाङ्गानि प्रतिष्ठा सत्यम् आयतनम् ३३।८॥

[पदार्थ]

तिसकी (प्राप्त्यर्थ) तप दम कर्म्म आदि (उपायहै) वेद-और अंगोंसहित चरणवत्है (अरु)सत्य आयतन है ३३।८॥

[भावार्थ मन्त्र ८ में का]

प्रजापतिरुवाच हे सौम्य! जो ब्रह्मविद्याका जिज्ञासुहै उस को "तस्यै तपो दमः कर्म्म" ? तस्यै तपः दमःकर्म्म ; [तिसकी १। (प्राप्त्यर्थ) तप २। दम ३। कर्म्म ४।] अर्थात् ब्रह्म विद्या प्राप्त्यर्थ "कर्म्म" अग्निहोत्रादि विहित कर्म्म जे अकर्णे प्रत्यवाय आदि आगंतुक पापनाशकहैं। अरु "तप" कृच्छ्र चांद्रायणादि व्रत जे संचित अरु वर्तमान पापनाशकहैं अरु "दम" कर्म्मेंद्रिय ज्ञानेन्द्रिय अरु मन इनको स्व २ विषयों से निग्रह करना "इति" ? इति ; [इत्यादि ५] अर्थात् तप दम कर्म्म अरु आदि शब्द करके अमानित्व अदंभित्व अहिंसत्वादि दैवी सम्पदा। इन सर्व उपायसे जिस पुरुषका अंतःकरण सर्व दोष से रहित शुद्ध अरु स्थिर भयाहै तिस संस्कारी पुरुषको आचार्य्य से श्रवण मननकरी उपनिषत् ब्रह्मविद्या साफल्य होतीहै। अरु उक्त साधनोंकरके रहित असंस्कारी पुरुषको श्रवणकरी भी ब्रह्मविद्या अयथार्थ अरु विपरीत फलकारी होती हैं। इंद्रविरोचनवत्। ताते उपनिषत् विद्याकी प्राप्त्यर्थ तप दम कर्म्मादि साधन उपायहैं इन उपायोंसे आचार्य्य द्वारा ज्ञानोत्पत्ति होय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है अन्यथा नहीं तहां जो कदापि किसी पुरुष बिषे विनाही साधनों के यथार्थ ज्ञानोत्पत्ति भासे तो उसबिषे पूर्वठयतीत किंवा अनेक जन्मोंके किये साधन जानिये। अर्थात् साधन इस जन्म का हो वा जन्मान्तर का हो तिस करके शुद्ध अंतःकरण मेंही ज्ञानोत्पन्न होताहै अन्यथा नहीं होता + "यस्यदेवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ। तस्यै ते कथिताह्यर्था प्रकाश्यन्ते महात्मना" "ज्ञानमुत्पद्यतेपुंसां क्षयात्पापस्यकर्म्मणः" इतिस्मृतेः। ताते तप दम कर्म्मादि दैवीसम्पदा ब्रह्मविद्या प्राप्त्यर्थ प्रथम उपायहैं। अरु "प्रतिष्ठावेदाः सर्वाङ्गानि" ६ सर्वाङ्गानि(सह) वेदाः प्रतिष्ठा; [सर्व अंगके ६। (सहित) वेदचार ७। चरणवत् हैं ८।] अर्थात् शिक्षाआदि छः अंगोंसहित वेदचार इस उपनिषत् विद्याके चरणवत् हैं। अथवा सांगवेद इसके चरणादि अंगवत्हैं। अर्थात् यह जो उपनिषत् विद्या हैं सो शिरोविद्या हैं अरु वेदादि अंग करपादादिवत् अधोअंगहै। अरु "सत्यमायतनम्" ६ सत्यं आयतनं ;[सत्य ९। आयतन हैं १०।] अर्थात् उस ब्रह्मविद्या के निवासका सत्यस्थान हैं। अर्थात् जहाँ सत्य हैं अमायिता हैं अकुटिलतादि हैं तिनको काया वाचा मनसा करके आश्रय करते हैं तिनहीं पुरुषोंमें ब्रह्मविद्या निवास करतीहैं। अरु जे असुर प्रकृति मायावी असत्यवादी हैं तिनपुरुषोंबिषे कदापि नहीं निवासकरती * "नयेषुजिह्ममनृतं न मायाचेति" एतदर्थ सत्य को आयतन कहाहै यह सर्वसाधनोंसे उत्तम साधनहै तथाच ×"सत्यमेवजयति नानृतं सत्यान्नप्रमदितव्यं।" इतिश्रुतेः "अश्वमेधसहस्रंचसत्यंचतुलया धृतम्। अश्वमेधसहस्राद्धि सत्यमेकंविशिष्यते" इतिस्मृतेः॥ तात्पर्य्य यह जो परमात्मविषयक उपनिषत् शिरोविद्याहैं सो वेदादि अपने अंगोंसहित तपदम कर्म्म सत्यादिकों की जिसपुरुष में स्वभावभूत असाधारण स्थिति हैं

+वेदमन्त्रविषे * प्रश्नोपनिषत्में। × मुण्डकमें। † तैत्तिरीयोपनिषत्में॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तहांही निवासकरतीहैं, अन्यथानहीं। ताते ब्रह्मविद्याके जिज्ञासु मोक्षेच्छुको सत्यादिसाधन अवश्यनिरंतर आदरणीयहैं ३३। ८॥

यो[1] वा[2] एतामेवं[4] वेदापहत्य[5] पाप्मानमनन्ते[8] स्वर्गे लोके[11] ज्येये[9] प्रतितिष्ठति[12]प्रतितिष्ठति ३४। ९॥

इति श्रीतलवकारोपनिषत्समाप्ता॥

[पदान्वयः]

यः[1] वै[2] एतां[3] एवं[4] वेद[5] पाप्मानं[6] अपहत्य[7] अनन्ते[8] ज्येये[9] स्वर्गे लोके[11] प्रतितिष्ठति[12] २॥ ३४। ९॥ इति उ०॥

[पदार्थ]

जो[1] निश्चयसे इस[2] ब्रह्मविद्याको[3] इसप्रकार[4] जानताहै (सो) पापोंको[6] नाशकरके[7] अनन्त[8] सर्वोत्तम[9] सुखस्वरूप[10] ब्रह्ममें[11] प्राप्त होता है॥ ३४। ९॥ इति श्रीकेनोपनिषद्॥

[भावार्थ मन्त्र ९ में का]

प्रजापतिरुवाच हे सौम्य! "यो[1] वा[2] एतामेवं[4] वेद[5]"? ८ यः[1] वै[2] एताम्[3] एवं[4] वेद[5]? [जो १। निश्चय से २। इस ब्रह्मविद्या को ३। इसप्रकार ४। जानताहै ५।] अर्थात् जे पूर्वोक्त साधन सम्पन्न जिज्ञासु श्रद्धा सम्पन्न निश्चय आत्मक होके इस प्रत्यगात्मविषयक ब्रह्मविद्या जो इस केनोपनिषत् करके उपदेश किया तिसको गुरुके उपदेश से यथार्थ जानताहै सो जिज्ञासु पुरुष। "अपहत्य[5] पाप्मानं[6]"? ८ पाप्मानं[6] अपहत्य[7]? [पापोंका ६। नाश करके ७।] अर्थात् संसार वृक्षका बीज जो काम कर्म्म लक्षणावान् सर्व पापोंका आश्रय महापापरूप जन्मादि सर्व अनर्थका हेतु अविद्या तिसको अशेष नाशकरके "अनन्ते[8] स्वर्गे[10] लोके[11] ज्येये[9]"? ८ अनन्ते[8] ज्येये[9] स्वर्गे[10] लो[11]के? [अनन्त ८। सर्वोत्तम ९। स्वर्ग १०। लोकमें ११।] अर्थात् अनन्त कहिये देव मनुष्यादि करके अरु मन बुद्ध्यादिकरके अरु वेदादिशास्त्र करके जिसका अन्त नहीं सो अनन्त अथवा ब्रह्मलोकादि पातालपर्यन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोक लोकान्तर रूपी देश अरु काष्ठादि लेके परार्द्ध पर्यन्त भूत वर्त्तमान भविष्यत् रूपी काल । अरु अव्याकृतादि तृणपर्यन्त वस्तु । इत्यादि देशकाल वस्तु करके जिसका अन्त नहीं सो अनन्त अर्थात् देशकाल वस्तुसे अव्यवहित अनंत सर्व उत्तमताकी सीमा सुखस्वरूप आनंदघन + "एष एव परम आनन्दः" × "एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति" । ब्रह्म में कि जिस आनन्दके लवलेश से स्वर्गादि लोक लोकान्तर सर्व आनन्दित होते हैं तिस आनन्दघन परिपूर्ण परमात्मा में "प्रतितिष्ठति २" ¿ प्रतितिष्ठति ? [प्राप्त होता है १२] अर्थात् ब्रह्मही होता है । तथाच "❀ यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रे अस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय । तथा विद्वान्नामरूपाद्विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम" सयोह वैतत्परमं ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति "पुनः उसको जन्मादि संसार नहीं" ॥

प्रश्न शिष्यउवाच हे गुरो !"अनन्ते स्वर्गे लोकेऽज्येये प्रतितिष्ठति" इस श्रुतिका अर्थ आपने परमात्माविषयक चरितार्थ किया सो अस्तु परन्तु, अनंत है सर्वोत्तम विषय भोग जहां तिस स्वर्गलोकमें प्राप्तहोताहै यह अर्थभी युक्तही है सो क्यों न होय ॥

उत्तर हे शिष्य!त्रिविष्टप अर्थात् त्रैलोक्यान्तर्गत जे यज्ञादि कर्म्मोंकाफल स्वर्गलोक तिसविषेअनंतता का विशेषण बने नहीं तथाच "कर्म्मचितो लोक क्षीयत" पुण्यचितो लोक क्षीयत" इत्यादि श्रुतियों के प्रमाणसे स्वर्गादिलोक अपने अधिपत्यादि सहित अंतवान्हैं ताते सो ब्रह्मविद्याका फल नहीं । एतदर्थ अनंत सर्वोत्तम सुखरूप अविनाशी परमात्माको आत्मभावसे अर्थात् सोहमस्मि भावसेप्राप्ति ब्रह्मविद्याकाफलहै ।३४॥६॥ ॐतत्सत्॥

+ × बृहदारण्यषष्ठाऽध्याये । ❀ मुंडकउपनिषत् विषे ॥

इति श्रीसामवेदीयतलवकारशाखीयकेनोपनिषत्संपूर्णा ॥

मुंशी नवलकिशोर (सी,आई,ई) के छापेखानेमें छपी अक्टूबर सन् १९०६ ई०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस मतवे में जितने उपनिषद् छपे हैं उनमेंसे कुछ नीचे लिखे हैं ॥

कठवल्ली उपनिषद् भा० टी० सहित क़ी० =)॥

इस उपनिषद् में गुरु शिष्यसंवाद द्वारा श्रीवाजश्रवा ऋषीश्वर के पुत्र श्रीउद्दालक ऋषिने जिसप्रकार से विश्वजित् नामा यज्ञ की और उसीयज्ञ के दक्षिणा में ऋत्विजादि ब्राह्मणों को अपरिमित धन व गौओंको दान दिया और उसी यज्ञ में अपने परमप्रिय पुत्र ज्ञानशिरोमणि श्रीनचिकेता को मृत्यु के अर्थ दानदिया और नचिकेता यमालयमें गया और मृत्यु ने सावधान पूजन किया और परस्पर वार्त्तालाप हुआ वह सब वृत्त संक्षिप्त मंत्रों में वर्णित है ॥

माण्डूक्योपनिषद् भा० टी० सहित क़ी० ॥=)

ॐ कारस्वरूप का प्रतिपादन व ब्रह्मकी आत्माकी अभेदताका निरूपण आगम, यवैताख्य, अद्वैताख्य व अलातशान्ताख्य इन चार प्रकरणों में निरूपण कियागया है अवलोकन करने योग्य है ॥

ऐतरेयउपनिषद् भा० टी० सहित क़ी० =)

यह उपनिषद् ऋग्वेद के ब्राह्मणभाग से सम्बन्धित है—इस में मुख्य ब्रह्म विद्याका वर्णन है ॥

ईशावास्योपनिषद् भा० टी० सहित क़ी० -)॥

जिसे वाजसनेयीसंहिता भी कहते हैं-इस उपनिषद् में यावत् नाम रूपात्मक जगद्भाव है सब ईशही में घटित कियाहै ॥

तैत्तिरीयउपनिषद् भा० टी० सहित क़ी० ।-)।

यह उपनिषद् यजुर्वेद सम्बन्धीहै-इसउपनिषद्में श्रीसच्चिदानन्द घन परब्रह्म परमेश्वर निराकारके साकार रूप होने का प्रतिपादन है ॥

छांदोग्यउपनिषद् भा० टी० सहित क़ी० ॥=)॥

इस उपनिषद् में इन्द्रियादिकों के संघात विषे स्थित प्राणों की ज्येष्ठताका व श्रेष्ठताका एक आख्यायिका द्वारा प्रतिपादन है-मंत्रों के नीचे सरल देशभाषा में सुन्दर तिलक कियागया है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्री १०८ ईश्वर मठ
पुस्तकालय,
मुमुक्षु भवन, बरेली, काशी.

ईशाचारसूत्र

वाजसनेयीसंहितोपनिषद् की भाषा टीका

सरल मध्यदेशीय भाषामें कोलाख्य नगरनिवासी पञ्चोली यमुनाशङ्कर नागर ब्राह्मणने पण्डित पौराणिक महाराज वैकुण्ठनाथजी की सहायता से अनुवाद किया

तीसरी बार

लखनऊ

मुन्शी नवलकिशोर (सी. आई. ई.) के छापेखाने में छपी

जौलाई सन् १९०५ ई० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

एकमेवाद्वितीयम् ॥

नमो याज्ञवल्क्याय ब्रह्मविद्याप्रदर्शकाय ॥

विज्ञापन ॥

सर्व सुज्ञ सज्जन विवेकविचारशील पाठकजनों को विदित हो कि इस कलिकाल महाराज के राजशासन में विशेष करके इस भारतवर्षकी प्रजा प्रायः प्रज्ञाहीन होतीहै इसही कारण से उनको वेदशास्त्रों का अध्ययन अरु तिनका अर्थज्ञान यथार्थ होता नहीं अरु तिसके न होनेसे धर्म अधर्म स्वार्थ परमार्थ लोक परलोक शुभ अशुभ कर्त्तव्य अकर्त्तव्य आदिकोंका विवेक किञ्चिन्मात्र भी होता नहीं तिसके न होनेसे अज्ञानवशभये विषय वासना कर ताड़ित चित्त शिश्नोदर परायण पशुवत् पञ्च विषयात्मक जगदारण्यके सम्मुखही धावते हैं अरु जन्म जन्मान्तररूपी गर्त्तमें जो कि काम क्रोध लोभ मोह राग द्वेष रोग ताप योग वियोग हानि लाभ जन्म मरणादि अनेक अनर्थरूप आवरणसे वेष्टित हैं पतनभावको पाय अनिवार्य दुःखोंको प्राप्त होतेहैं। तथाच।"गर्त्तमिवपतति"। बृ०उ०अ० ६ केतृतीयज्योतिर्ब्राह्मण बिषे ऐसी सहस्रावधि प्रजा में कोई एक वेदशास्त्र करके प्रतिपाद्य जे अपराविद्या आश्रित अतिगहन कर्ममार्ग।"गहना कर्मणोगतिः"। तिसबिषे प्रायः सकामतासे प्रवृत्तहोते हैं परन्तु तिसके कर्त्तव्यविधि फल तात्पर्यको जानते नहीं केवल वासनाके वशभये अपने मनकी युक्ति अनुसार आचरण करतेहैं। अथवा नानाप्रकारके मतवादी जे वेदबाह्य मतके चलानेवाले हुयेहैं तिनके मतमदसे तिलकादि बाह्य मुद्राको ही पुरुषार्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मानके मदोन्मत्त फिरते हैं । इस प्रकार के सहस्रावधि मनुष्यों में कोई एक बिरला विषयों से वैराग्यवान् परमसावधान आत्मजिज्ञासु होताहै परन्तु पूर्वसंस्कारकी किंचित् मलिनतासे प्रज्ञा की मन्दताकरके वेदशास्त्रों का यथार्थ अध्ययन विचार अभ्यास बनता नहीं अरु सतयुगादिवत् ब्रह्मचर्य्यादि साधनपूर्वक वेदाध्ययन इस कलिराज महाराज के राजशासन में प्रायः बने नहीं क्योंकि इसकाल में मनुष्योंके आयुः बल वीर्य प्रज्ञाआदि अति अल्पहोतेहैं अरु बाल्यावस्थासेही अन्न वस्त्रादिकों के अर्थ चिन्तायुक्त व्यावृत्तचित्तहोताहै एतदर्थ मन्दअधिकारी जो संस्कृतविद्या के संस्काररहित वैराग्यशील शान्तात्मा आत्मजिज्ञासु हैं तिनके विचारार्थ तादृशही शास्त्रविद्यारहित अतिअल्पज्ञ कोलाख्य नगरनिवासी पंचोली यमुनाशंकर नागरब्राह्मणने केवल अपने परमदयालु महात्मा ब्रह्मवेत्ता श्रीस्वामी ब्रह्मानन्दसरस्वतीजी गुरुमहाराज के पादपद्मरज की कृपासे अरु शास्त्रज्ञपण्डितों की सहायता से ईशादि उपनिषदोंकी भाषाटीकाकरनेका संकल्पकर ईश केन कठ इन तीन उपनिषदों की टीका किंचित् श्रीशंकराचार्य के भाष्यार्थानुसार किया परन्तु स्वसमीप में द्रव्याभावके कारण उनकामुद्रितहोय लोकोपकारमें प्रकाशितहोना दुःसाध्य जान अन्य उपनिषदोंकी टीका करने से चित्त उपरामभया परन्तु सर्वज्ञ सर्वान्तर्यामी परमात्माने इसमेरे शिवसंकल्पकी सिद्धता के अर्थ जिलअ अलीगढ़के अतरौलीग्रामनिवासी विवेकी आत्मनिष्ठ लालाश्यामलालजी कायस्थके अन्तःकरणमें श्रद्धा उत्पन्न कर उनकेपत्रद्वारा महान् उत्तमकारी पुस्तकको श्रीमती धर्मात्मा ठकुरानी महताबकुवँरि रईस कोटिला परगनह फ़ीरोज़ाबाद जिलअ आगरा के नेत्रगोचरकराया तब उस धर्मात्मा देवी ने अपने कार्य्याध्यक्ष कुवँर एदलसिंहजी की सम्मति से ईश अरु केन इन दो उपनिषदों की इस टीका को मुद्रित कराय प्रकाशितकिया । अब इसही टीकाको बहुत शुद्धकराय श्रीमान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परमधार्मिक मुंशीनवलकिशोरजी साहब ने अपने लक्ष्मणपुर के महायन्त्रालय में मुद्रितकराय सर्वलोकोपकारार्थ प्रकाशित किया सो—

[अस्तु]

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ईशावास्योपनिषद् ॥

भाषानुवाद सहित

ॐ ईशावास्यमिदंसर्व्वंयत्किञ्च जगत्यांजगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥ १ ॥

पदान्वयः ॥

यत् किञ्च जगत्यां जगत् इदं सर्व्वं ईशा वास्यं तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा कस्य स्वित् धनं मा गृधः १ ॥

पदार्थ ॥

जो कुछ जगत्बिषे जगत् यह सर्व ईश्वरकरके आच्छादित है । तिससे त्यागकरके रक्षाकरो किसीके भी धनकी मत आकांक्षा करो १ ॥

भावार्थ ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ हे सौम्य ! जो १। कुछ २। जगत्बिषे ३ जगत् भावहै ४। अर्थात् पृथिवीआदि लोकलोकान्तर जो जगत् है तिस बिषे जो कुछ नामरूपात्मक जगद्भावहै । यह ५। अर्थात् यावत् इन्द्रिय मन बुद्धयादि करके स्थूल सूक्ष्म अनुभव में आवता है तावत् । सर्व ६। परमेश्वर परमात्मा करके ७ । आच्छादित है ८। अर्थात् जो चराचर का आत्मा सर्वान्तर होत सन्ते सर्व सम्बन्ध रहित आकाशवत् सदाशुद्ध एकरस ज्ञानस्वरूप है सोई परमेश्वर परमात्मा है तिस करके सर्व चराचर जगत् आच्छादित है अर्थात् अनुभव बिषे स्थित है सो अनुभव यह अपुन जो आत्मा है सोई परमात्मा है क्यों कि प्राणमनादि सर्वके अवान्तर सर्वका अनुभवीहै ताते आत्माहै। "*आत्मासर्व्वान्तर"। अरु सोई आत्मा प्राण मन बुद्धिआदि किसीका भी विषय नहीं ताते परमात्मा है । इस प्रकार परमात्मा से अभिन्न आत्मरूप जे अपुन

* बृ० उ० अ० ३ के अन्तर्यामी ब्रा० बिषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तोई जगत्रूप हैं क्योंकि यावत् जगत् है तावत् सर्व अपने अनुभवबिषे स्थित है अर्थ यह कि अपना अनुभवही जगत्रूप हो भासता है ताते जगत् अनुभवरूप है सो अनुभव आत्मा से इतर नहीं 'जैसे अग्निसे दाहकता भिन्न नहीं' अरु आत्मा परमात्मा से इतर नहीं क्योंकि परमात्माने अपनी इच्छा से सर्व जगत् रूप होय तिस बिषे आत्म (अन्तर्यामी) रूपसे आपही प्रवेश किया है तथाच।"*तत् सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्"। ताते वास्तव करके परमात्मा आत्मा अरु जगत् अभेदरूपही हैं तथाच।"†सर्व्वं खल्विदम्ब्रह्म"।"‡अयमात्माब्रह्म"।"!पुरुषएवेदंसर्व्वं"।"×वासुदेवःसर्वमिति"। इस प्रकार अनेक श्रुति स्मृति आदिकों के प्रमाण से यह सर्व चराचर जगत् सत्य परमात्मज्ञान करके आच्छादितहै सो कैसाहै जगत् जो जगत्त्वकरके असत्य अरु अधिष्ठानसत्ता करके सत्यरूप है 'जैसे मृत्तिका बिषे घट सो घटत्व करके वाचारंभणमात्र असत्य है, तैसेही सर्वाधिष्ठान आत्मा बिषे सम्पूर्ण नामरूपात्मक जगत् अविद्या करके कल्पित ताते मिथ्याहै' ऐसे कल्पित नामरूपात्मक जगत्बिषे जो सत्यप्रतीति भाव तिसको सत्य परमात्मज्ञान से ६। त्यागकरके १०। अर्थात् असत्यरूप जगत् बिषे अज्ञानजन्य जो इषणा तिसको त्याग के अपने आत्मा की रक्षाकरो ११। अर्थात् सर्वके अभाव से जे एक निर्विशेष सर्वाधिष्ठान आत्मसत्ता अवशेष रहे हैं तिस अवस्था बिषे अनुकूल हो। अरु किसी के १२। भी १३। धनकी १४। मत १५। आकांक्षा करो १६॥ अर्थात् यावत् नाम रूपात्मक जगत् है तावत् सर्व पंचविषयात्मक होने से इन्द्रियों का भोग्यरूपीधन है तिन में से किसी के भी धन की मत आकांक्षाकरो। अथवा यह मेरा यह मुझको प्राप्तहोय इस

---

* तै० उ० की आनन्दवल्ली बिषे। † छां० उ० अ० ४ बिषे। ‡ मां० उ० बिषे। पुरुषसूक्त में × भ० गीता में॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बुद्धिको छोड़दे क्यों कि यह जगत्रूपी धन किसका है किन्तु किसीकाभी नहीं एकके समीपसे दूसरे के समीप जानेवाला चंचल अरु नाशवान् है ताते यावत् पंचविषयात्मक जगत् है तिस सर्वको मिथ्या जानके तिसकी आकांक्षा छोड़ सत्य सर्वात्मभाव बिषे स्थित हो १ ॥

तात्पर्य ॥

" ईशावास्यमिदꣳ सर्व्वं यत्किञ्च जगत्यान्जगत् " इस प्रथम मन्त्रके पूर्वार्ध से वेदभगवान्ने आत्मतत्त्वका उपदेशकिया। अरु " तेनत्यक्तेनभुञ्जीथाः " इस तृतीयपाद करके जिज्ञासु पुरुषको जो आत्मज्ञान की परिपक्वता इच्छित है तो आत्मज्ञान के विचार से संन्यासपूर्वक इषणात्रयका त्यागकरके अपने आत्माकी रक्षाकरे। अर्थात् इषणापूर्वक कर्महीं जीवोंको नानाप्रकारके जन्ममरणादि महान् क्लेशको प्राप्त करनेवाले हैं तिनसे अपने आपकी रक्षाबिषे कर्म इषणाके न्यासपूर्वक आत्मज्ञानही समर्थहै तथाच " नान्यःपंथाविमुक्तये " मोक्षार्थ अन्यमार्ग नहीं। ताते इषणा त्रय त्यागके आत्मज्ञानद्वारा अपने आप की रक्षा करो। अरु " मागृधःकस्यस्विद्धनम् " इस चतुर्थपाद करके कर्म इषणा के न्यासकी परिपक्वताके अर्थ सूचना है जो किसी के भी धनकी मत आकांक्षाकरो। अर्थात् मोक्षके अर्थ कर्म इषणा का न्यास अर्थात् संन्यास कियाहै जिसने तिसको कालत्रय में भी विषयादि पदार्थों की आकांक्षा कर्तव्य योग्य नहीं ॥

सम्बन्ध ॥

इस उपनिषद्का प्रथममन्त्र ब्रह्मविद्याके अधिकारी मुमुक्षु प्रतिहै जो मोक्षकामीको मोक्षार्थ संन्यासपूर्वक एक आत्मज्ञानही उपाय है सो प्रतिपादन करके अब जो कि संन्यासपूर्वक आत्मज्ञान के अभ्यास में असमर्थ हैं तिन मध्यम अधिकारी के अर्थ वेद भगवान् द्वितीय मन्त्रको प्रतिपादन करते हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुर्व्वन्नेवेह कर्म्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः
एवं त्वयि नान्यथेतो ऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे २॥

पदान्वयः॥

इह कर्म्माणि कुर्वन् एव शतं समाः जिजीविषेत् एवं त्वयि नरे इतः अन्यथा न अस्ति कर्म न लिप्यते॥

पदार्थ॥

यहां [अग्निहोत्रादि विहित] कर्मोंको करते ही सौ वर्ष जीवनेकी इच्छाकरो। इसप्रकार तूंजो पुरुष है तिसमें इससे प्रकारान्तर नहीं है [जो] कर्मसे न लिप्यायमानहो २॥

भावार्थ मन्त्र दूसरे का॥

हे सौम्य!। यहां १। अर्थात् आत्मज्ञानके अभ्यास की असमर्थता में कर्म्मों को २। अर्थात् संध्या गायत्री अग्निहोत्रादि विहितकर्म जो कि वेदशास्त्रोंने धर्मरूपसे कर्त्तव्यकहे हैं अरु जिनके न करने से धर्महानिरूप प्रत्यवाय है तिन कर्म्मोंको करते ३। ही ४ रहो। अरु सकामकर्म मतकरो क्योंकि कर्ममें फलकी इच्छा न करने से निष्काम कर्मद्वारा अन्तःकरणकी शुद्धिहोने से ज्ञानद्वारा कर्ममोक्षसाधकहै ताते निष्काम विहितकर्म करतेही रहो। इसप्रकार निष्काम विहितकर्म करतसंते जो। सौ१००।५। वर्ष ६। जीवनेकी इच्छाकरो ७। अर्थात् सौ वर्ष जो मनुष्यों के आयुकी परमावधि है तावत्पर्यन्त जो जीवने की इच्छा होय तो इच्छाकरो। अथवा जो सौ वर्ष परमावधि पर्यन्त जीवते रहो तो भी संसार बंधनकी निवृत्ति के अर्थ विहितकर्म निष्काम करतेहीरहो। अर्थात् यावत्पर्यन्त संसारसे दृढ़वैराग्य न होय तावत्पर्यन्त विहित कर्मका त्याग न करना। इसप्रकार ८। कर्मकरने से आत्मज्ञान न होत सन्ते भी तुम ९। पुरुषबिषे १०। अर्थात् नरशरीराभिमानी तुमबिषे कर्मबन्धन न होगा इससे ११। अन्य प्रकारान्तर १२। नहीं १३। है १४। अर्थात् सकामकर्म हैं सो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वारंवार जन्ममरणका हेतुहैं । तथाच । "*योनिमन्येप्रपद्यन्ते शरीरत्वायदेहिनः स्थाणुमन्येनुसंयन्ति यथाकर्मयथाश्रुतम्"। ताते इषणात्रयके न्यासपूर्वक आत्मअध्यासमें असमर्थ पुरुष को केवल विहित निष्काम कर्मही कर्तव्य है कि जिस करके कर्म से १५। नहीं १६। लिपायमानहो १७। अर्थात् विहित निष्काम कर्म करतसन्ते जो कदापि अज्ञान किंवा आपत्त्यादिकरके तुमसेअशुभ कर्म भी बन आवेगा तो सो कर्म तुमको हानिकरने को समर्थ न होगा क्योंकि वो कर्म किसी कामनाको लेके नहीं हुआ २॥

तात्पर्य ॥

इषणात्रय बिषे दृढ़ वैराग्य भये विना संन्यास कर्त्तव्य नहीं क्योंकि वैराग्य विना संन्यास जो कि मोक्षमें आदि साधनहै सो मोक्षका साधक न होयके पतितत्वका हेतु होगा क्योंकि वैराग्य विना अन्तःकरण से कामना निवृत्त होती नहीं अरु कामना की निःशेष निवृत्ति विना वृत्तीकी एकाग्रता पूर्वक आत्माभ्यास होने का नहीं तब मोक्ष कहां किन्तु कदापि नहीं ताते वैराग्य विनाका संन्यास मोक्षका हेतु नहीं । अरु संन्यासाश्रम करने से कर्माधिकार रहे नहीं ताते देव पितृ आदिकों के अर्थ किंवा भोग्य कामनार्थ कर्म बने नहीं तब देव पितृ आदिकों के लोक की प्राप्ति अथवा कामना की सिद्धिसे भ्रष्टहोय नीचगति की प्राप्तिहोगी ताते इषणात्रय से दृढ़ वैराग्यभये विना संन्यास न लेके विहित जे वेदोक्त कर्म हैं ते निष्काम कर्त्तव्य हैं क्योंकि इषणा के त्यागपूर्वक संन्यास सहित आत्मअध्यास में असमर्थ पुरुषको सिवाय विहित निष्काम कर्मोंके कर्मबंधनोंकी निवृत्ति होनेके अर्थ अन्य उपाय कोई नहीं ॥

सम्बन्ध ॥

प्रथम मन्त्रमें मुमुक्षु के अर्थ इषणाके त्यागपूर्वक आत्मज्ञान प्रतिपादन किया । अरु इस द्वितीयमंत्रसे आत्मोपासनामें अस-

* कठवल्ली उपनिषद्की पंचमवल्ली के ७ वें मंत्र में ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मर्थ पुरुषको संसारकी निवृत्तिके अर्थ विहित निष्कामकर्म प्रतिपादन किया। अब इन दोनोंका जो कि संसारके क्लेशोंकी निवृत्तिका साधनहैं तिनके त्यागी पुरुषहैं तिनकी निन्दाके अर्थ वेद भगवान् तृतीय मंत्रका प्रारंभ करते हैं ॥

असूर्य्या नाम ते लोका अन्धेन तमसाऽऽवृताः। तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥ ३ ॥

पदान्वयः ॥

अंधेन तमसा आवृताः ते लोकाः असूर्य्या नाम ये के च आत्महनः जनाः ते प्रेत्य तान् अभिगच्छन्ति ३ ॥

पदार्थ ॥

अदर्शनात्मक अज्ञानकरके आवृतहैं सो लोक असूर्य्य नामहैं जे कोई एक आत्महत्यारे पुरुषहैं सो मरके तिन (लोकोंमें) निश्चयप्राप्त होतेहैं ॥ ३ ॥

भावार्थ मंत्र तीसरेका ॥

हे सौम्य! जो कि पूर्वकथित प्रकारसे विपरीत आचरण करनेवाले पुरुष हैं। अर्थात् प्रथम कहा जो मुमुक्षु के अर्थ आत्मज्ञान अरु तिसकी असमर्थता में निष्काम विहितकर्म तिनको त्यागके कामुक अरु निषिद्ध कर्मोंकोही करते रहतेहैं ऐसे जे अविवेकी पुरुषहैं तिनको देहत्यागान्तर जिन लोकोंकी प्राप्तिहोती है तिसको कहतेहुये वेदभगवान् उन पुरुषों की निंदाकरतेहैं ॥ जे अदर्शनात्मक १। अज्ञानकरके २। आवरणहुये ३। जे ४। लोकहैं ५। अर्थात् आत्माके यथार्थ दर्शनकी योग्यता नहीं जिनमें ऐसे जे अदर्शनात्मक अज्ञानावृत देवताआदि शरीररूपी लोक सो सर्व असूर्य ६ नामहैं ७। अर्थात् असूर्यलोक उसको कहतेहैं कि नहींहै ज्ञानरूपी प्रकाशता जिनमें कि जिसकरके अपनेआप आत्मा को यथार्थ अनुभवकियाजाय ऐसे जे देवादि तृणपर्यन्त शरीररूपी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोक तिनको असूर्य अथवा असुर लोक इन नामोंसे कहतेहैं तिन लोकों में जे ८। कोई ९। कि १०। आत्महत्यारे ११ पुरुषहैं १२ अर्थात् जिन पुरुषोंको अपने आप अजर अमर अक्रिय अद्वैत आत्माके स्वभावका अर्थात् सोहमस्मि भावका अभाव है अर्थात् परमात्माको अपना आत्मस्वकरके न जानना सोई आत्मा का हनन है क्योंकि जो नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वरूप आत्मा तिसको अविद्या दोषसे अन्यों के धर्मको न जानते सन्ते तुच्छ पापी अपराधी जन्म मरणवान् विपरीत भावसे जानना। तथाच। "* यत्र हि द्वैतमिव भवति तदितरइतरं पश्यति"। इत्यादि। सोई उस आत्मा का परम निरादर करनाहै सो आत्माका निरादरकरना ही हनन करना है। दृष्टान्त। जैसे स्त्रीको पृथक्शय्यारूप निरादर करनाही उसका हनन करना शास्त्रकारों ने कहाहै। तैसेही वे पुरुष कि जिन्होंने अपने आप सत्यस्वरूपको यथार्थ न जानके अरु जाननेका साधन अन्तःकरणकी शुद्धि तिसकासाधन विहित निष्काम कर्म जो कि परम्परा करके आत्मज्ञानोत्पत्ति का हेतु है तिसको भी यथोचित न करके जीवनपर्यन्त सकाम किंवा निषिद्ध कर्मोंकाही अनुष्ठान करतेहैं। सो १३। शरीर त्याग के १४। अपने कर्मानुसार उन असुरनाम लोकमें १५। निश्चय प्राप्तहोते हैं १६। अर्थात् अज्ञानी पुरुष जो कि अविद्यादोष करके अपने सत्यस्वरूप आत्माका अनादररूपी हनन करनेवाले हैं सो देह त्याग के अनन्तर अपने कर्मानुसार देवता से तृणपर्यन्त शरीर रूपीलोकको प्राप्तहोते हैं। तथाच। "†यथाकर्म यथाश्रुतम्"।३॥

यहां असुरलोक कहनेसे जो देवलोकका भी ग्रहण है सो इस अर्थका अभिप्राय यह है जो देवताओं के लोक सो देवलोक तहां लोक कहिये शरीर अर्थात् देखते भोगते हैं कर्म के फल जहां सो लोक ऐसे जे देवशरीररूपी लोक सो स्वयं प्रकाश सर्व प्रधान सर्वोपरि परमात्माकी अपेक्षामें असुरही कहे जाते हैं क्यों जो

* बृ० उ० अ० ४ मैत्रेयी ब्रा० विषे † क० उ० के व० ५ की ७ श्रुति में॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छान्दोग्य बृहदारण्य प्रश्न इन उपनिषदों में इन्द्रियाधिष्ठाता देवताओं को असुर करके वर्णन कियाहै एतदर्थ देवशरीरको भी असुरलोक कहतेहैं ताते देवताके शरीररूपी अदर्शनात्मक अन्धलोक सो अज्ञान अन्धकार से आवृत हैं क्यों जो देवताओं को सदैव विषयोंकीही लालसा रहती है सो विषयलालसा अज्ञानसे होती है ताते देवता अज्ञानावृत होने से अपने आप सत्यस्वरूप आत्माको यथार्थ जानसक्ते नहीं। तथाच। "* देवैरत्रापि विचिकित्सितंपुरानहिसुविज्ञेयमणुरेषधर्मः"। "† नमेविदुः सुरगणाः"। ताते ऐसे जे अज्ञान अन्धकार से आवृत देव शरीररूपी असुरलोक तिन में अज्ञानी सकामी पुरुष जे विषयों की कामनासे देवाराधन करनेवाले हैं सो देहत्याग के अनन्तर प्राप्त होते हैं। अथवा जे पुरुष कामनाके वशभये भूत प्रेत जड़ादिकों की आराधना करतेहैं। अथवा प्रमाद करके आत्मज्ञान विहित कर्म किंवा सकामकर्म जे उत्तम मध्यम निकृष्ट स्वधर्म हैं तिन को त्याग के सदा निषिद्धकर्मोंकाही अनुष्ठान करतेहैं सो पुरुष अदर्शनात्मक अर्थात् नहीं होता यथार्थविवेक आत्मानात्म वस्तु का जिसकरके ऐसा जो अज्ञानरूपी अन्धकार तिसकरके आच्छादित हैं पशु पाषाण वृक्षादि शरीररूपी लोक तिसबिषे देह त्याग के अनन्तर निश्चय प्राप्त होते हैं। ताते सकामकर्मी किंवा सर्वथा कर्मत्याग के केवल विषयसेवी पुरुष सो देहत्याग के अनन्तर अपने कर्मानुसार देवतादि तृणपर्यन्त स्थावर जंगमरूप अन्धतम अज्ञानावृत शरीर को प्राप्तहोते हैं॥

तात्पर्य॥

जो पुरुष मोक्षका हेतु आत्मज्ञान अरु तिसकी प्राप्तिका साधन विहित निष्काम कर्म तिन दोनों को त्याग के केवल सकाम किंवा निषिद्ध कर्मोंको ही करतेहैं सो पुरुष अपने आपको नाना प्रकार की योनिरूप नरक में प्राप्त करनेवाले ताते आत्महत्यारे

* क० उ० की १व० की २१ वीं श्रुति। † भ० गी० अ० १० वें के २ श्लोकमें॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होतेहैं । एतदर्थ पुरुष को उचित है जो वेदवाक्यानुसार आत्म-हत्यारा न होयके यथार्थ आत्मज्ञानद्वारा अपनेआपकी रक्षाकरने वाला आत्मरक्षक होय ॥

सम्बन्ध ॥

इस तृतीय मन्त्र बिषे जे पुरुष अज्ञान करके सकाम कर्म किंवा निषिद्ध कर्म करनेवाले हैं सो अपने आपका हनन करने वाले ताते आत्महत्यारे अंधतमको प्राप्तहोते प्रतिपादन किये अब उन आत्महत्यारे से विपरीत विद्वान् आत्मरक्षक ज्ञानी तिस आत्मतत्त्वको साक्षात् अपना आप अनुभव करके मोक्षहोते हैं तिस आत्मतत्त्वको वेद भगवान् आगे चतुर्थ मन्त्रसे विपरीत गुणवान् प्रतिपादन करते हैं ॥ ॐ तत्सत् ॥

अनेजदेकम्मनसो जवीयो नैत देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत् । तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥ ४ ॥

पदान्वयः ॥

एतत् अनेजत् एकं मनसो जवीयः पूर्वं अर्षत् देवा न आप्नुवन् तिष्ठत् तत् धावतः अन्यान् अत्येति मातरिश्वा तस्मिन् अपः दधाति ॥

पदार्थ ॥

यह [आत्मा] कम्पमान नहीं एक मनसे शीघ्रगामी पहिले गयाहै देवतालोक [तिसप्रति] नहीं प्राप्तहोते अविक्रिय सोई शीघ्रचलते अन्योंको पीछे छोड़ता है वायु अंतरिक्षमेंचलनेवाला तिसबिषे कर्मोंको धारता है ॥

भावार्थ मन्त्र चौथे का ॥

हे सौम्य ! पूर्वकथित प्रकारके अविद्वान् आत्महत्यारे तिनसे विपर्यय जे प्रथममंत्रानुसार आत्मरक्षक ज्ञानवान् जिस अजर अमर अक्रिय आकाशवत् सर्वव्यापी परमात्मा जिसकरके चरा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चर जगत् आच्छादितहै तिसको अपनाआप अनुभवकरके तद्रूप होतेहैं सो आत्मा इस मन्त्रविषे प्रतिकूल गुणों करके कहागया है तथापि इसमें कुछ विरुद्ध नहीं क्यों जो श्रुतिने आत्माको निश्चल भी कहा है अरु मनसे भी आगे जानेवाला कहा है ताते प्रत्यक्ष विरुद्ध भाषे है तथापि कुछ विरुद्ध नहीं क्यों जो आत्मा निरुपाधि होने से आकाशवत् सर्वत्र अचल एकरस क्रिया से रहित शुद्ध कहाजाता है सोई कहते हैं॥ यह १। आत्मा सर्वका अपनाआप अचलहै २। अर्थात् आकाशवत् सर्व क्रियासे रहित है फेर कैसा है। एक है ३। तथाच। "* एकमेवाद्वितीयम्"। ऐसा जो अद्वैत अचल अक्रिय आत्मा है सोई आत्मा मन से ४। आगे जानेवाला है ५। अर्थात् सर्व देहों विषे अन्तःकरणकी संकल्प विकल्पात्मक वृत्तिरूपी जे मन जिसको कि देह में रहत सन्ते अर्ध क्षणमात्र में देश देशान्तर किंवा अति दूर ब्रह्मलोक पर्यन्त संकल्प द्वारा जाने की शक्ति होने से शीघ्रगामी संज्ञा दी गई है तिस मनसे भी आगे जानेवाला है। अरु जहां जहां संकल्पद्वारा मन जाता है तहां तहां मनसे पहिलेही ६ गयाहै ७। अर्थात् जहां जहां मन जाताहै तहां तहां सर्वत्र सत्तारूप सिद्धहै ताते मनसे भी प्रथम गया कहते हैं तिस आत्मा को देवता ८। नहीं ९। प्राप्त होते १० अर्थात् उस आत्मा को चक्षुरादि इन्द्रियरूप देवता नहीं प्राप्त होते क्यों जो चक्षुरादि इन्द्रियों का अधिष्ठाता मन तिसका भी विषय आत्मा नहीं तब इन्द्रियों का विषय कैसे होगा कदापि न होगा इसही से कहा है जो देवता उस आत्मा को नहीं प्राप्त होते सो आत्मा अविक्रिय है ११। अर्थात् आकाशवत् परिपूर्ण अक्रिय है उसही आत्मतत्त्व के प्रकाश में मनआदि इन्द्रियां अपने २ विषयों को प्राप्त होती हैं इस हेतुसे आत्मा सर्वव्यापी सर्वत्र अक्रिय सिद्ध भया। ऐसा जो सर्वत्र एकरस अक्रिय आत्मा है। सोई आत्मा

* छान्दोग्यउपनिषद् के छठे प्रपाठक के दूसरे खण्डकी श्रुति में॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१२। आप शीघ्र चलते १३। अन्यों को १४। पीछे छोड़जाता है १५ अर्थात् आत्मा सर्वत्र एकरस अक्रिय निरुपाधिरूप से उपाधिकृत क्रियावान् सम्पूर्ण संसारकी विशेष क्रिया को अनुभवकर्त्ता है। अथवा अविवेकी जे मूढ़ पुरुष हैं तिनको आत्मा देह २ प्रति भिन्न भिन्न भासे है अरु तिस बिषे सर्व उपाधि के धर्म को आत्माही के धर्म मानते हैं ताते उन पुरुषों को आत्मा जन्म मरणवान् भासे है परन्तु वास्तव करके आत्मा आकाशवत् परिपूर्ण सर्वत्र सर्व क्रिया से रहित अपने आप बिषे स्थितहै तिस आत्मतत्त्व बिषे १६। अन्तरिक्ष में चलनेवाला वायु १७। कर्मों बिषे १८। धारता है १९। अर्थात् जिस बिषे सर्व ब्रह्मांड ओतप्रोत है ऐसा जो सूत्रात्मा कि जिसके आश्रय सर्व ब्रह्माण्ड की क्रिया होती है सो आत्मतत्त्व की सत्ताके आश्रय सर्व ब्रह्माण्डके कर्मों को अपने बिषे धारता है। तथाच। "भिषास्माद्वातः पवते" इत्यादि ॥

तात्पर्य ॥

प्रथम मन्त्र करके कहा जो यह सर्व नाम रूपात्मक जगत् परमात्मा करके आच्छादितहै। तिस परमात्माका स्वरूप मुमुक्षु को भलीप्रकार जाननेके अर्थ इस मन्त्र बिषे उपाधि निरुपाधि द्वारा कर्त्ता अकर्त्ता आदि भाव से वेद भगवान् ने कहा है ॥

सम्बन्ध ॥

जो कि इस चतुर्थ मन्त्रसे मुमुक्षु के बोधार्थ आत्माको उपाधि द्वारा गमनादि धर्मवान् अरु उपाधि के अभावसे सर्व धर्म रहित शुद्ध कहा है। अब इसही अर्थको मुमुक्षु की दृढ़ता के अर्थ वेद भगवान् आगे पंचममन्त्र प्रतिपादन करते हैं ॥ ॐतत्सत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वदन्तिके। तदन्तरस्य सर्व्वस्य तदु सर्व्वस्यास्य बाह्यतः ॥ ५ ॥

पदान्वयः ॥

तत् एजति तत् न एजति तत् दूरे तत् उ अन्तिके तत् अस्य सर्व्वस्य अन्तः तत् उ अस्य सर्व्वस्य बाह्यतः ॥

पदार्थ ॥

सो आत्मा चलताहै सोई नहीं चलता सोई दूरहै सोई आत्मा समीपहै। सोई इस सर्वके अन्तरहै सोई आत्मा इन सर्वके बाहर है ॥

भावार्थ मन्त्र पाँचवेंका ॥

हे सौम्य! पूर्व चतुर्थमंत्र बिषे आत्मा जो कि सर्व उपाधिसे रहित केवल केवलीभाव अपने आपबिषे ज्योंका त्यों कहा तिस आत्माको उपाधि निरुपाधि द्वारा प्रतिकूल गुणोंसे सर्वत्र सिद्ध किया ताते सर्वप्रकार एक विज्ञानघन आत्माही है। तिस आत्मा बिषे उपाधि निरुपाधि का आरोप केवल मुमुक्षुको समझावने के अर्थ वेदने कहाहै ॥ अब पुनः मुमुक्षुके दृढ़बोधार्थ इस पंचम मंत्र बिषे आत्माको प्रतिकूल गुणें करकेही प्रतिपादन करते हैं ॥

हे सौम्य! सोई आत्मा १। चलताहै २। अर्थात् जंगमशरीर रूपी उपाधि साथ मिलके गमनागमन क्रियावान् भासताहै ताते चलताहै। अथवा लिंगशरीररूपी उपाधि साथ मिलके स्वर्ग नरकादिकों बिषे जाता आवता प्रतीत होताहै सो सर्व उपाधिके धर्म अज्ञानके आश्रय आत्मा बिषे कल्पना करते हैं 'जैसे बालक मेघों की धावमानताको देखके अज्ञानके आश्रय चन्द्रमा को चलता कहते हैं' तैसेही अज्ञानके आश्रय शरीरादि उपाधिके धर्मशुद्ध निरुपाधि आत्माबिषे मानतेहैं परन्तु आत्मा सर्वउपाधिसे रहित अक्रियहै सो उपाधिद्वारा चलताहै अरु। सोई आत्मा ३। नहीं ४।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चलता ५। अर्थात् जो आत्मा देहादि उपाधि साथ मिलके चलता है सोई उपाधिके अभावसे नहीं चलता । जे विद्वान् आत्मवेत्ता हैं सो *"नेतिनेति" श्रुतिके वाक्यकरके सूक्ष्म स्थूल सर्वउपाधिको गिराय महासूक्ष्म आत्मतत्त्वको आकाशवत् अचल अक्रिय सर्वत्र अनुभव करते हैं ताते वास्तवकरके आत्मा नहीं चलता अरु। सोई आत्मा ६ । दूरहै ७। अर्थात् अज्ञानी पुरुषों को आत्मतत्त्व अपना आप होत संतेभी शतकोटि वर्ष पर्यन्तभी ज्ञानविना प्राप्त नहीं ताते दूरहै । अथवा ब्रह्मलोकादि यावत् लोकलोकान्तर हैं तहां पर्यन्त भी जाने से ज्ञानविना अप्राप्य है ताते आत्मा दूरहै। अथवा आत्मतत्त्व मनबुद्धि इन्द्रियादिकोंका विषय नहीं एतदर्थ भी दूरहै । तथाच † "दूरात्सदूरे" ताते अज्ञानी पुरुषोंको आत्मा दूरसे भी दूरहै अरु सोई ८ । आत्मा ९ । समीप है १० अर्थात् जो आत्मा अज्ञानियोंको दूरसे भी दूरहै सोई आत्मा यथार्थदर्शी ज्ञानवान् को समीप है सो कैसा समीप है । तथाच । ‡ "निहतोगुहायाम्" । बुद्धिरूपी गुहाविषे सर्वका अपनाआप अनुभवी स्थित है ताते अत्यन्त समीप है । अरु सोई ११ । इस १२ । सर्वके १३ । अन्तर है १४ । अर्थात् जो आत्मा विद्वानोंका अपनाआप है सोई सम्पूर्ण चराचरका अन्तर अनुभवकर्त्ता अपना आप है । तथाच * "आत्मासर्वान्तर" ताते आत्मा इन सर्वके अन्तर है । अरु सोई १५ । आत्मा १६ । इन १७ । सर्वके १८ । बाहर है १९ ॥ अर्थात् जो आत्मा सर्वके अन्तर है सोई आत्मा आकाशवत् आकाशादि सर्वके बाहर है तथाच × "सबाह्याभ्यन्तरोह्यजः" ॥ ५ ॥

---

* बृहदारण्यउपनिषद् के द्वितीयाध्याय मूर्त्तामूर्त्त ब्राह्मण विषे ॥

† कठवल्ली उपनिषद् की द्वितीयावल्ली की २० वीं श्रुति में ॥

‡ क० उ० की वल्ली २ की २० श्रुति में । * बृ० उ० के अ० ३ अन्तर्यामी ब्रा० में ॥

× मुण्डक उपनिषद् के तृतीय मुण्डककी दूसरी श्रुतिमें ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तात्पर्य ॥

आत्माको चलता न चलता दूर समीप अन्तर बाहर सर्वत्र प्रतिपादन किया सो केवल मुमुक्षु के बोधार्थ उपाधिका आरोप लेके सर्वप्रकार एक आत्मतत्त्वही प्रतिपादन कियाहै कि जिससे मुमुक्षुका द्वैतभाव अशेषअभाव होय सर्वप्रकार एक अद्वैत आत्मतत्त्व के निश्चयपूर्वक परमशान्ति प्राप्तहोय ॥

सम्बन्ध ॥

चतुर्थ अरु पंचम इन दोनों मन्त्र से उपाधि निरुपाधिद्वारा विशेष निर्विशेषकरके एक अद्वैत आत्मतत्त्व प्रतिपादन किया। अब आगे मुमुक्षु के अर्थ आत्मविचारकी रीति अरु तिसका फल मोक्ष दो मन्त्रकरके वेदभगवान् प्रतिपादन करते हैं ॥

यस्तु सर्व्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति । सर्व्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥ ६ ॥

पदान्वयः ॥

यः तु सर्वाणि भूतानि आत्मनि एव अनुपश्यति च सर्वभूतेषु आत्मानं ततः न विजुगुप्सते ॥

पदार्थ ॥

जो कोई सर्व भूतोंको आत्माबिषेही देखताहै फेर सर्व भूतोंबिषे आत्माको तातें नहीं घृणाकरता ॥

भावार्थ मन्त्र छठेका ॥

हे सौम्य! जो कोई मुमुक्षु आत्मज्ञानी कि जिसकोअपना आप आत्मा संशय विपर्ययसे रहित ज्योंकात्यों अनुभव भया है सो १–२। सर्व ३। भूतोंको ४। आत्माबिषे ५। ही ६। देखता है ७। अर्थात् जो कोई आत्मानुभवी पुरुष है सो अव्याकृत से तृणपर्यन्त सर्व कार्यकारणात्मक भूतोंको आत्माबिषेही देखता है।' जैसे जलबिषे तरंग तैसे '। पुनः ८। सर्व ९। भूतोंबिषे १०। आत्माको ११। देखता है। अर्थात् जैसे सर्वभूतोंको अपनेआप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिषे तैसेही सर्वभूतबिषे एक अपनेआप आत्माको देखता है । 'जैसे सर्वतरंग बुद्बुदादिकों बिषे एक जलको देखता है' । इस प्रकार जलतरंगके दृष्टान्त प्रमाण आत्माबिषे जगत् अरु जगत् बिषे आत्माको देखता है सो । ऐसे देखनेसों १२ । नहीं १३ । घृणा [ग्लानि] करता १४ । अर्थात् ग्लानिआदि द्वैतभाव बिषे होतेहैं सो द्वैतभाव अविद्याकरके होता है । तथाच * " यत्र हि द्वैतमिवभवति तदितरइतरम्पश्यति " । अर्थात् अविद्याकरके द्वैतभाव अरु द्वैतभाव बिषे ग्लानिआदि होतेहैं सो अविद्या आत्मज्ञानीकी अशेष निवृत्तभई है तातेही द्वैतभावका अभाव भया है इसहीसे एक अद्वैत आत्मभाव निश्चय भया है सो आत्मा सदा शुद्धबुद्ध मुक्तस्वभावहै इसहीसे ग्लानिआदि नहीं करता । तथाच । † " यस्तुसर्वमात्मैवाभूत्तत्केनकम्पश्येत्" ॥ इत्यादि ॥

तात्पर्य ॥

जो ज्ञानवान् सम्पूर्ण जगत्को केवल एक अपनाआप आत्माही जानता है सो तिस अभ्यासके बलसे किसी पदार्थ की ग्लानिआदि नहीं करता अर्थात् जिसप्रकार ज्ञानी आत्मवेत्ता सर्वात्मभाव के दृढ़अभ्याससे ग्लानिआदि नहीं करते तैसेही सर्व मुमुक्षुको एकात्मविचार के अभ्यासबलसे किसी भी पदार्थ बिषे रागद्वेषादि कुछ भी कर्त्तव्य नहीं ॥

सम्बन्ध ॥

इस मन्त्रबिषे मुमुक्षुको सर्वात्मभाव देखाय सूचना किया कि आत्मअभ्यास वाले को किसी पदार्थमेंभी ग्लानि आदि कर्त्तव्य नहीं । अब ७ वें मन्त्रकरके सर्वात्मअभ्यासी को वेद भगवान् मोक्षका स्वरूप कहते हैं ॥ ॐ तत्सत् ॥

यस्मिन्[2] सर्वाणि[3] भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः[1] । तत्र[4] को[11] मोहः[12] कः[13] शोक[14] एकत्वमनुपश्यतः[5] ॥ ७ ॥

* बृ० उ० के अ० ४ में ब्रा० विषे । † बृ० उ० के षष्ठ अध्यायविषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पदान्वयः ॥

विजानतः यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मा एव अभूत् एकत्वं अनुपश्यतः तत्र कः मोहः कः शोकः ॥

पदार्थ ॥

भलीप्रकार जाननेवाले को जिसकाल में सम्पूर्ण भूतोंको आत्मा ही है एकत्व देखनेवालेको तिसकालमें क्या मोह क्या शोक ॥ ७ ॥

भावार्थ मन्त्र सातवेंका ॥

हे सौम्य! पूर्वकथित आत्माको वेद गुरु अरु अपने अनुभव द्वारा भलीप्रकार जाननेवाले को १। जिसकालमें २। सम्पूर्ण ३। भूतों को ४। आत्मा ५। ही ६। है ७। अर्थात् आत्मकामा सुमुक्षु श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ आचार्यद्वारा श्रुतिके। * "सर्वंखल्विदंब्रह्म" † "नेहनानास्तिकिंचन"। इत्यादि वाक्यों कर के साक्षात् अपने अनुभवसे जिसकाल में यावत् स्थूल सूक्ष्म कार्य कारणात्मक सर्व भूतोंको। ‡। "आत्मैवेदंसर्वं" श्रुतिके प्रमाण से अपनाआप आत्माही है ऐसा जानता है। अरु ऐसाजान के एकत्व८। देखनेवालेको ९। तिसकाल में १०। क्या ११। मोह।१२। क्या १३। शोक १४॥ अर्थात् जिसप्रकार श्रुतियों के वाक्य आचार्य द्वारा श्रवण करके अपने आत्मा को सर्वत्र आत्मभाव से अनुभव किया है तिस आत्मतत्त्वका एकत्व देखता है 'जैसे घट मठ सरावले आदि यावत् मृत्तिका के कार्य हैं तावत् व्यवहार दृष्टिसे सर्व के नामरूप क्रिया पृथक् २ भासे हैं परन्तु परमार्थ दृष्टि से घट मठादिकों के नामरूप मृत्तिका विषे "* वाचारंभणं विकारोनामधेयं"। वाचारंभणमात्र अर्थात् कल्पित है"। "मृत्तिकेत्येव सत्यम्" एक मृत्तिकाही सत्य है। तैसेही सम्पूर्ण नाम

* छां० उ०प्र०४विषे। † बृ० उ० के अ०६विषे। ‡ छां०उ०के प्र० ७ विषे।
* † छां० उ० प्र० ६ की प्रथमश्रुति में॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपात्मक जगत् व्यवहारदृष्टि से पृथक् २ भासे है परन्तु वास्तव में परमार्थ दृष्टिसे । * " एषोन्तरात्म्यमिदंसर्वम् " सम्पूर्ण चराचर एक आत्माही है । इस प्रकार श्रुतियों के वाक्य प्रमाण अपने आप अनुभव से सर्वत्र आत्माही के एकत्व का निश्चय पूर्वक दृढ़ अभ्यास करता है तिसकालमें अर्थात् जब कि अभ्यास द्वारा अन्तःकरण की सर्वात्मभाव रूपावृत्ति दृढ़उदयहोतीहै तिस विज्ञानावस्था में क्या मोह और क्या शोक किंतु कुछभी नहीं क्यों जो † । " तरति शोकमात्मवित् " । आत्माको जाननेवाला शोक को तरता है । अर्थात् जिस पुरुष ने सर्वत्र एक अपने आप आत्माही को अनुभव किया है अरु तिस बिषे अभ्यास द्वारा स्थितिपायाहै सो पुरुष शोक मोहादिकों से तरजाताहै । ताते आत्मवेत्ता को शोक मोहादि नहीं क्यों जो शोक मोहादिकों का कारण जे कामना सो तो ज्ञानवान्की " इहैव सर्वे प्रविलीयन्तिकामाः " यहां विज्ञान अवस्था में ही सर्वकामना अभाव होजाती है । अरु कामना का कारण अविद्या है सो ज्ञानवान्की अविद्या आचार्य से तत्त्वमस्यादि उपदेश पावतेही अपने कार्य कामना अरु तज्जन्य शोक मोहादि सहित अभाव होजाती है । इसही हेतु से जिसज्ञानवान् को सर्वत्र एक अपनाआप आत्मा ही निश्चय भया है तिसमहात्माको शोकमोहादि कदापि नहीं ७॥

तात्पर्य ॥

" यस्तुसर्व्वाणिभूतानि " यहां से लेके " एकत्वमनुपश्यतः " यहां पर्यन्त ६--७ दो मन्त्रहैं तिनमें सातवें मन्त्र का तृतीयपाद " तत्र को मोहः कः शोकः " जो कि अन्वय की रीति से चतुर्थ पाद है तिसको छोड़के चारपादछठे मन्त्रके अरु तीनपाद सातवें मंत्र के इसप्रकार सातपाद पौनेदो १॥ मन्त्र कर के वेद भगवान् ने मुमुक्षु के अर्थ आत्मविचारकी रीति संक्षेप

* छां० उ० के प्र० ६ के ८ वें खण्डकी श्रुति में † छां० उ० प्र० ७ वें के प्रथमखण्ड की श्रुति में ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मात्र सूचन किया है। अरु सातवें मन्त्रके तृतीय पाद करके वेद भगवान् ने ज्ञानवान् के विषे शोक मोहका अभाव रूप लक्षण अरु सोई मुमुक्षुके अर्थ फल कहा है क्योंकि ज्ञानवान् के विषे अविद्याकी निवृत्तिका लक्षण शोक मोहादिकोंका न होनाही है। अर्थात् अज्ञान का कार्य शोक मोहादि सोई अज्ञान का लक्षण ताते अज्ञान के लक्षण जे शोक मोहादि तिनकी जो निवृत्ति सोई अज्ञान की निवृत्ति का लक्षण ताते ज्ञानवान् के विषे अज्ञान के कार्य जे शोक मोहादि तिन के अभाव द्वारा अज्ञानकी निवृत्ति मानके तिसको बुद्धिमान् ज्ञानी कहते हैं। ताते शोक मोहका न होना भी ज्ञानवान्के लक्षण हैं। अरु मुमुक्षु जब जानताहै कि। "तरतिशोकमात्मवित्" आत्मवेत्ता शोकको तरताहैतब शोक तरने के अर्थ आत्मज्ञानका जिज्ञासुहोय आचार्य के समीपजाय श्रुति के तत्त्वमस्यादि वाक्यद्वारा यथार्थ आत्मज्ञानपाय शोक मोहादिकों से रहितहोता है ताते मुमुक्षुको आत्मज्ञानका फल शोक मोहादिकों का अभाव होनाही है ताते "तत्र को मोहः कः शोकः"। इस पादकरके शोक मोहादिकों का जो अशेष भाव सोई ज्ञानवान्के लक्षण अरु मुमुक्षुको आत्मज्ञान का फल कहा। अरु शोक मोह के अभाव कहने से यावत् अविद्या का कार्य है तावत् सर्वका अभाव ग्रहण होताहै क्योंजो वेद का कहना आक्षेपपूर्वक है क्योंकि सर्वात्मभाव से आत्मा का अनुभव करनेवाले जे पुरुषहैं सो ज्ञानवान् आत्मवेत्ता तिन में यथार्थ ज्ञानकरके अविद्या अरु तज्जन्य द्वैतभाव तिसका निःशेषअभाव भया है तहां शोक मोह कहां किन्तु कदापि नहीं। ताते ज्ञानवान्के विषे शोक मोहउपलक्षण करके षट्ऊर्मीसहित अविद्याका अभाव समझना। तहां शोक मोह मनकी ऊर्मी, क्षुधापिपासा प्राणकी ऊर्मी, जन्म मरण देहकी ऊर्मी। ताते यह षट् ऊर्मी मन प्राण शरीरकी हैं आत्मा की नहीं आत्मा सर्वऊर्मी से रहित केवल शुद्ध विज्ञानघन आकाशवत् अपने विषे आपस्थित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है । एतदर्थ पूर्वकथितप्रकारसे इषणात्रयके त्यागपूर्वक षट्ऊर्मी से रहित जो शुद्ध स्वयंप्रकाशआत्मा तिसकी सर्वात्मभावसे अपनेआपबिषे अभेदभावना कि सो सर्वात्मा मैंहौं । अर्थात् यह जो अन्तःकरणकी अहंकाररूपा निश्चयात्मकवृत्ति कि सो सर्वात्मा मैं हौं तिसको गिरायके शुद्ध चैतन्यघन अफुर स्वयंप्रकाश सर्वविशेषतासे रहित साक्षात् अपनेआपबिषे आप होताहै ऐसे दृढ़अभ्यासवाले जे ज्ञानवान् । "[1]नैतस्यप्राणा उत्क्रामन्ति" "[2]तैत्रैवसमवनीयन्ते" "[3]ब्रह्मैवसन्ब्रह्माप्येति" तिसकेप्राण देहावसानसमये देहसे न निकलके तहांही अपने अधिष्ठान चैतन्यआत्मा बिषे लीनहोते हैं ताते ज्ञानवान् जो आत्मअध्यासी पुरुष सो सर्व उपाधि से रहित जहांहै तहां ब्रह्मही है । तथाच "ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति" ॥

सम्बन्ध ॥

इसमंत्रबिषे मुमुक्षुको आत्मविचारकहके आत्मज्ञानका फल शोक मोहादि सर्वविकार अरु तिनका कारण अविद्या तिसके अभावपूर्वक मोक्षकहा अब ज्ञानवान् ब्रह्मआत्माकी एकतारूप अध्यासके बलसे अन्त में देहसे न निकलके यहांही इस शरीर में जिस ब्रह्मसाथमिलके ब्रह्मही होताहै तिस परमात्मा परब्रह्मका स्वरूप विधिमुख अरु निषेधमुखकरके वेदभगवान् आगे अष्टम मंत्रकरके प्रतिपादन करते हैं ॥ ॐ तत्सत् ॥

सँ पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् । कविर्मनीषी परिभूः । स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥ ८ ॥

पदान्वयः ॥

शुक्रं अकायम् अव्रणम् अस्नाविरम् शुद्धम् अपापविद्धम् सः

१-२ बृ० उ० अ० ६ के शारीरक ब्रा०की ५ श्रुतियें । ३ बृ० उ० के मैं ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर्य्यगात् कविः मनीषी परिभूः स्वयम्भूः, शाश्वतीभ्यः समाभ्यः याथातथ्यतः अर्थान् व्यदधात् ॥ ८ ॥

पदार्थ ॥

शुद्ध कायारहित छिद्ररहित शिरारहित निर्मल पापरहित है सो व्यापकहै क्रांतदर्शी मनकाईश सर्वोपरि स्वयंविद्यमान यथाभूतकर्मफल साधनसे अनन्तकालस्थायी प्रजापतिके अर्थ पदार्थों को विभागकरताभया ॥ ८ ॥

भावार्थ मन्त्र आठवेंका ॥

हे सौम्य! पूर्वकथित प्रकार जे मुमुक्षु इषणासे रहित होयके श्रुतियों के। " * स आत्मातत्त्वमसि" * " अयमात्माब्रह्म " † "एतदैतत्"×"तत्त्वमेव त्वमेवतत्"। इत्यादि वाक्यों प्रमाण ब्रह्मआत्माकी एकतारूप अभ्यास करनेवाला सो जिसपरमात्मा साथ 'नदी समुद्रवत्' अभेद होताहै सो परमात्मा हे सौम्य! शुद्ध है १। अर्थात् ज्योतिमय दीप्यमान स्वयंप्रकाश है। पुनः कैसा है कायारहित अकाय है २। अर्थात् समष्टि सूक्ष्मउपाधि लिंगशरीर (पुर्यष्टिका) अरु व्यष्टि सूक्ष्मउपाधि महत्तत्त्वादि अष्ट प्रकृति विकृति अथवा समस्त सूक्ष्मशरीरों की समष्टता हिरण्यगर्भ। अर्थात् सूक्ष्मशरीररूपी व्यष्टि समष्टि उपाधिसे रहित ताते अकाय है। पुनः कैसा है छिद्ररहित अछिद्र है ३। अर्थात् इन्द्रियों के गोलकरूपी छिद्र तथा फोडा इनसे रहितहै। पुनः कैसाहै शिरा रहित अशिरा है ४। अर्थात् शिराकहिये नाड़ी तिनकरके भी रहित है यहां छिद्र अरु नाड़ियों के कहने से व्यष्टि स्थूलशरीर रूपी उपाधि अरु समष्टि विराट् शरीररूपी स्थूलउपाधि तिनसे रहित है। पुनः कैसाहै शुद्धहै ५। अर्थात् मूलप्रकृति माया अरु तिसका कार्य तिनसे रहित शरत्काल के आकाशवत् निर्मल सदा शुद्ध है। पुनः कैसाहै पापरहित अपाप है ६। अर्थात् धर्म्म अधर्म्म कर्त्ता अकर्त्ता पुण्य पाप स्वर्ग नरक जन्म मरण दुःखसुख

छांदोग्य मांडूक्य † कठवल्ली, × कैवल्य,। उपनिषदों विषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बंध मोक्षआदि यावत् द्वंद्वरूपी पापहैं तिनसर्वसे रहित अपापहै। सो ७। अर्थात् जो परमात्मा सर्वउपाधिसे रहित सदाशुद्ध प्रतिपादन किया है सो परमात्मा व्यापक है ८। अर्थात् आकाश से भी महासूक्ष्म आकाशादि सर्वविषेव्यासहै॥हे सौम्य! जोपरमात्मा सर्व उपाधिसे रहित परमशुद्ध जिसको श्रुतियोंने।"† अस्थूलमनएव ह्रस्वमदीर्घमलोहित" इत्यादि नेति नेति द्वारा निषेध मुख प्रतिपादन किया है सोई सर्वव्यापी परमात्मा को इसमन्त्र के पूर्वार्ध "शुक्रमकायमव्रणं" इत्यादि करके निषेध मुख प्रतिपादन किया है अब उसही परमात्मा को इसही मन्त्रके उत्तरार्ध करके विधि मुखद्वारा सविशेष प्रतिपादन करतेहैं हे सौम्य! जो परमात्मा सर्व उपाधि से रहित सदाशुद्ध आकाशवत् सर्वव्यापी कहा है सोई परमात्मा । कवी ९ । अर्थात् क्रान्तदर्शी सर्वका द्रष्टा है । तथाच । ❀ "नान्यतो ऽस्ति द्रष्टेत्यादि" । पुनः कैसा है मनीषी १० । मनका जाननेवाला सर्वज्ञ ईश्वरहै। पुनः कैसा है सर्व के ऊपर है ११ । अर्थात् आकाशादि किसी करकेभी आच्छादित न होत सन्ते आकाशादि सर्वको आच्छादन करने वाला सर्व की प्रथमावधि है ताते सर्व के ऊपर है । अथवा सूर्य चन्द्र पृथिवी जल अग्नि वायु काल दिशा देव पितृआदि भूत भौतिक यावत् जगत् है तिस सर्व के ऊपर सर्वका नायक सर्व को अपनी आज्ञा में चलावने वाला है ताते सर्व के ऊपर है। तथाच "× एतस्य वाऽक्षरस्य प्रशासने गार्गी सूर्य्याचन्द्रमसौ विधृत तिष्ठति" इत्यादि । पुनः कैसा है स्वयम्भूहै १२ । अर्थात् आकाशादि जिनके २ ऊपर है सो सर्व अपनी इच्छा से आपही हुआ है अरु आप स्वतःसिद्धहै ताते स्वयम्भू है । ऐसा जो स्वयम्भू सर्वोपरि सर्वज्ञ स्वयम्प्रकाश सर्वका द्रष्टा नित्यशुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव परमात्मा परमेश्वर है सो। अनन्तकाल स्थायी१३।

† यह बृहदारण्य उ० के ५ वें अध्याय के ८ वें ब्राह्मण विषे ॥
❀ ×बृ० उ० के अ० ५ वें के अष्टमब्राह्मण की ११ तथा ९ श्रुति में ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संवत्सर के अर्थ १४। अर्थात् संवत्सरनाम प्रजापति के अर्थ। यथा भूतकर्म फल साधन से १५। अर्थों को १६। अर्थात् कर्त्तव्य पदार्थों को जो कि अग्निहोत्रादि रूपसे कर्त्तव्य हैं। यथा विभाग से करताभया १७॥ ८॥

तात्पर्य॥

"ईशावास्यमिदंसर्वं" इस प्रथम मन्त्र करके परमात्मा अरु तिसकी प्राप्ति का साधन इषणात्रयसे रहित संन्यासपूर्वक आत्मज्ञान मुमुक्षुके अर्थ सूचना किया १। अरु "कुर्व्वन्नेवेह कर्माणि" इस दूसरे मंत्र करके इषणात्रय के त्यागपूर्वक आत्म-अध्यास में असमर्थ पुरुषको कर्म्मबन्धनों की निवृत्ति के अर्थ विहित निष्काम अग्निहोत्रादि कर्म कर्त्तव्य प्रतिपादन किया २॥ अरु। "असूर्य्यानामतेलोका"। इस तृतीय मन्त्र करके पूर्व कथित उभय का जो त्यागी पुरुष है अर्थात् आत्म अध्यास अरु विहित निष्काम कर्म जो कि उत्तम मध्यम रीति से परमार्थ का हेतु हैं तिनको त्याग के केवल सकाम अथवा निषिद्ध कर्मों को ही करते हैं तिन पुरुषों को अपने कर्मानुसार असुरलोक प्राप्ति द्वारा तिनकी निन्दा प्रतिपादन किया ३॥ अरु इनतीन मंत्रों में तीनप्रकार के अधिकारी सूचित किये तहां प्रथम मंत्रप्रमाण आत्माध्यासी पुरुष मोक्षका भागी उत्तमाधिकारी। अरु दूसरे मन्त्र प्रमाण विहित निष्काम कर्म्म कर्त्ता पुरुष ब्रह्मलोक का भागी मध्यम अधिकारी। अरु तृतीय मंत्र प्रमाण केवल सकाम अरु निषिद्ध कर्म सेवी अधर्मी असुरलोक अरु अन्धतमके भागी आत्महत्यारे पुरुष निकृष्ट अरु अधम अधिकारी। प्रतिपादन किये॥ अब प्रथम मंत्र करके आत्मरक्षार्थ जिस परमात्मा की अभेद भावनारूप अभ्यास सो उत्तमाधिकारी मुमुक्षुके अर्थ कहा है तिस परमात्मा को भलीप्रकारसे जानने के अर्थ "अनेजदेकं" अरु "तदेजति" ४-५ इन चतुर्थ पंचम दो मन्त्रकरके प्रतिपादन किया। अरु उस परमात्मतत्त्वके विचार अध्यास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की रीति मुमुक्षुके अर्थ " यस्तुसर्व्वाणिभूतानि " अरु " यस्मिन्सर्वाणिभूतानि " ६--७ इन षष्ठ सप्तम दो मन्त्र करके प्रतिपादन किया । अरु सप्तम मंत्र के तृतीय पाद करके शोक मोह के अभावद्वारा ज्ञानवान्को सम्यक्ज्ञान प्राप्तिका लक्षण देखाया। अरु मुमुक्षुपुरुष सर्वात्मभावना रूपसे ब्रह्मआत्माकी अभेद भावनारूप अभ्यास से परमात्मा के साथ " * यथानद्यःस्पन्दमानाः समुद्रेऽस्तंगच्छन्तिनामरूपेविहाय । तथाविद्वान्नामरूपाधिमुक्तः परात्परंपुरुषमुपैतिदिव्यम् " इत्यादि श्रुतिप्रमाणसे नदीसमुद्रवत् भेदसे रहित अभेद एक होता है तिस परमात्मा का स्वरूप " सपर्यगाच्छुक्रमकायं"इस अष्टम मंत्रकरके निषेधमुख अरुविधिमुख प्रतिपादन किया अर्थात् " † ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति " ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मही होता है । सो कह के ब्रह्मकास्वरूप ज्ञानवान्की परम गति देखाय प्रथम मन्त्र के अनुसार अधिकारी मुमक्षु ज्ञानवान् का प्रकरण चतुर्थ से अष्टममंत्रपर्यन्त पांच मंत्र करके वेद भगवान्ने प्रतिपादन किया ॥ यहां पर्यन्त इसउपनिषद् का पूर्वार्ध प्रतिपादनकरके आगे मध्यम अरु कनिष्ठ अधिकारी का प्रसंग नवम९मंत्रसे अष्टादश १८ मंत्र पर्यन्त अर्थात् ग्रन्थकी पूर्णतापर्यन्त दश १० मंत्र करके वेदभगवान् इस उपनिषद्का उत्तरार्ध प्रतिपादन करतेहैं ॥ ॐ तत्सदिति शुक्लयजुर्वेद माध्यंदिनिशाखा के ईशावास्य मंत्रोपनिषद्कैपूर्वार्द्धकी भाषा टीका समाप्त शुभम्॥

सम्बन्ध ॥

इस मंत्र विषे परमात्मा को निषेध अरु विधिमुख द्वारा प्रतिपादन करके प्रथम मंत्रानुसार उत्तमाधिकारी ज्ञानवान्काप्रसंग-प्रकरण समाप्तकिया । अब आगे मध्यमअधिकारी अरु कनिष्ठअधमाधिकारी का प्रसंग चलेगा तहां प्रथम मध्यमाधिकारी का प्रसंग न कहके कनिष्ठ अधमाधिकारी जे तृतीयमंत्र करके आत्म-

*। † यह मुण्डक उपनिषद् के षष्ठ मुण्ड की ८--९ श्रुतियों में ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हत्यारे कहे हैं तिनकी जो परलोक गति तिसको पुनः नव ९ वें मन्त्रकर के वेदभगवान् प्रतिपादन करते हैं॥

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते। ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाꣳ रताः॥ ९॥

पदान्वयः॥

ये अविद्याम् उपासते [ते] अन्धं तमः प्रविशन्ति ये उ विद्यायाम् रताः ते ततः भूय इव तमः [प्रविशन्ति]॥

पदार्थ॥

जे पुरुष अविद्याको उपासतेहैं [सो] अदर्शनात्मक अज्ञान में प्रवेशकरतेहैं [अरु] जे कोई विद्याबिषे रतहैं सो तिससे भी अधिक ऐसे तममें [प्रवेशकरतेहैं]॥

भावार्थ मंत्र नवम का॥

हे सौम्य! जे १। अविवेकी सकाम पुरुष अविद्या की २। उपासनाकरतेहैं ३। अर्थात् ब्रह्मविद्या से विपर्यय जो अविद्या अग्निहोत्रादि लक्षणरूप कर्म सो फल प्राप्तिके अर्थ निरन्तर अनुष्ठानकरतेहैं सो अदर्शनात्मक ४। अज्ञानरूपी अन्धकार में ५। प्रवेशकरते हैं ६। अर्थात् जे पुरुष कामना सहित अग्निहोत्रादि कर्म का अनुष्ठान करते हैं सो स्वर्गादिकों में स्वकर्मके फल को भोग ते नहीं है अपने आत्माकी दर्शन योग्यता जिनमें ऐसे जे अदर्शनात्मक अज्ञानावृत शरीर तिनबिषे प्रवेश करतेहैं। तथाच। × "इष्टापूर्तंमन्यमाना वरिष्ठं नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमूढाः। नाकस्य पृष्ठे ते सुकृतेऽनुभूत्वेमं लोकं हीनतरं वाविशन्ति"। अरु जे कर्म कामना सहित किये जाते हैं सोई संसार का हेतु हैं। तथाच। * "आत्मैवेदमग्रआसीदेक एव सोऽकामत जाया मेस्यादथ प्रजायेयाथ वित्तंमेस्यादथ कर्मकूर्वी"। इत्यादि, अर्थ

× यह मुण्डक उ० के प्रथम मुण्डके द्वितीय खण्डकी १० श्रुति॥
* बृ० उ० के अध्याय १ के ब्रा० में।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह जो प्रथम ब्रह्मा अकेला आपहीके आपको वैभववान् होने के अर्थ स्त्री पुत्र वित्तादिकों की कामना करके कर्मकरने की इच्छा करता भया । ताते सकाम कर्म संसारप्रवृत्ति का हेतु है अरु संसारही अदर्शनात्मक अनात्मअन्धकार रूप अज्ञान है । तिस अनात्म अज्ञानमें प्रवेशहोय जिन कर्मोंसे सो कहिये अविद्या । ताते अविद्या जे सकाम अग्निहोत्रादि कर्म तिनका निरन्तर अनुष्ठान करनेवाले अविवेकी सो कामना के वशभये अपने आपका अन्धतममें प्राप्त करनेवाले आत्महत्यारे अज्ञानी वे प्रवेश करतेहैं ॥ अरु जे पुरुष ८ । विद्याबिषे ९ । रतहैं १० । अर्थात् देवता ज्ञानकरके जे भेद उपासना करनेवाले जोकि वास्तवकरके देवताओंको अपनेसे अरु अपनेसे देवताओंको अन्य मानके उपासना करतेहैं । वे ११ । सकाम कर्म करनेवालों से भी १२ । अधिक १३ । ऐसे १४ । अन्धतममें १५ प्रवेशकरते हैं ॥ अर्थात् जो वास्तविक स्वरूपमें भेदमानके देवोपासना करनेवाले भेदी उपासक हैं तिनको वेद भगवान् ने पशु करके प्रतिपादन किया है । तथाच । † "अन्योऽसावन्योऽहमस्मीति न स वेद यथा पशुरेव ꣳ देवानाम् " । ताते विद्या शब्दकरके जो भेद उपासना तिसके कर्त्ता जे भेदी उपासक कनिष्ठ अधिकारी हैं वे अत्यन्त अदर्शनात्मक अज्ञानावृत शरीरोंको प्राप्तहोतेहैं ॥ अथवा जे पुरुष लोकदृष्टिमात्रविद्या जोब्रह्मविद्या तिसबिषे रत भासतेहैं अरु कथन भी उसहीका करतेहैं परन्तु आत्मअभ्यास से रहित अन्तःकरण में नानाप्रकारकी विषयवासनाको चोरोंवत् छिपाय अन्तरमें लेरहे हैं अरु आपको ज्ञानवान् अकर्त्ता मानके इस असत्यज्ञान के आश्रय विहित अग्निहोत्रादि कर्म जोकि अन्तःकरणकी शुद्धिद्वारा आत्मज्ञान के साधन हैं तिनका त्याग करते हैं अरु निषिद्ध जे पान मैथुनादिकर्म तिनबिषे अहर्निश प्रवृत्त रहते हैं । ऐसे जे अन्तरसे शिश्नोदरपरायण अत्यन्त अविवेकी बाह्य मुद्रासे ज्ञान बिषे रत

† बृ० उ० के अ० १ के १० अनु० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भासनेवाले पुरुष हैं वे स्वर्गादि सर्व उत्तम लोकों से भ्रष्ट होय अत्यन्त करके अदर्शनात्मक अन्धतम केवल अज्ञानावृत्त वृक्ष पाषाणादि किंवा श्वान शूकर कीट पतंग मशकादि शरीररूपी लोकविषे प्रवेश करते हैं। तथाच। * "अथ य इह कपूयचरणा अभ्यासो ह यत्ते कपूयां योनिमापद्येरन् श्वयोनिं वा शूकरयोनिं वा चाण्डालयोनिं वा ॥ अथैतयोः पथार्न कतरेण च न तानीमानि क्षुद्राएयसकृदावर्त्तीनि भूतानि भवन्ति जायस्व म्रियस्व इति ॥ तथाच † "कुशला ब्रह्मवार्त्तायां वृत्तिहीनाश्चयेनराः। न ते तत्पदमाप्स्यन्ति पुनरायान्तियान्तिच" ॥ ६ ॥

तात्पर्य ॥

पूर्व तृतीय मंत्र करके जे आत्महत्यारे कहे हैं वे इस नवम मंत्र करके विद्या अविद्याद्वारा दो प्रकारके कहके तिनके अर्थ अर्थात् कामुक कर्म करनेवाले अरु सर्वथा कर्मत्यागने वाले अत्यन्त अज्ञानी इनदोनों कनिष्ठ अरु अधम अधिकारियोंकी देह त्यागान्तर जो अन्धतम अरु अधिक अन्धतम लोककी प्राप्ति रूपी गति प्राप्तहोतीहै सो प्रतिपादन किया है। सो इसकहने से जे मोक्षार्थी मुमुक्षु हैं तिनको वेद भगवान् दयाकरके सूचना करते हैं जो अन्धतम अरु अधिक अन्धतम को प्राप्तकरने वाले ऐसे जे कामुक अरु निषिद्ध कर्म्म तिनको अशेष त्यागके निष्काम विहित कर्मोंद्वारा अन्तःकरणकी शुद्धतापूर्वक आत्मअभ्यासही कर्त्तव्य योग्य है ॥

सम्बन्ध ॥

इसमंत्रविषे कनिष्ठ अरु अधमाधिकारीको विद्या अरु अविद्या करके अन्धतम अरु अधिक अन्धतमकी प्राप्ति प्रतिपादन किया। अब कहेवाक्यकी दृढ़ताके अर्थ वृद्धोंकी साक्ष्यपूर्वक वेदभगवान् आगे दशममंत्र को प्रतिपादन करते हैं ॥ ॐ तत्सत् ॥

---

* छां० उ० के ५ प्र० पंचाऽग्नि विद्याकी ७–८ वीं श्रुति ॥
† पंचदशी ग्रंथविषे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्यदेवाहुर्विद्ययाऽन्यदेवाहुरविद्यया ॥
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥ १० ॥

पदान्वयः ॥

विद्यया अन्यत् एव आहुः अविद्यया अन्यत् एव आहुः ये नः तत् विचचक्षिरे धीराणां इति शुश्रुम ॥

पदार्थ ॥

विद्याकरके [फल] अन्य ही कहते हैं [अरु] अविद्याकरके [फल] अन्य ही कहते हैं जे हमको कर्म तथा ज्ञान कहतेहुए [तिन] धीरपुरुषोंका वचन ऐसे श्रवण कियाहै ॥

भावार्थमन्त्र दशवें का ॥

हे सौम्य! विद्या करके १। फल अन्य २। ही ३। कहते हैं ४। अर्थात् विद्या का फल और ही है एसा कहते हैं। अरु अविद्या करके ५। फल अन्य ६। ही ७। कहते हैं ८। जो बुद्धिमान् पुरुष ९। हमको १०। कर्मज्ञानका ११ उपदेश करते हुये १२ तिन धीरपुरुषोंका वचन १३। ऐसे १४। श्रवणकिया है १५॥ अर्थात् जिन ज्येष्ठ श्रेष्ठ विद्वानों करके विद्या अविद्या अरु तिनके अधिकारी अरु तिनके फलका विस्तार विवेचनहुआ है तिन धीरपुरुषों का वचन ऐसा श्रवण किया है कि विद्याका फल और है अरु अविद्या का फल औरहै १० ॥

तात्पर्य ॥

इस मंत्रबिषे विद्याका फल और अरु अविद्याका फल और कहा है। अर्थात् विद्या के जे उपासक हैं अरु अविद्या के जे उपासक हैं तिन दोनोंको उपासना के अनुसार फल भिन्न २ दोदोप्रकार के हैं तहां एक२ प्रकारसे विद्या अरु अविद्याका फल अरु तिनके अधिकारी जोकि तृतीयमंत्रबिषे आत्महत्यारे करके कनिष्ठ अरु अधम कहे हैं सो कहां। अर्थात् अविद्या करके सकाम कर्म अरु तिनका फल अन्धतममें प्रवेश। अरु विद्याशब्दकरके भेदउपासना अथवा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असत्यज्ञान अरु तिसका फल अत्यन्त अन्धतम में प्रवेश कहा। इसप्रकार विद्या अविद्याशब्द का अर्थ तिनके फलाऽनुसार एक२ प्रकार का नवममंत्रकरके जो कहा है सो बड़ेधीर बुद्धिमान् पुरुष जे विद्या अविद्या के विभाग विवेचनकर्त्ता पूर्वभयहैं तिनके वचनोंद्वारा श्रवण किया है॥ अरु तैसेही धीरपुरुषों के वचनोंद्वारा विद्या अविद्या के उपासकों को तिनका फल और प्रकारभी श्रवण कियाहै सो आगे एकादश ११ वें मन्त्रकरके कहेंगे। ताते यह जो दशममन्त्र है सो देहलीदीपकन्याय से नवम अरु एकादश इन दोनों मन्त्रों से सम्बन्ध रखताहै। क्यों कि इस मन्त्रमें विद्याका फल और अरु अविद्या का फल और कहाहै सो नवममन्त्रसे कहे प्रमाण कनिष्ठ अरु अधम अधिकारियों को तो एक २ निरूपण किया। अरु और एक २ प्रकारसे मध्यम अधिकारीके अर्थ विद्या अविद्या का स्वरूप अरु फल आगे एकादशवें मन्त्रकरके प्रतिपादन करते हैं॥

सम्बन्ध॥

इस मन्त्रमें विद्याकाफल अन्य अरु अविद्याकाफल अन्य कहा है तहां कनिष्ठ अरु अधम अधिकारी को विद्या अविद्या अरु तिन का फल अन्धतम अरु अधिक अन्धतमप्राप्ति नवममंत्रकरकेकहा। अब अन्य जे मध्यम अधिकारी द्वितीयमंत्रद्वारा कहे हैं तिनकी विद्या अविद्या का स्वरूप अरु तिनका फल अथवा समुच्चय का फल आगे एकादशवें मन्त्र करके प्रतिपादन करते हैं॥

विद्याञ्चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयꣳ सह॥ अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते॥ ११॥

पदान्वयः॥

तत् उभयं विद्यां च अविद्यां च यः सह वेद अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्यया अमृतं अश्नुते ११॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पदार्थ ॥

सो[1] दोनों[2] को विद्या[3] पुनः[4] [तिसकाफल] अविद्या[5] पुनः[6] [तिसकाफल] जोकोई[7] एकसाथ्य[8] जानता[9] है [सो] अविद्याद्वारा[10] मृत्यु[11] को तरके[12] विद्याद्वारा[13] अमृत[14] को प्राप्तहोता[15] है ॥

भावार्थ मन्त्रग्यारहवें का ॥

हे सौम्य ! जे द्वितीयमन्त्र से आत्मअध्यासमें असमर्थ मध्यम अधिकारी सूचित कियेहैं । सो पुरुष १। दोनोंको २ अर्थात् विद्या को ३। अरु ४। तिसके फलको अरु। अविद्याको ५। अरु ६। तिसके फलको । अर्थात् विद्या कहिये देवता के स्वरूप आयतन प्रतिष्ठा आदिकोंके ज्ञानपूर्वक अहमग्रे अभेद उपासना अरु अविद्या कहिये अग्निहोत्रादि विहित निष्काम कर्म अरु इन दोनोंके फलको। जो कोई ७। एक पुरुषकरके अनुष्ठान योग्य ८। जानता है ९। अर्थात् जो पुरुष कथितप्रकारकी विद्या अविद्या को समुच्चय सेवन करता है सो पुरुष। अविद्याद्वारा १० मृत्यु को ११ । तरके १२ । विद्याद्वारा १३ । अमरभाव को १४ प्राप्त होताहै १५॥ अर्थात् अग्निहोत्रादि विहित निष्काम कर्मरूपी अविद्या तिसके करने करके अकरण प्रत्यवायजन्य जो अशुभ योनिकी प्राप्तिरूप मृत्यु तिस से छूटके देवता के स्वरूपादिकोंके ज्ञानसहित जो अहं अग्रे उपासना तिस अभेद उपासनारूपी विद्याकरके देवताकेसाथ अभेदभावकी प्राप्तिरूपी जोअमरत्वभाव तिसको प्राप्तहोताहै११॥

तात्पर्य ॥

इस मन्त्रबिषे "अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते" अविद्याद्वारा मृत्युसों तरके विद्याद्वारा अमरभाव को प्राप्त होता है। ऐसा प्रतिपादन कियाहै तहां अविद्या जे अग्निहोत्रादि विहित कर्म तिनके निष्काम करने से अन्तःकरण की मलिनतारूपी मृत्यु सों छूटके विद्या जो ब्रह्मविद्या तिस करके अमरभाव जो मोक्ष तिसकी प्राप्ति होती है ऐसा भी अर्थ ठीक है । परन्तु इस स्थानबिषे सोई अर्थ यथार्थ है जो ऊपर व्याख्या किया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है क्योंकि अष्टादशवें मंत्रविषे अग्नि से मार्ग याचना कही है सो अग्नि की विद्याद्वारा उपासकके अर्थ हैं। अरु जे ब्रह्मविद्याद्वारा ब्रह्मआत्मा के अभेद उपासक ज्ञानी सो मार्ग से रहित है क्यों जो ज्ञानी के प्राण अन्त समय देह से उत्क्रमण न होके। * "तत्रैव समवलीयन्ते"। जहां हैं तहांही अपने अधिष्ठानविषे लीन होताहै। ताते यहां विद्या अविद्या शब्दका अर्थ जो प्रथम कहाहै सोई यथार्थ है तिसको पुनःकहते हैं। हे सौम्य! जे पुरुष अग्निकी विद्या के ज्ञानसे रहित केवल अग्निहोत्रादि कर्म करते हैं सो देहत्याग के अनन्तर पितृलोकमें अपने कर्मों के फल भोगके पुनः ब्राह्मणादि वर्णत्रयी में से कहीं भी अपने कर्मानुसार उत्पन्न होय पुनः कर्महीं करते हैं। † "कर्मणा पितृलोकः"। ताते अविद्या जे अग्निहोत्रादि कर्म तिसकरके अकरण प्रत्यवायजन्य जे अशुभ योनियोंकी प्राप्तिरूप मृत्यु तिससे छूटते हैं। अरु विद्या जे पंचाग्नि वैश्वानर तृणाग्निकेत आदि अग्निविद्या अथवा दहरादि विद्या तिन विद्याद्वारा देवताओंके स्वरूपादिकों के ज्ञानपूर्वक जे अहं अग्ने अभेद उपासना सो विद्या तिस विद्याकरके ब्रह्मलोक किंवा अग्नि आदि देव भावकी प्राप्ति। × "विद्यया देवलोकः" सोई अमरत्व की प्राप्तिहै। ताते अभिप्राय यह है कि जे कोई पुरुष अग्नि आदि विद्याके ज्ञानपूर्वक अहं अग्ने उपासना करतसन्ते अग्निहोत्रादि कर्म करते हैं सो पुरुष विहित कर्मद्वारा अकरण प्रत्यवायरूप मृत्यु सों छूटके अग्नि आदिकों की विद्याद्वारा समष्टि देवभावको प्राप्त होते हैं। ताते इसमंत्रद्वारा विद्या अविद्याकरके कर्मउपासना के समुच्चय सेवन करनेवाले मध्यम अधिकारीको जो फल प्राप्त होताहै सो कहा अरु इस समुच्चय के आवान्तर विद्या अविद्या का स्वरूप अरु तिनका फल पृथक् २ भी सूचित किया है॥ ॐ तत्सत्॥

---

*—† छान्दोग्य उपनिषद् विषे॥ × बृ० उपनिषद् विषे॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्बन्ध ॥

इस ११ ग्यारहवें मंत्रमें अरु ९ नवममंत्रमें विद्या अरु अविद्या का स्वरूप पृथक् २ प्रतिपादन किया है सो अधिकारी अरु फल वाक्यके भेद से किया है । तैसेही आगे बारहवें मंत्र से चौदहवें मंत्र पर्यन्त तीन मंत्र करके संभूति अरु असंभूतिकी उपासना भी अधिकारी अरु फलवादके भेदसे पृथक् २ प्रकार से प्रतिपादन करेंगे तहां प्रथम कनिष्ठ अरु अधम अधिकारी जे तृतीय मंत्रकरके सूचित किये हैं तिनको आदि कार्य कारण जे संभूति अरु असंभूति तिनकी उपासनासे जो गति प्राप्त होती है सो वेद भगवान् आगे बारहवें मंत्रकरके प्रतिपादन करते हैं ॥

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते । ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः १२ ॥

पदान्वयः ॥

येऽसंभूतिम् उपासते [ते] अंधं तमः प्रविशन्ति ये उ संभूत्याम् रताः ते ततः भूय इव तमः [प्रविशन्ति]

पदार्थ ॥

जे असंभूति को उपासते हैं [सो] अदर्शनात्मक अज्ञान प्रति प्रवेश करते हैं [अरु] जे कोई संभूति बिषे रत हैं सो तिससेभी अधिक ऐसे तममें [प्रवेश करते हैं] ॥

भावार्थ मंत्र बारहवेंका ॥

हे सौम्य ! जो पुरुष १। असंभूति की २। उपासना करते हैं ३। अर्थात् संभव कहिये उत्पत्ति है जिस कार्य की सो संभूति तिस कार्य रूपसे जे अन्यकारणरूप सो कहिये असंभूति जिसको प्रकृति अव्याकृत माया आदि नामसे कहते हैं सो काम कर्मादिकोंको उपजावनेवाली अन्धतम अविद्या तिसकी जो उपासना करते हैं सो पुरुषतारूपही । अदर्शनात्मक ४। अज्ञानअन्धकारबिषे ५। प्रवेश करते हैं ६। अर्थात् वारंवार कारणभाव को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही प्राप्त होते हैं क्योंकि अविद्या का कार्य कामना तिसको अपने बिषे लेके सकाम कर्मोंकाही अनुष्ठान करते हैं सो अदर्शनात्मक अज्ञानरूप संसार में प्रवेश करते हैं ताते अपने बिषे नाना प्रकारों के शरीर उपजावने का कारण आपही होते हैं ॥ अरु जे ७। कोई पुरुष ८। संभूति बिषे ९। रत हैं १०। सो ११। तिसेभी १२। अधिक १३। ऐसे १४। तम में १५ ॥ प्रवेश करते हैं अर्थात् जे कोई अत्यन्त अविवेकी सकाम पुरुष हैं सो संभव हैं जिसका ऐसा जे आदि कार्यरूप हिरण्यगर्भ सो कहिये संभूति तिसकी जे सकाम उपासना करते हैं सो अधिकतर अदर्शनात्मक अज्ञान अन्धकार बिषे प्रवेश करते हैं। अर्थात् कार्यकी कार्यभाव से जे उपासना तिसकरके जडात्मक कार्यभावकोही प्राप्त होते हैं। अर्थात् प्रकृतिका कार्य हिरण्यगर्भ तिसका कार्य अणिमादि ऐश्वर्य्य तिस ऐश्वर्य्य की कामना से किया जे कार्य हिरण्यगर्भ की उपासना तिसकरके कार्यरूप जे रत्नादि जड़ ऐश्वर्य्य तिस भावको प्राप्त होते हैं ॥ अथवा हे सौम्य! नास्तिकवादी आत्माको असंभूतिमानके कहते हैं कि असंभव मृतकका पुनः संभवनहीं अर्थात् शरीरके नाश होतेही आत्माका नाश होताहै पुनः आत्मा कोई रहता नहीं कि जिसका पुनः संभव होय ताते आत्मा असंभूति है ऐसा निश्चय करते हैं हे सौम्य! सो पुरुष अत्यन्त अन्ध तम जे श्वान शूकरादि शरीररूपी नरक तिसको प्राप्त होते हैं। अरु संभव [उत्पत्ति] है जिसकी ऐसा जो शरीर सो संभूति तिस संभूति नामक शरीरको आत्मामानके कहते हैं कि यह जो दृश्यमान शरीर है सोई आत्माहै। हे सौम्य! ऐसे जे देहात्मवादी अधमाधिकारी विरोचन की सम्प्रदायवाले चारवाकी सो देहत्यागके अनन्तर महाअन्धतम वृक्ष पाषाणादि जडभाव कोही वारंवार प्राप्त होते हैं १२ ॥

तात्पर्य ॥

जे कि तृतीय मंत्रमें कनिष्ठ अरु अधम अधिकारी सकाम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्म अरु अशुभकर्म करनेवाले कहे हैं तिनके अर्थ कर्मानुसार अज्ञानावृत असुरलोकरूपी फल की प्राप्तिकहा । सो इस कहने से वेदभगवान् ने सूचना किया है कि जो सकाम अरु निषिद्ध कर्म हैं सो मध्यमाधिकारी मुमुक्षु को कर्त्तव्य नहीं अरु उत्तमाधिकारी मुमुक्षु पुरुषों को तो इन कर्मों का स्मरणमात्र भी कर्त्तव्य नहीं क्योंकि ये अनर्थ के हेतु हैं । अरु यही अर्थ पुनः वेद भगवान् ने नवम मंत्र करके प्रतिपादन किया है कि जिससे मुमुक्षु पुरुष भूल करके भी विद्या अविद्यारूप कामुक निषिद्ध कर्म अरु भेद भावनारूप उपासना तिनके समीप भी न जाय । अरु सोई अर्थ पुनः इस बारहवें मंत्र करके मुमुक्षु के अर्थ सूचनाकिया कि संभूति अरु असंभूति अर्थात् कार्य अरु कारण जे हिरण्यगर्भ अरु आदि प्रकृति तिनकी उपासना भी सकाम अरु भेदभाव से कर्त्तव्य नहीं क्योंकि सकाम कर्म अरु भेदभाव उपासना तिनके जे फल हैं सो सर्व नाशवान् जड़ हैं ताते सोई अदर्शनात्मक अन्धतम हैं ताते आदि प्रकृति जे सर्व देवादिकों का आदिकारण कि जिसकी उपासना से त्रैलोक्य की सर्व विभूति प्राप्त होती है तिसकी उपासना भी सकामतासे मुमुक्षुको सर्वथा कर्त्तव्य नहीं । अरु जे कोई प्रकृतिआदि देवताओंकी सकाम उपासना करते हैं सो अन्त में अन्धतमको प्राप्त होते हैं ॥ ताते वेद भगवान् ने इस मंत्रसे मुमुक्षु को केवल काम्य कर्म अरु भेदभावना आदि अशुभ आचरणों से हटावने के अर्थ कामुककर्म अरु भेद उपासना की निंदा किया है । अरु तृतीय नवम द्वादश इन मंत्रोंसे त्रिवाक्यता करके आग्रह सहित वेदने कामुक कर्म अरु भेद उपासना तिसका फल अन्धतम असुरलोक प्राप्ति कहके तिनके कर्त्ताको आत्महत्यारे सूचितकिये कि जिससे मुमुक्षु आदि विवेकी पुरुष सकाम कर्म अरु भेदभावनाके सम्मुख न होय ॥ अरु जे अविवेकी पुरुष अपनी रक्षा में असमर्थ कामुक निषिद्ध कर्म अरु भेद भावनाके कर्त्ता आत्म-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हत्यारे हैं तिनको परिणाममें श्वान शूकर वृक्ष पाषाणादि नीच गतिकी प्राप्ति देखाय वेद भगवान् ने कनिष्ठ अरु अधम अधिकारी का प्रकरण समाप्त किया॥

सम्बन्ध॥

इस मंत्र विषे असंभूति अरु संभूति शब्द करके मूलप्रकृति आदि कारण अरु हिरण्यगर्भ आदि कार्य जो जगत्‌रूपी वृक्षका आदि बीज अरु आदि अंकुर है सो कहा अरु उनकी भी सकाम अरु भेदभाव उपासना से अन्धतमादि प्राप्ति देखाय मुमुक्षु को कामना अरु भेदभावना से हटाया। अरु कनिष्ठ अधमाधिकारी का प्रकरण समाप्त किया॥ अब आगे तेरहवें मंत्रमें संभूति की उपासना का फल अन्य अरु असंभूति की उपासना का फल अन्य अर्थात् दो प्रकारका है तिनको वृद्धोंकी साक्ष्यपूर्वक देहली दीपक न्यायवत् पूर्वोत्तर मंत्रसे सम्बन्ध करते तेरहवें मंत्र को प्रारंभ करते हैं॥ हरिः ॐ तत्सत्॥

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्॥
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे १३॥

पदान्वयः॥

सम्भवात् अन्यत् एव आहुः असम्भवात् अन्यत् आहुः ये नः तत् विचचक्षिरे तेषां धीराणां इति शुश्रुम १३॥

पदार्थ॥

संभूतिकरके [फल] अन्य ऐसा कहते [अरु] असंभूतिकरके [फल] अन्य कहते जे हमको संभूति असंभूतिफल कहतेहुए [तिन] धीरपुरुषोंका [वचन] ऐसे श्रवणकियाहै॥

भावार्थ मन्त्र तेरहवें का॥

हे सौम्य! संभूति की उपासना से १। फल और है २। निश्चय ३। कहते हैं ४। अरु असंभूति की उपासनासे ५। फल और है ६। ऐसा कहते हैं ७। अर्थात् संभूतिकी उपासना का फल औरहै अरु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असंभूतिकी उपासनाका फल और है निश्चय से ऐसा कहते हुए । जे ८ । हमको ९ । उस संभूति असंभूति अरु तिनके फलादिकोंका १० । उपदेश करतेभये ११ । तिन धीरपुरुषों का वचन १२ । इसप्रकार १३ श्रवणकिया है १४ ॥ अर्थात् जिन विद्वान् वृद्धोंकरके उन संभूति असंभूतिका स्वरूप उपासना अधिकारी फल आदिकों का विस्तार विवेचन कियागया है तिन धीरपुरुषों का वचन इतना इसप्रकार श्रवणकिया है १३ ॥

तात्पर्य ॥

इसमंत्रबिषे संभूतिकी उपासनाका फल और असंभूति की उपासनाका फल और है ऐसा प्रतिपादन कियाहै । अर्थात् संभूति अरु असंभूतिके उपासकोंको फल भिन्न २ दो २ प्रकारके हैं ऐसा निश्चय कहाहै तहां जे कनिष्ठ अरु अधम अधिकारी सकाम उपासकहैं तिनको संभूति असंभूतिकी उपासनाका फल अन्धतम अरु अधिक अन्धतमकी प्राप्तिहै ऐसा एकप्रकारसे बारहवेंमंत्रकरके प्रतिपादनकियाहै ॥ अरु दूसरीप्रकार से मध्यम अधिकारी जे आत्मअभ्यासमें असमर्थहुए संसारके क्लेशोंकी निवृत्तिकेअर्थ निष्कामतासे संभूति असंभूतिकी उपासनाकरनेवाले हैं तिनको उपासनाके अनुसार मृत्युसेछूटना अरु अमरत्वप्राप्ति रूपी फल सो आगे चौदहवें मंत्रसे प्रतिपादनकरेंगे । ताते संभूति असंभूतिकी उपासनाका फल सकामता निष्कामताके आश्रय भिन्न २ होता है इसप्रकारका निश्चयपूर्वक बड़े धीर विद्वान वृद्धपुरुषोंका वचन श्रवणकियाहै । हे सौम्य ! इसप्रकार यह विद्या एकके समीपसे दूसरेको प्राप्त होती है । यह जो तेरहवां १३ मंत्र है सो देहलीदीपकन्यायवत् बारहवें अरु चौदहवें इन दोनोंमंत्रों से सम्बन्धकरता है तहां एकप्रकारसे संभूति असंभूतिकी उपासनाका फल कनिष्ठ अधमाधिकारीके अर्थ १२ वें मंत्र में कहा है अरु दूसरी प्रकारसे मध्यम अधिकारीके अर्थ १४ वें मंत्रसे प्रतिपादन करते हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्बन्धमन्त्र तेरहवेंका ॥

इस मन्त्र करके संभूति असंभूति की उपासना के फल भिन्न २ दो २ प्रकार से सूचना किये हैं तहां एक प्रकार से १२ वें मंत्र से कहके द्वितीय प्रकार से कहने के अर्थ १४ वें मंत्र का प्रारम्भ करते हैं ॥

सम्भूतिञ्च विनाशञ्च यस्तद्वेदोभयꣳसह । विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्याऽमृतमश्नुते ॥ १४ ॥

पदान्वयः ॥

यः तत् उभयं सम्भूतिं च विनाशं च सह वेद [सः] विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्या अमृतं अश्नुते ॥

पदार्थ ॥

जो पुरुष सो दोनों असम्भूति पुनः सम्भूतिको एक जानते हैं [सो] सम्भूतिकरके मृत्युको तरके असम्भूतिकरके अमृतको प्राप्त होते हैं ॥

भावार्थ मन्त्र चौदहवेंका ॥

हे सौम्य ! जो पुरुष द्वितीय मंत्रकरके कहे आत्म अध्यास में असमर्थ मध्यमाधिकारी १। सो पुरुष २। दोनों को ३। अर्थात् संभूतिशब्द करके * असंभूतिको ४। अरु ५ विनाश शब्द करके संभूति को ६-७ । अर्थात् असंभूति सो आदिकारण प्रकृति अरु विनाश सो संभूति आदिकार्य हिरण्यगर्भ इन दोनों को। एक करके ८। जानता है ९। अर्थात् एकही पुरुष असंभूति अरु संभूतिको अरु तिनके फलको एक जानके निष्कामतासे दोनों को समुच्चय सेवन करता है सो पुरुष । विनाशधर्मा जो कार्य संभूति हिरण्यगर्भ तिसकी उपासना से १०। अनैश्वर्यरूपी मृत्यु को ११। तरके १२। पुनः असंभूति जो आदिकारण प्रकृति तिस

* श्रीशंकराचार्य ने सम्भूतिका अर्थ असम्भूति अरु विनाशका अर्थ सम्भूति किया है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की उपासना से १३। अमृत को १४। अर्थात् प्रकृतिलय लक्षण रूपको प्राप्त होता है १५ । १४ ॥

तात्पर्य ॥

इस मंत्र बिषे ।"विनाशेन मृत्युंतीर्त्वासंभूत्याऽमृतमश्नुते"। ऐसा प्रतिपादन किया है तहां विनाश धर्म है जिसका ऐसा जो संभूतिरूप कार्य्यब्रह्म हिरण्यगर्भ सर्वसूक्ष्म शरीरों की समष्टिता परिणाममें प्रकृतिबिषे लय होनहार ताते विनाशी तिस हिरण्यगर्भकी उपासनासे अनैश्वर्यरूपी मृत्युसों तरके। अर्थात् हिरण्यगर्भकी उपासना से अणिमादि ऐश्वर्य्यरूपी फलकी प्राप्तिहै सो उपासनाका असाधारण फलहै सो हिरण्यगर्भके निष्काम उपासकपावतेहैं। तिसकी प्राप्तिसे दारिद्र्यआदि अनैश्वर्यरूपीमृत्युसे तरजाते हैं॥ अरु असंभूति कहिये नहींहै संभव (उत्पत्ति) जिसका ऐसी जो संभव से रहित आदिकारण प्रकृति जो कि चैतन्य परमात्मा की सत्ता पाय सूक्ष्म स्थूलादि सर्व ब्रह्माण्डों को उत्पन्न करनेवाली तिसकी जे निष्काम उपासना करतेहैं सो परिणाममें देहत्यागान्तर प्रकृतिलयलक्षणरूप अमृतको प्राप्तहोतेहैं। अर्थात् वे पुरुष पुनः कार्यभावको प्राप्त नहीं होते सोई उनको अमरत्व प्राप्ति है। एतदर्थ इस मंत्रबिषे विनाशशब्द करके संभूति आदि कार्य हिरण्यगर्भ को कहा अरु असंभूति शब्द करके अव्याकृत आदिकारणको कहा । इन दोनों की समुच्चय उपासना करनेवाले मध्यम अधिकारी तिनको जो फल प्राप्त होताहै सो कहा। अरु इस समुच्चय के अवान्तर संभूति असंभूति का स्वरूप अरु तिनकी उपासना का फल पृथक् २ भी सूचित किया। अरु १२ वें मंत्रसे १४ वें मंत्र पर्यन्त संभूति असंभूति का स्वरूप अरु तिनकी उपासना का फल पृथक् २ सूचनकिया है तहां १२ वें मंत्रमें सकाम भिन्न भावसे उपासनाका फल कनिष्ठ अधमाधिकारी के अर्थ अन्धतम अरु अधिकअन्धतम प्राप्ति कहा है। अरु इस १४ वें मंत्र करके संभूति असंभूति की निष्काम अ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भेद उपासना का फल मृत्युसे तरना अरु अमरभाव की प्राप्ति प्रतिपादन करके मध्यम अधिकारी की उपासना का प्रसंग वेद भगवान् ने यहां समाप्त किया। इस उत्तरार्ध में नवम से चतुर्दशवें मंत्र पर्यन्त मध्यम अरु कनिष्ठ अधमाधिकारी की उपासनाका प्रसंग प्रतिपादन कियाहै तहां कनिष्ठ अधमाधिकारीको कामुक अरु निषिद्ध कर्मों का फल विद्या अविद्याद्वारा अन्धतम अरु अधिक अन्धतम की प्राप्ति नवम मंत्रकरके कहा अरु उनहीं के अर्थ संभूति असंभूति की उपासना का फलभी अन्धतम अरु अधिक अन्धतमही बारहवें मंत्र करके प्रतिपादन किया। अरु मध्यम अधिकारी को निष्काम विहित सज्ञात कर्मका फल विद्या अविद्याद्वारा मृत्युसे तरना अरु अमरत्व यह एकादशवें मंत्रकरके प्रतिपादन किया। अरु उनहीं के अर्थ निष्काम सज्ञात संभूति असंभूतिकी अभेद उपासनाका फल मृत्युसे तरना अरु अमरत्व प्राप्ति चतुर्दशवें मंत्र करके प्रतिपादन किया। अरु दशम त्रयोदश इनदोनों मंत्रोंको मध्यमें वृद्धों के वाक्योंके सम्बन्धार्थ प्रतिपादन किया। ताते नवम से चतुर्दशवें मंत्र पर्यन्त कनिष्ठ अधमाधिकारी अरु मध्यमाधिकारी का प्रसंग वेद भगवान् ने प्रतिपादन किया॥ अब एकादशवें मंत्रमें कहाहै कि "विद्ययाऽमृतमश्नुते" विद्या करके अमरभाव को प्राप्त होतेहैं सो कौन २ विद्याकरके कौन २ उपासनाद्वारा कौन २ अमरभाव की प्राप्ति मध्यमाधिकारी को प्राप्त होती है सो संक्षेपमात्र चार मंत्रसे प्रतिपादन करतसंते वेदभगवान् इस उपनिषद्को पूर्णकरतेहैं॥ ॐ तत्सत्॥

सम्बन्ध॥

इसमंत्रमें मध्यम अधिकारीको संभूति असंभूतिकी निष्काम अभेद सज्ञात उपासनाका फल मृत्युसे तरना अरु अमरभावकी प्राप्ति निरूपण करके मध्यम अधिकारी उपासककी संभूति असंभूतिकी उपासनाद्वारा परिणामगतिका प्रकरण समाप्त किया॥ अब आगे मध्यम अधिकारीकोही विद्याके आश्रय उपासनाद्वारा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अमरभावकी प्राप्ति जैसे होती है सो निरूपणकरैंगे । तहा प्रथम सूर्यभगवान्द्वारा जे सत्यपरमात्माके उपासक हैं तिनकी अपने उपास्य देवसे मार्गयाचना पंचदशवें मंत्रकरके वेदभगवान् प्रतिपादनकरतेहैं ॥ ॐ तत्सत् ॥

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् । तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये १५ ॥

पदान्वयः ॥

हे पूषन् सत्यस्य मुखं हिरण्मयेन पात्रेण अपिहितं तत् त्वं सत्यधर्माय दृष्टये अपावृणु १५ ॥

पदार्थ ॥

हे पूषा सूर्य ! सत्य परमात्माका द्वार तेजोमय पात्रकरके आच्छादित है तिसको तुम सत्यधर्मा मुझ को दर्शनके अर्थ खोल दो १५ ॥

भावार्थमन्त्रपन्द्रहवेंका ॥

हे सौम्य! जेकोई एकपुरुष सूर्यभगवान्द्वारा पूत्यगात्माके उपासकहैं सो अपनेको अमृतत्वप्राप्तिके अर्थ अपने उपास्य सूर्यभगवान्से परमात्माके दर्शनार्थ अभिलाषाकरतसंते प्रार्थनाकरे हैं कि ॥ हे जगत्के पोषणकर्त्ता सूर्य! १। तुम्हारे मंडलबिषे जो सत्यपरमात्माहै तिसका २। दर्शनद्वार ३। सो तुम्हारे तेजोमय ४। पात्रकरके ५। अर्थात् बिम्बकरके आच्छादित है ६। तिसको ७। तुम ८। सत्यधर्माको ९। अर्थात् सत्यस्वरूप जे तुम तिसकी यथोचित उपासना से सत्यधर्मा जो मैं तिस मुझको। देखने के अर्थ १०। खोलदेवो ११ ॥ अथवा हे सर्व के पोषणकर्त्ता सूर्य! सत्यस्वरूप जो सर्वान्तर पूत्यगात्मा तिसके दर्शनका जो मुखद्वारा शुद्ध अन्तःकरण सो हिरण्मय पात्रकरके। अर्थात् सुवर्णादि द्रव्य विषयक लोभात्मक वृत्तिकरके। आच्छादितहै तिसको तुम मुझसत्यधर्माको दर्शनके अर्थ खोलदेवो। अर्थात् तुमहींको सत्यदेव जान के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तुम्हारीही स्तोत्र नमस्कारादि द्वारा यथोचित आराधना करनेवाला याते सत्यधर्मा ऐसा जो मैं तिसको अपने हृदयस्थ स्वयंप्रकाश अन्तर्यामी प्रत्यगात्मा तिसको साक्षात् आत्मत्वसे अनुभव करने के अर्थ उस लोभात्मकादि अशुभ वृत्तियोंको अनुग्रहकरके दूरकरो यही आपसे मेरी प्रार्थना है १५॥

तात्पर्य॥

इस मंत्र से सूर्य भगवान् द्वारा प्रत्यगात्माकी उपासनावालेको वेदवाक्यसे सूर्यकी उपासना करतसन्ते अन्तरसे उपास्यदेव आगे अमरत्व आत्मा की प्राप्त्यर्थ याचना कर्तव्य प्रतिपादन किया है। तैसेही अन्य देवताओं के उपासकों को भी जिसकी वेदोक्त उपासना होय तिस देवतासे अमृतत्व आत्माकीही प्राप्ति याचना कर्त्तव्य है कि जिसकरके परिणाममें परमशान्त अमृतत्व की प्राप्तिहोय। यह सूचना किया॥ और सर्व मनुष्यमात्रने भी कर्मउपासना करके स्वस्वरूप के सम्यग् बोधार्थही प्रार्थना कर्त्तव्यहै नतु विषयार्थ जो कि अन्धतम प्राप्तिके हेतुहैं॥

सम्बन्ध॥

इस मंत्रबिषे सूर्यभगवान् की प्रत्यक् उपासना देखाय उपासकको अपनेआप आत्मा के सम्यग्बोधार्थही उपास्यदेव से याचना कर्त्तव्य सूचितकिया। अब अहमग्रे उपासनाकी रीति से सूर्यकी प्रार्थनाके अर्थ १६ वें मंत्रका प्रारम्भ करते हैं॥

पूषन्नेकर्षेयमसूर्य प्राजापत्यव्यूह रश्मीन्त्समूह।
तेजोयत्ते रूपङ्कल्याणतमन्तत्ते पश्यामि योऽसावसौ
पुरुषः सोऽहमस्मि ॥ १६॥

पदान्वयः॥

हेपूषन्!हे एकर्षे!हेयम!हेसूर्य!हे प्राजापत्य!रश्मीन्व्यूह तेजः समूह [एकीकुरु] यत् ते कल्याणतमं रूपं तत् ते पश्यामि यः असौपुरुषः सः असौ अहम् अस्मि॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पदार्थ ॥

हे पोषणकर्त्ता[1]! हे एकचलनेवाले[2]! हे सर्वकेसंयमनकर्त्ता[3]! हे सर्व रसकेस्वीकारकर्त्ता[4]! हेप्रजापतिकेपुत्र[5]! [सो] अपनी किरणोंको[6] दूरकरो[7] तापके समूहको[8] [एकत्रकरो][9] जो[10] तुम्हारा[11] कल्याणतम रूपहै[12-13] तिसको[14] तुम्हारेप्रसादसे[15] मैं देखताहौं[16] जो यह[17] [तुम्हारेविषेपूर्ण] पुरुषहै[18] सो[19] ई[20] यह मैं[21] हौं[22] ॥

भावार्थमंत्रसोलहवेंका ॥

हे सौम्य ! अब सूर्यभगवान्का जो अहमग्रे उपासना करनेवाला उपासक है सो सूर्यभगवान् से प्रार्थना करता है कि हे सर्व के पोषणकर्त्ता पूषा!१। हे एकचलनेवाले! २। अर्थात् आकाशमण्डल में चलनेवाले जे ग्रहादिक तिनका अधिपति एक ताते "एकर्षे"। हे संयमनकर्त्ता!३। अर्थात् सर्व प्राणधारियों को अपने २ नियममें रखनेवाला न्यायकर्त्ता यम। हे सूर्य! ४। अर्थात् सर्वरसजातिको अपनेविषे अपनी किरणोंद्वारा स्वीकारकर्त्ता। हे प्रजापतिके पुत्र!५। अर्थात् संवत्सरात्मक कालमूर्त्ति। अपनी किरणोंको ६। दूरकरो ७। अरु अपने तापकतेजके ८। समूहको ९। एकत्रकरो कि जिसकरके। जोकि १०। तुम्हारा ११। कल्याणतमरूप है १२–१३। अर्थात् जो तुम्हारा अतिशोभन परमशान्त आनन्दघन निराकार कल्याणतमरूपहै। तिसको१४। तुम्हारे प्रसाद करके १५। मैं देखताहौं १६। जो यह १७। तुम्हारे विषे चैतन्यपुरुष है १८। सोई १९। यह २०। अर्थात् जो यह प्राणबुद्ध्यादि संघात विषे पूर्ण चैतन्य पुरुष है सो। हम २१। हैं २२ ॥ १६ ॥

तात्पर्य ॥

इस मन्त्रविषे जे सूर्यभगवान्के विशेषण कहेहैं सोसर्व सूर्यस्थ चैतन्यपुरुषके कहेहैं। अरु जो सूर्यस्थ चैतन्यपुरुषहै सोई प्राणबुद्ध्यादि सर्वसंघातस्थ चैतन्यहै ताते जे विशेषण सूर्यस्थचैतन्यकेहैं सोई प्राणस्थ चैतन्यकेहैं तिसको श्रवणकरो। हे सौम्य! जैसेचैतन्य

GC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुरुष सूर्य साथ मिलके वृष्टि आदि द्वारा जगत्का पोषण करता है तैसेही प्राण साथमिलके अन्नादिकों के रसद्वारा शरीररूपी जगत्का पोषणकरता है। अरु जैसे चैतन्य पुरुष सूर्य्य साथ मिल के सर्व ग्रहादिकों में श्रेष्ठता ते एक आकाश में चलनेवाला है तैसे ही प्राणद्वारा मनआदि सर्व में श्रेष्ठताते एक हृदयाकाश में विचरने वाला है। अरु जैसे चैतन्य पुरुष सूर्यद्वारा सर्व ब्रह्माण्डको अपने २ नियममें राखतसंते सर्वका द्रष्टा साक्षी है। तैसेही प्राणद्वारा शरीररूपी ब्रह्माण्ड बिषे सर्व इन्द्रियादिकों को अपने २ नियम में राखत संते सर्वका द्रष्टा साक्षी है। अरु जैसे चैतन्य पुरुष सूर्यद्वारा सम्पूर्णरसजाति को अपने बिषे स्वीकार करता है। तैसेही प्राणद्वारा सर्वअन्नादि रसोंका भोक्ताहै "अत्ता चराचरग्रहणात्" "प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नंचतुर्विधम्" अरु जैसे चैतन्यपुरुष सूर्यद्वारा प्रजापतिका पुत्र कहावता है। तैसेही प्राणद्वारा मिलके लिंग अथवा वीर्य्यद्वारा पिताकापुत्र कहावता है। "आत्मावै जायतेपुत्रः" ताते जो एक चैतन्य पुरुष सूर्य अरु प्राणरूपी उपाधि साथमिलके अधिदैव अरु अध्यात्मभाव को प्राप्तभया है सो चैतन्य वास्तव स्वरूप करके उभय स्थानों में एकही है इसही हेतुसे अहमग्रे उपासनाकरनेवाला पुरुष अपने उपास्य सूर्य भगवान् से प्रार्थना करताहै कि हे सूर्य! तुम अपनी किरणोंको दूरकरो अरु अपनेतापक तेजकोलयकरो कि जिसकरके तुम्हारे वास्तविक परमकल्याणरूप चैतन्यपुरुषको अपना आप आत्माकरके अनुभव करताहौं क्यों कि सोई चैतन्यपुरुष मैंहौं॥ अथवा हे सूर्यस्थपुरुष परमसूर्य! इस शरीर में जो प्राणरूपी सूर्य है तिसकी प्राणापानादि भेदसे नानाप्रकार की प्रसरित वृत्तिरूपीकिरणें तिसको तुम अपने अनुग्रह करके हृदयाकाश बिषे एकत्रकरो कि जिसकी एकतासे प्राणहीबिषे प्रकाशित जे परम चैतन्य प्राणका भी प्राण तिसको साक्षात् अपना आप अनुभव करें क्योंकि वास्तवकरके श्रुतियों के तत्त्वमस्यादि प्रमाण से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरु अपने आप यथार्थ अनुभवसे जो सम्पूर्ण चराचर जगत् में परिपूर्ण ताते पुरुष अथवा सर्व शरीररूपी पुरबिषे किंवा पुरीतती नाड़ीबिषे शयन करनेवाला ताते पुरुष । अर्थात् सर्व शरीरों बिषे सुषुप्तवत् निर्विकल्प अक्रिय परमशान्त है ताते सर्व शरीरों रूपी पुरबिषे सोवनेवाला याते पुरुष । सोई सर्वव्यापी अक्रिय परमशान्त विज्ञानघन चैतन्य मैं हौं । हे सौम्य ! इसप्रकार सूर्यभगवान् द्वारा परमात्माका अहमग्रे उपासना करनेवाला उपासक है सो उपास्य देव साथ अपने आप आत्मा की अभेदता को अनुभव करे है सो मध्यम अधिकारी कहे प्रकार उपासना करतसंते देहत्यागान्तर सूर्य्य मण्डलस्थ चैतन्य पुरुष साथ अभेद होय अमृतत्वको प्राप्तहोता है ॥

सम्बन्ध ॥

इस १६ वें मंत्रबिषे अहमग्रे उपासनावाले उपासक को उपास्यदेवसाथ अभेदतारूप अमृतत्वप्राप्ति देखाया ॥ अब अहमग्रे उपासनावाला उपासक अपने मरणकालमें मोक्षार्थ अपने उपास्यदेवसे प्रार्थना अरु मनको शिक्षाकरता है सो सत्रहवें मन्त्रकरके प्रतिपादन करते हैं ॥

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तꣳ शरीरम् । ॐ क्रतोस्मरकृतꣳस्मर क्रतोस्मर कृतꣳस्मर ॥ १७ ॥

पदान्वयः ॥

अथ वायुः अनिलम् अमृतम् इदं शरीरं भस्मान्तम् [भूयात्] हे क्रतो ॐ स्मर कृतं स्मर । क्रतो स्मर कृतं स्मर ॥ १७ ॥

पदार्थ ॥

अब इसकालमें प्राणवायु सूत्रात्माको [अरु] लिंगशरीर [अपने कारणको] यह शरीर अन्तभस्मभावको [प्राप्तहो] हे मन ! ओंकारको स्मरणकरो [अरु] कर्मको स्मरणकरो । द्विवचन पूणवउपासनाके आदरार्थ है ॥ १७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भावार्थमन्त्रसत्रहवेंका ॥

हे सौम्य! पूर्वकहे प्रकार सूर्यभगवान्की अहमग्रे उपासना वाले उपासक हैं सो यावत् आयुष्य तावत् समाहितचित्त होके उपासना करते हैं सो जब उनका मरणकाल निकट आवता है तब अपने उपास्यदेव आगे प्रार्थना करताहै कि हे सूर्यभगवान्! इसकाल में १। प्राणवायु २। अर्थात् इस उपस्थितकाल में मरणको प्राप्तहोता जो मैं तिस मेरे शरीरस्थ जो प्राणवायुहै सो। अनिल ३। अर्थात् सर्वात्मावायु {सूत्रात्मा} तिसको प्राप्तहोय। अरु यह ४। लिंगशरीर ५। अर्थात् जो शरीर स्वप्न अरु परलोकके भोगोंका भोक्ता है सो अपने कारणभावको प्राप्तहोय। अरु यह शरीर ६। अर्थात् यह दृश्यमान स्थूल अस्थिमांसमय शरीरनामसे जो सावयवपिण्ड है सो। अन्त में भस्महोय ७। अर्थात् प्राणउत्क्रामणके पश्चात् आहुतिवत् अग्निमें हवनकिया भस्महोय। हे सौम्य! यहां पर्यन्त अर्थात् इसमन्त्रके पूर्वार्धपर्यंत सूर्यभगवान्की अहमग्रे उपासनाके बलसे उपासक अपने उपास्यदेवकी प्रार्थनाकरके अमृतत्वको प्राप्तहोता है सो निरूपण किया॥ अब आगे इसमन्त्रके उत्तरार्ध करके प्रणवके उपासकको अन्तकालमें प्रणवका स्मरणकरना सूचित करतेहैं। हे सौम्य! जो पुरुष समाहितचित्त होके शरीरावसानपर्यन्त त्रिमात्रिक प्रणवकी उपासना करता है सो पुरुष अपने देहावसानसमये अपने मनसे कहता है कि हे "क्रतो" संकल्पविकल्पके कर्त्ता मन १। ॐकारको २। स्मरणकरो ३। अर्थात् जिसकाल के साधनेकेअर्थ यावत् आयुष्य प्रणवकी उपासना कियाहै सो काल अब उपस्थित है ताते ॐकारको स्मरणकरो. कि जिसके प्रभाव से ब्रह्मलोकमें ब्रह्माद्वारा त्रिमात्रिक प्रणवका उपदेशपाय अमृतत्वको प्राप्तहोवोगे ताते हे मन!अब इसकाल में अपने कल्याणार्थ ॐकारका स्मरणकरो। अरु हे मन! अपने किये कर्मकोस्मरणकरो ४-५। अर्थात् प्रणवोपासनाकरतसंते तू ने अग्निहोत्रादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विहित निष्कामकर्म जो कि निषिद्धकर्मको नाश करके अन्तः-करणकी शुद्धिद्वारा प्रणवोपासना में सहायकभये हैं तिन कर्मों कोभी स्मरणकरो ॥ इसमंत्रमें स्मरणार्थ द्विवाक्यता है सो प्रणवोपासनाके आदरार्थ है ॥ १७ ॥

तात्पर्य ॥

इसमंत्रके पूर्वार्धमें कहा है कि सूर्यकी अहमग्रे उपासनाकरने-वालेहैं सो शरीरांतकालमें अपने उपास्यदेवकी प्रार्थना करतेहुये अमृतत्वको प्राप्तहोते हैं तब उसकालमें उसके प्राण सूत्रात्मा में लयहोतेहैं। अरु अमर जे लिंगशरीरहैं अर्थात् विना यथार्थ आत्म-ज्ञानके अन्य किसीप्रकारभी लिंगका नाश नहीं ताते लिंगको अ-मरकहतेहैं।तथाच" द्वेवावब्रह्मणोरूपे मूर्त्तञ्चैवामूर्त्तञ्च मर्त्यञ्चा-मृतञ्च" सो लिंग सूक्ष्म इन्द्रियादिकोंका संघातहै कि जिसकरके स्वप्नमें दर्शन श्रवणादिक्रियाहोतीहै तिसलिंगबिषे जे सूक्ष्म देवां-शहैं सो अपने २ समष्टि देवतासाथ एक होते हैं सो देवांश अपने समष्टिदेवताबिषे गयेफेर नहीं आवते क्योंकि वह उपासक अपने उपास्यदेवगत चैतन्यपुरुषसाथ अभेदहोता है ताते पुनः उसको स्थूलशरीररूपी क्षेत्रनहींहोता इसहीसे उसकी इन्द्रियां फेरआव-तीनहीं। अरु यह जो स्थूलशरीर है सो परिणाम में अग्निबिषे हवनकिया अपने कारणभावको प्राप्तहोताहै। हे सौम्य! इसप्रकार जब विद्वान् उपासककी स्थूल सूक्ष्म सर्वउपाधि अपने २ कारण भावको प्राप्तहोती है तब तिसबिषे उपपन्नथा जो चैतन्यपरमा-त्माका आभास जीव कि जिसको उपाधिके सम्बन्धसे अल्पज्ञ-तादिसंज्ञा प्राप्तभईथी सो अपने उपास्यदेवगत सत्य चैतन्यपुरु-षरूपी बिम्ब कि जिसको अपनेआप आत्मत्व से अनुभव कियाहै तिससाथ भेदसेरहित अभेद ऐक्यताको पावता है सोई विद्वान् उपासकको परमअमृतत्वकी प्राप्ति है कि जिस प्राप्तिसे पुनः अ-विद्याजन्य दुःखमय नाशरूप उपाधिको प्राप्त होता नहीं । ताते मध्यमअधिकारी इसप्रकार अहमग्रे उपासनाकरके देहत्यागान्तर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अमृतभावको प्राप्तहोय आवागमनसे रहितहोता है ॥ अथवा जे सूत्रात्मा समष्टिप्राणके व्यष्टिप्राणद्वारा अहंअग्रे उपासनाकरने वाले उपासक हैं सो अपने देहत्यागान्तर अपने उपास्य देव सूत्र आत्माके साथ अभेदहोते हैं सोई उन मध्यमाधिकारी को वर्कादि प्राणविद्याद्वारा अमृतत्वकी प्राप्तिहै ॥ अरु इस मंत्र के उत्तरार्ध में प्रणवकी उपासनाकरनेवाले के अर्थ वा सर्वको अपने २ शरीर त्यागने के समय ॐकारका स्मरणकरना द्विवाक्यताकरके वेदने कहा है तिसकरके प्रणवोपासनाकी श्रेष्ठता देखाई है ताते सर्व पुरुषों को अपने २ देहावसानसमये ॐकारका स्मरण अवश्यही कर्तव्ययोग्यहै ॥

सम्बन्ध ॥

इस मंत्र के पूर्वार्द्ध से सूर्य भगवान् अथवा सूत्रात्मा की अहं अग्रे उपासनाद्वारा अमृतत्वप्राप्तिप्रतिपादनकिया अरु उत्तरार्ध करके प्रणवकेस्मरणद्वारा अमृतत्वप्राप्ति प्रतिपादनकिया। अब आगे अग्निके उपासकको अमृतत्वप्राप्ति १८ वें मंत्रसे प्रतिपादन करतसंते ग्रंथकी पूर्णताकरते हैं ॥ इति सम्बन्धः ॥ ॐ तत्सत् ॥

अग्ने[1] नय[2] सुपथा[3] राये[4] अस्मान्[5] विश्वानि[6] देव[7] वयुनानि[8] विद्वान्[9] युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो[10][11][12] भूयिष्ठां[13] ते[14] नमउक्तिं[15] विधेम[16] ॥ १८ ॥

इति ईशावास्योपनिषद्। ॐ तत्सत् ॥

पदान्वयः ॥

हे देव[1]! हे अग्ने[2]! विश्वानि[3] वयुनानि[4] विद्वान्[5] अस्मान्[6] राये[7] सुपथा[8] नय[9] अस्मत्[10] जुहुराणं[11] एनः[12] युयोधि[13] ते[14] भूयिष्ठां[15] नमउक्तिं[16] विधेम[17] ॥ १८ ॥ इति पदान्वयः ॥ ॐम् ॥

पदार्थ ॥

हे प्रकाशात्मकदेव[1]! हे अग्नि[2]! सर्व[3] कर्म[4]को जानतेहो हम[5] कर्मकरु-त्तीओंको कर्मफलकेअर्थ शोभनमार्ग से प्राप्त[6] करो [अरु] हमारे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुटिलवचनात्मक पापको विनाशकरो तुम्हारेअर्थ बहुतसे नमस्कारवचन विधानकरतेहैं ॥ इति पदार्थ ॥ हरिः ॐ तत्सद्ब्रह्म ॥

भावार्थमंत्रअठारहवेंका ॥

हे सौम्य ! अब अग्निदेवतासे अमृतत्वप्राप्तिकेअर्थ उसका उपासक प्रार्थनाकरताहै । हे प्रकाशवान् देव ! १ । हे अग्नि ! २ सम्पूर्ण ३। हमारेकर्मोंको ४। जानतेहौ ५। ताते हम कर्मविशिष्टों को ६। अर्थात् समाहितचित्तसे निरन्तर निष्काम विहितकर्मकरनेवाले हमकर्मीलोग तिनको । कर्मफलभोगनेके अर्थ ७। शोभनमार्ग करके ८। प्राप्तकरो ९। अर्थात् दक्षिणमार्गवर्जित उत्तरायणमार्गसे प्राप्तकरो । अरु हमारे १०। कुटिलवचनात्मक ११। पापोंको १२। अर्थात् विहितकर्मकरतसंते अज्ञानवश असत्य किंवा व्यंगवचन जो कथन भयाहोय तो तज्जन्यपापों को । विनाशकरो १३। कि जिसकरके हम अत्यन्त पवित्रहोयँ अपनेइष्ट अमृतत्वको प्राप्तहोवें एतदर्थ इस शरीरावसानकालमें अशक्यताकरके हवनादि परिचर्यामें असमर्थ जे हम सो तुम्हारे अर्थ १४। बहुतसे १५। नमस्कारवचन १६। विधानकरते परिचर्याकरते हैं ॥ १७ । १८ ॥ इति ईशावास्यउपनिषद्का भाषाटीकाभावार्थ सम्पूर्ण ॥

तात्पर्य ॥

"कुर्व्वन्नेवेहकर्माणि" इत्यादि । इस द्वितीयमंत्रकरके आत्मअध्यासमें असमर्थ मध्यमअधिकारीको निष्काम विहित अग्निहोत्रादि कर्म कर्त्तव्यकहा क्यों जो उस मध्यमाधिकारीको अमृतत्वप्राप्तिकासाधन कर्मउपासनाही है तहां । विहितकर्मकरतसंते अकरणप्रत्यवायजन्य पापरूपी मृत्युसोंतरके सूर्यादिदेवता किंवा त्रिमात्रिकप्रणव की वेदवाक्यानुसार उपासनाकरताहै सो उपासकतिसउपासनारूपीविद्याकरके अमृतत्वको जिसप्रकारप्राप्तहोताहै सो १५ वें मंत्र से इस १८ वें मंत्र पर्यन्त निरूपण किया तहां इस १८ वें मंत्र से मध्यमाधिकारी अग्नि की विद्याद्वारा अहं अग्रे उपासना करतेहैं सो अन्तसमय अग्निकी प्रार्थनाकर शुद्ध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तरायण देवयान मार्गद्वारा सत्यलोक को अथवा शुद्ध समष्टि अग्निभावको प्राप्त होते हैं। सोई अग्निकी विद्या करके अमृतत्व प्राप्ति है। याते वेदवाक्यानुसार ज्ञातपूर्वक उपासना करनेवाले जे अग्निके उपासकहैं सो "न स पुनरावर्त्तते"। जन्म मरणरूप संसारमें पुनः आवते नहीं। अर्थात् वह उपासक अपने उपास्य देव साथ अभेद हुआ अमर अर्थात् देवत्वभाव को प्राप्त होय अन्यों करके उपासना करने योग्य होता है॥ इति तात्पर्यार्थ समाप्तं शुभम्॥ हरिः ॐ तत्सत्॥

॥ इति ईशावास्योपनिषद् भाषाटीकासहिता समाप्ता॥

शुभम्॥

॥ ॐ॥

॥ ब्रह्मार्पणमस्तु॥

॥ ॐ॥

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदुच्यते॥ पूर्णस्यपूर्ण मादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॐम्॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ ॐ ॥

॥ सूचीपत्रम् ॥

॥ १ ॥ प्रथम मूलमन्त्र तिसके ऊपर पदच्छेद की रेखा ॥ अरु अन्वयाङ्क ॥

॥ २ ॥ मूल के नीचे अन्वयके क्रम से मूलमन्त्रके पद ॥

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९

॥ ३ ॥ अन्वय पदके नीचे तदनुसार भाषा में पदार्थ ॥

॥ चिह्नसूचना ॥

[ ] इस चिह्नान्तरमें शेष विशेष के पद ॥

" " इस चिह्नान्तर में अन्य श्रुतियों के प्रमाण ॥

॥ विनय ॥

इस भाषाऽनुवाद में जो कुछ लेख अरु यन्त्रादि दोष होयँ तिनको सर्वपाठक जन क्षमाकरें ॥

मुंशीनवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने लखनऊ में छपी जौलाई सन् १९०५ ई० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इश्तिहार ॥

केनोपनिषद् भाषा टीकासहित, क़ीमत =)

सामवेदीय तलवकार शाखीय भाषाटीका सरल मध्यदेशीय हिन्दी भाषा में जिस को पण्डित यमुनाशङ्कर ने राजशाखी मिहिरचन्दकी सहायता से अनुवाद किया इसमें भी पदोंके अन्वयपूर्वक भावार्थ स्पष्ट कियाहै और ऐसा टीका किया है कि अल्पज्ञ मनुष्यों के भी समझ में आजावे ॥

प्रश्नोपनिषद् भाषाटीकासहित, क़ीमत =)

पञ्चोली यमुनाशङ्कर नागरब्राह्मणकी भाषाटीकासहित—इसमें भी सब ऊपर के लिखे हुये अलङ्कार हैं कि पंद्रहुये अच्छे प्रश्नोंका उत्तर गुरुने बताकर ब्रह्म-रूप दिखाया है ॥

मण्डूक्योपनिषद् भाषाटीका सहित, क़ीमत ॥=)

पञ्चोली यमुनाशङ्कर नागरब्राह्मण की भाषा टीका सहित—जिसमें ओंकार स्वरूप का प्रतिपादन व ब्रह्म और आत्माकी अभेदता [illegible] चार प्रकरणों में अच्छीतरह [illegible] है ॥

कठवल्ल्युपनिषद् भाषाटीका सहित, क़ीमत =)॥

पञ्चोली यमुनाशङ्कर नागर ब्राह्मण की भाषा टीका सहित—इसमें भी ऊपर लिखे हुये के अनुसार भावार्थ स्पष्ट कियागया और समझने की सुगमताके लिये गुरुशिष्यसंवादपूर्वक पूर्ण ज्ञान दिखाया है ॥

मुण्डकउपनिषद् भाषाटीका सहित, क़ीमत =)।

पञ्चोली यमुनाशङ्कर नागर ब्राह्मण की भाषाटीका सहित—जिसमें वादी प्रतिवादी के प्रश्नोत्तरसे ब्रह्मका निर्णय व जगदुत्पत्ति व प्रत्येक अन्नादिका सम्भव व अग्निहोत्रादि क्रियाओंका विधान मन्त्रों द्वारा वर्णित है ॥

तैत्तिरीयोपनिषद् भाषाटीका सहित क़ीमत ।—)।

पञ्चोली यमुनाशङ्कर नागर ब्राह्मणकी भाषा टीका सहित—जिसमें तैत्तिरीय शाखा के प्रकट होनेका उदाहरण और स्वरमात्रा व वर्णोंके उच्चारणकी शिक्षाका नियम व वर्णों के सम्बन्धरूप संहिताकी उपासना व बुद्धि व लक्ष्मीकी कामना वाले पुरुषोंकेअर्थ साधन जप और हवनादि की क्रियायें वर्णित हैं ॥

ऐतरेयोपनिषद् भाषा टीका सहित, क़ीमत=)॥।

पञ्चोली यमुनाशङ्कर नागर ब्राह्मण की भाषाटीका सहित—जिसमें आत्मा व ब्रह्मका निरूपण और प्राण व प्रणवकी उपासनाकी व्याख्या व संन्यासादि आश्रमों के लक्षण व धर्म अच्छे प्रकार से वर्णित हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri